सचित्र श्री भगवती सूत्र

प्रवर्तक श्री अमर मुनि



ILLUSTRATED SHRI BHAGWATI SUTRA

Pravartak Shri Amar Muni

पंचम गणधर भगवत् सुधर्मा-स्वामी प्रणीत पंचम अंग

सचित्र
श्री भगवती सूत्र (व्याख्याप्रज्ञप्ति)
(प्रथम खण्ड)

मूल पाठ, हिन्दी-अंग्रेजी भावानुवाद, विवेचन तथा चित्रों सहित

❖ प्रधान सम्पादक ❖

जैनधर्म दिवाकर अध्यात्म युगपुरुष

उत्तर भारतीय प्रवर्तक श्री अमर मुनि जी महाराज

❖ सह-सम्पादक ❖

श्रीचन्द सुराना 'सरस'

पद्म प्रकाशन

पद्म धाम, नरेला मण्डी, दिल्ली-११० ०४०

उत्तर भारतीय प्रवर्त्तक गुरुदेव भण्डारी श्री पद्मचन्द्र जी म. सा. द्वारा सम्प्रेरित सचित्र आगममाला का अठारहवाँ पुष्प

- *सचित्र श्री भगवती सूत्र (व्याख्याप्रज्ञप्ति)*
  [प्रथम खण्ड]

- *प्रधान सम्पादक*
  जैनधर्म दिवाकर अध्यात्म युगपुरुष
  उत्तर भारतीय प्रवर्त्तक श्री अमर मुनि जी महाराज

- *सह-सम्पादक*
  श्रीचन्द सुराना 'सरस'

- *अंग्रेजी अनुवादक*
  सुरेन्द्र बोथरा, जयपुर

- *प्रथमावृत्ति*
  वि स २०६१, फाल्गुन
  ईस्वी सन् २००५, मार्च

- *चित्रांकन*
  डॉ त्रिलोक शर्मा

- *प्रकाशक एवं प्राप्ति स्थान*
  पद्म प्रकाशन
  पद्म धाम, नरेला मण्डी दिल्ली-११० ०४०

- *मुद्रक एवं वितरक*
  श्री दिवाकर प्रकाशन
  ए-७, अवागढ हाउस एम जी रोड आगरा-२८२ ००२
  दूरभाष (०५६२) २८५११६५

- *मूल्य*
  छह सौ रुपया मात्र (६००/- रुपये)

वेबसाईट डब्ल्यूडब्ल्यूडब्ल्यू सचित्रजैनआगम कॉम

THE FIFTH ANGA WRITTEN BY THE FIFTH GANADHAR SHRI SUDHARMA SWAMI

ILLUSTRATED

SHRI BHAGAVATI SUTRA
(VYAKHYA PRAJNAPTI)

(FIRST VOLUME)

Original Text with Hindi and English Translations, Elaboration and Multicoloured Illustrations

❖ EDITOR IN-CHIEF ❖

Jain Dharma Diwakar Adhyatma Yugapurush

Uttar Bharatiya Pravartak Shri Amar Muni ji Maharaj

❖ ASSOCIATE-EDITOR ❖

Srichand Surana 'Saras'

PADMA PRAKASHAN

PADMA DHAM, NARELA MANDI, DELHI-110 040

THE EIGHTEENTH NUMBER OF THE ILLUSTRATED AGAM SERIES INSPIRED BY UTTAR BHARATIYA PRAVARTAK GURUDEV BHANDARI SHRI PADMACHANDRA JI M S

- ILLUSTRATED SHRI BHAGAVATI SUTRA (VYAKHYA PRAJNAPTI)
  [First Volume]

- *Editor in Chief*
  Jain Dharma Diwakar Adhyatma Yugapurush
  Uttar Bharatiya Pravartak Shri Amar Muni ji Maharaj

- *Associate Editor*
  Srichand Surana 'Saras'

- *English Translator*
  Surendra Bothara, Jaipur

- *First Edition*
  Falgun, 2061 V
  March, 2005 A D

- *Illustrator*
  Dr Trilok Sharma

- *Publisher and Distributor*
  Padma Prakashan
  Padma Dham, Narela Mandi, Delhi-110 040

- *Printer's & Distributor*
  Shree Diwakar Prakashan
  A-7, Awagarh House, M G Road, Agra-282 002
  Phone (0562) 2851165

- *Price*
  Six Hundred Rupees only (Rs 600/-)



जैन धर्म दिवाकर

जैनागम रत्नाकर

[illegible] पूज्य

[illegible] जी महाराज

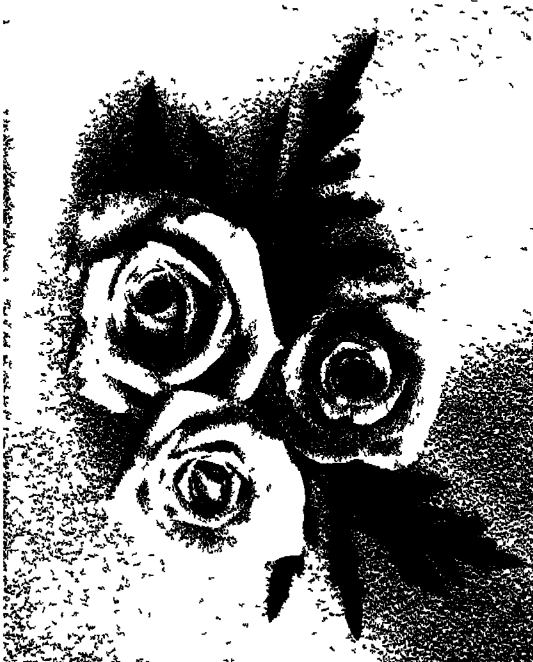
को

[illegible]

में

सविनय

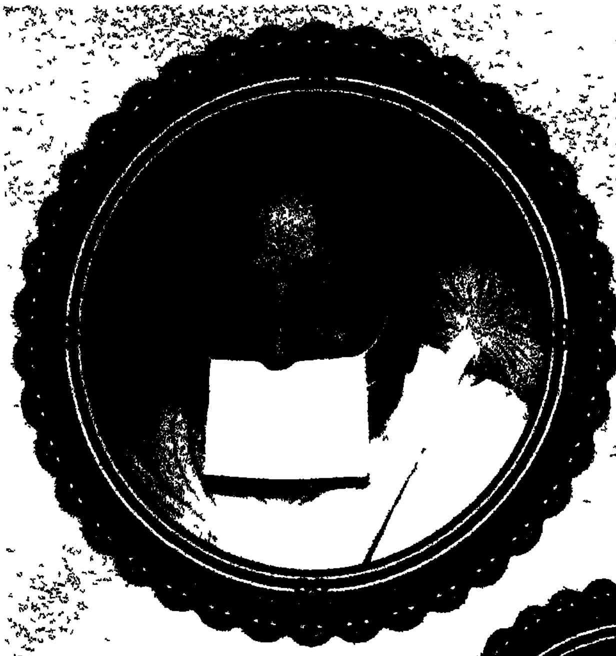
सादर भेंट





अमर मुनि

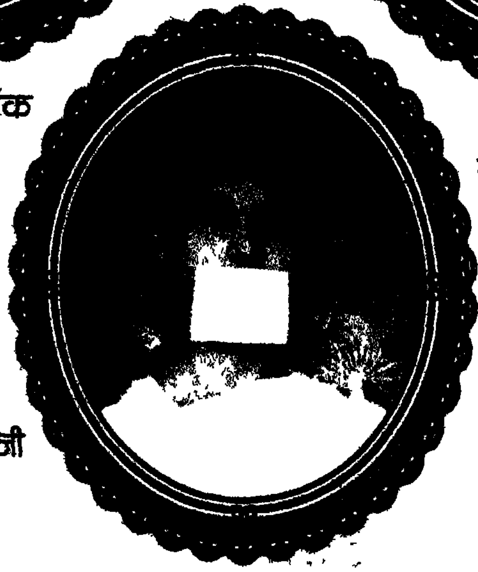
([illegible])



राष्ट्रसन्त उत्तर भारतीय प्रवर्तक
पूज्य गुरुदेव भण्डारी
श्री पद्म चन्द्र जी महाराज



आत्म कुल कमल दिवाकर
भोले बाबा वरिष्ठ सलाहकार
श्री रत्न मुनि जी म.



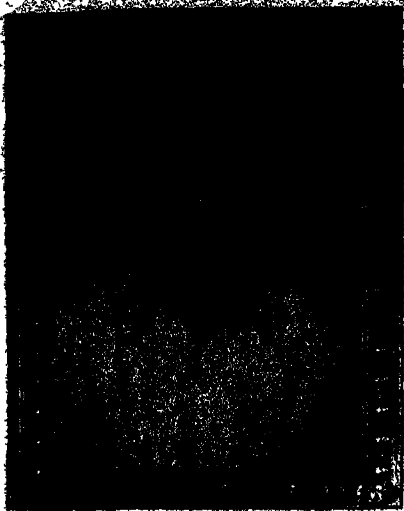
युवा मनीषि श्री वरुण मुनि जी
महाराज 'अमर शिष्य'



[illegible] जैन



[illegible] जी चाँद रानी जैन



श्री सत्यपाल जी अग्रवाल
कुरुक्षेत्र



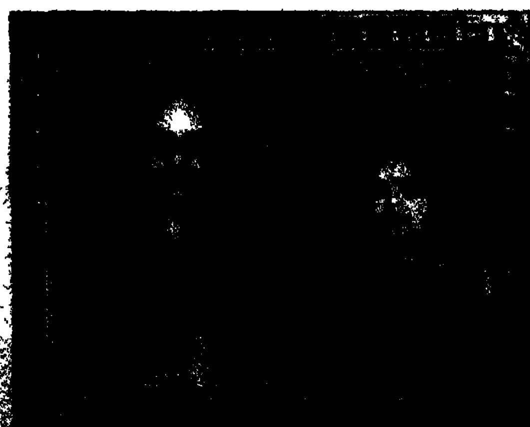
श्रीमती रुकमणी देवी अग्रवाल
कुरुक्षेत्र



श्री सुदर्शन अग्रवाल, श्रीमती मोहिता अग्रवाल
कुरुक्षेत्र



[illegible]



[illegible]



डॉ. मौजीराम जी जैन श्रीमती पुष्पा जैन
सैनिक फार्म, दिल्ली



श्री उग्रसैन जी सुन्दरी देवी जैन
विवेक विहार, दिल्ली



श्री जय भगवान जी विद्या देवी जैन
योजना विहार, दिल्ली



[illegible] जैन
[illegible] दिल्ली



श्री [illegible] कुमार कौशल्या देवी जैन
[illegible] दिल्ली

प्रकाशकीय

यह बताते हुए अत्यन्त प्रसन्नता होती है कि श्रुत-सेवा के महान् ऐतिहासिक कार्य में हम अपनी लगभग आधी मंजिल पार कर चुके है। अब तक १८ आगम ग्रन्थ चित्रों सहित हिन्दी-अंग्रेजी अनुवाद के साथ प्रकाशित कर चुके है। इस वर्ष दो आगम ग्रन्थ श्री भगवती सूत्र, भाग-१ तथा तीन छेद सूत्र का प्रकाशन हो रहा है।

श्री भगवती सूत्र जैन तत्त्वज्ञान का महासागर है। इसमें अमूल्य ज्ञान की एक से एक दीप्तिमान मणियाँ है।

दूसरे ग्रन्थ मे तीन छेद सूत्रो का प्रकाशन किया गया है। छेद सूत्र जैन श्रमणों के आचार का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण आगम है। जब तक इन सूत्रों का अर्थ सहित अध्ययन नहीं किया जाय, तब तक श्रमण अग्रणी या सिघाडा प्रमुख बनकर विचरण भी नही कर सकता। इसे श्रमण धर्म की आचार सहिता या संविधान पुस्तक भी कहा जा सकता है। ये दोनों ही आगम अपने-अपने स्थान पर अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है। अस्तु

उत्तर भारतीय प्रवर्त्तक पूज्य गुरुदेव परम श्रद्धेय भण्डारी श्री पद्मचन्द्र जी म. की हार्दिक इच्छा और प्रबल प्रेरणा से उत्तर भारतीय प्रवर्त्तक श्री अमर मुनि जी म ने श्रुत-सेवा का यह महान् कार्य प्रारम्भ किया और वे निरन्तर एकचित्त, एकलक्ष्य होकर इस कार्य-सम्पादन मे जुटे हुए हैं। हमें अत्यन्त प्रसन्नता है कि पूज्य गुरुदेवो के आशीर्वाद से तथा उनके प्रति असीम भक्तिभाव से प्रेरित होकर सहयोगदाता, उदार सज्जन सहयोग का हाथ बढा रहे हैं और हमें उत्साहित करते हैं कि इस महान् ज्ञान यज्ञ की ज्योति जलती रहनी चाहिए। हम सभी सहयोगी बन्धुओ के प्रति हार्दिक आभार प्रदर्शन करते हुए इस वर्ष मे दोनो आगम ग्रन्थ पाठको की सेवा मे प्रस्तुत कर रहे है।

आगमो के बहुत ही जिम्मेदारीपूर्ण सम्पादन-कार्य मे पूज्य गुरुदेव के अन्तेवासी श्री वरुण मुनि जी म बडी तल्लीनता के साथ जुटे हुए है। साथ ही विद्वान् सम्पादक श्रीचन्द जी सुराना 'सरस', श्री सुरेन्द्र जी बोथरा तथा जैन आगमों के गहन अभ्यासी स्वाध्यायी सुश्रावक श्री राजकुमार जी जैन का भी हमे पूर्ण सहयोग प्राप्त हो रहा है। हम आप सबके बहुत-बहुत आभारी है।

इन आगमो के प्रकाशन का हमारा एक ही लक्ष्य है, एक ही उद्देश्य है कि जिनशासन की आधारभूत जिनवाणी का घर-घर मे प्रचार-प्रसार हो और प्रत्येक साधु-सतियाँ तथा विद्वान् आगम-प्रेमी सद्गृहस्थ इनका अधिकाधिक लाभ उठायें और स्वाध्यायशील बनें। आइए आप भी हमारे उद्देश्यो को सफल बनाने मे आगम स्वाध्याय का सत्संकल्प लेवे। धन्यवाद !

महेन्द्रकुमार जैन
अध्यक्ष
पद्म प्रकाशन

PUBLISHER'S NOTE

We are pleased to convey to our readers that we have come almost half way on the path of this historical mission of service to the scriptures Till date we have published eighteen *Agams* with Hindi-English translations and illustrations In the current year we are bringing out two *Agams*—*Shri Bhagavati Sutra*, Volume-1 and three *Chhed Sutras* in one volume

Shri Bhagavati Sutra is an ocean of Jain metaphysics It contains increasingly brilliant gems of invaluable knowledge

The second book contains three *Chhed Sutras*, which form an important part of the Agamic literature on codes of ascetic praxis and conduct of Jain ascetics A *shraman* cannot become a successful leader or head of a group of ascetics as long as he does not study the text and meaning of these *Sutras* This group of scriptures can easily be called the book of codes or the constitution of *Shraman* religion Both these *Agams* occupy equally high place in their respective fields

Honouring the intense desire of and inspiration by late Gurudev Uttar Bharatiya Pravartak Bhandari Shri Padma Chandra ji M this project was launched by Uttar Bharatiya Pravartak Shri Amar Muni ji M He continues to devote his unwavering and earnest attention to advancing and successfully concluding this mission

Many generous and devout guru-devotees from different areas have displayed their devotion for the Guru and scriptures through their financial contributions They encourage us and ask us to ensure that the pious flame of this mission of knowledge should continue burning We express our sincere gratitude for them all, and present these two *Agams* this year

Pujya Gurudev's able disciple Shri Varun Muni ji M shares the responsibility of editing the *Agams* with all sincerity and devotion We are getting regular assistance of contributing scholars like Shri Srichand ji Surana 'Saras', Agra, Shri Surendra ji Bothara, Jaipur, and Shri Rajkumar ji Jain, Delhi. We are, indeed, indebted to them

Our singular aim and purpose of publication of these *Agams* is that the Word of the Jina, the very foundation of Jain religion, may reach every single house as well as every *Sadhu* and *Sati*, and every reader with scholarly bent may take maximum advantage of this to indulge in regular studies Come, take a resolve of regular study of *Agams* and join us in our mission Thanks !

—*Mahendra Kumar Jain*
PRESIDENT
Padma Prakashan

प्राग्वक्तव्य

एकादशागी का उत्तमांग शास्त्र : भगवती सूत्र

समस्त जैन आगम साहित्य मे भगवान महावीर के सिद्धान्तो के मूल स्रोत बारह अंगशास्त्र माने जाते है, जो **'द्वादशांगी'** के नाम से प्रसिद्ध है। इन बारह अंगशास्त्रो मे 'दृष्टिवाद' नामक अन्तिम अगशास्त्र वर्तमान समय मे विच्छिन्न हो जाने के कारण अब वर्तमान मे एकादश अगशास्त्र ही उपलब्ध है। ये अग 'एकादशागी' अथवा 'गणिपिटक' के नाम से विश्रुत है।

उपलब्ध ग्यारह अगशास्त्रो मे पाँचवाँ अगसूत्र 'श्री भगवती सूत्र' अथवा 'व्याख्याप्रज्ञप्ति' जैन आगमो का उत्तमाग (मस्तक) माना जाता है। एक तरह से समस्त उपलब्ध आगमो मे भगवती सूत्र सर्वोच्च स्थानीय एव विशालकाय शास्त्र है। अन्य अगो की तरह यह भी पचम गणधर सुधर्मा स्वामी द्वारा ग्रथित है।

नामकरण और महत्ता

वीतराग सर्वज्ञ प्रभु की वाणी अद्‌भुत ज्ञाननिधि से परिपूर्ण है। जिस शास्त्रराज मे अनन्तलब्धिनिधान गणधर गुरु श्री इन्द्रभूति गौतम तथा प्रसगवश अन्य गणधरो, स्थविरों, श्रमणो आदि द्वारा पूछे गये ३६,००० प्रश्नो एव श्रमण भगवान महावीर के श्रीमुख से दिये गये उत्तरो का सकलन है, उसके प्रति जनमानस मे श्रद्धा-भक्ति और पूज्यता का भाव होना स्वाभाविक है। वीतराग प्रभु की वाणी मे समग्र जीवन को पावन एव परिवर्तित करने का अद्‌भुत सामर्थ्य है। वह एक प्रकार से भागवती शक्ति है, इसी कारण जब भी व्याख्याप्रज्ञप्ति का वाचन होता है तब गणधर भगवान श्री गौतम स्वामी को सम्बोधित करके जिनेश्वर भगवान महावीर प्रभु द्वारा व्यक्त किये गये उद्‌गारो को सुनते ही भावुक भक्तो का मन-मयूर श्रद्धा-भक्ति से गद्‌गद होकर नाच उठता है। श्रद्धालु भक्तगण इस शास्त्र के श्रवण को जीवन का अपूर्व अलभ्य अवसर लाभ मानते है। फलतः अन्य अगो की अपेक्षा विशाल एव अधिक पूज्य होने के कारण व्याख्याप्रज्ञप्ति के पूर्व 'श्री भगवती' विशेषण प्रयुक्त होने लगा और शताधिक वर्षो से तो 'भगवती' शब्द विशेषण न रहकर स्वतत्र नाम हो गया है। वर्तमान मे व्याख्याप्रज्ञप्ति की अपेक्षा 'भगवती' नाम ही अधिक प्रचलित है।

वर्तमान 'व्याख्याप्रज्ञप्ति' का प्राकृत भाषा मे 'वियाहपण्णत्ति' नाम है। कही-कही इसका नाम 'विबाह' या 'विवाहपण्णत्ति' भी मिलता है। किन्तु वृत्तिकार आचार्य श्री अभयदेव सूरि ने 'वियाहपण्णत्ति' नाम को ही प्रामाणिक माना है।[1] इसी के तीन सस्कृत रूपान्तर मानकर इनका भिन्न-भिन्न प्रकार से अर्थ किया है-

(१) **व्याख्या + प्रज्ञप्ति**–गौतमादि शिष्यो को उनके द्वारा पूछे गये प्रश्नो के उत्तर मे भगवान महावीर के विविध प्रकार से कथन का समग्रतया विशद (प्रकृष्ट) निरूपण जिस ग्रन्थ मे हो अथवा जिस शास्त्र मे विविध रूप से भगवान के कथन का प्रज्ञापन-प्ररूपण किया गया हो।

---

१ भगवती वृत्ति, पत्र २

(२) **व्याख्या + प्रज्ञ + आप्ति**—व्याख्या करने की प्रज्ञा (बुद्धिकुशलता) से प्राप्त होने वाला अथवा व्याख्या करने मे प्रज्ञ (पटु) भगवान से गणधर को जिस ग्रन्थ ज्ञान की प्राप्ति हो, वह श्रुतविशेष है।

(३) **व्याख्या + प्रज्ञा + आप्ति**—व्याख्या करने की प्रज्ञापटुता से ग्रहण किया जाने वाला अथवा व्याख्या करने मे प्रज्ञ भगवान से कुछ ग्रहण करना व्याख्याप्रज्ञप्ति है।

इसी प्रकार विवाहप्रज्ञप्ति और विबाधप्रज्ञप्ति इन दोनो सस्कृत रूपान्तरों का अर्थ भी निम्नोक्त प्रकार से मिलता है-

(१) **वि + वाह + प्रज्ञप्ति**—जिसमे विविध या विशिष्ट प्रवाहो–अर्थप्रवाहो का प्रज्ञापन–प्ररूपण किया गया हो, उस श्रुत का नाम विवाहप्रज्ञप्ति है।

(२) **वि + बाध + प्रज्ञप्ति**—जिस ग्रन्थ मे बाधारहित–प्रमाण से अबाधित तत्त्वो का प्ररूपण हो, वह श्रुतविशेष विबाधप्रज्ञप्ति है।

विषय–वस्तु की विविधता

व्याख्याप्रज्ञप्ति सूत्र मे विषयो की विविधता है। ज्ञान–रत्नाकर शब्द से यदि किसी शास्त्र को सम्बोधित किया जा सकता है तो यही एक महान् शास्त्रराज है। इसमे जैनदर्शन के ही नही, दार्शनिक जगत् के प्राय सभी मूलभूत तत्त्वो का विवेचन तो है ही, इसके अतिरिक्त विश्वविद्या की कोई भी ऐसी विधा नही है, जिसकी प्रस्तुत शास्त्र मे प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से चर्चा न की गई हो। प्राचीन और वर्तमान ज्ञान विज्ञान की अनेक शाखाओ का रहस्योद्‌घाटन तथा बीज रूप मे उनका संकेत इस शास्त्र मे उपलब्ध है।

जैसे कहा जाता है–'वेद' समस्त ज्ञान विज्ञान का मूल है। उसी प्रकार भगवती सूत्र भी समस्त तत्व विद्या का आधार ग्रन्थ है। इसके विषय मे अनेक पाश्चात्य विद्वानो ने यह माना है कि इस शास्त्र मे, जीवन विज्ञान, पदार्थ विज्ञान, परमाणु विज्ञान आदि सैकडो विषयो का पहली बार निरूपण हुआ है, जो उस समय के अन्य शास्त्रो मे उपलब्ध नही है। इसमे भूगोल, खगोल, इहलोक–परलोक, स्वर्ग–नरक, प्राणिशास्त्र, रसायनशास्त्र, गर्भशास्त्र, स्वप्नशास्त्र, भूगर्भशास्त्र, गणितशास्त्र, ज्योतिष, इतिहास, मनोविज्ञान, अध्यात्मविज्ञान आदि कोई भी विषय अछूता नही रहा है।

इसमे प्रतिपादित विषयो के समस्त सूत्रो का वर्गीकरण मुख्यतया निम्नोक्त १० खण्डो मे किया जा सकता है–

(१) **आचारखण्ड**—साध्वाचार के नियम, आहार, विहार एव पाँच समिति, तीन गुप्ति, क्रिया, कर्म, पचमहाव्रत आदि से सम्बन्धित विवेक सूत्र, सुसाधु, असाधु, सुसयत, असयत, सयतासयत आदि के आचार के विषय मे निरूपण आदि।

(२) **द्रव्यखण्ड**—षड्‌द्रव्यो का वर्णन–पदार्थवाद, परमाणुवाद, मन, इन्द्रियाँ, बुद्धि, गति, शरीर आदि का निरूपण।

(३) **सिद्धान्तखण्ड**—आत्मा, परमात्मा (सिद्ध–बुद्ध–मुक्त), केवलज्ञान आदि ज्ञान, आत्मा का विकसित एव शुद्ध रूप, जीव, अजीव, पुण्य–पाप, आस्रव, सवर, निर्जरा, कर्मवाद, सम्यक्त्व, मिथ्यात्व, क्रिया, कर्मबन्ध एव कर्म से विमुक्त होने के उपाय आदि।

(४) **परलोकखण्ड**—देवलोक, नरक आदि से सम्बन्धित समग्र वर्णन; नरकभूमियो के वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्श का तथा नारको की लेश्या, कर्मबन्ध, आयु, स्थिति, वेदना आदि का तथा देवलोकों की संख्या, वहाँ की भूमि, परिस्थिति देव–देवियो की विविध जातियाँ, उपजातियाँ, उनके निवास–स्थान, लेश्या, आयु, कर्मबन्ध, स्थिति, सुखभोग आदि का विस्तृत वर्णन। सिद्धगति एव सिद्धो का वर्णन।

(५) **भूगोल**—लोक, अलोक, भरतादि क्षेत्र, कर्मभूमिक, अकर्मभूमिक क्षेत्र, वहाँ रहने वाले प्राणियों की गति, स्थिति, लेश्या, कर्मबन्ध, नदियाँ, पर्वत, कूट, समुद्र आदि का वर्णन।

(६) **खगोल**—सूर्य, चन्द्र, ग्रह, नक्षत्र, तारे, अन्धकार, प्रकाश, तमस्काय, कृष्णराजि आदि का वर्णन।

(७) **गणितशास्त्र**—एकसंयोगी, द्विकसयोगी, त्रिकसयोगी, चतु सयोगी भग आदि, प्रवेशनक राशि, संख्यात, असंख्यात, अनन्त, पल्योपम, सगारोपम, कालचक्र आदि।

(८) **गर्भशास्त्र**—गर्भगत जीव के आहार, विहार, नीहार, अगोपाग, जन्म इत्यादि वर्णन।

(९) **चरित्रखण्ड**—श्रमण भगवान महावीर के सम्पर्क मे आने वाले अनेक तापसो, परिव्राजको, श्रावको, श्राविकाओ, श्रमणो, निर्ग्रन्थो, अन्यतीर्थिको, पार्श्वापत्य श्रमणो आदि के पूर्व जीवन एवं परिवर्तनोत्तर जीवन का वर्णन।

(१०) **विविध**—कुतूहलजनक प्रश्न, राजगृह के गर्म पानी के स्रोत, अश्व–ध्वनि, देवो की ऊर्ध्व–अधोगमन शक्ति, विविध वैक्रिय शक्ति के रूप, आशीविष, स्वप्न, मेघ, वृष्टि आदि के वर्णन।

व्याख्याप्रज्ञप्ति के अध्ययन 'शतक' के नाम से प्रसिद्ध हैं। यहाँ 'शतक' शब्द से सौ की संख्या का कोई सम्बन्ध नही है। यह अध्ययन के अर्थ मे रूढ है। प्रत्येक शतक मे उद्देशक रूप उपविभाग है।

४१ शतको मे विभक्त विशालकाय भगवती सूत्र मे श्रमण भगवान महावीर के स्वयं के जीवन की, गणधर गौतम आदि उनके शिष्य वर्ग की तथा भक्तो, गृहस्थो, उपासकों, उपासिकाओ, अन्यतीर्थिको और उनकी मान्यताओ की विस्तृत जानकारी मिलती है। आजीवक संघ के आचार्य गोशालक के सम्बन्ध मे इसमे विस्तृत और प्रामाणिक जानकारी प्राप्त होती है। यत्र–तत्र पुरुषादानीय भगवान पार्श्वनाथ के अनुयायी साधु–श्रावकों का तथा उनके चातुर्याम धर्म का एव चातुर्याम धर्म के बदले पचमहाव्रत रूप धर्म स्वीकार करने का विशद उल्लेख भी प्रस्तुत आगम मे मिलता है। इसमें सम्राट् कूणिक और वैशाली गणतत्र के अधिनायक महाराज चेटक के बीच जो महाशिलाकण्टक और रथमूशल महासग्राम हुए तथा इन दोनो महायुद्धो मे जो लोमहर्षक नर–सहार हुआ, उसका विस्तृत मार्मिक एव चौका देने वाला बर्णन भी अकित है।

ऐतिहासिक दृष्टि से आजीवक सघ के आचार्य मखली गोशालक, जमालि, शिवराजर्षि, स्कन्दक परिव्राजक, तामली तापस आदि का वर्णन अत्यन्त रोचक है। तत्त्वचर्चा की दृष्टि से जयन्ती श्राविका, मद्दुक श्रमणोपासक, रोक अनगार, सोमिल ब्राह्मण, भगवान पार्श्व के शिष्य कालास्यवेशीपुत्र, तुगिका नगरी के श्रावक आदि प्रकरण बहुत ही मननीय हैं। इक्कीस से लेकर तेईसवें शतक तक वनस्पतियों का जो वर्गीकरण किया गया है, वह अद्भुत है। वनस्पतिविज्ञान के लिए भी मार्गदर्शक है। पचास्तिकाय के प्रतिपादन मे धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय और आकाशास्तिकाय, ये तीनो अमूर्त होने से अदृश्य है,

वर्तमान वैज्ञानिको ने आकाश को 'स्पेस' के रूप मे स्वीकार कर लिया है। जीवास्तिकाय भी अमूर्त्त होने से अदृश्य है तथापि शरीर के माध्यम से होने वाली चैतन्यक्रिया के द्वारा वह दृश्य है। पुद्गलास्तिकाय मूर्त्त होने से दृश्य है। इस प्रकार प्रस्तुत आगम मे किया गया प्रतिपादन वैज्ञानिक तथ्यो के अतीव निकट है। इसके अतिरिक्त जीव और पुद्गल के सयोग से दृष्टिगोचर होने वाली विविधता का जितना विशद विवरण प्रस्तुत आगम मे है, उतना अन्य भारतीय दर्शन या धर्मग्रन्थो मे नही मिलता है।

कतिपय आधुनिक शिक्षित व्यक्ति भगवती सूत्र मे उक्त स्वर्ग-नरक के वर्णन को कपोल-कल्पित कहते नही हिचकिचाते। उनका आक्षेप है कि "भगवती सूत्र का आधे से अधिक भाग स्वर्ग-नरक से सम्बन्धित वर्णनो से भरा हुआ है, इस ज्ञान का जीवन मे क्या महत्त्व या उपयोग है ?"

सर्वज्ञ -सर्वदर्शी भगवान महावीर ने तथा जैनतत्त्वज्ञो ने स्वर्ग-नरक को विशेष महत्त्व दिया है, इसके पीछे महान् गूढ रहस्य छिपा है। वह यह है कि यदि आत्मा को हम अविनाशी और शाश्वत सत्तात्मक मानते है तो उसके चैतन्य स्वरूप, जड सयोग से पार्थिव जीव स्वरूप और गुणात्मक विकास-ह्रास को समझ पाने के लिए हमे स्वर्ग-नरक को भी मानना होगा। स्वर्ग नरक से सम्बन्धित वर्णन को निकाल दिया जायेगा तो आत्मवाद, कर्मवाद, लोकवाद, क्रियावाद एव मुक्तिवाद आदि सभी सिद्धान्त अपनी उपयोगिता खो देगे। जहाँ तक वैज्ञानिकता का प्रश्न है, हमे यह नही भूलना चाहिए कि विज्ञान ज्ञान के निरन्तर विकास की तथा खोज की राह है और चिन्तन, शोध, अन्वेषण, गणित, कल्पना आदि उसके उपकरण है। जो कल कल्पना माना जाता था वह आज यथार्थ बन चुका है। जिसे हम आज कल्पना समझते है वह कल के यथार्थ की सम्भावना भी हो सकती है। आगमो की अवधारणा के अनुसार स्वर्ग-नरक भी हमारे तिर्यग्लोकस्थित भूमण्डल के सदृश ही क्रमश ऊर्ध्वलोक और अधोलोक के अग है। अतिशय पुण्य और अतिशय पाप से युक्त आत्मा को अपने कृतकर्मो का फल भोगने के लिए स्वर्ग या नरक मे गये बिना कोई चारा नही। अत सर्वज्ञ- सर्वदर्शी पुरुष जगत् के अधिकाश भाग से युक्त क्षेत्र का वर्णन किये बिना कैसे रह सकते थे ?

भगवती सूत्र, अन्य जैनागमो की तरह न तो उपदेशात्मक ग्रन्थ है और न केवल सैद्धान्तिक ग्रन्थ है। इसे हम विश्लेषणात्मक ग्रन्थ कह सकते है। दूसरे शब्दो मे इसे सिद्धान्तो का गणित कहा जा सकता है। प्रसिद्ध वैज्ञानिक आइन्स्टीन का सापेक्षवाद का सिद्धान्त गणित का ही तो चमत्कार है। गणित जगत् के समस्त आविष्कारो का आवश्यक अग है। अत भगवती सूत्र मे गणित सिद्धान्तो का बहुत ही गहनता एव सूक्ष्मता से प्रतिपादन किया गया है। जिसे जैनसिद्धान्त एव कर्मग्रन्थो या तत्त्वो का पर्याप्त ज्ञान नही है, उसके लिए भगवती सूत्र मे प्रतिपादित तात्त्विक विषयो की थाह पाना और उनका रसास्वादन करना अत्यन्त कठिन है।

इसके अतिरिक्त उस युग के इतिहास, भूगोल, समाज और सस्कृति, राजनीति और धर्मसस्थाओ आदि का जो यथातथ्य विश्लेषण प्रस्तुत आगम मे है, वह सर्व-साधारण पाठको एव शोधकर्त्ताओ के लिए अतीव महत्त्वपूर्ण है। छत्तीस हजार प्रश्नोत्तरो मे आध्यात्मिक ज्ञान की छटा अद्वितीय है।

प्रस्तुत आगम से यह भी ज्ञात होता है कि उस युग मे अनेक धर्म-सम्प्रदाय होते हुए भी उनमे साम्प्रदायिक कट्टरता अधिक नही होती थी। एक धर्मतीर्थ के परिव्राजक, तापस और मुनि दूसरे धर्मतीर्थ

के विशिष्ट ज्ञानी या अनुभवी परिव्राजको, तापसो या मुनियो के पास नि सकोच पहुँच जाते और उनसे ज्ञानचर्चा करते थे, और अगर कोई सत्य–तथ्य उपादेय होता तो वह उसे मुक्तभाव से स्वीकारते थे। प्रस्तुत आगम मे वर्णित ऐसे अनेक प्रसगो से उस युग की धार्मिक उदारता और सहिष्णुता का वास्तविक परिचय प्राप्त होता है। यह वर्णन आज के धर्म–सम्प्रदायो के लिए दिशादर्शक है।

इस आगम मे विषय का प्रतिपादन सर्वत्र अनेकान्त दृष्टि से हुआ है।

उदाहरणस्वरूप -इस सूत्र मे तत्त्व विद्या का प्रारम्भ **'चलमाणे चलिए'**–इस सूत्र पद से हुआ है। अर्थात् जो चलित हो चुका, वह चल गया ऐसा माना जा सकता है। आचार्य अभयदेव सूरि ने टीका मे इस पद की निश्चयनय और व्यवहारनय की दृष्टि से व्याख्या की है। उनका कहना है व्यवहारनय के अनुसार चलित को ही 'चलित' कहा जा सकता है और निश्चयनय के अनुसार 'चलमान' को भी 'चलित' कहा जा सकता है।

इस प्रकार अनेक जटिल और विवादास्पद प्रश्नो का उत्तर भगवान ने दोनों नयो को सामने रखकर अनेकान्त दृष्टि से दिया है।

प्रसिद्ध तार्किक आचार्य श्री सिद्धसेन सूरि ने लिखा है–"भगवान महावीर की सर्वज्ञता को सिद्ध करने के लिए अनेक प्रमाणो की कोई आवश्यकता नही है, उनके द्वारा प्रतिपादित **'षड्जीव निकाय'** का सिद्धान्त ही उनकी सर्वज्ञता का अकाट्य प्रमाण है। क्योकि ससार के अन्य किसी भी दार्शनिक ने षड्जीव निकाय का इतना विस्तृत और सटीक वर्णन आज तक नही किया है, जितना भगवान महावीर ने किया है।" (द्वात्रिंशिका १/१३)

उदाहरण के रूप मे भगवान महावीर ने छह जीव निकाय का जो वर्णन किया है उनमे 'त्रस जीव निकाय' तो प्रत्यक्ष सिद्ध है ही। वनस्पति निकाय के जीव अब विज्ञान को भी स्वीकार करने पडे है। पृथ्वी, पानी, अग्नि और वायु इन चार निकायो के जीव अब तक विज्ञान द्वारा पूर्णतया स्वीकृत नही हुए हैं, परन्तु जो अनुसधान व प्रयोग चल रहे है, उनसे सम्भव है, एक दिन विज्ञान के इनमे भी जीव या चेतना को स्वीकारना पडे। भगवान महावीर ने इन जीवो का अस्तित्व सिद्ध करने के लिए उन जीवो का जीवनमान, आहार, श्वास, सज्ञाएँ आदि अनेक सूक्ष्म विषयो का विस्तृत प्रतिपादन किया है। भगवान महावीर ने वनस्पति मे दस प्रकार की सज्ञाएँ बताई है–आहार, भय, मैथुन, परिग्रह, क्रोध, मान, माया, लोभ, ओघ और लोकसज्ञा। आज विज्ञान को भी वनस्पति मे इन सज्ञाओ को स्वीकार करना पडा है।

सुप्रसिद्ध भारतीय वैज्ञानिक श्री जगदीशचन्द्र बसु ने अपने परीक्षणो द्वारा यह सिद्ध कर दिया था कि वनस्पति क्रोध और प्रेम भी प्रदर्शित करती है। स्नेहपूर्ण व्यवहार से वह पुलकित हो जाती है और घृणापूर्ण दुर्व्यवहार से वह मुरझा जाती है। श्री बसु के प्रस्तुत परीक्षण को समस्त वैज्ञानिक जगत् ने स्वीकृत कर लिया है। प्रस्तुत आगम मे वनस्पतिकाय मे १० सज्ञाएँ बताई गई है। इन सज्ञाओ के रहते वनस्पति आदि वही व्यवहार अस्पष्ट रूप से करती है जिन्हे मानव स्पष्ट रूप से करता है।

इसी प्रकार पृथ्वी मे भी जीवत्व शक्ति है, इस सम्भावना की ओर प्राकृतिक चिकित्सक एव वैज्ञानिक अग्रसर हो रहे है। सुप्रसिद्ध भूगर्भ वैज्ञानिक फ्रासिस अपनी प्रसिद्ध पुस्तक "Ten Years Under Earth" मे दसवर्षीय विकट भूगर्भयात्रा के सस्मरणों में लिखते है–"मैंने अपनी इन विविध

यात्राओ के दौरान पृथ्वी के ऐसे-ऐसे स्वरूप देखे है, जो आधुनिक पदार्थविज्ञान के विरुद्ध थे। वे स्वरूप वर्तमान वैज्ञानिक सुनिश्चित नियमों द्वारा समझाये नहीं जा सकते।'' अन्त में वे स्पष्ट लिखते है- ''तो क्या प्राचीन विद्वानो ने पृथ्वी मे जो जीवत्व शक्ति की कल्पना की थी, वह सत्य है ?''

इसी प्रकार जैनदर्शन पानी की एक बूँद मे असख्यात जीव मानता है। वर्तमान वैज्ञानिको ने माइक्रोस्कोप के द्वारा पानी की बूँद का सूक्ष्म निरीक्षण करके अगणित सूक्ष्म प्राणियो का अस्तित्व स्वीकार किया है। जैन जीवविज्ञान इससे अब भी बहुत आगे है।

आधुनिक वैज्ञानिको ने अगणित परीक्षणो द्वारा जैनदर्शन के इस सिद्धान्त को निरपवाद रूप से सत्य पाया है कि कोई भी पुद्‌गल (Matter) नष्ट नही होता, वह दूसरे रूप (Form) मे बदल जाता है।

भगवान महावीर द्वारा भगवती सूत्र मे पुद्‌गल की अपरिमेय शक्ति के सम्बन्ध मे प्रतिपादित यह तथ्य आधुनिक विज्ञान से पूर्णत समर्थित है कि ''विशिष्ट पुद्‌गलों मे, जैसे तैजस् पुद्‌गल में, अग, बग, कलिग आदि १६ देशो को विध्वस करने की शक्ति विद्यमान है।''

इसी प्रकार नर-सयोग के बिना ही नारी का गर्भ-धारण, गर्भ-स्थानान्तरण आदि सैकडो विषय प्रस्तुत आगम मे प्रतिपादित है, जिन्हे सामान्य बुद्धि ग्रहण नही कर सकती, परन्तु आधुनिक विज्ञान ने नूतन शोधो द्वारा परीक्षण करके ऐसे अधिकाश तथ्य स्वीकृत कर लिए है, धीरे- धीरे शेष विषयो को भी परीक्षण करके स्वीकृत कर लेगा, ऐसी आशा है।

प्रस्तुत आगम मे षड्‌द्रव्यात्मक लोक (जगत्) को अनादि एव शाश्वत बताया गया है। आधुनिक विज्ञान भी जगत् (जीव-अजीवात्मक) की कब सृष्टि हुई, इस विषय में जैनदर्शन के निकट पहुँच गया है। प्रसिद्ध जीवविज्ञानवेत्ता जे बी एच हाल्डेन का मन्तव्य है कि ''मेरे विचार मे जगत् की कोई आदि नही है।''

भारतीय धर्मो के पाश्चात्य विद्वान् डॉ वाल्टर शुब्रिग ने लिखा है-''जीव--अजीव और पचास्तिकाय का सिद्धान्त भगवान महावीर के मौलिक चिन्तन की देन है।'' भगवती सूत्र मे जीव और पुद्‌गल का जितना और सर्वाग निरूपण है, वह अन्य प्राचीन धर्मग्रन्थो मे सुलभ नही है।

प्रस्तुत आगम भगवान महावीर के दर्शन तथा तत्त्वविद्या का प्रतिनिधिशास्त्र है। डॉ शुब्रिग भगवती सूत्र को पढकर इतने प्रभावित हुए है कि वे बडी मार्मिक भाषा मे लिखते है-

''महावीर एक सुव्यवस्थित (निरूपण के) पुरस्कर्त्ता है। उन्होने अपने निरूपणो मे प्रकृति मे पाये जाने वाले तत्त्वो को स्थान दिया, जैसा कि **विआहपण्णत्ती** के कुछ अवतरणो से स्पष्टतया परिलक्षित होता है। उदाहरणार्थ-रायगिह (राजगृह) के समीपस्थ उष्ण जल स्रोत, जहाँ वे स्वय अवश्य गये होगे, के सम्बन्ध मे उनकी व्याख्या (९४), वायु सम्बन्धी उनका सिद्धान्त (११०) तथा अग्नि एव वायु जीवो के सामुदायिक जीवन (१०५) आदि के विषय मे उनकी व्याख्या। आकाश मे उडने वाले पदार्थ की गति मन्द होती जाती है (विआहपण्णत्ती १७६-बी, जीवाभिगम ३७४-बी)-यह निष्कर्ष महावीर ने सम्भवत गुरुत्वाकर्षण के प्रभाव के आधार पर निकाला होगा। इसी प्रकार, एक सरपट चौकडी भरते हुए अश्व के हृदय और यकृत के बीच उद्‌भूत 'कव्वडय' नामक वायु के द्वारा 'खू-खू' की आवाज की उत्पत्ति (विआहपण्णत्ती ४९९-बी) को भी हम विस्मृत नही कर सकते। इससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण तथ्य यह है कि प्राचीन भारत के जिन मनीषियो के विषय मे हमे जानकारी है उन सबमे सर्वाधिक

ज्ञानवान् मनीषी महावीर को संख्या और गणित के प्रति रुचि थी तथा उनके प्रवचनों में इन विषयों का असाधारण वैशिष्ट्य झलकता है। यद्यपि बहुत सारे प्रसगो में यह सिद्ध करना कठिन है कि उनमे से कितना निरूपण उनका अपना है तथा कितना दूसरो का है, फिर भी कहीं–कही वे स्वय स्पष्ट रूप से अपने आपको अमुक सिद्धान्त के निरूपक के रूप मे घोषित करते है। वे स्वय कहते है–"**एवं खलु, गोयमा, मए सत्त सेढीओ पण्णत्ताओ।**" (विआहपण्णत्ती ९५४-बी)–इस प्रकार मैने सात श्रेणियो का निरूपण किया है। इन सबके सन्दर्भ मे परमाणुओ और आकाश–प्रदेशो के जघन्य एवं उत्कृष्ट अंको का विवेचन किया है, जो हमे गणनात्मक चिन्तन तक पहुँचाता है। इन सबमे हमे एक परिवारगत रुचि दृष्टिगोचर हो रही है। जहाँ इसके साथ इसको प्रयोग में लाने की रुचि भी जुडती है, वहाँ सम्भवतः हम महावीर के मौलिक विचार से साक्षात्कार करते है।"[1]

डॉ जे. डेल्यू[2] ने लिखा है–"निष्कर्ष रूप मे मै कहना चाहूँगा कि 'अन्यतीर्थिक आगम–पाठो' मे अनेक विविधतापूर्ण विषयो की जो चर्चा की गई है, वे **महावीर के व्यक्तित्व को एक चिन्तक एवं एक प्रणेता**

---

1 The Doctrines of the Jainas, pp 40-41—Even individual traits borrowed from nature have been incorporated into the total conception by Mahavira, the systematizer, as is shown by many passages of the Viy Thus his explanation for a hot spring he must have visited near Rayagiha (94), his theory of the wind (110), and the life-community of fire and wind (105) The fact that the movement of a flying object slows down (Viy 176-b, Jiv 374-b) was probably concluded by Mahavira from the effect of gravitation Nor should we omit the wind Kavvadaya (Viy 499-b) arising between the heart and the liver and causing within a galloping horse the sound of khu-khu Above all, however the most versatile thinker we know of ancient India, had a liking for figures and arithmatic, that characterizes his speeches most extraordinarily In most cases we are not able to prove which considerations are his own and which are of others, but he calls himself the author of a theory of the 7 possible lines **(evam Khalu, Goyama, mae satta sedhio pannattao)** (Viy 954-b) In referring to them the minimum and maximum numbers of the atoms and space units are being discussed, and this leads us up to the calculative reflections In them a certain family likeness seems to become apparent, and where it goes together with a special liking for applying it we are probably confronted with an original idea of Mahavira's

2 Dr J Deleu's article on "Lord Mahavira and the Anyatirthikas" in "Mahavira and His Teachings" p 193—"In conclusion I would like to state, that the great diversity of topics discussed in the anyatirthika texts is illustrative both of Mahavira's personality as a thinker and a teacher, and of that wonderful time of creative ferment in religion and philosophy that was his It would seem that Mahavira, more than anyone around him, even more than the Buddha, was inspired by the spiritual unrest and eagerness of his day Speaking of the Buddha, and probably comparing him with the Jina, Frauwallner, in his History of Indian Philosophy, expressed the opinion that 'his (the Buddha's) contribution to the enlargement of the range of philosophical ideas in his time was a rather small one' A severe verdict indeed, which, however is soundly based on the Buddha's well-known stern refusal to consider a great many question that occupied his contemporaries Because of his systematic approach to all these question, Mahavira has, I think, rightly been called 'the most versatile thinker we know of in ancient India "

के रूप में प्ररूपित करते है तथा उस अद्‌भुत युग का चित्रण भी, जब धर्म और दर्शन का सृजनात्मक दौर चल रहा था। ऐसा प्रतीत होता है कि महावीर उस युग के अन्य किसी भी दार्शनिक की तुलना में, यहाँ तक कि बुद्ध की तुलना मे भी अपने समय के आध्यात्मिक उत्साह एव उत्कटता से अधिक प्रेरित थे। ई फ्राउवालनार[1] ने अपने ग्रन्थ 'हिस्ट्री ऑफ इण्डियन फिलोसोफी' मे बुद्ध के विषय मे सम्भवतः जिन (महावीर) से उनकी तुलना करते समय, यह अभिमत व्यक्त किया है कि उनका (बुद्ध का) दार्शनिक विचारो के क्षेत्र के विकास मे अपेक्षाकृत बहुत थोडा योगदान मिला। यद्यपि यह फैसला बहुत अधिक कडा है, फिर भी यह एक मजबूत आधारभित्ति पर आधारित है कि बुद्ध अपने समकालीन दार्शनिको के सामने आने वाले प्रश्नो के उत्तर देने से साफ इन्कार कर देते थे। चूँकि महावीर ने इन सभी प्रश्नो के बहुत ही व्यवस्थित रूप से उत्तर दिये, इसलिए उन्हे जो प्राचीन भारत के ज्ञानी चिन्तको मे सर्वाधिक ज्ञानी कहा गया है, वह बिल्कुल उचित ही है।''

पाश्चात्य जगत् के प्रसिद्ध विद्यानुरागी शोधकर्ताओ के ये उद्‌गार भगवती सूत्र की ज्ञान-विज्ञान सम्बन्धी गम्भीरता और उत्कृष्टता का वास्तविक मथन है।

प्रस्तुत आगम मे गतिविज्ञान, भावितात्मा द्वारा नाना रूपो का निर्माण, भोजन और नाना रूपो के निर्माण का सम्बन्ध, चतुर्दशपूर्वी द्वारा एक वस्तु के हजारो प्रतिरूपो का निर्माण, भावितात्मा द्वारा आकाशगमन, पृथ्वी आदि स्थावर जीवो का श्वास-उच्छ्‌वास, गतिप्रवाद अध्ययन की प्रज्ञापना, कृष्णराजि, तमस्काय, परमाणु की गति, दूरसचार आदि अनेक महत्त्वपूर्ण प्रकरण है। उनका वैज्ञानिक दृष्टि से अध्ययन अपेक्षित है।

बिलक्षण विवेचन-शैली

भगवती सूत्र की रचना प्रश्नोत्तरो के रूप मे हुई है। प्रश्नकर्त्ताओ मे मुख्य है-श्रमण भगवान महावीर के प्रधान शिष्य गणधर इन्द्रभूति गौतम। इनके अतिरिक्त माकन्दिपुत्र, रोह अनगार, गणधर अग्निभूति, वायुभूति आदि। कभी-कभी स्कन्दक आदि कई परिव्राजक, तापस एव पार्श्वापत्य अनगार आदि भी प्रश्नकर्त्ता के रूप मे उपस्थित होते है। कभी अन्य धर्मतीर्थावलम्बी भी वाद विवाद करने या शका के समाधानार्थ आ पहुँचते है। कभी तत्कालीन श्रमणोपासक अथवा जयन्ती आदि जैसी श्रमणोपासिकाएँ भी प्रश्न पूछकर समाधान पाती है। प्रश्नोत्तरो के रूप मे ग्रथित होने के कारण इसमे कई बार पिष्ट-पेषण भी हुआ है, जो किसी भी सिद्धान्तप्ररूपक के लिए अपरिहार्य है, क्योकि किसी भी प्रश्न को समझाने के लिए उसकी पृष्ठभूमि बतानी भी आवश्यक हो जाती है।

एक बात और है-भगवती सूत्र मे विषयो का विवेचन प्रज्ञापना, स्थानाग आदि शास्त्रो की तरह सर्वथा विषयबद्ध, क्रमबद्ध एव व्यवस्थित पद्धति से नही है और न गौतम गणधर के प्रश्नो का सकलन ही किसी पूर्व निश्चित क्रम से है। इसका कारण भगवती सूत्र के अध्येता को इस शास्त्र मे अवगाहन करने से स्वत ज्ञात हो जायेगा कि गौतम गणधर के मन मे जब किसी विषय के सम्बन्ध मे स्वत या किसी अन्यतीर्थिक अथवा स्वतीर्थिक व्यक्ति का या उससे सम्बन्धित वक्तव्य सुनकर जिज्ञासा उत्पन्न हुई,

1 E Frauwallner, Geschictite der Indischen Philosophie (Salzburg 1953), vol I, p 247, cf, also p 253

तभी उन्होने भगवान महावीर के पास जाकर सविनय अपनी जिज्ञासा प्रश्न के रूप मे प्रस्तुत की। अत· सकलनकर्त्ता श्री सुधर्मा स्वामी गणधर ने उस प्रश्नोत्तर को उसी क्रम से, उसी रूप मे ग्रथित कर लिया। अत. यह दोष नही, बल्कि प्रस्तुत आगम की प्रामाणिकता सिद्ध करता है।

इससे सम्बन्धित एक प्रश्न वृत्तिकार ने प्रस्तुत शास्त्र के प्रारम्भ मे, जहाँ से प्रश्नो की शुरूआत होती है, उठाया है कि प्रश्नकर्त्ता गणधर श्री इन्द्रभूति गौतम स्वय द्वादशांगी के विज्ञाता है। श्रुत के समस्त विषयो के पारगामी है, सब प्रकार के सशयो से रहित है। इतना ही नही, वे सर्वाक्षरसन्निपाती है, मति, श्रुत, अवधि और मन पर्यायज्ञान के धारक है, एक दृष्टि से सर्वज्ञ–तुल्य है, ऐसी स्थिति मे सशययुक्त सामान्यजन की भाँति उनका प्रश्न पूछना कहाँ तक युक्तिसगत है? इसका समाधान स्वय वृत्तिकार ही देते है-(१) गौतम स्वामी कितने ही अतिशययुक्त क्यो न हो, छद्मस्थ होने के नाते उनसे भूल होना असम्भव नही। (२) स्वय जानते हुए भी, अपने ज्ञान की अविसवादिता के लिए प्रश्न पूछ सकते है। (३) स्वय जानते हुए भी अन्य अज्ञानिजनो के बोध के लिए प्रश्न पूछ सकते है। (४) शिष्यो को अपने वचन मे विश्वास जमाने के लिए भी प्रश्न पूछा जाना सम्भव है। अथवा (५) शास्त्ररचना की यही पद्धति या कथन प्रणाली है। इनमे से एक या अनेक कुछ भी कारण हो, गणधर गौतम का प्रश्न पूछना असगत नही कहा जा सकता।

प्रस्तुत आगम मे अनेक प्रकरण कथा–शैली मे लिखे गये है। जीवन–प्रसगो, घटनाओ और रूपको के माध्यम से कठिन विषयो को सरस करके प्रस्तुत किया गया है। भगवान महावीर को जहॉ कही कठिन विषय को उदाहरण देकर समझाने की आवश्यकता महसूस हुई, वहाँ उन्होने दैनिक जीवनधारा से कोई उदाहरण उठाकर उत्तर दिया है। किसी भी प्रश्न का उत्तर देने के साथ -साथ वे हेतु का निर्देश भी किया करते थे। जहॉ एक ही प्रश्न के एक से अधिक उत्तर–प्रत्युत्तर होते, वहाँ वे प्रश्नकर्त्ता की दृष्टि और भावना को मद्देनजर रखकर तदनुरूप समाधान किया करते थे। जैसे–**रोहक** अनगार के प्रश्न के उत्तर मे स्वय प्रतिप्रश्न करके भगवान ने प्रत्युत्तर दिया है।

मुख्य रूप मे यह आगम प्राकृत भाषा मे या कही–कही शौरसेनी भाषा मे सरल–सरस गद्य–शैली मे लिखा हुआ है। प्रतिपाद्य विषय का सकलन करने की दृष्टि से प्रारम्भ मे सग्रहणी गाथाओ के रूप के कही -कही पद्य भाग भी उपलब्ध होता है। कही पर स्वतत्र रूप से प्रश्नोत्तरो का क्रम है, तो कही किसी घटना के पश्चात् प्रश्नोत्तरो का सिलसिला चला है।

प्रस्तुत आगम मे **जहा पण्णवणाए** एव **जहा जीवाभिगमे** आदि पदो मे द्वादशागी से–पश्चात्वर्ती काल मे रचित राजप्रश्नीय, औपपातिक, प्रज्ञापना, जीवाभिगम, प्रश्नव्याकरण एव नन्दी सूत्र आदि (मे वर्णित अमुक विषयो) का अवलोकन करने का निर्देश या उल्लेख देखकर इतिहासवेत्ता विद्वानो का यह अनुमान करना यथार्थ नही है कि यह आगम अन्य आगमो के बाद मे रचा गया है। वस्तुत जैनागमो को लिपिबद्ध करते समय देवर्द्धिगणी क्षमाश्रमण ने ग्रन्थ की अनावश्यक बृहद्ता कम करने तथा अन्य सूत्रो मे वर्णित विषयो की पुनरावृत्ति से बचने की दृष्टि से पूर्व लिखित आगमो का निर्देश–अतिदेश किया है ऐसा अनुमान है। आगम -लेखनकाल मे सभी आगम क्रम से नही लिखे गये थे। जो आगम पहले लिखे जा चुके थे, उन आगमो मे उस विषय का विस्तार से वर्णन पहले हो चुका था, अत. उन विषयो की पुनरावृत्ति न हो,

ग्रन्थगुरुत्व न हो, इसी उद्देश्य से श्री देवर्द्धिगणी आदि पश्चाद्वर्ती आगम लेखको ने इस निर्देश पद्धति का अवलम्बन लिया था। इसी आधार पर यह आगम पश्चाद्ग्रथित है, ऐसा निर्णय नही करना चाहिए। वस्तुत व्याख्याप्रज्ञप्ति सूत्र गणधर रचित ही है, इसकी मूल रचना प्राचीन ही है।

प्रस्तुत संस्करण

भगवती सूत्र पर अब तक अनेक विद्वानो के अनुवाद, विवेचन आदि प्रकाशित हो चुके है। हमने अपने अनुवाद मे मुख्य रूप मे इन सस्करणो का आधार लिया है–(१) भगवती सूत्र–सात भाग : प घेवरचन्द जी बाँठिया द्वारा सम्पादित, (२) व्याख्याप्रज्ञप्ति सूत्र–चार भाग मेरे (अमर मुनि) द्वारा सम्पादित विवेचन सहित, तथा (३) भगवई–दो भाग आचार्य महाप्रज्ञ जी द्वारा सम्पादित।

यद्यपि इस सूत्र के विवेचन मे जितना विस्तार और तुलनात्मक अध्ययन अपेक्षित है, वैसा संस्करण अब तक उपलब्ध नही है, फिर भी आवश्यक और उपयोगी विवेचन को हमने सरल रूप मे प्रस्तुत कर दिया है। इसकी विशेषता है हिन्दी के साथ अग्रेजी भाषा मे अनुवाद। अग्रेजी अनुवाद के कारण अन्तर्राष्ट्रीय विद्वद् जगत् मे भी इसकी उपयोगिता बढ गई है। यह तो निश्चित है कि अग्रेजी भाषा मे जैन आगमो के पारिभाषिक शब्द उपलब्ध नही है। अत उनका शब्दश अनुवाद सम्भव ही नही है। हमने मूल शब्द को सुरक्षित रखते हुए उस शब्द की परिभाषा व व्याख्या अग्रेजी मे वही पर दे दी है। जिस कारण पाठक मूल शब्द के आशय को अच्छी प्रकार ग्रहण कर सकेगा।

यो तो इस सूत्र मे विषय को स्पष्ट करने के लिए बहुत अधिक चित्रो की अपेक्षा थी, परन्तु अपनी समय सीमा, पृष्ठ सख्या व अन्य बातो को ध्यान मे रखते हुए कुछ महत्त्वपूर्ण विषयो के रगीन चित्र प्रस्तुत किये है, जिस कारण गम्भीर विषय मे रोचकता बढ गई है।

महत्त्वपूर्ण शब्दो का अग्रेजी पारिभाषिक शब्दकोष भी परिशिष्ट मे देने का हमारा प्रयत्न है।

श्रुत- सेवा के लिए मुझे सतत प्रेरणा एव मार्गदर्शन करने वाले पूज्य गुरुदेव उत्तर भारतीय प्रवर्त्तक भण्डारी श्री पद्मचन्द्र जी म का पावन स्मरण किये बिना मेरा यह प्राक्कथन अपूर्ण ही रहेगा। मैने जो कुछ प्राप्त किया है और जो वर्तमान मे कर रहा हूँ, वह सब उन्ही गुरुदेव की कृपा तथा आशीर्वाद का ही शुभ फल है।

सदा की भाँति सचित्र आगम प्रकाशन की पावन श्रुत–सेवा मे श्रीचन्द जी सुराना, श्री सुरेन्द्र जी बोथरा, सुश्रावक श्री राजकुमार जी जैन जैसे विद्वान् सम्पादक बन्धुओ का तथा प्रकाशन सहयोगी गुरुभक्तो का जो प्रेम व सौहार्दपूर्ण सहयोग प्राप्त हुआ है, उसके प्रति बहुत–बहुत साधुवाद।

जैन स्थानक,
लुधियाना।

–प्रवर्तक अमर मुनि
(उत्तर भारतीय प्रवर्त्तक)

PREFACE

BEST AMONG THE ELEVEN ANGAS : BHAGAVATI SUTRA

In the corpus of Jain Agamic literature the twelve *Angas*, popularly known as *Dvadashangi* (The Twelve Limbed), are accepted as the original source books. *Drishtivad*, the last of the twelve books, being extinct, only eleven *Angas* are available in modern times These are popularly known as *Ekadashangi* (The Eleven Limbed) or *Ganipitak* (The Box of Ganis)

Bhagavati or *Vyakhya Prajnapti*, the fifth *Anga* is believed to be the best of *Angas* (head) In fact, *Bhagavati Sutra* is the top ranking and most voluminous among the available *Agams* Like other *Angas*, this too has been compiled by Sudharma Swami, the fifth *Ganadhar*.

NAME AND IMPORTANCE

The sermon of *Vitaraga Sarvajna Prabhu* (the Detached Omniscient Lord) is lavished with an astonishing treasure of knowledge. It is natural that this gem of scriptures; made up of the compilation of profound answers by Shraman Bhagavan Mahavir to 36,000 questions by Ganadhar Guru Shri Indrabhuti Gautam, the embodiment of infinite powers, and other *Ganadhars, Sthavirs* (senior ascetics) and *Shramans*; evokes feelings of earnest devotion and deep respect in masses The sermon of *Vitaraga Sarvajna Prabhu* has the unique capacity of transforming and purifying the whole life. In a way it is divine power That is why whenever there is a recitation of *Vyakhya Prajnapti* the minds of devotees brim with devotion and, like a peacock, dance in exhilaration when they receive the words of Jineshvar Bhagavan Mahavir Prabhu addressed to Ganadhar Bhagavan Gautam Swami Respectful devotees consider attending the recital of this scripture to be a rare and unprecedented opportunity As a result this comparatively voluminous and reverential scripture acquired the adjective '*Bhagavati*' before its name *Vyakhya Prajnapti* For more than a century the adjective '*Bhagavati*' has turned into an independent epithet At present its more popular name is *Bhagavati* rather than *Vyakhya Prajnapti*.

The Prakrit name of *Vyakhya Prajnapti* is *Viyaha Pannati*. At some places it is also mentioned as *Vibaha* or *Vivaha Pannati*. However, Abhayadev Suri, the commentator (Vritti), has accepted *Viyaha Pannati* as the authentic name Taking three transliterations of this name in Sanskrit he has interpreted the name three ways—

(1) Vyakhya + Prajnapti—The book that contains complete and elaborate (*prakrisht*) exposition of the variety of statements given by Bhagavan Mahavir in answer to the questions posed to him by Gautam and other disciples In other words, the book that contains the elucidation (*prajnapan*) of statements given by Bhagavan Mahavir in various ways

(2) Vyakhya + Prajna + apti—Acquired through the wisdom (*prajnaa*) of elaboration (*vyakhya*) Also the specific canon that has been acquired from *Bhagavan* by *Ganadhars* who have the wisdom (*prajnaa*) of elaboration

(3) Vyakhya + Prajnaa + apti—Acquired through the expertise (*prajnaa*) of elaboration Also to acquire from *Bhagavan* who has the expertise (*prajnaa*) of elaboration

In the same way the meanings of the other two Sanskrit transliterations are also available as follows—

(1) Vivaha Pannati—The canon that contains exposition of various or special flows of meanings is called *Vivaha Pannati*

(2) Vibadha Pannati—The canon that contains exposition of fundamentals unabated by or independent of need of authentication is called *Vibadha Pannati*

VARIETY OF SUBJECTS

Vyakhya Prajnapti Sutra has a large variety of subjects If some scripture can be called the ocean of knowledge (*jnana ratnakar*) it is only this great acme of scriptures It contains discussions not only on Jain philosophy but almost all fundamentals of the realm of philosophy Besides this there is hardly any topic of universal knowledge that has not been discussed in this great work directly or indirectly Available in this scripture are the expositions or pointers of numerous branches of knowledge and science, ancient as well as modern.

It is said that the *Vedas* are the source books of all knowledge and science In the same way *Bhagavati Sutra* too is the source book of all metaphysical knowledge Many western scholars believe that biology, physics, particle physics and hundreds of other subjects, that find no place in other scriptures of that time, were presented for the first time in this book The long list of topics dealt with in this book include geography, astronomy, this life and that beyond, heaven-hell, biology, chemistry, obstetrics, dreams, geology, mathematics, astrology, history, psychology, spiritualism etc

The subjects discussed in this work can be broadly classified into ten sections—

(1) Achar Khand (Section on Conduct)—Codes of ascetic conduct, prudence related to food, movement, five *samitis* (self-regulations), three *guptis* (restraints), action, *karma* and five great vows; delineation of the conduct of good ascetic, non-ascetic, restrained, unrestrained and restrained-unrestrained ascetics; and other allied topics.

(2) Dravya Khand (Section on Entities)—Description of six entities or the physical world (*Padarth-vaad*), ultimate particles (*Paramanu-vaad*), mind, sense organs, intellect, movement, body and other related topics

(3) Siddhant Khand (Section on Ontology)—Soul (*atma*), *Paramatma* or Supreme soul (perfected, enlightened and liberated), knowledge (*jnana*) including omniscience (*Keval-jnana*), developed and pure state of soul, being (*jiva*), non-being (*ajiva*), merit-demerit (*punya-paap*), inflow of *karmas* (*asrava*), blockage of inflow of *karmas* (*samvar*), shedding of *karmas (nirjara)*, *karma* theory (*karma-vaad*), righteousness (*samyaktva*), unrighteousness (*mithyatva*), action (*kriya*), *karmic* bondage (*karmabandh*), methods of salvation from bondage and other related topics

(4) Par-lok Khand (Section on Reincarnation or Next Life)—Descriptions of divine realm (*Dev-lok*), infernal world and other areas Detailed descriptions of colour, smell, taste and touch of infernal worlds, *leshya* (soul-complexion), *karmic* bondage, age, life-span and sufferings of infernal beings and number, land, conditions, castes and sub-castes, abodes, *leshya*, age, *karmic* bondage, life-span and enjoyments of divine beings. Description of liberated souls and the state of liberation (*Siddha Gati*)

(5) Bhugoal (Geography)—*Lok* (occupied space or the universe), *Alok* (unoccupied space or the space beyond), Bharat and other countries, land of endeavour (*Karmabhumi*) and land of enjoyment (*Akarmabhumi*) along with the description of the birth, life-span, *leshya* and *karmic* bondage of beings living there as well as rivers, mountains, hills, seas and other features

(6) Khagoal (Astronomy)—Description of sun, moon, planets, constellations, stars, darkness, light, bodies of darkness (*Tamaskaya*), areas of darkness (*Krishnaraji*) etc

(7) Ganit Shastra (Mathematics)—Alternatives of combinations of one, two, three and four things, *Praveshanak Rashi, samkhyat* (countable), *asamkhyat* (innumerable), *anant* (infinite), *Palyopam* and *Sagaropam* (metaphoric units of time), *Kaal Chakra* (cycle of time) etc

(8) Garbha Shastra (Obstetrics)—Description of food intake, movement, development, body parts and birth of a being in womb

(9) Charitra Khand (Biographical Section)—Stories of pre and post contact life of numerous hermits (*Tapas*), mendicants (*Parivrajak*), lay Jains (*Shravak-Shravikas*), Jain ascetics (*Shraman Nirgranths*), people of other faith (*anyatirthiks*), ascetic of Parshva tradition etc., who came in contact with Shraman Bhagavan Mahavir.

(10) Vividh (Miscellaneous)—Descriptions of curious and strange questions about hot springs in Rajagriha, sound of horses, power of upward and downward movement of gods, various manifestations of the power of transmutation (*Vaikriya Shakti*), deadly poison, dreams, clouds, rain etc

The chapters of *Vyakhya Prajnapti* are popularly known as *Shataks* Here the term *shatak* has no relevance with the number hundred. Here it just means chapter Each *shatak* has sub-divisions titled *uddeshak* (lesson)

The forty one chapters of the voluminous work *Bhagavati Sutra* provide details about the life of Shraman Bhagavan Mahavir as well as Ganadhar Gautam and other disciples, devotees, householders and worshippers along with the life and beliefs of followers of other schools It contains elaborate and authentic information about Acharya Goshalak, the head of the Ajivak Sangh At places in this scripture, there is detailed information about the lay and ascetic followers of Purushadaniya Bhagavan Parshva Naath and their conversion from the *Chaturyam Dharma* (four dimensional religion) to *Panch Mahavrat Dharma* (the religion of five great vows) Also included is the detailed, touching and shocking narrative of the terrible massacre in the two great battles, popularly known as Mahashilakantak and Rath-mushal battles, between Emperor Kunik and Maharaj Chetak, the president of Vaishali Republic

From historical viewpoint the narratives about Acharya Mankhali Goshalak, the head of the Ajivak Sangh; Jamali, Shiva Rajarshi, Skandak Parivrajak, Tamali Tapas and many others are very interesting The episodes of Jayanti Shravika, Madduk Shramanopasak, Rohak Anagar, Somil Brahmin, Bhagavan Parshva's disciple Kalasyaveshiputra and Shravaks of Tungika city are worth pondering from metaphysical angle The classification of plants mentioned in chapters twenty first to twenty third is astonishing and inspiring from botanical viewpoint Among the five ontological categories (*panchastikaya*) *Dharmastikaya*, *Adharmastikaya* and *Akashastikaya* are invisible as they are formless. Modern science has accepted *Akash* as space. Being formless *Jivastikaya* (soul entity) is also invisible However, it is comprehensible through the sentient activity it performs with the help of the body. As it has form, *Pudgalastikaya* (matter entity) is visible. Thus the theories propounded

in this *Agam* closely resemble the scientific facts. Besides these the elaborate details mentioned in this *Agam* about the multitude of diversities manifested through the interplay of soul and matter is not available in any other philosophical or religious work, Indian or foreign.

Many modern educated individuals do not hesitate to brand the said descriptions of heaven and hell as flights of fantasy. They maintain—"More than half of *Bhagavati Sutra* is filled with the descriptions of heavens and hells. What is the importance or use of such information in everyday life ?"

All-seeing and all-knowing Bhagavan Mahavir and later Jain philosophers gave special importance to heaven and hell for a special veiled purpose. And it is that if we accept soul as immortal and eternal entity, we also have to accept the concept of heaven and hell in order to comprehend its form as independent vibrant life-force, its tangible form manifested through combination with matter and its qualitative progress and regress All the concepts and principles of *Atma-vaad* (theory of soul), *Karma-vaad* (theory of *karma*), *Lok-vaad* (theory of universe), *Kriya-vaad* (theory of endeavour) and *Mukti-vaad* (theory of liberation) will lose their significance and utility if the descriptions of heaven and hell are deleted. As regards the scientific attitude, we should not forget that science is the path of continuous search and development of knowledge. Contemplation, research, invention, mathematics, imagination and the like are some of the tools to pursue that What was said to be fantasy yesterday has become fact today What we take to be fantasy today may be pregnant with facts of tomorrow According to the *Agamic* concept heaven and hell are parts of the upper and lower worlds as our earth is a part of the transverse world A soul endowed with extremes of merit and demerit has no alternative but to be born in heaven or hell in order to enjoy or suffer the fruits of the acquired *karmas*. How could an all-seeing and all-knowing individual avoid describing the part of this universe that forms the whole arena of the play of souls ?

Unlike other Jain *Agams, Bhagavati Sutra* is neither a sermonic work nor exclusively doctrinal. We may call it an analytical work In other words it may be called the mathematics of doctrines. Einstein's famous theory of relativity is, indeed, a miracle of mathematics. Mathematics is an essential component of all inventions in the world. For this reason alone mathematical theories have been profoundly and minutely elaborated in *Bhagavati Sutra*. Without a working knowledge of *Karmagranths* and fundamentals one will find it extremely difficult to fathom the metaphysical subjects propounded in *Bhagavati Sutra*.

Besides this the factual analysis of history, geography, society, culture, politics and religious institutions provided in this *Agam* is very useful and important for all readers including researchers The panorama of spiritual knowledge the thirty six thousand questions and answers present is unique

This scripture informs us that in spite of numerous religious sects existing during that period, sectarian dogmatics was minimum. Mendicants, hermits and ascetics of one school went to those of others without any hesitation for spiritual dialogue and had no reservations whatsoever in accepting truth and facts revealed during discussions These details provide inspiring guidance to modern religious sects having a tendency to shun interaction.

In this *Agam* each and every subject has been presented with relative or non-absolutistic viewpoint

For example the discussion on fundamentals (ontological categories) starts with the phrase 'moving means moved' (*chal-mane chaliye*) which means that a thing that has commenced movement can be accepted as moved Acharya Abhayadev Suri has elaborated this phrase both from *Nishchaya naya* (noumenal or transcendental viewpoint) and *Vyavahar naya* (empirical or conventional standpoint) He says that from conventional standpoint only a thing that has already moved can be called as moved but from transcendental viewpoint that which is in the process of moving can be called as moved

This way *Bhagavan* has answered many such complex questions from both these standpoints applying the relative standpoint.

Renowned logician Acharya Siddhasen Suri has stated—"In order to prove omniscience of Bhagavan Mahavir not many evidences are needed The concept of six life forms (*shadjiva nikaya*) is an irrefutable proof of his omniscience This is because no other philosopher has provided such elaborate and authentic description of six life forms as done by Bhagavan Mahavir" (*Dvatrinshika* 1/13)

For instance, out of the six life forms described by Bhagavan Mahavir *tras jiva nikaya* (mobile life forms) is an evident reality. The plant life form has since found acceptance in science Although science has not yet fully accepted the earth-bodied, water-bodied, fire-bodied and air-bodied life forms, the research and experiments being conducted in this direction may lead to the acceptance sooner or later In order to prove the existence of these life forms Bhagavan Mahavir has described in detail the life-span, food intake, respiration, activities and various other subtle matters According to Bhagavan Mahavir these life forms have

ten *sanjnas* (kinds of feeling and awareness)—food, fear, sex, possessiveness, anger, conceit, deceit, greed, general and universal As regards plant life, science had to accept all these *sanjnas*

Famous Indian scientist Shri Jagadish Chandra Basu had proved by his experiments that plants are sensitive to anger and love. At expression of love a plant blossoms and at expression of hate it withers These experiments by J C Basu have since been accepted by the scientific world In this *Agam* plant life forms are said to have ten *sanjnas* Endowed with these ten attributes plants have the same but indistinct behaviour that the humans display distinctly

In the same way earth too has life force Practitioners of nature cure and scientists are heading towards this possibility Famous geologist Francis writes in his famous travelogue, 'Ten Years Under Earth', about ten year long difficult geological journey—"During my numerous journeys I have come across many such facets of earth that go against modern physics. Those facets cannot be explained on the basis of established scientific theories of the modern world " In the end he explicitly states—"So, is the imagination about the life force in earth by the ancient seers true ?"

In the same way Jain philosophy accepts the existence of innumerable living beings in a single drop of water Modern scientists have accepted the existence of innumerable minute organism in a drop of water after seeing it under a microscope Jain biology is far advanced than this.

After numerous experiments modern scientists have also confirmed the Jain principle that matter is never destroyed, it just gets transformed.

Bhagavan Mahavir's statement in *Bhagavati Sutra* about unlimited energy of matter—specific matter particles like *Taijas pudgals* contain enough energy to destroy sixteen states like Anga, Banga and Kalinga—finds complete acceptance in modern science

In the same way pregnancy without intercourse, transplantation of fetus and other hundreds of such topics that are beyond normal comprehension are included in this *Agam*. However, most of these have been affirmed by modern science through new research and experiments. It is hoped that sooner or later the remaining concepts will also find acceptance.

In this *Agam* the occupied space (*Lok*), constituted of six entities, is said to be without a beginning as well as eternal In its exploration of the time of the birth of this universe modern science has also arrived at the point already stated in Jain philosophy J. B H. Haldane, the famous scientist, says—"In my view the universe has no beginning."

Dr Walter Shuebring, a western Indologist, writes—"*Jiva-ajiva* (soul and non-soul) and the principle of five *Panchastikaya* (ontological categories) are original contributions of Bhagavan Mahavir's radical thinking " The complete and elaborate presentation of soul and matter given in *Bhagavati Sutra* is not available in any other ancient scripture

This *Agam* is a representative scripture of Bhagavan Mahavir's philosophy and metaphysics After reading *Bhagavati Sutra*, Dr Shuebring was so impressed that he wrote in touching words—

"Even individual traits borrowed from nature have been incorporated into the total conception of Mahavira, the systematizer, as is shown by many passages of the Viy Thus his explanation for a hot spring he must have visited near Rayagiha (94), his theory of the wind (110) and the life-community of fire and wind (105) The fact that the movement of a flying object slows down (Viy 176-b, Jiv 374-b) was probably concluded by Mahavira from the effect of gravitation Nor should we omit the wind Kavvadaya (Viy 499-b) arising between the heart and the liver and causing within a galloping horse the sound of *khu-khu* Above all, however, the most versatile thinker we know of ancient India, had a liking for figures and arithmatic, that characterizes his speeches most extraordinarily In most cases we are not able to prove which considerations are his own and which are of others, but he calls himself the author of a theory of the 7 possible lines (954-b) In referring to them the minimum and maximum numbers of the atoms and space units are being discussed, and this leads us up to the calculative reflections In them a certain family likeness seems to become apparent, and where it goes together with a special liking for applying it we are probably confronted with an original idea of Mahavira's " (The Doctrines of the Jainas, pp 40-41)

Dr J Deleu writes—In conclusion I would like to state, that the great diversity of topics discussed in the *anyatirthika* texts is illustrative both of Mahavira's personality as a thinker and a teacher, and of that wonderful time of creative ferment in religion and philosophy that was his It would seem that Mahavira, more than anyone around him, even more than the Buddha, was inspired by the spiritual unrest and eagerness of his day Speaking of the Buddha, and probably comparing him with the Jina, Frauwallner, in his *History of Indian Philosophy*, expressed the opinion that "his (the Buddha's) contribution to the enlargement of the range of philosophical ideas in his time was a rather small one (E Frauwallner, *Geschictite der Indishen Philosophie* (Salzburg 1953), vol I, p 247, cf, also p 253). A severe verdict indeed,

which, however is soundly based on the Buddha's well-known stern refusal to consider a great many question that occupied his contemporaries Because of his systematic approach to all these questions, Mahavira has, I think, rightly been called 'the most versatile thinker we know of in ancient India'.

These views of renowned western scholarly researchers provide true evaluation of the depth and eminence of the wealth of general and specialized knowledge contained in *Bhagavati Sutra*

This *Agam* contains numerous important topics including science of movement (dynamics and rebirth), transmutation into a variety of forms by elevated souls, relationship of food intake and creation of numerous forms, transmutation into thousands of clones by *Chaturdash-purvi* (scholar of fourteen *Purvas*), movement in the sky by elevated souls, respiration of earth-bodied and other immobile life forms, presentation of the *Gatipravad* chapter, area of darkness (*krishnaraji*), body of darkness (*tamaskaya*), movement of ultimate particles and telecommunication. All these deserve study from scientific angle.

UNIQUE STYLE OF ELABORATION

Bhagavati Sutra has been composed in question-answer style. The main questioner is Ganadhar Indrabhuti Gautam, the chief disciple of Bhagavan Mahavir Other than him are Makandiputra, Roha Anagar, Ganadhar Agnibhuti and Ganadhar Vayubhuti. Sometimes many *Parivrajaks*, including Skandak, *Tapasas* and ascetics from Parshva tradition also appear as questioners On occasions people from other schools too come for debate or removing doubts Contemporary *Shramanopasaks* (lay Jains) including females like Jayanti seek answers to their questions As it is compiled in question-answer style, it becomes repetitive at places However, it is unavoidable for a propounder of a doctrine because he has to provide the background material in order to clear a doubt

Another thing is that the subjects dealt in *Bhagavati Sutra* do not follow any preconceived specific order. Neither the compilation of questions asked by Gautam Ganadhar follow a predetermined pattern As a reader studies *Bhagavati Sutra* he will automatically realize that as and when Gautam Ganadhar had a doubt or his curiosity was inspired by any statement by or incident related to people of his own school or other, he at once approached Bhagavan Mahavir and humbly presented it in the form of a question True to his job, Sudharma Swami compiled the text in the same order and form Thus the apparent disorder is not a fault but an evidence of its authenticity.

The commentator has raised a doubt at the beginning of this scripture, just before the sequence of questions starts, that how far is it logical that a scholar of *Dvadashangi*, an expert of all subjects of the canon and free of any doubts, a *sarvakshar-sannipati* (who knows all possible combinations of the alphabet) endowed with all the four limbs of knowledge (*Mati, Shrut, Avadhi* and *Manahparyav*) and almost an omniscient like Gautam Swami asks such skeptic-like questions suited to an ordinary person ? The commentator himself provides possible answers—(1) No matter how lofty was the level of Gautam Swami's knowledge, being a *chhadmasth* (one who is short of omniscience due to residual *karmic* bondage) there are always chances of his committing an error (2) In spite of knowing the answer he could ask for the sake of affirmation of the indubitability of his knowledge. (3) In spite of knowing the answer he could ask for the benefit of the ignorant present there (4) He could possibly have asked for the purpose of infusing belief in his disciples (5) This could have been just a prevalent style of composing scriptures For any one or all of these reasons it is clear that asking these questions was not at all illogical

Many portions of this *Agam* are written in narrative style Abstract and tough themes have been made interesting with the help of biographical sketches, incidents and allegories Whenever Bhagavan Mahavir needed examples to explain a complex topic he chose one from normal day to day happenings With every answer he also indicated the cause Where one question had more than one answer he provided an answer according to the viewpoint and sentiment of the questioner For example, he answered the question of Rohak Anagar with a question

This *Agam* has been written in simple and interesting prose, mainly in Ardhamagadhi Prakrit interspersed with Shaurseni Prakrit at some places In order to inform about the themes discussed in a chapter collative verses have been given at some places. At some places there are free flowing questions and at others series of questions follow some incident

In this *Agam* there is a mention of scriptures of post *Dvadashangi* period as sources of reference material This includes *Rajaprashniya, Aupapatik, Prajnapana, Jivabhigam, Prashnavyakaran* and *Nandi Sutra* It would be erroneous for the historians to conclude on this basis that this *Agam* was written after the said *Agams* In fact, during the changeover from oral to written tradition, while compiling and transcribing Jain *Agams*, Devardhigani Kshamashraman included these notations in order to reduce the volume of this work as well as to avoid repetition of the themes included in already transcribed scriptures It should be noted that the transcribing of *Agams* was not done in their chronological order The *Agams* already transcribed had detailed

description of the themes discussed. The authors of later period, including Devardhigani, used this style of referring other sources in order to avoid repetition and reduce the bulk Therefore it is not right to infer that this *Agam* belongs to a later period In fact *Vyakhya Prajnapti* was composed by *Ganadhars* and its original style of writing is ancient

THIS EDITION

Numerous translations and commentaries of *Bhagavati Sutra* by different authors have been published till date. In this translation we have mainly used the following works—(1) *Bhagavati Sutra* · Seven Volumes edited by Pt Ghevarchand ji Banthia (2) *Vyakhya Prajnapti Sutra* Four Volumes edited by me with commentary (3) *Bhagavai* · Two Volumes edited by Acharya Mahaprajna ji.

The extensive commentary this scripture deserves is yet to be done However, I have composed the necessary and useful elaboration in simple style The uniqueness of this edition is that it contains Hindi as well as English translations This makes it useful for the international community of scholars It is, indeed, true that exact terminology for Jain technical terms is not available in English Thus an exact verbatim translation in English is not possible At such places we have retained the original term (either in Prakrit or in Hindi or both) giving meaning and explanation in parenthesis This would facilitate quick and better understanding of the original text, may be at the cost of repetition

Although this *Agam* required a larger number of illustrations to enhance the clarity of topics discussed, limitations of deadlines and volume restricted this number to include only important topics As in earlier *Agams*, this adds to the interest of the reader even in complex themes

We are also trying to include a glossary of important technical terms as appendix

My preface would not be complete without the pious remembrance of my revered teacher Uttar Bharatiya Pravartak Gurudev Bhandari Shri Padmachandra ji M who always inspired me to work in service of the *Shrut* (*Agams*) Whatever I have achieved and whatever I am presently doing is the fruit of his kindness and blessings

As always, scholarly editors like Shri Srichand Surana 'Saras', Shri Surendra Bothara and Sushravak Shri Rajkumar ji Jain, as well as generous devotees have extended their co-operation and contributions to this pious project of publishing Illustrated *Agams* They all deserve thanks and commendations

Jain Sthanak,
Ludhiana

—Pravartak Amar Muni
(Uttar Bharatiya Pravartak)

अनुक्रमणिका

प्रथम शतक : प्रथम उद्देशक ३–४९

मंगलाचरण ३
प्रथम शतक विषय–सूची ४
राजगृह में पदार्पण ५
गणधर इन्द्रभूति ७
चलन आदि से सम्बन्धित प्रश्न १०
चौबीस दण्डकगत स्थिति [नैरयिक चर्चा] १३
देव (असुरकुमार) चर्चा २२
नागकुमार चर्चा २५
पृथ्वीकाय आदि पाँच स्थावर २७
द्वीन्द्रियादि त्रस–चर्चा ३१
मनुष्य एव देवादि विषयक चर्चा ३५
जीवो की आरभ विषयक चर्चा ३७
सलेश्य जीवों मे आरभ प्ररूपणा ४०
भव की अपेक्षा से ज्ञानादिक चर्चा ४१
असवुड–सवुड की सिद्धता ४३
असंयत जीव की देवगति विषयक चर्चा ४६
वाणव्यन्तर देवलोक का स्वरूप ४७

प्रथम शतक : द्वितीय उद्देशक : दु:ख ५०–८१

जीव के स्वकृत–दु खवेदन ५०
आयु–वेदन चर्चा ५१
चौबीस दडक मे समानत्व चर्चा [नैरयिक] ५२
असुरकुमारादि की समानत्व चर्चा ५८
पृथ्वीकायादि समानत्व चर्चा ५९
मनुष्य–देव समानत्व चर्चा ६२
चौबीस दण्डको मे लेश्या विचार ६४
ससार–सस्थानकाल ७०
अन्तक्रिया–सम्बन्धी चर्चा ७४
असंयत भव्य द्रव्यदेव का उपपात ७५
असज्ञी आयुष्य ७९

प्रथम शतक : तृतीय उद्देशक : कांक्षा–प्रदोष ८२–१०३

कांक्षामोहनीय कर्म–सम्बन्धी षड्द्वार ८२
कांक्षामोहनीय वेदन ८४
आराधक–स्वरूप ८५
अस्तित्व–नास्तित्व परिणमन ८८
कांक्षामोहनीय कर्मबन्ध के कारण ९२
कांक्षामोहनीय की उदीरणा, गर्हा आदि ९४
नैरयिकादि मे कांक्षामोहनीय ९९
श्रमणो के कांक्षामोहनीय कर्म का वेदन १००

प्रथम शतक : चतुर्थ उद्देशक : (कर्म–) प्रकृति १०४–११५

कर्म–प्रकृतियाँ १०४
उपस्थान–उपक्रमणादि प्ररूपणा १०६
कृतकर्म भोगे बिना मोक्ष नही १०९
पुद्गल स्कन्ध और जीव के सम्बन्ध मे शाश्वत प्ररूपणा १११
छद्मस्थ मनुष्य की मुक्ति ११२
केवली की मुक्ति ११४

प्रथम शतक : पंचम उद्देशक : पृथ्वी ११६–१४०

नरकावास सख्या ११६
अर्थाधिकार दस द्वार ११९
प्रथम स्थिति–स्थान द्वार ११९
द्वितीय अवगाहना द्वार १२२
तृतीय शरीर द्वार १२५
चौथा सहनन द्वार १२६
पाँचवाँ सस्थान द्वार १२७
छठा लेश्या द्वार १२९
सातवाँ दृष्टि द्वार १२९
आठवाँ ज्ञान द्वार १३०
नौवाँ योग द्वार १३२

दसवाँ उपयोग द्वार	१३३
ग्यारहवाँ · लेश्या द्वार	१३४
भवनपतियो की स्थिति आदि दस द्वार	१३४
एकेन्द्रियो की स्थिति आदि दस द्वार	१३५
विकलेन्द्रियो के दस द्वार	१३७
तिर्यंच पचेन्द्रियो के दस द्वार	१३७
मनुष्यो के दस द्वार	१३८
वाणव्यन्तरो आदि के दस द्वार	१३८

प्रथम शतक : छठा उद्देशक : यावन्त	**१४१–१५८**
सूर्य के उदयास्त सम्बन्धी प्रश्न	१४१
लोकान्त -अलोकान्तादि स्पर्श	१४३
अठारह पापस्थान क्रिया--स्पर्श प्ररूपणा	१४४
रोह अनगार का वर्णन	१४८
अष्टविध लोकस्थिति सदृष्टान्त निरूपण	१५३
जीव और पुद्गलों का सम्बन्ध	१५५
सूक्ष्म स्नेहकाय	१५७

प्रथम शतक : सप्तम उद्देशक : नैरयिक	**१५९–१७६**
चौबीस दण्डको के आहार-सम्बन्धी प्ररूपणा	१५९
जीवो की विग्रह-अविग्रह गति	१६४
देव का च्यवनानन्तर आयुष्य प्रतिसवेदन	१६६
गर्भगत जीव--सम्बन्धी विचार	१६७

प्रथम शतक : अष्टम उद्देशक : बाल	**१७७–१९२**
बाल, पण्डित आदि का आयुष्यबन्ध	१७७
मृगघातकादि को लगने वाली क्रिया	१८१
दो योद्धाओ मे जय- पराजय का कारण	१८८
सवीर्यत्व अवीर्यत्व की प्ररूपणा	१८९

प्रथम शतक : नवम उद्देशक : गुरुक	**१९३–२१४**
जीवो के गुरुत्व--लघुत्वादि की प्ररूपणा	१९३
पदार्थों के गुरुत्व--लघुत्व आदि की प्ररूपणा	१९४
श्रमणनिर्ग्रन्थो के लिए प्रशस्त	२००
आयुष्यबन्ध के सम्बन्ध मे अन्यतीर्थिक	२०२
कालस्यवेषिपुत्र का समाधान	२०४
चारो मे अप्रत्याख्यान क्रिया : समान रूप से	२१०
आधाकर्म आहारसेवन का फल	२११
स्थिर--अस्थिरादि निरूपण	२१३

प्रथम शतक : दशम उद्देशक : चलना	**२१५–२२६**
परमाणु के विषय में अन्यतीर्थिक मत	२१५
स्व-समय पक्ष	२१८
ऐर्यापथिकी और साम्परायिकी क्रिया	२२३
नरकादि गतियो मे जीवो का उत्पाद-विरह काल	२२५

द्वितीय शतक : प्रथम उद्देशक	**२२७–२७४**
प्राथमिक परिचय	२२७
द्वितीय शतक के दस उद्देशको का नाम-निरूपण	२२७
श्वासोच्छ्वास	२२७
एकेन्द्रियादि जीवो मे श्वासोच्छ्वास	२२७
वायुकाय के श्वासोच्छ्वास	२३१
मृतादी निर्ग्रन्थो के भवभ्रमण	२३३
स्कन्दक परिव्राजक	२३६
स्कन्दक का भगवान की सेवा मे आगमन	२४०
गौतम स्वामी द्वारा स्कन्दक का स्वागत	२४२
भगवान द्वारा स्कन्दक का समाधान	२४६
लोक सान्त या अनन्त	२४७
जीव सान्त या अनन्त	२४८
सिद्धि-विषयक प्रश्न	२४९
बालमरण-पण्डितमरण	२५१
स्कन्दक द्वारा निर्ग्रन्थ प्रव्रज्या	२५५
स्कन्दक द्वारा तपश्चरण	२६०
स्कन्दक अनगार का समाधिमरण	२६७
स्कन्दक की गति विषय मे कथन	२७३

द्वितीय शतक : द्वितीय उद्देशक : समुद्घात	**२७५–२७६**
समुद्घात तत्सम्बन्धी विश्लेषण	२७५

द्वितीय शतक : तृतीय उद्देशक : पृथ्वी २७७–२७८

सप्त नरकपृथ्वियाँ सम्बन्धित वर्णन २७७

द्वितीय शतक : चतुर्थ उद्देशक : इन्द्रिय २७९–२८१

इन्द्रियो के सस्थानादि का वर्णन २७९

द्वितीय शतक : पंचम उद्देशक : निर्ग्रन्थ २८२–३१०

निर्ग्रन्थदेव-परिचारणा-सम्बन्धी प्ररूपणा २८२
उदकगर्भ आदि की कालस्थिति २८४
मैथुनप्रत्ययिक सन्तानोत्पत्ति का निरूपण २८७
तुगिका के श्रमणोपासको का जीवन २८९
पार्श्वापत्यीय स्थविरो का पदार्पण २९२
श्रमणोपासक स्थविरो की सेवा मे २९४
श्रमणोपासको के प्रश्न स्थविरो के उत्तर २९७
राजगृह मे गौतम स्वामी का भिक्षाचर्यार्थ पर्यटन ३००
स्थविरो के विषय मे जिज्ञासा ३०२
पर्युपासना का फल ३०६
राजगृह का गर्म जल स्रोत ३०८

द्वितीय शतक : छठा उद्देशक : भाषा ३११–३१३

भाषा का स्वरूप ३११

द्वितीय शतक : सप्तम उद्देशक : देव ३१४–३१६

देवो के प्रकार ३१४

द्वितीय शतक : अष्टम उद्देशक : सभा ३१७–३२१

चमरेन्द्र की सुधर्मा सभा ३१७

द्वितीय शतक : नवम उद्देशक : द्वीप (समयक्षेत्र) ३२२–३२३

समयक्षेत्र-सम्बन्धी प्ररूपणा ३२२

द्वितीय शतक : दशम उद्देशक : अस्तिकाय ३२४–३३९

पच अस्तिकाय ३२४
धर्मास्तिकायादि के स्वरूप का निश्चय ३२७
उत्थानादि युक्त जीव द्वार ३३०
आकाशास्तिकाय के भेद-प्रभेद ३३२
धर्मास्तिकाय आदि का प्रमाण ३३५
धर्मास्तिकाय आदि की स्पर्शना ३३५

तृतीय शतक : प्रथम उद्देशक : विकुर्वणा ३४०–४०२

तृतीय शतक की सग्रहणी गाथा ३४०
उपोद्घात ३४०
चमरेन्द्र की ऋद्धि विषयक प्रश्न ३४१
वैरोचनेन्द्र बलि की ऋद्धि ३५१
नागकुमारेन्द्र धरण आदि की ऋद्धि ३५३
शक्रेन्द्र आदि देवो की ऋद्धि ३५७
देववर्ग की ऋद्धि ३६२
ईशानेन्द्र का वन्दनार्थ आगमन ३६८
कूटाकारशाला दृष्टान्त ३६९
ईशानेन्द्र का पूर्वभव तामली तापस ३७०
प्रव्रज्या का नाम 'प्राणामा' क्यो ? ३७७
पादपोपगमन अनशन ३७८
बलिचचावासी देवगण द्वारा प्रार्थना ३८०
ईशानकल्प मे उत्पत्ति ३८५
असुरो द्वारा तामली के शव की कदर्थना ३८६
ईशानेन्द्र का कोप ३८८
असुरो द्वारा क्षमा याचना ३९०
ईशानेन्द्र की स्थिति ३९२
शक्रेन्द्र और ईशानेन्द्र के विमानो की ऊँचाई ३९३
दोनो इन्द्रो का शिष्टाचार ३९४
सनत्कुमारेन्द्र की भवसिद्धिकता ३९८
प्रथम उद्देशक की उपसहार गाथाएँ ४०१

तृतीय शतक : द्वितीय उद्देशक : चमर ४०३–४४०

उपोद्घात ४०३
असुरकुमार देवो का स्थान ४०४
असुरकुमारो की गति विषयक प्रश्न ४०५
चमरेन्द्र का पूर्वभव ४१३
चमरेन्द्र द्वारा सौधर्मकल्प मे उत्पात ४१७
शक्रेन्द्र का चिन्तन ४२५
फैके हुए पुद्गल को पकडने की देवशक्ति ४३०

इन्द्र एव वज्र की ऊर्ध्वादि गति ४३२
चमरेन्द्र द्वारा कृतज्ञता-प्रदर्शन ४३६
असुरकुमारो के सौधर्मकल्प गमन का दूसरा कारण ४३८

तृतीय शतक : तृतीय उद्देशक : क्रिया ४४१-४५७

पाँच क्रियाएँ ४४१
सक्रिय-अक्रिय जीवो की अन्तक्रिया ४४६
प्रमत्तसयत और अप्रमत्तसयत ४५४
लवणसमुद्र मे वृद्धि-हानि कारण ४५६

तृतीय शतक : चतुर्थ उद्देशक : यान ४५८-४७२

अनगार की वैक्रिय शक्ति ४५८
वायुकाय का वैक्रिय रूप ४६१
मेघ का विविध रूपो मे परिणमन ४६४
उत्पन्न होने योग्य जीवो की लेश्या ४६६
अनगार की विकुर्वणा शक्ति ४६८
प्रमादी मनुष्य विकुर्वणा करते है ४७०

तृतीय शतक : पंचम उद्देशक . अनगार विकुर्वणा ४७३-४८२

अनगार की विकुर्वणा शक्ति ४७३
अनगार के अश्वादि रूप ४७८
विकुर्वणा का फल ४८०

तृतीय शतक : छठा उद्देशक : अनगार वीर्यलब्धि ४८३-४९३

मिथ्यादृष्टि की विकुर्वणा ८८३
सम्यग्दृष्टि अनगार की विकुर्वणा ४८७
चमरेन्द्र के आत्मरक्षक ४९२

तृतीय शतक : सप्तम उद्देशक : लोकपाल ४९४-५१०

शक्रेन्द्र के लोकपाल ४९४
सोमदेव लोकपाल ४९४
यम लोकपाल का वर्णन ४९९
वरुण लोकपाल ५०४
वैश्रमण लोकपाल ५०७

तृतीय शतक : अष्टम उद्देशक : अधिपति ५११-५१७

भवनपति देवो के इन्द्र ५११

तृतीय शतक : नवम उद्देशक : इन्द्रिय ५१८-५१९

पचेन्द्रिय विषयो का निरूपण ५१८

तृतीय शतक : दशम उद्देशक : परिषद् ५२०-५२१

इन्द्र परिषद् ५२०

चतुर्थ शतक : प्रथम-द्वितीय-तृतीय-चतुर्थ उद्देशक : ईसाणलोगपालविमाणाणि ५२२-५२४

सग्रहणी गाथा ५२२

चतुर्थ शतक : पंचम-षष्ठ-सप्तम-अष्टम उद्देशक : ईशान-लोकपाल राजधानी ५२५-५२५

लोकपालो की राजधानियाँ ५२५

चतुर्थ शतक : नवम उद्देशक : नैरयिकों की उत्पत्ति-प्ररूपणा ५२६-५२७

नैरयिको की उत्पत्ति-प्ररूपणा ५२६

चतुर्थ शतक : दशम उद्देशक : लेश्या ५२८-५३०

लेश्याओ का परिणमन ५२८

परिशिष्ट ५३१

शब्दकोष ५३३
आगमो का अनध्यायकाल ५७३
प्रकाशित आगम सूची ५७८

CONTENTS

Pratham Shatak (Chapter One) : First Lesson 3-49

Obeisance 3
Contents of the first chapter 4
Arrival in Rajagriha 5
Ganadhar Indrabhuti 7
Questions about Chalan (etc) 10
Life-span in twenty four Dandaks [Infernal beings] 13
The divine beings Asur Kumars 22
Naag Kumars 25
Five immobiles including earth-bodied beings 27
Two-sensed and other mobile beings 31
Human and divine beings 35
Harmful intent of beings 37
Sinful activity of beings in context of Leshya 40
Knowledge in context of birth 41
Liberation of Samvrit and Asamvrit 43
Divine birth of the indisciplined 46
Description of Vanavyantar Dev Lok 47

Pratham Shatak (Chapter One) : Second Lesson : Misery 50-81

Self-created sufferance 50
Life-span 51
Similarities in twenty four Dandaks (Infernal beings) 52
Similarities in Asur Kumars and other Gods 58
Similarities in Prithvikaya etc 59
Similarities in human and divine beings 62
Leshya in twenty four Dandaks 64
World-specific period of rebirth and existence 70
Antakriya (The ultimate activity) 74
Birth of Asamyat Bhavya Dravyadeva 75
Life-span of non-sentient beings 79

Pratham Shatak (Chapter One) : Third Lesson : Kanksha Pradosh (Aberration of desire) 82-103

Six sources of aberration of desire 82
Suffering of Kanksha Mohaniya Karmas 84
True follower 85
Existence and non-existence 88
Causes of bondage of Kanksha Mohaniya Karma 92
Fruition of Kanksha Mohaniya 94
Kanksha Mohaniya in infernal beings and others 99
Experience of Kanksha Mohaniya Karma by ascetics 100

Pratham Shatak (Chapter One) : Fourth Lesson : Karma Prakriti (Karma species) 104-115

Karma species 104
Upward movement 104
No liberation without suffering the fruits of Karmas 109
Eternality of matter and soul 111
Liberation of a Chhadmasth 112
Liberation of omniscient 114

Pratham Shatak (Chapter One) : Fifth Lesson : Prithvi (Hell) 116-140

Number of infernal abodes 116

Meaning of ten attributes of life 119
First . Sthiti 119
Second Avagahana 122
Third Sharira 125
Fourth Samhanan 126
Fifth Samsthan 127
Sixth · Leshya 129
Seventh Drishti 129
Eight Jnana 130
Ninth Yoga 132
Tenth Upayoga 133
Eleventh Leshya 134
Ten attributes of Bhavanpatis 134
Attributes of Ekendriyas 135
Attributes of Vikalendriyas 137
Attributes of Tiryanch Panchendriya 137
Attributes of human beings 138
Attributes of Vanavyantar and others 138

Pratham Shatak (Chapter One) : Sixth Lesson : Yavant (as far as) 141-158

Sunrise and sunset 141
Touching Lokant-Alokant etc 143
Touch of eighteen sources of sin 144
Roha Anagar 148
Lok-Sthiti with examples 153
Relationship of soul and matter 155
Minute water particles 157

Pratham Shatak (Chapter One) : Seventh Lesson : Nairayik (Infernal beings) 159-176

Food in twenty four Dandaks 159
Vigraha and Avigraha Gati of Soul 164
Post descent experience of life by a divine being 166
Soul in a womb 167

Pratham Shatak (Chapter One) : Eighth Lesson : Baal (Unrighteous) 177-192

Life-span bondage of Baal, Pundit etc 177
Involvement in activities 181
Cause of victory and defeat 188
About potency 189

Pratham Shatak (Chapter One) : Ninth Lesson : Guruk (Heavy) 193-214

Heaviness and lightness of souls 193
Heaviness and lightness of substances 194
Noble qualities of ascetics 200
Other views about life-span bondage 202
Query of Kaalasyaveshiputra 204
Uniformity of non-renunciation 210
Consequence of violating prohibition 211
Stability and unstability 213

Pratham Shatak (Chapter One) : Tenth Lesson : Chalana (Movement) 215-226

Other schools about ultimate particle 215
Jain view 218
Airyapathiki and Samparayiki activity 223
Duration of omission of birth 225

Second Shatak (Chapter Two) : First Lesson 227-274

Introduction 227
Names of the ten lessons 227
Shvasochchhvas (Respiration) 227
Respiration in one-sensed and other beings 227
Respiration in air-bodied beings 231

Rebirths of Mritadi ascetics 233
Skandak Parivrajak 236
Skandak approaches Bhagavan 240
Welcome by Gautam Swami 242
Explanation by Bhagavan 246
Lok With or without limit 247
Jiva · With or without limit 248
Question about Siddhi 249
Baal-Maran and Pundit-Maran 251
Skandak's initiation 255
Austerities of Skandak 260
Meditational death of ascetic Skandak 267
About rebirth of Skandak 273

Second Shatak (Chapter Two) : Second Lesson : Samudghat 275-276

Samudghat An analysis 275

Second Shatak (Chapter Two) : Third Lesson : Prithvi (Hell) 277-278

Description of seven hells 277

Second Shatak (Chapter Two) : Fourth Lesson : Indriya (Sense organs) 279-281

Description of Indriyas 279

Second Shatak (Chapter Two) : Fifth Lesson : Nirgranth (Ascetic) 282-310

Ascetic On sexual activity 282
Period of pregnancy 284
Progeny through copulation 287
Life of Shramanopasaks of Tungika 289
Arrival of senior ascetics of Parshva-school 292
In service of Sthavirs 294
Questions by Shramanopasaks Answers by Sthavirs 297
Alms-seeking by Gautam Swami in Rajagriha 300
Curiosity about Sthavirs 302
Outcome of worship 306
Hot water streams of Rajagriha 308

Second Shatak (Chapter Two) : Sixth Lesson : Bhasha (Speech) 311-313

Form of Speech 311

Second Shatak (Chapter Two) : Seventh Lesson : Dev (Divine beings or Gods) 314-316

Kinds of Gods 314

Second Shatak (Chapter Two) : Eighth Lesson : Sabha (Assembly) 317-321

Sudharma Sabha of Chamarendra 317

Second Shatak (Chapter Two) : Ninth Lesson 322-323

Dveep or Samayakshetra (Continents or the Sphere of Time) 322
Samayakshetra (The sphere of time) 322

Second Shatak (Chapter Two) : Tenth Lesson : Astikaya (Conglamorative entity) 324-339

Five Astikayas 324
Confirming the form of Dharmastikaya 327
Soul and its attributes 330
Categories of Akashastikaya 332
Dimensions of Dharmastikaya and others 335
Touch of Dharmastikaya and others 335

Third Shatak (Chapter Three) : First Lesson : Vikurvana (Transmutation) 340-402

Collative verse 340
Introduction 340
Chamarendra's opulence 341
Opulence of Vairochanendra Bali 351
Opulence of Naagkumarendra Dharan 353
Opulence of Shakrendra and other Gods 357
Opulence of groups of Gods 362
Arrival of Ishanendra to pay homage 368
Example of Kutakar-shala 369
Past birth of Ishanendra Tamali Tapas 370
Why Pranama initiation ? 377
Padapopagaman fasting 378
Request by Gods of Balichancha 380
Birth in Ishan Kalp 385
Disrespect of Tamali's dead-body by Asurs 386
Ishanendra's rage 388
Asurs seek forgiveness 390
Life-span of Ishanendra 392
Height of celestial vehicles 393
Courtesy of the two Indras 394
Liberation-worthiness of Sanatkumarendra 398
Concluding verse 401

Third Shatak (Chapter Three) : Second Lesson : Chamar 403-440

Introduction 403
Place of Asur Kumar Devs 404
Movement of Asur Kumar Devs 405
Past Birth of Chamarendra 413
Mischief by Chamarendra in Saudharma Kalp 417
Shakrendra's worry 425
The divine power to retrieve thrown matter 430
The speeds of Indra and Vajra 432
Chamarendra's gratitude 436
The second reason for visit to Saudharma Kalp 438

Third Shatak (Chapter Three) : Third Lesson : Kriya (Activity) 441-457

Five activities 441
Terminal activity of active and inactive beings 446
Pramattasamyat and Apramattasamyat 454
Cause of ebb and tide in Lavan Samudra 456

Third Shatak (Chapter Three) : Fourth Lesson : Yaan (Vehicle) 458-472

Power of transmutation of an ascetic 458
Transmuted form of air-bodied beings 461
Transformation of cloud 464
Leshya of souls destined to be born 466
Power of transmutation of an ascetic 468
Transformation by maligned person 470

Third Shatak (Chapter Three) : Fifth Lesson : Anagar Vikurvana (Transmutation by ascetic) 473-482

Power of transmutation of ascetic 473
Ascetic taking form of horse etc 478
Fruits of transmutation 480

Third Shatak (Chapter Three) :
Sixth Lesson : Anagar Viryalabdhi (Potency acquisition by ascetic) **483-493**

Transmutation by the unrighteous 483
Transmutation by the righteous 487
The personal guards of Chamarendra 492

Third Shatak (Chapter Three) :
Seventh Lesson : Lok-pal (Guardians of directions) **494-510**

Lok-pals of Shakrendra 494
Lok-pals of Soma Deva 494
Lok-pal Yama 499
Lok-pal Varun 504
Lok-pal Vaishraman 507

Third Shatak (Chapter Three) :
Eighth Lesson : Adhipati (Overlords) **511-517**

Kings of abode dwelling Gods 511

Third Shatak (Chapter Three) :
Ninth Lesson : Indriya (Sense organs) **518-519**

Subjects of five sense organs 518

Third Shatak (Chapter Three) :
Tenth Lesson : Parishad (Assembly) **520-521**

Assembly of Indra 520

Fourth Shatak (Chapter Four) :
First-Second-Third-Fourth Lesson : Celestial vehicles of Ishan Lok-pals **522-524**

Collative verse 522

Fourth Shatak (Chapter Four) :
Fifth-Sixth-Seventh-Eighth Lesson : Ishan-Lok-pal Rajadhani (Capital city of Lok-pal Ishan) **525-525**

Capital cities of Lok-pals 525

Fourth Shatak (Chapter Four) :
Ninth Lesson : Nairayik Utpatti (Birth of infernal beings) **526-527**

Nairayik Utpatti (Birth of infernal beings) 526

Fourth Shatak (Chapter Four) :
Tenth Lesson : Leshya (Soul-complexion) **528-530**

Transformation of Leshyas 528

Appendix **531**

Technical Terms 533
Inappropriate time for study of Agams 573
List of Published Agams 578

ॐ नमो समणस्स भगवओ महावीरस्स

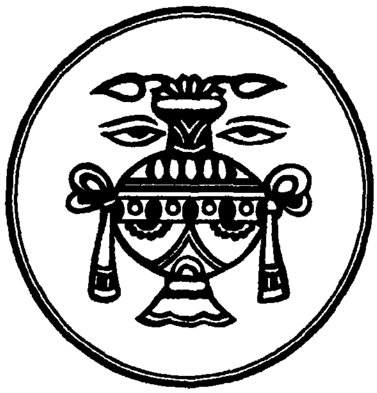
Om Namo Samanassa Bhagavao Mahavirassa

भगवतीसूत्र

(व्याख्याप्रज्ञप्तिसूत्र)

BHAGAVATI SUTRA

(VYAKHYAPRAJNAPTI SUTRA)



प्रथम शतक : प्रथम उद्देशक
FIRST SHATAK (Chapter One) : FIRST LESSON

मंगलाचरण **OBEISANCE**

१. नमो अरिहंताणं। नमो सिद्धाणं। नमो आयरियाणं। नमो उवज्झायाणं। नमो लोए सव्व साहूणं।

२. नमो बंभीए लिवीए। नमो सुयस्स।

१. अर्हन्तो (अरिहतो) को नमस्कार, सिद्धो को नमस्कार, आचार्यों को नमस्कार, उपाध्यायों को नमस्कार, लोक मे (मोक्षमार्ग के सम्यक् आराधक) सर्व साधुओं को नमस्कार।

२. ब्राह्मी लिपि को नमस्कार। श्रुत (द्वादशागी रूप अर्हत्प्रवचन या श्रुतज्ञान) को नमस्कार।

1. Obeisance to the *Arıhantas* (Victors). Obeisance to the *Siddhas* (Lıberated Souls) Obeisance to the *Acharyas* (spırıtual leaders who head an order or group) Obeisance to the *Upadhyayas* (Preceptors or teachers of scrıptures) Obeısance to all the *Sadhus* (ascetics or righteous aspırants on the path of lıberation) ın the world.

2. Obeısance to the *Brahmı* script Obeisance to the *Shrut* (the twelve part corpus of the sermon of the omniscient or the scriptural knowledge).

विवेचन : वृत्तिकार आचार्य अभयदेव सूरि ने **'अरहन्त'** शब्द के भिन्न-भिन्न उच्चारणों के आधार पर सात अर्थ किये है। जिनमे मुख्यत **'अरहन्त'** शब्द से वीतरागता, **'अर्हन्त'** शब्द से त्रिलोकपूज्यता तथा **'अरिहन्त'** शब्द से कर्मशत्रुओ का नाश करने वाले भाव प्रकट किये है। इसी प्रकार **'सिद्ध'** शब्द के ६ अर्थ करके उनकी कृतकृत्यता, शाश्वतता अष्टविध कर्मो से मुक्तता आदि भाव सूचित किये है। **'आचार्य'** शब्द के ४, **'उपाध्याय'** शब्द के ५ तथा **'साधु'** शब्द के भिन्न-भिन्न ३ अर्थ करके उनके गुणो की विशिष्टता बताई है। 'साधु' शब्द के निर्वचनो मे एक महत्त्वपूर्ण गाथा को उद्धृत करके वृत्तिकार कहते है–

असहाए सहायत्तं करेंति मे संयमं करेतस्स।
एएण कारणेणं णमामिऽहं सव्व साहूणं।

"वे सयम साधना करने वाले भव्य प्राणियो के लिए मोक्ष साधना मे सहायक बनते हैं, इस कारण मैं उनको नमस्कार करता हूँ।"

'ब्राह्मी लिपि' को नमस्कार क्यो किया? इसका समाधान देते हुए वृत्तिकार कहते हैं यह गणधरों ने नहीं, अपितु शास्त्र को लिपिबद्ध करने वाले किसी परम्परानुगामी ने किया है, ऐसा अनुमान है। इससे यह भी सूचित होता है कि ब्राह्मी लिपि के प्रथम पुरस्कर्ता भगवान ऋषभदेव को नमस्कार करना ही मुख्य ध्येय रहा है। वस्तुत नमस्कार भावश्रुत (ज्ञान) को ही किया जाता है, लिपि रूप द्रव्यश्रुत को नही, इस दृष्टि से ज्ञानदाता भगवान ऋषभदेव को यह नमस्कार किया गया है। *(भगवती वृत्ति, पत्राक १ से ५)*

Elaboration—On the basis of the varıant pronunciations, Acharya Abhayadev Surı, the commentator (*Vrittı*), has given seven meanıngs of the term *Arahant* Of these the three important meanings are—the detached one (*Arahant*), the revered one in three worlds (*Arhant*) and the vıctor and destroyer of the foes in the form of *karmas* (*Arıhant*). In the same way he has ınterpreted the term *Sıddha* sıx ways on the basis of ıts meanıngs as attaıners of perfectıon, eternality and freedom from the bondage of eıght kınds of *karmas*. He has hıghlıghted the vırtues of the three levels of ascetıcs by mentıoning four different meanıngs of *Acharya*, five of *Upadhyaya* and three of *Sadhu* Whıle elaborating the term *Sadhu* the commentator quotes an important verse statıng—

"As they provıde help to the worthy beıngs following the path of dıscipline leadıng to lıberatıon, I offer my obeısance to all the *Sadhus* "

Why salutatıons to the Brahmı scrıpt ? Explaınıng thıs the commentator (*Vrıttı*) says that probably thıs was not done by the *Ganadhars* but by some later traditional transcriber of the scrıptures This also indıcates that the salutatıons are ıntended for Bhagavan Rısabhadeva, the creator of the Brahmı scrıpt As a rule obeısance ıs offered only to spiritual knowledge (*ȷnana*) and not to the written knowledge (*dravya shrut*) ın the form of scrıpt Thus thıs obeısance ıs to Bhagavan Rısabhadeva, the source of knowledge. *(Bhagavatı Vrıttı, leaves 1 to 5)*

प्रथम शतक : विषय–सूची **CONTENTS OF THE FIRST CHAPTER**

३. रायगिह चलण १ दुक्खे २ कंखपओसे य ३ पगति ४ पुढवीओ ५।
जावंते ६ नेरइए ७ बाले ८ गुरुए य ९ चलणाओ १० ॥१॥

३. (प्रथम शतक के दस उद्देशको की गाथा इस प्रकार है–) (१) राजगृह नगर मे "चलन" (के विषय मे प्रश्न), (२) दु ख, (३) काक्षा–प्रदोष, (४) (कर्म) प्रकृति, (५) पृथ्वियाँ, (६) यावत् (जितनी दूर से इत्यादि), (७) नैरयिक, (८) बाल, (९) गुरुक, और (१०) चलनादि।

3. (The ten lessons in the first chapter are—) (1) *Chalan* (questıon about movement etc) ın Raȷagrıha, (2) *Duhkha* (suffering), (3) *Kanksha-pradosh* (faıth deluding *karma*), (4) *Prakrıtı* (*karma*-specıes), (5) *Prıthvı* (worlds), (6) *Yavat* (dıstance), (7) *Naırayık* (infernal beings), (8) *Baal* (ıgnorant), (9) *Guruk* (weight), and (10) *Chalanadı* (movement etc).

४. [१] तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे नामं नयरे होत्था। वण्णओ। तस्स णं रायगिहस्स नगरस्स बहिया उत्तरपुरत्थिमे दिसीभागे गुणसिलए नामं चेइए होत्था। सेणिए राया चिल्लणादेवी।

४. [१] उस काल (अवसर्पिणी काल के) और उस समय (चौथे आरे–भगवान महावीर के युग में) राजगृही नामक नगर था। वर्णक। (उसका वर्णन औपपातिकसूत्र मे कथित चम्पानगरी के वर्णन के समान है।) उस राजगृह के बाहर उत्तर–पूर्व के दिशाभाग–ईशानकोण में गुणशीलक नामक चैत्य (व्यन्तरायतन) था। वहाँ श्रेणिक (भम्भासार–बिम्बसार) राजा राज्य करता था। चेल्लणादेवी उसकी रानी थी।

4. [1] During that period (near the end of the fourth epoch of the current regressing cycle of time) of time (when Bhagavan Mahavir was living on this earth) there was a city called Rajagriha. Description (should be read as that of Champa city as mentioned in *Aupapatik Sutra*). Outside Rajagriha city, in the north-eastern direction (*Ishan Kone*) there was Gunasheelak Chaitya (*Yaksha* temple complex). King Shrenik (Bhambhasar or Bimbasar) ruled there. His queen was Chelana Devi.

राजगृह मे पदार्पण **ARRIVAL IN RAJAGRIHA**

४. [२] तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे आइगरे तित्थगरे सहसंबुद्धे पुरिसुत्तमे पुरिससीहे पुरसवरपुंडरीए पुरिसवरगंधहत्थी लोगुत्तमे लोगणाहे लोगप्पदीवे लोगपज्जोयगरे अभयदए चक्खुदए मग्गदए सरणदए बोहिदए धम्मदए धम्मदेसए धम्मनायगे धम्मसारही धम्मवरचाउरंतचक्कवट्टी अप्पडिहयवरनाणदंसणधरे वियट्टछउमे जिणे जाणए बुद्धे बोहए मुत्ते मोयए सव्वण्णू सव्वदरिसी सिवमयलमरुजमणंत–मक्खयमव्वाबाहं अपुणरावित्तियं 'सिद्धिगइ' नामधेयं ठाणं संपाविउकामे जाव समोसरणं। परिसा निग्गया। धम्मो कहिओ। परिसा पडिगया।

४. [२] उस काल, उस समय मे (वहाँ) श्रमण भगवान महावीर स्वामी विचरण कर रहे थे, जो आदिकर (द्वादशागी रूप श्रुत के पुरस्कर्त्ता), तीर्थंकर (प्रवचन या सघ के कर्त्ता) सहसम्बुद्ध (स्वयं तत्त्व के ज्ञाता), पुरुषोत्तम, पुरुषसिह (पुरुषो मे सिह की तरह पराक्रमी), पुरुषवर–पुण्डरीक (पुरुषों में श्रेष्ठ पुण्डरीक हजार पखुडियो वाला श्वेत–कमल रूप), पुरुषवरगन्धहस्ती (पुरुषो मे श्रेष्ठ गन्धहस्ती के समान), लोकोत्तम, लोकनाथ (तीनो लोको की आत्माओं के योग–क्षेमंकर) (लोकहितकर), लोक–प्रदीप (दीपक), लोकप्रद्योतकर (सूर्य के समान), अभयदाता, चक्षुदाता (श्रुतधर्मरूपी नेत्रदाता), मार्गदाता (मोक्षमार्ग–प्रदर्शक), शरणदाता (त्राण–दाता), बोधिदाता, धर्मदाता, धर्मोपदेशक, धर्मनायक, धर्मसारथि (धर्मरथ के सारथि), धर्मवर–चातुरन्त–चक्रवर्ती, अप्रतिहत (निराबाध) ज्ञान–दर्शनधर, छद्मरहित (छलकपट और अज्ञानादि आवरणो से दूर), जिन (राग–द्वेषविजेता), ज्ञायक (सम्यक् ज्ञाता), बुद्ध (समग्र तत्त्वो को जानकर राग–द्वेषविजेता), बोधक (दूसरो को तत्त्वबोध देने वाले), मुक्त (बाह्य–आभ्यन्तर ग्रन्थि से रहित), मोचक (दूसरो को कर्मबन्धनो से मुक्त कराने वाले), सर्वज्ञ (समस्त पदार्थों के विशेष रूप से ज्ञाता), सर्वदर्शी (सर्व पदार्थों के विशेष रूप से द्रष्टा) थे, तथा जो शिव (सर्व बाधाओ से रहित), अचल (स्वाभाविक प्रायोगिक चलन–हेतु से रहित), अरुज (रोगरहित), अनन्त (अनन्तज्ञान–दर्शनादियुक्त), अक्षय (अन्तरहित), अव्याबाध (दूसरो को पीडित न करने वाले या सर्व प्रकार की बाधाओं से विहीन), पुनरागमनरहित सिद्धिगति (मोक्ष) नामक स्थान को सम्प्राप्त करने के

इच्छुक थे। (यहाँ से लेकर समवसरण तक का वर्णन औपपातिकसूत्र से जान लेना चाहिए।) (भगवान महावीर का पदार्पण जानकर) परिषद् (राजगृह के राजादि लोग तथा अन्य नागरिकों का समूह भगवान के दर्शन, वन्दन, पर्युपासन एवं धर्मोपदेश श्रवण के लिए) निकला। (निर्गमन का समग्र वर्णन औपपातिकसूत्र से जान लेना चाहिए।) (भगवान ने उस विशाल परिषद् को) धर्मोपदेश दिया। (धर्मोपदेश सुनकर और यथाशक्ति धारण करके वह) परिषद् (अपने स्थान को) वापस लौट गई।

4. [2] At that period of time Shraman Bhagavan Mahavir, who is the first propounder of the *shrut dharma* (Jainism) of his time (*aaigare* or *aadikar*); the religious ford-maker or founder of the four-fold religious order (*Titthagare* or *Tirthankar*); the self-enlightened one (*sahasambuddhe* or *svayam-sambuddh*); supreme among men (*purisuttame* or *purushottam*), a lion among men because of his spiritual valour (*purisasihe* or *purush-simha*); unspoiled among men like a white lotus (*purisavar-pundariye* or *purushavar-pundareek*), a glorious elephant among men (*purisavar-gandhahatthi* or *purushavar-gandhahasti*) [ordinary elephants abandon the area where a bull elephant comes, likewise drought, epidemic, and other such misfortunes disappeared from areas where he went], eminent among all beings in the *Lok* or occupied space (*loguttame* or *lokottam*), master of all the worthy beings of all worlds (*loganahe* or *lokanaath*), [benefactor of all the worlds (*logahiye* or *lokahitakar*)], lamp of wisdom who dispels the darkness of ignorance in all the worlds (*logappadive* or *lokapradeep*), spiritual illuminator of all the worlds (*logapajjoyagare* or *lokapradyotakara*), who dispels fear (*abhayadaye* or *abhayadayak*); gives spiritual vision (*chakkhudaye* or *chakshupradayak*), shows the path of liberation in the form of right knowledge, perception and conduct (*maggadaye* or *margapradayak*); gives refuge to the seekers of the right path (*sarandaye* or *sharanaprad*); who steers one to enlightenment (*bohidaye* or *bodhidata*), originator of *dharma* (*dhammadaye* or *dharmadata*), preceptor of *dharma* (*dhammadesaye* or *dharmopadeshak*), [leader of *dharma* (*dhammaragaye* or *dharmanayak*)], true guide of *dharma* (*dhammasarahi* or *dharmasarathi*), the emperor of *dharma* in all the four dimensions of life (*dhammavarachaurant-chakkavatthi* or *dharmavarachaturanta chakravarti*), the holder of unlimited unveiled knowledge and perception (*appadihayavarananadamsanadhare* or *apratihat-jnana-darshan-dhar*); free of masks of ignorance and ambiguities (*viattachhaume* or *vyavrittachhadma*), the conqueror of attachment and aversion (*jine* or *jina*); the lamp of knowledge and

beacon on the path of victory over attachment and aversion (*janaye* or *jnata/jnapak*); the enlightened (*buddhe* or *buddha*); the giver of enlightenment (*bohaye* or *bodhak*); who is the liberated (*mutte* or *mukta*); the liberator (*moyaye* or *mochak*); all-knowing (*savvannu* or *sarvajna*); all-seeing (*savvadariso* or *sarvadarshi*); the epitome of beatitude (*siva* or *Shiva*); unwavering (*ayal* or *achal*); free of ailments (*arua* or *aruja*); infinite and eternal (*anant*); free of decay (*akkhaya* or *akshaya*); beyond all obstructions (*avvavaha* or *avyabadh*); the aspirant of and destined to attain the state of ultimate perfection (*siddha gai* or *siddha gati*) from where there is no return to the cycles of rebirth (*apunaravattiam* or *apunaravartak*), .. and so on up to... *Samavasaran* (to be read as mentioned in *Aupapatik Sutra*). Congregation came out (Citizens of Rajagriha including kings and other eminent people came out in throngs for beholding, paying homage and obeisance to Bhagavan Mahavir and to listen his sermon. Detailed description should be read as in *Aupapatik Sutra*) *Bhagavan* gave his sermon and the congregation dispersed to return home after listening to the sermon and resolving to follow it to the best of one's ability.

गणधर इन्द्रभूति **GANADHAR INDRABHUTI**

४. [३] तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स जेट्ठे अंतेवासी इंदभूती नामं अणगारे गोयमसगोत्तेणं सत्तुस्सेहे समचउरंससंठाणसंठिए वज्जरिसभनारायसंघयणे कणग-पुलगणिघस-पम्हगोरे उग्गतवे दित्ततवे तत्ततवे महातवे ओराले घोरे घोरगुणे घोरतवस्सी घोरबंभचेरवासी उच्छूढसरीरे संखित्तविपुलतेयलेसे चउदसपुव्वी चउनाणोवगए सव्वक्खरसन्निवाती समणस्स भगवतो महावीरस्स अदूरसामंते उड्ढं जाणु अहोसिरे झाणकोट्ठोवगए संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ।

४. [३] उस काल और उस समय मे श्रमण भगवान महावीर के पास (न तो बहुत दूर, न बहुत निकट), उत्कुटुकासन से (दोनो घुटना ऊँचा किये हुए) नीचे सिर झुकाए हुए, ध्यानरूपी कोठे मे प्रविष्ट (ध्यान मे तल्लीन) श्रमण भगवान महावीर के ज्येष्ठ शिष्य इन्द्रभूति नामक अनगार संयम और तप से आत्मा को भावित करते हुए विचरण करते थे। वह गौतम-गोत्रीय थे, शरीर से-सात हाथ ऊँचे, समचतुरस्र सस्थान एव वज्रऋषभनाराचसहनन वाले थे। उनके शरीर का वर्ण सोने की रेखा के समान तथा पद्म-पराग के समान (गौर) था। वे उग्रतपस्वी, दीप्ततपस्वी, तप्ततपस्वी, महातपस्वी, उदार, घोर (परीषह तथा इन्द्रियादि पर विजय पाने में कठोर), घोरगुण (दूसरों द्वारा दुश्चर मूलगुणादि सम्पन्न), घोरतपस्वी, घोर (कठोर) ब्रह्मचर्यवासी, शरीर की विभूषा के त्यागी थे। उन्होने विपुल (व्यापक) तेजोलेश्या को संक्षिप्त (अपने शरीर मे अन्तर्लीन) कर ली थी, वे चौदह पूर्वों के ज्ञाता और चतुर्ज्ञानसम्पन्न सर्वाक्षर-सन्निपाती थे।

4. [3] During that period of time Indrabhuti Anagar, the senior disciple of Bhagavan Mahavir, was sitting neither very far nor very near from him in *Utkatuk aasan* (squatting posture), with bowed head and deeply engrossed in meditation, enkindling (*bhaavit*) his soul with ascetic-discipline and austerities. He belonged to the Gautam clan. He was seven cubits tall. The structure of his body conformed to *samachaturasra samsthan* (The anatomical structure of a human being where parallel lines drawn from the extremities of a body sitting cross-legged form a square and where all the parts of body above and below the navel are of standard dimensions The dimensions increase and decrease proportionately) and *vajra-rishabh-narach-samhanan* (a specific type of constitution of human body where the joints are perfect and strongest). His complexion was fair like a line of gold and pollen of lotus He was extremely severe (*ugra*), radiant (*deept*), simmering (*tapta*) and paramount (*maha*) in austerities, he was generous, he was *ghor* (severe in winning over afflictions and senses), *ghor-guna* (paramount in virtues), *ghor-tapasvi* (austere in austerities) and *ghor-brahmacharyavasi* (scrupulously celibate), and completely dissociated from the body He had tempered the *vipul tejoleshya* (great radiant energy) he was endowed with. He was a scholar of fourteen *Purvas* (subtle canon), endowed with four kinds of knowledge and all verbal knowledge (*sarvakshar-sannipati*).

४. [४] तए णं से भगवं गोयमे जायसड्ढे जायसंसए जायकोऊहल्ले, उप्पन्नसड्ढे उप्पन्नसंसए उप्पन्नकोऊहल्ले, संजायसड्ढे संजायसंसए संजायकोऊहल्ले, समुप्पन्नसड्ढे समुप्पन्नसंसए समुप्पन्नकोऊहल्ले उट्ठाए उट्ठेति। उट्ठाए उट्ठेत्ता जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिण पयाहिणं करेति, तिक्खुत्तो आयाहिण पयाहिणं करेत्ता वंदति, नमंसति, नच्चासन्ने नाइदूरे सुस्सूसमाणे अभिमुहे विणएणं पंजलिउडे पज्जुवासमाणे एवं वयासी–

४. [४] तत्पश्चात् गणधर गौतम के मन में श्रद्धा–रुचि, संशय (जिज्ञासा) और कुतूहल (आश्चर्य) उत्पन्न हुआ। उसके समाधान के लिए प्रवृत्त हुए और तब अपने स्थान से उठकर खडे हो गये। खडे होकर श्रमण गौतम जहाँ श्रमण भगवान महावीर विराजमान थे, उस ओर आये। निकट आकर श्रमण भगवान महावीर को उनके दाहिनी ओर से प्रारम्भ करके तीन बार प्रदक्षिणा की। फिर वन्दन–नमस्कार किया। नमस्कार करके वे न तो बहुत पास और न बहुत दूर भगवान के समक्ष विनयपूर्वक ललाट पर हाथ जोडे हुए, भगवान के वचन सुनना चाहते हुए उन्हे नमन करते व उनकी पर्युपासना करते हुए इस प्रकार बोले–

4. [4] Then an interest, doubt and curiosity got triggered, sprouted, arose and surfaced in the mind of Ganadhar Gautam. He got up from his

seat, advanced where Bhagavan Mahavir was seated and went around him thrice clockwise. After that he paid his homage and obeisance and took his seat neither far from nor very near *Bhagavan*. Filled with adoration for *Bhagavan* and desire to listen to the sermon, he humbly joined his palms, raised them to his forehead and submitted—

विवेचन : इस सूत्र [३] में गणधर गौतम स्वामी के बाह्य-आभ्यन्तर व्यक्तित्व की झलक बताई है। शारीरिक सुघडता सुन्दरता के साथ उनकी उग्र तप साधना व ध्यान-साधना का भी परिचय कराया है। **'उग्गतवे'** आदि चार विशेषणों से सूचित किया है कि वे **'उग्रतपस्वी'**-इसका अर्थ है, जिस तप की साधना मानव नही कर सके, **दीप्ततपस्वी**-तपरूपी अग्नि से जिन्होने कर्म वन को जला दिया हो, **तप्ततपस्वी**-तप द्वारा कर्मों को सतप्त/चलित कर दिया हो, **महातपस्वी**-वे सर्वथा निष्काम/इच्छादोष से रहित थे। **उच्छूढसरीरे**-शरीर के प्रति जिनकी किचित् मात्र ममता नही थी। **संखित्तविपुलतेयलेसे**-तप साधना द्वारा जिन्हे विशाल तेजोलब्धि प्राप्त थी, किन्तु उसे अपने शरीर मे ही अन्तर्लीन कर लिया, जिससे किसी को कोई हानि नहीं पहुँचे। **सव्वक्खरसन्निवाती**-वर्णमाला के समस्त अक्षरो के सयोग से बनने वाले समस्त पदो, मन्त्राक्षरो आदि के ज्ञाता थे।

सूत्र [४] मे गौतम स्वामी के मन मे उठी जिज्ञासा के लिए **जायसड्ढे** आदि तीन विशेषण दिये हैं। जिनका अर्थ है-**जायसड्ढे**-श्रद्धा-तत्त्व जानने की रुचि पैदा हुई। **जायसंसए**-मन मे सशय या जिज्ञासा उत्पन्न हुई कि भगवान ने ऐसा क्यो, किसलिए कहा? **जायकोऊहल्ले**-मन मे कुतूहल या आश्चर्य उत्पन्न हुआ कि भगवान इसका क्या उत्तर देते है?

श्रद्धा, सशय और कुतूहल के साथ, **जाय, उप्पण्ण, संजाय एवं समुप्पण्ण**-आदि विशेषण हैं, जिनका अर्थ है-जात-बीजारोपण, उत्पन्न-अकुरण होना, संजात-वृद्धिगत होना, समुप्पन्न-निष्पन्न होगा। यह जिज्ञासा के क्रमिक विकास व निरन्तरता का सूचक है।

Elaboration—This aphorism [3] provides a glimpse of the physical and spiritual personality of Ganadhar Gautam Swami Along with his physical perfection and beauty, his extreme austerities and spiritual accomplishments have also been mentioned. The four adjectives used for his austerities convey *Ugratapasvi*—he had reached a level of severity of austerities difficult for an ordinary person to reach; *Deeptatapasvi*—with the radiant fire of austerities he had burnt the jungle of *karmas; Taptatapasvi*—with the simmering heat of austerities he had incinerated and disintegrated *karmas; Mahatapasvi*—he had reached the lofty level of austerities where he was free of all desires Other adjectives are : *Uchchhudhasarire*—he had no fondness for his body, in other words he had completely dissociated himself from his body. *Sankhittavipulateyalese*—After acquiring the *vipul tejoleshya* (great radiant energy) through his austerities, he had tempered and contained it so that it did not harm anyone *Savvakkhar-sannipati*—he had detailed knowledge of all permutations and combinations of all the letters of the alphabet.

Aphorism [4] uses three terms for Gautam Swami's inquisitiveness—*Jaayasaddhe* or *jaatashriddha*—origin of reverence, here it means origin of interest to know the fundamentals *Jaayasamsaye* or *jaatasamshay*—rising of doubt or inquisitiveness as to why *Bhagavan* said something ? *Jaayakouhalle* or *jaatakautuhal*—rising of curiosity as to what *Bhagavan* would reply to a particular question ?

Four adjectives have been additionally used with the terms *shraddha* (interest), *samshaya* (doubt) and *kutuhal* (curiosity), namely *jaaya, uppanna, sanjaaya* and *samuppanna*. They signify—*Jaaya* or *jaata*—sowing a seed; conception; this means triggering in this context. *Uppanna* or *utpanna*—birth; this means sprouting here, *Sanjaaya* or *sanjaat*—mental manifestation; enhancement *Samuppanna*—to attain perfection; this means surfacing here *Apahinam-payahinam*—to go around someone starting from left; to go around clockwise.

चलन आदि से सम्बन्धित प्रश्न QUESTIONS ABOUT CHALAN (ETC.)

५. [प्र. १] से नूणं भंते ! (१) चलमाणे चलिए ? (२) उदीरिज्जमाणे उदीरिए ? (३) वेइज्जमाणे वेइए ? (४) पहिज्जमाणे पहीणे ? (५) छिज्जमाणे छिन्ने ? (६) भिज्जमाणे भिन्ने ? (७) डज्झमाणे डड्ढे ? (८) मिज्जमाणे मडे ? (९) निज्जरिज्जमाणे निज्जिण्णे ?

[उ.] हंता गोयमा ! चलमाणे चलिए जाव निज्जरिज्जमाणे निज्जिण्णे।

५. [प्र. १] हे भन्ते ! क्या यह निश्चित कहा जा सकता है कि–(१) जो चल रहा हो, वह चला ? (२) जो (कर्म) उदीरा जा रहा है, वह उदीर्ण हुआ ? (३) जो (कर्म) वेदा (भोगा) जा रहा है, वह वेदा गया ? (४) जो गिर रहा है (पतित या नष्ट हो रहा है), वह गिरा (पतित हुआ या हटा) ? (५) जो (कर्म) छेदा जा रहा है, वह छिन्न हुआ ? (६) जो (कर्म) भेदा जा रहा है, वह भिन्न हुआ ? (७) जो (कर्म) दग्ध हो रहा है, वह दग्ध हुआ ? (८) जो मर रहा है, वह मरा ? (९) जो (कर्म) निर्जरित हो रहा है, वह निर्जीण हुआ ?

[उ.] हाँ, गौतम ! जो चल रहा हो, उसे चला, यावत् निर्जरित हो रहा है, उसे निर्जीण हुआ (कहा जा सकता है)।

5. [Q. 1] *Bhante* ! Is it proper to express with certainty about—(1) a thing that is moving as moved ? (2) a thing (*karma*) that is fructifying as fructified ? (3) a thing (*karma*) that is being experienced as experienced ? (4) a thing (*karma*) that is falling or separating as fallen or separated ? (5) a thing (*karma*) that is being cut as cut ? (6) a thing (*karma*) that is being pierced as pierced ? (7) a thing (*karma*) that is burning as burnt ?

(8) a thing that is dying as dead ? (9) a thing (*karma*) that is being shed as shed ?

[Ans.] Yes, Gautam ! It is so. (It is proper to express with certainty about—) a thing that is moving as moved... and so on up to... a thing (*karma*) that is being shed as shed.

[प्र. २] एए णं भंते ! नव पदा किं एगट्ठा नाणाघोसा नाणावंजणा उदाहु नाणट्ठा नाणाघोसा नाणावंजणा ?

[उ.] गोयमा ! (१) चलमाणे चलिए, (२) उदीरिज्जमाणे उदीरिए, (३) वेइज्जमाणे वेइए, (४) पहिज्जमाणे पहीणे, एए णं चत्तारि पदा एगट्ठा नाणाघोसा नाणावंजणा उप्पन्नपक्खस्स। (१) छिज्जमाणे छिन्ने–(२) भिज्जमाणे भिन्ने, (३) डज्झमाणे डड्ढे, (४) मिज्जमाणे मडे, (५) निज्जरिज्जमाणे निज्जिण्णे, एए णं पंच पदा नाणट्ठा नाणाघोसा नाणावंजणा विगतपक्खस्स।

[प्र. २] भगवन् ! क्या ये नौ पद, नाना-घोष और नाना-व्यंजनो वाले एकार्थक है ? अथवा नाना-घोष वाले और नाना-व्यजनों वाले भिन्नार्थक पद हैं ?

[उ.] हे गौतम ! (१) जो चल रहा है, वह चला, (२) जो उदीरा जा रहा है, वह उदीर्ण हुआ, (३) जो वेदा जा रहा है, वह वेदा गया, और (४) जो नष्ट हो रहा है, वह नष्ट हुआ, ये चारों पद उत्पन्न पक्ष की अपेक्षा से एकार्थक, नाना-घोष वाले और नाना-व्यजनो वाले हैं तथा (१) जो छेदा जा रहा है, वह छिन्न हुआ, (२) जो भेदा जा रहा है, वह भिन्न हुआ, (३) जो दग्ध हो रहा है, वह दग्ध हुआ, (४) जो मर रहा है, वह मरा, और (५) जो निर्जीण किया जा रहा है, वह निर्जीर्ण हुआ, ये पाँच पद विगत पक्ष की अपेक्षा से नाना अर्थ वाले, नाना-घोष वाले और नाना-व्यंजनों वाले है।

[Q. 2] *Bhante* ! Do these nine sentences have the same meaning with different sounds and different nuances ? Or have they different meanings with different sounds and different nuances ?

[Ans.] Gautam ! The four statements that (1) a thing that is moving as moved, (2) a thing (*karma*) that is fructifying as fructified, (3) a thing (*karma*) that is being experienced as experienced, (4) a thing (*karma*) that is falling or separating as fallen or separated have the same meaning with different sounds and different nuances because they are in the state of formation (present). The four statements that (1) a thing (*karma*) that is being cut as cut, (2) a thing (*karma*) that is being pierced as pierced, (3) a thing (*karma*) that is burning as burnt, (4) a thing that is dying as dead, and (5) a thing (*karma*) that is being shed as shed, have different meanings with different sounds and different nuances because they are in the context of the state of conclusion (past).

विवेचन : भगवान महावीर का कथन था कि जो कार्य प्रारम्भ हो चुका है, उसके लिए किया, हो गया, आदि सम्पन्नता सूचक भूतकालिक क्रिया प्रयोग किया जा सकता है। जो चलने लगा उसे 'चला' कहा जा सकता

है। जैसे कपडा बुनना प्रारम्भ करने पर 'कपडा बुना' ऐसा व्यवहार मे बोला जा सकता है। क्रिया का प्रथम क्षण भी उतना ही महत्त्वपूर्ण है जितना अन्तिम क्षण। इसलिए ऐसा कहना अनुपयुक्त नही है। किन्तु 'जमालि' ने इस सिद्धान्त का विरोध कर अपने 'बहुरत' मत की स्थापना की और कहा-जो कार्य किया जा रहा है, उसे सम्पूर्ण न होने तक 'किया गया' ऐसा कहना मिथ्या है। इसी सन्दर्भ मे गौतम स्वामी ने भगवान के समक्ष ये नौ प्रश्न प्रस्तुत किये। *(विशेषावश्यक भाष्य, गा २३०६-२३०७)*

Elaboration—It was a theory of Bhagavan Mahavir that conclusive statement with past tense can be used for an act that has been commenced That which has started moving (present continuous) can be called as moved (present perfect). For example once weaving for a cloth has commenced it can be generally said that cloth has been woven. The first moment of any action is as important as the last moment. Therefore it is not improper to express thus. But Jamali opposed this theory and gave his theory of *Bahurat-vaad* He said that it was wrong to convey that an action is concluded when it is still being performed Gautam Swami asked these nine questions in this context only *(Visheshavashyak Bhashya, verses 2306-2307)*

विशेष शब्दार्थ : चलन-कर्मदल का उदयावलिका के लिए चलना। उदीरणा-कर्मों की स्थिति परिपक्व होने पर उदय मे आने से पहले ही अध्यवसाय विशेष से उन कर्मों को उदयावलिका मे खीच लाना। वेदना-उदयावलिका मे आये हुए कर्मों के फल का अनुभव करना। प्रहाण-आत्म-प्रदेशो के साथ एकमेक हुए कर्मो का हटना/गिरना-पृथक् करना। छेदन-कर्म की दीर्घकालिक स्थिति को अपवर्तना द्वारा अल्पकालिक स्थिति मे करना। भेदन-बद्ध कर्म के तीव्र रस को अपवर्तनाकरण द्वारा मन्द करना अथवा उद्वर्तनाकरण द्वारा मन्द रस को तीव्र करना। दग्ध-कर्मरूपी काष्ठ को ध्यानाग्नि से जलाकर अकर्म रूप कर देना। मृत-पूर्वबद्ध आयुष्यकर्म के पुद्गलो का नाश होना। निर्जीर्ण-फल देने के पश्चात् कर्मों का आत्मा से पृथक् होना/क्षीण होना। एकार्थ-जिनका विषय एक हो या जिनका अर्थ अथवा फल एक हो।

घोष-तीन प्रकार के हैं-**उदात्त**-जो उच्च स्वर से बोला जाये, **अनुदात्त**-जो मद स्वर से बोला जाये और **स्वरित**-जो मध्यम स्वर से बोला जाये। यह तो स्पष्ट है कि इन नौ पदो के घोष और व्यंजन (अक्षर) पृथक्-पृथक् हैं।

चारों एकार्थक-चलन, उदीरणा, वेदना और प्रहाण; ये चारो क्रियाएँ तुल्यकाल (एक अन्तर्मुहूर्त्तस्थिति) की अपेक्षा से, गत्यर्थक होने से तथा (केवलज्ञान की उत्पत्ति रूप) एक ही कार्य की साधक होने से एकार्थक है।

पाँचों भिन्नार्थक-छेदन, भेदन, दहन, मरण, निर्जरण; ये पाँचो पद वस्तुविनाश किवा विगत पक्ष की अपेक्षा से भिन्न-भिन्न अर्थ वाले है। तात्पर्य यह है कि छेदन स्थितिबन्ध की अपेक्षा से, **भेदन** अनुभाग (रस) बन्ध की अपेक्षा से, **दहन** प्रदेशबन्ध की अपेक्षा से, **मरण** आयुष्यकर्म की अपेक्षा से और **निर्जरण** समस्त कर्मों की अपेक्षा से कहा गया है। अतएव ये सब पद भिन्न-भिन्न अर्थ के वाचक है।

चलमाणे चलिए



चित्र परिचय-१

Illustration No. 1

चलमाणे चलिए

भगवान महावीर से गणधर इन्द्रभूति गौतम पूछते हैं-

(१) भन्ते ! जो चल पड़ा, उसे चलित (चला) कहा जा सकता है ? (२) इसी प्रकार **उदीर्ण**-(बाहर लाना) जैसे कुएँ से जल निकालना प्रारम्भ किया है तो उसे निकाल लिया। (३) **वेदन**-(भुक्त) जैसे भोजन का प्रथम ग्रास खाना प्रारम्भ किया है, उसे **भुक्त**। (४) **प्रहीण**-जैसे दीवार की ईट गिरानी प्रारम्भ की है, उसे प्रहीण (नष्ट)। (५) **छिद्यमान**-(छेदना) जैसे हवा भरे गुब्बारे को छेदने के लिए तीर चलाया तो उसे **छिन्न**। (६) **भिद्यमान**-जैसे वृक्ष की टहनी को काटना प्रारम्भ किया है, उसे **भिन्न**। (७) **दह्यमान**-जैसे घास के ढेर को जलाना आरम्भ किया उसे दग्ध, (८) **म्रियमाण**-जैसे कोई अन्तिम साँस गिनता मर रहा है, उसे **मृत** (९) **निर्जीर्ण**-(झरना) जैसे घड़े से जल झरना आरम्भ हुआ है, तो उसे **निर्जीर्ण** (झर चुका)। क्या इस प्रकार कहा जा सकता है ?

इन सभी उदाहरणों का आत्मा के साथ लगे कर्मों को जोड़कर समझना चाहिए। जैसे जो कर्म चलित हो चुका है, उसे चलित, इसी प्रकार जिस कर्म की निर्जरा प्रारम्भ हो चुकी है। उसे **निर्जीर्ण** कहा जा सकता है।

शतक १ उ. १ सूत्र ५ पृष्ठ १२

WHAT IS MOVING IS MOVED

Ganadhar Indrabhuti Gautam asked Bhagavan Mahavir --

(1) Bhante ! Is it proper to express a thing that is moving as moved ? In the same way can we call (2) fructified (brought out)--taking out water from a well as taken out (3) experienced—taking of first morsel of food as eaten meal, (4) fallen—falling of one brick of a wall as demolished the wall (5) pierced—launching of an arrow to pierce a balloon as pierced, (6) cut—a tree branch being cut as cut (7) burnt—putting of flame to a heap of grass as burnt, (8) dead—a person taking his last breath as dead, and (9) shed—commencing of pouring water from a pitcher as shed

All these examples should be used to understand the interaction of soul and karma For example the karma that is moving is called moved, and so on up to the karma that is being shed is called shed

—Shatak 1, lesson 1, Sutra 5, page 12

TECHNICAL TERMS

Chalan—the movement of bunches of *karmas* towards fruition. *Udirana* (fructify)—to push the ripe *karmas* towards premature fruition with special efforts *Vedan* (experience)—to experience the fruits of fructified *karmas* *Prahan* (separation)—to separate *karmas* fused with soul-space-points *Chhedan* (cutting)—to cut short the defined duration of *karmas* by division. *Bhedan* (piercing)—To reduce or increase the intensity of bonded *karmas* by dividing or compounding. *Dagdha* (burn)—to burn the wood of *karmas* with the fire of meditation and turn them to ash of non-*karma* *Mrit* (dead)—destruction of *karmas* defining life-span. *Nirjirn* (shed)—shedding or destruction of *karmas* after fruition *Ekarth* (synonymous)—having same meaning, subject or result

Ghosh (sound) is of three kinds—*Udaatt* or loud, *Anudaatt* or low and *Svarit* or medium It is clear that all these nine terms have different sounds and tones

Four with same meaning—the four acts *Chalan* (movement), *Udirana* (fructify), *Vedan* (experience) and *Prahan* (separation) have the same meaning in context of their duration (one *Antar-muhurt*), dynamism (they all convey some sort of movement) and goal (attaining omniscience)

Four with different meanings—the five acts *Chhedan* (cutting), *Bhedan* (piercing), *Dagdha* (burn), *Mrit* (dead) and *Nirjirn* (shed) have different meanings in context of destruction of something or the conclusive state *Chhedan* is with reference to bondage of duration, *Bhedan* is with reference to bondage of intensity, *Dahan* is with reference to partial or space-point bondage, *Maran* is with reference to life-span determining *karma* and *Nirjaran* is with reference to all *karmas* Thus these statements convey different meanings.

चौबीस दण्डकगत स्थिति [नैरयिक चर्चा] LIFE-SPAN IN TWENTY FOUR DANDAKS [INFERNAL BEINGS]

६. [दण्डक १–प्र. १] नेरइयाणं भंते ! केवइकालं ठिई पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! जहन्नेणं दस वाससहस्साइं, उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता।

[१–प्र. २] नेरइयाणं भंते ! केवइकालस्स आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा ?

[उ.] जहा ऊसासपदे।

६. [दण्डक १–प्र. १] भगवन् ! नैरयिको की स्थिति (आयुष्य) कितने काल की है ? (यहाँ प्रथम अंक दण्डक का तथा दूसरा अंक प्रश्न का सूपक है।)

[उ.] हे गौतम ! जघन्य (कम से कम) दस हजार वर्ष की और उत्कृष्ट (अधिक से अधिक) तैतीस सागरोपम की है।

[१-प्र. २] भगवन् ! नारक कितने काल (समय) मे श्वास लेते है और कितने समय मे श्वास छोडते है-कितने काल मे उच्छ्वास लेते हैं और नि श्वास छोडते है।

[उ.] (प्रज्ञापना-सूत्रोक्त) सातवे उच्छ्वास पद के अनुसार समझना चाहिए। *(विवेचन पढे)*

6. **[1—Q. 1]** *Bhante* ! What is the life-span of the infernal beings ? [the first numeral stands for *dandak* (place of suffering) and second for the question]

[Ans.] Gautam ! The minimum life-span of the infernal beings is ten thousand years and the maximum is thirty three *Sagaropam* (a metaphoric unit of time)

[1—Q. 2] *Bhante* ! What is the duration of inhalation, exhalation, breathing in and breathing out of the infernal beings ?

[Ans.] It should be read as mentioned in *Uchchhavasapad* (Respiration), the seventh chapter of *Prajnapana Sutra* *(see elaboration)*

[१-प्र. ३] नेरइया णं भंते ! आहारट्ठी ?

[उ.] जहा पण्णवणाए पढमए आहार उद्देसए तथा भाणियव्वं।

गाहा-ठिति उस्सासाहारे किं वाऽऽहारेंति सव्वओ वा वि।
कतिभागं सव्वाणि व कीस व भुज्जो परिणमंति ?॥२॥

[१-प्र. ३] भगवन् ! क्या नैरयिक आहारार्थी होते है ?

[उ.] गौतम ! प्रज्ञापनासूत्र के आहारपद (२८वें) के प्रथम उद्देशक के अनुसार समझ लेना।

गाथार्थ-नारक जीवो की स्थिति, उच्छ्वास तथा आहार-सम्बन्धी कथन करना चाहिए। क्या वे आहार करते है ? क्या समस्त आत्म-प्रदेशो से आहार करते है ? कितने भाग का आहार करते है या सर्व-आहारक द्रव्यो का आहार करते है ? और वे आहारक द्रव्यो को किस रूप मे बार-बार परिणमाते है ? *(उत्तर देखे विवेचन मे)*

[1—Q. 3] *Bhante* ! Have the infernal beings desire for food (intake) ?

[Ans.] It should be read as mentioned in the first lesson of *Ahaar-pad* (Food, the twenty eighth chapter) of *Prajnapana Sutra*.

The verse—The life-span, respiration and food intake of infernal beings should be studied. Do they have intake ? Is the intake from all the soul-space-points ? Is the intake in portions or whole ? In what form the matter consumed is transformed (repeatedly) ? *(see elaboration)*

[१–प्र. ४] नेरइयाणं भंते ! (१) पुव्वाहारिता पोग्गला परिणता, (२) आहारिता आहारिज्जमाणा पोग्गला परिणता, (३) अणाहारिता आहारिज्जिस्समाणा पोग्गला परिणया, (४) अणाहारिया अणाहारिज्जिस्समाणा पोग्गला परिणया ?

[उ.] गोयमा ! (१) नेरइयाणं पुव्वाहारिता पोग्गला परिणता, (२) आहारिता आहारिज्जमाणा पोग्गला परिणता परिणमंति य, (३) अणाहरिता आहारिज्जिस्समाणा पोग्गला नो परिणता, परिणमिस्संति, (४) अणाहारिया अणाहारिज्जिस्समाणा पोग्गला नो परिणता, नो परिणमिस्संति।

[१–प्र. ४] भगवन् ! (१) नैरयिकों द्वारा पहले आहार किये हुए पुद्‌गल (शरीर रूप में) परिणत हुए है, (२) आहारित (आहार किये हुए), तथा (वर्तमान मे) आहार किये जाते हुए पुद्‌गल परिणत हुए है, (३) अथवा जो पुद्‌गल अनाहारित आहार के रूप में ग्रहण नही किये गये है, वे तथा जो पुद्‌गल (भविष्य में) आहार के रूप में ग्रहण किये जायेंगे, वे परिणत हुए, (४) अथवा जो पुद्‌गल अनाहारित है और आगे भी आहारित (आहार के रूप मे) नही होगे, वे परिणत हुए ?

[उ.] हे गौतम ! (१) नारको द्वारा पहले आहार किये हुए पुद्‌गल परिणत हुए, (२) (इसी तरह) आहार किये और आहार किये जाते हुए पुद्‌गल परिणत हुए, परिणत होते हैं, (३) किन्तु नहीं आहार किये हुए (अनाहारित) पुद्‌गल परिणत नही हुए तथा भविष्य मे जो पुद्‌गल आहार के रूप मे ग्रहण किये जायेगे, वे परिणत होगे, (४) अनाहारित पुद्‌गल परिणत नहीं हुए, तथा जिन पुद्‌गलों का आहार नही किया जायेगा, वे भी परिणत नही होंगे।

[1—Q. 4] *Bhante* ! (1) In case of infernal beings, did the matter ingested in the past transform (*parinat*) (into body) ? (2) Does the matter ingested and being ingested at present transform ? (3) Does the matter not ingested in the past but likely to be ingested in future transform ? (4) Does the matter neither ingested in the past nor likely to be ingested in future transform ?

[Ans.] Gautam ! (1) In case of infernal beings, the matter ingested in the past has transformed (into body). (2) The matter ingested and being ingested at present transforms and gets transformed. (3) The matter not ingested in the past has not transformed and that likely to be ingested in future will transform (4) The matter neither ingested in the past nor likely to be ingested in future did not and will not transform.

[१–प्र. ५] नेरइयाणं भंते ! पुव्वाहारिया पोग्गला चिता. पुच्छा।

[उ.] जहा परिणता तहा चिया वि। एवं उवचिता, उदीरिता, वेदिता, निज्जिण्णा।

गाहा—परिणता चिता उवचिता उदीरिता वेदिया य निज्जिण्णा।
एक्केक्कम्मि पदम्मी चउव्विहा पोग्गला होंति॥३॥

[१-प्र. ५] भगवन् ! क्या नैरयिको द्वारा पहले आहारित (आहार किये हुए) पुद्गल चय को प्राप्त हुए?

[उ.] इसका उत्तर भी उपरोक्त १-४ के अनुसार है। अर्थात् जिस प्रकार वे परिणत हुए, उसी प्रकार चय को प्राप्त हुए, उसी प्रकार उपचय को, उदीरणा को, वेदन को तथा निर्जरा को प्राप्त हुए।

गाथार्थ-परिणत, चित, उपचित, उदीरित, वेदित और निर्जीर्ण, इस एक-एक पद मे पुद्गल विषयक उपरोक्त चार-चार प्रकार के (*प्रश्नोत्तर*) होते है।

[1—Q. 5] *Bhante* ! In case of infernal beings, did the matter ingested in the past assimilate (*chaya*) ?

[Ans.] The answer to this should be read as aforesaid about transformation (1-4). Also as stated about transformation (***parinat***) so is true for assimilation (***chaya***), ***upachaya*** (augmentation of *karmas*), ***udiran*** (fruition of *karmas*), ***vedan*** (experience consequences), ***nirjaran*** (separation or shedding)

The verse—There are four aforesaid questions each related to transformation, assimilation, augmentation, fruition, experience and shedding

[१-प्र. ६] नेरइया णं भंते ! कतिविहा पोग्गला भिज्जंति ?

[उ.] गोयमा ! कम्मदव्ववग्गणं अहिकिच्च दुविहा पोग्गला भिज्जंति। तं जहा—अणू चेव बादरा चेव १।

[प्र.] नेरइया णं भंते ! कतिविहा पोग्गला चिज्जंति ?

[उ.] गोयमा ! आहारदव्ववग्गणं अहिकिच्च दुविहा पोग्गला चिज्जंति। तं जहा—अणू चेव बादरा चेव २। एवं उवचिज्जंति ३।

[प्र.] नेरइया णं भंते ! कतिविहे पोग्गले उदीरेंति ?

[उ.] गोयमा ! कम्मदव्ववग्गणं अहिकिच्च दुविहे पोग्गले उदीरेंति। तं जहा—अणू चेव बादरे चेव ४। एवं वेदेंति ५। निज्जरेंति ६। ओयट्टिंसु ७। ओयट्टेंति ८। ओयट्टिस्संति ९। संकामिंसु १०। संकामेंति ११। संकामिस्संति १२। निहत्तिंसु १३। निहत्तेंति १४। निहत्तिस्संति १५। निकायंसु १६। निकाएंति १७। निकाइस्संति १८। सव्वेसु वि कम्मदव्ववग्गणमहिकिच्च।

गाहा—भेदित चिता उवाचित उदीरिता वेदिया य निज्जिण्णा।
ओयट्टण—संकमण—निहत्तण—निकायणे तिविह कालो॥४॥

[१-प्र. ६] भगवन् ! नारक जीवो द्वारा कितने प्रकार के पुद्गल भेदे जाते है?

[उ.] गौतम ! कर्मद्रव्यवर्गणा (कार्मण जाति के पुद्गलों का समूह) की अपेक्षा दो प्रकार के पुद्गल भेदे जाते है। यथा—अणु (सूक्ष्म) और बादर (स्थूल) (१)।

[प्र.] भगवन् ! नारक जीवों द्वारा कितने प्रकार के पुद्‌गल चय किये जाते है ?

[उ.] गौतम ! आहारद्रव्यवर्गणा की अपेक्षा दो प्रकार के पुद्‌गल चय किये जाते हैं। यथा–अणु और बादर (२)। इसी प्रकार उपचय समझना (३)।

[प्र.] भगवन् ! नारक जीव कितने प्रकार के पुद्‌गलो की उदीरणा करते हैं ?

[उ.] गौतम ! कर्मद्रव्यवर्गणा की अपेक्षा दो प्रकार के पुद्‌गलो की उदीरणा करते है। यथा–अणु और बादर (४)। शेष पद भी इसी प्रकार कहने चाहिए–वेदते है (५), निर्जरा करते है (६), अपवर्तन को प्राप्त हुए (७), अपवर्तन को प्राप्त हो रहे हैं (८), अपवर्तन को प्राप्त करेंगे (९), संक्रमण किया (१०), संक्रमण करते हैं (११), सक्रमण करेगे (१२), निधत्त हुए (१३), निधत्त होते हैं (१४), निधत्त होगे (१५), निकाचित हुए (१६), निकाचित होते है (१७), निकाचित होंगे (१८), इन सब पदों में भी कर्मद्रव्यवर्गणा की अपेक्षा (अणु और बादर पुद्‌गलों का कथन करना चाहिए।)

गाथार्थ–भेदे गये, चय को प्राप्त हुए, उपचय को प्राप्त हुए, उदीर्ण हुए, वेदे गये और निर्जीर्ण हुए (इसी प्रकार) अपवर्तन, संक्रमण, निधत्तन और निकाचन, (इन पिछले चार) पदों में भी तीनों प्रकार का काल कहना चाहिए।

[1—Q. 6] *Bhante* ! How many types of matter do the infernal beings pierce (***bhedan***) ?

[Ans.] Gautam ! In terms of *karmic* group of matter (*karma dravya vargana*) two types of matter is pierced—*anu* (subtle) and *baadar* (gross) (1)

[Q.] *Bhante* ! How many types of matter do the infernal beings assimilate (***chaya***) ?

[Ans.] Gautam ! In terms of ingestable group of matter (*ahaar dravya vargana*) two types of matter is assimilated—*anu* (subtle) and *baadar* (gross) (2) The same is true for augmentation (***upachaya***) (3).

[Q.] *Bhante* ! How many types of matter do the infernal beings fructify (***udirana***) ?

[Ans.] Gautam ! In terms of *karmic* group of matter (*karma dravya vargana*) two types of matter is pierced—*anu* (subtle) and *baadar* (gross) (4). The remaining actions should also be repeated likewise—experience (***vedan***) (5), shed (***nirjara***) (6), underwent reduction (***apavartana***) (7), undergoing reduction (8), will undergo reduction (9), underwent transformation (***sankramana***) (10), undergoing transformation (11), will undergo transformation (12), underwent partial intransigence (***nidhatt***) (13), undergoing partial intransigence (14), will undergo partial intransigence (15), underwent intransigence (***nikachit***)

(16), undergoing intransigence (17), will undergo intransigence (18). In terms of *karmic* group of matter all these actions apply to two types of matter (subtle and gross)

The verse—Like in case of pierced, assimilated, augmented, fructified, experienced and shed all the three periods (tenses) should be considered regarding (the last four) reduction, transformation, partial intransigence and intransigence.

[१–प्र. ७] नेरइया णं भंते ! जे पोग्गले तेयाकम्मत्ताए गेण्हंति ते किं तीतकालसमए गेण्हंति ! पडुप्पन्नकालसमए गेण्हंति, अणागतकालसमए गेण्हंति ?

[उ.] गोयमा ! नो तीतकालसमए गेण्हंति, पडुपन्नकालसमए गेण्हंति, नो अणागतकालसमए गेण्हंति १।

[१–प्र. ७] हे भगवन् ! नारक जीव जिन पुद्गलों को तैजस् और कार्मण रूप मे ग्रहण करते है, उन्हें क्या अतीत काल मे ग्रहण करते हैं, वर्तमान काल मे ग्रहण करते है, अथवा अनागत (भविष्य) काल मे ग्रहण करते है ?

[उ.] गौतम ! वर्तमान काल मे ग्रहण करते है, अतीत काल मे और भविष्य काल में ग्रहण नही करते।

[1—Q. 7] *Bhante* ! The matter that the infernal beings ingest in the form of *taijas* (fiery) particles and *karman* (karmic) particles, is it done in the past ? Is it done in the present ? Or is it done in the future ?

[Ans.] Gautam ! They ingest it in the present and not in the past nor in the future.

[१–प्र. ८] नेरइया णं भंते ! जे पोग्गले तेयाकम्मत्ताए गहिए उदीरेंति ते किं तीतकालसमयगहिते पोग्गले उदीरेंति ? पडुप्पन्नकालसमयघेप्पमाणे पोग्गले उदीरेंति ? गहणसमयपुरक्खडे पोग्गले उदीरेंति ?

[उ.] गोयमा ! तीतकालसमयगहिए पोग्गले उदीरेंति, नो पडुप्पन्नकालसमयघेप्पमाणे पोग्गले उदीरेंति, नो गहणसमयपुरेक्खडे पोग्गले उदीरेंति २। एवं वेदेंति ३, निज्जरेंति ४।

[१–प्र. ८] भगवन् ! नारक जीव तैजस् और कार्मण रूप में ग्रहण किये हुए जिन पुद्गलो की उदीरणा करते है, सो क्या अतीत काल मे गृहीत पुद्गलों की उदीरणा करते है, या वर्तमान काल मे ग्रहण किये जाते हुए पुद्गलों की उदीरणा करते है, अथवा जिनका उदयकाल आगे आने वाला है, ऐसे भविष्य काल विषयक पुद्गलों की उदीरणा करते है ?

[उ.] गौतम ! वे अतीत काल में गृहीत पुद्गलो की उदीरणा करते है, (परन्तु) वर्तमान काल मे ग्रहण किये जाते हुए पुद्गलों की तथा आगे ग्रहण किये जाने वाले पुद्गलों की उदीरणा नहीं करते। इसी प्रकार (उदीरणा की तरह) अतीत काल मे गृहीत पुद्गलों को वेदते हैं और उनकी निर्जरा करते है।

[1—Q. 8] *Bhante* ! Infernal beings fructify (*udirana*) the ingested matter in the form of *taijas* (fiery) particles and *karman* (*karmic*) particles; do they fructify the particles ingested in the past or those being ingested at present or those to be ingested in future (or related to the future in terms of fructification) ?

[Ans.] Gautam ! They fructify (*udirana*) the matter particles ingested in the past but not those being ingested at present or those to be infested in future The same (like ingesting) is also true for *vedan* (experiencing or suffering the consequences) and *nirjara* (separating from soul or shedding).

[१–प्र. ९] नेरइयाणं भंते ! जीवाओ किं चलियं कम्मं बंधंति ? अचलियं कम्मं बंधंति ?

[उ.] गोयमा ! नो चलियं कम्मं बंधंति, अचलियं कम्मं बंधंति १। एवं उदीरेंति २ वेदेंति ३ उयट्टेंति ४ संकामेंति ५ निहत्तेंति ६ णि कायेंति ७। सव्वेसु अचलियं, णोचलियं।

[१–प्र. ९] भगवन् ! क्या नारक जीवप्रदेशों से चलित कर्म को बाँधते हैं या अचलित (जीवप्रदेशो मे स्थित) कर्म को बाँधते है ?

[उ.] गौतम ! (वे) (१) चलित कर्म को नही बाँधते (किन्तु) अचलित कर्म को बाँधते हैं। इसी प्रकार (बध के अनुसार ही वे) अचलित कर्म की (२) उदीरणा करते हैं, अचलित कर्म का ही (३) वेदन करते है, (४) अपवर्तन करते है, (५) संक्रमण करते हैं, (६) निधत्ति करते हैं, और (७) निकाचन करते है। इन सब पदो मे अचलित (कर्म) कहना चाहिए, चलित (कर्म) नही।

[1—Q. 9] *Bhante* ! Do the infernal beings bind (*bandh*) the *karma* that has shifted (from soul) or the *karma* that has not shifted ?

[Ans.] Gautam ! (1) They do not bind the *karma* that has shifted (from soul) but only the *karma* that has not shifted. The same is also true for (2) fructifying (*udirana*), (3) experiencing (*vedan*), (4) reduction (*apavartana*), (5) transformation (*sankramana*), (6) partial intransigence (*nidhatt*), and (7) intransigence (*nikuchit*). For all these the *karma* that has not shifted is applicable and not the *karma* that has shifted.

[१–प्र. १०] नेरइयाणं भंते ! जीवाओ किं चलियं कम्मं निज्जरेंति ? अचलियं कम्मं निज्जरेंति ?

[उ.] गोयमा ! चलियं कम्मं निज्जरेंति, नो अचलियं कम्म निज्जरेंति ८।

गाहा—बंधोदय—वेदोव्वट्ट—संकमे तह निहत्तण—निकाए।
अचलियं कम्मं तु भवे चलितं जीवाउ निज्जरइ॥५॥

[१–प्र. १०] भगवन् ! क्या नारक जीवप्रदेश से चलित कर्म की निर्जरा करते है अथवा अचलित कर्म की निर्जरा करते हैं ?

[उ.] गौतम ! (वे) चलित कर्म की निर्जरा करते है, अचलित कर्म की निर्जरा नही करते।

गाथार्थ—बन्ध, उदय, वेदन, अपवर्तन, सक्रमण, निधत्तन और निकाचन के विषय में अचलित कर्म समझना चाहिए और निर्जरा के विषय में चलित कर्म समझना चाहिए।

[1—Q. 10] *Bhante* ! Do the infernal beings shed (*nirjara*) the *karma* that has shifted (from soul) or the *karma* that has not shifted ?

[Ans.] Gautam ! They shed the *karma* that has shifted (from soul) and not the *karma* that has not shifted

The verse—With bonding (*bandh*), fructifying (*udirana*), experiencing (*vedan*), reduction (*apavartana*), transformation (*sankramana*), partial intransigence (*nidhatt*) and intransigence (*nikachit*) the *karma* that has not shifted is applicable and for shedding (*nirjara*) the *karma* that has shifted is applicable.

विवेचन : नारकों की स्थिति आदि के सम्बन्ध के प्रश्नोत्तर—प्रस्तुत छठे सूत्र के २४ अवान्तर (विभाग) दण्डक करके शास्त्रकार ने प्रथम दण्डक में नारको की स्थिति श्वासोच्छ्वास आदि से सम्बन्धित १० प्रश्नोत्तर किये हैं, जिनके समाधान भी दिये गये है।

Elaboration—The author has divided this sixth aphorism into 24 sections based on *dandaks* (places of suffering) In the first *dandak* there are ten questions about life-span, breathing and other things related to infernal beings and their answers

विशेष शब्दार्थ : स्थिति—आयुकर्म के पुद्गलों के रहने की काल-मर्यादा को स्थिति कहते है। **आणमन-प्राणमन तथा उच्छ्वास-निःश्वास**—श्वासोच्छ्वास दो प्रकार का है-आभ्यन्तर और बाह्य। आध्यात्मिक (आभ्यन्तर) श्वासोच्छ्वास को आणमन (श्वास लेना), प्राणमन (श्वास छोडना) और बाह्य को उच्छ्वास-नि.श्वास कहते हैं। प्रज्ञापनासूत्र के अनुसार नैरयिक जीव निरन्तर श्वासोच्छ्वास लेते है। क्योंकि वे अत्यन्त दु:खी है-दु खी जीव निरन्तर श्वास लेता है और छोडता है।

नारकों का आहार—प्रज्ञापनासूत्र के अनुसार नैरयिक जीव आहारार्थी है। उनका आहार दो प्रकार का होता है-**आभोगनिर्वर्तित** (खाने की इच्छा से किया जाने वाला) और **अनाभोगनिर्वर्तित** (आहार की इच्छा के बिना भी किया जाने वाला)। अनाभोग आहार तो प्रतिक्षण-सतत होता रहता है, किन्तु आभोगनिर्वर्तित-आहार की इच्छा कम से कम असंख्यात समय मे, अर्थात्-अन्तर्मुहूर्त्त में होती है। (इसके अतिरिक्त नारको के आहार का द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, दिशा, समय आदि की अपेक्षा से भी विचार किया गया है।)

परिणत, चित, उपचित आदि—आहार का प्रसंग होने से यहाँ **परिणत** का अर्थ है-ग्रहण किए आहार का शरीर के साथ एकमेक होने योग्य रूप में परिवर्तित हो जाना। जिन पुद्गलों को परिणत किया है, उनका शरीर में एकमेक होकर शरीर को पुष्ट करना **चय** (चित) कहलाता है। जो चय किया गया है, उसमें अन्यान्य पुद्गल एकत्रित कर देना **उपचय** (उपचित) कहलाता है।

आहार–शब्द यहाँ ग्रहण करने और उपभोग करने (खाने) दोनों अर्थों में प्रयुक्त है।

पुद्गलों का चय–उपचय–शरीर का आहार से पुष्ट होना चय और विशेष पुष्ट होना उपचय है। ये आहारद्रव्यवर्गणा की अपेक्षा जानना चाहिए। अपवर्तन–अध्यवसाय विशेष के द्वारा कर्म की स्थिति एवं कर्म के रस को कम कर देना। अपवर्तनाकरण से कर्म की स्थिति आदि कम की जाती है, उद्‌वर्तनाकरण से अधिक। संक्रमण–अध्यवसाय विशेष से कर्म की उत्तरप्रकृतियों का एक-दूसरे के रूप में बदल जाना। यह संक्रमण (परिवर्तन) मूलप्रकृतियों में नहीं होता। उत्तरप्रकृतियों में भी आयुकर्म की उत्तरप्रकृतियों में नहीं होता तथा दर्शनमोह और चारित्रमोह में भी एक-दूसरे के रूप में संक्रमण नहीं होता। निधत्त करना–भिन्न-भिन्न कर्म-पुद्‌गलों को एकत्रित करके धारण करना। निधत्त अवस्था में उद्‌वर्तना और अपवर्तना, इन दो करणों से ही निधत्त कर्मों में परिवर्तन किया जा सकता है। अन्य संक्रमणादि के द्वारा नहीं। निकाचित करना–निधत्त किये गये कर्मों का ऐसा सुदृढ हो जाना कि जिससे वे एक-दूसरे से पृथक् न हो सके, जिनमें कोई भी कारण कुछ भी परिवर्तन न कर सके। अर्थात्–कर्म जिस रूप मे बाँधे है, उसी रूप में भोगने पड़ें, वे निकाचित कर्म कहलाते हैं। चलित–अचलित–जीव के प्रदेश से जो कर्म चलायमान हो गये हैं, उन्हें 'चलित' कर्म कहते हैं। इसके विपरीत अचलित कर्म है। जीव अचलित कर्म ही बाँधता है। *(वृत्ति २४-२५)*

TECHNICAL TERMS

Sthiti—the time duration of bondage of the life-span determining *karma* particles. *Anaman-pranaman* and *Uchchhavas-nihshvas*—respiration is of two kinds—internal and external. Internal respiration includes *anaman* (intake) and *pranaman* (expelling). External respiration includes *uchchhavas* (inhalation) and *nihshvas* (exhalation). According to *Prajanapana Sutra* the infernal beings inhale and exhale in rapid continuation This is because they are always in extreme misery and a miserable being breathes rapidly.

Ahaar of infernal beings—According to *Prajnapana Sutra* an infernal being has desire for *ahaar* (intake of food). There intake is of two kinds—*aabhog nirvartit* (voluntary intake) and *anaabhog nirvartit* (involuntary intake). The involuntary intake continues every moment but the voluntary intake is after a minimum gap of *Antar-muhurt* (less than 48 minutes). (Besides this the intake by infernal beings has been discussed in other contexts including matter, area, period, state, direction and time)

Parinat, chit, upachit etc.—as the context is intake here, the meaning of *parinat* is transformation of food into a form absorbable by the body. The meaning of *chaya* (*chit*) is nutritional assimilation of the so transformed food in the body. *Upachaya* (*upachit*) means to augment the so assimilated food with other matter particles.

Ahaar—This term has been used in its meaning of intake as well as consumption or eating

Chaya and *upachaya*—here *chaya* indicates nutrition and *upachaya* means special nutrition. This is with reference to ingestable group of matter (*ahaar dravya vargana*). *Apavartana*—to reduce the duration and intensity of *karma* with special effort. *Apavartanakaran* is the process of reduction and *udvartanakaran* is the process of enhancement. *Sankraman*—transformation of the secondary species of *karmas* from one to another with special effort. This transformation is not applicable to basic species Even among secondary species those of *Ayukarma* (life-span determining *karma*) do not undergo transformation; also *Darshan moha* (perception/faith deluding *karma*) cannot transform to *Charitra moha* (conduct deluding *karma*) and vice versa. *Nidhatt* (state of partial intransigence)—bondage of different species of *karmas* collectively. A state of *karmas* where they are rendered incapable of transformation by any of the said processes (such as *sankraman*) except by *udvartan* and *apavartan*. *Nikachit* (state of intransigence)—a state of *karmas* where the *nidhatt* state becomes so strong that they are rendered incapable of all processes including even *udvartan* and *apavartan*. These *karmas* have to be experienced in the same form as they are bonded *Chalit-achalit*—the *karmas* that have shifted from the soul space-points are called *chalit*. The opposite of this is *achalit* Soul acquires bondage of non-shifting *karmas* only. *(Vritti, 24-25)*

देव (असुरकुमार) चर्चा THE DIVINE BEINGS : ASUR KUMARS

६. [दण्डक २–प्र. १] असुरकुमाराणं भंते ! केवइयं कालं ठिती पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! जहन्नेणं दस वाससहस्साइं, उक्कोसेणं सातिरेगं सागरोवमं।

६. [२–प्र. १] भगवन् ! असुरकुमारों की स्थिति कितने काल की है ?

[उ.] गौतम ! जघन्य दस हजार वर्ष की और उत्कृष्ट एक सागरोपम से कुछ अधिक की है।

6. [2—Q. 1] *Bhante* ! What is the life-span of the Asur Kumars ?

[Ans.] Gautam ! The minimum life-span of the Asur Kumars is ten thousand years and the maximum is slightly more than one *Sagaropam* (a metaphoric unit of time).

[२–प्र. २] असुरकुमाराणं भंते ! केवइकालस्स आणमंति वा पाणमंति वा ?

[उ.] गोयमा ! जहन्नेणं सत्तण्हं थोवाणं, उक्कोसेणं साइरेगस्स पक्खस्स आणमंति वा पाणमंति वा।

[२-प्र. २] भगवन् ! असुरकुमार कितने समय मे श्वास लेते हैं और कितने समय मे निःश्वास छोडते हैं ?

[उ.] गौतम ! जघन्य सात स्तोकरूप काल में और उत्कृष्ट एक पक्ष (पखवाडे) से (कुछ) अधिक समय में श्वास लेते और छोडते हैं।

[2—Q. 2] Bhante ! What is the duration of inhalation, exhalation, breathing in and breathing out of the Asur Kumars ?

[Ans.] Gautam ! They inhale and exhale in a minimum period of seven *Stok* and a maximum period of slightly more than one fortnight.

विशेष : रोगरहित, स्वस्थ, हृष्टपुष्ट प्राणी के एक श्वासोच्छ्वास (उच्छ्वास-नि श्वास) को एक प्राण कहते हैं। सात प्राणो का एक स्तोक होता है, सात स्तोको का एक लव और ७७ लवों का एक मुहूर्त होता है।

Note : The duration of one inhalation and exhalation of a normal and healthy person is called *Pran* (a unit of time). Seven *Prans* make a *Stok*; seven *Stoks* make a *Lava* and 77 *Lavas* make a *Muhurt* (forty eight minutes)

[२-प्र. ३] असुरकुमाराणं भंते ! आहारट्ठी ?

[उ.] हंता आहारट्ठी।

[२-प्र. ३] भगवन् ! क्या असुरकुमार आहार की इच्छा करते है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! (वे) आहार की इच्छा रखते है।

[2—Q. 3] *Bhante* ! Have the Asur Kumars desire for food (intake) ?

[Ans.] Yes, Gautam ! They have the desire for food (intake).

[२-प्र. ४] असुरकुमाराणं भंते ! केवइकालस्स आहारट्ठे समुप्पज्जइ ?

[उ.] गोयमा ! असुरकुमाराणं दुविहे आहारे पण्णत्ते। तं जहा—आभोगनिव्वत्तिए य, अणाभोगनिव्वत्तिए य। तत्थ णं जे से अणाभोगनिव्वत्तिए से अणुसमयं अविरहिए आहारट्ठे समुप्पज्जइ। तत्थ णं जे से आभोगनिव्वत्तिए से जहन्नेणं चउत्थभत्तस्स, उक्कोसेणं साइरेगस्स वाससहस्सस्स आहारट्ठे समुप्पज्जइ।

[२-प्र. ४] भगवन् ! असुरकुमारों को कितने काल में आहार की इच्छा होती है ?

[उ.] गौतम ! असुरकुमारो का आहार दो प्रकार का होता है—आभोगनिर्वर्तित और अनाभोगनिर्वर्तित। जो अनाभोगनिर्वर्तित आहार है, वह प्रतिसमय (सतत) होता रहता है। (किन्तु) आभोगनिर्वर्तित आहार की इच्छा जघन्य चतुर्थभक्त अर्थात्—एक अहोरात्र से और उत्कृष्ट एक हजार वर्ष से कुछ अधिक काल में होती है।

[2—Q. 4] *Bhante* ! After what interval of time Asur Kumars have desire for food (intake) ?

[Ans.] Gautam ! The intake of Asur Kumars is of two kinds—*aabhog nirvartit* (voluntary intake) and *anaabhog nirvartit* (involuntary intake). The involuntary intake continues every moment. (But) the desire for voluntary intake comes after a minimum gap of *Chaturthabhakta* (one day and one night) and a maximum gap of slightly more than one thousand years.

[२–प्र. ५] असुरकुमाराणं भंते ! किं आहारं आहारेंति ?

[उ.] गोयमा ! दव्वओ अणंतपएसियाइं दव्वाइं, खित्त–काल–भाव पण्णवणागमेणं। सेसं जहा नेरइयाणं जाव।

[प्र.] ते णं तेसिं पोग्गला कीसत्ताए भुज्जो भुज्जो परिणमंति ?

[उ.] गोयमा ! सोइंदियत्ताए–सुरूवत्ताए सुवण्णत्ताए इट्ठत्ताए इच्छियत्ताए, अभिज्झियत्ताए, उड्ढत्ताए, णो अहत्ताए, सुहत्ताए, णो दुहत्ताए भुज्जो भुज्जो परिणमंति।

[२–प्र. ५] भगवन् ! असुरकुमार किन पुद्‌गलों का आहार करते है ?

[उ.] गौतम ! द्रव्य से अनन्तप्रदेशी द्रव्यो का आहार करते है। क्षेत्र, काल और भाव की अपेक्षा से प्रज्ञापनासूत्र का वही वर्णन जान लेना चाहिए, जो नैरयिको के प्रकरण मे कहा है।

[प्र.] भगवन् ! असुरकुमारो द्वारा आहार किये हुए पुद्‌गल किस रूप मे बार–बार परिणत होते है ?

[उ.] गौतम ! श्रोत्रेन्द्रिय रूप मे (चक्षुइन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, रसनेन्द्रिय एव) स्पर्शनेन्द्रिय रूप मे, सुन्दर रूप मे, सु–वर्ण रूप मे, इष्ट रूप मे, इच्छित रूप मे, मनोहर (अभिलषित) रूप मे, ऊर्ध्व रूप मे परिणत होते है, अध रूप मे नही, सुखरूप मे परिणत होते है किन्तु दुःखरूप में परिणत नही होते।

[2—Q. 5] *Bhante* ! What kind of matter forms the intake of Asur Kumars ?

[Ans.] Gautam ! In terms of entities (*dravya*) their intake is of entities having infinite space-points (*anant pradeshi dravya*). In context of area, time and state the description quoted from *Prajnapana Sutra* in the discussion about infernal beings should be read.

[Q.] *Bhante* ! In what form the intake of matter particles by Asur Kumars continues to transform ?

[Ans.] Gautam ! They continue to transform into organs of hearing, (vision, smell, taste) and touch. They continue to transform into forms

that are beautiful, have good complexion, are likeable, desirable and enchanting. They continue to transform into noble and not ignoble forms as also in the form of happiness and not misery.

[२–प्र. ६] असुरकुमाराणं पुव्वाहारिया पुग्गला परिणया ?

[उ.] असुरकुमाराभिलावेणं जहा नेरइयाणं जाव। चलियं कम्मं निज्जरंति।

[२–प्र. ६] भगवन् ! क्या असुरकुमारों द्वारा आहृत–पहले आहार किये हुए पुद्गल परिणत हुए ?

[उ.] गौतम ! असुरकुमारों के अभिलाप में, अर्थात्–नारकों के स्थान पर 'असुरकुमार' शब्द का प्रयोग करके चलित कर्म की निर्जरा करते है, यहाँ तक सभी आलापक नारकों के समान ही समझने चाहिए।

[2—Q. 6] *Bhante* ! Did the matter particles ingested by Asur Kumars in the past get transformed ?

[Ans.] Gautam ! In this discussion about Asur Kumars read the statements mentioned in the discussion about infernal beings up to 'they shed the *chalit* (shifted) *karmas*' replacing 'infernal beings' with Asur Kumars

नागकुमार चर्चा **NAAG KUMARS**

[३–प्र. १] नागकुमाराणं भंते ! केवइयं कालं ठिती पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! जहन्नेणं दस वाससहस्साइं, उक्कोसेणं देसूणाइं दो पलिओवमाइं।

[३–प्र. १] भगवन् ! नागकुमार देवों की स्थिति कितने काल की है ?

[उ.] गौतम ! जघन्य दस हजार वर्ष की और उत्कृष्ट देशोन = कुछ कम दो पल्योपम की है।

[3—Q. 1] *Bhante* ! What is the life-span of the Naag Kumars ?

[Ans.] Gautam ! It is minimum ten thousand years and maximum slightly less than two *Palyopam* (a metaphoric unit of time).

[३–प्र. २] नागकुमाराणं भंते ! केवइकालस्स आणमंति वा पाणमंति वा ?

[उ.] गोयमा ! जहन्नेणं सत्तण्हं थोवाणं, उक्कोसेणं मुहुत्तपुहत्तस्स आणमंति वा पाणमंति वा।

[३–प्र. २] भगवन् ! नागकुमार देव कितने समय में श्वास लेते हैं और छोडते है ?

[उ.] गौतम ! जघन्य सात स्तोक में और उत्कृष्ट मुहूर्त–पृथक्त्व में (दो मुहूर्त्त से लेकर नौ मुहूर्त्त के अन्दर किसी भी समय) श्वासोच्छ्वास लेते है।

[3—Q. 2] *Bhante* ! What is the duration of inhalation, exhalation, breathing in and breathing out of the Naag Kumars ?

[Ans.] Gautam ! They inhale and exhale in a minimum period of seven *Stok* and a maximum period of *Muhurt-prithaktva* (anything between two to nine *Muhurts*).

[३—प्र. ३] नागकुमाराणं भंते ! आहारट्ठी ?

[उ.] हंता, गोयमा ! आहारट्ठी।

[३—प्र. ३] भगवन् ! क्या नागकुमार देव आहारार्थी होते हैं ?

[उ.] हाँ, गौतम ! ये आहारार्थी होते हैं।

[3—Q. 3] *Bhante* ! Have the Naag Kumars a desire for food (intake) ?

[Ans.] Yes, Gautam ! They have the desire for food (intake).

[३—प्र. ४] नागकुमाराणं भंते ! केवइकालस्स आहारट्ठे समुप्पज्जइ ?

[उ.] गोयमा ! नागकुमाराणं दुविहे आहारे पण्णत्ते। तं जहा—आभोगनिव्वत्तिए य अणाभोगनिव्वत्तिए य। तत्थ णं जे से अणाभोगनिव्वत्तिए से अणुसमयं अविरहिए आहारट्ठे समुप्पज्जेइ, तत्थ णं जे से आभोगनिव्वत्तिए, से जहन्नेणं चउत्थभत्तस्स, उक्कोसेणं दिवस—पुहुत्तस्स आहारट्ठे समुप्पज्जइ। सेसं जहा असुरकुमाराणं जाव चलियं कम्मं निज्जरेंति, नो अचलियं कम्मं निज्जरेंति।

[३—प्र. ४] भगवन् ! नागकुमार देवो को कितने काल के अनन्तर आहार की अभिलाषा उत्पन्न होती है ?

[उ.] गौतम ! नागकुमार देवो का आहार दो प्रकार का है—आभोगनिर्वर्तित और अनाभोगनिर्वर्तित। इनमे जो अनाभोगनिर्वर्तित आहार है, वह प्रतिसमय विरहरहित (सतत) होता है, किन्तु आभोगनिर्वर्तित आहार की अभिलाषा जघन्यत: चतुर्थभक्त (एक अहोरात्र) के पश्चात् और उत्कृष्टत: दिवस—पृथक्त्व (दो दिवस से लेकर नौ दिवस तक) के बाद उत्पन्न होती है। शेष "चलित कर्म की निर्जरा करते है, किन्तु अचलित कर्म की निर्जरा नही करते", यहाँ तक सारा वर्णन असुरकुमार देवों की तरह समझ लेना चाहिए।

[3—Q. 4] *Bhante* ! After what interval of time Naag Kumars have desire for food (intake).

[Ans.] Gautam ! The intake of Naag Kumars is of two kinds—*aabhog nirvartit* (voluntary intake) and *anaabhog nirvartit* (involuntary intake) The involuntary intake continues every moment. (But) the desire for voluntary intake comes after a minimum gap of *Chaturthabhakta* (one day and night) and a maximum gap of *Divas-prithaktva* (anything between two to nine *Muhurts*). After this read the statements mentioned in the discussion about Asur Kumars up to 'they shed the *chalit* (shifted) *karmas* but not the *achalit* (unmoved) *karmas*'.

[४ से ११] एवं सुवण्णकुमाराण वि जाव थणियकुमाराणं ति।

[४ से ११] इसी तरह सुपर्णकुमार देवो से लेकर स्तनितकुमार (शेष सभी भवनपति) देवों तक के भी (स्थिति से लेकर चलित कर्मनिर्जरा तक के) सभी आलापक (पूर्ववत्) कह देने चाहिए।

[4 to 11] In the same way all aforesaid statements (from life-span to shedding of *chalit karmas*) should be read with reference to the remaining abode dwelling gods (*Bhavanavasi*) from Suparna Kumars to Stanit Kumars.

विशेष : नागकुमारों की स्थिति के विषय में स्पष्टीकरण—मूल पाठ में उक्त नागकुमारो की देशोन दो पल्योपम की उत्कृष्ट स्थिति उत्तर दिशा के नागकुमारो की होनी चाहिए। दक्षिण दिशावर्ती नागकुमारो की उत्कृष्ट स्थिति डेढ पल्योपम की है।

Note : Clarification about the life-span of Naag Kumars—The maximum life-span of Naag Kumars, slightly less than two *Palyopam*, mentioned in the original text is for the Naag Kumars residing in the north, that of the Naag Kumars residing in the south is one and a half *Palyopam*.

पृथ्वीकाय आदि पाँच स्थावर FIVE IMMOBILES INCLUDING EARTH-BODIED BEINGS

[१२–प्र. १] पुढविक्काइयाणं भंते ! केवइयं कालं ठिती पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेणं बावीसं वाससहस्साइं।

[१२–प्र. १] भगवन् ! पृथ्वीकायिक जीवों की स्थिति कितने काल की है ?

[उ.] गौतम ! जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट बाईस हजार वर्ष की है।

[12—Q. 1] *Bhante* ! What is the life-span of the earth-bodied beings (*Prithvikaya jivas*) ?

[Ans.] Gautam ! It is minimum *Antar-muhurt* (less than forty eight minutes) and maximum twenty two thousand years.

[१२–प्र. २] पुढविक्काइया केवइकालस्स आणमंति वा ४ ?

[उ.] गोयमा ! वेमायाए आणमंति वा ४।

[१२–प्र. २] भगवन् ! पृथ्वीकायिक जीव कितने काल में श्वास–निःश्वास लेते हैं ?

[उ.] गौतम ! (वे) विमात्रा–विविध या विषम काल में श्वासोच्छ्वास लेते है।

[12—Q. 2] *Bhante* ! What is the duration of inhalation, exhalation, breathing in and breathing out of the earth-bodied beings ?

[Ans.] Gautam ! They inhale and exhale in a varied and indeterminate period of time.

[१२-प्र. ३] पुढविक्काइया आहारट्ठी ?

[उ.] हंता, आहारट्ठी।

[१२-प्र. ३] भगवन् ! पृथ्वीकायिक जीव क्या आहार के अभिलाषी होते है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! वे आहारार्थी होते हैं।

[12—Q. 3] *Bhante* ! Have the earth-bodied beings desire for food (intake) ?

[Ans.] Yes, Gautam ! They have the desire for food (intake).

[१२-प्र. ४] पुढविक्काइयाणं केवइकालस्स आहारट्ठे समुप्पज्जइ ?

[उ.] गोयमा ! अणुसमयं अविरहिए आहारट्ठे समुप्पज्जइ।

[१२-प्र. ४] भगवन् ! पृथ्वीकायिक जीवों को कितने काल में आहार की अभिलाषा उत्पन्न होती है ?

[उ.] हे गौतम ! (उन्हे) प्रतिसमय निरन्तर आहार की अभिलाषा उत्पन्न होती है।

[12—Q. 4] *Bhante* ! After what interval of time the earth-bodied beings have desire for food (intake) ?

[Ans.] Gautam ! Their desire for intake rises every moment.

[१२-प्र. ५] पुढविक्काइया किं आहारं आहारेंति ?

[उ.] गोयमा ! दव्वओ जहा नेरइयाणं जाव निव्वाघाएणं छद्दिसिं; वाघायं पडुच्च सिय तिदिसिं, सिय चउद्दिसिं सिय पंचदिसिं। वण्णओ काल-नील-लोहित-हालिद्द-सुक्कलाणि। गंधओ सुब्भिगंध २, रसओ तित्त ५, फासओ कक्खड ८। सेसं तहेव।

[प्र.] नाणत्तं कतिभागं आहारेंति ? कइभागं फासादेंति ?

[उ.] गोयमा ! असंखिज्जइभागं आहारेंति, अणंतभागं फासादेंति जाव।

[प्र.] ते णं तेसिं पोग्गला कीसत्ताए भुज्जो भुज्जो परिणमंति ?

[उ.] गोयमा ! फासिंदियवेमायत्ताए भुज्जो भुज्जो परिणमंति। सेसं जहा नेरइयाणं जाव चलियं कम्मं निज्जरेंति, नो अचलियं कम्मं निज्जरेंति।

[१२-प्र. ५] भगवन् ! पृथ्वीकायिक जीव क्या (किसका) आहार करते है ?

[उ.] गौतम ! वे द्रव्य से अनन्तप्रदेशी द्रव्यो का आहार करते हैं, इत्यादि (आहार-विषयक) सब बाते नैरयिकों के समान जानना चाहिए। यावत् पृथ्वीकायिक जीव व्याघात न हो तो छहो दिशाओं से आहार लेते है। व्याघात हो तो कदाचित् तीनो दिशाओं से, कदाचित् चार और कदाचित् पाँच दिशाओ से आहार लेते हैं। वर्ण की अपेक्षा से काला, नीला, पीला, लाल, हारिद्र (हल्दी जैसा) तथा शुक्ल (श्वेत)

वर्ण के द्रव्यों का आहार करते हैं। गन्ध की अपेक्षा से सुरभिगन्ध और दुरभिगन्ध, दोनों गन्ध वाले, रस की अपेक्षा से तिक्त आदि पाँचो रस वाले, स्पर्श की अपेक्षा से कर्कश आदि आठों स्पर्श वाले द्रव्यों का आहार करते हैं। शेष सब वर्णन पूर्ववत् ही समझना चाहिए।

यहाँ भेद यह है–

[प्र.] भगवन् ! पृथ्वीकाय के जीव कितने भाग का आहार करते हैं और कितने भाग का स्पर्श–आस्वादन करते हैं ?

[उ.] गौतम ! वे असंख्यातवें भाग का आहार करते हैं और अनन्तवें भाग का स्पर्श–आस्वाद करते है। यावत्–

[प्र.] "भगवन् ! उनके द्वारा आहार किये हुए पुद्गल किस रूप में बार–बार परिणत होते है ?"

[उ.] गौतम ! स्पर्शनेन्द्रिय के रूप में साता–असातारूप विविध प्रकार से बार–बार परिणत होते हैं। (यावत्) यहाँ से लेकर 'अचलित कर्म की निर्जरा नहीं करते;' यहाँ तक का अवशिष्ट सब वर्णन नैरयिकों के समान समझना चाहिए।

[12—Q. 5] *Bhante* ! What is it that the earth-bodied beings ingest ?

[Ans.] Gautam ! In terms of entities or substances they ingest substances with infinite space-points, other information (about food intake) should be read as mentioned about infernal beings. (up to) earth-bodied beings have intake from all the six directions in absence of any obstruction If there is some obstruction they may have intake from three, four or five directions. In terms of appearance (colour) they ingest substances of black, blue, yellow, red, turmeric and white colours. In terms of smell they ingest substances both with pleasant and unpleasant odour. In terms of taste they ingest substances with all the five tastes including bitter. In terms of touch they ingest substances having all eight types of touch including rough. All other information should be read as already stated.

Additional information here is—

[Q.] *Bhante* ! What portion do the earth-bodied beings take in and what portion do they touch (taste) ?

[Ans.] Gautam ! They take in innumerable portion and touch or taste infinite portion.

[Q.] Bhante ! In what form do the matter particles ingested by the earth-bodied beings continue to get transformed ?

[Ans.] They continue to get transformed into the sense organ of touch as pleasant and unpleasant forms. From this point onwards up to 'they

do not shed unmoving *karmas.*' All details should be read as that mentioned about infernal beings.

[१३ से १६] एवं जाव वणस्सइकाइयाणं। नवरं ठिती वण्णेयव्वा जा जस्स, उस्सासो वेमायाए।

[१३ से १६] इसी प्रकार अप्काय, तेजस्काय, वायुकाय और वनस्पतिकाय तक के जीवो के विषय मे समझना चाहिए। अन्तर केवल इतना है कि जिसकी जितनी स्थिति हो उसकी उतनी स्थिति कह देनी तथा इन सबका उच्छ्वास भी विमात्रा से–विविध प्रकार से–जानना चाहिए (अर्थात्–स्थिति के अनुसार वह नियत नहीं है)।

[13 to 16] The same should be read for water-bodied (*apkaya*), fire-bodied (*tejaskaya*), air-bodied (*vayukaya*) and plant-bodied (*vanaspatikaya*) beings. The only difference is that the body-specific life-span should be mentioned for each. Their respiration is also indeterminate.

विवेचन : पृथ्वीकायिक जीवों की उत्कृष्ट स्थिति–खर पृथ्वी (ककड–पत्थर आदि) की अपेक्षा से २२ हजार वर्ष की है क्योंकि सिद्धान्तानुसार **स्निग्ध पृथ्वी** (काली चिकनी मिट्टी आदि) की १४ हजार वर्ष की, **मनःशिला** (मैनशिल–एक उपधातु) पृथ्वी की १६ हजार वर्ष की, **शर्करा पृथ्वी** (बालू आदि) की १८ हजार वर्ष की और **खर पृथ्वी** की २२ हजार वर्ष की उत्कृष्ट स्थिति मानी गई है। **विमात्रा–आहार, विमात्रा–श्वासोच्छ्वास–** पृथ्वीकायिक जीवो का रहन–सहन विचित्र होने से उनके आहार की कोई मात्रा–आहार की एकरूपता नही है। इस कारण उनमे श्वास की मात्रा निश्चित नही है कि कब कितना लेते हैं। इनका श्वासोच्छ्वास भी विषम रूप है–विमात्र है। **व्याघात–**लोक के अन्त में, जहाँ लोक–अलोक की सीमा मिलती है, वही व्याघात होना सम्भव है क्योकि अलोक मे आहार योग्य पुद्गल नही होते।

शेष स्थावरों की उत्कृष्ट स्थिति–पृथ्वीकाय के अतिरिक्त शेष स्थावरो की उत्कृष्ट स्थिति क्रमश. अप्काय की ७ हजार वर्ष की, तेजस्काय की ३ दिन की, वायुकाय की ३ हजार वर्ष की और वनस्पतिकाय की १० हजार वर्ष की है। *(वृत्ति, पत्राक २१)*

Elaboration—Maximum life-span of earth-bodied beings is 22 thousand years, which relates to the *Khar Prithvi* (pebbles, stones etc) This is according to the established belief that maximum life-span related to *Snigdha Prithvi* (black and other clays) is 14 thousand years, that related to *Manah-shila Prithvi* (minerals like red arsenic) is 16 thousand years, that related to *Sharkara Prithvi* (sand etc.) is 18 thousand years and that related to *Khar Prithvi* is 16 thousand years. *Vimatra-ahaar* and *vimatra-shvasochchhavas*—Due to the unusual living conditions of the earth-bodied beings there are no standards about the quantity of food intake. This the reason that there is not standard breathing period. Here *vimatra* indicates indefinite or indeterminate. *Vyaghat* (obstruction)—Here obstruction means termination of intake for a short period. This is possible only at the edge of the *Lok* or occupied space because beyond that, in *Alok* (unoccupied space), there is total absence of ingestable matter.

Maximum life-span of other immobile beings—The maximum life-span of other immobile beings are—7 thousand years for water-bodied (*apkaya*), 3 days for fire-bodied (*tejaskaya*), 3 thousand years for air-bodied (*vayukaya*) and 10 thousand years for plant-bodied (*vanaspatikaya*) beings. *(Vritti, leaf 29)*

द्वीन्द्रियादि त्रस-चर्चा TWO-SENSED AND OTHER MOBILE BEINGS

[१७-१] बेइंदियाणं ठिई भाणियव्वा। ऊसासो वेमायाए।

[१७-२] बेइंदियाणं आहारे पुच्छा। अणाभोगनिव्वत्तिओ तहेव। तत्थ णं जे से आभोगनिव्वत्तिए से णं असंखेज्जसमइए अंतोमुहुत्तिए वेमायाए आहारट्ठे समुप्पज्जइ। सेसं तहेव जाव अणंतभागं आसायंति।

[१७-१] द्वीन्द्रिय जीवो की स्थिति कहनी चाहिए। उनका श्वासोच्छ्वास विमात्रा से (अनियत) है।

[१७-२] (तत्पश्चात्) द्वीन्द्रिय जीवों के आहार के विषय में इस प्रकार पृच्छा करनी चाहिए–

[प्र.] भगवन् ! द्वीन्द्रिय जीवो को कितने काल में आहार की अभिलाषा होती है ?

[उ.] अनाभोगनिर्वर्तित आहार (निरन्तर) समझना चाहिए। आभोगनिर्वर्तित आहार की अभिलाषा विमात्रा से असख्यात समय वाले अन्तर्मुहूर्त मे होती है। शेष सब वर्णन पूर्ववत् जानना चाहिए, यावत् अनन्तवे भाग का आस्वादन करते हैं।

[17—1] Life-span of two-sensed beings (*dvindriya jiva*) should be stated There breathing is indeterminate

[17—Q. 2] *Bhante* ! After what interval of time the two-sensed beings have desire for food (intake) ?

[Ans.] Gautam ! Their desire for involuntary intake arises every moment The desire for voluntary intake rises indeterminately within one *Antar-muhurt* of innumerable *Samayas* (the ultimate fractional unit of time) Further details should be read as aforesaid up to 'taste infinite portion'.

[१७-प्र. ३] बेइंदिया णं भंते ! जे पोग्गले आहारत्ताए गेण्हंति ते किं सव्वे आहारेंति ? नो सव्वे आहारेंति ?

[उ.] गोयमा ! बेइंदियाणं दुविहे आहारे पण्णत्ते। तं जहा–लोमाहारे पक्खेवाहारे य। जे पोग्गले लोमाहारत्ताए गिण्हंति ते सव्वे अपरिसेसिए आहारेंति। जे पोग्गले पक्खेवाहारत्ताए गिण्हंति तेसिं णं पोग्गलाणं असंखिज्जभागं आहारेंति, अणेगाइं च णं भागसहस्साइं अणासाइज्जमाणाइं अफासाइज्जमाणाइं विद्धंसमागच्छंति।

[१७-प्र. ३] भगवन् ! द्वीन्द्रिय जीव जिन पुद्गलों को आहाररूप से ग्रहण करते हैं, क्या वे उन सबका आहार कर लेते है ? अथवा उन सबका आहार नही करते ?

[उ.] गौतम ! द्वीन्द्रिय जीवो का आहार दो प्रकार का है, जैसे कि-'रोमाहार' (रोमों द्वारा खींचा जाने वाला आहार) और 'प्रक्षेपाहार' (कौर, बूँद आदि रूप मे मुँह आदि में डालकर किया जाने वाला)। जिन पुद्गलों को वे रोमाहार द्वारा ग्रहण करते है, उन सबका पूर्ण रूप से आहार करते हैं। जिन पुद्गलों को प्रक्षेपाहार द्वारा ग्रहण करते हैं, उन पुद्गलों मे से असंख्यातवाँ भाग आहार ग्रहण किया जाता है और (शेष) अनेक-सहस्र भाग बिना आस्वाद किए और बिना स्पर्श किये ही नष्ट हो जाते है।

[17—Q. 3] *Bhante* ! Of the matter taken by two-sensed beings do they consume it all or do they not consume all of it ?

[Ans.] Gautam ! The intake by two-sensed beings is of two kinds—*Romahar* (intake through pores) and *Prakshepahar* (intake through mouth in the form of morsel or pouring). Matter particles taken through pores is consumed completely. Of the matter particles taken as morsels through mouth only innumerable fraction is consumed and the remaining portion that is many times more gets destroyed without being tasted or touched.

[१७-प्र. ४] एतेसिं णं भंते ! पोग्गलाणं अणासाइज्जमाणाणं अफासाइज्जमाणाणं य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा ४ ?

[उ.] गोयमा ! सव्वत्थोवा पुग्गला अणासाइज्जमाणा, अफासाइज्जमाणा अणंतगुणा।

[१७-प्र. ४] भगवन् ! इन बिना आस्वादन किये हुए और बिना स्पर्श किये हुए पुद्गलो मे से कौन-से पुद्गल, किन पुद्गलों से अल्प हैं, [बहुत हैं, अथवा तुल्य है, या विशेषाधिक है।]

[उ.] गौतम ! आस्वाद मे नहीं आए हुए पुद्गल सबसे थोडे है, (जबकि) स्पर्श मे नहीं आये हुए पुद्गल उनसे अनन्तगुणा हैं।

[17—Q. 4] *Bhante* ! Of these not tasted and not touched matter particles which are less (or more or equal or much more) than the other ?

[Ans.] Gautam ! The untasted matter particles are minimum whereas the untouched matter particles are infinite times more.

[१७-प्र. ५] बेइंदिया णं भंते ! जे पोग्गले आहारत्ताए गिण्हंति ते णं तेसिं पुग्गला कीसत्ताए भुज्जो भुज्जो परिणमंति ?

[उ.] गोयमा ! जिब्भिंदिय-फासिंदिय-वेमायत्ताए भुज्जो भुज्जो परिणमंति।

[१७-प्र. ६] बेइंदियाणं भंते ! पुव्वाहारिया पुग्गला परिणया ?

[उ.] तहेव जाव चलियं कम्मं निज्जरेंति।

[१७-प्र. ५] भगवन् ! द्वीन्द्रिय जीव जिन पुद्गलों को आहार रूप में ग्रहण करते हैं, वे पुद्गल उनके किस रूप में बार-बार परिणत होते है ?

[उ.] गौतम ! वे पुद्गल उनके विविधतापूर्वक जिह्वेन्द्रिय रूप में और स्पर्शेन्द्रिय रूप में बार-बार परिणत होते है।

[१७-प्र. ६] हे भगवन् ! द्वीन्द्रिय जीवो को क्या पहले आहार किये हुए पुद्गल परिणत हुए हैं ?

[उ.] ये 'चलित कर्म की निर्जरा करते है' यहाँ तक सारा वक्तव्य पूर्ववत् समझना चाहिए।

[17—Q. 5] *Bhante* ! In what form does the matter ingested by the two-sensed beings continue to get transformed ?

[Ans.] It continues to get transformed into the sense organs of taste and touch in a variety of ways

[17—Q. 6] Did the matter taken by two-sensed beings in the past get transformed ?

[Ans.] These details should be read as already mentioned up to 'they shed shifting *karmas*.'

[१८ से १९-१] तेइंदिय-चउरिंदियाणं णाणत्तं ठितीए जाव णेगाइं च णं भागसहस्साइं अणाघाइज्जमाणाइं अणासाइज्जमाणाइं अफासाइज्जमाणाइं विद्धंसमागच्छंति।

[१८ से १९-१] त्रीन्द्रिय और चतुरिन्द्रिय जीवो की स्थिति में विविधता है, (शेष सब वर्णन पूर्ववत् है) यावत् अनेक-सहस्र भाग बिना सूँघे, बिना चखे तथा बिना स्पर्श किये ही नष्ट हो जाते हैं।

[18 to 19—1] The life-spans of three and four-sensed beings are different. All other details should be read as already mentioned up to 'many thousand times more gets destroyed without being smelt, tasted or touched'.

[१८ से १९-प्र. २] एतेसिं णं भंते ! पोग्गलाणं अणाघाइज्जमाणाणं ३, पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! सव्वत्थोवा पोग्गला अणाघाइज्जमाणा, अणासाइज्जमाणा अणंतगुणा, अफासाइज्जमाणा अणंतगुणा।

[१८ से १९-प्र. २] भगवन् ! इन नहीं सूँघे हुए [नहीं चखे हुए और नहीं स्पर्श किये हुए] पुद्गलो मे से कौन किससे थोड़ा, बहुत, तुल्य या विशेषाधिक है ? ऐसी पृच्छा करनी चाहिए।

[उ.] गौतम ! नही सूँघे हुए पुद्गल सबसे थोड़े हैं, उनसे अनन्तगुणे नहीं चखे हुए पुद्गल हैं, और उनसे भी अनन्तगुणे पुद्गल नहीं स्पर्श किये हुए हैं।

[18 to 19—Q. 2] *Bhante* ! Of these not smelt, not tasted and not touched matter particles which are less (or more or equal or much more) than the other ?

[Ans.] Gautam ! The unsmelt matter particles are minimum whereas the untasted matter particles are infinite times more than these and the untouched are still infinite times more.

[१८–३] तेइंदियाणं घाणिंदिय–जिब्भिंदिय–फासिंदियवेमायत्ताए भुज्जो भुज्जो परिणमंति।

[१८–३] त्रीन्द्रिय जीवो द्वारा किया हुआ आहार घ्राणेन्द्रिय, जिह्वेन्द्रिय और स्पर्शेन्द्रिय के रूप मे बार–बार परिणत होता है।

[18—3] Matter ingested by the three-sensed beings continues to get transformed into the sense organs of smell, taste and touch.

[१९–३] चउरिंदियाणं चक्खिदिय–घाणिंदिय–जिब्भिंदिय–फासिंदियत्ताए भुज्जो भुज्जो परिणमंति।

[१९–३] चतुरिन्द्रिय जीवो द्वारा किया हुआ आहर चक्षुरिन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, जिह्वेन्द्रिय और स्पर्शेन्द्रिय के रूप मे बार–बार परिणत होता है।

[19—3] Matter ingested by the four-sensed beings continues to get transformed into the sense organs of sight, smell, taste and touch

विवेचन : विकलेन्द्रिय जीवो की स्थिति–जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त की है, उत्कृष्ट द्वीन्द्रिय की बारह वर्ष की, त्रीन्द्रिय की ४९ अहोरात्र की एव चतुरिन्द्रिय की छह मास की है।

एक अन्तर्मुहूर्त्त मे असख्यात समय होने से वह असख्येय भेद वाला होता है, इसलिए द्वीन्द्रिय जीवो को आभोग आहार की अभिलाषा असख्यात समय वाले अन्तर्मुहूर्त्त के पश्चात् बताई है।

Elaboration—The minimum life-span of *vikalendriyas* (two to four-sensed beings) is *Antar-muhurt* (less than fourty eight minutes) The maximum life-span is twelve years for two-sensed beings, forty nine days and nights (*Ahoratra*) for three-sensed beings and six months for four-sensed beings.

One *Antar-muhurt* has infinite *Samayas* or fractions This has been specified in the statement—'The desire for voluntary intake rises indeterminately within one *Antar-muhurt* of innumerable *Samayas*'

[२०] पंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं ठितिं भणिऊणं ऊसासो वेमायाए। आहारो अणाभोग–निव्वत्तिओ अणुसमयं अविरहिओ आभोगनिव्वत्तिओ जहन्नेणं अंतोमुहुत्तस्स, उक्कोसेणं छट्ठभत्तस्स। सेसं जहा चउरिंदियाणं जाव चलियं कम्मं निज्जरेंति।

[२०] पचेन्द्रिय तिर्यञ्चयोनिक जीवों की स्थिति कहकर उनका उच्छ्वास विमात्रा से कहना चाहिए, उनका अनाभोगनिर्वर्तित आहार प्रतिसमय होता है। आभोगनिर्वर्तित आहार जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त मे और उत्कृष्ट दो दिन व्यतीत होने पर होता है। इसके सम्बन्ध मे शेष वक्तव्य 'अचलित कर्म की निर्जरा नही करते', यहाँ तक चतुरिन्द्रिय जीवो के समान समझना चाहिए।

[20] After stating the life-span of five-sensed animals (*Tiryanchayonik Panchendriya jivas*) their breathing should be read as indeterminate Their involuntary intake is every moment. Desire for voluntary intake arises after a minimum gap of one *Antar-muhurt* (less than fourty eight minutes) and maximum gap of two days. The remaining details should be read as those already mentioned with regard to four-sensed beings up to 'they do not shed unmoving *karmas*.'

मनुष्य एवं देवादि विषयक चर्चा **HUMAN AND DIVINE BEINGS**

[२१] एवं मणुस्साण वि। नवरं आभोगनिव्वत्तिए जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेणं अट्ठमभत्तस्स। सोइंदिय ५ वेमायत्ताए भुज्जो भुज्जो परिणमंति। सेसं तहेव जाव निज्जरेंति।

[२१] मनुष्यो के सम्बन्ध मे भी ऐसा जानना चाहिए, किन्तु इतना विशेष है कि उनका आभोगनिर्वर्तित आहार जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त मे, उत्कृष्ट अष्टम भक्त अर्थात् तीन दिन बीतने पर होता है। पंचेन्द्रिय जीवो द्वारा गृहीत आहार श्रोत्रेन्द्रिय [चक्षुरिन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, रसनेन्द्रिय और स्पर्शनेन्द्रिय] इन पाँचो इन्द्रियो के रूप मे विमात्रा से बार-बार परिणत होता है। शेष सब वर्णन पूर्ववत् समझ लेना चाहिए, यावत् वे 'अचलित कर्म की निर्जरा नही करते।'

[21] The same is true for human beings as well. The difference is that their desire for voluntary intake arises after a minimum gap of one *Antar-muhurt* (less than fourty eight minutes) and maximum gap of three days (*Ashtam bhakt*) Matter ingested by five-sensed beings continues to get transformed indeterminately into the five sense organs including that of hearing (sight, smell, taste and touch). The remaining details should be read as those already mentioned up to 'they do not shed unmoving *karmas*'

[२२] वाणमंतराणं ठिईए नाणत्तं अवसेसं जहा नागकुमाराणं।

[२३] एवं जोइसियाण वि। नवरं उस्सासो जहन्नेणं मुहुत्तपुहत्तस्स, उक्कोसेण वि मुहुत्तपुहत्तस्स। आहारो जहन्नेणं दिवसपुहत्तस्स, उक्कोसेण वि दिवसपुहत्तस्स। सेसं तहेव।

[२२] वाणव्यन्तर देवो की स्थिति मे भिन्नता है। (उसके सिवाय) शेष समस्त वर्णन नागकुमार देवो की तरह समझना चाहिए।

[२३] इसी तरह ज्योतिष्क देवो के सम्बन्ध मे भी जान ले। इतनी विशेषता है कि उनका उच्छ्वास जघन्य मुहूर्त्तपृथक्त्व और उत्कृष्ट भी मुहूर्त्तपृथक्त्व के बाद होता है। उनका आहार जघन्य दिवसपृथक्त्व से और उत्कृष्ट दिवसपृथक्त्व के पश्चात् होता है। शेष सारा वर्णन पूर्ववत् है।

[22] There is a difference in the life-span of Vanavyantar Devas (Interstitial gods). Besides this all details are same as those of Naag Kumar gods

[23] Same is true for Jyotishk Devas (Stellar gods). The only difference is that their respiration has a minimum as well as maximum gap of *Muhurt-prithaktva* (2 to 9 *Muhurt*) The remaining details should be read as those already mentioned up to 'they shed shifting *karmas* and do not shed unmoving *karmas*'

[२४] वेमाणियाणं ठिती भाणियव्वा ओहिया। ऊसासो जहन्नेणं मुहुत्तपुहत्तस्स, उक्कोसेणं तेत्तीसाए पक्खाणं। आहारो आभोगनिव्वत्तिओ जहन्नेणं दिवसपुहत्तस्स, उक्कोसेणं तेत्तीसाए वाससहस्साणं। सेसं तहेव जाव निज्जरेंति।

[२४] वैमानिक देवों की औघिक स्थिति कहनी चाहिए। उनका उच्छ्वास जघन्य मुहूर्त्तपृथक्त्व से और उत्कृष्ट तेतीस पक्ष के पश्चात् होता है। उनका आभोगनिर्वर्तित आहार जघन्य दिवसपृथक्त्व से और उत्कृष्ट तेतीस हजार वर्ष के पश्चात् होता है। वे 'चलित कर्म की निर्जरा करते हैं, अचलित कर्म की निर्जरा नही करते', इत्यादि (यहाँ तक) शेष समग्र वर्णन पूर्ववत् ही समझ लें।

[24] The life-span of Vaimanik Devas (celestial vehicle dwelling gods) is *Aughik* (in general, 1 *Palyopam* to 33 *Sagaropam*) Their respiration has a minimum gap of *Muhurt-prithaktva* and maximum gap of 33 fortnights. Desire for voluntary intake arises after a minimum gap of *Divas-prithaktva* (2 to nine days) and a maximum gap of 33 thousand years. The remaining details should be read as those already mentioned up to 'they shed shifting *karmas* and do not shed unmoving *karmas*.'

विवेचन : प्रस्तुत सूत्रो मे तिर्यञ्चपचेन्द्रिय, मनुष्य एव तीनो निकायों के देवों का समावेश हो जाता है। तिर्यञ्चपंचेन्द्रिय और मनुष्य की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त की, उत्कृष्ट तीन पल्योपम की है। वाणव्यन्तर देवों की स्थिति जघन्य १० हजार वर्ष, उत्कृष्ट एक पल्योपम की है। ज्योतिष्क देवो की स्थिति जघन्य पल्योपम के ८वे भाग की और उत्कृष्ट एक लाख वर्ष अधिक एक पल्योपम की है। वैमानिक देवों की औघिक (समस्त वैमानिक देवों की अपेक्षा से सामान्य) स्थिति कही है। औघिक का परिमाण एक पल्योपम से लेकर तेतीस सागरोपम तक है। इसमें जघन्य स्थिति सौधर्म देवलोक की अपेक्षा से और उत्कृष्ट स्थिति अनुत्तरविमानवासी देवो की अपेक्षा से जानना चाहिए।

तिर्यंचों और मनुष्यों के आहार की अवधि ? प्रस्तुत में तिर्यञ्चपचेन्द्रिय का आहार षष्ठभक्त (दो दिन) बीत जाने पर बतलाया है, वह देवकुरु और उत्तरकुरु क्षेत्र के यौगलिक तिर्यञ्चो की तथा ऐसी ही स्थिति (आयु) वाले भरत-ऐरवत क्षेत्रीय तिर्यंचयौगलिको की अपेक्षा से समझे। इसी प्रकार मनुष्यों का आहार अष्टमभक्त बीत जाने पर कहा है, वह भी देवकुरु-उत्तरकुरु के यौगलिक मनुष्यो की तथा भरत-ऐरवत क्षेत्र मे जब उत्सर्पिणी काल का छठा आरा समाप्ति पर होता है और अवसर्पिणी काल का प्रथम आरा प्रारम्भ होता है, उस समय के मनुष्यो की अपेक्षा से समझना चाहिए।

वैमानिक देवो के श्वासोच्छ्वास एव आहार के परिमाण का सिद्धान्त यह है कि जिस वैमानिक देव की जितने सागरोपम की स्थिति हो, उसका श्वासोच्छ्वास उतने ही पक्ष मे होता है और आहार उतने ही हजार वर्ष में होता है।

मुहूर्तपृथक्त्व : जघन्य और उत्कृष्ट—जघन्य मुहूर्तपृथक्त्व मे दो या तीन मुहूर्त और उत्कृष्ट मुहूर्तपृथक्त्व में आठ या नौ मुहूर्त होते हैं। *(वृत्ति, पत्रांक ३०-३१)*

Elaboration—Aforesaid four aphorisms discuss five sensed animals, human beings and gods of three dimensions. The life-spans of five sensed animals and human beings vary between a minimum of one *Antar-muhurt* and a maximum of three *Palyopam*. The life-spans of Interstitial gods vary between a minimum of ten thousand years and a maximum of one *Palyopam*. The life-spans of Stellar gods vary between a minimum of one-eighth *Palyopam* and a maximum of one hundred thousand years more than one *Palyopam*. The life-spans of Celestial Vehicle dwelling gods is said to be *Aughik* (common for all Vaimanik gods). It varies between a minimum of one *Palyopam* to a maximum of thirty three *Sagaropam* The minimum relates to the gods of Saudharma Dev Lok and the maximum relates to those of Anuttar Vimaan.

Intake frequency of animals and human beings—The mention of food intake by animals after two days is in context of the twin animals living in Deva-kuru and Uttar-kuru and the twin animals with same life-span living in Bharat and Airavat area In the same way the mention of food intake by humans after three days is also in context of the twin humans living in Deva-kuru and Uttar-kuru and the humans with same life-span living in Bharat and Airavat area nearing the end of the sixth epoch during the progressive cycle of time (*Utsarpini*) and at the beginning of the first epoch during the regressive cycle of time.

The general rule about the frequency of respiration for Vaimanik Devas is that the gap is the same number of fortnights as the life-span in *Sagaropams*. In the same way the gap in food intake is the same number of thousand years as the life-span in *Sagaropams*.

Muhurt-prithaktva : *Jaghanya* and *Utkrisht*—*Jaghanya* (minimum) *Muhurt-prithaktva* means two to three *Muhurt* and *Utkrisht* (maximum) *Muhurt-prithaktva* means eight to nine *Muhurt*. *(Vritti, leaf 30-31)*

जीवों की आरंभ विषयक चर्चा HARMFUL INTENT OF BEINGS

७. [प्र. १] जीवा णं भंते ! किं आयारंभा ? परारंभा ? तदुभयारंभा ? अणारंभा ?

[उ.] गोयमा ! अत्थेगइया जीवा आयारंभा वि, परारंभा वि, तदुभयारंभा वि, नो अणारंभा। अत्थेगइया जीवा नो आयारंभा, नो परारंभा, नो तदुभयारंभा, अणारंभा।

७. [प्र. १] भगवन् ! क्या जीव आत्मारम्भी है, परारम्भी हैं, तदुभयारम्भी है अथवा अनारम्भी हैं ?

[उ.] गौतम ! कितने ही जीव आत्मारम्भी भी है, परारम्भी भी हैं और उभयारम्भी भी हैं, किन्तु अनारम्भी नही है। कितने ही जीव आत्मारम्भी नहीं है, परारम्भी नही है और न ही उभयारम्भी हैं, किन्तु अनारम्भी है।

7. [Q. 1] *Bhante* ! Are living beings *atmaarambhi* (those who inflict harm to beings themselves), *paraarambhi* (those who inflict harm to beings through others), *tadubhyaarambhi* (those who inflict harm both ways) or *anaarambhi* (those who are free of harmful intent) ?

[Ans.] Gautam ! Some living beings are *atmaarambhi*, *paraarambhi* and *tadubhyaarambhi* but not free of harmful intent (*anaarambhi*). Some living beings are not *atmaarambhi*, not *paraarambhi* and not *tadubhyaarambhi* but are free of harmful intent (*anaarambhi*)

[प्र. २] से केणट्ठेणं भंते ! एवं बुच्चति–अत्थेगइया जीवा आयारंभा वि ? एवं पडिउच्चारेयव्वं।

[उ.] गोयमा ! जीवा दुविहा पण्णत्ता। तं जहा–संसारसमावन्नगा य असंसारसमावन्नगा य। तत्थ णं जे ते असंसारसमावन्नगा ते णं सिद्धा, सिद्धा णं नो आयारंभा जाव अणारंभा। तत्थ णं जे ते संसारसमावन्नगा ते दुविहा पण्णत्ता। तं जहा–संजता य, असंजता य। तत्थ णं जे ते संजता ते दुविहा पण्णत्ता। तं जहा–पमत्तसंजता य, अप्पमत्तसंजता य। तत्थ णं जे ते अप्पमत्तसंजता ते णं नो आयारंभा, नो परारंभा, जाव अणारंभा। तत्थ णं जे ते पमत्तसंजता ते सुभं जोगं पडुच्च नो आयारंभा जाव अणारंभा, असुभं जोगं पडुच्च आयारंभा वि जाव नो अणारंभा। तत्थ णं जे ते असंजता ते अविरतिं पडुच्च आयारंभा वि जाव नो अणारंभा वि जाव नो अणारंभा। तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ–अत्थेगइया जीवा जाव अणारंभा।

[प्र. २] भगवन् ! किस कारण से आप ऐसा कहते है कि कितने ही जीव आत्मारम्भी भी है? इत्यादि पूर्वोक्त सभी प्रश्न का पुन उच्चारण करना चाहिए।

[उ.] गौतम ! जीव दो प्रकार के होते है, जैसे–ससारसमापन्नक और अससारसमापन्नक। उनमे से जो जीव अससारसमापन्नक है, वे सिद्ध (मुक्त) है और सिद्ध भगवान न तो आत्मारम्भी है, न परारम्भी है और न ही उभयारम्भी है, किन्तु अनारम्भी है। जो ससारसमापन्नक जीव है, वे दो प्रकार के है–सयत और असयत। सयत दो प्रकार के है-प्रमत्तसंयत और अप्रमत्तसयत। उनमे जो अप्रमत्तसयत है, वे न तो आत्मारम्भी है, न परारम्भी है और न उभयारम्भी है, किन्तु अनारम्भी है। जो प्रमत्तसंयत है वे शुभयोग की अपेक्षा से न आत्मारम्भी है, न परारम्भी है और न उभयारम्भी हैं, किन्तु अनारम्भी है। वे ही अशुभयोग की अपेक्षा से आत्मारम्भी भी है, परारम्भी भी है और उभयारम्भी भी है, किन्तु अनारम्भी नही हैं। जो असंयत हैं, वे अविरति की अपेक्षा आत्मारम्भी हैं, परारम्भी हैं, उभयारम्भी भी है, किन्तु अनारम्भी नही हैं। इस कारण गौतम ! ऐसा कहा जाता है कि कितने ही जीव आत्मारम्भी हैं, यावत् अनारम्भी भी है।

[Q. 2] *Bhante* ! Why do you say that some living beings inflict harm themselves (*atmaarambhi*) etc. (repeat the preceding answer) ?

[Ans.] Gautam ! Living beings (*jiva*) are of two kinds—*Samsar-samapannak* (worldly living beings) and *Asamsar-samapannak* (non-worldly living beings). Of these the non-worldly beings are *Siddhas* (liberated souls) and the *Siddhas* are neither *atmarambhi*, nor *pararambhi*, or *tadubhayarambhi* but they are free of harmful intent. The worldly beings are of two kinds—*samyat* (disciplined) and *asamyat* (indisciplined) The disciplined are of two kinds—*pramatt-samyat* (in stupor, negligent) and *apramatt-samyat* (not in stupor; alert). Of these the alert-disciplined ones neither cause harm themselves, nor through others, or both ways but they are free of harmful intent. The negligent-disciplined in context of pious associations (*shubh-yoga*) neither cause harm themselves, nor through others, or both ways but they are free of harmful intent, the same in context of impious associations cause harm themselves, through others, as well as both ways but they are not free of harmful intent. The indisciplined in context of non-restraint (*avirati*) cause harm themselves, through others, as well as both ways but they are not free of harmful intent That is why, Gautam ! It is said that some living beings are *atmaarambhi* etc.

८. [प्र. १] नेरइयाणं भंते ! किं आयारंभा ? परारंभा ? तदुभयारंभा ? अणारंभा ?

[उ.] गोयमा ! नेरइया आयारंभा वि जाव नो अणारंभा।

[प्र.] से केणट्ठेणं ? एवं वुच्चइ।

[उ.] गोयमा ! अविरतिं पडुच्च से तेणट्ठेणं जाव नो अणारंभा।

[२ से २०] एवं जाव असुरकुमारा वि, जाव पंचिंदियतिरिक्खजोणिया।

[२१] मणुस्सा जहा जीवा। नवरं सिद्धविरहिता भाणियव्वा।

[२२ से २४] वाणमंतरा जाव वेमाणिया जहा नेरतिया।

८. [प्र. १] भगवन् ! नैरयिक जीव क्या आत्मारम्भी हैं, परारम्भी हैं, उभयारम्भी हैं या अनारम्भी है ?

[उ.] गौतम ! नैरयिक जीव आत्मारम्भी भी हैं, परारम्भी भी हैं और उभयारम्भी भी हैं, किन्तु अनारम्भी नहीं है।

[प्र.] भगवन् ! आप ऐसा किस कारण से कहते है ?

[उ.] गौतम ! अविरति की अपेक्षा से, अविरति होने के कारण नैरयिक जीव आत्मारम्भी, परारम्भी और उभयारम्भी कहे जाते हैं, किन्तु अनारम्भी नहीं।

[२ से २०] इसी प्रकार असुरकुमार देवों के विषय में भी जान लेना चाहिए, यावत् तिर्यञ्चपञ्चेन्द्रिय तक का भी (आलापक) इसी प्रकार कहना चाहिए।

[२१ से २४] मनुष्यों मे भी सामान्य जीवो की तरह जान ले। विशेष यह है कि सिद्धो का कथन छोडकर। वाणव्यन्तर देवो से वैमानिक देवो तक नैरयिकों की तरह कहना चाहिए।

8. [Q. 1] *Bhante* ! Are infernal beings *atmaarambhi* (those who inflict harm to beings themselves), *paraarambhi* (those who inflict harm to beings through others), *tadubhyaarambhi* (those who inflict harm both ways) or *anaarambhi* (those who are free of harmful intent) ?

[Ans.] Gautam ! Infernal beings cause harm themselves, through others, as well as both ways but they are not free of harmful intent.

[Q.] Bhante ! Why do you say that ?

[Ans.] In context of non-restraint (*avirati*), the infernal beings, as they are devoid of any restraint, are said to cause harm themselves, through others, as well as both ways but they are not free of harmful intent.

[2 to 20] Same is true for Asur Kumar gods .. and so on up to... *Tiryanch Panchendriya* (five-sensed animals)

[21 to 24] The information about ordinary living beings also applies to human beings except for that stated about *Siddhas*. The information about infernal beings also applies to divine beings from Vanavyantar gods to Vaimanik gods

सलेश्य जीवों में आरंभ प्ररूपणा **SINFUL ACTIVITY OF BEINGS IN CONTEXT OF LESHYA**

९. [१] सलेसा जहा ओहिया (सु. ७)। [२] किण्हलेस–नीललेस–काउलेसा जहा ओहिया जीवा, नवरं पमत्त–अप्पमत्ता न भाणियव्वा। तेउलेसा पम्हलेसा सुक्कलेसा जहा ओहिया जीवा (सु. ७), नवरं सिद्धा न भाणियव्वा।

९. [१] लेश्या वाले जीवो के विषय में सामान्य (औधिक) जीवो की तरह कहना चाहिए। [२] कृष्णलेश्या, नीललेश्या और कापोतलेश्या वाले जीवो के सम्बन्ध में सामान्य जीवों की भाँति ही सब कथन समझना चाहिए; किन्तु इतना विशेष है कि (सामान्य जीवो के आलापक मे उक्त) प्रमत्त और अप्रमत्त यहाँ नहीं कहना चाहिए। तेजोलेश्या वाले, पद्मलेश्या वाले और शुक्ललेश्या वाले जीवों के विषय मे भी औधिक जीवो की तरह कहना चाहिए; किन्तु इतना विशेष है कि सामान्य जीवों मे से सिद्धो के विषय का कथन यहाँ नही करना चाहिए।

9. [1] Beings with *leshya* (the colour code indicator of complexion or purity of soul) follow what has been stated about ordinary beings. [2] Beings with *krishna, neel* and *kapot leshya* (black, blue and pigeon hue) follow what has been stated about ordinary beings; the only difference is that the statement about *pramatt* and *apramatt* is not applicable here. Beings with *tejo, padma* and *shukla leshya* (red, pink and white hue) follow what has been stated about ordinary beings; the only difference is that the statement about *Siddhas* is not applicable here.

विशेष शब्दों का अर्थ : **आरम्भ**–ऐसा सावद्य कार्य करना, जिससे किसी जीव को कष्ट पहुँचे या उसके प्राणो का घात हो। **आत्मारम्भी**–जो स्वय आस्रवद्वार मे प्रवृत्त होता है या आत्मा द्वारा स्वयं आरम्भ करता है। **परारम्भी**–दूसरे से आरम्भ कराने वाला या उसे प्रेरित करने वाला। **तदुभयारम्भी (उभयारंभी)**–जो आत्मारम्भ और परारम्भ दोनो करता है। **अनारम्भी**–जो आरम्भ का सर्वथा त्यागी हो; या जो संयत हो, उपयोगपूर्वक प्रतिलेखना आदि प्रवृत्ति करता हो।

TECHNICAL TERMS

Arambh—to indulge in such sinful activity that harms or kills some living being. *Atmarambhi*—one indulging in sinful activity himself. *Pararambhi*—one who orders or inspires others to indulge in sinful activity. *Tadubhayarambhi* or *ubhayarambhi*—who commits sin himself as well as inspires others to do so *Anarambhi*—one who abstains completely from all sinful activity, who is disciplined and does everything carefully.

भव की अपेक्षा से ज्ञानादिक चर्चा **KNOWLEDGE IN CONTEXT OF BIRTH**

१०. [प्र. १] इहभविए भंते ! नाणे ? परभविए नाणे ? तदुभयभविए नाणे ?

[उ.] गोयमा ! इहभविए वि नाणे, परभविए वि नाणे, तदुभयभविए वि नाणे। [२] दंसणं पि एवमेव।

१०. [प्र. १] भगवन् ! क्या ज्ञान इहभविक है ? परभविक है ? या तदुभयभविक है ?

[उ.] गौतम ! ज्ञान इहभविक भी है, परभविक भी है और तदुभयभविक भी है। [२] इसी तरह दर्शन भी जानना चाहिए।

10. [Q. 1] *Bhante* ! Does knowledge (*jnana*) extend to this birth ? Does it extend to the next or other birth ? Or does it extend to both this and other birth ?

[Ans.] Gautam ! Knowledge extends to this birth, it extends to the next or other birth, and it extends to both this and other birth as well. [2] Same is true for *darshan* (perception/faith).

[प्र. ३] इहभविए भंते ! चरित्ते, परभविए चरित्ते, तदुभयभविए चरित्ते ?

[उ.] गोयमा ! इहभविए चरित्ते, नो परभविए चरित्ते, नो तदुभयभविए चरित्ते। [४] एवं तवे, संजमे।

[प्र. ३] भगवन् ! क्या चारित्र इहभविक है, परभविक है या तदुभयभविक है ?

[उ.] गौतम ! चारित्र इहभविक है, वह परभविक नही है और न तदुभयभविक है। [४] इसी प्रकार तप और सयम के विषय मे भी जानना चाहिए।

[Q. 3] *Bhante* ! Does conduct (*chaaritra*) extend to this birth ? Does it extend to the next or other birth ? Or does it extend to both this and other birth ?

[Ans.] Gautam ! Conduct extends to this birth, it does not extend to the next or other birth, and neither does it extend to both this and other birth as well. [4] Same is true for austerities (*tap*) and self-restraint (*samyam*).

विवेचन : ज्ञान और दर्शन दोनो आत्मा के साथ यहाँ-वहाँ सर्वत्र रहते है, किन्तु चारित्र, तप और सयम इस जीवन तक ही रहते हैं। ये परलोक में साथ नही रहते, क्योकि चारित्र, तप, सयम आदि की जो जीवन-पर्यन्त प्रतिज्ञा ली जाती है, वह इस जीवन के समाप्त होने पर पूर्ण हो जाती है, मोक्ष मे चारित्र का कुछ भी प्रयोजन नही है। देवगति प्राप्त होने पर वहाँ सयम आदि सम्भव नहीं है। उभयभविक का समावेश परभविक मे ही हो जाता है, तथापि उसे पृथक् कहने का आशय यह है कि ज्ञान और दर्शन परतरभविक अर्थात् अगले भव से भी अगले भव मे साथ जा सकते है। बहुत बार पढने-सुनने मे आता है, दो-तीन वर्ष के बच्चे जिन्हे अक्षर बोध भी नही होता, वे संस्कृत-अग्रेजी आदि भाषाएँ बोलने लगते है, सस्कृत के श्लोको का निर्दोष उच्चारण करते है। इसका कारण भी यही है कि पूर्वभव मे पढा हुआ ज्ञान उनकी धारणा मे स्थिर रहा है।

Elaboration—*Jnana* (knowledge) and *darshan* (perception/faith) always and everywhere remain with the soul. But *chaaritra* (conduct), *tap* (austerities) and *samyam* (self-restraint) are confined to this life only They do not accompany the soul to the other birth. This is because the life-long vow of observing right conduct, austerities and self-restraint comes to an end with the end of life There is no significance of conduct in the liberated state. In the divine realm it is not possible to observe self-restraint etc. Although *parabhavik* (other birth) is naturally included in *ubhayabhavik* (both this and other) but here it has been mentioned separately to indicate that *jnana* and *darshan* may accompany the soul even beyond the next birth Many instances have been reported where a two to three year old infant, who is yet to learn to read and write, starts reciting Sanskrit or English prose and poetry with faultless pronunciation. The explanation for this is that the knowledge

he gained during the last birth remained fixed in his memory and resurfaced during this birth.

असंवुड–संवुड की सिद्धता LIBERATION OF SAMVRIT AND ASAMVRIT

११. [प्र. १] असंवुडे णं भंते ! अणगारे किं सिज्झति, बुज्झति, मुच्चति, परिनिव्वाति, सव्वदुक्खाणमंतं करेति ?

[उ.] गोयमा ! नो इणट्ठे समट्ठे।

[प्र.] से केणट्ठेणं जाव नो अंतं करेइ ?

[उ.] गोयमा ! असंवुडे अणगारे आउयवज्जाओ सत्त कम्मपगडीओ सिढिलबंधणबद्धाओ धणिसबंधणबद्धाओ पकरेति, हस्सकालट्ठितीयाओ दीहकालट्ठितीयाओ पकरेति, मंदाणुभागाओ तिव्वाणुभागाओ पकरेति, अप्पपदेसग्गाओ बहुप्पदेसग्गाओ पकरेति, आउगं च णं कम्मं सिय बंधति, सिय नो बंधति, अस्सातावेदणिज्जं च णं कम्मं भुज्जो भुज्जो उवचिणाति, अणादीयं च णं अणवदग्गं दीहमद्धं संसारकंतारं अणुपरियट्टइ। से तेणट्ठेणं गोयमा ! असंवुडे अणगारे नो सिज्झति जाव णो अंतं करेइ।

११. [प्र. १] भगवन् ! क्या असवृत अनगार सिद्ध होता है, बुद्ध होता है, मुक्त होता है, निर्वाण प्राप्त करता है तथा समस्त दु खो का अन्त करता है ?

[उ.] गौतम ! ऐसा सम्भव नही है।

[प्र.] भगवन् ! वह किस कारण से सिद्ध नही होता, यावत् सब दु खों का अन्त नहीं करता ?

[उ.] गौतम ! असवृत अनगार आयुकर्म को छोड़कर शेष शिथिलबन्धन से बद्ध सात कर्मप्रकृतियो को गाढबन्ध से बद्ध करता है; अल्पकालीन स्थिति वाली कर्मप्रकृतियो को दीर्घकालिक स्थिति वाली करता है, मन्द अनुभाग वाली प्रकृतियों को तीव्र अनुभाग वाली करता है; अल्पप्रदेश वाली प्रकृतियो को बहुतप्रदेश वाली करता है और आयुकर्म को कदाचित् बाँधता है एवं कदाचित् नही बाँधता, असातावेदनीय कर्म का बार–बार उपार्जन करता है; तथा अनादि अनवदग्र–अनन्त, दीर्घमार्ग वाले, चतुर्गति वाले, ससाररूपी अरण्य मे बार–बार परिभ्रमण करता है। गौतम ! इस कारण से असवृत अनगार सिद्ध नही होता, यावत् समस्त दु खो का अन्त नही करता।

11. [Q. 1] *Bhante* ! Does an ascetic who has not blocked the inflow of *karmas* (*asamvrit*) get perfected (*Siddha*), enlightened (*buddha*), liberated (*mukta*), freed of cyclic rebirth (*parinivrit*), and end all miseries ?

[Ans.] Gautam ! That is not possible.

[Q.] *Bhante* ! What is the reason that he does not get perfected (*Siddha*), . and so on up to. end all miseries ?

[Ans.] Gautam ! Besides *ayu-karma* (life-span determining *karma*) an *asamvrit* ascetic transforms *karmas* of seven species from those having

weak bondage into those having strong bondage; those having short duration into those having long duration; those having low intensity into those having high intensity, and those having less space-points into those having more space-points He sometimes acquires the bondage of *ayu-karma* and sometimes not. He also continues to acquire *asatavedaniya karma* (*karma* causing pain) and move around in the endless, infinite, extended forest of cycles of rebirth having four genuses. Gautam ! For this reason an *asamvrit* ascetic does not get perfected (*Siddha*), . and so on up to. end all miseries.

[प्र. २] संवुडे णं भंते ! अणगारे सिज्झति ५ ?

[उ.] हंता, सिज्झति जाव अंतं करेति।

[प्र.] से केणट्ठेणं भंते !

[उ.] गोयमा ! संवुडे अणगारे आउयवज्जाओ सत्त कम्मपगडीओ घणियबंधणबद्धाओ सिढिलबंधणबद्धाओ पकरेति, दीहकालट्ठितीयाओ हस्सकालट्ठितीयाओ पकरेति, तिव्वाणुभागाओ मंदाणुभागाओ पकरेति, बहुपएसग्गओ अप्पपएसग्गओ पकरेति, आउयं च णं कम्मं न बंधति, अस्सायावेयणिज्जं च णं कम्मं नो भुज्जो भुज्जो उवचिणाति, अणाईयं च णं अणवदग्गं दीहमद्धं चाउरंतं संसारकंतारं वीतीवयति। से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ—संवुडे अणगारे सिज्झति जाव अंतं करेति।

[प्र. २] भगवन् ! क्या सवृत अनगार सिद्ध होता है, यावत् सब दु:खो का अन्त करता है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! वह सिद्ध हो जाता है, यावत् सब दु खो का अन्त करता है।

[प्र.] भगवन् ! वह किस कारण से सिद्ध हो जाता है ?

[उ.] गौतम ! सवृत अनगार आयुष्यकर्म को छोडकर शेष गाढबन्धन से बँधी सात कर्मप्रकृतियो को शिथिलबन्धन वाली कर देता है; दीर्घकालिक स्थिति वाली कर्मप्रकृतियो को ह्रस्व (थोडे) काल की स्थिति वाली कर देता है, तीव्र रस (अनुभाव) वाली प्रकृतियो को मन्द रस वाली कर देता है; बहुतप्रदेश वाली प्रकृतियो को अल्पप्रदेश वाली कर देता है और आयुष्यकर्म को नही बाँधता। वह असातावेदनीय कर्म का बार-बार उपचय नही करता, (अतएव वह) अनादि-अनन्त दीर्घमार्ग वाले चतुर्गति रूप ससार-अरण्य को पार कर जाता है। इस कारण से, गौतम ! ऐसा कहा जाता है कि सवृत अनगार सिद्ध हो जाता है, यावत् सब दु खो का अन्त कर देता है।

[Q. 2] *Bhante* ! Does an ascetic who has blocked the inflow of *karmas* (*samvrit*) gets perfected (*Siddha*)... and so on up to. ends all miseries ?

[Ans.] Yes, Gautam ! He gets perfected (*Siddha*) .. and so on up to... ends all miseries

[Q.] *Bhante* ! What is the reason for that ?

[**Ans.**] Gautam ! Besides *ayu-karma* (life-span determining *karma*) a *samvrit* ascetic transforms *karmas* of seven species from those having strong bondage into those having weak bondage; those having long duration into those having short duration; those having high intensity into those having low intensity; and those having more space-points into those having less space-points. He does not acquire the bondage of *ayu-karma*. He also discontinues to acquire *asatavedaniya karma* (*karma* causing pain) and (thus) crosses the endless, infinite, extended forest of cycles of rebirth having four genuses. Gautam ! For this reason it is said that a *samvrit* ascetic gets perfected (*Siddha*), .. and so on up to... ends all miseries.

विशेष शब्दों की व्याख्या : जिस साधु ने अनगार होकर हिंसादि आस्रवद्वारो को रोका नही है वह **असंवृत** है। आस्रवद्वारो का निरोध करके सवर की साधना करने वाला मुनि **संवृत अनगार** है। ये छठे गुणस्थान (प्रमत्तसयत) से लेकर चौदहवे गुणस्थानवर्ती तक होते हैं। सवृत अनगार दो प्रकार के होते है-चरमशरीरी और अचरमशरीरी। जिन्हे दूसरा शरीर धारण नही करना पडेगा, वे एकभवावतारी चरमशरीर और जिन्हें दूसरा शरीर (सात-आठ भव तक) धारण करना पडेगा, वे अचरमशरीरी होते हैं। प्रस्तुत सूत्र चरमशरीरी की अपेक्षा से है। दोनो में अन्तर यह है कि अचरमशरीरी सवृत अनगार उसी भव मे मोक्ष भले न जाएँ मगर वे ७-८ भवो मे अवश्य मोक्ष जायेगे ही। इस प्रकार उनकी भव-परम्परा की सीमा ७-८ भवों तक की ही है। अपार्धपुद्गलपरावर्तन की जो परम्परा अन्यत्र कही गई है, वह विराधक की अपेक्षा से समझना चाहिए।

'सिज्झइ' आदि पाँच पदों का अर्थ और क्रम-अन्तिम जन्म प्राप्त करके जो मोक्षगमनयोग्य होता है, वही **सिद्ध** (सिद्धिप्राप्त) होता है, **बुद्ध** तभी कहेगे जब केवलज्ञान प्राप्त होगा। जो बुद्ध हो जाता है, उसके केवल भवोपग्राही अघातिकर्म शेष रहते है, भवोपग्राही कर्म को जब वह प्रतिक्षण छोडता है, तब **मुक्त** कहलाता है। भवोपग्राही कर्मों को प्रतिक्षण क्षीण करने वाला वह महापुरुष कर्मपुद्गलो को ज्यो-ज्यो क्षीण करता जाता है, त्यों-त्यों शीतल होता जाता है, इस प्रकार की शीतलता-शाति प्राप्त करना ही **निर्वाणप्राप्त** करना है। वही जीव अपने भव के अन्त समय मे जब समस्त कर्मों का सर्वथा क्षय कर चुकता है, तब अपने **समस्त दुःखों का अन्त करता है।** **अनादिकं** (जिसकी आदि न हो), **अनवदग्रम्** (अन्त से रहित-अनन्त), **दीहमद्धं**-जिसका अध्व (मार्ग) या **अद्धा**-काल दीर्घ-लम्बा हो।

TECHNICAL TERMS

Asamvrit—an ascetic who, after renouncing household, does not put a stop to violence and other sources of inflow of *karmas*. *Samvrit*—an ascetic who practices *samvar* by blocking the sources of inflow of *karmas*. These ascetics are at the sixth to fourteenth *Gunasthaan* levels. *Samvrit* ascetics are of two kinds—*charam-shariri* and *acharam-shariri*. Those who do not have to reincarnate again and are in their last physical body are called *charam-shariri* and those who have to further reincarnate for seven to eight births are called *acharam-shariri*. This

aphorism is about the *charam-shariris*. The *acharam-shariri* ascetics do not get liberated at the end of the birth under consideration but they are certain to get liberated within seven to eight rebirths. Thus the maximum limit of their reincarnations is seven to eight. The limit of *Apardhapudgalaparavartan* (an extremely long unit of time) stated elsewhere relates to the transgressors

The meaning and order of *Siddha* and following four terms—One who gets born only for the last time and is destined to get liberated is called *Siddha* (perfected) Only after he attains omniscience (*Keval-jnana*) he is called *buddha* One who becomes *buddha* is left with only the incarnation sustaining *karmas* (*bhavopagrahi karma*) that are non-vitiating (*aghaati*) When he sheds these incarnation sustaining *karmas* every moment he is called *Mukta* As he continues to shed these *karmas* he keeps on enhancing his serenity Acquiring such serenity is to attain *Nirvana* During the last moments of his life, when he completely destroys all his *karmas*, he ends all his miseries.

Anadikam—without a beginning *Anavadagram*—wihtout an end or infinite *Dihamaddham*—one whose path (*adhva*) or life-span (*addha*) is long

असंयत जीव की देवगति विषयक चर्चा DIVINE BIRTH OF THE INDISCIPLINED

१२. [प्र. १] जीवे णं भंते ! असंजते अविरते अप्पडिहयपच्चक्खायपावकम्मं इतो चुए पेच्चा देवे सिया ?

[उ.] गोयमा ! अत्थेगइए देवे सिया, अत्थेगइए नो देवे सिया।

[प्र.] से केणट्ठेणं जाव इतो चुए पेच्चा अत्थेगइए देवे सिया, अत्थेगइए नो देवे सिया ?

[उ.] गोयमा ! जे इमे जीवा गामाऽऽगर-नगर-निगम-रायहाणि-खेड-कब्बड-मडंब-दोणमुह-पट्टणाऽऽसम-सन्निवेसेसु अकामतण्हाए अकामछुहाए अकामबंभचेरवासेणं अकामअण्हाणग सेय-जल्ल-मल-पंकपरिदाहेणं अप्पतरो वा भुज्जतरो वा कालं अप्पाणं परिकिलेसंति, अप्पाणं परिकिलेसइत्ता कालमासे कालं किच्चा अन्नतरेसु वाणमंतरेसु देवलोगेसु देवत्ताए उववत्तारो भवंति।

१२. [प्र. १] भगवन् ! असयत, अविरत तथा जिसने पापकर्म का त्याग नही किया है, वह जीव इस लोक से च्यव (मर) कर क्या परलोक मे देव होता है ?

[उ.] गौतम ! कोई जीव देव होता है और कोई देव नहीं होता।

[प्र.] भगवन् ! यहाँ से च्यवकर परलोक में कोई जीव देव होता है और कोई देव नहीं होता; इसका क्या कारण है ?

[उ.] गौतम ! जो ये जीव ग्राम, आकर (खान), नगर, निगम (व्यापारिक केन्द्र), राजधानी, खेट (खेडा), कर्बट (खराब नगर), मडम्ब (चारो ओर ढाई–ढाई कोस तक बस्ती से रहित बस्ती), द्रोणमुख (बन्दरगाह जलपथ–स्थलपथ से युक्त बस्ती), पट्टण (पत्तन–मण्डी, जहाँ देश–देशान्तर से आया हुआ माल उतरता है), आश्रम (तापस आदि का स्थान), सन्निवेश (घोष आदि लोगों का आवास–स्थान) आदि स्थानो में अकाम तृषा (प्यास) से, अकाम क्षुधा से, अकाम ब्रह्मचर्य से, अकाम शीत, आतप तथा डाँस–मच्छरों के काटने के दुःख को सहने से, अकाम अस्नान, पसीना, जल्ल (धूल लिपट जाना), मैल तथा पक से होने वाले परिदाह से थोडे समय तक या बहुत समय तक अपने आप को क्लेशित करते हैं; वे अपने आप को (पूर्वोक्त प्रकार से) क्लेशित करके मृत्यु के समय पर मरकर वाणव्यन्तर देवों के किसी देवलोक मे देवरूप से उत्पन्न होते हैं।

12. [Q. 1] *Bhante* ! When the indisciplined (*asamyat*), non-abstinent (*avirat*) and he who has neither atoned for nor given up sinful acts passes away from this world, does he reincarnate as a divine being ?

[Ans.] Gautam ! Some soul becomes a god and some does not.

[Q.] *Bhante* ! What is the reason for some being, after passing away from this world, reincarnating as a god and some not ?

[Ans.] Gautam ! These beings living in *gram* (village), *aakar* (settlement near a mine), *nagar* (city), *nigam* (trade center), capital, *khet* (kraal), *karbat* (market), *madamb* (borough), *dronmukh* (hamlet), *pattan* (harbour), *ashram* (hermitage) and *sannivesh* (temporary settlement) suffer pain for a short or a long period without volition due to thirst, hunger, celibacy, cold, heat and insect-bite (mosquitos, wasps etc.) as well as discomfort due to not bathing, sweating, smearing of dust, dirt and slime Such beings after said sufferance pass away at the time of death and reincarnate as gods in some divine realm of Vanavyantar Devas (interstitial gods).

वाणव्यन्तर देवलोक का स्वरूप DESCRIPTION OF VANAVYANTAR DEV LOK

[प्र. २] केरिसा णं भंते ! तेसिं वाणमंतराणं देवाणं देवलोगा पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! से जहानामए इहं असोगवणे इ वा, सत्तावण्णवणे इ वा, चंपगवणे इ वा, चूतवणे इ वा, तिलगवणे इ वा, लउयवणे इ वा, णिग्गोहवणे इ वा, छत्तोववणे इ वा, असणवणे इ वा, सणवणे इ वा, अयसिवणे इ वा, कुसुंभवणे इ वा, सिद्धत्थवणे इ वा, बंधुजीवगवणे इ वा णिच्चं कुसुमित माइत लवइत थवइय गुलुइत गुच्छित जमलित जुवलित विणमित पणमित सुविभत्त पिंडमंजरिवडेंसगधरे सिरीए अईव अईव उवसोभेमाणे उवसोभेमाणे चिट्ठति, एवामेव तेसिं वाणमंतराणं देवाणं देवलोगा जहन्नेणं दसवाससहस्सट्ठितीएहिं उक्कोसेणं पलिओवमट्ठितीएहिं बहूहिं वाणमंतरेहिं देवेहि य देवीहि य आइण्णा

वितकिण्णा उवत्थडा संथडा फुडा अवगाढगाढा सिरीए अतीव अतीव उवसोभेमाणा चिट्ठंति। एरिसगा णं गोतमा ! तेरिं वाणमंतराणं देवाणं देवलोगा पण्णत्ता। से तेणट्ठेणं गोतमा ! एवं वुच्चति–जीवे णं अस्संजए जाव देवे सिया।

[प्र. २] भगवन् ! उन वाणव्यन्तर देवो के देवलोक किस प्रकार के होते है ?

[उ. २] गौतम ! जैसे इस मनुष्यलोक मे नित्य कुसुमित (सदा फूला हुआ), मयूरित (मौर–पुष्पविशेष वाला), लवकित (कोंपलों वाला), फूलो के गुच्छों वाला, लतासमूह वाला, पत्तों के गुच्छो वाला, यमल (समान श्रेणी के) वृक्षो वाला, युगल वृक्षो वाला, फल–फूल के भार से नमा हुआ, फल के भार से झुकने की प्रारम्भिक अवस्था वाला, विभिन्न प्रकार की बालो और मजरियो रूपी मुकुटों को धारण करने वाला अशोकवन, सप्तपर्णवन, चम्पकवन, आम्रवन, तिलक वृक्षो का वन, तुम्बे की लताओ का वन, वटवृक्षो का वन, क्षत्रोघवन, अशनवृक्षो का वन, सन (पटसन) वृक्षो का वन, अलसी के पौधो का वन, कुसुम्ब वृक्षो का वन, सफेद सरसो का वन, दुपहरिया (बन्धुजीवक) वृक्षो का वन, इत्यादि वन शोभा से अतीव–अतीव उपशोभित होता है, इसी प्रकार वाणव्यन्तर देवो से और उनकी देवियो से आकीर्ण–व्याप्त, व्याकीर्ण–विशेष व्याप्त, एक–दूसरे पर आच्छादित, परस्पर मिले हुए, हलके प्रकाश वाले, अत्यन्त अवगाढ श्री–शोभा से अतीव–अतीव सुशोभित रहते है। गौतम ! उन वाणव्यन्तर देवो के स्थान–देवलोक इसी प्रकार के है। इस कारण से ऐसा कहा जाता है कि असयत जीव मरकर यावत् कोई देव होता है और कोई देव नही होता।

[Q. 2] *Bhante* ! What is the description of the divine realm belonging to the Vanavyantar Devas ?

[Ans.] Gautam ! Just as in this world of human beings there are forests of Ashoka trees, Saptaparna trees, Champak trees, mango trees, Tilak trees, gourd creepers, banyan trees, Kshatrogh trees, Ashan trees, hessian trees, Alasi plants, Kusumb trees, white mustard trees, Bandhujivak trees and many other trees resplendent and always laden with flowers, buds, leaves, clusters of flowers and bunches of leaves; embraced by creepers like Jasmine and heavy with the flourishing greenery, swaying gracefully in the wind; some stand in a row and others always in pairs; many are bent low due to the load of flowers, fruits and leaves (*vinamit*); and some even touch the ground due to excessive weight; and they appear as if they have plumed crests in the form of beautiful buds and danglers; likewise is the dense, shaded dimly lit and enchantingly beautiful divine realm of the Vanavyantar gods inhabited and crowded by these gods and goddesses. Gautam ! Such is the divine realm of the Vanavyantar gods. For this reason it is said that some of the indisciplined (*asamyat*) after death reincarnate as gods and some do not.

विशेष शब्दों की व्याख्या : **असंयत**–असाधु या संयमरहित। **अविरत**–प्राणातिपात आदि पापों से विरतिरूप व्रतरहित। **अप्रतिहत–प्रत्याख्यातपापकर्मा**–(१) जिसने भूतकालीन पापों को निन्दा गर्हा आदि के द्वारा पाप नष्ट (निराकृत) नहीं किया है तथा जिसने भविष्यकालीन पापों का प्रत्याख्यान–त्याग नहीं किया है। **अकाम**–कर्मनिर्जरा की अभिलाषा के बिना जो कष्ट सहन आदि किया जाये, उससे होने वाली निर्जरा **अकामनिर्जरा** है। मोक्षप्राप्ति की कामना–स्वेच्छा या उद्देश्य से ज्ञानपूर्वक जो निर्जरा की जाती है, वह **सकामनिर्जरा** कहलाती है। अकामनिर्जरा वाले वाणव्यन्तरादि देव होते हैं, जबकि सकामनिर्जरा वाले साधक वैमानिक देवो की उत्तम से उत्तम स्थिति प्राप्त करके मोक्ष की भी आराधना कर सकते है। **वाणव्यन्तर**–वनविशेष मे उत्पन्न होने अर्थात् बसने और वही क्रीडा करने वाले देव।

TECHNICAL TERMS

Asamyat—ignoble or indisciplined. *Avirat*—non-abstinent or one who has not taken vows of abstaining from sinful acts including that of non-killing *Apratihat-pratyakhyat-paapkarma*—one who has not atoned for past sins by self-criticism and remorse, and not resolved to abstain from sins in future. *Akam*—the natural shedding of *karmas* due to sufferance without an intent of shedding *karmas* is called *akam nirjara*. The shedding of *karmas* done voluntarily with the intent of getting liberated is called *sakam nirjara* Those who do *akam nirjara* reincarnate as Vanavyantar gods and those who do *sakam nirjara* reincarnate as higher Vaimanik gods and may even proceed on the path of liberation. Vanavyantar—divine beings born, dwelling and enjoying in specific forests

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति भगवं गोतमे समणं भगवं महावीरं वंदति नमंसति वंदित्ता नमंसित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरति।

॥ पढमे सए : पढमो उद्देसो समत्तो ॥

हे भगवन् ! 'यह इसी प्रकार है, यह इसी प्रकार है'; ऐसा कहकर भगवान गौतम श्रमण भगवान महावीर को वन्दना करते है, नमस्कार करते है, वन्दना–नमस्कार करके सयम तथा तप से आत्मा को भावित करते हुए विचरण करते है।

॥ प्रथम शतक : प्रथम उद्देशक समाप्त ॥

Bhante ! "Indeed that is so. Indeed that is so." With these words ascetic Gautam paid homage and obeisance to Bhagavan Mahavir and resumed his activities enkindling (*bhaavit*) his soul with ascetic-discipline and austerities

● END OF THE FIRST LESSON OF THE FIRST SHATAK ●

प्रथम शतक : द्वितीय उद्देशक
FIRST SHATAK (Chapter One) : SECOND LESSON

दुःख MISERY

१. रायगिहे नगरे समोसरणं। परिसा निग्गता जाव एवं वयासी—

१. राजगृह नगर में (भगवान का) समवसरण हुआ। (उनके दर्शन-वन्दन-श्रवणार्थ) परिषद् निकली। यावत् (श्री गौतम स्वामी) ने इस प्रकार पृच्छा की–

1. In Rajagriha city was held the *samavasaran* (religious assembly) (of Bhagavan Mahavir) People came out... and so on up to... (Gautam Swami) submitted as follows—

जीव के स्वकृत-दुःखवेदन SELF-CREATED SUFFERANCE

२. [प्र. १] जीवे णं भंते ! सयंकडं दुक्खं वेदेति ?

[उ.] गोयमा ! अत्थेगइयं वेदेति, अत्थेगइयं नो वेदेति।

[प्र. २] से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ–अत्थेगइयं वेदेति, अत्थेगइयं नो वेदेति ?

[उ.] गोयमा ! उदिण्णं वेदेति, अणुदिण्णं नो वेदेति, से तेणट्ठेणं एवं वुच्चति–अत्थेगइयं वेदेति, अत्थेगइयं नो वेदेति। एवं चउव्वीसदंडएणं जाव वेमाणिए।

२. [प्र. १] भगवन् ! क्या जीव स्वयंकृत दुःख (कर्म) को भोगता है ?

[उ.] गौतम ! किसी को भोगता है, किसी को नही भोगता।

[प्र. २] भगवन् ! किस कारण से ऐसा कहते है कि किसी को भोगता है और किसी को नही भोगता ?

[उ.] गौतम ! उदीर्ण (उदय मे आये) दुःखहेतुक कर्म को भोगता है, अनुदीर्ण दु खहेतुक कर्म को नही भोगता है, अनुदीर्ण दु ख-कर्म को नहीं भोगता, इसीलिए कहा गया है कि किसी कर्म को भोगता है और किसी कर्म को नही भोगता। इसी प्रकार वैमानिक देवो पर्यन्त चौबीस दडको के लिए जानना चाहिए।

2. [Q. 1] *Bhante* ! Does a *jiva* (living being/soul) suffer misery caused by self-acquired *karmas* ?

[Ans.] He suffers some and does not suffer some misery.

[Q. 2] Bhante ! Why do you say that he suffers some and does not suffer some ?

[Ans.] Gautam ! He suffers the fructified (*udirna*) misery-causing *karmas* and does not suffer the unfructified (*anudirna*) misery-causing *karmas*. As he does not suffer the unfructified (*anudirna*) misery-causing

karmas, it is said that he suffers some and does not suffer some. The same is true for all the twenty four *Dandaks* (places of suffering) up to Vaimanik Devas.

३. [प्र. १] जीवा णं भंते ! सयंकडं दुक्खं वेदेंति ?

[उ.] गोयमा ! अत्थेगइयं वेदेंति, अत्थेगइयं णो वेदेंति।

[प्र. २] से केणट्ठेणं ?

[उ.] गोयमा ! उदिण्णं वेदेंति, नो अणुदिण्णं वेदेंति, से तेणट्ठेणं एवं जाव वेमाणिया।

३. [प्र. १] भगवन् ! क्या (बहुत-से) जीव स्वयंकृत दुःख भोगते है ?

[उ.] गौतम ! किसी कर्म (दु.ख) को भोगते है, किसी को नहीं भोगते।

[प्र. २] भगवन् ! इसका क्या कारण है ?

[उ.] गौतम ! उदीर्ण (कर्म) को भोगते है, अनुदीर्ण को नहीं भोगते, इस कारण ऐसा कहा गया है। इस प्रकार यावत् नैरयिक से लेकर वैमानिक तक चौबीसो दण्डको के सम्बन्ध मे प्रश्नोत्तर समझ लेना चाहिए।

3. [Q. 1] *Bhante* ! Do (many) *jivas* (living beings/souls) suffer misery caused by self-acquired *karmas* ?

[Ans.] They suffer some and do not suffer some

[Q. 2] *Bhante* ! Why do you say so ?

[Ans.] Gautam ! They suffer the fructified (*udirna*) misery-causing *karmas* and do not suffer the unfructified (*anudirna*) misery-causing *karmas* That is why it is said that they suffer some and do not suffer some The same is true for all the twenty four *Dandaks* (places of suffering) from infernal beings up to Vaimanik Devas

आयु-वेदन चर्चा **LIFE-SPAN**

४. [प्र.] जीवे णं भंते ! सयंकडं आउयं वेदेति ?

[उ.] गोयमा ! अत्थेगइयं वेदेति जहा दुक्खेणं दो दंडगा तहा आउएण वि दो दंडगा एगत्तपोहत्तिया; एगत्तेणं जाव वेमाणिया, पुहत्तेण वि तहेव।

४. [प्र.] भगवन् ! क्या जीव स्वयकृत आयु को भोगता है ?

[उ.] गौतम ! किसी को भोगता है, किसी को नही भोगता। जैसे-दु:ख-कर्म के विषय में दो दण्डक कहे है, उसी प्रकार आयुष्य (कर्म) के सम्बन्ध मे भी एकवचन और बहुवचन वाले दो दण्डक कहने चाहिए। एकवचन से यावत् वैमानिकों तक कहना, इसी प्रकार बहुवचन से भी (वैमानिकों) तक कहना चाहिए।

4. [Q.] *Bhante* ! Does a *jiva* (living being/soul) experience life-span determined by self-acquired *karmas* ?

[Ans.] He experiences some and does not experiences some. Like the two statements about misery-causing ***karmas***, two statements in context of singular number and plural number should be read about life-span determining *karma* In context of singular it should be read up to Vaimaniks and same should be done in context of plural.

विवेचन : उक्त तीनो सूत्रो का सार यह है कि–प्राणी स्वयं ही स्वकृतकर्म के फलस्वरूप सुख या दु ख भोगता है। आयुष्यकर्म का फल भी एक के बदले दूसरा नही भोग सकता। हाँ, जिस साता–असातावेदनीय आदि या आयुष्यकर्म का फल कदाचित् वर्तमान मे नही दिखाई देता, उसका कारण यह है कि वर्तमान मे वे कर्म उदय मे नही आये हुए (अनुदय-अवस्था मे) है, जब वे उदयावस्था में आते हैं, तभी फल देते है।

Elaboration—The gist of the aforesaid three aphorisms is that a being suffers pleasure or pain due to self-acquired *karmas* The consequences of even the life-span determining *karma* acquired by one person cannot be suffered by another It is true that consequences of some pleasure and pain causing or life-span determining *karmas* may not be apparent at the present moment The reason for this is that these *karmas* have not undergone fruition at present (i e they are in a dormant state) *Karmas* provide fruits only when they fructify.

चौबीस दंडक में समानत्व चर्चा [नैरयिक]

SIMILARITIES IN TWENTY FOUR DANDAKS (INFERNAL BEINGS)

५. [प्र. १] नेरइया णं भंते ! सव्वे समाहारा, सव्वे समसरीरा, सव्वे समुस्सास–नीसासा ?

[उ.] गोयमा ! नो इणट्ठे समट्ठे।

[प्र.] से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चति–नेरइया नो सव्वे समाहारा, नो सव्वे समसरीरा, नो सव्वे समुस्सास–निस्सासा ?

[उ.] गोयमा ! नेरइया दुविहा पण्णत्ता। तं जहा–महासरीरा य अप्पसरीरा य। तत्थ णं जे ते महासरीरा ते बहुतराए पोग्गले आहारेंति, बहुतराए पोग्गले परिणामेंति, बहुतराए पोग्गले उस्ससंति, बहुतराए पोग्गले नीससंति, अभिक्खणं आहारेंति, अभिक्खणं परिणामेंति, अभिक्खणं ऊससंति, अभिक्खणं निस्ससंति। तत्थ णं जे ते अप्पसरीरा ते णं अप्पतराए पोग्गले आहारेंति, अप्पतराए पोग्गले परिणामेंति, अप्पतराए पोग्गले उस्ससंति, अप्पतराए पोग्गले नीससंति, आहच्च आहारेंति, आहच्च परिणामेंति, आहच्च उस्ससंति, आहच्च नीससंति। से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ–नेरइया नो सव्वे समाहारा जाव नो सव्वे समुस्सास–निस्सासा।

५. [प्र. १] भगवन् ! क्या सभी नारक जीव समान आहार वाले, समान शरीर वाले तथा समान उच्छ्वास-निःश्वास वाले होते हैं ?

[उ.] गौतम ! ऐसा सम्भव नहीं है।

[प्र.] भगवन् ! ऐसा किस कारण से कहते हैं कि सभी नारक जीव समान आहार वाले, समान शरीर वाले तथा समान उच्छ्वास-निःश्वास वाले नहीं है ?

[उ.] गौतम ! नैरयिक जीव दो प्रकार के होते है, जैसे कि-महाशरीरी और अल्पशरीरी (छोटे शरीर वाले)। इनमें जो महाशरीर वाले हैं, वे बहुत पुद्गलों का आहार करते हैं, बहुत (आहृत) पुद्गलों का परिणमन करते हैं, बहुत पुद्गलो को उच्छ्वास रूप में ग्रहण करते हैं और बहुत पुद्गलो को निःश्वास रूप से छोडते है तथा वे बार-बार आहार लेते है, बार-बार उसे परिणमाते हैं, तथा बार-बार उच्छ्वास-निःश्वास लेते है तथा जो छोटे शरीर वाले नारक है, वे थोडे पुद्गलों का आहार करते हैं, थोड़े-से (आहृत) पुद्गलों का परिणमन करते है और थोडे पुद्गलों को उच्छ्वास रूप से ग्रहण करते हैं तथा थोड़े-से पुद्गलो को नि श्वास रूप से छोडते हैं। वे कदाचित् आहार करते हैं, कदाचित् उसे परिणमाते हैं और कदाचित् उच्छ्वास तथा नि.श्वास लेते है। इसलिए गौतम ! ऐसा कहा जाता है कि सभी नारक जीव समान आहार वाले, समान शरीर वाले और समान उच्छ्वास-निःश्वास वाले नहीं है।

5. [Q. 1] *Bhante* ! Do all infernal beings have the same intake, body (physical dimensions) and respiration ?

[Ans.] Gautam ! That is not possible.

[Q.] *Bhante* ! Why do you say that all infernal beings do not have the same intake, body (physical dimensions) and respiration ?

[Ans.] Gautam ! Infernal beings are said to be of two kinds—*mahashariri* (large bodied) and *alpashariri* (small bodied). Of these the large bodied ones take large number of matter particles, transform large number of matter particles so taken, inhale large number of matter particles and exhale large number of matter particles. They also have frequent intake, frequent transformation, frequent inhalation and frequent exhalation. On the other hand the small bodied ones take small number of matter particles, transform small number of matter particles so taken, inhale small number of matter particles and exhale small number of matter particles They also have infrequent intake, infrequent transformation, infrequent inhalation and infrequent exhalation. That is why, Gautam ! It is said that all infernal beings do not have the same intake, body (physical dimensions) and respiration.

[प्र. २] नेरइया णं भंते ! सव्वे समकम्मा ?

[उ.] गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे।

[प्र.] से केणट्ठेणं ?

[उ.] गोयमा ! नेरइया दुविहा पण्णत्ता। तं जहा—पुव्वोववन्नगा य पच्छोववन्नगा य। तत्थ णं जे ते पुव्वोववन्नगा ते णं अप्पकम्मतरागा। तत्थ णं जे ते पच्छोववन्नगा ते णं महाकम्मतरागा। से तेणट्ठेणं एवं.....।

[प्र. २] भगवन् ! क्या सभी नारक समान कर्म वाले है ?

[उ.] गौतम ! ऐसा सम्भव नही है।

[प्र.] भगवन् ! ऐसा किस कारण से कहते हैं ?

[उ.] गौतम ! नारकी जीव दो प्रकार के होते है-(१) पूर्वोपपन्नक (पहले उत्पन्न हुए), और (२) पश्चादुपपन्नक (पीछे उत्पन्न हुए)। इनमे से जो पूर्वोपपन्नक है वे अल्पकर्म वाले है और जो उनमे पश्चादुपपन्नक है, वे महाकर्म वाले है, इस कारण से हे गौतम ! ऐसा कहा जाता है कि सभी नारक समान कर्म वाले नही है।

[Q. 2] *Bhante* ! Do all infernal beings have the same *karmic* bondage ?

[Ans.] Gautam ! That is not possible.

[Q.] *Bhante* ! Why do you say so ?

[Ans.] Gautam ! Infernal beings are said to be of two kinds—(1) *Purvopapannak* (born earlier), and (2) *Pashchadupapannak* (born later). Of these those born earlier have lesser *karmas* (left with lighter *karmic* bondage) and those born later have more *karmas* (left with heavier *karmic* bondage). That is why, Gautam ! It is said that all infernal beings do not have the same *karmic* bondage.

[प्र. ३] नेरइया णं भंते ! सव्वे समवण्णा ?

[उ.] गोयमा ! नो इणट्ठे समट्ठे।

[प्र.] से केणट्ठेणं तह चेव.....?

[उ.] गोयमा ! जे ते पुव्वोववन्नगा ते णं विसुद्धवण्णतरागा तहेव से तेणट्ठेणं एवं.....।

[प्र. ३] भगवन् ! क्या सभी नारक समवर्ण वाले है ?

[उ.] गौतम ! यह अर्थ सम्भव नही है।

[प्र.] भगवन् ! किस कारण से ऐसा कहा जाता है ?

[उ.] गौतम ! पूर्वोक्त कथनवत् नारक दो प्रकार के होते है-(१) पूर्वोपपन्नक, और (२) पश्चादुपपन्नक। इनमे जो पूर्वोपपन्नक है, वे विशुद्ध वर्ण वाले है, तथा जो पश्चादुपपन्नक है, वे अविशुद्ध वर्ण वाले है, इसीलिए ऐसा कहा जाता है।

[Q. 3] *Bhante* ! Do all infernal beings have the same colour ?

[Ans.] Gautam ! That is not possible.

[Q.] *Bhante* ! Why do you say so ?

[Ans.] Gautam ! Infernal beings are said to be of two kinds—(1) *Purvopapannak* (born earlier), and (2) *Pashchadupapannak* (born later) Of these those born earlier have pure colour and those born later have impure colour That is why, Gautam ! It is said so.

[प्र. ४] नेरइया णं भंते ! सव्वे समलेसा ?

[उ.] गोयमा ! नो इणट्ठे समट्ठे।

[प्र.] से केणट्ठेणं जाव नो सव्वे समलेसा ?

[उ.] गोयमा ! नेरइया दुविहा पण्णत्ता। तं जहा—पुव्वोववन्नगा य पच्छोववन्नगा य। तत्थ णं जे ते पुव्वोववन्नगा ते णं विसुद्धलेसतरागा, तत्थ णं जे ते पच्छोववन्नगा ते णं अविसुद्धलेसतरागा। से तेणट्ठेणं. एवं.....।

[प्र. ४] भगवन् ! क्या सब नैरयिक समान लेश्या वाले है ?

[उ.] गौतम ! ऐसा सम्भव नही है।

[प्र.] भगवन् ! किस कारण से कहा जाता है कि सभी नैरयिक समान लेश्या वाले नहीं है ?

[उ.] गौतम ! नैरयिक दो प्रकार के होते है—(१) पूर्वोपपन्नक, और (२) पश्चादुपपन्नक। इनमें जो पूर्वोपपन्नक है, वे विशुद्ध लेश्या वाले और जो पश्चादुपपन्नक है, वे अविशुद्ध लेश्या वाले हैं, इस कारण हे गौतम ! ऐसा कहा जाता है कि सभी नारक समान लेश्या वाले नही है।

[Q. 4] *Bhante* ! Do all infernal beings have the same *leshya* (complexion of soul) ?

[Ans.] Gautam ! That is not possible.

[Q.] *Bhante* ! Why do you say so ?

[Ans.] Gautam ! Infernal beings are said to be of two kinds—(1) *Purvopapannak* (born earlier), and (2) *Pashchadupapannak* (born later). Of these those born earlier have pure *leshya* (complexion of soul) and those born later have impure *leshya* (complexion of soul). That is why, Gautam ! It is said that all infernal beings do not have the same *leshya* (complexion of soul).

[प्र. ५] नेरइया णं भंते ! सव्वे समवेदणा ?

[उ.] गोयमा ! नो इणट्ठे समट्ठे।

[प्र.] से केणट्ठेणं ?

[उ.] गोयमा ! नेरइया दुविहा पण्णत्ता। तं जहा—सण्णिभूया य असण्णिभूया य। तत्थ णं जे ते सण्णिभूया ते णं महावेयणतरागा, तत्थ णं जे ते असण्णिभूया ते णं अप्पवेयणतरागा। से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं.....।

[प्र. ५] भगवन् ! क्या सब नारक समान वेदना वाले हैं ?

[उ.] गौतम ! ऐसा सम्भव नही है।

[प्र.] भगवन् ! किस कारण से ऐसा कहा जाता है ?

[उ.] गौतम ! नैरयिक दो प्रकार के होते है, यथा—(१) संज्ञिभूत, और (२) असंज्ञिभूत। इनमे जो संज्ञिभूत है, वे महावेदना वाले हैं और जो असंज्ञिभूत हैं, वे (अपेक्षाकृत) अल्प वेदना वाले हैं। इस कारण से हे गौतम ! ऐसा कहा जाता है कि सब नारक समान वेदना वाले नही हैं।

[Q. 5] *Bhante* ! Do all infernal beings have the same pain (intensity of suffering) ?

[Ans.] Gautam ! That is not possible

[Q.] *Bhante* ! Why do you say so ?

[Ans.] Gautam ! Infernal beings are said to be of two kinds—(1) *Sanjnibhoot* (having awareness/righteousness), and (2) *Asanjnibhoot* (not having awareness/righteousness). Of these the *sanjnibhoot* (having awareness/righteousness) suffer great pain and *asanjnibhoot* (not having awareness/righteousness) suffer little pain That is why, Gautam ! it is said that all infernal beings do not have the same pain (intensity of suffering)

[प्र. ६] नेरइया णं भंते ! सव्वे समकिरिया ?

[उ.] गोयमा ! नो इणट्ठे समट्ठे।

[प्र.] से केणट्ठेणं ?

[उ.] गोयमा ! नेरइया तिविहा पण्णत्ता। तं जहा—सम्मद्दिट्ठी मिच्छादिट्ठी सम्मामिच्छादिट्ठी। तत्थ णं जे ते सम्मदिट्ठी तेसि णं चत्तारि किरियाओ पण्णत्ताओ, तं जहा—१ आरंभिया, २ पारिग्गहिया, ३ मायावत्तिया, ४ अपच्चक्खाणकिरिया। तत्थ णं जे ते मिच्छादिट्ठी तेसि णं पंच किरियाओ कज्जंति, तं जहा—आरंभिया जाव मिच्छादंसणवत्तिया। एवं सम्मामिच्छादिट्ठीणं पि। से तेणट्ठेणं गोयमा !.....

[प्र. ६] भगवन् ! क्या सभी नैरयिक समान क्रिया वाले है ?

[उ.] गौतम ! यह अर्थ सम्भव नही है।

[प्र.] भगवन् ! किस कारण से ऐसा कहा जाता है ?

[उ.] गौतम ! नारक तीन प्रकार के होते है, यथा–सम्यग्दृष्टि, मिथ्यादृष्टि और सम्यग्–मिथ्यादृष्टि (मिश्रदृष्टि)। जो सम्यग्दृष्टि हैं, उनके चार क्रियाएँ होती हैं–(१) आरम्भिकी, (२) पारिग्रहिकी, (३) मायाप्रत्यया, और (४) अप्रत्याख्यानक्रिया। जो मिथ्यादृष्टि हैं, उनमें आरम्भिकी से लेकर मिथ्यादर्शनप्रत्यया तक पाँच क्रियाएँ होती है। इसी प्रकार सम्यग्–मिथ्यादृष्टि के भी पाँचों क्रियाएँ समझनी चाहिए। इस कारण गौतम ! ऐसा कहा जाता है कि सब नारक समान क्रिया वाले नहीं हैं।

[Q. 6] *Bhante* ! Do all infernal beings have the same activities (*kriya*) ?

[Ans.] Gautam ! That is not possible.

[Q.] *Bhante* ! Why do you say so ?

[Ans.] Gautam ! Infernal beings are said to be of three kinds—*Samyagdrishti* (righteous), *Mithyadrishti* (unrighteous) and *Samyag-mithyadrishti* (mixed). The *Samyagdrishti* (righteous) have four activities—(1) *Arambhiki* (act of violence), (2) *Paarigrahiki* (act of possession and hoarding), (3) *Maayapratyayaa* (activity involved in indulgence in deceit), and (4) *Apratyakhyana kriya* (indisciplined action in absence of resolve of abstainment). The *Mithyadrishti* (unrighteous) have five activities from *Arambhiki* to (5) *Mithyadarshanapratyayaa* (activity involved in indulgence in false perception/faith); the same is true for *Samyag-mithyadrishti* (mixed). That is why, Gautam ! It is said that all infernal beings do not have the same activities

[प्र. ७] नेरइया णं भंते ! सव्वे समाउया ? सव्वे समोववन्नगा ?

[उ.] गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे।

[प्र.] से केणट्ठेणं ?

[उ.] गोयमा ! नेरइया चउव्विहा पण्णत्ता। तं जहा–१. अत्थेगइया समाउया समोववन्नगा, २. अत्थेगइया समाउया विसमोववन्नगा, ३. अत्थेगइया विसमाउया समोववन्नगा, ४. अत्थेगइया विसमाउया विसमोववन्नगा। से तेणट्ठेणं गोयमा !.....

[प्र. ७] भगवन् ! क्या सभी नारक समान आयुष्य वाले है और समोपपन्नक–एक साथ उत्पन्न होने वाले है ?

[उ.] गौतम ! यह अर्थ सम्भव नही है।

[प्र.] भगवन् ! ऐसा किस कारण से कहते हैं ?

[उ.] गौतम ! नारक जीव चार प्रकार के होते है–(१) **समायुष्क समोपपन्नक** समान आयु वाले और एक साथ उत्पन्न हुए, (२) **समायुष्क विषमोपपन्नक** (समान आयु वाले और पहले–पीछे उत्पन्न हुए),

(३) **विषमायुष्क समोपपन्नक** (विषम आयु वाले, किन्तु एक साथ उत्पन्न हुए), और (४) **विषमायुष्क-विषमोपपन्नक** (विषम आयु वाले और पहले-पीछे उत्पन्न हुए)। इसी कारण हे गौतम ! ऐसा कहा जाता है कि सभी नारक समान आयु वाले और एक साथ उत्पन्न होने वाले नहीं हैं।

[Q. 7] *Bhante* ! Do all infernal beings have the same life-span and simultaneous genesis ?

[Ans.] Gautam ! That is not possible.

[Q.] *Bhante* ! Why do you say so ?

[Ans.] Gautam ! Infernal beings are said to be of four kinds—(1) *Samayushk samopapannak*—with same life-span and simultaneous genesis, (2) *Samayushk vishamopapannak*—with same life-span and staggered genesis, (3) *Vishamayushk samopapannak*—with varied life-span and simultaneous genesis, and (4) *Vishamayushk vishamopapannak*—with varied life-span and staggered genesis. That is why, Gautam ! It is said that all infernal beings do not have the same life-span and simultaneous genesis.

असुरकुमारादि की समानत्व चर्चा SIMILARITIES IN ASUR KUMARS AND OTHER GODS

६. [प्र. १] असुरकुमारा णं भंते ! सव्वे समाहारा ? सव्वे समसरीरा ?

[उ.] जहा नेरइया तहा भाणियव्वा। नवरं कम्म-वण्ण-लेसाओ परित्थल्लेयव्वाओ-पुव्वोववन्नगा महाकम्मतरागा, अविसुद्धवण्णतरागा, अविसुद्धलेसतरागा। पच्छोववन्नगा पसत्था। सेसं तहेव। [२] एवं जाव थणियकुमारा।

६. [प्र. १] भगवन् ! क्या सब असुरकुमार समान आहार वाले और समान शरीर वाले है ?

[उ.] गौतम ! असुरकुमारो के सम्बन्ध मे सब वर्णन नैरयिको के समान ही समझना चाहिए। विशेषता यह है कि असुरकुमारो के कर्म, वर्ण और लेश्या नैरयिको से विपरीत अर्थात्-पूर्वोपपन्नक असुरकुमार महाकर्म वाले, अविशुद्ध वर्ण वाले और अशुद्ध लेश्या वाले है, जबकि पश्चादुपपन्नक प्रशस्त है। शेष सब पहले के समान जानना चाहिए। [२] इसी प्रकार (नागकुमारो से लेकर) यावत् स्तनितकुमारो (तक) समझना चाहिए।

6. [Q. 1] *Bhante* ! Do all Asur Kumars have the same intake and body (physical dimensions) ?

[Ans.] Gautam ! All the description regarding Asur Kumars should be read as that stated about infernal beings. The only difference is that the *karma*, colour and *leshya* of Asur Kumars are in reverse order than those of infernal beings In other words the *Purvopapannak* (born earlier) Asur Kumars are with heavy *karmas*, impure colours and impure *leshyas*

whereas the *Pashchadupapannak* (born later) ones are superior. Remaining details are same. [2] The same is true (for other divine beings from Naag Kumars) up to Stanit Kumars.

पृथ्वीकायादि समानत्व चर्चा SIMILARITIES IN PRITHVIKAYA ETC.

७. [१] पुढविक्काइयाणं आहार–कम्म–वण्ण–लेसा जहा नेरइयाणं।

७. [१] पृथ्वीकायिक जीवों का आहार, कर्म, वर्ण और लेश्या नैरयिकों के समान समझना चाहिए।

7. [1] The details of intake, *karma*, colour and *leshya* of *prithvikayik jivas* (earth-bodied beings) should be read to be the same as those of infernal beings.

[प्र. २] पुढविक्काइया णं भंते सव्वे समवेदणा ?

[उ.] हंता, समवेयणा।

[प्र.] से केणट्ठेणं ?

[उ.] गोयमा ! पुढविक्काइया सव्वे असण्णी असण्णिभूयं अणिदाए वेयणं वेदेंति। से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं .....।

[प्र. २] भगवन् ! क्या सब पृथ्वीकायिक जीव समान वेदना वाले है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! वे समान वेदना वाले है।

[प्र.] भगवन् ! ऐसा किस कारण से कहते हैं ?

[उ.] गौतम ! समस्त पृथ्वीकायिक जीव असज्ञी है और असंज्ञीभूत जीव वेदना को अनिदा–(अनिर्धारित) रूप से वेदते हैं। इस कारण हे गौतम ! ऐसा कहा जाता है कि सभी पृथ्वीकायिक समान वेदना वाले है।

[Q. 2] *Bhante* ! Do all earth-bodied beings have the same pain (intensity of suffering) ?

[Ans.] Yes, Gautam ! They have the same pain.

[Q.] *Bhante* ! Why do you say so ?

[Ans.] Gautam ! All earth-bodied beings are *asanjnibhoot* (not having awareness/righteousness) And *asanjnibhoot* beings suffer pain indeterminately That is why, Gautam ! it is said that all earth-bodied beings have the same pain (intensity of suffering).

[प्र. ३] पुढविक्काइया णं भंते ! समकिरिया ?

[उ.] हंता, समकिरिया।

[प्र.] से केणट्ठेणं ?

[उ.] गोयमा ! पुढविक्काइया सव्वे माई मिच्छादिट्ठी, ताणं नियइयाओ पंच किरियाओ कज्जंति, तं जहा—१ आरंभिया जाव ५ मिच्छादंसणवत्तिया। से तेणट्ठेणं समकिरिया। समाउया, समोववन्नगा जहा नेरइया तहा भाणियव्वा।

[प्र. ३] भगवन् ! क्या सभी पृथ्वीकायिक जीव समान क्रिया वाले है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! वे सभी समान क्रिया वाले है।

[प्र.] भगवन् ! आप ऐसा किस कारण से कहते हैं ?

[उ.] गौतम ! सभी पृथ्वीकायिक जीव मायी और मिथ्यादृष्टि है। इसलिए उन्हें आरम्भिकी यावत् मिथ्यादर्शनप्रत्यया निश्चित रूप से पाँचो क्रियाएँ लगती है। इस कारण से गौतम ! ऐसा कहा जाता है कि सभी पृथ्वीकायिक जीव समान क्रिया वाले है। जैसे नारक जीवों मे समायुष्क और समोपपन्नक आदि चार भंग कहे हैं, वैसे ही पृथ्वीकायिक जीवों मे भी कहने चाहिए।

[Q. 3] *Bhante* ! Do all earth-bodied beings have the same activities (*kriya*) ?

[Ans.] Yes, Gautam ! They have the same activities

[Q.] *Bhante* ! Why do you say so ?

[Ans.] Gautam ! All earth-bodied beings are *maayi* (deceitful) and *mithyadrishti* (unrighteous) and therefore as a rule they have all five activities from *arambhiki* (act of violence) to *Mithyadarshanapratyayaa* (activity involved in indulgence in false perception/faith) That is why, Gautam ! it is said that all earth-bodied beings have the same activities The four classifications of same life-span and simultaneous genesis stated about infernal beings should be repeated here about earth-bodied beings.

८. जहा पुढविक्काइया तहा जाव चउरिंदिया।

८. जिस प्रकार पृथ्वीकायिक जीवो के आहारादि के सम्बन्ध मे निरूपण किया है, उसी प्रकार अप्काय, तेजस्काय, वायुकाय, वनस्पतिकाय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय और चतुरिन्द्रिय तक के जीवो के सम्बन्ध मे समझ लेना चाहिए।

8. The details about intake and other things mentioned about earth-bodied beings are also applicable to beings from *apkaya* (water-bodied beings), *tejaskaya* (fire-bodied beings), *vayukaya* (air-bodied beings), *vanaspatikaya* (plant-bodied beings), *dvindriya* (two-sensed beings), *trindriya* (three-sensed beings) and *chaturindriya* (four-sensed beings).

९. [१] पंचिंदियतिरिक्खजोणिया जहा नेरइया। नाणत्तं किरियासु।

९. [१] पंचेन्द्रियतिर्यञ्चयोनिक जीवो के आहारादि के सम्बन्ध में कथन भी नैरयिकों के समान समझना चाहिए; केवल क्रियाओ मे भिन्नता है।

9. [1] The details about intake and other things of five sensed animals (*Panchendriya Tiryanchayonik jivas*) are also similar to those mentioned about infernal beings. The only difference is about activities.

[प्र. २] पंचिंदियतिरिक्खजोणिया णं भंते ! सव्वे समकिरिया ?

[उ.] गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे।

[प्र.] से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ ?

[उ.] गोयमा ! पंचिंदियतिरिक्खजोणिया तिविहा पण्णत्ता। तं जहा—सम्मदिट्ठी, मिच्छादिट्ठी, सम्मामिच्छादिट्ठी। तत्थं णं जे ते सम्मदिट्ठी ते दुविहा पण्णत्ता, तं जहा—अस्संजता य, संजताऽसंजता य। तत्थ णं जे ते संजताऽसंजता तेसि णं तिन्नि किरियाओ कज्जंति, तं जहा—१ आरंभिया २ परिग्गहिया ३ मायावत्तिया। असंजताणं चत्तारि। मिच्छादिट्ठीणं पंच। सम्मामिच्छादिट्ठीणं पंच।

[प्र. २] भगवन् ! क्या सभी पचेन्द्रियतिर्यञ्चयोनिक जीव समान क्रिया वाले है ?

[उ.] गौतम ! यह अर्थ समर्थ नही है।

[प्र.] भगवन् ! किस कारण से ऐसा कहते है ?

[उ.] गौतम ! पचेन्द्रियतिर्यंचयोनिक जीव तीन प्रकार के होते है, यथा—सम्यग्दृष्टि, मिथ्यादृष्टि और सम्यग्–मिथ्यादृष्टि। उनमे जो सम्यग्दृष्टि है, वे दो प्रकार के हैं, जैसे कि—असयत और सयतासयत। उनमें जो सयतासयत है, उन्हे तीन क्रियाएँ लगती हैं। वे इस प्रकार—आरम्भिकी, पारिग्रहिकी और मायाप्रत्यया। उनमे जो असयत है, उन्हे अप्रत्याख्यानी क्रिया सहित चार क्रियाएँ लगती है। जो मिथ्यादृष्टि तथा सम्यग्–मिथ्यादृष्टि हैं, उन्हे पाँचों क्रियाएँ लगती है।

[Q. 2] *Bhante* ! Do all five sensed animals have the same activities (*kriya*) ?

[Ans.] Gautam ! That is not possible.

[Q.] *Bhante* ! Why do you say so ?

[Ans.] Gautam ! Five sensed animals are said to be of three kinds—*Samyagdrishti* (righteous), *Mithyadrishti* (unrighteous) and *Samyag-mithyadrishti* (mixed). The *Samyagdrishti* (righteous) are of two kinds—*asamyat* (indisciplined) and *samyatasamyat* (disciplined-cum-indisciplined). Of these the *samyatasamyat* have three activities—(1) *Arambhiki*, (2) *Parigrahiki*, and (3) *Maayapratyayaa*. The *asamyat*

have four activities (including *Apratyakhyana kriya*). The *Mithyadrishti* (unrighteous) and *Samyag-mithyadrishti* (mixed) have all the five activities including *Mithyadarshanapratyayaa*).

मनुष्य–देव समानत्व चर्चा SIMILARITIES IN HUMAN AND DIVINE BEINGS

१०. [१] मणुस्सा जहा नेरइया (सूत्र ५)। नाणत्तं–जे महासरीरा से आहच्च आहारेंति। जे अप्पसरीरा ते अभिक्खणं आहारेंति ४। सेसं जहा नेरइयाणं जाव वेयणा।

१०. [१] मनुष्यो का आहारादि सम्बन्धित निरूपण नैरयिकों के समान (सूत्र ५ के अनुसार) समझना चाहिए। उनमे अन्तर इतना ही है कि जो महाशरीर वाले है, वे बहुत पुद्गलों का आहार करते है, और वे कभी–कभी आहार करते है, इसके विपरीत जो अल्प शरीर वाले है, वे अल्प पुद्गलो का आहार करते है; और बार–बार करते हैं। शेष वेदना पर्यन्त सब वर्णन नारकों के समान समझना चाहिए।

10. [1] The details about intake and other things of human beings (*manushya*) are also similar to those mentioned about infernal beings (aphorism 5) The only difference is that those with large bodies have intake of large number of matter particles and it is infrequent, on the other hand those with small bodies have intake of meager number of matter particles and it is frequent. Remaining description up to pain is the same as that of infernal beings.

[प्र. २] मणुस्सा णं भंते ! सव्वे समकिरिया ?

[उ.] गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे।

[प्र.] से केणट्ठेणं ?

[उ.] गोयमा ! मणुस्सा तिविहा पण्णत्ता। तं जहा–सम्मद्दिट्ठी मिच्छादिट्ठी सम्मामिच्छादिट्ठी। तत्थ णं जे ते सम्मद्दिट्ठी ते तिविहा पण्णत्ता, तं जहा–संजता अस्संजता संजतासंजता य। तत्थ णं जे ते संजता ते दुविहा पण्णत्ता, तं जहा–सरागसंजता य वीतरागसंजता य। तत्थ णं जे ते वीतरागसंजता ते णं अकिरिया। तत्थ णं जे ते सरागसंजता ते दुविहा पण्णत्ता, तं जहा–पमत्तसंजता य अपमत्तसंजता य। तत्थ णं जे ते अप्पमत्तसंजता तेसि णं एगा मायावत्तिया किरिया कज्जंति। तत्थ णं जे ते पमत्तसंजता तेसि णं दो किरियाओ कज्जंति, तं जहा–आरम्भिया य १ मायावत्तिया य २। तत्थ णं जे ते संजतासंजता तेसि णं आइल्लाओ तिन्नि किरियाओ कज्जंति। अस्संजताणं चत्तारि किरियाओ कज्जंति–आरं. ४। मिच्छादिट्ठीणं पंच। सम्मामिच्छादिट्ठीणं पंच ५।

[प्र. २] भगवन् ! क्या सब मनुष्य समान क्रिया वाले है ?

[उ.] गौतम ! यह अर्थ सम्भव नही है।

[प्र.] भगवन् ! ऐसा किस कारण से कहते है ?

[उ.] गौतम ! मनुष्य तीन प्रकार के होते हैं, यथा–सम्यग्दृष्टि, मिथ्यादृष्टि और सम्यग्–मिथ्यादृष्टि। उनमे जो सम्यग्दृष्टि हैं, वे तीन प्रकार के है, यथा–संयत, संयतासंयत और असंयत। उनमें जो संयत हैं, वे दो प्रकार के हैं, यथा–सरागसयत और वीतरागसंयत। उनमें जो वीतरागसंयत हैं, वे क्रियारहित हैं, तथा जो सरागसयत हैं, वे भी दो प्रकार के हैं, जैसे–प्रमत्तसंयत और अप्रमत्तसंयत। उनमें जो अप्रमत्तसंयत है, उन्हें एक मायाप्रत्यया क्रिया लगती है। उनमें जो प्रमत्तसंयत है, उन्हे दो क्रियाएँ लगती हैं–आरम्भिकी और मायाप्रत्यया। तथा उनमे जो संयतासयत हैं, उन्हें आदि की तीन क्रियाएँ लगती है– आरम्भिकी, पारिग्रहिकी और मायाप्रत्यया। असयतों को चार क्रियाएँ लगती हैं–आरम्भिकी, पारिग्रहिकी, मायाप्रत्यया और अप्रत्याख्यानी क्रिया। मिथ्यादृष्टियो को पाँचों क्रियाएँ लगती हैं– आरम्भिकी, पारिग्रहिकी, मायाप्रत्यया, अप्रत्याख्यानी क्रिया और मिथ्यादर्शनप्रत्यया। सम्यग्–मिथ्यादृष्टियो को भी ये पाँचो क्रियाएँ लगती हैं।

[Q. 2] *Bhante* ! Do all human beings have the same activities (*kriya*) ?

[Ans.] Gautam ! That is not possible.

[Q.] *Bhante* ! Why do you say so ?

[Ans.] Gautam ! Human beings are said to be of three kinds—*Samyagdrishti* (righteous), *Mithyadrishti* (unrighteous) and *Samyag-mithyadrishti* (mixed). The *Samyagdrishti* (righteous) are of three kinds—*samyat* (disciplined), *samyatasamyat* (disciplined-cum-indisciplined) and *asamyat* (indisciplined). Of these the *samyat* are of two kinds—*saragasamyat* (disciplined with attachment) and *vitaragasamyat* (disciplined and detached). The *vitaragasamyat* are devoid of action and the *saragasamyat* are again of two kinds—*pramattasamyat* (accomplished but negligent), and *apramattasamyat* (accomplished and alert). The *apramattasamyat* (accomplished and alert) have only one activity, *maayapratyayaa* The *pramattasamyat* (accomplished but negligent) have two activities—*arambhiki* and *maayapratyayaa* The *samyatasamyat* have first three activities—*arambhiki, paarigrahiki* and *maayapratyayaa*. The *asamyat* have four activities—*arambhiki, paarigrahiki, maayapratyayaa* and *apratyakhyana kriya*. The *Mithyadrishti* (unrighteous) have all the five activities—*arambhiki, paarigrahiki, maayapratyayaa, apratyakhyana kriya mithyadarshanapratyayaa*. The *Samyag-mithyadrishti* (mixed) too have all these five activities

११. वाणमंतर–जोतिस–वेमाणिया जहा असुरकुमारा (सु. ६)। नवरं वेयणाए नाणत्तं–मायिमिच्छादिट्ठीउववन्नगा य अप्पवेदणतरागा, अमायिसम्मद्दिट्ठीउववन्नगा य महावेयणतरागा भाणियव्वा जोतिस–वेमाणिया।

११. वाणव्यन्तर, ज्योतिषी और वैमानिक के आहारादि के सम्बन्ध में सब वर्णन असुरकुमारों के समान समझना चाहिए। विशेषता यह है कि इनकी वेदना मे भिन्नता है। ज्योतिष्क और वैमानिकों मे जो मायी-मिथ्यादृष्टि के रूप मे उत्पन्न हुए है, वे अल्प वेदना वाले हैं, और जो अमायी-सम्यग्दृष्टि के रूप में उत्पन्न हुए हैं, वे महावेदना वाले होते हैं।

11. The details about intake and other things of Vanavyantar (interstitial), Jyotishk (stellar) and Vaimanik (celestial vehicle dwelling) gods are similar to those mentioned about Asur Kumars. The only difference is about their pain. Among Jyotishk and Vaimanik gods those born as deceitful and unrighteous experience less suffering and those born as non-deceitful and righteous experience great suffering.

चौबीस दण्डको में लेश्या विचार **LESHYA IN TWENTY FOUR DANDAKS**

१२. [प्र.] सलेसा णं भंते ! नेरइया सव्वे समाहारगा ?

[उ.] ओहियाणं, सलेसाणं, सुक्कलेसाणं, एएसि णं तिण्हं एक्को गमो। कण्हलेस नीललेसाणं पि एक्को गमो, नवरं वेदणाए–मायिमिच्छादिट्ठीउववन्नगा य, अमायिसम्मद्दिट्ठीउववण्णगा य भाणियव्वा। मणुस्सा किरियासु सराग–वीयराग–पमत्तापमत्ता ण भाणियव्वा। काउलेसाण वि एसेव गमो, नवरं नेरइए जहा ओहिए दंडए तहा भाणियव्वा। तेउलेसा पम्हलेसा जस्स अत्थि जहा ओहिओ दंडओ तहा भाणियव्वा, नवरं मणुस्सा सरागा वीयरागा य न भाणियव्वा।

गाहा–दुक्खाऽऽउए उदिण्णे, आहारे, कम्म–वण्ण–लेसा य।
समवेदण समकिरिया समाउए चेव बोद्धव्वा॥१॥

१२. [प्र.] भगवन् ! क्या लेश्या वाले समस्त नैरयिक समान आहार वाले होते है ?

[उ.] गौतम ! औधिक (सामान्य), सलेश्य एव शुक्ललेश्या वाले इन तीनो का एक समान पाठ कहना चाहिए। कृष्णलेश्या और नीललेश्या वालो का एक समान पाठ कहना चाहिए, किन्तु उनकी वेदना मे इस प्रकार भेद है–मायी–मिथ्यादृष्टि–उपपन्नक और अमायी–सम्यग्दृष्टि–उपपन्नक कहने चाहिए। तथा कृष्णलेश्या और नीललेश्या (के सन्दर्भ) मे मनुष्यो के समान सरागसंयत, वीतरागसयत, प्रमत्तसंयत और अप्रमत्तसंयत भेद नही कहना चाहिए। तथा कापोतलेश्या मे भी यही पाठ कहना चाहिए। भेद यह है कि कापोतलेश्या वाले नैरयिको को औधिक दण्डक के समान कहना चाहिए। तेजोलेश्या और पद्मलेश्या वालो को भी औधिक दण्डक के समान कहना चाहिए। विशेषता यह है कि इनमे मनुष्यो के समान सराग और वीतराग का भेद नही कहना चाहिए, क्योंकि तेजोलेश्या और पद्मलेश्या वाले सराग ही होते है।

गाथार्थ–दु:ख (कर्म) और आयुष्य उदीर्ण हो तो वेदते है। आहार, कर्म, वर्ण, लेश्या, वेदना, क्रिया और आयुष्य, इन सबकी समानता के सम्बन्ध मे पहले कहे अनुसार ही समझना चाहिए।

12. [Q.] *Bhante* ! Do all the infernal beings with *leshya* (soul complexion) have same intake ?

[Ans.] Gautam ! Infernal beings in general, those with *leshya* and those with *shukla leshya* (white hue) fall in the same category. Those with *krishna leshya* (black hue) and *neel leshya* (blue hue) fall in the same category but there is a difference in their suffering which follows the pattern of *maayi-mithyadrishti upapannak* (born with deceit and unrighteousness) and *amaayi-samyakdrishti upapannak* (born without deceit and with righteousness). And the variations of *saragasamyat, vitaragasamyat, pramattasamyat* and *apramattasamyat* as mentioned with regard to humans are not to be stated here with regard to *krishna leshya* and *neel leshya*. Those with *kapot leshya* (pigeon hue) follow the same pattern (like *krishna leshya*), the only difference is that they follow the pattern of infernal beings in general (*aughik*). Those with *tejoleshya* (fiery or red hue) and *padma leshya* (pink hue) also follow the pattern of infernal beings in general (*aughik*). The only difference is that the variations of *saraga* and *vitaraga* as mentioned with regard to humans are not to be stated here. This is because those with *tejoleshya* and *padma leshya* are *sarag* (with attachment) as a rule.

The verse—Misery and life-span (*karmas*) are experienced as they fructify. As regards the similarity of intake, *karma*, colour, pain, activity and life-span, they should be read as stated earlier

१३. [प्र.] कति णं भंते ! लेसाओ पण्णत्ताओ ?

[उ.] गोयमा ! छल्लेसाओ पण्णत्ताओ। तं जहा–लेसाणं बीओ उद्देसओ भाणियव्वो जाव इड्ढी।

१३. [प्र.] भगवन् ! लेश्याएँ कितनी कही गई हैं ?

[उ.] गौतम ! लेश्याएँ छह हैं। यथा–कृष्ण, नील, कापोत, तेजस्, पद्म और शुक्ल। यहाँ प्रज्ञापनासूत्र के १७वाँ लेश्यापद का द्वितीय उद्देशक ऋद्धि की वक्तव्यता तक कहना चाहिए।

13. [Q.] Bhante ! How many *leshyas* (complexion of soul) have been stated ?

[Ans.] Gautam ! There are six *leshyas*—*krishna, neel, kapot, tejas, padma* and *shukla* (black, blue, pigeon or grey, red, pink and white). Here the text from *Prajnapana Sutra*, Second chapter, 17th verse title *Leshya* should be read up to the statement about *Riddhi*

विवेचन : ५वें सूत्र से ११वें सूत्र तक नारकी से लेकर वैमानिक तक चौबीस दण्डको के सम्बन्ध में निम्नोक्त दस द्वार–सम्बन्धी प्रश्नोत्तर हैं–(१) सम–आहार, (२) सम–शरीर, (३) सम–उच्छ्वास–नि:श्वास,

(४) सम-कर्म, (५) सम-वर्ण, (६) सम-लेश्या, (७) सम-वेदना, (८) सम-क्रिया, (९) समायुष्क, तथा (१०) समोपपन्नक। इन सूत्रों में आई विशेष अवधारणाओं की व्याख्या इस प्रकार है-

छोटा-बड़ा शरीर आपेक्षिक-प्रस्तुत में नैरयिकों का छोटा और बड़ा शरीर अपेक्षा से है। नारकों का छोटे से छोटा शरीर अंगुल के असंख्यातवे भाग जितना है और बड़े से बड़ा ५०० धनुष के बराबर है। ये दोनों प्रकार के शरीर भवधारणीय शरीर की अपेक्षा से हैं। उत्तरवैक्रिय शरीर जघन्य अगुल के संख्यातवें भाग तक और उत्कृष्ट शरीर एक हजार धनुष का हो सकता है।

नारक : अल्पकर्मी एवं महाकर्मी-जो नारक पहले उत्पन्न हो चुके, उन्होने नरक का आयुष्य तथा अन्य कर्म बहुत-से भोग लिए हैं, अतएव उनके बहुत-से कर्मों की निर्जरा हो चुकी है, इस कारण वे अल्पकर्मी हैं। जो नारक बाद में उत्पन्न हुए हैं, उन्हें आयु और सात कर्म बहुत भोगने बाकी हैं, इसलिए वे महाकर्मी (बहुत कर्म वाले) हैं।

संज्ञीभूत-असंज्ञीभूत-वृत्तिकार ने संज्ञीभूत के अनेक अर्थ बताए है-(१) संज्ञा का अर्थ है-सम्यग्दर्शन, सम्यग्दृष्टि जीव को संज्ञीभूत कहते हैं। अथवा जो पहले असंज्ञी (मिथ्यादृष्टि) था, और अब संज्ञी (सम्यग्दृष्टि) हो गया है, अर्थात्-जो नरक में ही मिथ्यात्व को छोडकर सम्यग्दृष्टि हुआ है, वह सज्ञी संज्ञीभूत कहलाता है। असंज्ञीभूत का अर्थ मिथ्यादृष्टि है। संज्ञीभूत (सम्यग्दृष्टि) को नरक में जाने पर पूर्वकृत अशुभ कर्मों का विचार करने से घोर पश्चात्ताप होता है-इस प्रकार की मानसिक वेदना के कारण वह महावेदना का अनुभव करता है। असंज्ञीभूत-मिथ्यादृष्टि को स्वकृत कर्मफल के भोग का कोई ज्ञान या विचार तथा पश्चात्ताप नहीं होता, और न ही उसे मानसिक पीडा होती है, इस कारण असंज्ञीभूत नैरयिक अल्पवेदना का अनुभव करता है। (२) इसी प्रकार संज्ञीभूत यानी सज्ञी पंचेन्द्रिय जीव मे तीव्र अशुभ परिणाम हो सकते है, फलत वह सातवी नरक तक जा सकता है। जो जीव आगे की नरको में जाता है, उसे अधिक वेदना होती है। असज्ञीभूत (नरक मे जाने से पूर्व असंज्ञी) जीव रत्नप्रभा के तीव्र वेदनारहित स्थानो में उत्पन्न होता है, इसलिए उसे अल्पवेदना होती है। (३) इसी प्रकार संज्ञिभूत अर्थात्-पर्याप्त को महावेदना और असज्ञीभूत अर्थात् अपर्याप्त को अल्पवेदना होती है।

असुरकुमारो का आहार मानसिक होता है। आहार ग्रहण करने का मन होते ही इष्ट, कान्त आदि आहार के पुद्गल आहार के रूप में परिणत हो जाते है।

असुरकुमारों का आहार और श्वासोच्छ्वास-एक असुरकुमार एक दिन के अन्तर से आहार करता है, और दूसरा असुरकुमार देव सातिरेक (साधिक) एक हजार वर्ष मे एक बार आहार करता है। अत सातिरेक एक हजार वर्ष में एक बार आहार करने वाले की अपेक्षा एक दिन के अन्तर से आहार करने वाला बार-बार आहार करता है, ऐसा कहा जाता है। यही बात श्वासोच्छ्वास के सम्बन्ध मे समझ लेनी चाहिए। सातिरेक एक पक्ष में श्वासोच्छ्वास लेने वाले असुरकुमार की अपेक्षा सात स्तोक मे श्वासोच्छ्वास लेने वाला असुरकुमार बार-बार श्वासोच्छ्वास लेता है, ऐसा कहा जाता है।

असुरकुमार के कर्म, वर्ण और लेश्या का कथन नारको से विपरीत क्यों ?-इस विपरीतता का कारण यह है कि पूर्वोपपन्नक असुरकुमारों का चित्त अतिकन्दर्प और दर्प से युक्त होने से वे नारकों को बहुत त्रास देते हैं। त्रास सहन करने से नारको के तो कर्मनिर्जरा होती है, किन्तु असुरकुमारो के नये कर्मों का बन्ध होता है। वे अपनी क्रूर भावना एवं विकारादि के कारण अशुद्धता बढाते हैं। उनका पुण्य क्षीण होता जाता है। पापकर्म बढ़ता जाता है, इसलिए वे महाकर्मी होते हैं।

पृथ्वीकायिक आदि जीवों को मायी-मिथ्यादृष्टि कहने का कारण स्पष्ट करते हुए बताया है, इसका एक कारण है-अनन्तानुबधी कषाय। जिनको अनन्तानुबन्धी कषाय होता है, वे मिथ्यादृष्टि होते हैं। दूसरा अर्थ है-वे मूर्च्छित और उन्मत्त पुरुष की तरह बेसुध होकर कर्मों का फल भोगते हैं। उन्हें यह ज्ञान नहीं होता कि हमें यह पीड़ा कौन दे रहा है और क्यों दे रहा है। किस कर्म के उदय से यह वेदना हो रही है तथा मायाचरण का सेवन करने के कारण ही वे पृथ्वीकाय में आये है।

मनुष्यों के आहार की विशेषता-मनुष्य दो प्रकार के होते हैं-महाशरीरी और अल्पशरीरी। महाशरीरी मनुष्य और नारकी दोनों बहुत पुद्गलों का आहार करते हैं, किन्तु दोनो के पुद्गलो में बहुत अन्तर है। महाशरीरी नारकी जिन पुद्गलों का आहार करते हैं, वे निःसार और स्थूल होते हैं, जबकि मनुष्य-विशेषतः देवकुरु-उत्तरकुरु के भोगभूमिज मनुष्य जिन पुद्गलों का आहार करते हैं, वे सारभूत और सूक्ष्म होते हैं। भोगभूमिज मनुष्यो का शरीर तीन गाऊ का होता है और उनका आहार अष्टभक्त-अर्थात्-तीन दिन मे एक बार होता है, इस अपेक्षा से महाशरीरी मनुष्यों को कदाचित् आहार करने वाले (एक दृष्टि से अल्पाहारी) कहा गया है। जैसे एक तोला चाँदी से एक तोला सोने में अधिक पुद्गल होते हैं, वैसे ही देवकुरु-उत्तरकुरु के मनुष्यो का आहार दीखने में कम होते हुए भी सारभूत होने से उसमें अल्पशरीरी मनुष्य के आहार की अपेक्षा अधिक पुद्गल होते हैं। इस दृष्टि से उन्हे बहुत पुद्गलों का आहार करने वाला कहा गया है। अल्पशरीरी मनुष्यों का आहार निःसार एव थोडे पुद्गलो का होने से उन्हे बार-बार करना पडता है।

विशेष शब्दों की व्याख्या : जो सयम का पालन करता है, किन्तु जिसका संज्वलन कषाय क्षीण या उपशान्त नही हुआ, वह **सरागसंयत** है। जिसके कषाय का सर्वथा क्षय या उपशम हो गया है, वह **वीतरागसंयत** है।

सयोग केवली क्रियारहित कैसे ?-जो महापुरुष कषायों से सर्वथा मुक्त हो गये हैं, वे कर्मबन्ध की कारणभूत क्रिया से रहित है। यद्यपि सयोगी अवस्था मे योग की प्रवृत्ति से होने वाली ईर्यापथिक क्रिया उनमें विद्यमान है, तथापि कषायरहित होने से वह क्रिया नहीं के बराबर है, इन क्रियाओ मे उनकी गणना नहीं है। अप्रमत्तसंयत में मायाप्रत्यया क्रिया इसलिए होती है कि उसमे अभी कषाय अवशिष्ट है और कषाय के निमित्त से होने वाली क्रिया मायाप्रत्यया कहलाती है। *(क्रियाओ की व्याख्या स्थानाग, भाग १, २/२-३७ मे की जा चुकी है)*

Elaboration—Aphorisms 5 to 11 have question-answers about the following ten sources of *karmas* (*dvar*) related to the twenty four *dandaks* (places of suffering) starting from infernal beings to celestial vehicle dwelling gods—(1) *Sam-ahar* (similarity of intake), (2) *Sam-sharir* (similarity of body), (3) *Sam-uchchhavas-nihshvas* (similarity of inhalation-exhalation), (4) *Sam-karma* (similarity of *karma*), (5) *Sam-varna* (similarity of appearance or colour), (6) *Sam-leshya* (similarity of soul-complexion), (7) *Sam-vedana* (similarity of suffering of pain), (8) *Sam-kriya* (similarity of activities), (9) *Sam-ayushk* (similarity of life-span), (10) *Sam-upapannak* (similarity of genesis). Explanation of some unique concepts from these aphorisms are as follows—

Relative sizes of bodies—The small and large sizes of infernal beings mentioned here are relative. The smallest body of an infernal being is

equivalent to innumerable fraction of an *Angul* (width of a finger) and the largest is 500 *Dhanush* (cubits). These sizes are in context of incarnation sustaining body (*bhavadharaniya sharira*). The minimum size of secondary transmuted body (*uttar-vaikriya sharira*) can be countable fraction of an *Angul* and the maximum can be 1,000 *Dhanush*.

Infernal beings with light and heavy *karmas*—The infernal beings born earlier have already shed some fraction of the life-span determining *karmas* and other *karmas* through suffering, and thus they are called *alpakarmi* or with light *karmas*. In comparison, those born later have to suffer more life-span determining *karmas* and other seven *karmas* therefore they are called *mahakarmi* or with heavy *karmas*.

Sanjnibhoot-asnajnibhoot—The commentator (*Vritti*) has given various interpretations of *sanjnibhoot*—(1) *Sanjna* means *samyagdarshan* (right perception/faith). Thus a *samyagdrishti* (righteous being) is called *sanjnibhoot* One who was originally unrighteous (*mithyadrishti*) and has now become righteous is called *sanjnibhoot*. With reference to an infernal being, one that has changed from unrighteous to righteous while still in the infernal world is called *sanjnibhoot*. *Asanjnibhoot* is unrighteous or *mithyadrishti*. When a righteous being is born in the infernal word he recalls the ignoble deeds from the past and gravely repents. He suffers great pain due to this additional mental torture. Unrighteous being has no awareness of the consequences of his own deeds. He neither repents nor suffers any mental torture. Therefore an unrighteous infernal being experiences less pain. (2) In the same way a *sanjnibhoot* or *sanjni* (sentient) five sensed animal with mental awareness is capable of intense evil thoughts and as a consequence he may go up to the seventh hell. The farther the hell the more is the agony. An *asanjni* (non-sentient) being after death reincarnates in those sections of *Ratnaprabha* hell that are devoid of intense pain and thus suffers less pain In the same way a *sanjni* (fully developed) being suffers great pain and an *asanjni* (underdeveloped) being suffers less pain.

The intake of Asur Kumars is mental. The moment they have a desire for intake the desired and likeable mater particles turn into food.

The intake and respiration of Asur Kumars—The frequency of intake of some Asur Kumar is one day and that of some other Asur Kumar with excessive desire for intake is one thousand years. Therefore, relative to the one who eats once after a thousand years, the one who eats after one

day is said to be a frequent eater. The same is true for respiration. Relative to the one who inhales and exhales in a fortnight, the one who inhales and exhales in seven *Stokes* is said to be a frequent breather.

Why the statement about *karma*, colour and *leshya* of Asur Kumars is opposite of that of infernal beings ?—The reason for this contradiction is that as the mentality of Asur Kumars born earlier is extremely lusty and conceited, they torment infernal beings excessively. By enduring pain the infernal beings shed their *karmas* but the Asur Kumars acquire new *karmic* bondage. Their impurity increases due to cruel feelings and other perversions. As they continue to add to their demeritorious *karmas* they are called *maha-karmi* (having excessive and heavy *karmas*).

Explaining the reason for calling earth-bodied and other such beings deceitful and unrighteous it is mentioned that one of the reasons is *anantanubandhi kashaya* (passions that enhance the unending cycles of rebirth). Those with *anantanubandhi kashaya* are unrighteous (*mithyadrishti*). Another meaning is that they experience the fruits of *karmas* in a state of stupor like an unconscious or intoxicated person. They are not aware of who is causing them pain and why; fruition of which *karma* is causing them pain and that they have been born as earth-bodied beings only because of their deceitful activities.

The uniqueness of intake by human beings—Human beings are of two kinds—*mahashariri* (large bodied) and *alpashariri* (small bodied). Large bodied human beings and infernal beings both eat a large quantity of matter particles. However there is a great difference in the matter. The matter particles the large bodied infernal beings eat are worthless and gross whereas those eaten by human beings, specially those belonging to Deva-kuru and Uttar-kuru (the land of enjoyment), are potent and subtle The body of the human beings of the land of enjoyment is three *Gau* in dimension and their intake is once in three days. For this reason the large bodied humans are called infrequent eaters (meager eaters in one way). As the same volume of gold is heavier than silver, the food of humans of Deva-kuru and Uttar-kuru is less in volume but rich in potency; therefore it has more number of particles than the food of small bodied humans. From this viewpoint they are said to have intake of large quantity of matter particles. As the food of small bodied humans is worthless and with low density of matter particles they have to eat frequently.

TECHNICAL TERMS

One who observes discipline or self restraint but his *sanjvalan kashaya* (evanescent passions) has not yet been destroyed or pacified is called *saragasamyat*. One whose passions have been completely destroyed or pacified is called *vitaragasamyat*.

Why *Sayogi Kevali* is without action ?—The great men who are completely free of passions are devoid of the activities that cause *karmic* bondage. Although in the *sayogi* state there is *iryapathiki kriya* (careful movement of accomplished ascetic) but it is insignificant because it is devoid of passions and is excluded from bonding activities. In *apramattasamyat* (alert disciplined) there is *maayapratyayaa kriya* (activity involved in indulgence in deceit) because he still has traces of passions and the activity caused by passions is called *maayapratyayaa*. *(for details about kriyas refer to Illustrated Sthananga Sutra, Part-1, 2/2-37)*

संसार–संस्थानकाल WORLD-SPECIFIC PERIOD OF REBIRTH AND EXISTENCE

१४. [प्र.] जीवस्स णं भंते ! तीतद्धाए आदिट्ठस्स कइविहे संसारसंचिट्ठणकाले पण्णत्ते ?

[उ.] गोयमा ! चउव्विहे संसारसंचिट्ठणकाले पण्णत्ते। तं जहा–णेरइयसंसारसंचिट्ठणकाले, तिरिक्खजोणियसंसारसंचिट्ठणकाले, मणुस्ससंसारसंचिट्ठणकाले, देवसंसारसंचिट्ठणकाले य पण्णत्ते।

१४. [प्र.] भगवन् ! अतीतकाल में आदिष्ट–(नारक आदि विशेषण वाले) जीव का संसार–संस्थानकाल कितने प्रकार का है ?

[उ.] गौतम ! संसार–संस्थानकाल (संसार में रहने का समय) चार प्रकार का है। यथा–नैरयिक संसार–संस्थानकाल, तिर्यंच संसार–संस्थानकाल, मनुष्य संसार–संस्थानकाल और देव संसार–संस्थानकाल।

14. [Q.] *Bhante* ! How many kinds of world-specific period of rebirth and existence (*samsar samsthan kaal*) have been stated for beings distinguished by adjectives (*aadisht*) and assigned to the past ?

[Ans.] Gautam ! World-specific period of rebirth and existence (*samsar samsthan kaal*) is of four kinds—*Nairayik samsar samsthan kaal* (period of rebirth and existence as infernal beings), *Tiryanch samsar samsthan kaal* (period of rebirth and existence as animals), *Manushya samsar samsthan kaal* (period of rebirth and existence as human beings), *Dev samsar samsthan kaal* (period of rebirth and existence as divine beings).

१५. [प्र. १] नेरइयसंसारसंचिट्ठणकाले णं भंते ! कतिविहे पण्णत्ते ?

[उ.] गोयमा ! तिविहे पण्णत्ते। तं जहा–सुन्नकाले, असुन्नकाले, मिस्सकाले।

[प्र. २] तिरिक्खजोणियसंसारसंचिट्ठणकाले पुच्छा ?

[उ.] गोयमा ! दुविहे पण्णत्ते। तं जहा—असुन्नकाले य मिस्सकाले य।

[३] मणुस्साण य, देवाण य जहा नेरइयाणं।

१५. [प्र. १] भगवन् ! नैरयिक संसार-संस्थानकाल कितने प्रकार का है ?

[उ.] गौतम ! तीन प्रकार का है। यथा-शून्यकाल, अशून्यकाल और मिश्रकाल।

[प्र. २] भगवन् ! तिर्यंच ससार-संस्थानकाल कितने प्रकार का है ?

[उ.] गौतम ! दो प्रकार का है। यथा—अशून्यकाल और मिश्रकाल।

[३] मनुष्यों और देवों के संसार-सस्थानकाल का कथन नारकों के समान समझना चाहिए।

15. [Q. 1] *Bhante* ! Of how many kinds is *Nairayik samsar samsthan kaal* (period of rebirth and existence as infernal beings) ?

[Ans.] Gautam ! It is of three kinds—*Shunya kaal* (period of complete replacement), *Ashunya kaal* (period of absolute non-replacement) and *Mishra kaal* (period of gradual replacement just short of complete replacement).

[Q. 2] *Bhante* ! Of how many kinds is *Tiryanch samsar samsthan kaal* (period of rebirth and existence as animals) ?

[Ans.] Gautam ! It is of two kinds—*Ashunya kaal* (period of absolute non-replacement) and *Mishra kaal* (period of gradual replacement just short of complete replacement).

[3] *Samsar samsthan kaal* (period of rebirth and existence) of human beings and divine beings should be read as that of infernal beings.

१६. [प्र. १] एयस्स णं भंते ! नेरइयसंसारसंचिट्ठणकालस्स सुन्नकालस्स असुन्नकालस्स मीसकालस्स य कयरे कयरेहिंतो अप्पे वा, बहुए वा, तुल्ले वा, विसेसाहिए वा ?

[उ.] गोयमा ! सव्वत्थोवे असुन्नकाले, मिस्सकाले अणंतगुणे, सुन्नकाले अणंतगुणे। [२] तिरिक्खजोणियाणं सव्वत्थोवे असुन्नकाले, मिस्सकाले अणंतगुणे। [३] मणुस्स—देवाण य जहा नेरइयाणं।

१६. [प्र. १] भगवन् ! नारकों के संसार-संस्थानकाल के जो तीन भेद हैं-शून्यकाल, अशून्यकाल और मिश्रकाल, इनमें से कौन किससे कम, बहुत, तुल्य, विशेषाधिक है ?

[उ. १] गौतम ! सबसे कम अशून्यकाल है, उससे मिश्रकाल अनन्तगुणा है और उसकी अपेक्षा भी शून्यकाल अनन्तगुणा है। [२] तिर्यंच संसार-संस्थानकाल के दो भेदों में से सबसे कम अशून्यकाल है और उसकी अपेक्षा मिश्रकाल अनन्तगुणा है। [३] मनुष्यों और देवों के संसार-संस्थानकाल की न्यूनाधिकता (अल्प-बहुत्व) नारकों के संसार-संस्थानकाल की न्यूनाधिकता के समान ही समझनी चाहिए।

16. [Q. 1] *Bhante* ! Of the three kinds of *Nairayik samsar samsthan kaal—Shunya kaal, Ashunya kaal* and *Mishra kaal*—which one is more, less or equal as compared with the others ?

[Ans.] Gautam ! Minimum is *Ashunya kaal, Mishra kaal* is infinite times more than that and *Shunya kaal* is further infinite times more than that [2] Of the two kinds of *samsthan kaal* of animal beings minimum is *Ashunya kaal* and *Mishra kaal* is infinite times more than that [3] The comparison of *samsthan kaal* of human and divine beings should be read as that of *samsthan kaal* of infernal beings.

१७. [प्र.] एयस्स णं भंते ! नेरइयसंसारसंचिट्ठणकालस्स जाव देवसंसारसंचिट्ठणकालस्स जाव विसेसाधिए वा ?

[उ.] गोयमा ! सव्वत्थोवे मणुस्ससंसारसंचिट्ठणकाले, नेरइयसंसारसंचिट्ठणकाले असंखेज्जगुणे, देवसंसारसंचिट्ठणकाले असंखेज्जगुणे, तिरिक्खजोणियसंसारसंचिट्ठणकाले अणंतगुणे।

१७. [प्र.] भगवन् ! नैरयिक, तिर्यंच, मनुष्य और देव, इन चारो के ससार-सस्थानकालो में कौन किससे कम, अधिक, तुल्य या विशेषाधिक है ?

[उ.] गौतम ! सबसे थोडा मनुष्य ससार-सस्थानकाल है, उससे नैरयिक ससार-संस्थानकाल असख्यातगुणा है, उससे देव ससार-सस्थानकाल असंख्यातगुणा है और उससे तिर्यंच ससार-सस्थानकाल अनन्तगुणा है।

17. [Q.] *Bhante* ! Of the *samsar samsthan kaals* of the four—infernal beings, animals, human beings and divine beings—which one is more, less or equal as compared with the others ?

[Ans.] Gautam ! Minimum is the *samsar samsthan kaal* of human beings, innumerable times more than that is the *samsar samsthan kaal* of infernal beings, innumerable times more than that is the *samsar samsthan kaal* of divine beings and infinite times more than that is the *samsar samsthan kaal* of animals

विवेचन : संसार-संस्थानकाल सम्बन्धी प्रश्न का उद्भव क्यों—कुछ लोगो की मान्यता है कि "पशु मरकर पशु ही होता है और मनुष्य मरकर मनुष्य, वह देव या नारक नही होता। अनादि भवो मे भी जीव एक ही प्रकार से रहता है।" इस भ्रान्त मत का निराकरण करने हेतु गौतम स्वामी ने यह प्रश्न उठाया है कि वह जीव अनादिकाल से एक योनि से दूसरी योनि मे भ्रमण कर रहा है, तो अतीतकाल मे जीव ने कितने प्रकार का ससार बिताया है ?

संसार-संस्थानकाल का अर्थ—ससार मे एक भव (जन्म) से दूसरे भव मे ससरण-गमन एवं स्थित रहने रूप क्रिया तथा उसकी अवधि सस्थानकाल है। ससार-सस्थानकाल तीन प्रकार का है-शून्यकाल, अशून्यकाल और मिश्रकाल।

(१) अशून्यकाल–आदिष्ट (वर्तमान में नियत) समय वाले नारकों में से एक भी नारक जब तक मरकर नहीं निकलता है और न कोई नया जन्म लेता है, तब तक का काल अशून्यकाल है। अर्थात्–अमुक वर्तमानकाल में सातों नरकों में जितने भी जीव विद्यमान हैं, उनमें से न कोई जीव मरे, न ही नया उत्पन्न हो, यानी उतने के उतने ही जीव जितने समय तक रहें, उस समय को नरक की अपेक्षा अशून्यकाल कहते हैं। (२) शून्यकाल–वर्तमानकाल के समादिष्ट (नियत) नारको में से समस्त नारक नरक से निकल जायें, एक भी नारक शेष न रहे, और न ही उनके स्थान पर सभी नये नारक पहुँचें तब तक का काल नरक की अपेक्षा शून्यकाल कहलाता है। तिर्यंचयोनि में शून्यकाल नहीं है, क्योंकि तिर्यंचयोनि मे अकेले वनस्पतिकाय के ही जीव अनन्त हैं, वे सबके सब उसमें से निकलकर नहीं जाते। शेष तीनो गतियो में तीनों प्रकार के संसार–संस्थानकाल हैं। (३) मिश्रकाल–वर्तमानकाल के इन नारको में से एक, दो, तीन इत्यादि क्रम से निकलते–निकलते जब एक भी नारक शेष रहे, अर्थात् विद्यमान नारको में से जब एक का निकलना प्रारम्भ हुआ, तब से लेकर जब तक नरक में एक नारक शेष रहा, तब तक बीच के समय को नरक की अपेक्षा मिश्रकाल कहते हैं।

तीनों कालों का अल्प–बहुत्व–अशून्यकाल अर्थात् विरहकाल की अपेक्षा मिश्रकाल को अनन्तगुणा इसलिए कहा है कि अशून्यकाल तो सिर्फ बारह मुहूर्त्त का है, जबकि मिश्रकाल वनस्पतिकाय में गमन की अपेक्षा अनन्तगुणा है। नरक के जीव जब तक नरक में रहें, तभी तक मिश्रकाल नहीं, वरन् नरक के जीव नरक से निकलकर वनस्पतिकाय आदि तिर्यंच तथा मनुष्य आदि गतियो–योनियों में जन्म लेकर फिर पुनः नरक में आवें तब तक का काल मिश्रकाल है और शून्यकाल मिश्रकाल से भी अनन्तगुणा इसलिए कहा गया है कि नरक के जीव नरक से निकलकर वनस्पति मे आते है, जिसकी स्थिति अनन्तकाल की है।

तिर्यंचो की अपेक्षा अशून्यकाल सबसे कम है। संज्ञी तिर्यंचपंचेन्द्रिय का उत्कृष्ट विरहकाल १२ मुहूर्त्त का, तीन विकलेन्द्रिय और सम्मूर्च्छिम तिर्यंचपंचेन्द्रिय का अन्तर्मुहूर्त्त का, पाँच स्थावर जीवो में समय–समय में परस्पर एक–दूसरे से असख्य जीव उत्पन्न होते हैं, अत उनमे विरहकाल नहीं है। *(वृत्ति, पत्रांक ४७–४८)*

Elaboration—The reason for the question—Some people believed that after death an animal is reborn only as animal and a human being is reborn only as a human being; it does not take rebirth as divine or infernal being Even after infinite rebirths a being remains in the same class In order to remove this misconception Gautam Swami raised this question that when a being moves in its cycles of rebirths from one genus to another, since the beginning of time how many different genuses it has passed through in the past ?

Samsar samsthan kaal—The act of passage from one birth to another and the duration of existence there is called *samsar samsthan kaal* or world-specific period of rebirth and existence. It is of three kinds—*Shunya kaal* (period of complete replacement), *Ashunya kaal* (period of absolute non-replacement) and *Mishra kaal* (period of gradual replacement just short of complete replacement).

(1) *Ashunya kaal* (period of absolute non-replacement)—The period till neither a single infernal being from among those living at present in all

infernal worlds dies and leaves the infernal world nor a new one is born among them is called *Ashunya kaal*. In other words the period during which neither a single infernal being is born nor dies in all the infernal worlds or the total number of beings remains constant is *Ashunya kaal* related to the infernal beings. (2) *Shunya kaal*—The period till all the infernal beings existing at the present moment in all infernal worlds abandon the infernal realm, neither even a single being of this generation is left there nor are they replaced by new beings, is called *Shunya kaal*. (3) *Mishra kaal*—The period till one, two, three or more beings from among those living at present in all infernal worlds continue to die and leave the infernal world and just one being remains, is called *Mishra kaal*. In other words it is the period starting from the moment one infernal being dies and up to the moment when just one being remains.

Comparison of the duration of three periods—*Mishra kaal* is said to be infinite times longer than *Ashunya kaal* because duration of *Ashunya kaal* is just twelve *Muhurt* whereas in context of passage to plant-bodied beings *Mishra kaal* is infinite times more. *Mishra kaal* covers not only the period of existence of beings in the infernal world but also includes the period of passage of infernal beings from hell to various genuses including plant-bodied beings, animals, humans and back to hell *Shunya kaal* is said to be infinite times longer than *Mishra kaal* because infernal beings are reborn as plant-bodied beings whose life-span is infinite.

With reference to animals *Ashunya kaal* is minimum The maximum *Ashunya kaal* for sentient five sensed animals is 12 *Muhurt* That for two, three and four sensed beings as well as *Sammurchhim Tiryanch Panchendriya* (five-sensed animals of asexual origin) is *Antar-muhurt* There is no *Ashunya kaal* with reference to five immobile beings because every moment innumerable beings continue to die and get reborn from one form to another. *(Vritti, leaves 47-48)*

अन्तक्रिया-सम्बन्धी चर्चा ANTAKRIYA (THE ULTIMATE ACTIVITY)

१८. [प्र.] जीवे णं भंते ! अंतकिरियं करेज्जा ?

[उ.] गोयमा ! अत्थेगतिए करेज्जा, अत्थेगतिए नो करेज्जा। अंतकिरियापदं नेयव्वं।

१८. [प्र.] हे भगवन् ! क्या जीव अन्तक्रिया करता है ?

[उ.] गौतम ! कोई जीव अन्तक्रिया करता है, कोई जीव नही करता। इस सम्बन्ध में प्रज्ञापनासूत्र का अन्तक्रियापद (२०वाँ पद) जान लेना चाहिए।

नरक संस्थान-काल



चित्र परिचय-२

Illustration No. 2

नरक संस्थान-काल

नरक मे नारको की स्थिति को तीन काल से समझना चाहिए। (१) **अशून्य काल**–जिस काल मे नरक म न तो कोई नया जीव बाहर से आकर उत्पन्न होता है और न ही कोई नारक नरक छोडकर जाता है। जितने नारक विद्यमान है, उतने ही रहते है। आगमन एव निर्गमन द्वार जब बन्द रहता है वह **अशून्य काल**। (२) **शून्य काल**–जिस समय नरक मे एक भी नारक जीव विद्यमान न रहे। आगमन बन्द है, जाने वाले सब जा चुके है। नरकभूमि खाली है। वह **शून्य काल** होता है। (३) **मिश्र काल**–नरक मे स्थित नारको मे से निकलने का क्रम चालू है। कुछ निकल चुके कुछ निकल रहे है, कुछ वहा विद्यमान है। इस मध्य काल को **मिश्र काल** कहा जाता है।

- शतक १ उ २ सूत्र ५५ पृष्ठ ७३

NARAK SAMSTHAN KAAL

The duration of existence in the infernal world is of three kinds (1) **Ashunya kaal** (period of absolute non-replacement)—The period till neither a single infernal being leaves the infernal world nor a new one is born among them is called **Ashunya kaal.** The total number of beings remains constant The doors to come in and go out are closed (2) **Shunya kaal**—The period when not even a single being of this generation is left in the infernal world Coming in is stopped and those who had to go have gone The infernal world is empty This is called **Shunya kaal.** (3) **Mishra kaal**—The period when the process of leaving the infernal world is on Some have gone some are going and some continue to exist there This middle period is called **Mishra kaal.**

—Shatak 1 lesson 2, Sutra 15, page 73

18. [Q.] *Bhante* ! Does a living being indulge in *antakriya* (the ultimate activity) ?

[Ans.] Gautam ! Some being indulges in the ultimate activity and some does not. In this regard refer to *Antakriyapad* of *Prajnapana Sutra* (20th chapter).

विवेचन : जिस क्रिया के पश्चात् फिर कभी दूसरी क्रिया न करनी पड़े, वह अथवा कर्मों का सर्वथा अन्त करने वाली क्रिया अन्तक्रिया है। निष्कर्ष यह है कि भव्य जीव ही मनुष्यभव पाकर अन्तक्रिया (मोक्ष-प्राप्ति की क्रिया) करता है।

Elaboration—The activity that ends all activities is called *antakriya*. In other words the activity that destroys all *karmas* is the ultimate activity. The indication is that only a spiritually worthy being is born as a human being and only he performs the *antakriya* to attain liberation.

असंयत भव्य द्रव्यदेव का उपपात BIRTH OF ASAMYAT BHAVYA DRAVYADEVA

१९. [प्र.] अह भंते ! असंजयभवियदव्वदेवाणं १, अविराहियसंजमाणं २, विराहियसंजमाणं ३, अविराहियसंजमासंजमाणं ४, विराहियसंजमासंजमाणं ५, असण्णीणं ६, तावसाणं ७, कंदप्पियाणं ८, चरगपरिव्वायगाणं ९, किब्बिसियाणं १०, तेरिच्छियाणं ११, आजीवियाणं १२, आभिओगियाणं १३, सलिंगीणं दंसणवावन्नगाणं १४, एएसि णं देवलोगेसु उववज्जमाणाणं कस्स कहिं उववाए पण्णत्ते ?

[उ.] गोयमा ! अस्संजतभवियदव्वदेवाणं जहन्नेणं भवणवासीसु, उक्कोसेणं उवरिमगेविज्जएसु १। अविराहियसंजमाणं जहन्नेणं सोहम्मेकप्पे, उक्कोसेणं सव्वट्ठसिद्धे विमाणे २। विराहियसंजमाणं जहन्नेणं भवणवासीसु, उक्कोसेणं सोधम्मेकप्पे ३। अविराहियसंजमाऽसंजमाणं जहन्नेणं सोहम्मेकप्पे, उक्कोसेणं अच्चुएकप्पे ४। विराहियसंजमासंजमाणं जहन्नेणं भवणवासीसु, उक्कोसेणं जोतिसिएसु ५। असण्णीणं जहन्नेणं भवणवासीसु, उक्कोसेणं वाणमंतरेसु ६। अवसेसा सव्वे जहन्नेणं भवणवासीसु, उक्कोसेणं वोच्छामि–तावसाणं जोतिसिएसु ७। कंदप्पियाणं सोहम्मेकप्पे ८। चरगपरिव्वायगाणं बंभलोएकप्पे ९। किब्बिसियाणं लंतगेकप्पे १०। तेरिच्छियाणं सहस्सारेकप्पे ११। आजीवियाणं अच्चुएकप्पे १२। आभिओगियाणं अच्चुएकप्पे १३। सलिंगीणं दंसणवावन्नगाणं उवरिमगेवेज्जएसु १४।

१९. [प्र.] भगवन् ! (१) असयत भव्य द्रव्यदेव, (२) अखण्डित संयम वाला, (३) खण्डित संयम वाला, (४) अखण्डित सयमासयम (देशविरति) वाला, (५) खण्डित संयमासंयम वाला, (६) असंज्ञी, (७) तापस, (८) कान्दर्पिक, (९) चरकपरिव्राजक, (१०) किल्विषिक, (११) तिर्यंच, (१२) आजीविक, (१३) आभियोगिक, (१४) दर्शन (श्रद्धा) भ्रष्ट वेशधारी, ये सब यदि देवलोक में उत्पन्न हों तो, किसका कहाँ उपपात (उत्पत्ति) होता है ?

[उ.] गौतम ! (१) असंयत भव्य द्रव्यदेवो का उत्पाद जघन्यतः भवनवासियों में और उत्कृष्टतः ऊपर के ग्रैवेयकों में होता है, (२) अखण्डित (अविराधित) संयम वालो का जघन्य सौधर्मकल्प में और उत्कृष्ट

सर्वार्थसिद्ध विमान मे, (३) खण्डित संयम वालो का जघन्य भवनवासियो में और उत्कृष्ट सौधर्मकल्प में, (४) अखण्डित सयमासंयमी का जघन्य सौधर्मकल्प में और उत्कृष्ट अच्युतकल्प में, (५) खण्डित सयमासंयम वालों का जघन्य भवनवासियो में और उत्कृष्ट ज्योतिष्कदेवो में, (६) असंज्ञी जीवों का जघन्य भवनवासियो में और उत्कृष्ट वाणव्यन्तरदेवों में और शेष सबका उत्पाद जघन्य भवनवासियों में होता है; उत्कृष्ट उत्पाद आगे बता रहे हैं-(७) तापसों का ज्योतिष्को में, (८) कान्दर्पिकों का सौधर्मकल्प में, (९) चरकपरिव्राजकों का ब्रह्मलोककल्प में, (१०) किल्विषिकों का लान्तककल्प में, (११) तिर्यंचों का सहस्रारकल्प में, (१२) आजीविकों, (१३) आभियोगिकों का अच्युतकल्प में, और (१४) श्रद्धाभ्रष्ट वेशधारियों का ऊपर के ग्रैवेयको तक मे उत्पाद होता है।

19. [Q.] *Bhante* ! When destined to divine realms where do the following reincarnate—(1) an unrestrained (here restrain relates to—ascetic-conduct) person destined to be a god (*asamyat bhavya dravyadev*), (2) restrained without a lapse (*akhandit samyami*), (3) restrained with lapses (*khandit samyami*), (4) restrained-unrestrained (*desh-virati* or partial detachment from sin and partial engagement in twelve types of austerities) without a lapse (*akhandit samyamasamyami*), (5) restrained-unrestrained with lapses (*khandit samyamasamyami*), (6) non-sentient (*asanjni*), (7) *Taapas* (*hermit*), (8) *Kandarpik*, (9) *Charak-parivrajak*, (10) *Kilvishik*, (11) animal (*tiryanch*), (12) *Aajivak*, (13) *Aabhiyogik*, and (14) a heretic in ascetic garb (*darshan-bhrasht-veshadhari*) ?

[Ans.] Gautam ! (1) an unrestrained person destined to be a god (*asamyat bhavya dravyadev*) reincarnates at the lowest among Bhavan-vasis (abode dwelling gods) and at the highest among the upper Graiveyak gods (a specific sector of celestial vehicle dwelling gods in space), (2) restrained without a lapse reincarnates at the lowest in Saudharma Kalp and at the highest in Sarvarthasiddha Vimaan, (3) restrained with lapses reincarnates at the lowest among Bhavan-vasis (abode dwelling gods) and at the highest in Saudharma Kalp, (4) restrained-unrestrained (*desh-virati* or partial detachment from sin and partial engagement in twelve types of austerities) without a lapse reincarnates at the lowest in Saudharma Kalp and at the highest in Achyut Kalp, (5) restrained-unrestrained with lapses reincarnates at the lowest among Bhavan-vasis (abode dwelling gods) and at the highest among Jyotishk Devas (Stellar gods), (6) non-sentient (*asanjni*) reincarnates at the lowest among Bhavan-vasis (abode dwelling gods) and at the highest among Vanavyantar Devas (Interstitial gods), all the remaining reincarnate at the lowest among Bhavan-vasis (abode

dwelling gods) and at the highest among—(7) *Taapas* (hermit) among Jyotishk Devas, (8) *Kandarpik* in Saudharma Kalp, (9) *Charak-parivrajak* in Brahmalok Kalp, (10) *Kilvishik* in Lantak Kalp, (11) *Tiryanch* in Sahasrar Kalp, (12) *Aajivak*, (13) *Aabhiyogik* in Achyut Kalp, and (14) a faithless in ascetic garb in upper Graiveyaks.

विवेचन : विशेष पदों की व्याख्या : असंयत भव्य द्रव्यदेव–(१) जो असंयत–चारित्र–परिणामशून्य हो, किन्तु भविष्य मे देव होने योग्य हो, वह असंयत भव्य द्रव्यदेव है, अर्थात् जो साधु–समाचारी और साध्वाचार का पालन करता हो, किन्तु जिसमे आन्तरिक भाव से साधुता न हो, केवल द्रव्यलिंगधारी हो, ऐसा भव्य या अभव्य मिथ्यादृष्टि है। यद्यपि ऐसे असयत भव्य द्रव्यदेव में महामिथ्यादर्शनरूप मोह की प्रबलता होती है, तथापि जब वह चक्रवर्ती आदि अनेक राजा–महाराजाओ द्वारा साधुओं का वन्दन–नमन, पूजा, सत्कार–सम्मान आदि करते देखता है तो सोचता है कि मै साधु बन जाऊँ तो मेरी भी इसी तरह वन्दना, पूजा–प्रतिष्ठा आदि होने लगेगी; फलत' इस प्रकार की प्रतिष्ठामोह की भावना से वह श्रमणव्रत पालन करता है, आत्मशुद्धि के उद्देश्य से नहीं। उसकी श्रद्धा प्रव्रज्या तथा क्रियाकलाप पूर्ण है, वह आचरण भी पूर्णतया करता है, परन्तु चारित्र के परिणाम से शून्य होने से असंयत है।

अविराधित संयमी–दीक्षाकाल से लेकर अन्त तक जिसका चारित्र कभी भग न हुआ हो, वह अखण्डित सयमी है। इसे आराधक संयमी भी कहते हैं। **विराधित संयमी**–इसका स्वरूप अविराधित संयमी से विपरीत है। जिसने महाव्रतो का ग्रहण करके उनका भलीभाँति पालन नहीं किया है, संयम की विराधना की है, वह विराधित सयमी, खण्डित संयमी या विराधक संयमी है। **अविराधित संयमासंयमी**–जो देशविरति ग्रहण करके अन्त तक अखण्डित रूप से उसका पालन करता है उसे आराधक सयमासंयमी कहते है। **विराधित संयमासंयमी**–जिसने देशविरति ग्रहण करके उसका भलीभाँति पालन नहीं किया हो, उसे विराधित सयमासयमी कहते है।

असंज्ञी जीव–जिसके मनोलब्धि नहीं है, ऐसा असज्ञी जीव अकामनिर्जरा करता है, इस कारण वह देवलोक मे जा सकता है।

तापस–वृक्ष से गिरे हुए पत्तो आदि को खाकर उदरनिर्वाह करने वाला बाल–तपस्वी। **कान्दर्पिक**–जो साधु हँसोड–हास्यशील हो। ऐसा साधु चारित्रवेश में रहते हुए भी हास्यशील होने के कारण अनेक प्रकार की विदूषक की–सी चेष्टाएँ करता है। अथवा कन्दर्प अर्थात् काम–सम्बन्धी वार्त्तालाप करने वाला साधु भी कान्दर्पिक कहलाता है। **चरकपरिव्राजक**–गेरुए या भगवे रग के वस्त्र पहनकर सामूहिक भिक्षा द्वारा आजीविका करने वाले त्रिदण्डी, कुच्छोटक आदि। **किल्विषिक**–जो ज्ञान का, केवली, धर्माचार्य और सब साधुओं का अवर्णवाद करता है और पापमय भावना वाला है, वह किल्विषिक साधु है। किल्विषिक साधु व्यवहार से चारित्रवान भी होते हैं। **तिर्यंच**–देशविरति श्रावकव्रत का पालन करने वाले घोडे, गाय आदि। जैसे–नन्दन मणिहार का जीव मेंढक के रूप मे श्रावकव्रती था। **आजीविक**–(१) नग्न रहने वाले गोशालक के शिष्य, (२) लब्धिप्रयोग करके अविवेकी लोगो द्वारा ख्याति प्राप्त करने या महिमा–पूजा के लिए तप और चारित्र का अनुष्ठान करने वाले, और (३) अविवेकी लोगो मे चमत्कार दिखलाकर अपनी आजीविका उपार्जन करने वाले। **आभियोगिक**–विद्या और मंत्र आदि का या चूर्ण आदि के योग का प्रयोग करना और दूसरों को अपने वश मे करना अभियोग कहलाता है। जो साधु व्यवहार से तो संयम का पालन करता है, किन्तु मंत्र, तंत्र, यंत्र, भूतिकर्म, प्रश्नाप्रश्न, निमित्त, चूर्ण आदि के प्रयोग द्वारा दूसरे को आकर्षित करता है, वशीभूत करता है, वह आभियोगिक कहलाता है।

दर्शनभ्रष्टसलिंगी–साधु के वेश में होते हुए भी दर्शनभ्रष्ट–निह्नव दर्शनभ्रष्ट–स्ववेशधारी है। ऐसा साधक आगम के अनुसार क्रिया करता हुआ भी निह्नव होता है, जिन–दर्शन से विरुद्ध प्ररूपणा करता है, जैसे–जमालि। *(वृत्ति, पत्रांक ४९–५०) (विशेष वर्णन के लिए औपपातिकसूत्र का उपपात प्रकरण देखें)*

Elaboration—*Asamyat bhavya dravya dev*—One who is unrestrained in ascetic-conduct and has no aspiration for liberation but is still destined to be a god is called *asamyat bhavya dravyadev* In other words one who physically or ritually follows the ascetic praxis and conduct but is spiritually devoid of the nobility of an ascetic, who is an ascetic in appearance only (*dravyalingadhari*), is in fact a *mithyadrishti* (unrighteous) irrespective of his being worthy or unworthy of liberation. Although such *asamyat bhavya dravya dev* is plagued with intense affinity for heretics, when he witnesses many emperors and kings bowing, respecting, worshiping and honouring ascetics, he thinks of becoming an ascetic to gain such respect etc. Thus he becomes an ascetic and observes ascetic conduct coveting such adoration and not aspiring for spiritual purity. Although his faith, initiation and ritual observation is immaculate, in absence of right aspiration he remains unrestrained (*asamyat*).

Aviradhit samyami (restrained without a lapse)—One who has no lapse in conduct right from the point of initiation till the end is called *aviradhit samyami* or *aaraadhak samyami Viradhit samyami* (restrained with lapses)—He is opposite of *aviradhit samyami*. One who has accepted the great vows but has not observed them properly and has committed transgression is called *aviradhit samyami, khandit samyami* or *viradhak samyami. Aviradhit samyamasamyami* (restrained-unrestrained without lapse)—One who has accepted *desh-virati* (partial detachment from sin and partial engagement in twelve types of austerities) and observes the same without a lapse is called *aviradhit samyamasamyami. Viradhit samyamasamyami* (restrained-unrestrained with lapses)—One who has accepted *desh-virati* but does not observe the same immaculately is called *viradhit samyamasamyami*.

Asanjni jiva—A being not endowed with mind is called *asanjni jiva* or non-sentient being It may shed *karmas* involuntarily and as a consequence may reincarnate in divine realms.

Taapas—A hermit who subsists on naturally fallen fruits and leaves from trees. *Kandarpik*—An ascetic who is frolicsome is called *Kandarpik*. Such ascetic acts like a comedian due to his jolly nature. An ascetic who indulges in erotic conversation is also called *Kandarpik*. *Charak-*

parivrajak—mendicants in saffron garb who seek alms in groups. They also include *Tridandis* and *Kuchchhotaks*. *Kilvishik*—an ascetic with impious attitude who slanders right knowledge, *Kevali, acharya* and other ascetics. Such ascetics could, at the same time, be immaculate in their conduct. *Tiryanch*—those horses, cows and other animals who partially observe vows for laity. For example Nandan Manihar when reborn as a frog observed vows for laity. *Aajivak*—(1) the disciples of Goshalak who remained unclad; (2) those who become famous among the superstitious by displaying miracles or those who indulge in rituals for drawing devotees who worship; and (3) who earn their living by display of miracles before the superstitious. *Aabhiyogik*—use of mantras, sorcery and black magic to influence and control people is called *abhiyoga*. An ascetic who apparently observes ascetic conduct but employs all these methods to attract people and cast his spell on them is called *abhiyogik*. *Darshan-bhrasht samalingi*—heretic in ascetic garb. He is one who goes against the scriptures and still observes the conduct selectively, a *nihnava* (mendacious seceder) like Jamali. *(Vritti, leaves 49-50; see Upapat section of Aupapatik Sutra)*

असंज्ञी आयुष्य LIFE-SPAN OF NON-SENTIENT BEINGS

२०. [प्र.] कतिविहे णं भंते ! असण्णियाउए पण्णत्ते ?

[उ.] गोयमा ! चउव्विहे असण्णिआउए पण्णत्ते। तं जहा–नेरइय–असण्णिआउए १, तिरिक्खजोणिय–असण्णिआउए २, मणुस्सअसण्णिआउए ३, देवअसण्णिआउए ४।

२०. [प्र.] भगवन् ! असंज्ञी का आयुष्य कितने प्रकार का है ?

[उ.] गौतम ! असंज्ञी का आयुष्य चार प्रकार का है। यथा–नैरयिक–असंज्ञी आयुष्य, तिर्यंच–असंज्ञी आयुष्य, मनुष्य–असंज्ञी आयुष्य और देव–असंज्ञी आयुष्य।

20. [Q.] *Bhante* ! Of how many types is the life-span (*ayushya*) of an *asanjni* (non-sentient being) ?

[Ans.] Gautam ! The life-span of an *asanjni* (non-sentient being) is of four types—*Nairayik-asanjni ayushya* (as non-sentient infernal beings), *Tiryanch-asanjni ayushya* (as non-sentient animals), *Manushya-asanjni ayushya* (as non-sentient human beings) and *Deva-asanjni ayushya* (as non-sentient divine beings).

२१. [प्र.] असण्णी णं भंते ! जीवे किं नेरइयाउयं पकरेति, तिरिक्खजोणियाउयं पकरेइ, मणुस्साउयं पकरेइ, देवाउयं पकरेइ ?

[उ.] हंता गोयमा ! नेरइयाउयं पि पकरेइ, तिरिक्खजोणियाउयं पि पकरेइ, मणुस्साउयं पि पकरेइ, देवाउयं पि पकरेइ। नेरइयाउयं पकरेमाणे जहन्नेणं दस वाससहस्साइं, उक्कोसेणं पलिओवमस्स असंखेज्जइभागं पकरेति। तिरिक्खजोणियाउयं पकरेमाणे जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेणं पलिओवमस्स असंखेज्जइभागं पकरेइ। मणुस्साउए वि एवं चेव। देवाउयं पकरेमाणे जहा नेरइया।

२१. [प्र.] भगवन् ! असज्ञी जीव क्या नरक का आयुष्य उपार्जन करता है, तिर्यंचयोनिक का आयुष्य उपार्जन करता है, मनुष्य का आयुष्य भी उपार्जन करता है या देव का आयुष्य उपार्जन करता है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! वह नरक का आयुष्य भी उपार्जन करता है, तिर्यंच का, मनुष्य का और देव का आयुष्य भी उपार्जन करता है। नारक का आयुष्य उपार्जन करता हुआ असंज्ञी जीव जघन्य दस हजार वर्ष का और उत्कृष्ट पल्योपम के असख्यातवें भाग का उपार्जन करता है। तिर्यंचयोनि का आयुष्य उपार्जन करता हुआ असज्ञी जीव जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त का और उत्कृष्ट पल्योपम के असख्यातवे भाग का तथा मनुष्य का आयुष्य भी इतना ही उपार्जन करता है और देव आयुष्य का उपार्जन भी नरक के आयुष्य के समान करता है।

21. [Q.] *Bhante* ! Does a non-sentient being earn (acquire *karmas* responsible for) *Nairayik ayushya* (life-span as non-sentient infernal being), *Tiryanch ayushya* (life-span as non-sentient animal), *Manushya ayushya* (life-span as non-sentient human being) or *Dev ayushya* (life-span as non-sentient divine being) ?

[Ans.] Yes, Gautam ! It earns (acquires *karmas* responsible for) *Nairayik ayushya* (life-span as infernal being), *Tiryanch ayushya* (life-span as animal), *Manushya ayushya* (life-span as human being) and *Dev ayushya* (life-span as divine being) as well. While acquiring *karmas* responsible for life-span as an infernal being he does so for a span of minimum ten thousand years and a maximum of innumerable fraction of a *Palyopam* While acquiring those for life-span as an animal he does so for a span of minimum *Antar-muhurt* and a maximum of innumerable fraction of a *Palyopam* While acquiring those for life-span as a human being he does so for a span same as an animal. While acquiring those for life-span as divine being he does so for a span same as an infernal being

२२. [प्र.] एयस्स णं भंते ! नेरइयअसण्णिआउयस्स तिरिक्खजोणियअसण्णिआउयस्स मणुस्सअसण्णिआउयस्स देवअसण्णिआउयस्स य कयरे कयरेहिंतो जाव विसेसाहिए वा ?

[उ.] गोयमा ! सव्वत्थोवे देवअसण्णिआउए, मणुस्सअसण्णिआउए असंखेज्जगुणे, तिरियजोणियअसण्णिआउए असंखेज्जगुणे, नेरइयअसण्णिआउये असंखेज्जगुणे।

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति॥

॥ पढमे सए : बितिओ उद्देसो समत्तो ॥

२२. [प्र.] भगवन् ! नारक–असंज्ञी–आयुष्य, तिर्यंच–असंज्ञी–आयुष्य, मनुष्य–असंज्ञी–आयुष्य और देव–असंज्ञी–आयुष्य; इनमें कौन किससे अल्प, बहुत, तुल्य या विशेषाधिक है ?

[उ.] गौतम ! देव–असंज्ञी–आयुष्य; सबसे कम है, उसकी अपेक्षा मनुष्य–असंज्ञी–आयुष्य असंख्यातगुणा है, उससे तिर्यंच–असंज्ञी–आयुष्य असंख्यातगुणा है और उससे भी नारक–असंज्ञी–आयुष्य असंख्यातगुणा है।

'हे भगवन् !' (जैसा आप फरमाते है), वह इसी प्रकार है, वह इसी प्रकार है।' ऐसा कहकर गौतम स्वामी सयम और तप से अपनी आत्मा को भावित करते हुए विचरण करने लगे।

22. [Q.] *Bhante* ! Of *Nairayik-asanjni ayushya* (life-span as non-sentient infernal beings), *Tiryanch-asanjni ayushya* (life-span as non-sentient animals), *Manushya-asanjni ayushya* (life-span as non-sentient human beings) and *Deva-asanjni ayushya* (life-span as non-sentient divine beings) which one is more, less, equal or much more as compared with the others ?

[Ans.] Gautam ! *Deva-asanjni ayushya* (life-span as non-sentient divine beings) is minimum, *Manushya-asanjni ayushya* (life-span as non-sentient human beings) is innumerable times more than that, *Tiryanch-asanjni ayushya* (life-span as non-sentient animals) is further innumerable times more than that and *Nairayik-asanjni ayushya* (life-span as non-sentient infernal beings) is even further innumerable times more than that

"*Bhante* ! Indeed that is so. Indeed that is so." With these words ascetic Gautam paid homage and obeisance to Bhagavan Mahavir and resumed his activities enkindling (*bhaavit*) his soul with ascetic-discipline and austerities

विवेचन : असंज्ञी–आयुष्य–वर्तमान भव मे जो जीव विशिष्ट संज्ञा से रहित है, वह परलोक के योग्य जो आयुष्य बाँधता है, उसे असज्ञी–आयुष्य कहते हैं। असज्ञी के मनोलब्धि नहीं है, किन्तु आन्तरिक अध्यवसाय होते है, वह उनसे कर्मबन्ध करता है।

॥ प्रथम शतक : द्वितीय उद्देशक समाप्त ॥

Elaboration—*Asanjni ayushya* (life-span as non-sentient)—The bondage of *karmas* responsible for life-span of next birth by a being devoid of the special quality of sentience is *asanjni ayushya*. Although a non-sentient being does not have mind it is endowed with the faculty of intent and that is the cause of bondage of *karmas*

● END OF THE SECOND LESSON OF THE FIRST SHATAK ●

प्रथम शतक : तृतीय उद्देशक
FIRST SHATAK (Chapter One) : THIRD LESSON

कांक्षा-प्रदोष KANKSHA PRADOSH (ABERRATION OF DESIRE)

कांक्षामोहनीय कर्म-सम्बन्धी षड्द्वार SIX SOURCES OF ABERRATION OF DESIRE

१. [प्र. १] जीवाणं भंते ! कंखामोहणिज्जे कम्मे कडे ?

[उ.] हंता, कडे।

१. [प्र. १] भगवन् ! क्या जीवो का कांक्षामोहनीय कर्म कृत–किया हुआ है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! वह कृत है।

1. [Q. 1] *Bhante* ! Are the *kanksha-mohaniya karmas* (desire deluding *karmas*) of living beings acquired ones ?

[Ans.] Yes, they are acquired ones

[प्र. २] से भंते ! किं देसेणं देसे कडे १, देसेणं सव्वे कडे २, सव्वेणं देसे कडे ३, सव्वेणं सव्वे कडे ४?

[उ.] गोयमा ! नो देसेणं देसे कडे १, नो देसेणं सव्वे कडे २, नो सव्वेणं देसे कडे ३, सव्वेणं सव्वे कडे ४।

[प्र. २] भगवन् ! क्या वह देश से देशकृत है, देश से सर्वकृत है, सर्व से देशकृत है अथवा सर्व से सर्वकृत है ?

[उ.] गौतम ! वह देश से देशकृत नही है, देश से सर्वकृत नही है, सर्व से देशकृत नहीं है, सर्व से सर्वकृत है।

[Q. 2] *Bhante* ! Were they acquired in part by a part, in part by the whole, as the whole by a part or as the whole by the whole ?

[Ans.] Gautam ! (They were acquired) not as a part by a part, not as a part by the whole, not as the whole by a part but as the whole by the whole.

२. [प्र. १] नेरइयाणं भंते ! कंखामोहणिज्जे कम्मे कडे ?

[उ.] हंता, कडे जाव सव्वेणं कडे ४। [२] एवं जाव वेमाणियाणं दंडओ भाणियव्वो।

२. [प्र. १] भगवन् ! क्या नैरयिको का कांक्षामोहनीयकर्म कृत है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! कृत, यावत् सर्व से सर्वकृत है। [२] इस प्रकार से यावत् चौबीस ही दण्डकों में वैमानिक पर्यन्त आलापक कहना चाहिए।

2. [Q. 1] *Bhante* ! Are the *kanksha-mohaniya karmas* (desire deluding *karmas*) of infernal beings acquired ones ?

[Ans.] Yes, they are acquired ones.... and so on up to... as the whole by the whole. [2] This statement should be repeated for all the twenty four *Dandaks* (places of suffering) up to Vaimaniks.

३. [प्र. १] जीवा णं भंते ! कंखामोहणिज्जं कम्मं करिंसु ?

[उ.] हंता, करिंसु।

३. [प्र. १] भगवन् ! क्या जीवों ने कांक्षामोहनीय कर्म का उपार्जन किया है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! किया है।

3. [Q. 1] *Bhante* ! Have the *kanksha-mohaniya karmas* (desire deluding *karmas*) been acquired by infernal beings ?

[Ans.] Yes, they have been acquired.

[प्र. २] तं भंते ! किं देसेणं देसं करिंसु ४ ?

[उ.] एतेणं अभिलावेणं दंडओ भाणियव्वो जाव वेमाणियाणं। [३] एवं करेंति। एत्थ वि दंडओ जाव वेमाणियाणं। [४] एवं करेस्संति। एत्थ वि दंडओ जाव वेमाणियाणं।

[५] एवं चिते–चिणिंसु, चिणंति, चिणिस्संति। उवचिते–उवचिणिंसु, उवचिणंति, उवचिणिस्संति। उदीरेंसु, उदीरेंति, उदीरिस्संति। वेदिंसु, वेदेंति, वेदिस्संति। निज्जरेंसु, निज्जरेंति, निज्जरिस्संति।

गाहा–कड, चित, उवचित, उदीरिया, वेदिया य, निज्जिण्णा।
आदि तिए चउभेदा, तियभेदा पच्छिमा तिण्णि॥१॥

[प्र. २] 'भगवन् ! क्या वह देश से देशकृत है ?' इत्यादि वैमानिक दण्डक तक पूर्वोक्त प्रश्न यथावत् करना चाहिए।

[उ.] यह आलापक भी यावत् वैमानिक पर्यन्त चौबीस ही दण्डको मे आलापक कहना चाहिए। [३, ४] इसी प्रकार करते है और 'करेगे' यह दोनो आलापक भी यावत् वैमानिक पर्यन्त चौबीस ही दण्डको मे कहना चाहिए।

[५] इसी प्रकार (कृत के तीनों काल की तरह) चित–चय किया और चय करते है, चय करेंगे; उपचित–उपचय किया, उपचय करते है, उपचय करेंगे, उदीरणा की, उदीरणा करते है, उदीरणा करेंगे; वेदन किया, वेदन करते हैं, वेदन करेगे; निर्जीर्ण किया, निर्जीर्ण करते है, निर्जीर्ण करेगे, इन सब पदो का चौबीस ही दण्डको के सम्बन्ध मे पूर्ववत् कथन करना (आलापक कहना) चाहिए।

गाथार्थ–कृत, चित, उपचित, उदीर्ण, वेदित और निर्जीर्ण; इतने अभिलाप यहाँ कहने हैं। इनमें से कृत, चित और उपचित मे एक–एक के चार–चार भेद हैं; अर्थात्–सामान्य क्रिया, भूतकाल की क्रिया,

वर्तमानकाल की क्रिया और भविष्यकाल की क्रिया। पिछले तीन पदों में सिर्फ तीन काल सम्बन्धी क्रिया कहनी है।

[Q. 2] *Bhante* ! Have they been acquired as a part of a part ? All the aforesaid questions should be repeated here for all the twenty four *Dandaks* (places of suffering) up to Vaimaniks ?

[Ans.] All the aforesaid answers should also be repeated here for all the twenty four *Dandaks* (places of suffering) up to Vaimaniks ? **[3, 4]** In the same way all questions and answers related to present continuous tense (are being acquired) and future tense (will be acquired) should be repeated here for all the twenty four *Dandaks* (places of suffering) up to Vaimaniks

[5] In the same way (about the three tenses) all questions and answers related to the following actions should be repeated here for all the twenty four *Dandaks* (places of suffering) up to Vaimaniks—did, do and will assimilate (*chaya*), augment (*upachaya*), cause fruition (*udiran*), suffer (*vedan*) and separate or shed (*nirjaran*).

The verse—Statements about to acquire (*krit*), to assimilate (*chaya*), to augment (*upachaya*), to cause fruition (*udiran*), to suffer (*vedan*) and to separate or to shed (*nirjaran*) have to be given here Of these first three have four variants (general, past, present and future) and the last three have only three (past, present and future).

कांक्षामोहनीय वेदन SUFFERING OF KANKSHA MOHANIYA KARMAS

४. [प्र.] जीवा णं भंते ! कंखामोहणिज्जं कम्मं वेदेंति ?

[उ.] हंता, वेदेंति।

४. [प्र.] भगवन् ! क्या जीव कांक्षामोहनीय कर्म का वेदन करते है (भोगते है) ?

[उ.] हाँ, वेदन करते है।

4. [Q.] *Bhante* ! Do living beings experience (the fruits of) *kanksha-mohaniya karmas* ?

[Ans.] Yes, they do.

५. [प्र.] कहं णं भंते ! जीवा कंखामोहणिज्जं कम्मं वेदेंति ?

[उ.] गोयमा ! तेहिं तेहिं कारणेहिं संकिया कंखिया वितिगिंछिया भेदसमावन्ना, कलुससमावन्ना एवं खलु जीवा कंखामोहणिज्जं कम्मं वेदेंति।

५. [प्र.] भगवन् ! जीव कांक्षामोहनीय कर्म को किस प्रकार वेदते हैं ?

[उ.] गौतम ! उन-उन (अमुक-अमुक) कारणों से शंकायुक्त, कांक्षायुक्त, विचिकित्सायुक्त, भेदसमापन्न एवं कलुषसमापन्न होकर, जीव कांक्षामोहनीय कर्म का वेदन करते हैं।

5. [Q.] *Bhante* ! How do living beings experience (the fruits of) *kanksha-mohaniya karmas* ?

[Ans.] Gautam ! Living beings experience (the fruits of) *kanksha-mohaniya karmas* for various causes that poison their mind with doubt (*shanka yukt*), desire for other faith (*kanksha yukt*), incredulity (*vichikitsa yukt*), disjunction (*bhed samapanna*) and spite (*kalush samapanna*).

आराधक-स्वरूप TRUE FOLLOWER

६. [प्र. १] से नूणं भंते ! तमेव सच्चं णीसंकं जं जिणेहिं पवेइयं ?

[उ.] हंता, गोयमा ! तमेव सच्चं णीसंकं जं जिणेहिं पवेइयं।

६. [प्र. १] भगवन् ! क्या वही सत्य और निःशंक है, जो जिन भगवन्तो ने कहा है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! वही सत्य और निःशंक है, जो जिनेश्वरदेव द्वारा प्ररूपित है।

6. [Q. 1] *Bhante* ! Is that alone true and beyond doubt which has been propounded by *Jinas* ?

[Ans.] Yes, Gautam ! Only that is true and beyond doubt which has been propounded by *Jinas*.

[प्र. २] से नूणं भंते ! एवं मणं धारेमाणे, एवं पकरेमाणे एवं चिट्ठेमाणे, एवं संवरेमाणे आणाए आराहए भवति ?

[उ.] हंता, गोयमा ! एवं मणं धारेमाणे जाव भवति।

[प्र. २] भगवन् ! (वही सत्य और निःशंक है) इस प्रकार मन में निश्चय करता हुआ, उसी तरह आचरण करता हुआ, कहता हुआ, इसी तरह संवर करता हुआ जीव क्या आज्ञा का आराधक होता है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! इसी प्रकार मन मे निश्चय करता हुआ यावत् आज्ञा का आराधक होता है।

[Q. 2] *Bhante* ! By resolutely accepting the aforesaid, by translating it into his conduct, by saying so and thereby blocking the inflow of *karmas* does a living being become a true follower (*aaraadhak*) of the commands (of *Jina*) ?

[Ans.] Yes, Gautam ! By resolutely accepting the aforesaid, ... and so on up to... a living being becomes a true follower (*aaraadhak*) of the commands (of *Jina*).

विवेचन : कांक्षामोहनीय–जो कर्म जीव को मोहित या भ्रान्त बनाता है, उसे मोहनीय कर्म कहते हैं। मोहनीय कर्म के दो भेद है–चारित्रमोहनीय और दर्शनमोहनीय। यहाँ चारित्रमोहनीय कर्म के विषय में प्रश्न नहीं है। इसीलिए मोहनीय शब्द के साथ 'कांक्षा' शब्द जोडा गया है। कांक्षामोहनीय–दर्शनमोहनीय का ही भेद है। कांक्षा का अर्थ है–स्व–दर्शन के प्रति अरुचि तथा अन्य दर्शनो को स्वीकार करने की इच्छा करना। संशयमोहनीय, विचिकित्सामोहनीय, परपाखण्डप्रशसामोहनीय आदि कांक्षामोहनीय के अन्तर्गत भेद हैं।

कांक्षामोहनीय का ग्रहण कैसे ?–कर्म या कार्य चार प्रकार से होता है, उदाहरणार्थ–एक मनुष्य अपने शरीर के एकदेश–हाथ से वस्त्र का एक भाग ग्रहण करता है, यह एकदेश से एकदेश का ग्रहण करना है। इसी प्रकार हाथ से सारे वस्त्र का ग्रहण किया तो यह एकदेश से सर्व का ग्रहण करना है, यदि समस्त शरीर से वस्त्र के एक भाग को ग्रहण किया तो सर्व से एकदेश का ग्रहण हुआ; सारे शरीर से सारे वस्त्र को ग्रहण किया तो सर्व से सर्व का ग्रहण करना हुआ। प्रस्तुत प्रकरण मे देश का अर्थ है–आत्मा का एकदेश और एक समय मे ग्रहण किये जाने वाले कर्म का एकदेश। अगर आत्मा के एकदेश से कर्म का एकदेश किया तो यह देश से एकदेश की क्रिया की। अगर आत्मा के एकदेश से सर्व कर्म किया, तो यह देश से सर्व की क्रिया हुई। सम्पूर्ण आत्मा से कर्म का एकदेश किया, तो सर्व से देश की क्रिया हुई और सम्पूर्ण आत्मा से समग्र कर्म किया तो सर्व से सर्व की क्रिया हुई। कांक्षामोहनीय कर्म सर्व से सर्वकृत है, अर्थात्–समस्त आत्मप्रदेशो से समस्त कांक्षामोहनीय कर्म किया हुआ है। पूर्वोक्त चौभगी में से यहाँ चौथा भग ही ग्रहण किया गया है।

'चित' आदि पदों का स्वरूप–कर्म–पुद्गलो का ग्रहण करना 'चय' है, और बार–बार चय करना 'उपचय' है। अथवा अबाधाकाल समाप्त होने के पश्चात् गृहीत कर्म–पुद्गलो को वेदन करने के लिए निषेचन (कर्मदलिको का वर्गीकरण) करना, उदयावलिका मे स्थापित करना 'उपचय' कहा जाता है। 'उदीरणा', 'वेदना' और 'निर्जरा' का स्वरूप पहले बताया चुका है। उदीरणा आदि चिरकाल तक नही रहते, अतएव उनमे सामान्यकाल नहीं बताया गया है। इसलिए उदीरणा आदि में सिर्फ तीन प्रकार का काल बताया है।

शंका आदि पदों का स्वरूप–सर्वज्ञभाषित तत्त्वो में सन्देह करना **शंका** है। अन्यदर्शन को ग्रहण करने की इच्छा करना **कांक्षा** है। भ्रान्ति या अनिश्चितता व ब्रह्मचर्य आदि आचार–पालन के फल के विषय मे सशय करना **विचिकित्सा** है। बुद्धि मे द्वैधीभाव (बुद्धिभेद) उत्पन्न होना **भेदसमापन्नता** है, जिनेन्द्र भगवान द्वारा प्रतिपादित तत्त्व विपरीत रूप से समझना **कलुषसमापन्नता** है।

कांक्षामोहनीय कर्म को हटाने का प्रबल कारण–छद्मस्थतावश जब कभी किसी तत्त्व या जिनप्ररूपित तथ्य के विषय में शका आदि उपस्थित हो, तब **'तमेव सच्चं णीसंकं जं जिणेहिं पवेइयं'**–इसी सूत्र को हृदयगम कर ले तो व्यक्ति कांक्षामोहनीय कर्म से बच सकता है और जिनाज्ञाराधक हो सकता है। *(वृत्ति, पत्रांक ५२)*

Elaboration—*Kanksha-mohaniya karmas*—The *karma* that beguiles and deludes a being is called *mohaniya karma*. It is of two types—*Chaaritra mohaniya* (conduct deluding) and *Darshan mohaniya* (perception/faith deluding). As the inquiry here is not about conduct deluding *karma*, a prefix *kanksha* has been added with *mohaniya*. *Kanksha mohaniya* is a category of *darshan mohaniya karma* (perception deluding *karma*) *Kanksha* means dislike for one's own faith and desire to accept other faiths *Samshaya* (doubt) *mohaniya*, *vichikitsa*

(incredulity) ***mohaniya*** and ***parapakhand-prashamsha*** (praise of other dogmas) ***mohaniya*** are sub-categories of ***kanksha mohaniya karma***.

Acquisition of *kanksha mohaniya*—The act of acquisition is done four ways. For example—if a person acquires a part (*desh*) of a cloth with a part (hand) of his body, it is called acquiring a part by a part. If he acquires the whole cloth with a part (hand) of his body, it is called acquiring the whole by a part. If he acquires a part of the cloth with his whole body, it is called acquiring a part by the whole. And if he acquires the whole cloth with his whole body, it is called acquiring the whole by the whole. Here *desh* refers to one soul-space-point and one fraction of *karmas* acquired in one *Samaya*. If the soul has acquired one fraction of the *karma* by one soul-space-point it is part by a part. If the soul has acquired the whole of the *karma* by one soul-space-point it is the whole by a part. If the soul has acquired one fraction of the *karma* by every soul-space-point it is part by the whole If the soul has acquired the whole of the *karma* by every soul-space-point it is the whole by the whole. The *kanksha mohaniya karma* is classified as the whole by the whole, which means that the soul acquires the whole of the *karma* by every soul-space-point. This is the fourth of the four aforesaid kinds of acts of acquisition

TECHNICAL TERMS

Chaya—acquisition of *karma* particles by soul-space-points. *Upachaya*—augmentation of *karmas* This also means reorganization of *karma* particles aimed at premature suffering. *Udirana*, *vedana* and *nirjara* have already been explained. As these activities are not eternal, general period is not applicable to these, only three (past, present and future) are applicable.

Shanka—to have doubt in the word of the omniscient. *Kanksha*—to have desire to follow other faith *Vichikitsa*—incredulity and uncertainty on the Word as well as benefits of following the ascetic conduct including *brahmacharya*. *Bhed*—disjunction; to be in two minds. *Kalush*—spiteful misinterpretation of the Word.

Effective method to rid of *kanksha mohaniya karma*—When faced with doubt and other said misconceptions about some fundamentals or concepts propounded by *Jina* if one repeats and meditates on this aphorism—'Only that is true and beyond doubt which has been propounded by *Jinas*.' He can save himself from the *kanksha mohaniya karma* and become a true follower of the Word of *Jina*. *(Vritti, leaf 52)*

अस्तित्व–नास्तित्व परिणमन EXISTENCE AND NON-EXISTENCE

७. [प्र. १] से नूणं भंते ! अत्थित्तं अत्थित्ते परिणमइ, नत्थित्तं नत्थित्ते परिणमति ?

[उ.] हंता, गोयमा ! जाव परिणमति।

७. [प्र. १] भगवन् ! क्या अस्तित्व अस्तित्व मे परिणत होता है तथा नास्तित्व नास्तित्व में परिणत होता है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! अस्तित्व अस्तित्व मे परिणत होता है और नास्तित्व नास्तित्व में परिणत होता है।

7. [Q. 1] *Bhante* ! Does condition of existence (*astitva*) transform (*parinat*) into condition of existence and condition of non-existence (*anastitva*) transform into condition of non-existence ?

[Ans.] Yes, Gautam ! Condition of existence transforms into condition of existence and condition of non-existence transforms into condition of non-existence.

[प्र. २] जं तं भंते ! अत्थित्तं अत्थित्ते परिणमति, नत्थित्तं नत्थित्ते परिणमति तं किं पयोगसा; वीससा ?

[उ.] गोयमा ! पयोगसा वि तं, वीससा वि तं।

[प्र. २] भगवन् ! वह जो अस्तित्व अस्तित्व में परिणत होता है और नास्तित्व नास्तित्व में परिणत होता है, सो क्या वह प्रयोग (जीव के व्यापार या प्रयत्न) से परिणत होता है अथवा स्वभाव से ?

[उ.] गौतम ! वह प्रयोग से भी परिणत होता है और स्वभाव से भी परिणत होता है।

[Q. 2] *Bhante* ! Is this transformation of condition of existence into state of existence and condition of non-existence into state of non-existence induced or natural ?

[Ans.] Gautam ! This transformation is induced as well as natural.

[प्र. ३] जहा ते भंते ! अत्थित्तं अत्थित्ते परिणमइ तहा ते नत्थित्तं नत्थित्ते परिणमति ? जहा ते नत्थित्तं नत्थित्ते परिणमति तहा ते अत्थित्तं अत्थित्ते परिणमति ?

[उ.] हंता, गोयमा ! जहा मे अत्थित्तं अत्थित्ते परिणमति तहा मे नत्थित्तं नत्थित्ते परिणमति, जहा मे नत्थित्तं नत्थित्ते परिणमति तहा मे अत्थित्तं अत्थित्ते परिणमति।

[प्र. ३] भगवन् ! जैसे आपके मत से अस्तित्व अस्तित्व में परिणत होता है, उसी प्रकार नास्तित्व नास्तित्व मे परिणत होता है ? और जैसे आपके मत से नास्तित्व नास्तित्व में परिणत होता है, उसी प्रकार अस्तित्व अस्तित्व मे परिणत होता है ?

[उ.] गौतम ! जैसे मेरे मत से अस्तित्व अस्तित्व में परिणत होता है, उसी प्रकार नास्तित्व नास्तित्व मे परिणत होता है और जिस प्रकार मेरे मत से नास्तित्व नास्तित्व में परिणत होता है; उसी प्रकार अस्तित्व अस्तित्व मे परिणत होता है।

[Q. 3] *Bhante* ! As according to you condition of existence transforms into condition of existence, does it imply that condition of non-existence transforms into condition of non-existence ? Also, as according to you condition of non-existence transforms into condition of non-existence, does it imply that condition of existence transforms into condition of existence ?

[Ans.] Gautam ! As according to me condition of existence transforms into condition of existence, it implies that condition of non-existence transforms into condition of non-existence. Also, as according to me condition of non-existence transforms into condition of non-existence, it implies that condition of existence transforms into condition of existence.

[प्र. ४] से नूणं भंते ! अत्थित्तं अत्थित्ते गमणिज्जं ?

[उ.] जहा परिणमइ दो आलावगा तहा गमणिज्जेण वि दो आलावगा भाणियव्वा। जाव तहा मे अत्थित्तं अत्थित्ते गमणिज्जं।

[प्र. ४] भगवन् ! क्या अस्तित्व अस्तित्व में गमनीय है ?

[उ.] हे गौतम ! जैसे–'परिणत होता है' इस पद के आलापक कहे है, उसी प्रकार यहाँ 'गमनीय' पद के साथ भी दो आलापक कहने चाहिए; यावत् 'मेरे मत से अस्तित्व अस्तित्व मे गमनीय है।'

[Q. 4] *Bhante* ! Is condition of existence worth expounding (*gamaniya*) into condition of existence ?

[Ans.] Gautam ! As has been said about transformation (*parinat*) likewise the two statements should be repeated with worth expounding (*gamaniya*) up to condition of existence is worth expounding (*gamaniya*) into condition of existence.

[प्र. ५] जहा ते भंते ! एत्थं गमणिज्जं तहा ते इहं गमणिज्जं ! जहा ते इहं गमणिज्जं तहा ते एत्थं गमणिज्जं ?

[उ.] हंता, गोयमा ! जहा मे एत्थं गमणिज्जं जाव तहा मे एत्थं गमणिज्जं।

[प्र. ५] भगवन् ! जैसे आपके मत मे यहाँ (स्वात्मा) मे गमनीय है, उसी प्रकार इह (परात्मा में भी) गमनीय है, जैसे आपके मत मे इह (परात्मा में) गमनीय है, उसी प्रकार यहाँ (स्वात्मा में) भी गमनीय है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! जैसे मेरे मत में यहाँ–स्वात्मा में गमनीय है, यावत्–परात्मा में भी गमनीय है, और जैसे परात्मा में गमनीय है उसी प्रकार यहाँ–स्वात्मा में गमनीय है।

[Q. 5] *Bhante* ! As according to you the statement of expoundability is applicable at this point (*ettham* or to self), does it imply that it is

applicable here (*iham* or to the other) ? Also, as according to you the statement of expoundability is applicable here (*iham* or to the other), does it imply that it is applicable at this point (*ettham* or to self) ?

[Ans.] Gautam ! As according to me it is applicable at this point (*ettham* or to self), it implies that it is applicable here (*iham* or to the other). Also, as it is applicable here (*iham* or to the other), it implies that it is applicable at this point (*ettham* or to self).

विवेचन : अस्तित्व का अर्थ है–जो पदार्थ जिस रूप में विद्यमान है, उसका उसी रूप मे रहना। 'अस्तित्व अस्तित्व मे परिणत होता है,' इस सूत्र के दो आशय वृत्तिकार ने बताए हैं–(१) **प्रथम आशय**–द्रव्य एक पर्याय से दूसरे पर्याय के रूप मे परिणत होता है, तथापि पर्यायरूप द्रव्य को सद्‌रूप मानना। जैसे–मिट्टीरूप पदार्थ की सत्ता सर्वप्रथम एक पिण्डरूप मे होती है, वही सत्ता घटरूप में हो जाती है। दोनो अवस्था मे मिट्टीरूप पदार्थ की सत्ता विद्यमान है। (२) **द्वितीय आशय**–जो अस्तित्व अर्थात्–सत् (विद्यमान–सत्ता वाला) पदार्थ है, वह सत्‌रूप (अस्तित्वरूप) मे परिणत होता है। तात्पर्य यह है कि सत् पदार्थ सदैव सद्‌रूप ही रहता है विनष्ट नही होता–कदापि असत् (शून्यरूप) मे परिणत नही होता। जिसे विनाश कहा जाता है, वह मात्र रूपान्तर–पर्याय परिवर्तन है, 'असत् होना' या समूल नाश होना नही। जैसे–एक दीपक प्रकाशमान है, किन्तु तेल जल जाने से प्रकाशरूप पुद्‌गल अब अपनी पर्याय पलटकर अन्धकार के रूप में परिणत हो गया है। प्रकाशावस्था और अन्धकारावस्था, इन दोनों अवस्थाओ मे दीपकरूप द्रव्य वही है। इसी का नाम है–सत् का सद्‌रूप मे ही रहना।

वस्तु में अस्तित्व और नास्तित्व दोनों धर्मों की विद्यमानता–कोई कह सकता है कि एक ही पदार्थ में अस्तित्व और नास्तित्व, ये दो विरोधी प्रतीत होने वाले धर्म कैसे रह सकते है? परन्तु जैनदर्शन का सिद्धान्त है कि पदार्थ में अस्तित्व और नास्तित्व दोनो धर्म विभिन्न अपेक्षा से विद्यमान है, अपेक्षाभेद के कारण इन दोनों में विरोध नहीं रहकर साहचर्य सम्बन्ध हो जाता है। जैसे–वस्त्र मे अपने स्वरूप की अपेक्षा अस्तित्व है किन्तु मिट्टी आदि पररूप की अपेक्षा से नास्तित्व है। अत वस्तु केवल सत्तामय नही, किन्तु सत्ता और असत्तामय है।

नास्तित्व की नास्तित्वरूप में परिणति–इस सूत्र की एक सरल व्याख्या यह है कि जिस वस्तु में जिसकी जिस रूप मे नास्ति है, उसकी उसी रूप मे नास्ति रहती है। जैसे–अगुली का अगूठा आदि के रूप मे न होना, अगुली का (अगुली की अपेक्षा से) अगूठा आदि रूप में नास्तित्व है। इसे यो कहा जा सकता है–जो अगुली अगुष्ठादिरूप नही है, वह अंगुष्ठादि नही होती। इसका यह अर्थ नहीं है कि अगूठे की अगूठे के रूप मे नास्ति है। जो है, वही है, अन्यरूप नही है।

अस्तित्व का अस्तित्वरूप में परिणमन दो प्रकार से होता है–प्रयोग से (जीव के व्यापार से) और स्वभाव से (विश्रसा)। **प्रयोग से**, यथा–कुम्हार की क्रिया से मिट्टी के पिण्ड का घटरूप में परिणमन। **स्वभाव से**, यथा–सफेद बादल काले बादलों के रूप मे किसी की क्रिया के बिना, स्वभावत. परिणत होते है। नास्तित्व का नास्तित्वरूप मे परिणमन भी दो प्रकार से होता है–प्रयोग से और स्वभाव से। **प्रयोग से**, यथा–घटादि की अपेक्षा से मिट्टी का पिण्ड नास्तित्वरूप है। स्वभाव से, यथा–पृच्छाकाल मे सफेद बालो में कृष्णत्व का नास्तित्व।

गमनीयरूप का आशय–गमनीय का अर्थ है–प्ररूपणा करने योग्य। आशय यह है कि पहले जिस सिद्धान्त का प्रतिपादन किया गया है, वह केवल समझने के लिए है या प्ररूपणा करने योग्य भी है? **'एत्थं'** और **'इहं'**

सम्बन्धी प्रश्नात्मक सूत्र की व्याख्या वृत्तिकार ने इस प्रकार की है–'एत्थं' का अर्थ यहाँ अर्थात्–स्वशिष्य और 'इहं' का अर्थ–गृहस्थ या परपाषण्डी आदि। तात्पर्य यह है कि वस्तु की प्ररूपणा आप अपने और पराये का भेद न रखकर स्व–परजनों के लिए समभाव से करते हैं? इस प्रश्न का उत्तर भगवान ने दिया, कि चाहे स्वशिष्य हो या गृहस्थादि, प्ररूपणा सबके लिए समान होती है–होनी चाहिए। *(वृत्ति, पत्रांक ५५–५६)*

Elaboration—*Astitva* (existence) means continuation of the present form of a substance. According to the commentator (*Vritti*) the statement 'transformation of the condition of existence into condition of existence' has two interpretations—(1) From one mode (*paryaya*) a substance transforms into another mode but its condition of existence as a substance remains unaltered. For example the condition of existence of clay is first in the form of a lump and then transforms into a pot. In both states its condition of existence as clay remains unaltered. (2) A substance that is in the condition of existence gets transformed only in a condition of existence In other words it always remains existent and is never destroyed, it never gets transformed into condition of non-existence or void. What we call destruction is simply a change of mode and not to become non-existent or complete destruction. For example a lamp emits light but when the fuel ends the particles of light undergo a modal transformation into particles of darkness. In both the conditions of light and darkness the lamp as substance remains same. Thus the condition of existence remains unaltered as condition of existence

Coexistence of conditions of existence and non-existence—A question can be raised that how two contradicting properties, existence and non-existence, can coexist in a substance ? But according to Jain philosophy the properties of existence and non-existence coexist in a substance from different standpoints. Due to change of standpoint the contradiction turns into co-ordination For example a cloth has the property of existence from the standpoint of its own form but from the standpoint of clay or any other substance it has the property of non-existence. Thus a substance is not just existent but also non-existent (from another viewpoint).

Transformation of the condition of non-existence into condition of non-existence—A simple elaboration of this aphorism is that a thing non-existent in one form always remains non-existent in that form. For example non-existence of finger in the form of thumb etc. A finger (from the standpoint of finger) is non-existent in the form of thumb etc. This can be stated as—the finger that is not in the form of thumb etc. is non-existent as a thumb. This does not mean that a thumb is non-

existent in the form of a thumb What exists in one form does not exist in another form.

Transformation of the condition of existence into condition of existence happens two ways—induced (by activity of a being) and natural. For example a lump of clay is transformed into a pot by activity of a potter, this is induced transformation; white clouds turn into black naturally without an aid of any activity by a being, this is natural transformation. Transformation of the condition of non-existence into condition of non-existence also happens two ways—induced (by activity of a being) and natural. For example from the standpoint of pot the lump of clay is non-existent, this is induced activity At the moment of asking the question black hair by nature are non-existent among the white ones.

Gamaniya—Gamaniya means worth expounding Here it conveys—is the aforesaid theory merely for understanding or is it worth expounding as well. The commentator (*Vritti*) has explained the interrogative statements starting with *Ettham* and *Iham* as—*Ettham* (here, nearer in comparison) means one's own disciple, *iham* (here, farther in comparison) means a householder, follower of other dogma and other such comparatively distant person. The question means that "is the propounding done without any discrimination between one's own and others ?" *Bhagavan* replied it with affirmative—propounding is and should be done uniformly and without any discrimination between one's own disciple and householders etc.

कांक्षामोहनीय कर्मबन्ध के कारण CAUSES OF BONDAGE OF KANKSHA MOHANIYA KARMA

८. [प्र.] जीवा णं भंते ! कंखामोहणिज्जं कम्मं बंधंति ?

[उ.] हंता, बंधंति।

९. [प्र. १] कहं णं भंते ! जीवा कंखामोहणिज्जं कम्मं बंधंति ?

[उ.] गोयमा ! पमादपच्चया जोगनिमित्तं च।

[प्र. २] से णं भंते ! पमादे किं पवहे ?

[उ.] गोयमा ! जोगप्पवहे।

[प्र. ३] से णं भंते ! जोगे किं पवहे ?

[उ.] गोयमा ! वीरियप्पवहे।

[प्र. ४] से णं भंते ! वीरिए किं पवहे ?

[उ.] गोयमा ! सरीरप्पवहे।

[प्र. ५] से णं भंते ! सरीरे किं पवहे ?

[उ.] गोयमा ! जीवप्पवहे। एवं सति अत्थि उट्ठाणे ति वा, कम्मे ति वा, बले ति वा, वीरिए ति वा, पुरिसक्कार–परक्कमे ति वा।

८. [प्र.] भगवन् ! क्या जीव कांक्षामोहनीय कर्म बाँधते हैं ?

[उ.] हाँ, बाँधते हैं।

९. [प्र. १] भगवन् ! जीव कांक्षामोहनीय कर्म किस प्रकार बाँधते हैं ?

[उ.] गौतम ! प्रमाद के कारण और योग के निमित्त से।

[प्र. २] भगवन् ! प्रमाद किससे उत्पन्न होता है ?

[उ.] गौतम ! प्रमाद योग से उत्पन्न होता है।

[प्र. ३] भगवन् ! योग किससे उत्पन्न होता है ?

[उ.] गौतम ! योग वीर्य से उत्पन्न होता है।

[प्र. ४] भगवन् ! वीर्य किससे उत्पन्न होता है ?

[उ.] गौतम ! वीर्य शरीर से उत्पन्न होता है।

[प्र. ५] भगवन् ! शरीर किससे उत्पन्न होता है ?

[उ.] गौतम ! शरीर जीव से उत्पन्न होता है और ऐसा होने मे जीव का उत्थान, कर्म, बल, वीर्य और पुरुषकार–पराक्रम होता है।

8. [Q.] *Bhante* ! Do living beings acquire bondage of ***kanksha mohaniya karma*** ?

[Ans.] Yes, they do.

9. [Q. 1] *Bhante* ! How do living beings acquire bondage of ***kanksha mohaniya karma*** ?

[Ans.] Gautam ! Due to stupor (*pramad*) and through association (*yoga*, by body, speech and mind).

[Q. 2] *Bhante* ! What is the origin of stupor ?

[Ans.] Gautam ! Stupor originates from association (*yoga*)

[Q. 3] *Bhante* ! What is the origin of association (*yoga*) ?

[Ans.] Gautam ! Association originates from potency (*virya*).

[Q. 4] *Bhante* ! What is the origin of potency (*virya*) ?

[Ans.] Gautam ! Potency originates from body (*sharira*).

[Q. 5] *Bhante* ! What is the origin of body (*sharira*) ?

[Ans.] Gautam ! Body originates from soul (*jiva*). This happens on account of inclination to rise (*utthaan*), action (*karma*), strength (*bal*), potency (*virya*) and self-exertion (*purushakar-parakram*).

विवेचन : कर्मबन्ध के कारण–यद्यपि कर्मबन्ध में पाँच मुख्य कारण हैं, तथापि यहाँ प्रमाद और योग दो कारण बताने का आशय यह है कि मिथ्यात्व, अविरति और कषाय का अन्तर्भाव प्रमाद में हो जाता है। यद्यपि सिद्धान्तानुसार छठे से आगे के गुणस्थानो मे प्रमाद नही होता, फिर भी जहाँ (दसवे गुणस्थान) तक कषाय है, वहाँ तक सूक्ष्म प्रमाद माना जाता है, स्थूल प्रमाद नही। इसलिए वहाँ तक प्राय मोहनीयकर्म का बन्ध होता है। दसवें गुणस्थान मे कषाय अत्यल्प (सूक्ष्म) होने से मोहकर्म का बन्ध नही होता है।

उत्थान आदि का स्वरूप–उठना 'उत्थान' है। जीव की चेष्टाविशेष 'कर्म'। शारीरिक प्राण 'बल'। जीव का उत्साह या शक्ति 'वीर्य' तथा पुरुष की स्वाभिमानपूर्वक क्रिया 'पुरुषकार' है और शत्रु को पराजित करना 'पराक्रम' है। *(वृत्ति, पत्रांक ५६-५७)*

Elaboration—Although there are five main causes of *karmic* bondage, here only two, *pramad* (stupor) and *yoga* (association), have been mentioned for the simple reason that the other three, *mithyatva* (unrighteousness), *avirati* (non-restraint) and passions, are extensions of *pramad* only Doctrinally *pramad* does not extend beyond the sixth *Gunasthan* (level of spiritual ascendance), however, it is believed that as long as passions exist (up to tenth *Gunasthan*) traces of *pramad* exist, which is in subtle form and not gross. That is why up to that point there is generally a bondage of *mohaniya karma* At the tenth *Gunasthan* there is no fresh bondage of *mohaniya karma* because here passions are of very minute intensity. Besides the eight categories of *pramad* mentioned in scriptures there are many more including the said three

Utthaan etc.—*utthaan*—inclination to rise, *karma*—specific actions of beings, *bal*—physical strength, *virya*—inner potency or energy, *purushakar*—action with self-awareness, *parakram*—to exert to win over or accomplish *(Vritti, leaves 56-57)*

कांक्षामोहनीय की उदीरणा, गर्हा आदि FRUITION OF KANKSHA MOHANIYA

१०. [प्र. १] से णूणं भंते ! अप्पणा चेव उदीरेइ, अप्पणा चेव गरहइ, अप्पणा चेव संवरेइ ?

[उ.] हंता, गोयमा ! अप्पणा चेव तं चेव उच्चारेयव्वं ३।

१०. [प्र. १] भगवन् ! क्या जीव अपने आप से ही उस (कांक्षामोहनीय कर्म) की उदीरणा करता है, अपने आप से ही उसकी गर्हा करता है और अपने आप से ही उसका सवर करता है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! जीव अपने आप से ही उसकी उदीरणा, गर्हा और संवर करता है।

10. [Q. 1] *Bhante* ! Does a being fructify (*udirana*) this (*kanksha mohaniya karma*) himself ? Does he censure (*garha*) it himself ? And does he block the inflow himself ?

[Ans.] Yes, Gautam ! A being fructifies (*udirana*), censures (*garha*) and blocks the inflow of this himself.

[प्र. २] जं तं भंते ! अप्पणा चेव उदीरेइ अप्पणा चेव गरहेइ, अप्पणा चेव संवरेइ तं उदिण्णं उदीरेइ १ अणुदिण्णं उदीरेइ २ अणुदिण्णं उदीरणाभवियं कम्मं उदीरेइ ३ उदयाणंतरपच्छाकडं कम्मं उदीरेइ ४ ?

[उ.] गोयमा ! नो उदिण्णं उदीरेइ १, नो अणुदिण्णं उदीरेइ २, अणुदिण्णं उदीरणाभवियं कम्मं उदीरेइ ३, णो उदयाणंतरपच्छाकडं कम्मं उदीरेइ ४।

[प्र. २] भगवन् ! जीव जो अपने आप से ही उसकी उदीरणा करता है, गर्हा करता है और संवर करता है, तो क्या उदीर्ण (उदय मे आये हुए) की उदीरणा करता है ? अनुदीर्ण की उदीरणा करता है ? या अनुदीर्ण उदीरणाभविक (उदय मे नहीं आये हुए, किन्तु उदीरणा के योग्य) कर्म की उदीरणा करता है ? अथवा उदयानन्तर पश्चात्कृत कर्म की उदीरणा करता है ?

[उ.] गौतम ! उदीर्ण की उदीरणा नही करता, अनुदीर्ण की उदीरणा नही करता, उदयानन्तर पश्चात्कृत कर्म की भी उदीरणा नही करता, किन्तु अनुदीर्ण; उदीरणा–भविक कर्म की उदीरणा करता है।

[Q. 2] *Bhante* ! When a being fructifies (*udirana*), censures (*garha*) and blocks the inflow of this himself, does he fructify the *karmas* that have already reached fruition or matured (*udirna*) ? Does he fructify those that have not matured (*anudirna*) ? Does he fructify those that have not matured but tend to mature (*udiranabhavik*) ? Or does he fructify those that have already been fructified and experienced (*udayanantar pashchaatkrit*) ?

[Ans.] Gautam ! He does not fructify the *karmas* that have already matured (*udirna*), he does not fructify those that have not matured (*anudirna*), he fructifies those that have not matured but tend to mature (*udiranabhavik*), and he does not fructify those that have already been fructified and experienced.

[प्र. ३] जं तं भंते ! अणुदिण्णं उदीरणाभवियं कम्मं उदीरेइ तं किं उट्ठाणेणं कम्मेणं बलेणं वीरिएणं पुरिसक्कारपरक्कमेणं अणुदिण्णं उदीरणाभवियं कम्मं उदीरेइ ? उदाहु तं अणुट्ठाणेणं अकम्मेणं अबलेणं अवीरिएणं अपुरिसक्कारपरक्कमेणं अणुदिण्णं उदीरणाभवियं कम्मं उदीरेइ ?

[उ.] गोयमा ! तं उट्ठाणेण वि कम्मेण वि बलेण वि वीरिएण वि पुरिसक्कारपरक्कमेण वि अणुदिण्णं उदीरणाभवियं कम्मं उदीरेइ, णो तं अणुट्ठाणेणं अकम्मेणं अबलेणं अवीरिएणं अपुरिसक्कारपरक्कमेणं अणुदिण्णं उदीरणाभवियं कम्मं उदीरेइ। एवं सति अत्थि उट्ठाणे इ वा कम्मे इ वा बले इ वा वीरिए इ वा पुरिसक्कारपरक्कमे इ वा।

[प्र. ३] भगवन् ! यदि जीव अनुदीर्ण-उदीरणाभविक कर्म की उदीरणा करता है, तो क्या उत्थान से, कर्म से, बल से, वीर्य और पुरुषकार-पराक्रम से उदीरणा करता है, अथवा अनुत्थान से, अकर्म से और अबल से, अवीर्य और अपुरुषकार-पराक्रम से उदीरणा करता है ?

[उ.] गौतम ! वह अनुदीर्ण-उदीरणाभविक कर्म की उदीरणा उत्थान से, कर्म से, बल से, वीर्य से और पुरुषकार-पराक्रम से करता है, (किन्तु) अनुत्थान से, अकर्म से, अबल से, अवीर्य से और अपुरुषकार-पराक्रम से उदीरणा नहीं करता। अतएव उत्थान है, कर्म है, बल है, वीर्य है और पुरुषकार-पराक्रम है।

[Q. 3] *Bhante* ! When he fructifies those *karmas* that have not matured but tend to mature (*udiranabhavik*), does he do so by rise (*utthaan*), action (*karma*), strength (*bal*), potency (*virya*) and self-exertion (*purushakar-parakram*) or by non-rise (*anutthaan*), non-action (*akarma*), non-strength (*abal*), non-potency (*avirya*) and non-self-exertion (*apurushakar-parakram*) ?

[Ans.] Gautam ! He fructifies those *karmas* that have not matured but tend to mature (*udiranabhavik*) by rise (*utthaan*), action (*karma*), strength (*bal*), potency (*virya*) and self-exertion (*purushakar-parakram*) and not by non-rise (*anutthaan*), non-action (*akarma*), non-strength (*abal*), non-potency (*avirya*) and non-self-exertion (*apurushakar-parakram*). Therefore rise (*utthaan*), action (*karma*), strength (*bal*), potency (*virya*) and self-exertion (*purushakar-parakram*) are valid

११. [प्र. १] से णूणं भंते ! अप्पणा चेव उवसामेइ, अप्पणा चेव गरहइ, अप्पणा चेव संवरेइ ?

[उ.] हंता, गोयमा ! एत्थ वि तं चेव भाणियव्वं, नवरं अणुदिण्णं उवसामेइ, सेसा पडिसेहेयव्वा तिण्णि।

[प्र. २] जं तं भंते ! अणुदिण्णं उवसामेइ तं किं उट्ठाणेणं ?

[उ.] जाव पुरिसक्कारपरक्कमे इ वा।

११. [प्र. १] भगवन् ! क्या वह अपने आप से ही (कांक्षामोहनीयकर्म का) उपशम करता है, अपने आप से ही गर्हा करता है और अपने आप से ही संवर करता है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! यहाँ भी उसी प्रकार 'पूर्ववत्' कहना चाहिए। विशेषता यह है कि अनुदीर्ण (उदय में नहीं आये हुए) का उपशम करता है, शेष तीनों विकल्पों का निषेध करना चाहिए।

[प्र. २] भगवन् ! जीव यदि अनुदीर्ण कर्म का उपशम करता है, तो क्या उत्थान से यावत् पुरुषकार-पराक्रम से करता है या अनुत्थान से यावत् अपुरुषकार-पराक्रम से करता है ?

[उ.] गौतम ! पूर्ववत् जानना-यावत् पुरुषकार-पराक्रम से उपशम करता है।

11. [Q. 1] *Bhante* ! Does a being pacify (*upasham*) this (*kanksha mohaniya karma*) himself ? Does he censure (*garha*) it himself ? And does he block the inflow himself ?

[Ans.] Yes, Gautam ! Here the aforesaid should be repeated with the addition that he pacifies those *karmas* that have not matured but tend to mature (*udiranabhavik*). The other three alternatives should be negated.

[Q. 2] *Bhante* ! When he pacifies those *karmas* that have not matured, does he do so by rise (*utthaan*), ... and so on up to... self-exertion (*purushakar-parakram*) or by non-rise (*anutthaan*), ... and so on up to... non-self-exertion (*apurushakar-parakram*) ?

[Ans.] Gautam ! Here too the aforesaid should be repeated up to pacifies by self-exertion (*purushakar-parakram*).

१२. [प्र.] से नूणं भंते ! अप्पणा चेव वेदेइ अप्पणा चेव गरहइ ?

[उ.] एत्थ वि स च्चेव परिवाडी। नवरं उदिण्णं वेएइ, नो अणुदिण्णं वेइए। एवं पुरिसक्कारपरक्कमे इ वा।

१३. [प्र.] से नूणं भंते ! अप्पणा चेव निज्जरेइ अप्पणा चेव गरहइ ?

[उ.] एत्थ वि स च्चेव परिवाडी। नवरं-उदयाणंतरपच्छाकडं कम्मं निज्जरेइ, एवं जाव परक्कमे इ वा।

१२. [प्र.] भगवन् ! क्या जीव अपने आप से ही वेदन करता है और गर्हा करता है ?

[उ.] गौतम ! यहाँ भी पूर्वोक्त समस्त परिपाटी पूर्ववत् समझनी चाहिए। विशेषता यह है कि उदीर्ण को वेदता है, अनुदीर्ण को नही वेदता। इसी प्रकार यावत् पुरुषकार-पराक्रम से वेदता है, अनुत्थानादि से नही वेदता है।

१३. [प्र.] भगवन् ! क्या जीव अपने आप से ही निर्जरा करता है और गर्हा करता है ?

[उ.] गौतम ! यहाँ भी समस्त परिपाटी 'पूर्ववत्' समझनी चाहिए, किन्तु इतनी विशेषता है कि उदयानन्तर पश्चात्कृत कर्म की निर्जरा करता है। इसी प्रकार यावत् पुरुषकार-पराक्रम से निर्जरा और गर्हा करता है। इसलिए उत्थान यावत् पुरुषकार-पराक्रम है।

12. [Q.] *Bhante* ! Does a being experience or suffer (*vedana*) this (*kanksha mohanıya karma*) hımself ? Does he censure (*garha*) it himself ? And does he block the ınflow himself ?

[Ans.] Yes, Gautam ! Here too the aforesaid should be repeated with the additıon that he experiences those *karmas* that have fructified (*udırna*)... and so on up to... up to experıences by self-exertion (*purushakar-parakram*) and not by non-rıse etc.

13. [Q.] *Bhante* ! Does a being shed (*nirjara*) this (*kanksha mohanıya karma*) himself ? Does he censure (*garha*) it himself ? And does he block the inflow hımself ?

[Ans.] Yes, Gautam ! Here too the aforesaid should be repeated with the addıtion that he sheds those *karmas* that have already been fructified and experıenced (*udayanantar pashchaatkrit*) . and so on up to... sheds by self-exertıon (*purushakar-parakram*) Therefore rise (*utthaan*), .. and so on up to... self-exertion (*purushakar-parakram*) are valıd

विवेचन : गर्हा आदि का स्वरूप—अतीतकाल मे जो पापकर्म किया, उनके कारणो (कर्मबन्ध के कारणो) का विचार करके आत्मनिन्दा करना गर्हा है। इससे पापकर्म के प्रति विरक्ति–भाव जाग्रत होता है। गर्हा प्रायश्चित्त की पूर्व भूमिका है और उदीरणा मे सहायक है। वर्तमान मे किये जाने वाले पापकर्म के स्वरूप को जानकर या उसके कारण को समझकर उस कर्म को रोकना या उसका त्याग–प्रत्याख्यान कर देना संवर है। उदीर्ण (उदय मे आए हुए) कर्म का क्षय होना निर्जरा है और जो उदय मे नही आये है, उनके विपाक और प्रदेश का अनुभव न होना–कर्म की ऐसी अवस्था को उपशम कहते है। वेदन का अर्थ है–उदय मे आये हुए कर्मफल को भोगना। निष्कर्ष–यह है कि उदय मे न आये हुए, किन्तु उदीरणा के योग्य कर्मों की उदीरणा होती है, अनुदीर्ण कर्मों का उपशम होता है, उदीर्ण कर्म का वेदन होता है और उदयानन्तर पश्चात्कृत (उदय के बाद हटे हुए) कर्म की निर्जरा होती है। *(वृत्ति, पत्राक ५८–५९)*

Elaboration—*Garha* and other terms—To ponder over the causes of sinful acts committed in the past (or those of *karmic* bondage) and indulge ın self-censure is called *garha* (self-censure) Thıs gıves rıse to apathy for sınful deeds Self-censure ıs the forerunner of atonement and aids fruition To stop or abandon the present indulgence in sınful activıty after understandıng its form and cause is called *samvar* (blockıng the inflow of *karmas*). Sheddıng of the fructıfied *karmas* is called *nırjara* (shedding). The state of unfructıfied *karmas* where their maturıng and components are not experıenced ıs called pacificatıon (*upasham*). *Vedan* (experience) means to experience the fruits of fructified *karmas*. The aforesaid aphorisms convey that *karmas* that have not matured but tend to mature (*udiranabhavık*) are fructified, *karmas* that have not fructified

are pacified, *karmas* that have fructified are experienced and *karmas* that have already been fructified and experienced (*udayanantar pashchaatkrit*) are shed. *(Vritti, leaves 58-59)*

नैरयिकादि में कांक्षामोहनीय KANKSHA MOHANIYA IN INFERNAL BEINGS AND OTHERS

१४. [प्र. १] नेरइया णं भंते ! कंखामोहणिज्जं कम्मं वेएंति ?

[उ.] जहा ओहिया जीवा तहा नेरइया जाव थणियकुमारा।

१४. [प्र. १] भगवन् ! क्या नैरयिक जीव कांक्षामोहनीय कर्म का वेदन करते हैं ?

[उ.] हाँ, गौतम ! वेदन करते है। सामान्य (औधिक) जीवों के सम्बन्ध में जैसे आलापक कहे थे, वैसे ही नैरयिकों के सम्बन्ध में यावत् स्तनितकुमारों (दसवें भवनपतिदेवों) तक समझ लेने चाहिए।

14. [Q. 1] *Bhante* ! Do the infernal beings experience *kanksha mohaniya karma* ?

[Ans.] Yes, Gautam ! They do. Here the general statements about living beings should be repeated for beings belonging to *dandaks* (places of suffering) up to Stanit Kumars (gods of tenth abode).

[प्र. २] पुढविक्काइया णं भंते ! कंखामोहणिज्जं कम्मं वेदेंति ?

[उ.] हंता, वेदेंति।

[प्र. ३] कहं णं भंते ! पुढविक्काइया कंखामोहणिज्जं कम्मं वेदेंति ?

[उ.] गोयमा ! तेसि णं जीवाणं णो एवं तक्का इ वा सण्णा इ वा पण्णा इ वा मणे इ वा वई ति वा 'अम्हे णं कंखामोहणिज्जं कम्मं वेदेमो' वेदेंति पुण ते।

[प्र. २] भगवन् ? क्या पृथ्वीकायिक जीव कांक्षामोहनीय कर्म का वेदन करते हैं ?

[उ.] हाँ, गौतम ! वे वेदन करते है।

[प्र. ३] भगवन् ! पृथ्वीकायिक जीव किस प्रकार काक्षा मोहनीयकर्म का वेदन करते है ?

[उ.] गौतम ! उन जीवो को ऐसा तर्क, सज्ञा, प्रज्ञा, मन अथवा वचन नही होता कि 'हम काक्षामोहनीय कर्म का वेदन करते है'; किन्तु वे उसका वेदन अवश्य करते है।

[Q. 2] *Bhante* ! Do the earth-bodied beings (*prithvikayik jivas*) experience *kanksha mohaniya karma* ?

[Ans.] Yes, Gautam ! They do.

[Q. 3] *Bhante* ! How do the earth-bodied beings (*prithvikayik jivas*) experience *kanksha mohaniya karma* ?

[Ans.] Gautam ! Those beings are not endowed with rationality (*tark*), awareness (*sanjna*), intelligence (*prajna*), mind (*man*) or speech (*vachan*)

to realize that 'we are suffering or experiencing *kanksha mohaniya karma*' but still they do experience

[प्र. ४] से णूणं भंते ! तमेव सच्चं नीसंकं जं जिणेहिं पवेइयं ?

[उ.] सेसं तं तेव जाव पुरिसक्कारपरक्कमेइ वा। [५] एवं जाव चउरिंदिया। [६] पंचिंदियतिरिक्खजोणिया जाव वेमाणिया जहा ओहिया जीवा।

[प्र. ४] भगवन् ! क्या वही सत्य और निःशंक है, जो जिन-भगवन्तों द्वारा प्ररूपित है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! यह सब पहले के समान जानना चाहिए-यावत्-पुरुषकार-पराक्रम से निर्जरा होती है। [५] इसी प्रकार चतुरिन्द्रिय जीवो तक जानना चाहिए। [६] जैसे सामान्य जीवों के विषय मे कहा है, वैसे ही पचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिक जीवो से लेकर यावत् वैमानिक तक कहना चाहिए।

[Q. 4] *Bhante* ! Is that alone is true and beyond doubt which has been propounded by *Jinas* ?

[Ans.] Yes, Gautam ! All the remaining information should be read as aforesaid .. up to... sheds by self-exertion (*purushakar-parakram*). **[5]** All this is applicable to all beings up to four-sensed beings **[6]** All that has been stated in this regard about living beings in general is applicable to living beings starting from five-sensed beings right up to Vaimaniks

श्रमणों के कांक्षामोहनीय कर्म का वेदन EXPERIENCE OF KANKSHA MOHANIYA KARMA BY ASCETICS

१५. [प्र. १] अत्थि णं भंते ! समणा वि निग्गंथा कंखामोहणिज्जं कम्मं वेदेंति ?

[उ.] हंता, अत्थि।

१५. [प्र. १] भगवन् ! क्या श्रमण निर्ग्रन्थ भी कांक्षामोहनीय कर्म का वेदन करते हैं ?

[उ.] हाँ, गौतम ! वे भी वेदन करते है।

15. [Q. 1] *Bhante* ! Do the *Shraman Nirgranths* (Jain ascetics) also experience *kanksha mohaniya karma* ?

[Ans.] Yes, Gautam ! They do.

[प्र. २] कहं णं भंते ! समणा वि निग्गंथा कंखामोहणिज्जं कम्मं वेदेंति ?

[उ.] गोयमा ! तेहिं तेहिं नाणंतरेहिं दंसणंतरेहिं चरित्तंतरेहिं लिंगंतरेहिं पवयणंतरेहिं पावयणंतरेहिं कप्पंतरेहिं मग्गंतरेहिं मतंतरेहिं भंगंतरेहिं नयंतरेहिं नियमंतरेहिं पमाणंतरेहिं संकिया कंखिया वितिगिच्छिता भेदसमावन्ना, कलुससमावन्ना, एवं खलु समणा निग्गंथा कंखामोहणिज्जं कम्मं वेदेंति।

[प्र. २] भगवन् ! श्रमण निर्ग्रन्थ काक्षामोहनीय कर्म का वेदन किस प्रकार करते है ?

[उ.] गौतम ! उन-उन कारणो से ज्ञानान्तर, दर्शनान्तर, चारित्रान्तर, लिगान्तर, प्रवचनान्तर, प्रवचनिकान्तर, कल्पान्तर, मार्गान्तर, मतान्तर, भगान्तर, नयान्तर, नियमान्तर और प्रमाणान्तरो के

द्वारा शंकित, कांक्षित, विचिकित्सित, भेदसमापन्न और कलुषसमापन्न होकर श्रमण निर्ग्रन्थ भी कांक्षामोहनीय कर्म का वेदन करते हैं।

[Q. 2] *Bhante* ! How do the *Shraman Nirgranths* experience *kanksha mohaniya karma* ?

[Ans.] Due to all the said causes ascetics also experience or suffer *kanksha mohaniya karma* plagued by doubt, desire for other faith, incredulity, disjunction and spite under the influence of diverse knowledge (*jnanantar*), diverse perception/faith (*darshanantar*), diverse conduct (*chaaritrantar*), diverse dress code (*lingantar*), diverse sermon (*pravachanantar*), diverse preceptor (*pravachanikantar*), diverse special codes (*kalpantar*), diverse praxis (*margantar*), diverse views (*matantar*), diverse alternatives (*bhangantar*), diverse stand-points (*nayantar*), diverse rules (*niyamantar*) and diverse authenticity (*pramanantar*).

[प्र. ३] से नूणं भंते ! तमेव सच्चं नीसंकं जं जिणेहिं पवेइयं ?

[उ.] हंता, गोयमा ! तमेव सच्चं नीसंकं जाव पुरिसक्कारपरक्कमे इ वा।

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति०

॥ पढमे सए : तइओ उद्देसो समत्तो ॥

[प्र. ३] भगवन् ! क्या वही सत्य और निःशंक है, जो जिन-भगवन्तों ने प्ररूपित किया है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! वही सत्य है, निःशंक है, जो जिन-भगवन्तो ने प्ररूपित किया है, यावत् पुरुषकार-पराक्रम से निर्जरा होती है।

भगवन् ! यह ऐसा ही है, यावत् पर ऐसा ही है।

[Q. 3] *Bhante* ! Is that alone is true and beyond doubt which has been propounded by *Jinas* ?

[Ans.] Yes, Gautam ! That alone is true and beyond doubt which has been propounded by *Jinas*... and so on up to.. sheds by self-exertion (*purushakar-parakram*).

"*Bhante* ! Indeed that is so. Indeed that is so."

विवेचन : सूत्र १/३ मे आये तर्क आदि शब्दो की व्याख्या-'यह इस प्रकार होगा', इस प्रकार के विचार-विमर्श या ऊहापोह को तर्क कहते हैं। संज्ञा का अर्थ है-अर्थावग्रहरूप ज्ञान। प्रज्ञा का अर्थ है-नई-नई स्फुरणा वाला विशिष्ट ज्ञान या बुद्धि। स्मरण एव मनन रूप मतिज्ञान के भेद को मन कहते हैं।

श्रमण निर्ग्रन्थों की बुद्धि आगमो के परिशीलन से शुद्ध हो जाती है, फिर उन्हें कांक्षामोहनीय कर्म का वेदन कैसे हो सकता है ? इस आशय से गौतम स्वामी का प्रश्न है। तद्गत शब्दों का अर्थ इस प्रकार है-

ज्ञानान्तर–एक ज्ञान से दूसरा ज्ञान। यथा–पाँच ज्ञान क्यों कहे गये? अवधि और मनःपर्याय ये दो ज्ञान पृथक् क्यो? इत्यादि ज्ञान के सम्बन्ध मे इस प्रकार का सन्देह होना। दर्शनान्तर–सामान्य बोध, दर्शन है। यह इन्द्रिय और मन से होता है। फिर चक्षुदर्शन और अचक्षुदर्शन, ये दो भेद क्यों बताये हैं? इस प्रकार का समाधान न होने से शंकादि दोषों से ग्रस्त हो जाना। चारित्रान्तर–चारित्र विषयक शंका होना। जैसे–सामायिक चारित्र सर्वसावद्य विरति रूप है और महाव्रतरूप होने से छेदोपस्थापनिक चारित्र भी सावद्यविरति रूप है, फिर दोनों पृथक्-पृथक् क्यो कहे गये हैं? इस प्रकार की चारित्रविषयक शका भी कांक्षामोहनीय कर्मवेदन का कारण बनती है। लिंगान्तर–लिग = वेश के विषय में शंका उत्पन्न होना कि बीच के २२ तीर्थंकरो के साधुओं के लिए तो वस्त्र के रंग और परिमाण का कोई नियम नही है, फिर प्रथम और अन्तिम तीर्थंकर के साधुओ के लिए श्वेत एवं प्रमाणोपेत वस्त्र रखने का नियम क्यो? इस प्रकार की वेश (लिग) सम्बन्धी शका से कांक्षामोहकर्म वेदन होता है। प्रवचनान्तर–प्रवचनविषयक शंका, जैसे–प्रथम और अन्तिम तीर्थंकरो ने पाँच महाव्रतो का और बीच के २२ तीर्थंकरो ने चार महाव्रतों का प्रतिपादन किया, तीर्थंकरो मे यह प्रवचन (वचन) भेद क्यो? प्रावचनिकान्तर–प्रावचनिक का अर्थ है–प्रवचनों का ज्ञाता या अध्येता; बहुश्रुत साधक। दो प्रावचनिको के आचरण मे भेद देखकर शंका उत्पन्न होना। कल्पान्तर–जिनकल्प, स्थविरकल्प आदि कल्प वाले मुनियो का आचार-भेद देखकर शका करना कि यदि जिनकल्प कर्मक्षय का कारण है तो स्थविरकल्प का उपदेश क्यो? मार्गान्तर–मार्ग का अर्थ है–परम्परागत समाचारी पद्धति। भिन्न समाचारी देखकर शंका करना कि यह ठीक है या वह? मतान्तर–भिन्न-भिन्न आचार्यों के विभिन्न मतो को देखकर शंका करना। भंगान्तर–द्रव्यादि संयोग से होने वाले भगो को देखकर शका उत्पन्न होना। नयान्तर–एक ही वस्तु मे विभिन्न नयों की अपेक्षा से दो विरुद्ध धर्मों का कथन देखकर शका होना। नियमान्तर–साधु-जीवन मे सर्वसावद्य का प्रत्याख्यान होता ही है, फिर विभिन्न नियम क्यो; इस प्रकार शकाग्रस्त होना। प्रमाणान्तर–आगमप्रमाण के विषय मे शंका होना। जैसे–सूर्य पृथ्वी मे से निकलता दीखता है परन्तु आगम मे कहा है कि पृथ्वी से ८०० योजन ऊपर सचार करता है आदि। *(वृत्ति, पत्रांक ६०-६२)*

॥ प्रथम शतक : तृतीय उद्देशक समाप्त ॥

Elaboration—Technical terms in aphorism 14/3—*Tark*—process of rational thinking, such as "This should be like this." *Sanjna*—awareness of input through sense organs *Prajna*—intelligence enriched by new information *Man*—mental faculty having memory and ability to contemplate, it is a limb of *mati jnana* (ability to know the apparent form of things coming before the soul by means of five sense organs and the mind).

Gautam Swami's inquiry about ascetics is based on the accepted belief that the mind of an ascetic gets purified due to study of *Agams*, how then can they suffer *kanksha mohaniya karma* ? The technical terms included in the answer are explained as follows—

Jnanantar (diverse knowledge)—The doubts arising out of the awareness about diverse kinds of knowledge, such as why there are five kinds of knowledge ? Why are *avadhi* and *manah-paryav jnana* (extrasensory perception of the physical dimension and extrasensory perception and knowledge of thought process and thought-forms of other beings) different *Darshanantar* (diverse perception)—doubts such as

common perception is through sense organs and mind, then why two categories—visual perception and non-visual perception ? When such doubts are not removed suspicion is born. *Chaaritrantar* (diverse conduct)—to have doubts related to conduct. For example *Samayik Chaaritra* (equanimous conduct) is abstaining from all sinful activities. As *Chhedopasthapanik Charitra* (conduct of re-initiation after rectifying faults) is inclusive of great vows it is also abstaining from all sinful activities. Why then they have been defined separately ? Such doubts about conduct also cause experiencing of *kanksha mohaniya karma*. *Lingantar* (diverse dress code)—doubts about dress code. Why the dress code of specific length of white cloth for the disciples of the first and the last *Tirthankar* when there was no restriction of colour and size of dress for disciples of intervening 22 *Tirthankars* ? Such doubts also cause experiencing of *kanksha mohaniya karma*. *Pravachanantar* (diverse sermon)—Doubt about sermon For example the first and the last *Tirthankars* propagated five great vows whereas the intervening 22 *Tirthankars* propagated four great vows. Why is this difference in sermons ? *Pravachanikantar* (diverse preceptor)—*pravachanik* means a learned ascetic or *shravak* who has profound knowledge of sermons and scriptures. Doubts rising out of variation in conduct of two such scholars. *Kalpantar* (diverse special codes)—To have doubts after observing difference in conduct of ascetics observing special codes like *Jina kalp* and *Sthavir kalp*. Doubts like—if *Jina kalp* is the cause of destruction of *karmas* why preach about *Sthavir kalp* ? *Margantar* (diverse praxis)—*Marg* means traditional ascetic praxis. Rise of doubt by observing variations in praxis of different groups to decide which is correct. *Matantar* (diverse views)—To have doubt on different views of different *acharyas* *Bhangantar* (diverse alternatives)—doubt on observing alternatives caused by various combinations of substances and other factors. *Nayantar* (diverse stand-points)—doubt created by two opposing properties in a thing stated on the basis of different stand-points. *Niyamantar* (diverse rules)—doubt that when there is the rule of abstaining of all sinful activities in the life of an ascetic what is the need of so many different rules *Pramanantar* (diverse authenticity)—doubt about authentication on the basis of *Agams*. For example the sun appears to be rising from earth whereas *Agams* mention that it moves around 800 *Yojans* above the earth. *(Vritti, leaves 60-62)*

● END OF THE THIRD LESSON OF THE FIRST SHATAK ●

प्रथम शतक : चतुर्थ उद्देशक
FIRST SHATAK (Chapter One) : FOURTH LESSON

(कर्म-) प्रकृति (KARMA) PRAKRITI (KARMA SPECIES)

कर्म-प्रकृतियाँ KARMA SPECIES

१. [प्र.] कति णं भंते ! कम्मपगडीओ पण्णत्ताओ ?

[उ.] गोयमा ! अट्ठ कम्मपगडीओ पण्णत्ताओ। कम्मपगडीए पढमो उद्देसो नेयव्वो जाव–अणुभागो सम्मत्तो।

गाहा–कति पगडी ? १, कह बंधइ ? २, कतिहिं व ठाणेहिं बंधती पगडी ? ३।
कति वेदेति व पगडी ? ४, अणुभागो कतिविहो कस्स ? ५ ॥१॥

१. [प्र.] भगवन् ! कर्म–प्रकृतियाँ कितनी हैं ?

[उ.] गौतम ! कर्म–प्रकृतियाँ आठ है। यहाँ (प्रज्ञापनासूत्र के) 'कर्म–प्रकृति' नामक तेईसवें पद का प्रथम उद्देशक (यावत्) अनुभाग तक सम्पूर्ण जान लेना चाहिए।

गाथार्थ–कितनी कर्म–प्रकृतियाँ है ? जीव किस प्रकार कर्म बाँधता है ? कितने स्थानो से कर्म–प्रकृतियों को बाँधता है ? कितनी प्रकृतियो का वेदन करता है ? किस प्रकृति का कितने प्रकार का अनुभाग (रस) है ?

1. [Q.] *Bhante* ! How many are the species of *karma* ?

[Ans.] Gautam ! There are eight species of *karma* (*karma-prakritis*). Here *'Karma-prakriti'*, the first lesson of the twenty third chapter of *Prajnapana Sutra* should be read in full up to *anubhag*

The verse—How many are the *karma*-species (*karma prakriti*) ? How does a being acquire bondage ? From how many places comes the bondage of *karmas* ? How many species are experienced ? Which species has how many types of potencies (*anubhag*) ?

उपस्थान–उपक्रमणादि प्ररूपणा UPWARD MOVEMENT

२. [प्र. १] जीवे णं भंते ! मोहणिज्जेणं कडेणं कम्मेणं उदिण्णेणं उवट्ठाएज्जा ?

[उ.] हंता, उवट्ठाएज्जा।

[प्र. २] से भंते ! किं वीरियत्ताए उवट्ठाएज्जा ? अवीरियत्ताए उवट्ठाएज्जा ?

[उ.] गोयमा ! वीरियत्ताए उवट्ठाएज्जा, नो अवीरियत्ताए उवट्ठाएज्जा।

२. [प्र. १] भगवन्! (पूर्व–) जब मोहनीय कर्म उदय में आया हो, तब जीव उपस्थान–परलोक की क्रिया करता है?

[उ.] हाँ, गौतम! वह उपस्थान करता है।

[प्र. २] भगवन्! क्या जीव वीर्यता से उपस्थान करता है या अवीर्यता से?

[उ.] गौतम! जीव वीर्यता से उपस्थान करता है, अवीर्यता से नहीं करता।

2. [Q. 1] *Bhante* ! On fruition of *Mohaniya karma* (deluding *karma*) does a living being endeavour for upward movement (*upasthan*) ?

[Ans.] Yes, Gautam ! He endeavours for upward movement (*upasthan*).

[Q. 2] *Bhante* ! Does he endeavour for upward movement (*upasthan*) with the help of potency (*viryata*) or non-potency (*aviryata*) ?

[Ans.] Gautam ! A being endeavours for upward movement (*upasthan*) with the help of potency (*viryata*) and not non-potency (*aviryata*).

[प्र. ३] जदि वीरियत्ताए उवट्ठाएज्जा किं बालवीरियत्ताए उवट्ठाएज्जा ? पंडितवीरियत्ताए उवट्ठाएज्जा ? बाल–पंडितवीरियत्ताए उवट्ठाएज्जा ?

[उ.] गोयमा ! बालवीरियत्ताए उवट्ठाएज्जा, णो पंडितवीरियत्ताए उवट्ठाएज्जा, नो बालपंडित–वीरियत्ताए उवट्ठाएज्जा।

[प्र. ३] भगवन्! यदि जीव वीर्यता से उपस्थान करता है, तो क्या बालवीर्यता से करता है, अथवा पण्डितवीर्यता से या बाल–पण्डितवीर्यता से करता है?

[उ.] गौतम! वह बालवीर्यता से उपस्थान करता है, किन्तु पण्डितवीर्यता से या बाल–पण्डितवीर्यता से उपस्थान नही करता।

[Q. 3] *Bhante* ! When a living being endeavours for upward movement (*upasthan*) with the help of potency (*viryata*), does he do that with an ignorant's potency (*baal-viryata*), a pundit's potency (*pundit-viryata*) or an ignorant-pundit's potency (*baal-pundit-viryata*) ?

[Ans.] Gautam ! He endeavours for upward movement (*upasthan*) with the help of an ignorant's potency (*baal-viryata*), and not with that of a pundit's potency (*pundit-viryata*) or an ignorant-pundit's potency (*baal-pundit-viryata*).

३. [प्र. १] जीवे णं भंते ! मोहणिज्जेणं कडेणं कम्मेणं उदिण्णेणं अवक्कमेज्जा ?

[उ.] हंता, अवक्कमेज्जा।

३. [प्र. १] भगवन् ! मोहनीय कर्म जब उदय में आया हो, तब क्या जीव अपक्रमण (पतन) करता है, अर्थात्-उत्तम गुणस्थान से हीन गुणस्थान में जाता है?

[उ.] हाँ, गौतम ! अपक्रमण करता है।

3. [Q. 1] *Bhante* ! On fruition of *Mohaniya karma* (deluding *karma*) does a living being endeavour for downward movement (*apakraman*) (from a higher *Gunasthan* to a lower one)?

[Ans.] Yes, Gautam ! He endeavours for downward movement (*apakraman*).

[प्र. २] से भंते ! जाव बालपंडियवीरियत्ताए अवक्कमेज्जा ३ ?

[उ.] गोयमा ! बालवीरियत्ताए अवक्कमेज्जा, नो पंडितवीरियत्ताए अवक्कमेज्जा, सिय बालपंडितवीरियत्ताए अवक्कमेज्जा।

[प्र. २] भगवन् ! वह बालवीर्यता से अपक्रमण करता है, अथवा पण्डितवीर्यता से या बाल-पण्डितवीर्यता से?

[उ.] गौतम ! वह बालवीर्यता से अपक्रमण करता है, पण्डितवीर्यता से नही करता; कदाचित् बाल-पण्डितवीर्यता से अपक्रमण करता है।

[Q. 2] *Bhante* ! Does he do downward movement with an ignorant's potency (*baal-viryata*), a pundit's potency (*pundit-viryata*) or an ignorant pundit's potency (*baal-pundit-viryata*)?

[Ans.] Gautam ! He endeavours for downward movement (*apakraman*) with the help of an ignorant's potency (*baal-viryata*), and not with that of a pundit's potency (*pundit-viryata*) but sometimes with that of an ignorant-pundit's potency (*baal-pundit-viryata*)

४. जहा उदिण्णेणं दो आलावगा तहा उवसंतेण वि दो आलावगा भाणियव्वा। नवरं उवट्ठाएज्जा पंडितवीरियत्ताए, अवक्कमेज्जा बाल-पंडितवीरियत्ताए।

४. जैसे उदीर्ण (उदय मे आये हुए) पद के साथ दो आलापक कहे है, वैसे ही 'उपशान्त' पद के साथ दो आलापक कहने चाहिए। विशेषता यह है कि यहाँ जीव पण्डितवीर्यता से उपस्थान करता है और बाल-पण्डितवीर्यता से अपक्रमण करता है।

4. Like the aforesaid two statements for fruition of *karmas*, two statements should be repeated for pacification of *karmas* The difference is that here a being endeavours for upward movement with the help of a pundit's potency and downward movement with the help of ignorant pundit's potency.

५. [प्र. १] से भंते ! किं आयाए अवक्कमइ ? अणायाए अवक्कमइ ?

[उ.] गोयमा ! आयाए अवक्कमइ, णो अणायाए अवक्कमइ।

५. [प्र. १] भगवन् ! क्या जीव आत्मा (स्व) से अपक्रमण करता है अथवा अनात्मा (पर) से करता है ?

[उ.] गौतम ! आत्मा से अपक्रमण करता है, अनात्मा से नहीं करता।

5. [Q. 1] *Bhante* ! Does a living being do this downward movement by soul (*atma* or self) or non-soul (*anatma* or the other) ?

[Ans.] Gautam ! He does this downward movement by soul (*atma* or self) and not by non-soul (*anatma* or the other) ?

[प्र. २] मोहणिज्जं कम्मं वेदेमाणे से कहमेयं भंते ! एवं ?

[उ.] गोयमा ! पुव्विं से एयं एवं रोयइ इदाणिं से एयं एवं नो रोयइ, एवं खलु एयं एवं।

[प्र. २] भगवन् ! मोहनीय कर्म को वेदता हुआ यह (जीव) इस प्रकार क्यो होता है अर्थात् अपक्रमण क्यो करता है ?

[उ.] गौतम ! पहले उसे इस प्रकार-(जिनेन्द्र भगवान द्वारा कथित तत्त्व) रुचता है और अब उसे इस प्रकार नहीं रुचता; इस कारण यह अपक्रमण करता है।

[Q. 2] *Bhante* ! While experiencing *mohaniya karma* (deluding *karma*) why does this happen to a living being (why does he move downward) ?

[Ans.] Gautam ! Earlier he had a liking for this (Word of the *Jina*) but now he does not have that liking. For this reason he moves downward.

विवेचन : मोहनीय का प्रासंगिक अर्थ–यहाँ मोहनीय कर्म का अर्थ साधारण मोहनीय नहीं, अपितु 'मिथ्यात्वमोहनीय कर्म' विवक्षित है। श्री गौतम स्वामी का आशय यह है कि कई अज्ञानी भी उपस्थान क्रिया–परलोक के लिए बहुत उग्र एव कठोर क्रिया करते है अत. क्या वे मिथ्यात्व का उदय होने पर भी परलोक साधन के लिए क्रिया करते है या मिथ्यात्व के अनुदय से ? भगवान का उत्तर स्पष्ट है कि मिथ्यात्व मोहनीय का उदय होने पर जीव परलोक सम्बन्धी क्रिया करते है।

वीर्य तीन प्रकार का है–बालवीर्य, पण्डितवीर्य और बाल-पण्डितवीर्य। जो मिथ्यादृष्टि एवं अज्ञानी है, वह बाल है, उसका वीर्य (पुरुषार्थ) बालवीर्य है। जो जीव सर्वपापों का त्यागी है, वह पण्डित है, उसका वीर्य पण्डितवीर्य है। जिन त्याज्य कार्यों को मोहकर्म के उदय से त्याग नही सका, किन्तु त्यागने योग्य समझता है, वह बालपण्डित है, उसका वीर्य बाल-पण्डितवीर्य है।

उपस्थान क्रिया और अपक्रमण क्रिया–मिथ्यात्वमोहनीय का उदय होने पर जीव के द्वारा उपस्थान क्रिया बालवीर्य द्वारा ही होती है। उपस्थान की विपक्षी क्रिया-अपक्रमण है। अपक्रमण क्रिया का अर्थ है–उच्च गुणस्थान से नीचे गुणस्थान को प्राप्त करना। इसका तात्पर्य यह है कि जब जीव के मिथ्यात्व का उदय हो, तब वह सम्यक्त्व से, संयम (सर्वविरति) से, या देशविरति (सयम) से वापस मिथ्यादृष्टि बन जाता है। पण्डितवीर्यत्व

से वह अपक्रमण नहीं करता (वापस लौटता नहीं), कदाचित् चारित्रमोहनीय का उदय हो तो सर्वविरति (संयम) से पतित होकर बाल-पण्डितवीर्य द्वारा देशविरति श्रावक हो जाता है। निष्कर्ष यह है कि मिथ्यात्व-मोहकर्मवश जीव अपने ही पुरुषार्थ से गिरता है एव मिथ्यात्वमोहनीय कर्म का बन्ध धर्म आदि पर अरुचि-अश्रद्धा रखने से होता है।

Elaboration—Contextual meaning of *mohaniya karma*—Here *mohaniya karma* means *mithyatva mohaniya karma* (righteousness deluding *karma*) and not the common *mohaniya karma*. Many ignorant too indulge in endeavour for upward movement (towards higher spiritual levels) and do rigorous and harsh practices for the next birth. Shri Gautam Swami desires to know whether they do these practices on fruition of *mithyatva mohaniya karma* or on non-fruition (*anudaya*) ? *Bhagavan's* answer is very clear that they do these practices only on fruition of *mithyatva mohaniya karma*.

Virya (potency)—It is of three kinds—*baal-virya* (ignorant's potency), *pundit-virya* (pundit's potency) and *baal-pundit-viryata* (ignorant-pundit's potency) One who is unrighteous and ignorant is called *baal*; his potency is *baal-virya* (ignorant's potency) One who abstains from all sinful acts is a *pundit*, his potency is *pundit-virya* (pundit's potency). One who does not abstain from sinful activity due to fruition of *mohaniya karma* although he is aware that he should abstain from that activity is *baal-pundit*, his potency is *baal-pundit-virya* (ignorant-pundit's potency).

Upasthan kriya and *apakraman kriya*—The endeavour of upward movement (*upasthan kriya*) on fruition of *mithyatva mohaniya karma* (righteousness deluding *karma*) is done only with the help of *baal-virya* (ignorant's potency) *Apakraman kriya* is the opposite of *upasthan kriya*; it means downward movement from a higher *Gunasthan* to a lower one In other words a living being on fruition of *mithyatva mohaniya karma* regresses from the levels of *samyaktva* (righteousness), *samyam* (complete abstainment) or *desh-virati* (partial abstainment) to *mithyatva* (unrighteousness). He does not regress through *pundit-virya* (pundit's potency) Sometimes on fruition of *charitra mohaniya* (conduct deluding) *karma* he regresses from the level of complete abstainment through *pundit-virya* (pundit's potency) and becomes a *shravak* with partial abstainment. Conclusion is that a living being under the influence of *mithyatva mohaniya karma* (righteousness deluding *karma*) falls of his own endeavour And the bondage of *mithyatva mohaniya karma*

(righteousness deluding *karma*) is acquired due to lack of faith and interest in religion and other virtues.

कृतकर्म भोगे बिना मोक्ष नहीं NO LIBERATION WITHOUT SUFFERING THE FRUITS OF KARMAS

६. [प्र.] से नूणं भंते ! नेरइयस्स वा, तिरिक्खजोणियस्स वा, मणूसस्स वा, देवस्स वा जे कडे पावे कम्मे, नत्थि णं तस्स अवेदइत्ता मोक्खो ?

[उ.] हंता, गोयमा ! नेरइयस्स वा, तिरिक्खजोणियस्स वा, मणूसस्स वा, देवस्स वा जे कडे पावे कम्मे, नत्थि णं तस्स अवेदइत्ता मोक्खो।

[प्र.] से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चति नेरइयस्स वा जाव मोक्खो ?

[उ.] एवं खलु मए गोयमा ! दुविहे कम्मे पण्णत्ते, तं जहा–पदेसकम्मे य, अणुभागकम्मे य। तत्थ णं जं तं पदेसकम्मं तं नियमा वेदेति, तत्थ णं जं तं अणुभागकम्मं तं अत्थेगइयं वेदेति, अत्थेगइयं नो वेएइ। णायमेतं अरहता, सुतमेतं अरहता, विण्णायमेतं अरहता–"इमं कम्मं अयं जीवे अब्भोवगमियाए वेदणाए वेइस्सइ, इमं कम्मं अयं जीवे उवक्कमियाए वेदणाए वेइस्सइ। अहाकम्मं अहानिकरणं जहा जहा तं भगवता दिट्ठं तहा तहा तं विप्परिणमिस्सतीति। से तेणट्ठेणं गोयमा ! नेरइयस्स वा ४ जाव मोक्खो।"

६. [प्र.] भगवन् ! नारक, तिर्यंचयोनिक, मनुष्य या देव ने जो पापकर्म किये है, उन्हें भोगे (वेदे) बिना क्या मोक्ष नही होता ?

[उ.] हाँ, गौतम ! नारक, तिर्यंच, मनुष्य और देव ने जो पापकर्म किये है, उन्हें भोगे बिना मोक्ष नही होता।

[प्र.] भगवन् ! ऐसा आप किस कारण से कहते है कि नारक यावत् देव को कृतकर्म भोगे बिना मोक्ष नही होता ?

[उ.] गौतम ! मैने कर्म के दो भेद बताए हैं, वे इस प्रकार हैं–प्रदेशकर्म और अनुभागकर्म। इनमें जो प्रदेशकर्म है, वह अवश्य (नियम से) भोगना पडता है और जो अनुभागकर्म है, वह कुछ वेदा (भोगा) जाता है, कुछ नहीं वेदा जाता। यह बात अर्हन्त द्वारा ज्ञात है, स्मृत (प्रतिपादित) है, और विज्ञात है, कि यह जीव इस कर्म को आभ्युपगमिक वेदना से वेदेगा और यह जीव इस कर्म को औपक्रमिक वेदना से वेदेगा। बाँधे हुए कर्मों के अनुसार, निकरणो के अनुसार जैसा–जैसा भगवान ने देखा है, वैसा–वैसा वह विपरिणाम पायेगा। इसलिए गौतम ! इस कारण से मै ऐसा कहता हूँ कि यावत् किये हुए कर्मों को भोगे बिना नारक, तिर्यंच, मनुष्य या देव को मोक्ष नही है।

6. [Q.] *Bhante* ! Do infernal beings, animals, human beings and divine beings attain liberation without experiencing the *karmic* bondage acquired through sinful deeds ?

[Ans.] Gautam ! Infernal beings, animals, human beings and divine beings do not attain liberation without experiencing the *karmic* bondage acquired through sinful deeds.

[Q.] *Bhante* ! Why do you say that infernal beings, ... and so on up to... divine beings do not attain liberation without experiencing the *karmic* bondage acquired through sinful deeds.

[Ans.] I have stated two types of *karmas—pradesh karma* (*karmas* fused with soul-space-points) and *anubhag karma* (intensity determining *karmas*). Out of these the *pradesh karmas* have to be experienced (as a rule) and the *anubhag karmas* are partly experienced and partly not The fact that this being will suffer (*vedan*) the fruits of these *karmas* through voluntary and conscious experience (*aabhyupagamik vedan*) and that being will suffer (*vedan*) the fruits of these *karmas* through involuntary and natural experience (*aupakramik vedan*) is known (*jnata*), propagated (*shrut*) and comprehended (*vijnat*) by the *Arhant*. He will face the consequences based on the nature of acquired *karmas* (*yathakarma*) and their parameters (of time, place etc.) (*yathanikaran*) as has been seen by *Bhagavan*. That is why, Gautam ! I say that infernal beings, ... and so on up to . divine beings do not attain liberation without experiencing the *karmic* bondage acquired through sinful deeds

विवेचन : प्रदेशकर्म–जीव के प्रदेशो में ओतप्रोत हुए दूध-पानी की तरह एकमेक हुए कर्मपुद्गल। प्रदेशकर्म निश्चय ही भोगे जाते हैं। विपाक अर्थात् अनुभव न होने पर भी प्रदेशकर्म का भोग अवश्य होता है। उन प्रदेशकर्मों का अनुभव मे आने वाला रस अनुभागकर्म है। अनुभागकर्म कोई वेदा जाता है और कोई नही वेदा जाता। उदाहरणार्थ, जब आत्मा मिथ्यात्व का क्षयोपशम करता है, तब प्रदेश से तो वेदता है, किन्तु अनुभाग (विपाक) से नही वेदता। यही बात अन्य कर्मों के विषय में समझनी चाहिए। चारो गति के जीव कृतकर्म को अवश्य भोगते हैं, परन्तु किसी कर्म को विपाक से भोगते है और किसी को प्रदेश से भोगते है। स्वेच्छापूर्वक, ज्ञानपूर्वक, कर्मफल भोगना आभ्युपगमिकी वेदना है। जो कर्म अपना अबाधाकाल पूर्ण होने पर स्वयं ही उदय मे आते हैं, अथवा उदीरणा द्वारा उदय मे लाये जाते हैं, उन कर्मों का फल भोगना औपक्रमिकी वेदना है।

यथाकर्म, यथानिकरण का अर्थ–यथाकर्म यानी जो कर्म जिस रूप में बाँधा है, उसी रूप से और यथानिकरण यानी विपरिणाम के कारणभूत देश, काल आदि कारणों की मर्यादा का उल्लघन न करके।

Elaboration—*Pradesh karma—karma* particles liberally fused and assimilated with soul-space-points like water and milk. The consequences of these *karmas* have to be inevitably experienced, irrespective of being aware or not. The particles that lend intensity which brings the fructifying *karmas* in the range of awareness are called *anubhag karma* (intensity determining *karmas*). Some of these *anubhag karmas* are experienced and some not. For example, when soul does destruction-cum-pacification (*kshayopasham*) of *mithyatva mohaniya karma* it experiences the *pradesh karmas* and not the *anubhag karmas*. This is true for other

karmas also. Beings of all the four genuses essentially experience the fruits of acquired *karmas*. However, some of these are experienced as *pradesh karmas* and some as *anubhag karmas*. To suffer (*vedan*) the fruits of these *karmas* through voluntary and conscious experience is called *aabhyupagamik vedan*. To suffer (*vedan*) the fruits of these *karmas* involuntarily when they come to fruition naturally at the end of their period of dormancy is called *aupakramik vedan*

Yathakarma—in the same form or nature as it was acquired. *Yathanikaran*—not circumventing the causal parameters of place, time and status.

पुद्‌गल स्कन्ध और जीव के सम्बन्ध में शाश्वत प्ररूपणा ETERNALITY OF MATTER AND SOUL

७. [प्र.] एस णं भंते ! पोग्गले अतीतमणंतं सासयं समयं 'भुवि' इति वत्तव्वं सिया ?

[उ.] हंता, गोयमा ! एस णं पोग्गले अतीतमणंतं सासयं समयं 'भुवि' इति वत्तव्वं सिया।

८. [प्र.] एस णं भंते ! पोग्गले पडुप्पन्नं सासयं समयं 'भवति' इति वत्तव्वं सिया ?

[उ.] हंता, गोयमा ! तं चेव उच्चारेयव्वं।

९. [प्र.] एस णं भंते ! पोग्गले अणागतमणंतं सासयं समयं 'भविस्सति' इति वत्तव्वं सिया ?

[उ.] हंता, गोयमा ! तं चेव उच्चारेतव्वं।

१०. एवं खंदेण वि तिण्णि आलावगा।

११. एवं जीवेण वि तिण्णि आलावगा भाणितव्वा।

७. [प्र.] भगवन् ! क्या यह पुद्‌गल परमाणु अतीत, अनन्त, शाश्वतकाल मे था—ऐसा कहा जा सकता है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! यह पुद्‌गल अतीत, अनन्त, शाश्वतकाल में था, ऐसा कहा जा सकता है।

८. [प्र.] भगवन् ! क्या यह पुद्‌गल वर्तमान शाश्वत—सदा रहने वाले काल में है, ऐसा कहा जा सकता है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! ऐसा कहा जा सकता है।

९. [प्र.] भगवन् ! क्या यह पुद्‌गल अनन्त और शाश्वत भविष्यकाल मे रहेगा, ऐसा कहा जा सकता है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! ऐसा कहा जा सकता है।

१०. इसी प्रकार 'स्कन्ध' के साथ भी तीन (त्रिकाल सम्बन्धी) आलापक कहने चाहिए।

११. इसी प्रकार 'जीव' के साथ भी तीन आलापक कहने चाहिए।

7. [Q.] *Bhante* ! Can it be said that this ultimate particle of matter (*pudgala paramanu*) existed in the past since endless eternal time ?

[Ans.] Gautam ! It can be said that this ultimate particle of matter (*pudgala paramanu*) existed in the past since endless eternal time.

8. [Q.] *Bhante* ! Can it be said that this ultimate particle of matter (*pudgala paramanu*) exists at present since endless eternal time ?

[Ans.] Gautam ! It can be said that this ultimate particle of matter (*pudgala paramanu*) exists at present since endless eternal time.

9. [Q.] *Bhante* ! Can it be said that this ultimate particle of matter (*pudgala paramanu*) will exist in the future for endless eternal time ?

[Ans.] Gautam ! It can be said that this ultimate particle of matter (*pudgala paramanu*) will exist in the future for endless eternal time.

10. In the same way three statements (for past, present and future) should be repeated for an aggregate of ultimate particles (*skandh*).

11. In the same way three statements (for past, present and future) should be repeated for soul (*jiva*).

छद्मस्थ मनुष्य की मुक्ति LIBERATION OF A CHHADMASTH

१२. [प्र.] छउमत्थे णं भंते ! मणूसे अतीतमणंतं सासतं समयं केवलेणं संजमेणं, केवलेणं संवरेणं, केवलेणं बंभचेरवासेणं, केवलाहिं पवयणमाताहिं सिज्झिंसु बुज्झिंसु जाव सव्वदुक्खाणमंतं करिंसु ?

[उ.] गोयमा ! नो इणट्ठे समट्ठे।

[प्र.] से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ तं चेव जाव अंतं करेंसु ?

[उ.] गोयमा ! जे केइ अंतकरा वा अंतिमसरीरिया वा सव्वदुक्खाणमंतं करेंसु वा करेंति वा करिस्संति वा सव्वे ते उप्पन्ननाण-दंसणधरा अरहा जिणे केवली भवित्ता ततो पच्छा सिज्झंति बुज्झंति मुच्चंति परिनिव्वायंति सव्वदुक्खाणमंतं करेंसु वा करेंति वा करिस्संति वा, से तेणट्ठेणं गोयमा ! जाव सव्वदुक्खाणमंतं करेंसु।

१३. पडुप्पन्ने वि एवं चेव, नवरं 'सिज्झति' भाणियव्वं। १४. अणागते वि एवं चेव, नवरं 'सिज्झिस्संति' भाणियव्वं।

१२. [प्र.] भगवन् ! क्या बीते हुए अनन्त शाश्वतकाल मे छद्मस्थ मनुष्य केवल सयम से, केवल सवर से, केवल ब्रह्मचर्यवास से और केवल (अष्ट) प्रवचनमाता (के पालन) से सिद्ध हुआ है, बुद्ध हुआ है, यावत् समस्त दु.खो का अन्त करने वाला हुआ है ?

[उ.] गौतम ! ऐसा सम्भव नही है।

[प्र.] भगवन् ! किस कारण से आप ऐसा कहते हैं कि पूर्वोक्त छद्मस्थ मनुष्य समस्त दुःखों का अन्तकर नहीं हुआ ?

[उ.] गौतम ! जो भी कोई मनुष्य कर्मों का अन्त करने वाले, चरमशरीरी हुए हैं, अथवा समस्त दुःखों का जिन्होंने अन्त किया है, जो अन्त करते हैं या करेंगे, वे सब उत्पन्न ज्ञान-दर्शनधारी (केवलज्ञानी-केवलदर्शनी), अर्हन्त, जिन और केवली होकर तत्पश्चात् सिद्ध हुए है, बुद्ध हुए है, मुक्त हुए है, परिनिर्वाण को प्राप्त हुए हैं और उन्होने समस्त दुःखों का अन्त किया है, वे ही करते हैं और करेंगे, इसी कारण से हे गौतम ! ऐसा कहा है कि यावत् समस्त दुःखो का अन्त किया।

१३. वर्तमानकाल मे भी इसी प्रकार जानना। विशेष यह है कि 'सिद्ध होते हैं', ऐसा कहना चाहिए। १४. भविष्यकाल मे भी इसी प्रकार जानना। विशेष यह है कि 'सिद्ध होगे', ऐसा कहना चाहिए।

12. [Q.] *Bhante* ! In the endless eternal past has a *chhadmasth* person (one who is short of omniscience due to residual *karmic* bondage) been able to get perfected (*Siddha*), enlightened (*buddha*), ... and so on up to... and end all miseries only by ascetic-discipline (*samyam*), only by blocking inflow of *karmas* (*samvar*), only by absolute celibacy or only by observing eight *pravachan-mata* (five *samitis* or self-regulations and three *guptis* or self-restraints) ?

[Ans.] Gautam ! That is not possible.

[Q.] *Bhante* ! Why do you say so. and so on up to.. and did not end all miseries ?

[Ans.] Gautam ! Whoever has ended all *karmas*, has reincarnated for the last time (*charam-shariri*), or did, do or will end all miseries, they all have first acquired ultimate knowledge and perception to become *Arhant, Jina* or *Kevali* (omniscient) and then got perfected (*Siddha*), enlightened (*buddha*), liberated (*mukta*), free of cyclic rebirth (*parinivrit*) and ended all miseries. Only they do that and only they will do that. That is why, Gautam ! It is said so and so on up to .. did end all miseries.

13. Repeat the same in context of the present time, only change past tense to present tense. **14.** Repeat the same in context of the future time, only change past tense to future tense

१५. जहा छउमत्थो तहा आहोहिओ वि, तहा परमाहोहिओ वि। तिण्णि तिण्णि आलावगा भाणियव्वा।

१५. जैसा छद्मस्थ के विषय मे कहा है, वैसा ही आधोवधिक (अवधिज्ञानी) और परमाधोवधिक (परमावधिज्ञानी) के विषय मे जानना चाहिए और उसके तीन-तीन आलापक कहने चाहिए।

15. Three statements each, as stated about *chhadmasth* should be repeated for normal *avadhi jnani* (*aadhovadhik*) and ultimate *avadhi jnani* (*paramadhovadhik*) (*Avadhi Jnana* = knowledge acquired through extrasensory perception of the physical dimension, something akin to clairvoyance)

केवली की मुक्ति LIBERATION OF OMNISCIENT

१६. [प्र.] केवली णं भंते ! मणूसे अतीतमणंतं सासयं समयं जाव अंतं करेंसु ?

[उ.] हंता, सिज्झिंसु जाव अंतं करेंसु। एते तिण्णि आलावगा भाणियव्वा छउमत्थस्स जहा, नवरं सिज्झिंसु, सिज्झंति, सिज्झिस्संति।

१६. [प्र.] भगवन् ! बीते हुए अनन्त शाश्वतकाल मे केवली मनुष्य ने यावत् सर्व-दुःखो का अन्त किया है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! वह सिद्ध हुआ, यावत् उसने समस्त दु:खो का अन्त किया है। यहाँ भी छद्मस्थ के समान ये तीन आलापक कहने चाहिए। विशेष यह है कि सिद्ध हुआ, सिद्ध होता है और सिद्ध होगा, इस प्रकार तीन आलापक कहने चाहिए।

16. [Q.] *Bhante* ! In the endless eternal past has a *kevali* person (the omniscient) been able to get perfected (*Siddha*), enlightened (*buddha*), and so on up to.. end all miseries ?

[Ans.] Yes, Gautam ! He got perfected (*Siddha*), enlightened (*buddha*), . and so on up to... end all miseries Here also the three statements (for past, present and future) as stated in context of *chhadmasth* should be repeated with change in tense

१७. [प्र.] से नूणं भंते ! तीतमणंतं सासयं समयं, पडुप्पन्नं वा सासयं समयं, अणागतमणंतं वा सासयं समयं जे केइ अंतकरा वा अंतिमसरीरिया वा सव्वदुक्खाणमंतं करेंसु वा करेंति वा, करिस्संति वा सव्वं ते उप्पन्ननाणदंसणधरा अरहा जिणे केवली भवित्ता तओ पच्छा सिज्झंति जाव अंतं करेस्संति वा ?

[उ.] हंता, गोयमा ! तीतमणंतं सासतं समयं जाव अंतं करेस्संति वा।

१७. [प्र.] भगवन् ! बीते हुए अनन्त शाश्वतकाल मे, वर्तमान शाश्वतकाल मे और अनन्त शाश्वत भविष्यकाल मे जिन अन्तकरो ने अथवा चरमशरीरी पुरुषो ने समस्त दु खो का अन्त किया है, करते है या करेंगे, क्या वे सब उत्पन्न ज्ञान-दर्शनधारी, अर्हन्त, जिन और केवली होकर तत्पश्चात् सिद्ध, बुद्ध आदि होते है, यावत् सब दु:खो का अन्त करेगे ?

[उ.] हाँ, गौतम ! बीते हुए अनन्त शाश्वतकाल मे यावत् सब दु:खो का अन्त करेगे।

17. *Bhante* ! In the past, present and future endless eternal time those who have ended all *karmas* or have reincarnated for the last time

(*charam-shariri*) and did, do or will end all miseries, did, do or will they all first acquire ultimate knowledge and perception to become *Arhant, Jina* or *Kevali* (omniscient) and then did, do or will get perfected (*Siddha*), enlightened (*buddha*), ... and so on up to... will end all miseries ?

[Ans.] Yes, Gautam ! In the past, present and future endless eternal time... and so on up to .. will end all miseries.

१८. [प्र.] से नूणं भंते ! उप्पन्ननाण–दंसणधरे अरहा जिणे केवली 'अलमत्थु' त्ति वत्तव्वं सिया ?

[उ.] हंता गोयमा ! उप्पन्ननाण–दंसणधरे अरहा जिणे केवली 'अलमत्थु' त्ति वत्तव्वं सिया।

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति०

॥ पढमे सए : चउत्थो उद्देओ समत्तो ॥

१८. [प्र.] भगवन् ! वह उत्पन्न ज्ञान–दर्शनधारी, अर्हन्त, जिन और केवली 'अलमस्तु' अर्थात्–पूर्ण है, ऐसा कहा जा सकता है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! वह उत्पन्न ज्ञान–दर्शनधारी, अर्हन्त, जिन और केवली पूर्ण (अलमस्तु) है, ऐसा कहा जा सकता है।

(गौतम) 'हे भगवन् ! यह ऐसा ही है, भगवन् ! ऐसा ही है।'

॥ प्रथम शतक : चतुर्थ उद्देशक समाप्त ॥

18. *Bhante* ! Can it be said that those who have acquired ultimate knowledge and perception to become *Arhant, Jina* or *Kevali* (omniscient) are perfect (*almastu*) ?

[Ans.] Yes, Gautam ! It can be said that those who have acquired ultimate knowledge and perception to become *Arhant, Jina* or *Kevali* (omniscient) are perfect (*almastu*).

(Gautam)—"Indeed that is so. Indeed that is so "

● END OF THE FOURTH LESSON OF THE FIRST SHATAK ●

प्रथम शतक : पंचम उद्देशक
FIRST SHATAK (Chapter One) : FIFTH LESSON

पृथ्वी PRITHVI (HELL)

नरकावास संख्या NUMBER OF INFERNAL ABODES

१. [प्र.] कति णं भंते ! पुढवीओ पण्णत्ताओ ?

[उ.] गोयमा ! सत्त पुढवीओ पण्णत्ताओ। तं जहा–रयणप्पभा जाव तमतमा।

१. [प्र.] भगवन् ! (अधोलोक मे) कितनी पृथ्वियाँ है ?

[उ.] गौतम ! सात पृथ्वियाँ है। वे यथा–रत्नप्रभा से लेकर यावत् तमस्तम प्रभा तक।

1. [Q.] *Bhante* ! How many hells (*prithvis*) are there (in the lower world) ?

[Ans.] Gautam ! There are seven hells—Ratna-prabha . and so on up to Tamastamah-prabha.

२. [प्र.] इमी से णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए कति निरयावाससयसहस्सा पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! तीसं निरयावाससयसहस्सा पण्णत्ता।

गाहा–तीसा य पण्णवीसा पण्णरस दसेव या सयसहस्सा।
तिण्णेगं पंचूणं पंचेव अणुत्तरा निरया॥१॥

२. [प्र.] भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी मे कितने लाख नारकावास (नैरयिको के रहने के स्थान) है ?

[उ.] गौतम ! रत्नप्रभा पृथ्वी मे तीस लाख नारकावास है।

(गाथा) वे इस प्रकार है–प्रथम पृथ्वी (नरकभूमि) मे तीस लाख, दूसरी मे पच्चीस लाख, तीसरी मे पन्द्रह लाख, चौथी मे दस लाख, पाँचवी मे तीन लाख, छठी मे ५ कम एक लाख और सातवी मे केवल पाँच नारकावास है।

2. [Q.] *Bhante* ! How many hundred thousand infernal abodes (*narak-vaas*) are there in this Ratnaprabha *prithvi* ?

[Ans.] Gautam ! There are thirty hundred thousand infernal abodes (*narak-vaas*) in Ratnaprabha *prithvi*.

The verse—In the first hell thirty hundred thousand, in the second twenty five hundred thousand, in the third fifteen hundred thousand, in the fourth ten hundred thousand, in the fifth three hundred thousand, in the sixth five short of one hundred thousand and in the seventh just five infernal abodes are there

३. [प्र.] केवतिया णं भंते ! असुरकुमारावाससतसहस्सा पण्णत्ता ? एवं–

[उ.] चोसट्ठी असुराणं, चउरासीई य होंति नागाणं।
बावत्तरी सुवण्णाणं, वाउकुमाराणं छण्णउती॥२॥
दीव–दिसा–उदहीणं विज्जुकुमारिंद–थणिय–मग्गीणं।
छण्हं पि जुयलगाणं छावत्तरिमो सतसहस्सा॥३॥

३. [प्र.] भगवन् ! असुरकुमारों के कितने लाख आवास है ?

[उ.] गौतम ! असुरकुमारो के चौसठ लाख आवास (रहने के स्थान) है। इसी प्रकार नागकुमारों के चौरासी लाख, सुपर्णकुमारो के ७२ लाख, वायुकुमारों के ९६ लाख तथा द्वीपकुमार, दिक्कुमार, उदधिकुमार, विद्युत्कुमार, स्तनितकुमार और अग्निकुमार, इन छह युगलकों (दक्षिणदिशावर्ती और उत्तरदिशावर्ती दोनो के) ७६-७६ लाख आवास है। [सब मिलाकर ७,७२,००,००० सात करोड़ बहत्तर लाख आवास है]

3. [Q.] *Bhante* ! How many hundred thousand are the abodes of Asur Kumars (a kind of lower gods) ?

[Ans.] Gautam ! There are sixty four hundred thousand abodes of Asur Kumars In the same way Naag Kumars have eighty four hundred thousand, Suparna Kumars have seventy two hundred thousand, Vayu Kumars have ninety six hundred thousand, and each of the six pairs (southern and northern) of Dveep Kumars, Dikkumars, Udadhi Kumars, Vidyut Kumars, Stanit Kumars and Agni Kumars have seventy four hundred thousand abodes [This makes a total of seventy seven million two hundred thousand abodes.]

४. [प्र.] केवतिया णं भंते ! पुढविक्काइयावाससतसहस्सा पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! असंखेज्जा पुढविक्काइयावाससयसहस्सा पण्णत्ता जाव असंखिज्जा जोइसियविमाणावाससयसहस्सा पण्णत्ता।

४. [प्र.] भगवन् ! पृथ्वीकायिक जीवो के कितने लाख आवास हैं ?

[उ.] गौतम ! पृथ्वीकायिक जीवो के असख्यात लाख आवास हैं। इसी प्रकार (पृथ्वीकाय से लेकर) यावत् ज्योतिष्क देवो तक के असख्यात लाख आवास है।

4. [Q.] *Bhante* ! How many hundred thousand are the abodes of earth-bodied beings (*prithvikayik jivas*) ?

[Ans.] Gautam ! Earth-bodied beings (*prithvikayik jivas*) have innumerable hundred thousand abodes In the same way all beings (from

earth-bodied beings) up to Jyotishk Devs (Stellar gods) have innumerable hundred thousand abodes

५. [प्र.] सोहम्मे णं भंते ! कप्पे कति विमाणावाससतसहस्सा पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! बत्तीसं विमाणावाससतसहस्सा पण्णत्ता। एवं–

बत्तीसऽट्ठावीस बारस अट्ठ चउरो सयसहस्सा।
पण्णा चत्तालीसा छच्च सहस्सा सहस्सारे॥४॥

आणय–पाणयकप्पे चत्तारि सताऽऽरण–ऽच्चुए तिण्णि।
सत्त विमाणसताइं चउसु वि एएसु कप्पेसुं॥५॥

एक्कारसुत्तरं हेट्ठिमेसु सत्तुत्तरं च मज्झिमए।
सतमेगं उवरिमए पंचेव अणुत्तरविमाणा॥६॥

५. [प्र.] भगवन् ! सौधर्मकल्प मे कितने विमानावास है ?

[उ.] गौतम ! वहाँ बत्तीस लाख विमानावास है। क्रमश: बत्तीस लाख, अट्ठाईस लाख, बारह लाख, आठ लाख, चार लाख, पचास हजार तथा चालीस हजार विमानावास हैं। सहस्रारकल्प मे छह हजार विमानावास हैं। आणत और प्राणत कल्प में चार सौ, आरण और अच्युत मे तीन सौ, इस तरह चारो में मिलकर सात सौ विमान है। अधस्तन (निचले) ग्रैवेयक त्रिक मे एक सौ ग्यारह, मध्यम (बीच के) ग्रैवेयक त्रिक मे एक सौ सात और ऊपर के ग्रैवेयक त्रिक मे एक सौ विमानावास है। अनुत्तर विमानावास पाँच ही है।

5. [Q.] *Bhante* ! How many hundred thousand celestial-vehicular abodes (*vimaan vaas*) are there in Saudharma *kalp* (a specific divine realm) ?

[Ans.] Gautam ! In Saudharma *kalp* there are thirty two hundred thousand abodes In the same way other divine realms have twenty eight hundred thousand (in Ishan *kalp*), twelve hundred thousand (in Sanatkumar *kalp*), eight hundred thousand (in Maahendra *kalp*), four hundred thousand (in Brahmalok *kalp*), fifty thousand (in Lantak *kalp*) and forty thousand (in Mahashukra *kalp*) celestial-vehicular abodes Sahasrar *kalp* has six thousand celestial-vehicular abodes Anat and Pranat *kalps* have in all four hundred and Aran and Achyut have in all three hundred making a total of seven hundred celestial-vehicular abodes for this group of four. The lower trio of Graiveyaks has one hundred eleven, middle trio has one hundred seven and the upper trio has one hundred celestial-vehicular abodes. There are only five Anuttar celestial-vehicular abodes.

अर्थाधिकार दस द्वार MEANING OF TEN ATTRIBUTES OF LIFE

६. पुढवि ट्ठिति १ ओगाहण २ सरीर ३ संघयणमेव ४ संठाणे ५।

लेसा ६ दिट्ठी ७ णाणे ८ जोगुवओगे ९-१० य दस ठाणा॥१४॥

६. पृथ्वी (नरक भूमि) आदि जीवावासों में (१) स्थिति, (२) अवगाहना, (३) शरीर, (४) संहनन, (५) संस्थान, (६) लेश्या, (७) दृष्टि, (८) ज्ञान, (९) योग, और (१०) उपयोग; इन दस स्थानों (द्वारों) पर विचार करना है।

6. In Hells (*prithvi*) and other abodes of living beings there are ten attributes (*dvar*) worth consideration—(1) *Sthiti* (life-span), (2) *Avagahana* (space occupied or physical dimension), (3) *Sharira* (body), (4) *Samhanan* (body-constitution), (5) *Samsthan* (body structure) (6) *Leshya* (complexion of soul), (7) *Drishti* (perception), (8) *Jnana* (knowledge), (9) *Yoga* (action), and (10) *Upayoga* (cognition).

प्रथम : स्थिति-स्थान द्वार FIRST : STHITI

७. [प्र.] इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए तीसाए निरयावाससतसहस्सेसु एगमेगंसि निरयावासंसि नेरतियाणं केवतिया ठितिठाणा पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! असंखेज्जा ठितिठाणा पण्णत्ता। तं जहा-जहन्निया ठिती, समयाहिया जहन्निया ठिती, दुसमयाहिया जहन्निया ठिती जाव असंखेज्जसमयाहिया जहन्निया ठिती, तप्पाउग्गुक्कोसिया ठिती।

७. [प्र.] भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी के तीस लाख नारकावासों मे एक-एक नारकावास में रहने वाले नारक जीवो के कितने स्थिति-स्थान कहे है ? अर्थात् एक-एक नारकावास के नारकों की कितनी आयु है ?

[उ.] गौतम ! उनके असख्य स्थान है। वे इस प्रकार हैं-जघन्य स्थिति दस हजार वर्ष की है, वह एक समय अधिक, दो समय अधिक-इस प्रकार यावत् जघन्य स्थिति असख्यात समय अधिक है तथा उसके योग्य उत्कृष्ट स्थिति भी। (ये सब मिलकर असंख्यात स्थिति-स्थान होते हैं।)

7. [Q.] *Bhante* ! What are said to be the counts of span of life (*sthiti*) of the infernal beings living in each of the thirty hundred thousand infernal abodes in this Ratnaprabha *prithvi* (first hell) ?

[Ans.] Gautam ! They have innumerable counts. They are like this—minimum life-span is 10,000 years, one *Samaya* more than the minimum, two *Samaya* more than the minimum, ... and so on up to... innumerable *Samaya* more than the minimum and a maximum depending on each specific abode. (all these together make innumerable counts of life-span)

८. [प्र.] इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए तीसाए निरयावाससतसहस्सेसु एगमेगंसि निरयावासंसि जहन्नियाए ठितीए वट्टमाणा नेरइया किं कोहोवउत्ता, माणोवउत्ता, मायोवउत्ता, लोभोवउत्ता ?

[उ.] गोयमा ! सव्वे वि ताव होज्जा कोहोवउत्ता १, अहवा कोहोवउत्ता य माणोवउत्ते य २, अहवा कोहोवउत्ता य माणोवउत्ता य ३, अहवा कोहोवउत्ता य मायोवउत्ते य ४, अहवा कोहोवउत्ता य मायोवउत्ता य ५, अहवा कोहोवउत्ता य लोभोवउत्ते य ६, अहवा कोहोवउत्ता य लोभोवउत्ता य ७। अहवा कोहोवउत्ता य माणोवउत्ते य मायोवउत्ते य १, कोहोवउत्ता य माणोवउत्ते य मायोवउत्ता य २, कोहोवउत्ता य माणोवउत्ता य मायोवउत्ते य ३, कोहोवउत्ता य माणोवउत्ता य मायाउवउत्ता य ४। एवं कोह–माण–लोभेण वि चउ ४। एवं कोह–माया–लोभेण वि चउ ४, एवं १२। पच्छा माणेणं मायाए लोभेण य कोहो भइयव्वो, ते कोहं अमुंचता। एवं सत्तावीसं भंगा णेयव्वा।

८. [प्र.] भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी के तीस लाख नारकावासो मे से एक–एक नारकावास मे जघन्य स्थिति में वर्तमान नारक क्या क्रोधोपयुक्त हैं, मानोपयुक्त हैं, मायोपयुक्त है अथवा लोभोपयुक्त है ?

[उ.] गौतम ! वे सभी क्रोधोपयुक्त (क्रोधी) होते हैं १ अथवा बहुत से नारक क्रोधोपयुक्त और एक नारक मानोपयुक्त (मानी) होता है २, अथवा बहुत से क्रोधी और बहुत से मानी होते है ३, अथवा बहुत से क्रोधी और एक मायी होता है ४, अथवा बहुत से क्रोधी और बहुत से मायी होते है ५, अथवा बहुत से क्रोधी और एक लोभी होता है ६, अथवा बहुत से क्रोधी और बहुत से लोभी होते है ७। अथवा बहुत से क्रोधी, एक मानी और एक मायी होता है १, बहुत से क्रोधी, एक मानी और बहुत से मायी होते है २, बहुत से क्रोधी, बहुत से मानी और एक मायी होता है ३, बहुत से क्रोधी, बहुत से मानी और बहुत से मायी होते है ४, इसी तरह क्रोध, मान और लोभ, (यो त्रिकसयोग) के चार भग, क्रोध, माया और लोभ, (यो त्रिकसयोग) के भी चार भग कहने चाहिए। फिर मान, माया और लोभ के साथ जोडने से चतुष्क–सयोगी आठ भग कहने चाहिए। इसी तरह क्रोध को नहीं छोडते हुए (चतुष्कसयोगी ८ भग होते है) कुल २७ भग समझ लेने चाहिए।

8. [Q.] *Bhante* ! Do the infernal beings with minimum life-span living in each one of the thirty hundred thousand infernal abodes in this Ratnaprabha *prithvi* have inclination of anger (*krodhopayukta*), inclination of conceit (*maanopayukta*), inclination of deceit (*maayopayukta*) and inclination of greed (*lobhopayukta*) ?

[Ans.] Gautam ! They all have inclination of anger (1) [just one alternative of pure anger without any combination]. Or many have inclination of anger and one has that of conceit (1), or many have inclination of anger and many have that of conceit (2), or many have inclination of anger and one has that of deceit (3), or many have inclination of anger and many have that of deceit (4), or many have inclination of anger and one has that of greed (5), or many have

inclination of anger and many have that of greed (6) [six alternatives of a combination of two]. Or many have inclination of anger, one has that of conceit and one has that of deceit (1), or many have inclination of anger, one has that of conceit and many have that of deceit (2), or many have inclination of anger, many have that of conceit and one has that of deceit (3), or many have inclination of anger, many have that of conceit and many have that of deceit (4). In the same way four alternatives each of combinations of three, anger-conceit-greed and anger-deceit-greed, should be repeated [twelve alternatives of a combination of three]. After that eight alternatives of a combination of four (anger, conceit, deceit and greed) should be repeated Thus inclusive of anger, all these add up to a total of 27 alternatives.

९. [प्र.] इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए तीसाए निरयावाससयसहस्सेसु एगमेगंसि निरयावासंसि समयाधियाए जहन्नट्ठितीए वट्टमाणा नेरइया किं कोधोवउत्ता, माणोवउत्ता, मायोवउत्ता लोभोवउत्ता ?

[उ.] गोयमा ! कोहोवउत्ते य माणोवउत्ते य मायोवउत्ते य लोभोवउत्ते य ४। कोहोवउत्ता य माणोवउत्ता य मायोवउत्ता य लोभोवउत्ता य ८। अहवा कोहोवउत्ते य माणोवउत्ते य १०, अहवा कोहोवउत्ते य माणोवउत्ता य १२, एवं असीति भंगा नेयव्वा एवं जाव संखिज्जसमयाहया ठिई। असंखेज्जसमाहयाए ठिईए तप्पाउग्गुक्कोसियाए ठिईए सत्तावीसं भंगा भाणियव्वा।

९. [प्र.] इस रत्नप्रभा पृथ्वी के तीस लाख नारकावासो मे से एक-एक नारकावास में एक समय अधिक जघन्य स्थिति मे वर्तमान नारक क्या क्रोधोपयुक्त होते है, मानोपयुक्त होते है, मायोपयुक्त होते हैं अथवा लोभोपयुक्त होते है ?

[उ.] गौतम ! उनमें से कोई-कोई क्रोधी, कोई मानी, कोई मायी और कोई लोभी होता है। अथवा बहुत से क्रोधी, मानी, मायी और लोभी होते है। अथवा कोई-कोई क्रोधी और मानी होता है, या कोई-कोई क्रोधी और बहुत से मानी होते है। [अथवा बहुत से क्रोधी और एक मानी या बहुत से क्रोधी और बहुत से मानी होते है।] इत्यादि प्रकार से अस्सी भग समझने चाहिए। इसी प्रकार यावत् दो समय अधिक जघन्य स्थिति से लेकर सख्येय समयाधिक जघन्य स्थिति वाले नैरयिको के लिए समझना चाहिए। असख्येय समयाधिक स्थिति वालो मे तथा उसके योग्य उत्कृष्ट स्थिति वाले नारको में सत्ताईस भग कहने चाहिए।

9. [Q.] *Bhante* ! Do the infernal beings with one *Samaya* more than minimum life-span living in each one of the thirty hundred thousand infernal abodes in this Ratnaprabha *prithvi* have inclination of anger (*krodhopayukta*), inclination of conceit (*maanopayukta*), inclination of deceit (*maayopayukta*) and inclination of greed (*lobhopayukta*) ?

[Ans.] Gautam ! Some one of them has inclination of anger, some one of them has that of conceit, some one of them has that of deceit and some one of them has that of greed Or many of them have inclination of anger, many of them have that of conceit, many of them have that of deceit and many of them have that of greed. Or some one of them has inclination of anger and conceit, or some one has that of anger and many have that of conceit. [or many have anger and one has conceit, or many have anger and many have conceit.] This way eighty alternatives should be stated The same is true for infernal beings with a life-span of two *Samaya* more than the minimum . and so on up to... a life-span of countable *Samaya* more than the minimum. For those with a life-span of innumerable *Samaya* more than the minimum, right up to the maximum only twenty seven alternatives should be stated

विवेचन · जघन्यादि स्थिति–प्रत्येक नारकावास मे रहने वाले नारको की स्थिति के स्थान भिन्न–भिन्न होने के कारण किसी की जघन्य स्थिति है, किसी की मध्यम और किसी की उत्कृष्ट। इस प्रथम रत्नप्रभा पृथ्वी के प्रथम प्रतर मे नारको की आयु जघन्य १० हजार वर्ष की और उत्कृष्ट ९० हजार वर्ष की है। जघन्य और उत्कृष्ट के बीच की आयु को मध्यम आयु कहते है। मध्यम आयु जघन्य और उत्कृष्ट के समान एक प्रकार की नही है। जघन्य आयु से एक समय अधिक की, दो, तीन, चार समय अधिक की यावत् सख्येय और असख्येय समय अधिक की आयु भी मध्यम कहलाती है। यो मध्यम आयु (स्थिति) के अनेक विकल्प है। नारको के स्थिति स्थान असख्य है। *(भगो का विस्तृत वर्णन हिन्दी विवेचन भाग १, पृष्ठ २३२ पर देखे)*

Elaboration—*Jaghanya sthiti*—The count of life-span of infernal beings living in each abode is different, thus for some the count is minimum, for some it is medium and for some it is maximum In the first level of this Ratnaprabha *prithvi* (first hell) the minimum life-span is 10,000 years and the maximum is 90,000 years The intervening count between minimum and maximum is called medium. Like the maximum and minimum life-span it is not a fixed figure. Starting from one *Samaya* more, two *Samaya* more, countable *Samaya* more. and so on up to . innumerable *Samaya* more, all are included in medium life-span Thus there are many alternative counts of medium life-span making the total counts of life-span of infernal beings to be innumerable *(for detailed listing of alternatives refer to Hindi Vivechana, Part-1, p 232)*

द्वितीय : अवगाहना द्वार **SECOND : AVAGAHANA**

१०. [प्र.] इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए तीसाए निरयावाससयसहस्सेसु एगमेगंसि निरयावासंसि नेरइयाणं केवतिया ओगाहणाठाणा पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! असंखेज्जा ओगाहणाठाणा पण्णत्ता। तं जहा—जहन्निया ओगाहणा, पदेसाहिया जहन्निया ओगाहणा, दुप्पदेसाहिया जहन्निया ओगाहणा जाव असंखिज्जपदेसाहिया जहन्निया ओगाहणा, तप्पाउग्गुक्कोसिया ओगाहणा।

१०. [प्र.] भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी (प्रथम नरकभूमि) के एक-एक नारकावास में रहने वाले नारकों के अवगाहना स्थान कितने हैं ?

[उ.] गौतम ! उनके अवगाहना स्थान असख्यात हैं। वे इस प्रकार हैं—जघन्य अवगाहना (अंगुल के असंख्यातवें भाग), एक प्रदेशाधिक जघन्य अवगाहना, द्विप्रदेशाधिक जघन्य अवगाहना, यावत् असंख्यात प्रदेशाधिक जघन्य अवगाहना, तथा उसके योग्य उत्कृष्ट अवगाहना (जिस नारकावास के योग्य जो उत्कृष्ट अवगाहना हो)।

10. [Q.] *Bhante* ! What are said to be the counts of *avagahana* (space occupied or physical dimension) of the infernal beings living in each of the thirty hundred thousand infernal abodes in this Ratnaprabha *prithvi* (first hell) ?

[Ans.] Gautam ! They have innumerable counts. They are like this—minimum physical dimension (uncountable fraction of *Angul*), one *Pradesh* (space-point) more than the minimum, two *Pradesh* more than the minimum, and so on up to.. innumerable *Pradesh* more than the minimum and a maximum depending on each specific abode. (all these together make innumerable counts of physical dimension)

११. [प्र.] इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए तीसाए निरयावाससयसहस्सेसु एगमेगंसि निरयावासंसि जहन्नियाए ओगाहणाए वट्टमाणा नेरतिया किं कोहोवउत्ता. ?

[उ.] गोयमा ! असीति भंगा भाणियव्वा, जाव संखिज्जपदेसाधिया जहन्निया ओगाहणा। असंखेज्जपदेसाहियाए जहन्नियाए ओगाहणाए वट्टमाणाणं तप्पउग्गुक्कोसियाए ओगाहणाए वट्टमाणाणं नेरइयाणं दोसु वि सत्तावीसं भंगा।

११. [प्र.] भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी के तीस लाख नारकावासो मे से एक-एक नारकावास मे जघन्य अवगाहना वाले नैरयिक क्या क्रोधोपयुक्त है, मानोपयुक्त है, मायोपयुक्त है अथवा लोभोपयुक्त हैं ?

[उ.] गौतम ! जघन्य अवगाहना वालो मे अस्सी भग कहने चाहिए, यावत् संख्यात प्रदेश अधिक जघन्य अवगाहना वालो के भी अस्सी भग कहने चाहिए। असंख्यात प्रदेश अधिक जघन्य अवगाहना वाले और उसके योग्य उत्कृष्ट अवगाहना वाले, इन दोनो प्रकार के नारकों मे सत्ताईस भंग कहने चाहिए।

11. [Q.] *Bhante* ! Do the infernal beings with minimum physical dimension (*avagahana*) living in each one of the thirty hundred thousand infernal abodes in this Ratnaprabha *prithvi* have inclination of anger

(*krodhopayukta*), inclination of conceit (*maanopayukta*), inclination of deceit (*maayopayukta*) and inclination of greed (*lobhopayukta*) ?

[Ans.] Gautam ! Eighty alternatives should be stated for minimum physical dimension (as stated in case of life-span). The same is true for two *Pradesh* more than the minimum... and so on up to. . a life-span of countable *Pradesh* more than the minimum For those with a life-span of innumerable *Pradesh* more than the minimum, right up to the maximum, only twenty seven alternatives should be stated (as stated in connection with life-span).

विवेचन · **अवगाहनास्थान**–जिस जीव का जितना लम्बा–चौडा शरीर होता है, वह उसकी अवगाहना है। जिस क्षेत्र मे जो जीव जितने आकाश–प्रदेशो को रोककर रहता है, उतने आधारभूत तद् परिमाण क्षेत्र को भी अवगाहना कहते हैं।

उत्कृष्ट अवगाहना–प्रथम नरक की उत्कृष्ट अवगाहना ७ धनुष, ३ हाथ, ६ अगुल होती है, इससे आगे के नरको में अवगाहना दुगुनी–दुगुनी होती है। अर्थात् शर्कराप्रभा मे १५ धनुष, २ हाथ, १२ अगुल की, बालुकाप्रभा मे ३१ धनुष, १ हाथ की, पकप्रभा मे ६२ धनुष, २ हाथ की, धूमप्रभा मे १२५ धनुष की, तम प्रभा मे २५० धनुष की, तमस्तम प्रभा मे ५०० धनुष की उत्कृष्ट अवगाहना होती है। **जघन्य स्थिति तथा जघन्य अवगाहना के भंगों मे अन्तर**–जघन्य स्थिति वाले नारक जब तक जघन्य अवगाहना वाले रहते है, तब तक उनकी अवगाहना के ८० भग ही होते हैं, क्योकि जघन्य अवगाहना उत्पत्ति के समय ही होती है। जघन्य स्थिति वाले जिन नैरयिको के २७ भग कहे है, वे जघन्य अवगाहना का उल्लघन कर चुके है, उनकी अवगाहना जघन्य नही होती। इसलिए उनमे २७ ही भग होते है।

जघन्य अवगाहना से लेकर सख्यातप्रदेश अधिक की अवगाहना वाले जीव नरक मे सदा नहीं मिलते, इसलिए उनमे ८० भग कहे गये है, किन्तु जघन्य अवगाहना से असख्यातप्रदेश अधिक की अवगाहना वाले जीव, नरक मे अधिक ही पाये जाते है; इसलिए उनमे २७ ही भग होते है। *(वृत्ति, पत्राक ७१)*

Elaboration—*Avagahana*—The length and breadth of the body of a being or its physical dimension is called *avagahana*. In other words the space occupied by a being in terms of space-points (*pradesh*) is called *avagahana*

In the first hell the maximum dimension is 7 *Dhanush* (a linear measure equivalent to four cubits), 3 *Haath* (cubit), 6 *Angul* (breadth of a finger). In the following hells it is doubled for every progressive hell In Sharkara-prabha (second hell) it is 15 *Dhanush*, 2 *Haath*, 12 *Angul*. In Baluka-prabha (third hell) it is 31 *Dhanush*, 1 *Haath* In Pankaprabha (fourth hell) it is 62 *Dhanush*, 2 *Haath* In Dhoom-prabha (fifth hell) it is 125 *Dhanush* In Tamah-prabha (sixth hell) it is 250 *Dhanush* In Tamastamah-prabha (seventh hell) it is 500 *Dhanush*. Difference

between alternatives of minimum life-span and minimum physical dimension—As long as the infernal beings with minimum life-span are with minimum physical dimension the number of alternatives (of inclinations) for their physical dimension is eighty. This is because minimum physical dimension is at the time of birth Those infernal beings of minimum life-span for whom twenty seven alternatives have been mentioned have crossed the minimum physical dimension. For this reason they only have twenty seven alternatives.

Infernal beings with minimum physical dimension to countable space-points more than minimum are not always available in hells; therefore eighty alternatives are applicable to them. Infernal beings with physical dimension of innumerable space-points more than the minimum are found in abundance in hells; therefore twenty seven alternatives are applicable to them. *(Vritti, leaf 71)*

तृतीय : शरीर द्वार **THIRD . SHARIRA**

१२. [प्र.] इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए जाव एगमेगंसि निरयावासंसि नेरइयाणं कति सरीरया पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! तिण्णि सरीरया पण्णत्ता। तं जहा–वेउव्विए तेयए कम्मए।

१२. [प्र.] भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी के एक–एक नारकावास मे बसने वाले नारक जीवों के शरीर कितने है ?

[उ.] गौतम ! उनके तीन शरीर है। यथा–वैक्रिय, तैजस् और कार्मण।

12. [Q.] *Bhante* ! How many are said to be the types of body (*sharira*) of the infernal beings living in each of the (thirty hundred thousand) infernal abodes in this Ratnaprabha *prithvi* (first hell) ?

[Ans.] Gautam ! They have three types of bodies—*Vaikriya* (transmutable), *Taijas* (fiery) and *Karman* (*karmic*).

१३. [प्र. १] इमीसे णं भंते ! जाव वेउव्वियसरीरे वट्टमाणा नेरइया किं कोहोवउत्ता. ?

[उ.] सत्तावीसं भंगा। [२] एएणं गमेणं तिण्णि सरीरा भाणियव्वा।

१३. [प्र. १] भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी के प्रत्येक नारकावास मे बसने वाले वैक्रियशरीरी नारक क्या क्रोधोपयुक्त है, (मानोपयुक्त है, मायोपयुक्त है अथवा लोभोपयुक्त है ?)

[उ.] गौतम ! उनके क्रोधोपयुक्त आदि २७ भंग कहने चाहिए। [२] और इस प्रकार शेष दोनों शरीरो (तैजस् और कार्मण) सहित तीनो के सम्बन्ध मे यही बात (आलापक) कहनी चाहिए।

13. [Q. 1] *Bhante* ! Do the infernal beings with transmutable body (*vaikriya sharira*) living in each one of the infernal abodes in this Ratnaprabha *prithvi* have inclination of anger (*krodhopayukta*), inclination of conceit (*maanopayukta*), inclination of deceit (*maayopayukta*) or inclination of greed (*lobhopayukta*) ?

[Ans.] Gautam ! Twenty seven alternatives including *krodhopayukta* should be stated for them. [2] Same statements should be repeated for the other two types of bodies (fiery and *karmic*).

विवेचन · वैक्रियशरीर–जिस शरीर के प्रभाव से मनचाहा रूप धारण किया जा सकता है, वह वैक्रियशरीर है। इसके दो भेद है–भवधारणीय और उत्तरवैक्रिय। नारको के भवधारणीय वैक्रियशरीर होता है। तैजस्शरीर–आहार को पचाकर शरीर के अगो मे यथास्थान पहुँचाने वाला तैजस्शरीर है। कार्मणशरीर–राग–द्वेषादि भावो से शुभाशुभ कर्मवर्गणा के पुद्गलो को सचित करने वाला कार्मणशरीर है। *(वृत्ति, पत्राक ७२)*

Elaboration—*Vaikriya Sharira* (transmutable body)—the body that can be transformed to any desired form. This is of two *types*—*bhavadharaniya* (incarnation sustaining) and *uttar-vaikriya* (secondary transmuted) Infernal beings have incarnation sustaining transmuted body *Taijas sharira* (fiery body)—body that is responsible for digestion of food and its assimilation with different parts of the body *Karman sharira* (*karmic* body)—body that acquires and compiles the good and bad *karmic* particles through the force of passions like attachment and aversion *(Vritti, leaf 72)*

चौथा : संहनन द्वार **FOURTH : SAMHANAN**

१४. [प्र.] इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए जाव नेरइयाणं सरीरगा किं संघयणा पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! छण्हं संघयणाणं असंघयणी, नेवऽट्ठी, नेव छिरा, नेव ण्हारूणि। जे पोग्गला अणिट्ठा अकंता अप्पिया असुभा अमणुण्णा अमणामा ते तेसिं सरीरसंघातत्ताए परिणमंति।

१४. [प्र.] भगवन् ! इस रत्नप्रभापृथ्वी के प्रत्येक नारकावास मे बसने वाले नैरयिको के शरीरो का कौन–सा सहनन है ?

[उ.] गौतम ! उनका शरीर सहननरहित है, अर्थात् उनमे छह सहननो मे से कोई भी सहनन नही होता। उनके शरीर मे हड्डी, शिरा (नसें) और स्नायु नही होती। जो पुद्गल अनिष्ट, अकान्त, अप्रिय, अशुभ, अमनोज्ञ और अमनोहर है, वे पुद्गल नारको के शरीर–सघातरूप मे परिणत होते हैं।

14. [Q.] *Bhante* ! What is said to be the type of *Samhanan* (body-constitution) of the infernal beings living in each of the infernal abodes in this Ratnaprabha *prithvi* ?

[Ans.] Gautam ! Their bodies are devoid of body structure. In other words they do not have any of the six *Samhanan* (body-constitution). Their bodies have no bones, no veins and no sinews. *Anisht* (not desirable), *akaant* (not beautiful), *apriya* (not lovable), *ashubha* (ignoble), *amanojna* (not attractive), *amanohar* (not adorable or whose mere thought is repulsive) matter particles coalesce to constitute the bodies of infernal beings.

१५. [प्र.] इमीसे णं भंते ! जाव छण्हं संघयणाणं असंघयणे वट्टमाणा नेरइया किं कोहोवउत्ता० ?

[उ.] सत्तावीसं भंगा।

१५. [प्र.] भगवन् ! इस रत्नप्रभापृथ्वी के प्रत्येक नारकावास मे रहने वाले और छह सहननों में से जिनके एक भी सहनन नही है, वे नैरयिक क्या क्रोधोपयुक्त है, यावत् लोभोपयुक्त हैं ?

[उ.] गौतम ! इनके पूर्वोक्त सत्ताईस भग कहने चाहिए।

15. [Q.] *Bhante* ! Do the infernal beings without any of the six *Samhanan* (body-constitution) living in each one of the infernal abodes in this Ratnaprabha *prithvi* have inclination of anger (*krodhopayukta*), . and so on up to . inclination of greed (*lobhopayukta*) ?

[Ans.] Gautam ! Twenty seven aforesaid alternatives should be stated for them.

पाँचवाँ . संस्थान द्वार **FIFTH : SAMSTHAN**

१६. [प्र.] इमीसे णं भंते ! रयणप्पभा जाव सरीरया किं संठिता पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! दुविहा पण्णत्ता तं जहा–भवधारणिज्जा य उत्तरवेउव्विया य। तत्थ णं जे ते भवधारणिज्जा ते हुंडसंठिया पण्णत्ता। तत्थ णं उत्तरवेउव्विया ते वि हुंडसंठिया पण्णत्ता।

१७. [प्र.] इमीसे णं जाव हुंडसंठाणे वट्टमाणा नेरइया किं कोहोवउत्ता० ?

[उ.] सत्तावीसं भंगा।

१६. [प्र.] भगवन् ! इस रत्नप्रभापृथ्वी के नारकावास मे रहने वाले नैरयिको के शरीर किस संस्थान वाले है ?

[उ.] गौतम ! उन नारको का शरीर दो प्रकार का है, यथा–भवधारणीय और उत्तरवैक्रिय। उनमे जो भवधारणीय शरीर वाले है, वे हुण्डक सस्थान वाले होते है, और जो शरीर उत्तरवैक्रियरूप हैं, वे भी हुण्डकसंस्थान वाले है।

१७. [प्र.] भगवन् ! इस रत्नप्रभापृथ्वी में यावत् हुण्डकसंस्थान मे वर्तमान नारक क्या क्रोधोपयुक्त इत्यादि है ?

[उ.] गौतम ! इनके भी क्रोधोपयुक्त आदि २७ भग कहने चाहिए।

16. [Q.] *Bhante* ! What is said to be the type of *Samsthan* (body structure) of the infernal beings living in this Ratnaprabha *prithvi* ?

[Ans.] Gautam ! The bodies of infernal beings living in this Ratnaprabha are of two types—*bhavadharaniya* (incarnation sustaining) and *uttar-vaikriya* (secondary transmuted). Those having *bhavadharaniya sharira* (incarnation sustaining body) have *hundak samsthan* (an anatomical structure having deformities in every part of the body) Those having *uttar-vaikriya sharira* (secondary transmuted body) too have *hundak samsthan*

17. [Q.] *Bhante* ! Do the infernal beings having *hundak samsthan* living in this Ratnaprabha *prithvi* have inclination of anger (*krodhopayukta*), and so on up to.. inclination of greed (*lobhopayukta*) ?

[Ans.] Gautam ! For these too twenty seven aforesaid alternatives should be stated

विवेचन : उत्तरवैक्रिय शरीर–एक नारकी जीव दूसरे जीव को कष्ट देने के लिए जो शरीर बनाता है, वह उत्तरवैक्रिय कहलाता है। उत्तरवैक्रिय शरीर सुन्दर न बनाकर नारक हुण्डकसस्थान वाला क्यो बनाते है ? इसका समाधान यह है कि उनमे शक्ति की मन्दता है तथा देश–काल आदि की प्रतिकूलता है, इस कारण वे शरीर का आकार सुन्दर बनाना चाहते हुए भी नही बना पाते, वह बेढगा ही बनता है। उनका शरीर सहननरहित होता है, इसलिए उन्हे छेदने पर शरीर के पुद्गल अलग हो जाते है और पुन मिल जाते है। अस्थियो के विशिष्ट प्रकार के ढाँचे को संहनन कहते है। अस्थियाँ केवल औदारिक शरीर मे ही होती है और नारको को औदारिक शरीर नही होता है। *(वृत्ति, पत्रांक ७२)*

Elaboration—*Uttar-vaikriya sharira*—The body created by one infernal being in order to torture another infernal being is called *uttar-vaikriya sharira* (secondary transmuted body) Why these secondary transmuted bodies are made ugly in *hundak samsthan* and not beautiful ? The answer is that the infernal beings are at low energy levels and the circumstances are also unfavourable. Therefore they fail to make a beautiful body; although they desire to do so, it turns out ugly only. As their bodies are devoid of a body-constitution, on piercing matter particles separate from the body and combine again Specific body-constitutions built on bones are called *samhanan*. Bones are part of the *audarik sharira* (gross physical body) and infernal beings do not have *audarik sharira* *(Vritti, leaf 72)*

छठा : लेश्या द्वार SIXTH : LESHYA

१८. [प्र.] इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए नेरइयाणं कति लेसाओ पण्णत्ताओ ?

[उ.] गोयमा ! एक्का काउलेस्सा पण्णत्ता।

१९. [प्र.] इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए जाव काउलेस्साए वट्टमाणा० ?

[उ.] सत्तावीसं भंगा।

१८. [प्र.] भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी मे बसने वाले नैरयिकों में कितनी लेश्याएँ हैं ?

[उ.] गौतम ! उनमे केवल एक कापोतलेश्या है।

१९. [प्र.] भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी मे बसने वाले कापोतलेश्या वाले नारक जीव क्या क्रोधोपयुक्त है, यावत् लोभोपयुक्त है ?

[उ.] गौतम ! इनके भी सत्ताईस भग कहने चाहिए।

18. [Q.] *Bhante* ! How many *Leshyas* (complexions of soul) the infernal beings living in this Ratnaprabha *prithvi* are said to have ?

[Ans.] Gautam ! They only have one, the *Kapot leshya* (pigeon-like complexion)

19. [Q.] *Bhante* ! Do the infernal beings having *Kapot leshya* (pigeon complexion) living in this Ratnaprabha *prithvi* have inclination of anger (*krodhopayukta*), and so on up to. inclination of greed (*lobhopayukta*) ?

[Ans.] Gautam ! For these too twenty seven aforesaid alternatives should be stated.

सातवाँ : दृष्टि द्वार SEVENTH : DRISHTI

२०. [प्र.] इमीसे णं जाव किं सम्मदिट्ठी मिच्छदिट्ठी सम्मामिच्छदिट्ठी ?

[उ.] तिण्णि वि।

२१. [प्र. १] इमीसे णं जाव सम्मदंसणे वट्टमाणा नेरइया० ?

[उ.] सत्तावीसं भंगा। [२] एवं मिच्छदंसणे वि। [३] सम्मामिच्छदंसणे असीति भंगा।

२०. [प्र.] भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी में बसने वाले नारक जीव क्या सम्यग्दृष्टि हैं, मिथ्यादृष्टि है, या सम्यग्मिथ्यादृष्टि (मिश्रदृष्टि) है ?

[उ.] हे गौतम ! वे तीनो प्रकार के हैं।

२१. [प्र. १] भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी में बसने वाले सम्यग्दृष्टि नारक क्या क्रोधोपयुक्त यावत् लोभोपयुक्त है ?

[उ.] गौतम! इनके क्रोधोपयुक्त आदि सत्ताईस भग कहने चाहिए। [२] इसी प्रकार मिथ्यादृष्टि के भी क्रोधोपयुक्त आदि २७ भग कहने चाहिए। [३] सम्यग्मिथ्यादृष्टि के अस्सी भग (पूर्ववत्) कहने चाहिए।

20. [Q.] *Bhante* ! Are the infernal beings living in this Ratnaprabha *prithvi samyagdrishti* (having right perception/faith), *mithyadrishti* (having wrong perception/faith) or *samyagmithyadrishti* (having right-wrong or mixed perception/faith)?

[Ans.] Gautam ! They are of all the three kinds

21. [Q. 1] *Bhante* ! Do the infernal beings having right perception/faith living in this Ratnaprabha *prithvi* have inclination of anger (*krodhopayukta*), .. and so on up to . inclination of greed (*lobhopayukta*)?

[Ans.] Gautam ! For these too twenty seven aforesaid alternatives should be stated. [2] In the same way twenty seven aforesaid alternatives should be stated with regard to *mithyadrishti* (having wrong perception/faith) [3] Eighty aforesaid alternatives should be stated with regard to *samyagmithyadrishti* (having right-wrong or mixed perception/faith)

आठवाँ : ज्ञान द्वार EIGHT : JNANA

२२. [प्र.] इमीसे णं भंते ! जाव किं णाणी, अण्णाणी ?

[उ.] गोयमा ! णाणी वि, अण्णाणी वि। तिण्णि नाणाणि नियमा, तिण्णि अण्णाणाइं भयणाए।

२३. [प्र. १] इमीसे णं भंते ! जाव आभिणिबोहियणाणे वट्टमाणा० ?

[उ.] सत्तावीसं भंगा। [२] एवं तिण्णि णाणाइं, तिण्णि य अण्णाणाइं भाणियव्वाइं।

२२. [प्र.] भगवन्! इस रत्नप्रभा पृथ्वी मे रहने वाले नारक जीव क्या ज्ञानी है, या अज्ञानी है?

[उ.] गौतम! उनमे ज्ञानी भी है, और अज्ञानी भी है। जो ज्ञानी है, उनमे नियमपूर्वक तीन ज्ञान होते है, और जो अज्ञानी है, उनमे तीन अज्ञान भजना (विकल्प) से होते है।

२३. [प्र. १] भगवन्! इस रत्नप्रभा पृथ्वी मे रहने वाले आभिनिबोधिक ज्ञानी (मतिज्ञानी) नारकी जीव क्या क्रोधोपयुक्त यावत् लोभोपयुक्त होते हैं?

[उ.] गौतम! उन नारको के क्रोधोपयुक्त आदि २७ भग कहने चाहिए। [२] इसी प्रकार तीनों ज्ञान वाले तथा तीनो अज्ञान वाले नारको में क्रोधोपयुक्त आदि २७ भग कहने चाहिए।

22. [Q.] *Bhante* ! Are the infernal beings living in this Ratnaprabha *prithvi jnani* (having right knowledge) or *ajnani* (having false knowledge)?

[Ans.] Gautam ! There are *jnanis* (having right knowledge) as well as *ajnanis* (having false knowledge) among them. Those with right knowledge have, as a rule, three kinds of right knowledge, and those with false knowledge have three kinds of false knowledge alternatively.

23. [Q. 1] *Bhante* ! Do the infernal beings having *abhinibodhik jnana* (*mati jnana* or sensory knowledge) in this Ratnaprabha *prithvi* (hell) have inclination of anger (*krodhopayukta*), . and so on up to... inclination of greed (*lobhopayukta*) ?

[Ans.] Gautam ! For these twenty seven aforesaid alternatives should be stated. [2] In the same way twenty seven aforesaid alternatives each should be stated with regard to those having three kinds of right knowledge and those having three kinds of false knowledge.

विवेचन · जिनकी दृष्टि (दर्शन) मे समभाव है, सम्यक्त्व है, वे **सम्यग्दृष्टि** है। वस्तु का विपरीत स्वरूप समझना **मिथ्यादर्शन** है। विपरीत दृष्टि वाला प्राणी **मिथ्यादृष्टि** होता है। जो न पूरी तरह मिथ्यादृष्टि है और न सम्यग्दृष्टि है, वह **सम्यग्मिथ्यादृष्टि-मिश्रदृष्टि** कहलाता है।

तीन ज्ञान और तीन अज्ञान कैसे ?—जो जीव नरक मे सम्यक्त्व सहित उत्पन्न होते है, उन्हें जन्मकाल के प्रथम समय से लेकर भवप्रत्यय अवधिज्ञान होता है, इसलिए उनमें निश्चित रूप से तीन ज्ञान होते हैं। जो मिथ्यादृष्टि जीव नरक में उत्पन्न होते है, वे यहाँ से सज्ञी या असज्ञी जीवों मे से गये हुए होते हैं। उनमें से जो जीव यहाँ से सज्ञी जीवो मे से जाकर नरक मे उत्पन्न होते है, उन्हे जन्मकाल से ही विभंग (विपरीत अवधि) ज्ञान होता है। इसलिए उनमें नियमत तीन अज्ञान होते है। जो जीव यहाँ से असज्ञी जीवो मे से जाकर नरक में उत्पन्न होते है, उन्हे जन्मकाल मे दो अज्ञान (मति-अज्ञान और श्रुत-अज्ञान) होते है, और एक अन्तर्मुहूर्त व्यतीत हो जाने पर पर्याप्त अवस्था प्राप्त होने पर विभगज्ञान उत्पन्न होता है, तब उन्हें तीन अज्ञान हो जाते हैं। इसलिए उनमे तीन अज्ञान भजना (विकल्प) से कहे गये है। अर्थात्-किसी समय उनमें दो अज्ञान होते है, किसी समय तीन अज्ञान। जब दो अज्ञान होते है, तब उनमे क्रोधोपयुक्त आदि ८० भग होते हैं, क्योंकि ये जीव थोडे से होते है। **ज्ञान और अज्ञान**—ज्ञान का अर्थ यहाँ सम्यग्ज्ञान और अज्ञान का अर्थ ज्ञानाभाव नही, अपितु मिथ्याज्ञान है। *(वृत्ति, पत्राक ७२-७३)*

Elaboration—*Samyagdrishti*—one having right perception/faith or righteousness and equanimity. *Mithyadrishti*—to understand a thing wrongly or falsely is *mithya darshan* One having wrong perception/faith is *mithyadrishti*. *Samyagmithyadrishti*—one having right-wrong or mixed perception/faith; in other words one who is neither completely righteous nor completely unrighteous. He is also called *mishradrishti* (having mixed perception/faith).

Three *jnana* and three *ajnana*—A righteous being born in hell has *bhava pratyayik* (acquired at birth) *avadhi jnana* since the very moment of

birth. Therefore he is certainly endowed with three kinds of *jnana*. An unrighteous being born in hell comes from among either sentient beings or non-sentient beings on the earth. Those coming from among sentient beings have *vibhang jnana* (false *avadhi jnana*). Therefore, as a rule they have three kinds of *ajnana* (false knowledge) Those coming from among non-sentient beings have two kinds of *ajnana* (*mati ajnana* or false sensory knowledge and *shrut ajnana* or false scriptural knowledge) at the time of birth After one *Antar-muhurt*, when they are fully developed, they acquire *vibhang jnana* and thus three kinds of *ajnana*. That is the reason for the statement that 'those with false knowledge have three kinds of false knowledge alternatively'. This means that sometime they have two kinds of *ajnana* and at other they have three kinds of *ajnana* When they have two kinds of *ajnana* the number of alternatives for inclinations of anger etc. are eighty; however such instances are very few

Jnana—right knowledge or righteousness *Ajnana*—it is not absence of knowledge but false knowledge or unrighteousness. *(Vritti, leaves 72-73)*

नौवाँ : योग द्वार **NINTH : YOGA**

२४. [प्र.] इमीसे णं जाव किं मणजोगी, वइजोगी, कायजोगी ?

[उ.] तिण्णि वि।

२५. [प्र. १] इमीसे णं जाव मणजोए वट्टमाणा किं कोहोवउत्ता० !

[उ.] सत्तावीसं भंगा। [२] एवं वइजोए। एवं कायजोए।

२४. [प्र.] भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी मे रहने वाले नारक जीव क्या मनोयोगी है, वचनयोगी है अथवा काययोगी है ?

[उ.] गौतम ! वे तीनो प्रकार के हैं, अर्थात् मन, वचन और काया, इन तीनो योगो वाले है।

२५. [प्र. १] भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी मे रहने वाले और यावत् मनोयोग मे रहने वाले नारक जीव क्या क्रोधोपयुक्त यावत् लोभोपयुक्त है ?

[उ.] गौतम ! उनके क्रोधोपयुक्त आदि २७ भग कहने चाहिए। [२] इसी प्रकार वचनयोगी और काययोगी के भी क्रोधोपयुक्त आदि २७ भग कहने चाहिए।

24. [Q.] *Bhante* ! Are the infernal beings living in this Ratnaprabha *prithvi manoyogi* (having associations of mind), *vachanyogi* (having associations of speech) or *kayayogi* (having associations of body) ?

[Ans.] Gautam ! They are of all the three kinds. In other words they have associations of mind, speech as well as body.

25. [Q. 1] *Bhante* ! Do the infernal beings having *manoyoga* (associations of mind; involved in activities of mind) in this Ratnaprabha *prithvi* have inclination of anger (*krodhopayukta*), ... and so on up to... inclination of greed (*lobhopayukta*) ?

[Ans.] Gautam ! For these twenty seven aforesaid alternatives should be stated. [2] In the same way twenty seven aforesaid alternatives each should be stated with regard to *vachanyogi* (having associations of speech) as well as *kayayogi* (having associations of body).

दसवाँ : उपयोग द्वार TENTH : UPAYOGA

२६. [प्र.] इमीसे णं जाव नेरइया किं सागारोवउत्ता, अणागारोवउत्ता ?

[उ.] गोयमा ! सागारोवउत्ता वि, अणागारोवउत्ता वि।

२६. [प्र.] भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी के नारक जीव क्या साकारोपयोग से युक्त है अथवा अनाकारोपयोग से युक्त है ?

[उ.] गौतम ! वे साकारोपयोगयुक्त भी है और अनाकारोपयोगयुक्त भी है।

26. [Q.] *Bhante* ! Are the infernal beings living in this Ratnaprabha *prithvi* endowed with *saakaaropayoga* (elaborate cognition) or *anaakaaropayoga* (cursory cognition) ?

[Ans.] Gautam ! They are endowed with *saakaaropayoga* (elaborate cognition) and also *anaakaaropayog* (cursory cognition).

२७. [प्र. १] इमीसे णं जाव सागारोवओगे वट्टमाणा किं कोहोवउत्ता० ?

[उ.] सत्तावीसं भंगा। [२] एवं अणागारोवउत्ते वि सत्तावीसं भंगा।

२७. [प्र. १] भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी के साकारोपयोगयुक्त नारक जीव क्या क्रोधोपयुक्त हैं; यावत् लोभोपयुक्त हैं ?

[उ.] गौतम ! इनमे क्रोधोपयुक्त इत्यादि २७ भग कहने चाहिए। [२] इसी प्रकार अनाकारोपयुक्त में भी क्रोधोपयुक्त इत्यादि सत्ताईस भग कहने चाहिए।

27. [Q. 1] *Bhante* ! Do the infernal beings having *manoyoga* (associations of mind, involved in activities of mind) in this Ratnaprabha *prithvi* have inclination of anger (*krodhopayukta*), ... and so on up to... inclination of greed (*lobhopayukta*) ?

[Ans.] Gautam ! For these twenty seven aforesaid alternatives should be stated. [2] In the same way twenty seven aforesaid alternatives each should be stated with regard to *vachanyogi* (having associations of speech) as well as *kayayogi* (having associations of body).

योग–उपयोग का अर्थ–यहाँ योग का तात्पर्य है–आत्मा की शक्ति को फैलाना। वह मन, वचन और काया के माध्यम से फैलाई जाती है। इसलिए इन तीनो की प्रवृत्ति, प्रसारण या प्रयोग को योग कहा जाता है। उपयोग का अर्थ–जानना या देखना है। वस्तु के सामान्य (स्वरूप) को जानना अनाकार–उपयोग है और विशेष धर्म को जानना साकारोपयोग है। दर्शन को अनाकारोपयोग और ज्ञान को साकारोपयोग कहा जा सकता है।

Yoga and Upayoga—Here *yoga* means spreading the spiritual power. As it is done through mind, speech and body the indulgence, endeavour or action of these three is called *yoga* *Upayoga* means cognition or perception To know ordinary or simple form of a thing is *anakaar-upayoga* (cursory-cognition) and to know special attributes is *sakaaropayoga* (elaborate cognition) Darshan (perception) may be called *anakaaropayoga* and knowledge may be called *sakaaropayoga*

ग्यारहवाँ लेश्या द्वार ELEVENTH : LESHYA

२८. एवं सत्त वि पुढवीओ नेयव्वाओ। णाणत्तं लेसासु।

गाहा–काऊ य दोसु, ततियाए मीसिया, नीलिया चउत्थीए।
पंचमियाए मीसा, कण्हा तत्तो परमकण्हा ॥७॥

२८. रत्नप्रभा पृथ्वी के विषय मे दस द्वारो का वर्णन किया है, उसी प्रकार से सातो पृथ्वियो (नरकभूमियो) के विषय मे जान लेना चाहिए। किन्तु लेश्याओं में विशेषता (विभिन्नता) है। वह इस प्रकार है–

(गाथार्थ) पहली और दूसरी नरकपृथ्वी मे कापोतलेश्या है, तीसरी नरकपृथ्वी मे मिश्र अर्थात्–कापोत और नील, ये दो लेश्याएँ है, चौथी में नीललेश्या है, पाँचवी मे मिश्र अर्थात्–नील और कृष्ण, ये दो लेश्याएँ है, छठी मे कृष्णलेश्या और सातवी मे परम कृष्णलेश्या होती है।

28. Like the ten attributes (*dvar*) stated for Ratnaprabha *prithvi*, ten attributes each for all the seven *prithvis* (infernal worlds) should be stated. However, there are differences with regard to *leshyas* (complexions of souls)

The verse—*Kapot leshya* (pigeon-like hue) prevails in the first and the second hell. The third hell has mixed, *Kapot* and *Neel* (blue), *leshyas* The fourth hell has *Neel leshya* The fifth hell has mixed, *Neel* and *Krishna* (black), *leshyas* The sixth hell has *Krishna leshya* and the seventh has *Param Krishna* (pitch black) *leshya*.

भवनपतियों की स्थिति आदि दस द्वार TEN ATTRIBUTES OF BHAVANPATIS

२९. [प्र.] चउसट्ठीए णं भंते ! असुरकुमारावास सतसहस्सेसु एगमेगंसि असुरकुमारावासंसि असुरकुमाराणं केवतिया ठिइठाणा पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! असंखेज्जा ठितिठाणा पण्णत्ता। तं जहा–जहन्निया ठिई जहा नेरतिया तहा, नवरं पडिलोमा भंगा भाणियव्वा–सव्वे वि ताव होज्जा लोभोवउत्ता, अहवा लोभोवउत्ता य मायोवउत्ते य, अहवा लोभोवउत्ता य मायोवउत्ता य। एतेणं नेतव्वं जाव थणियकुमारा, नवरं णाणत्तं जाणियव्वं।

२९. [प्र.] भगवन् ! चौसठ लाख असुरकुमारावासो में से एक-एक असुरकुमारावास मे रहने वाले असुरकुमारो के कितने स्थिति-स्थान है ?

[उ.] गौतम ! उनके स्थिति-स्थान असख्यात हैं। यथा-जघन्य स्थिति, एक समय अधिक जघन्य स्थिति इत्यादि सब वर्णन नैरयिको के समान जानना चाहिए। विशेषता यह है कि इनमे जहाँ सत्ताईस भंग आते हैं, वहाँ प्रतिलोम (विपरीत) समझना चाहिए। वे इस प्रकार हैं-समस्त असुरकुमार लोभोपयुक्त होते हैं, अथवा बहुत से लोभोपयुक्त और एक मायोपयुक्त होता है; अथवा बहुत से लोभोपयुक्त और मायोपयुक्त होते हैं, इत्यादि रूप (गम) से जानना चाहिए। इसी प्रकार यावत् स्तनितकुमारों तक समझना चाहिए। विशेषता यह है कि सहनन, सस्थान, लेश्या आदि से भिन्नता जाननी चाहिए।

29. [Q.] *Bhante* ! What are said to be the counts of span of life (*sthiti*) of Asur Kumars living in each of the sixty four hundred thousand Asur Kumar abodes ?

[Ans.] Gautam ! They have innumerable counts. They are like this—minimum life-span, one *Samaya* more than the minimum, two *Samaya* more than the minimum, . and so on as stated about infernal beings. The only difference is that where the 27 alternatives (of inclinations) have been described the order should be reversed (greed, deceit, conceit and anger), such as—all Asur Kumars have inclination of greed, or many have inclination of greed and one has that of deceit, or many have inclination of greed and many have that of deceit, and so on. The same is applicable to all abodes up to Stanit Kumars. The differences are in *samhanan, samsthan* and *leshya*

एकेन्द्रियो का स्थिति आदि दस द्वार ATTRIBUTES OF EKENDRIYAS

३०. [प्र.] असंखेज्जेसु णं भंते ! पुढविकाइयावास सतसहसेस्सु एगमेगंसि पुढविकाइयावासंसि पुढविक्काइयाणं केवतिया ठितिठाणा पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! असंखेज्जा ठितिठाणा पण्णत्ता। तं जहा-जहन्निया ठिई जाव तप्पाउग्गुक्कोसिया ठिती।

३०. [प्र.] भगवन् ! पृथ्वीकायिक जीवो के असंख्यात लाख आवासों मे से एक-एक आवास में बसने वाले पृथ्वीकायिको के कितने स्थिति-स्थान है ?

[उ.] गौतम ! उनके असंख्येय स्थिति-स्थान है। यथा-उनकी जघन्य स्थिति, एक समय अधिक जघन्य स्थिति, इत्यादि यावत् उनके योग्य उत्कृष्ट स्थिति।

30. [Q.] *Bhante* ! What are said to be the counts of span of life (*sthiti*) of *Prithvikayik jivas* (earth-bodied beings) living in each of the innumerable hundred thousand abodes of earth-bodied beings ?

[**Ans.**] Gautam ! They have innumerable counts. They are like this— minimum life-span, one *Samaya* more than the minimum, two *Samaya* more than the minimum, . and so on up to... maximum depending on each specific abode.

३१. [प्र.] असंखेज्जेसु णं भंते ! पुढविक्काइयावास सतसहस्सेसु एगमेगंसि पुढविक्काइयावासंसि जहन्नठितीए वट्टमाणा पुढविक्काइया किं कोधोवउत्ता, माणोवउत्ता, मायोवउत्ता, लोभोवउत्ता ?

[उ.] गोयमा ! कोहोवउत्ता वि माणोवउत्ता वि मायोवउत्ता वि लोभोवउत्ता वि। एवं पुढविक्काइयाणं सव्वेसु वि ठाणेसु अभंगयं। नवरं तेउलेस्साए असीति भंगा।

३१. [प्र.] भगवन् ! पृथ्वीकायिक जीवो के असख्यात लाख आवासो मे से एक-एक आवास में बसने वाले और जघन्य स्थिति वाले पृथ्वीकायिक क्या क्रोधोपयुक्त है, मानोपयुक्त है, मायोपयुक्त हैं या लोभोपयुक्त है ?

[उ.] गौतम ! वे क्रोधोपयुक्त भी है, मानोपयुक्त भी है, मायोपयुक्त भी हैं और लोभोपयुक्त भी है। इस प्रकार पृथ्वीकायिको के सब स्थानो मे अभगक है (पृथ्वीकायिको की सख्या बहुत होने से उनमे एक, बहुत आदि विकल्प-भग नही होते। वे सभी स्थानो मे बहुत है।) विशेष यह है कि तेजोलेश्या मे अस्सी भग कहने चाहिए।

31. [Q.] *Bhante* ! Do the earth-bodied beings with minimum life-span living in each one of the innumerable hundred thousand abodes of earth-bodied beings have inclination of anger (*krodhopayukta*), inclination of conceit (*maanopayukta*), inclination of deceit (*maayopayukta*) and inclination of greed (*lobhopayukta*) ?

[**Ans.**] Gautam ! They have inclination of anger (*krodhopayukta*), inclination of conceit (*maanopayukta*), inclination of deceit (*maayopayukta*) and inclination of greed (*lobhopayukta*). However, the aforesaid alternatives do not apply to earth-bodied beings (As the number of earth-bodied beings is very large there is no scope of alternatives such as one, two and many They are numerous in every regard.) the only difference is that eighty alternatives should be stated with regard to *leshya*

३२. [१] एवं आउक्काइया वि। [२] तेउक्काइय-वाउक्काइयाणं सव्वेसु वि ठाणेसु अभंगयं। [३] वणप्फतिकाइया जहा पुढविक्काइया।

३२. [१] इसी प्रकार अप्काय के सम्बन्ध मे भी जानना चाहिए। [२] तेजस्काय और वायुकाय के सब स्थानों मे अभगक (भगो का अभाव) है। [३] वनस्पतिकायिक जीवो के सम्बन्ध मे पृथ्वीकायिको के समान समझना चाहिए।

32. [1] The same is applicable to *Apkaya* (water-bodied beings). [2] In case of *Tejaskaya* (fire-bodied beings) and *Vayukaya* (air-bodied beings) there is absence of alternatives for all attributes. [3] What is applicable to earth-bodied beings is also applicable to *Vanaspatikaya* (plant-bodied beings).

विकलेन्द्रियों के दस द्वार ATTRIBUTES OF VIKALENDRIYAS

३३. बेइंदिय-तेइंदिय-चउरिंदियाणं जेहिं ठाणेहिं नेरतियाणं असीइ भंगा तेहिं ठाणेहिं असीइं चेव। नवरं अब्भहिया सम्मत्ते, आभिणिबोहियनाणे सुयनाणे य, एएहिं असीइ भंगा; जेहिं ठाणेहिं नेरतियाणं सत्तावीसं भंगा तेसु ठाणेसु सव्वेसु अभंगयं।

३३. जिन स्थानो मे नैरयिक जीवो के अस्सी भंग कहे गये हैं, उन स्थानो मे द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय और चतुरिन्द्रिय जीवो के भी अस्सी भग होते है। विशेषता यह है कि सम्यक्त्व (सम्यग्दृष्टि), आभिनिबोधिक ज्ञान और श्रुतज्ञान-इन तीनो स्थानो मे भी द्वीन्द्रिय आदि जीवो के अस्सी भग होते है, इतनी बात नारक जीवो से अधिक है तथा जिन स्थानो मे नारक जीवो के सत्ताईस भग कहे है, इन सभी स्थानों में यहाँ अभगक है, अर्थात्-कोई विकल्प नही होते।

33. Where eighty alternatives (*bhang*) have been stated for attributes of infernal beings, for the same attributes eighty alternatives should also be stated with regard to two-sensed, three-sensed and four-sensed beings. Difference is that even for the three attributes of righteousness, sensory knowledge and scriptural knowledge there are eighty alternatives in case of two to four sensed beings The other difference is that for attributes having twenty seven alternatives in case of infernal beings, there is absence of alternatives (*abhangak*) in case of two to four sensed beings.

तिर्यंच पंचेन्द्रियों के दस द्वार ATTRIBUTES OF TIRYANCH PANCHENDRIYA

३४. पंचिंदियतिरिक्खजोणिया जहा नेरइया तहा भाणियव्वा, नवरं जेहिं सत्तावीसं भंगा तेहिं अभंगयं कायव्वं। जत्थ असीति तत्थ असीतिं चेव।

३४. जैसा नैरयिको के विषय मे कहा, वैसा ही पचेन्द्रिय तिर्यंचयोनिक जीवो के विषय में कहना चाहिए। विशेषता यह है कि जिन-जिन स्थानो मे नारक-जीवो के सत्ताईस भंग कहे है, उन-उन स्थानो मे यहाँ अभगक कहना चाहिए और जिन स्थानों मे नारको के अस्सी भंग कहे है, उन-उन स्थानों में पचेन्द्रिय तिर्यंचयोनिक जीवो के भी अस्सी भग कहने चाहिए।

34. What has been stated for infernal beings should be repeated for *tiryanch panchendriya* (five sensed animals). The difference is that for attributes having twenty seven alternatives in case of infernal beings, there is absence of alternatives (*abhangak*) in case of five sensed animals and for attributes having eighty alternatives in case of infernal beings, there are eighty alternatives in case of five sensed animals as well.

मनुष्यों के दस द्वार ATTRIBUTES OF HUMAN BEINGS

३५. मणुस्सा वि। जेहिं ठाणेहिं नेरइयाणं असीति भंगा तेहिं ठाणेहिं मणुस्साण वि असीतिं भंगा भाणियव्वा। जेसु ठाणेसु सत्तावीसा तेसु अभंगयं, नवरं मणुस्साणं अब्भहियं–जहन्नियाए ठिईए आहारए य असीति भंगा।

३५. नारक जीवो मे जिन-जिन स्थानो मे अस्सी भग कहे है, उन-उन स्थानो में मनुष्यो के भी अस्सी भग कहने चाहिए। नारक जीवो मे जिन-जिन स्थानो में सत्ताईस भग कहे हैं उनमे मनुष्यों में अभंगक कहना चाहिए। विशेषता यह है कि मनुष्यो के जघन्य स्थिति में और आहारक शरीर मे अस्सी भग होते है और यही नैरयिको की अपेक्षा मनुष्यो मे अधिक है।

35. For attributes having eighty alternatives in case of infernal beings, there are eighty alternatives in case of human beings also and for attributes having twenty seven alternatives in case of infernal beings, there are twenty seven alternatives in case of human beings also. The difference is that for the minimum life-span and *aharak sharira* (telemigratory body) there are eighty alternatives

वाणव्यन्तरों आदि के दस द्वार ATTRIBUTES OF VANAVYANTAR AND OTHERS

३६. वाणमंतर–जोइस–वेमाणिया जहा भवणवासी (सु. २९) नवरं णाणत्तं जाणियव्वं जं जस्स; जाव अणुत्तरा।

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ।

॥ पढमे सए : पंचमो उद्देसो समत्तो ॥

३६. वाणव्यन्तर, ज्योतिष्क और वैमानिक देवो का कथन भवनपति देवो के समान समझना चाहिए। विशेषता यह है कि जो जिसका नानात्व-भिन्नत्व है, वह जान लेना चाहिए, यावत् अनुत्तरविमान तक कहना चाहिए।

'भगवन् ! यह इसी प्रकार है, यह इसी प्रकार है', ऐसा कहकर यावत् गौतम स्वामी विचरण करते है।

36. Vanavyantar (interstitial), Jyotishk (stellar) and Vaimanik gods (vehicular) follow the same pattern as that of Bhavan-pati gods (abode dwelling). The difference is that their uniqueness should be noted. This goes up to Anuttar Vimaan (the highest celestial vehicle)

"*Bhante* ! Indeed that is so. Indeed that is so " With these words. . and so on up to ascetic Gautam resumed his activities.

विवेचन : भवनपति देवों की प्रकृति नारकों की प्रकृति से भिन्न–नरक के जीवो मे क्रोध अधिक होता है, वहाँ भवनपति आदि देवो मे लोभ की अधिकता होती है। इसलिए नारको मे जहाँ २७ भग–क्रोध, मान, माया, लोभ इस क्रम से कहे गये थे, वहाँ देवो मे इससे विपरीत क्रम से कहना चाहिए, यथा–लोभ, माया, मान और क्रोध।

देवो की प्रकृति में लोभ की अधिकता होने से समस्त भंगो मे 'लोभ' शब्द को बहुवचनान्त ही रखना चाहिए। यथा–असंयोगी एक भंग–(१) सभी लोभी। द्विकसंयोगी ६ भंग–(१) लोभी बहुत, मायी एक, (२) लोभी बहुत, मायी बहुत; (३) लोभी बहुत, मानी एक, (४) लोभी बहुत, मानी बहुत; (५) लोभी बहुत, क्रोधी एक; और (६) लोभी बहुत, क्रोधी बहुत। इसी प्रकार त्रिकसयोगी के १२ भग, चतु.संयोगी के ८ भंग जान लेना चाहिए।

पृथ्वीकायिक में ३ शरीर–(औदारिक, तैजस्, कार्मण), शरीरसघातरूप में मनोज्ञ–अमनोज्ञ दोनों प्रकार के पुद्गल परिणमते है। इनमे भवधारणीय एव उत्तरवैक्रियशरीर भेद नहीं होते। क्रमश चार लेश्याएँ होती हैं। ये हुण्डक संस्थानी, एकान्त मिथ्यादृष्टि, अज्ञानी (मतिश्रुताज्ञान), केवल काययोगी होते है। इसी तरह अप्काय, तेजस्काय, वायुकाय और वनस्पतिकाय के दस ही द्वार समझने चाहिए। तेजस्काय और वायुकाय मे देव उत्पन्न नहीं होते, इसलिए तेजोलेश्या और तत्सम्बन्धी ८० भग नही होते। वायुकाय के ४ शरीर (आहारक को छोडकर) होते है।

विकलेन्द्रिय जीवो से नारकों में अन्तर–चूँकि विकलेन्द्रिय जीव अल्प होते हैं, इसलिए उनमे एक-एक जीव भी कदाचित् क्रोधादि–उपयुक्त हो सकता है, विकलेन्द्रियो मे मिश्रदृष्टि नही होती, आभिनिबोधिक ज्ञान और श्रुतज्ञान (अपर्याप्त दशा मे पूर्वभव की अपेक्षा) होने से इनमें भी ८० भग होते है। नारकों में जिन–जिन स्थानो मे २७ भग बतलाये गये है, उन–उन स्थानो मे विकलेन्द्रिय मे अभगक कहना चाहिए। इनमे तेजोलेश्या नहीं होती। ये (विकलेन्द्रिय) सम्यग्दृष्टि और मिथ्यादृष्टि तथा ज्ञानी और अज्ञानी तथा काययोगी और वचनयोगी होते है। जहाँ नारको के २७ भग कहे है, वहाँ मनुष्यो मे अभगक हैं, क्योंकि मनुष्य सभी कषायों से उपयुक्त बहुत पाये जाते है। मनुष्यो मे शरीर पाँच, सहनन छह, सस्थान छह, लेश्याएँ छह, दृष्टि तीन, ज्ञान पाँच, अज्ञान तीन आदि होते है। आहारक शरीर वाले मनुष्य अत्यल्प होने से ८० भग होते है। केवलज्ञान मे कषाय नही होता।

चारो देवों सम्बन्धी कथन में अन्तर–भवनपति देवो की तरह शेष तीन देवो का वर्णन समझना। ज्योतिष्क और वैमानिको मे कुछ अन्तर है। ज्योतिष्को मे केवल एक तेजोलेश्या होती है, वैमानिको मे तेजो, पद्म और शुक्ल, ये तीन शुभ लेश्याएँ पाई जाती है। वैमानिको मे नियमत· तीन ज्ञान, तीन अज्ञान पाये जाते है। असंज्ञी जीव ज्योतिष्क देवो मे उत्पन्न नही होते, इसलिए उनमे अपर्याप्त अवस्था मे भी विभगज्ञान होता है। *(वृत्ति, पत्राक ७३-७७)*

॥ प्रथम शतक : पंचम उद्देशक समाप्त ॥

Elaboration—Difference between the nature of abode dwelling gods and infernal beings—Infernal beings have excess of anger whereas abode dwelling gods have excess of greed. That is why the 27 alternatives of inclinations in case of infernal beings have been stated in the order—anger, conceit, deceit and greed, and those for abode dwelling gods have been stated in reverse order—greed, deceit, conceit and anger. As there is excess of greed in abode dwelling gods, in all alternatives greed should be stated in plural, for example—Just one alternative without combination—all greedy (1) Six alternatives for combination of two—many greedy and one deceitful (1), many greedy and many deceitful (2), many greedy and one conceited (3), many greedy and many conceited (4), many greedy and one angry (5), many greedy and many angry (6). In the same way twelve alternatives for combinations of three and eight alternatives for combination of four.

Kinds of bodies—In earth-bodied beings there are three kinds of bodies—*audarik* (gross physical), *taijas* (fiery) and *karman* (*karmic*) and both attractive (*manojna*) and non-attractive (*amanojna*) matter particles coalesce to form the body. They do not have *bhava-dharaniya* (incarnation sustaining) and *uttar-vaikriya* (secondary transmuted) bodies. They have four *leshyas* They have *hundak samsthan,* they are exclusively unrighteous, ignorant (of sensory and scriptural knowledge) and are with bodily association only (*kayayogi*). In the same way there are only ten attributes (*dvar*) with water-bodied, fire-bodied, air-bodied and plant-bodied beings Gods do not reincarnate as fire-bodied and air-bodied beings, therefore they do not have *tejoleshya* and eighty alternatives related to that Air-bodied beings have four kinds of bodies other than *aharak.*

Difference between infernal beings and *vikalendriyas* (two to four sensed beings)—As there are comparatively few *vikalendriya* beings they may have even single beings with all the four inclinations *Vikalendriyas* do not have mixed perception As they have sensory and scriptural knowledge (underdeveloped and in context of past birth) there are eighty alternatives for them Where 27 alternatives have been stated for infernal beings, for those attributes in *Vikalendriyas* absence of alternatives should be stated They do not have *tejoleshya.* They are righteous-unrighteous, *jnani-ajnani* (with right and wrong knowledge) and *kaya-vachan-yogi* (association of body and speech) Where 27 alternatives have been stated for infernal beings, for those attributes in human beings absence of alternatives should be stated This is because human beings with inclination for all passions are in abundance In humans there are five kinds of bodies, six kinds of *samhanan,* six kinds of *samsthan,* six kinds of *leshya,* three kinds of perception, five kinds of *jnana* and three kinds of *ajnana.* As there are very few humans with *aharak sharira* there are 80 alternatives related to that With *Keval-jnana* there is absence of passions.

Information about divine beings—The details about the remaining three kinds of gods are same as abode dwelling gods. There are some differences between Jyotishk gods and Vaimanik gods Jyotishk gods have just one *leshya—tejoleshya* and Vaimaniks have three noble *leshyas—tejo, padma* and *shukla* Vaimaniks, as a rule, have three *jnanas* (right knowledge) and three *ajnanas* (wrong knowledge). Non-sentient beings do not reincarnate among Jyotishk gods therefore they have *vibhang jnana* (perverse knowledge) even in underdeveloped state *(Vritti, leaves 73-77)*

● END OF THE FIFTH LESSON OF THE FIRST SHATAK ●

प्रथम शतक : छठा उद्देशक

FIRST SHATAK (Chapter One) : SIXTH LESSON

यावन्त YAVANT (AS FAR AS)

सूर्य के उदयास्त सम्बन्धी प्रश्न **SUNRISE AND SUNSET**

१. [प्र.] जावतियातो णं भंते ! ओवासंतरातो उदयंते सूरिए चक्खुप्फासं हव्वमागच्छति, अत्थमंते वि य णं सूरिए तावतियाओ चेव ओवासंतराओ चक्खुफासं हव्वमागच्छति ?

[उ.] हंता, गोयमा ! जावतियाओ णं ओवासंतराओ उगयंते सूरिए चक्खुफासं हव्वमागच्छति अत्थमंते वि सूरिए जाव हव्वमागच्छति।

१. [प्र.] भगवन् ! जितने-जितने अवकाशान्तर से अर्थात्-जितनी दूरी से उदय होता हुआ सूर्य आँखों से शीघ्र देखा जाता है, उतनी ही दूरी से क्या अस्त होता हुआ सूर्य भी दिखाई देता है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! जितनी दूर से उदय होता हुआ सूर्य आँखों से दीखता है, उतनी ही दूर से अस्त होता सूर्य भी आँखों से दिखाई देता है।

1. [Q.] *Bhante* ! Is the setting sun visible to naked eyes at a distance (*avakashantar*) from which the rising sun is visible to naked eyes ?

[Ans.] Yes, Gautam ! The setting sun also is visible to naked eyes at a distance from which the rising sun is visible to naked eyes ?

२. [प्र.] जावतियं णं भंते ! खेत्तं उदयंते सूरिए आतवेणं सव्वतो समंता ओभासेति उज्जोएति तवेति पभासेति अत्थमंते वि णं सूरिए तावतियं चेव खेत्तं आतवेणं सव्वतो समंता ओभासेति उज्जोएति तवेति पभासेति ?

[उ.] हंता, गोयमा ! जावतियं णं खेत्तं जाव पभासेति।

२. [प्र.] भगवन् ! उदय होता हुआ सूर्य अपने ताप द्वारा जितने क्षेत्र को सब प्रकार से, चारो ओर से सभी दिशाओ-विदिशाओं को अवभासित (सामान्य रूप मे प्रकाशित) करता है, उद्योतित (विशेष रूप मे प्रकाश) करता है, तपाता (शीत दूर करता) है, प्रभासित (तेज प्रकाश व तीव्र ताप करता है) क्या उतने ही क्षेत्र को अस्त होता हुआ सूर्य भी अपने ताप द्वारा सभी दिशाओ-विदिशाओं को प्रकाशित करता है, उद्योतित करता है, तपाता है और बहुत तपाता है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! उदय होता हुआ सूर्य जितने क्षेत्र को प्रकाशित करता है, यावत् अत्यन्त तपाता है, उतने ही क्षेत्र को अस्त होता हुआ सूर्य भी प्रकाशित करता है, यावत् अत्यन्त तपाता है।

2. [Q.] *Bhante* ! The rising sun lights up (*avabhasit*), illuminates (*udyotit*), warms up (*taapit*) and blazes (*prabhasit*) certain area in all

cardinal and middle directions with its radiance Does the setting sun too light up, illuminate, warm up and blaze the same area in all cardinal and middle directions with its radiance ?

[Ans.] Yes, Gautam ! Like the rising sun lights up (*prakashit*), ... and so on up to and blazes (*prabhasit*) certain area, in the same way the setting sun also lights up, . and so on up to.. and blazes the same area.

३. [प्र. १] तं भंते ! किं पुट्ठं ओभासेति अपुट्ठं ओभासेति ?

[उ.] जाव छद्दिसिं ओभासेति। [२] एवं उज्जोवेइ तवेति पभासेति जाव नियमा छद्दिसिं।

३. [प्र. १] भगवन् ! सूर्य जिस क्षेत्र को प्रकाशित करता है, क्या वह क्षेत्र सूर्य से स्पृष्ट-स्पर्श-स्पर्श किया हुआ होता है, या अस्पृष्ट होता है ?

[उ.] वह क्षेत्र सूर्य से स्पृष्ट होता है और यावत् उस क्षेत्र को छहो दिशाओ मे प्रकाशित करता है। [२] इसी प्रकार उद्योतित करता है, तपाता है और बहुत तपाता है, यावत् नियमपूर्वक छहो दिशाओं मे अत्यन्त तपाता है।

3. [Q. 1] *Bhante* ! Is the area lit up by the sun touched by it or not touched ?

[Ans.] That area is touched by the sun till it lights up all the six directions [2] In the same way it illuminates, warms and blazes all the six directions as a rule.

४. [प्र. १] से नूणं भंते ! सव्वंति सव्वावंति फुसमाणकालसमयंसि जावतियं खेत्तं फुसइ तावतियं फुसमाणे पुट्ठे त्ति वत्तव्वं सिया ?

[उ.] हंता, गोयमा ! सव्वंति जाव वत्तव्वं सिया।

[प्र. २] तं भंते ! किं पुट्ठं फुसति अपुट्ठं फुसति ?

[उ.] जाव नियमा छद्दिसिं।

४. [प्र. १] भगवन् ! स्पर्श करने के समय मे सूर्य के साथ सम्बन्ध रखने वाले जितने क्षेत्र को सर्व दिशाओं मे सर्वात्मना सूर्य स्पर्श कर रहा होता है, क्या उस क्षेत्र का 'स्पृष्ट' कहा जा सकता है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! वह 'सर्व' यावत् सर्वात्मना स्पर्श करता हुआ स्पृष्ट; ऐसा कहा जा सकता है।

[प्र. २] भगवन् ! सूर्य स्पृष्ट क्षेत्र का स्पर्श करता है, या अस्पृष्ट क्षेत्र का स्पर्श करता है ?

[उ.] सूर्य स्पृष्ट क्षेत्र का स्पर्श करता है, यावत् नियमपूर्वक छहो दिशाओ मे स्पर्श करता है।

4. [Q. 1] *Bhante* ! Can all the area in all the directions coming in full contact with the sun at the time of touching be called to have been touched ?

[Ans.] Yes, Gautam ! All the area... and so on up to. can be called to have been touched.

[Q. 2] *Bhante* ! Does the sun touch the touched area or the untouched area ?

[Ans.] The sun touches the touched area... and so on up to... touches all the six directions as a rule

विवेचन : सूर्य कितनी दूर से दीखता है—सूर्य के १८४ मण्डल है। कर्कसंक्रान्ति में सूर्य सर्वाभ्यन्तर (सबके मध्य वाले) मण्डल मे प्रवेश करता है। उस समय वह भरतक्षेत्रवासियो को साधिक ४७,२६३ योजन दूर से दीखता है। यहाँ **चक्खुफासं** (चक्षु-स्पर्श) शब्द आया है, उसका अर्थ आँखो का स्पर्श होना नही, अपितु आँखो से दिखाई देना है। स्पर्श होने पर तो आँख अपने मे रहे हुए काजल को भी नहीं देख पाती। *(वृत्ति, पत्रांक ७८)*

Elaboration—Visibility of the sun—The sun is said to have 184 variations in its orbit. At the time of Cancer solstice the sun enters the middle-most orbit. At that time it is visible to the people living in Bharat area from a maximum distance of 47,263 *Yojans*. The term *chakkhuphasam* (*chakshusparsh*) has not been used in its literal meaning of touching eyes, it means visible to naked eyes. When touched, even collyrium in the eye is not visible to it *(Vritti, leaf 78)*

लोकान्त–अलोकान्तादि स्पर्श TOUCHING LOKANT-ALOKANT ETC.

५. [प्र. १] लोअंते भंते ! अलोअंतं फुसति ? अलोअंते वि लोअंतं फुसति ?

[उ.] हंता, गोयमा ! लोअंते अलोअंतं फुसति, अलोअंते वि लोअंतं फुसति।

[प्र. २] तं भंते ! किं पुट्ठं फुसति अपुट्ठं फुसति ?

[उ.] जाव नियमा छद्दिसिं फुसति।

५. [प्र. १] भगवन् ! क्या लोक का अन्त (किनारा) अलोक के अन्त को स्पर्श करता है? क्या अलोक का अन्त लोक के अन्त को स्पर्श करता है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! लोक का अन्त अलोक के अन्त को स्पर्श करता है और अलोक का अन्त लोक के अन्त को स्पर्श करता है।

[प्र. २] भगवन् ! वह जो (लोक का अन्त अलोकान्त को और अलोकान्त लोकान्त को) स्पर्श करता है, क्या वह क्षेत्र स्पृष्ट है या अस्पृष्ट है ?

[उ.] (गौतम ! वह स्पृष्ट का स्पर्श करता है, अस्पृष्ट का स्पर्श नही करता) यावत् नियमपूर्वक छहों दिशाओ मे स्पृष्ट होता है।

5. [Q. 1] *Bhante* ! Does the edge of occupied space (*lokant*) touch the edge of unoccupied space (*alokant*) ? Does the edge of unoccupied space (*alokant*) touch the edge of occupied space (*lokant*) ?

[Ans.] Yes, Gautam ! The edge of occupiod space (*lokant*) touches the edge of unoccupied space (*alokant*) and the edge of unoccupied space (*alokant*) touches the edge of occupied space (*lokant*).

[Q. 2] *Bhante* ! Does it touch the touched area or the untouched ?

[Ans.] It touches the touched. . and so on up to... touches in all the six directions as a rule

६. [प्र. १] दीवंते भंते ! सागरंतं फुसति ? सागरंते वि दीवंतं फुसति ?

[उ.] हंता, जाव नियमा छद्दिसिं फुसति।

६. [प्र. १] भगवन् ! क्या द्वीप का अन्त (किनारा) समुद्र के अन्त को स्पर्श करता है ? और समुद्र का अन्त द्वीप के अन्त को स्पर्श करता है ?

[उ.] हाँ, (गौतम ! ऐसा करता है) यावत्–नियम से छहों दिशाओ मे स्पर्श करता है।

6. [Q. 1] *Bhante* ! Does the edge of an island (or continent) touch the edge of the sea ? Does the edge of the sea touch the edge of an island ?

[Ans.] Yes it does... and so on up to... touches in all the six directions as a rule

[प्र. २] एवं एएणं अभिलावेणं उदकंते पोयंतं फुसइ, छिद्दंते दूसंतं, छायंते आतवंतं ?

[उ.] जाव नियमा छद्दिसिं फुसति।

[प्र. २] भगवन् ! क्या इसी प्रकार इसी अभिलाप से पानी का किनारा, पोत (नौका–जहाज) के किनारे को और पोत का किनारा पानी के किनारे को स्पर्श करता है ? क्या छेद का किनारा वस्त्र के किनारे को और वस्त्र का किनारा छेद के किनारे को स्पर्श करता है ? और क्या छाया का अन्त आतप (धूप) के अन्त को और आतप का अन्त छाया के अन्त को स्पर्श करता है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! (उक्त सभी का स्पर्श घटित होता है) यावत् नियमपूर्वक छहो दिशाओ को स्पर्श करता है।

[Q. 2] *Bhante* ! From this does it imply that the edge of water touches the edge of a boat (or ship) and the edge of a boat touches the edge of water ? The edge of a hole touches the edge of the cloth and the edge of the cloth touches the edge of a hole ? And the edge of a shadow touches the edge of sun and the edge of sun touches the edge of a shadow ?

[Ans.] Yes, they all do... and so on up to . touches in all the six directions as a rule.

अठारह पापस्थान क्रिया-स्पर्श प्ररूपणा TOUCH OF EIGHTEEN SOURCES OF SIN

७. [प्र. १] अत्थि णं भंते ! जीवाणं पाणाइवाएणं किरिया कज्जति ?

[उ.] हंता, अत्थि।

[प्र. २] सा भंते ! किं पुट्ठा कज्जति ? अपुट्ठा कज्जति ?

[उ.] जाव निव्वाघातेणं छद्दिसिं, वाघातं पडुच्च सिय तिदिसिं, सिय चउदिसिं, सिय पंचदिसिं।

७. [प्र. १] भगवन् ! क्या जीवो द्वारा प्राणातिपात क्रिया की जाती है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! की जाती है।

[प्र. २] भगवन् ! की जाने वाली वह क्रिया क्या स्पृष्ट है, या अस्पृष्ट है ?

[उ.] यदि व्याघात न हो तो छहो दिशाओ को और व्याघात हो तो कदाचित् तीन दिशाओ को, कदाचित् चार दिशाओं को और कदाचित् पाँच दिशाओ को स्पर्श करती है।

7. [Q. 1] *Bhante* ! Do beings indulge in the act of killing (*pranatipat*) ?

[Ans.] Yes, Gautam ! They do

[Q. 2] *Bhante* ! Is the activity so done touched or untouched ?

[Ans.] If there is no obstruction it touches six directions and if there is some obstruction it touches may be three, four or five directions.

[प्र. ३] सा भंते ! किं कडा कज्जति ? अकडा कज्जति ?

[उ.] गोयमा ! कडा कज्जति, नो अकडा कज्जति।

[प्र. ४] सा भंते ! किं अत्तकडा कज्जति ? परकडा कज्जति ? तदुभयकडा कज्जति ?

[उ.] गोयमा ! अत्तकडा कज्जति, णो परकडा कज्जति, णो तदुभयकडा कज्जति।

[प्र. ३] भगवन् ! की जाने वाली क्या वह प्राणातिपात क्रिया कृत है अथवा अकृत ?

[उ.] गौतम ! वह क्रिया कृत है, अकृत नही।

[प्र. ४] भगवन् ! यह क्रिया क्या आत्मकृत (स्वय द्वारा कृत) है, परकृत है, अथवा तदुभयकृत है ?

[उ.] गौतम ! वह क्रिया आत्मकृत है, किन्तु परकृत या तदुभयकृत नही।

[Q. 3] *Bhante* ! Is the activity so done performed (*krit*) or non-performed (*akrit*) ?

[Ans.] Gautam ! It is performed and not non-performed.

[Q. 4] *Bhante* ! Is that activity performed by self, by others, or by both (self and others) ?

[Ans.] Gautam ! It is performed by self but not by others or both.

[प्र. ५] सा भंते ! किं आणुपुव्विं कडा कज्जति ? अणाणुपुव्विं कडा कज्जति ?

[उ.] गोयमा ! आणुपुव्विं कडा कज्जति नो अणाणुपुव्विं कडा कज्जति। जा य कडा, जा य कज्जति, जा य कज्जिस्सति सव्वा सा आणुपुव्विकडा, नो अणाणुपुव्विकड त्ति वत्तव्वं सिया।

[प्र. ५] भगवन् ! जो क्रिया की जाती है, वह क्या आनुपूर्वी–अनुक्रमपूर्वक (एक के पश्चात् दूसरी) की जाती है, या बिना अनुक्रम से की जाती है ?

[उ.] गौतम ! वह अनुक्रमपूर्वक की जाती है, किन्तु बिना अनुक्रम से नहीं की जाती। जो क्रिया की गई है, या जो क्रिया की जा रही है, अथवा जो क्रिया की जायेगी, वह सब अनुक्रमपूर्वक कृत है। किन्तु बिना अनुक्रमपूर्वक कृत नहीं है, ऐसा कहना चाहिए।

[Q. 5] *Bhante* ! Is that activity performed in a sequence (*anupurvi*) or without a sequence (*ananupurvi*) ?

[Ans.] Gautam ! It is performed in a sequence and not without a sequence. The activity which has been performed, that which is being performed or that which will be performed, all these follow a sequence and are not without a sequence. This is how it must be stated.

८. [प्र. १] अत्थि णं भंते ! नेरइयाणं पाणातिवायकिरिया कज्जति ?

[उ.] हंता, अत्थि।

[प्र. २] सा भंते ! किं पुट्ठा कज्जति ? अपुट्ठा कज्जति ?

[उ.] जाव नियमा छद्दिसिं कज्जति।

[प्र. ३] सा भंते ! किं कडा कज्जति ? अकडा कज्जति ?

[उ.] तं चेव जाव नो अणाणुपुव्विं कड त्ति वत्तव्वं सिया।

८. [प्र. १] भगवन् ! क्या नैरयिकों द्वारा प्राणातिपात क्रिया की जाती है।

[उ.] हाँ, गौतम ! की जाती है।

[प्र. २] भगवन् ! नैरयिको द्वारा जो क्रिया की जाती है, वह स्पृष्ट की जाती है या अस्पृष्ट की जाती है।

[उ.] गौतम ! वह यावत् नियम से छहो दिशाओं मे की जाती है।

[प्र. ३] भगवन् ! नैरयिको द्वारा जो क्रिया की जाती है, वह क्या कृत है अथवा अकृत है ?

[उ.] वह पहले की तरह जानना चाहिए, यावत्–वह अनुक्रमपूर्वक कृत है, बिना अनुक्रम कृत नहीं; ऐसा कहना चाहिए।

8. **[Q. 1]** *Bhante* ! Do infernal beings indulge in the act of killing (*pranatipat*) ?

[Ans.] Yes, Gautam ! They do.

[Q. 2] *Bhante* ! Is the activity done by infernal beings touched or untouched ?

[Ans.] It is touched... and so on up to . in all the six directions as a rule.

[Q. 3] *Bhante* ! Is the activity so done performed or non-performed ?

[Ans.] Gautam ! Note that it is as aforesaid... and so on up to... all these follow a sequence and not without a sequence This is how it must be stated.

९. जहा नेरइया (सु. ८) तहा एगिंदियवज्जा भाणियव्वा जाव वेमाणिया।

९. नैरयिको के समान एकेन्द्रिय को छोडकर द्वीन्द्रियादि से लेकर वैमानिकपर्यन्त वैमानिकों तक सब दण्डकों मे कहना चाहिए।

9. What has been said about infernal beings should be repeated for all *dandaks* (places of suffering) from two-sensed beings to Vaimaniks with the exception of one-sensed beings

१०. एगिंदिया जहा जीवा (सु. ७) तहा भाणियव्वा।

१०. एकेन्द्रियो के विषय में औधिक (सामान्य) जीवो की भाँति कहना चाहिए।

10. For one-sensed beings the general statement for living beings should be repeated.

११. जहा पाणातिवाते (सु. ७–१०) तहा मुसावाते तहा अदिन्नादाणे मेहुणे परिग्गहे कोहे जाव मिच्छादंसणसल्ले एवं एते अट्ठारस, चउवीसं दंडगा भाणियव्वा।

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति भगवं गोतमे समणं भगवं जाव विहरति।

११. प्राणातिपात (क्रिया) के समान मृषावाद, अदत्तादान, मैथुन, परिग्रह, क्रोध यावत् मिथ्यादर्शनशल्य तक इन अठारह ही पापस्थानों के विषय मे चौबीस दण्डक कहने चाहिए।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है' यो कहकर भगवान गौतम श्रमण भगवान महावीर स्वामी को वन्दना–नमस्कार करके यावत् विचरते है।

11. What has been said about the act of killing should be repeated about acts of falsity (*mrishavad*), stealing (*adattadan*), sex (*maithun*), possession (*parigraha*), anger. . and so on up to... thorn of wrong belief (*mithyadarshan shalya*) for all the twenty four *dandaks* (places of suffering)

"*Bhante* ! Indeed that is so. Indeed that is so." With these words... and so on up to... ascetic Gautam resumed his activities.

विवेचन : अनुक्रम से होना या गिनना, जैसे-एक, दो, तीन, चार, पाँच; यह आनुपूर्वी है। एकदम उल्टे क्रम मे, जैसे-पाँच, चार, तीन, दो, एक गिनना पश्चानुपूर्वी है। जिसमे एकदम उल्टा या एकदम सुल्टा क्रम न हो, जैसे-दो, पाँच, चार, तीन आदि यह अनानुपूर्वी है।

क्रिया के सम्बन्ध मे पाँच निष्कर्ष-(१) जीव प्राणातिपातादि की क्रिया स्वय करते है, वे बिना किये नहीं होती। (२) ये क्रियाएँ मन, वचन या काया से स्पृष्ट होती है। (३) ये क्रियाएँ करने से लगती हैं, बिना किये नही लगती है। फिर भले ही वह क्रिया मिथ्यात्वादि किसी कारण से की जाये। (४) क्रियाएँ स्वय करने से लगती हैं, दूसरे के (ईश्वर, काल आदि के) करने से नही लगती। (५) ये क्रियाएँ अनुक्रमपूर्वक कृत होती है।

Elaboration—To count ın a sequence like one, two, three, four, five and so on ıs *anupurvi* To count in reverse order lıke five, four, three, two and one ıs *pashchanupurvı*. To count wıthout any sequence or order lıke two, five, three, four and one ıs *ananupurvı*

Five inferences about actıvities—(1) Beıngs perform activities like kıllıng of theır own volıtıon, they are not done without voluntarily doing (2) These actıvitıes are touched by mind, speech or body. (3) These activıtıes take effect only when done and not without beıng done (4) These actıvities take effect only when done by self and not when done by others (god or fate). (5) These actıvıtıes are performed ın a sequence

रोह अनगार का वर्णन **ROHA ANAGAR**

१२. तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवतो महावीरस्स अंतेवासी रोहे नाम अणगारे पगतिभद्दए पगतिमउए पगतिविणीते पगतिउवसंते पगतिपतणुकोह-माण-माय-लोभे मिउ-मद्दवसंपन्ने अल्लीणे भद्दए विणीए समणस्स भगवतो महावीरस्स अदूरसामंते उड्ढंजाणू अहोसिरे झाणकोट्ठोवगए संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरति। तए णं से रोहे नामं अणगारे जातसड्ढे जाव पज्जुवासमाणे एवं वयासी—

१२. उस काल और उस समय मे श्रमण भगवान महावीर स्वामी के अन्तेवासी (शिष्य) रोह नामक अनगार थे। वे प्रकृति से भद्र, मृदु (कोमल), विनीत, उपशान्त, अल्प क्रोध, मान, माया और लोभ वाले, अत्यन्त निरहकारता-सम्पन्न, गुरु-भक्ति मे लीन, किसी को सताप न पहुँचाने वाले, विनयमूर्ति थे। वे रोह अनगार ऊर्ध्वजानु (घुटने ऊपर करके) और नीचे की ओर सिर झुकाए हुए, ध्यानरूपी कोष्ठक मे प्रविष्ट, सयम और तप से आत्मा को भावित करते हुए श्रमण भगवान महावीर के समीप विचरते थे। तत्पश्चात् वह रोह अनगार के मन मे श्रद्धा, सशय, कुतूहल आदि उत्पन्न होने पर भगवान की पर्युपासना करते हुए इस प्रकार बोले-

12. During that perıod of tıme there was an ascetic discıple of Bhagavan Mahavir whose name was Roha By nature he was noble (*bhadra*), gentle (*mrıdu*), polıte (*vıneet*) and serene (*upashant*) He had mere traces of anger, conceıt, deceıt and greed He was completely free of vanıty He was engrossed ın devotıon of his guru. He was conscious about

not causing pain to anyone and an embodiment of modesty. With his knees up and head bent low, that ascetic Roha sat immersed in meditation, enkindling (*bhaavit*) his soul with ascetic-discipline and austerities in proximity of Shraman Bhagavan Mahavir. Then an interest, doubt and curiosity got triggered, sprouted, arisen and surfaced in the mind of ascetic Roha and so on up to . he paid his homage and submitted ·

१३. [प्र.] पुव्विं भंते ! लोए ? पच्छा अलोए ! पुव्विं अलोए ? पच्छा लोए ?

[उ.] रोहा ! लोए य अलोए य पुव्विं पेते, पच्छा पेते, दो वि ते सासता भावा, अणाणुपुव्वी एसा रोहा !

१३. [प्र.] भगवन् ! पहले लोक है और पीछे अलोक है ? अथवा पहले अलोक और पीछे लोक है ?

[उ.] रोह ! लोक और अलोक, पहले भी हैं और पीछे भी है। ये दोनो ही शाश्वतभाव हैं। हे रोह ! इन दोनो मे 'यह पहला और यह पिछला', ऐसा क्रम नही है।

13. [Q.] *Bhante* ! Is *lok* (occupied space) first and *alok* (unoccupied space) next ? Or *alok* first and *lok* next ?

[Ans.] Roha ! *Lok* and *alok* both are first as well as next These both have eternal existence O Roha ! The order of preceding and following is not applicable to these

१४. [प्र.] पुव्विं भंते ! जीवा ? पच्छा अजीवा ? पुव्विं अजीवा ? पच्छा जीवा ?

[उ.] जहेव लोए य अलोए य तहेव जीवा य अजीवा य।

१४. [प्र.] भगवन् ! पहले जीव और अजीव है, या पहले अजीव और पीछे जीव है ?

[उ] रोह ! जैसा लोक और अलोक के विषय मे कहा है, वैसा ही जीवो और अजीवो के विषय मे समझना चाहिए।

14. [Q.] *Bhante* ! Is *jiva* (soul or the living) first and *ajiva* (non-soul or the non-living) next ? Or *jiva* first and *ajiva* next ?

[Ans.] Roha ! What has been stated about *lok* and *alok* is true for *jiva* and *ajiva* as well

१५. एवं भवसिद्धिया य अभवसिद्धिया य, सिद्धी असिद्धी, सिद्धा असिद्धा।

१५. इसी प्रकार भवसिद्धिक (भविष्य मे जिनकी सिद्धि-मुक्ति होगी वे भव्य भवसिद्धिक होते है) और अभवसिद्धिक, सिद्धि और असिद्धि तथा सिद्ध और ससारी के विषय में भी जानना चाहिए।

15. The same is also true for *bhava-siddhik* (to be liberated in this birth) and *abhava-siddhik* (not to be liberated in this birth), *siddhi* (state of liberation) and *asiddhi* (state of non-liberation), and *siddha* (liberated) and *samsari* (non-liberated)

१६. [प्र.] पुव्विं भंते ! अंडए ? पच्छा कुक्कुडी ? पुव्विं कुक्कुडी ? पच्छा अंडए ?

[उ.] रोहा ! से णं अंडए कतो ? भगवं ! तं कुक्कुडीतो। सा णं कुक्कुडी कतो ? भंते ! अंडयातो।

एवामेव रोहा ! से य अंडए सा य कुक्कुडी, पुव्विं पेते, पच्छा पेते, दो वेते सासता भावा, अणाणुपुव्वी एसा रोहा !

१६. [प्र.] भगवन् ! पहले अण्डा और फिर मुर्गी है ? या पहले मुर्गी और फिर अण्डा है ?

[उ.] (भगवन्) हे रोह ! वह अण्डा कहाँ से आया ? (रोह-) भगवन् ! वह मुर्गी से आया। (भगवन्-) वह मुर्गी कहाँ से आई ? (रोह-) भगवन् ! वह अण्डे से हुई।

(भगवान-) इसी प्रकार हे रोह ! मुर्गी और अण्डा पहले भी है और पीछे भी है। ये दोनों शाश्वतभाव है। हे रोह ! इन दोनो मे पहले-पीछे का क्रम नही है।

16. [Q.] *Bhante* ! Is egg first and hen next ? Or hen first and egg next ?

[Ans.] (*Bhagavan*) Roha ! From where did that egg come ? (Roha) *Bhante* ! It came from hen (*Bhagavan*) From where that hen came ? (Roha) *Bhante* ! It came from egg

Thus, Roha ! Egg and hen both are first as well as next These both have this eternal order O Roha ! The order of preceding and following is not applicable to these

१७. [प्र.] पुव्विं भंते ! लोयंते पच्छा अलोयंते ? पुव्वं अलोअंते पच्छा लोअंते ?

[उ.] रोहा ! लोअंते य अलोअंते य जाव अणाणुपुव्वी एसा रोहा !

१७. [प्र.] भगवन् ! पहले लोकान्त और फिर अलोकान्त है ? अथवा पहले अलोकान्त और फिर लोकान्त है ?

[उ.] रोह ! लोकान्त और अलोकान्त, इन दोनो मे यावत् कोई क्रम नही है।

17. [Q.] *Bhante* ! Is *lokant* (edge of occupied space) first and *alokant* (edge of unoccupied space) next ? Or *alokant* first and *lokant* next ?

[Ans.] Roha ! *Lokant* and *alokant* both. . and so on up to . The order of preceding and following is not applicable to these.

१८. [प्र.] पुव्विं भंते ! लोअंते ? पच्छा सत्तमे ओवासंतरे। पुच्छा।

[उ.] रोहा ! लोअंते य सत्तमे य ओवासंतरे पुव्विं पेते जाव अणाणुपुव्वी एसा रोहा।

१८. [प्र.] भगवन् ! पहले लोकान्त है और फिर सातवाँ अवकाशान्तर (आकाश) है ? अथवा पहले सातवाँ अवकाशान्तर है और पीछे लोकान्त है ?

[उ.] हे रोह ! लोकान्त और सप्तम अवकाशान्तर, ये दोनों पहले भी हैं और पीछे भी हैं। इस प्रकार यावत्–हे रोह ! इन दोनो में पहले–पीछे का क्रम नहीं है।

18. [Q.] *Bhante* ! Is *lokant* (edge of occupied space) first and seventh *avakashantar* (intervening space between two bodies or layers of air) next ? Or seventh *avakashantar* first and *lokant* next ?

[Ans.] Roha ! *Lokant* and *avakashantar* both are first as well as next.. and so on up to... The order of preceding and following is not applicable to these.

१९. एवं लोअंते य सत्तमे य तणुवाते। एवं घणवाते, घणोदही, सत्तमा पुढवी।

१९. इसी प्रकार लोकान्त और सप्तम तनुवात (तरल वायु), इसी प्रकार घनवात (घनीभूत वायु), घनोदधि (जल की घनीभूत तरल अवस्था) और सातवी पृथ्वी के विषय मे समझना चाहिए।

19. The same is also true for *lokant* and seventh *tanuvaat* (seventh ring of rarefied air). Same is true also for *ghanavaat* (ring of dense air), *ghanodadhi* (ring of frozen water) and the seventh *prithvi* (seventh hell).

२०. एवं लोअंते एक्केक्केणं संजोएयव्वे इमेहिं ठाणेहिं, तं जहा–

ओवास १, वात २, घण उदही ३, पुढवी ४, दीवा ५ य सागरा ६, वासा ७।
नेरइयादी ८, अत्थिय ९, समया १०, कम्माइं ११, लेस्साओ १२॥१॥

दिट्ठी १३, दंसण १४, णाणा १५, सण्ण १६, सरीरा १७, य जोग १८ उवओगे १९।
दव्व २०, पदेसा २१, पज्जव २२, अद्धा २३, किं पुव्विं लोयंते ?॥२॥

२०. इस प्रकार निम्नलिखित स्थानों में से प्रत्येक के साथ लोकान्त को जोडना चाहिए; यथा–

(गाथार्थ–) अवकाशान्तर, वात, घनोदधि, पृथ्वी, द्वीप, सागर, वर्ष (क्षेत्र), नारक आदि जीव (चौबीस दण्डक के प्राणी), अस्तिकाय, समय, कर्म, लेश्या, दृष्टि, दर्शन, ज्ञान, संज्ञा, शरीर, योग, उपयोग, द्रव्य, प्रदेश, पर्याय और काल (अद्धा); क्या ये पहले हैं और लोकान्त पीछे हैं ?

20. In the same way *lokant* should be associated with each of the following places—

The verse—*Avakashantar* (intervening space), *vaat* (rings of air), *ghanodadhi* (ring of frozen water), *prithvi* (hell), *dveep* (continent), *sagar* (sea), *varsh* (area), infernal and other beings (of the twenty four places of suffering), *astikaya* (conglamorative entity), *Samaya* (smallest fraction of time), *karma, leshya* (complexion of soul), *drishti* (outlook), *darshan* (perception/faith), *jnana* (knowledge), *sanjna* (sentience), *sharira* (body), *yoga* (association), *upayoga* (cognition or inclination), *dravya* (substance), *pradesh* (fraction or space-point), *paryaya* (mode) and *addha* (time). Are these first and *lokant* next ?

२१. [प्र.] पुव्विं भंते ! लोयंते पच्छा सव्वद्धा ?

[उ.] जहा लोयंतेणं संजोइया सव्वे ठाणा एते, एवं अलोयंतेण वि संजोएतव्वा सव्वे।

२१. [प्र.] हे भगवन् ! क्या लोकान्त पहले और सर्वाद्धा (सर्वकाल) पीछे है ?

[उ.] जैसे लोकान्त के साथ (पूर्वोक्त) सभी स्थानो का सयोग किया, उसी प्रकार अलोकान्त के साथ इन सभी स्थानो को जोडना चाहिए।

21. [Q.] *Bhante* ! Is *lokant* (edge of occupied space) first and *sarvaddha* (all time) next ?

[Ans.] What has already been stated with regard to *lokant* in relation with other things should be repeated here. The same should also be repeated with regard to *alokant* (edge of unoccupied space)

२२. [प्र.] पुव्विं भंते ! सत्तमे ओवासंतरे ? पच्छा सत्तमे तणुवाते ?

[उ.] एवं सत्तमं ओवासंतरं सव्वेहिं समं संजोएयव्वं जाव सव्वद्धाए।

२२. [प्र.] भगवन् ! पहले सप्तम अवकाशान्तर है और पीछे सप्तम तनुवात है ?

[उ.] हे रोह ! इसी प्रकार सप्तम अवकाशान्तर को पूर्वोक्त सब स्थानो के साथ जोडना चाहिए। इसी प्रकार यावत् सर्वाद्धा तक समझना चाहिए।

22. [Q.] *Bhante* ! Does seventh *avakashantar* (intervening space) come first and seventh *tanuvaat* (seventh ring of rarefied air) next ?

[Ans.] Yes, Roha ! And in the same way all aforesaid things should be connected with seventh *avakashantar* .. and so on up to . *sarvaddha* (all time)

२३. [प्र.] पुव्विं भंते ! सत्तमे तणुवाते पच्छा सत्तमे घणवाते ?

[उ.] एयं पि तहेव नेतव्वं जाव सव्वद्धा।

२३. [प्र.] भगवन् ! पहले सप्तम तनुवात है और पीछे सप्तम घनवात है ?

[उ.] रोह ! यह भी उसी प्रकार यावत् सर्वाद्धा तक जानना चाहिए।

23. [Q.] *Bhante* ! Does seventh *tanuvaat* (seventh ring of rarefied air) come first and seventh *ghanavaat* (seventh ring of dense air) next ?

[Ans.] Roha ! This also follows the aforesaid pattern up to *sarvaddha* (all time)

२४. एवं उवरिल्लं एक्केक्कं संजोयंतेणं जो जो हेट्ठिल्लो तं तं छड्डंतेणं नेयव्वं जाव अतीत-अणागतद्धा पच्छा सव्वद्धा जाव अणाणुपुव्वी एसा रोहा !

सेवं भंते ! सेवं त्ति ! जाव विहरति।

२४. इस प्रकार ऊपर के एक-एक (स्थान) का संयोग करते हुए और नीचे का जो-जो स्थान हो, उसे छोडते हुए पूर्ववत् समझना चाहिए, यावत् अतीत और अनागत काल और फिर सर्वाद्धा (सर्वकाल) तक, यावत् हे रोह ! इसमे कोई पूर्वापर का क्रम नही होता।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है', यो कहकर रोह अनगार तप सयम से आत्मा को भावित करते हुए विचरने लगे।

24. In the same way each item in the aforesaid list should be linked with all the following items and dropping the preceding item up to the past time, the future time and all time (*sarvaddha*) . and so on up to .. O Roha ! The order of preceding and following is not applicable to these.

"*Bhante* ! Indeed that is so. Indeed that is so " With these words and so on up to . ascetic Gautam resumed his activities

अष्टविध लोकस्थिति : सदृष्टान्त निरूपण **LOK-STHITI WITH EXAMPLES**

२५. [प्र. १] भंते त्ति भगवं गोतमे समणं जाव एवं वयासि—कतिविहा णं भंते ! लोयट्ठिती पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! अट्ठविहा लोयट्ठिती पण्णत्ता। तं जहा—आगासपतिट्ठिते वाते १, वातपतिट्ठिते उदही २, उदहिपतिट्ठिता पुढवी ३, पुढवीपतिट्ठिता तस-थावर पाणा ४, अजीवा जीवपतिट्ठिता ५, जीवा कम्मपतिट्ठिता ६, अजीवा जीवसंगहिता ७, जीवा कम्मसंगहिता ८।

२५. [प्र. १] गौतम स्वामी ने श्रमण भगवान महावीर स्वामी से प्रश्न किया है-भगवन् ! लोक की स्थिति कितने प्रकार की है ?

[उ.] गौतम ! लोक की स्थिति आठ प्रकार की है। यथा-आकाश के आधार पर वायु (तनुवात) टिका हुआ है, वायु के आधार पर उदधि है; उदधि के आधार पर पृथ्वी है, पृथ्वी के आधार पर त्रस और स्थावर जीव है; अजीव (शरीरादि पुद्गल) जीवों के आधार पर टिके है, (सकर्मक जीव) कर्म के आधार पर है, अजीवो को जीवो ने सग्रह (बद्ध) कर रखा है, जीवो को कर्मो ने सग्रह कर रखा है।

25. [Q. 1] Gautam Swami asks Shraman Bhagavan Mahavir—*Bhante* ! How many tiered is *lok-sthiti* (structure of universe) ?

[Ans.] Gautam ! *Lok-sthiti* (structure of universe) is eight tiered—*vayu* (air) is *pratishthit* (installed) on *akash* (space), *udadhi* (water) is installed on *vayu*, *prithvi* (earth) is installed on water, *sthavar* and *tras pranis* (immobile and mobile beings) are installed on earth, *ajiva* (non-soul or matter) is installed on (dependent on) *jivas* (life), *jivas* (souls or living beings) are installed on (dependent on) *karma*, matter is accumulated (*samgrahit*) by souls and souls are bonded (*samgrihit*) by *karma*

[प्र. २] से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चति अट्ठविहा जाव जीवा कम्मसंगहिता ?

[उ.] गोयमा ! से जहानामए केई पुरिसे वत्थिमाडोवेति, वत्थिमाडोवित्ता उप्पिं सितं बंधति, बंधित्ता मज्झे णं गंठिं बंधति, मज्झे गंठिं बंधित्ता उवरिल्लं गंठिं मुयति, मुइत्ता उवरिल्लं देसं वामेति, उवरिल्लं देसं वामेत्ता उवरिल्लं आउयायस्स पूरेइ, पूरित्ता उप्पिं सितं बंधति, बंधित्ता मज्झिल्लं गंठिं मुयति। से नूणं गोतमा ! से आउयाए तस्स वाउययस्स उप्पिं उवरितले चिट्ठति ?

हंता, चिट्ठति। से तेणट्ठेणं जाव जीवा कम्मसंगहिता।

[प्र. २] भगवन् ! इस प्रकार कहने का क्या कारण है कि लोक की स्थिति आठ प्रकार की है और यावत् जीवो को कर्मों ने सग्रह कर रखा है ?

[उ] गौतम ! जैसे कोई पुरुष चमडे की मशक को वायु से (हवा भरकर) फुलावे; फिर उस मशक का मुख बाँध दे, तत्पश्चात् मशक के बीच के भाग मे गाँठ बाँधे, फिर मशक का मुँह खोल दे और उसके भीतर की हवा निकाल दे, तदनन्तर उस मशक के ऊपर के (खाली) भाग मे पानी भरे; फिर मशक का मुख बन्द कर दे, तत्पश्चात् उस मशक की बीच की गाँठ खोल दे, तो हे गौतम ! वह भरा हुआ पानी क्या उस हवा के ऊपर ही ऊपर के भाग मे रहेगा ? (गौतम) हाँ, भगवन् ! रहेगा। (भगवान्–) हे गौतम ! इसी उदाहरण द्वारा मै कहता हूँ कि यावत्–कर्मों को जीवो ने सग्रह कर रखा है।

[Q. 2] *Bhante* ! Why it is said that *Lok-sthiti* (structure of universe) is eight tiered and so on up to . souls are bonded (*samgrihit*) by *karma* ?

[Ans.] Gautam ! Suppose someone fills a leather bag with air and ties its open-end After that he ties fast the middle of the bag and opens the knot at the open-end to remove the air from the upper half. He then fills the empty upper half of the bag with water and ties the open-end once again After this he unties the middle of the bag Now, Gautam would the water filled in the bag remain in the upper part of the bag over the air ? **(Gautam)** Yes, *Bhante* ! It will **(Bhagavan)** On the basis of this example it is said that *Lok-sthiti* (structure of universe) is eight tiered. and so on up to souls are bonded (*samgrihit*) by *karma*.

[३] से जहा वा केई पुरिसे वत्थिमाडोवेति, आडोवित्ता कडीए बंधति, बंधित्ता अत्थाहमतारमपोरुसियंसि उदगंसि ओगाहेज्जा। से नूणं गोतमा ! से पुरिसे तस्स आउयायस्स उवरिमतले चिट्ठति ? हंता चिट्ठति।

एवं वा अट्ठविहा लोयट्ठिती पण्णत्ता जाव जीवा कम्मसंगहिता।

[३] अथवा हे गौतम ! कोई पुरुष चमडे की उस मशक को हवा से फुलाकर अपनी कमर पर बाँध ले, फिर वह पुरुष अथाह, दुस्तर और पुरुष–परिमाण से (जिसमें पुरुष मस्तक तक डूब जाये,

उससे) भी अधिक पानी मे प्रवेश करे; तो हे गौतम ! वह पुरुष पानी की ऊपरी सतह पर ही रहेगा? (गौतम–) हाँ, भगवन् ! रहेगा।

(भगवान–) हे गौतम ! इसी प्रकार लोक की स्थिति आठ प्रकार की है, यावत् कर्मों ने जीवों के संगृहीत कर रखा है।.

[3] Also, Gautam ! Suppose someone fills that leather bag with air, ties it at his waist and then enters a water body that is unfathomable, difficult to swim and more than enough to drown a man, say, Gautam ! Would that man remain at the surface of the water body ? (Gautam) Yes, *Bhante* ! He will

(*Bhagavan*) On the basis of this example it is said that *Lok-sthiti* (structure of universe) is eight tiered . and so on up to... souls are bonded (*samgrihit*) by *karma*

विवेचन : लोकस्थिति का प्रश्न और समाधान–कई मतावलम्बी पृथ्वी को शेषनाग पर, कई शेषनाग के फन पर अथवा कच्छप पर टिकी हुई मानते है। कोई पृथ्वी को गाय के सींग पर टिकी हुई मानते है, इन सब मान्यताओ से लोकस्थिति का प्रश्न हल नही होता, इसीलिए श्री गौतम स्वामी के इस प्रश्न पर भगवान ने प्रत्यक्ष सिद्ध समाधान दिया है कि सर्वप्रथम आकाश स्वप्रतिष्ठित है। उस पर तनुवात, फिर घनवात, उस पर घनोदधि और उस पर यह पृथ्वी टिकी हुई है। पृथ्वी के अतिरिक्त भी मेरु पर्वत, आकाश, द्वीप, सागर, देवलोक, नरकादि क्षेत्र है, जहाँ जीव रहते है। *(वृत्ति, पत्राक ८१-८२)*

Elaboration—Structure of the universe—Some religious sects subscribe to the notion that the earth rests on the great serpent, *Sheshanaag* or its hood Some say that it rests on the back of a turtle Some say that the earth rests on horns of a cow. All these beliefs fail to describe the actual structure of the universe. For this reason Bhagavan Mahavir answered Gautam Swami's question on the basis of his direct perception of the structure of the universe. Space is self-installed or all pervasive. On this rest in sequence rarefied air, dense air, dense water and then the earth. Besides the earth there are other areas where living beings dwell; they include Meru mountain, space, continents, seas, divine realms and hells. *(Vritti, leaf 81-82)*

जीव और पुद्‌गलों का सम्बन्ध RELATIONSHIP OF SOUL AND MATTER

२६. [प्र. १] अत्थि णं भंते ! जीवा य पोग्गला य अन्नमन्नबद्धा अन्नमन्नपुट्ठा अन्नमन्नमोगाढा अन्नमन्नसिणेहपडिबद्धा अन्नमन्नघडत्ताए चिट्ठंति ?

[उ.] हंता, अत्थि।

२६. [प्र. १] भगवन् ! क्या जीव और पुद्‌गल परस्पर सम्बद्ध हैं, परस्पर एक-दूसरे से स्पृष्ट हैं? परस्पर गाढ सम्बद्ध (मिले हुए) है, परस्पर स्निग्धता (चिकनाई) से प्रतिबद्ध (जुडे हुए) है। (अथवा) परस्पर घट्टित (गाढ) होकर रहे हुए है?

[उ.] हाँ, गौतम ! ये परस्पर इसी प्रकार रहे हुए है।

26. [Q. 1] *Bhante* ! Are soul and matter mutually associated, mutually touching, mutually assimilated, mutually adhered to (like with glue) or mutually fused ?

[Ans.] Yes, Gautam ! They exist like that

[प्र. २] से केणट्ठेणं भंते ! जाव चिट्ठंति ?

[उ.] गोयमा ! से जहानामए हरदे सिया पुण्णे पुण्णप्पमाणे वोलट्टमाणे वोसट्टमाणे समभरघडत्ताए चिट्ठति, अहे णं केइ पुरिसे तंसि हरदंसि एगं महं नावं सदासवं सयछिड्ढं ओगाहेज्जा। से नूणं गोयमा ! सा णावा तेहिं आसवद्दारेहिं आपूरमाणी आपूरमाणी पुण्णा पुण्णप्पमाणा वोलट्टमाणा वोसट्टमाणा समभरघडत्ताए चिट्ठति ? हंता, चिट्ठति।

से तेणट्ठेणं गोयमा ! अत्थि णं जीवा य जाव चिट्ठंति।

[प्र. २] भगवन् ! ऐसा आप किस कारण से कहते है जीव और पुद्‌गल इस प्रकार रहे हुए है?

[उ.] गौतम ! जैसे-कोई एक तालाब हो, वह जल से पूर्ण हो, कि पानी से लबालब भरा हुआ हो, कि पानी से छलक रहा हो और पानी से बढ रहा हो, वह पानी से भरे हुए घडे के समान है। उस तालाब मे कोई पुरुष एक ऐसी बडी नौका, जिसमे सौ छोटे छिद्र हो (अथवा अनेक छेद वाली) और सौ बडे छिद्र हो, डाल दे तो हे गौतम ! वह नौका, उन-उन छिद्रो द्वारा पानी से भरती हुई, अत्यत भरती हुई, जल से परिपूर्ण, पानी से लबालब भरी हुई, पानी से छलकती हुई, बढती हुई क्या भरे हुए घडे के समान हो जायेगी?

(गौतम-) हाँ, भगवन् ! हो जायेगी। (भगवान्-) इसलिए हे गौतम ! मै कहता हूँ-यावत् जीव और पुद्‌गल परस्पर घट्टित (घुले-मिले) होकर रहे हुए हैं। अर्थात्-[इसी प्रकार संसाररूपी तालाब के पुद्‌गलरूपी जल मे जीवरूपी सछिद्र नौका डूब जाने पर पुद्‌गल और जीव एकमेक हो जाते है।]

[Q. 2] *Bhante* ! Why do you say that soul and matter exist... and so on up to . mutually fused ?

[Ans.] Gautam ! Suppose there is a pond filled with water, brimming with overflowing and ever increasing water; it is like a pitcher filled with water In that pond suppose someone puts a large boat with hundreds of small and large holes (or with many holes). Then, Gautam ! Would that boat not be filled with water, brimming with overflowing and ever increasing water and resemble a pitcher filled with water ?

(Gautam) Yes, *Bhante* ! It will.

(*Bhagavan*) That is why I say that soul and matter exist... and so on up to... mutually fused (In other words, in the pond of mundane existence filled with the water of matter particles when the perforated boat of soul (living being) submerges, matter and soul fuse together.)

सूक्ष्म स्नेहकाय MINUTE WATER PARTICLES

२७. [प्र. १] अत्थि णं भंते ! सदा समियं सुहुमे सिणेहकाये पवडति ?

[उ.] हंता, अत्थि।

२७. [प्र. १] भगवन् ! क्या सूक्ष्म स्नेहकाय (एक प्रकार का सूक्ष्म जल) सदा परिमित (रात और दिन के प्रथम व अन्तिम प्रहर में) पडता है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! पडता है।

27. [Q. 1] *Bhante* ! Does *sukshma snehakaya* (minute water particles or superfine mist) always fall in limited quantity (at specific periods like first and last quarters of the day) ?

[Ans.] Yes, Gautam ! It does.

[प्र. २] से भंते ! किं उड्ढे पवडति, अहे पवडति तिरिए पवडति ?

[उ.] गोयमा ! उड्ढे वि पवडति, अहे वि पवडति, तिरिए वि पवडति।

[प्र. २] भगवन् ! वह सूक्ष्म स्नेहकाय ऊपर पडता है, नीचे पडता है या तिरछा पड़ता है ?

[उ.] गौतम ! ऊपर (ऊर्ध्वलोक मे वर्तुल वैताढ्यादि में) भी पडता है, नीचे (अधोलोक ग्रामो में) भी पडता है और तिर्यग्लोक मे भी पडता है।

[Q. 2] *Bhante* ! Does that superfine mist fall in the upper world, lower world or the transverse world (*tiryak lok*) ?

[Ans.] Gautam ! It falls in the upper world (like *Vartul Vaitadhya*), lower world (villages in the lower world) as well as the transverse world (*tiryak lok*)

[प्र. ३] जहा से बादरे आउकाए अन्नमन्नसमाउत्ते चिरं पि दीहकालं चिट्ठति तहा णं से वि ?

[उ.] नो इणट्ठे समट्ठे, से णं खिप्पामेव विद्धंसमागच्छति।

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति !

॥ पढमे सए : छट्ठो उद्देसो समत्तो ॥

[प्र. ३] भगवन् ! क्या वह सूक्ष्म स्नेहकाय स्थूल अप्काय की भाँति परस्पर समायुक्त होकर बहुत दीर्घकाल तक रहता है ?

[उ.] गौतम ! यह अर्थ समर्थ नही है, क्योकि वह (सूक्ष्म स्नेहकाय) शीघ्र ही विध्वस्त हो जाता है।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है।'

[Q. 3] *Bhante* ! Does that superfine mist exist for a long time in condensed form like gross water particles ?

[Ans.] Gautam ! It is not so because that (superfine mist) gets destroyed soon

"*Bhante* ! Indeed that is so. Indeed that is so."

विवेचन : स्नेहकाय जल का एक प्रकार है। आचार्य मलयगिरि ने **बृहत्कल्पभाष्य** की वृत्ति में स्नेह का अर्थ अवश्याय, कोहरा आदि किया है। प्रस्तुत सूत्र मे 'स्नेह' के साथ 'सूक्ष्म' विशेषण का प्रयोग किया गया है। इससे ज्ञात होता है कि ओस से भी सूक्ष्म जल-द्रव्य के लिए 'सूक्ष्म-स्नेह' शब्द का प्रयोग किया गया है। **बृहत्कल्पभाष्य** मे स्निग्ध और रूक्ष काल के अनुसार उसके गिरने के समय का निर्देश इस प्रकार है-शिशिरकाल मे प्रथम और अन्तिम प्रहर मे वह अधिक मात्रा मे गिरता है। ग्रीष्मकाल मे प्रथम और अन्तिम प्रहर के आधे-आधे भाग मे वह अधिक गिरता है। शेष समय मे वह अल्प गिरता है। अभयदेवसूरि का भी यही अभिमत है।

सूक्ष्म स्नेहकाय की तुलना आर्द्रता (humidity) से की जा सकती है। सूक्ष्म स्नेहकाय ऊँचे, नीचे और तिरछे तीनो लोको मे गिरता है। इस आधार पर यह अनुमान किया जा सकता है कि वह तमस्काय से गिरता है और पूरे वातावरण मे व्याप्त होता है। *(भगवई भाष्य, पृ. १४१)*

॥ प्रथम शतक : छठा उद्देशक समाप्त ॥

Elaboration—*Snehakaya* is a form of water In the *Vritti* of *Brihatkalpabhashya* Malayagiri has interpreted *sneha* as fog, mist etc In this aphorism an adjective, *sukshma* (minute) has been used with *sneha* This indicates that the term *sukshma-sneha* has been used for super fine mist In *Brihatkalpabhashya* details about time of falling of such fine mist has been mentioned according to arid and wet periods—In winters it is heavy during first and last quarters of the day In summers it is heavy during half of the first and last quarters of the day During the remaining period of the day it is light. Abhayadev Suri also subscribes to the same view.

Sukshma snehakaya can be compared with humidity also It falls in upper, lower as well as transverse worlds. Thus it can be infered that at falls from *Tamaskaya* and pervades the atmosphere. *(Bhagvai Bhashya, p. 141)*

● END OF THE SIXTH LESSON OF THE FIRST SHATAK ●

प्रथम शतक : सप्तम उद्देशक
FIRST SHATAK (Chapter One) : SEVENTH LESSON

नैरयिक NAIRAYIK (INFERNAL BEINGS)

चौबीस दण्डकों के आहार–सम्बन्धी प्ररूपणा **FOOD IN TWENTY FOUR DANDAKS**

१. [प्र. १] नेरइए णं भंते ! नेरइएसु उववज्जमाणे किं देसेणं देसं उववज्जति १, देसेणं सव्वं उववज्जति २, सव्वेणं देसं उववज्जति ३, सव्वेणं सव्वं उववज्जति ४ ?

[उ.] गोयमा ! नो देसेणं देसं उववज्जति, नो देसेणं सव्वं उववज्जति, नो सव्वेणं देसं उववज्जति, सव्वेणं सव्वं उववज्जति। [२] जहा नेरइए एवं जाव वेमाणिए।

१. [प्र. १] भगवन् ! नारको मे उपपद्यमान (उत्पन्न होता) हुआ नारक जीव क्या (१) एक भाग से एक भाग को आश्रित करके उत्पन्न होता है, या (२) एक भाग से सर्वभाग को आश्रित करके उत्पन्न होता है, या (३) सर्वभाग से एक भाग को आश्रित करके उत्पन्न होता, अथवा (४) सब भागो से सब भागो को आश्रय करके उत्पन्न होता है ?

[उ.] गौतम ! नारक जीव (१) एक भाग से एक भाग को आश्रित करके उत्पन्न नहीं होता; (२) एक भाग से सर्वभाग को आश्रित करके भी उत्पन्न नहीं होता, (३) सर्वभाग से एक भाग को आश्रित करके भी उत्पन्न नही होता; किन्तु (४) सर्वभाग से सर्वभाग को आश्रित करके उत्पन्न होता है। [२] नारको के समान वैमानिकों तक इसी प्रकार समझना चाहिए।

1. [Q. 1] *Bhante* ! While being born, does an infernal being take birth—(1) as a part (*desh*) in a part, (2) as a part in the whole (*sarva*), (3) as the whole in a part, or (4) as the whole in the whole ?

[Ans.] Gautam ! An infernal being—(1) does not take birth as a part in a part, (2) does not take birth as a part in the whole, (3) does not take birth as the whole in a part, but (4) takes birth as the whole in the whole. **[2]** What has been stated about infernal beings is also true for all beings up to Vaimaniks

२. [प्र. १] नेरइए णं भंते ! नेरइएसु उववज्जमाणे किं देसेणं देसं आहारेति १, देसेणं सव्वं आहारेति २, सव्वेणं देसं आहारेति ३, सव्वेणं सव्वं आहारेति ४ ?

[उ.] गोयमा ! नो देसणं देसं आहारेति, नो देसेणं सव्वं आहारेति, सव्वेण वा देसं आहारेति, सव्वेण वा सव्वं आहारेति। [२] एवं जाव वेमाणिए।

२. [प्र. १] नारको मे उत्पन्न होता हुआ नारक जीव क्या (१) एक भाग से एक भाग को आश्रित करके आहार करता है, (२) एक भाग से सर्वभाग को आश्रित करके आहार करता है, (३) सर्वभागो

से एक भाग को आश्रित करके आहार करता है, अथवा (४) सर्वभागों से सर्वभागो को आश्रित करके आहार करता है?

[उ.] गौतम! वह (१) एक भाग से एक भाग को आश्रित करके आहार नही करता, (२) एक भाग से सर्वभाग को आश्रित करके आहार नही करता, किन्तु (३) सर्वभागो से एक भाग को आश्रित करके आहार करता है, अथवा (४) सर्वभागो से सर्वभागो को आश्रित करके आहार करता है। [२] नारको के समान ही वैमानिको तक इसी प्रकार जानना।

2. [Q. 1] *Bhante*! While being born, does an infernal being have food intake—(1) by a part in a part, (2) by a part in the whole, (3) by the whole in a part, or (4) by the whole in the whole?

[Ans.] Gautam! An infernal being—(1) does not have intake by a part in a part, (2) does not have intake by a part in the whole, but (3) has intake by the whole in a part as well as, (4) by the whole in the whole [2] What has been stated about infernal beings is also true for all beings up to Vaimaniks

३. [प्र.] नेरइए णं भंते! नेरइएहिंतो उव्वट्टमाणे किं देसेणं देसं उव्वट्टति?

[उ.] जहा उववज्जमाणे (सु. १) तहेव उव्वट्टमाणे वि दंडगो भाणियव्वो।

३. [प्र.] भगवन्! नारको मे से उद्‌वर्तमान–निकलता हुआ नारक जीव क्या एक भाग से एक भाग को आश्रित करके निकलता है? इत्यादि पूर्ववत् प्रश्न करना चाहिए।

[उ.] गौतम! जैसे उत्पन्न होते हुए नैरयिक आदि के विषय मे कहा था वैसे ही उद्‌वर्तमान नैरयिक आदि के (चौबीस ही दण्डको के) विषय मे दण्डक कहना चाहिए।

3. [Q.] *Bhante*! While departing the infernal world, does an infernal being leave—(1) as a part from a part? (repeat the four aforesaid questions)

[Ans.] Gautam! What has been stated about an infernal being taking birth should be repeated about a departing infernal being and also all other *dandaks* (places of suffering)

४. [प्र. १] नेरइए णं भंते! नेरइएहिंतो उव्वट्टमाणे किं देसेणं देसं आहारेति?

[उ.] तहेव जाव (सु. २ [१]), सव्वेण वा देसं आहारेति, सव्वेण वा सव्वं आहारेति। [२] एवं जाव वेमाणिए।

४. [प्र. १] भगवन्! नैरयिको से उद्‌वर्तमान नैरयिक क्या एक भाग से एक भाग को आश्रित करके आहार करता है? इत्यादि प्रश्न पूर्ववत् करना चाहिए।

[उ.] गौतम ! यह भी पूर्वसूत्र (२-१) के समान जानना चाहिए; यावत् सर्वभागो से एक भाग को आश्रित करके आहार करता है, अथवा सर्वभागों से सर्वभागों को आश्रित करके आहार करता है। [२] इसी प्रकार यावत् वैमानिकों तक जानना चाहिए।

4. [Q. 1] *Bhante* ! While departing the infernal world, does an infernal being have food intake—(1) by a part in a part ? (repeat the four aforesaid questions)

[Ans.] Gautam ! This follows the aforesaid pattern (of aphorism 2. [1])... and so on up to... has intake by the whole in a part as well as by the whole in the whole. [2] What has been stated about infernal beings is also true for all beings up to Vaimaniks.

५. [प्र. १] नेरइए णं भंते ! नेरइएसु उववन्ने किं देसेणं देसं उववन्ने ?

[उ.] एसो वि तहेव जाव सव्वेणं सव्वं उववन्ने।

[२] जहा उववज्जमाणे उव्वट्टमाणे य चत्तारि दंडगा तहा उववन्नेणं उव्वट्टेण वि चत्तारि दंडगा भाणियव्वा। सव्वेणं सव्वं उववन्ने; सव्वेणं वा देसं आहारेति, सव्वेणं वा सव्वं आहारेति, एएणं अभिलावेणं उववन्ने वि, उव्वट्टे वि नेयव्वं।

५. [प्र. १] भगवन् ! नारकों में उत्पन्न हुआ नैरयिक क्या एक भाग से एक भाग को आश्रित करके उत्पन्न हुआ है इत्यादि प्रश्न पूर्ववत् करना चाहिए।

[उ.] गौतम ! यह दण्डक भी उसी प्रकार जानना, यावत्-सर्वभाग से सर्वभाग को आश्रित करके उत्पन्न होता है।

[२] जैसे उत्पद्यमान और उद्वर्तमान के विषय मे चार दण्डक कहे, वैसे ही उत्पन्न और उद्वृत्त के विषय में भी चार दण्डक कहने चाहिए। यथा-'सर्वभाग से सर्वभाग को आश्रित करके उत्पन्न' तथा सर्वभाग से एक भाग को आश्रित करके आहार, या सर्वभाग से सर्वभाग को आश्रित करके आहार; इन शब्दो द्वारा उत्पन्न और उद्वृत्त के विषय में भी समझ लेना चाहिए।)

5. [Q. 1] *Bhante* ! Did an infernal being born among infernal beings take birth as a part in a part ? (repeat the four aforesaid questions)

[Ans.] Gautam ! Here also the aforesaid should be repeated... and so on up to... took birth as the whole in the whole.

[2] Like the four aforesaid alternatives (*dandaks*) about a being born (*utpadyamaan*) and departing (*udvartamaan*), four statements should be repeated about born (*utpanna*) and departed (*udvritta*); for example, 'takes birth as the whole in the whole, has intake by the whole in a part as well as by the whole in the whole' this terminology should also be applied to 'born' and 'departed'.

६. [प्र.] नेरइए णं भंते ! नेरइएसु उववज्जमाणे किं अद्धेणं अद्धं उववज्जति १ अद्धेणं सव्वं उववज्जति २ सव्वेणं अद्धं उववज्जइ ३ सव्वेणं सव्वं उववज्जति ४ ?

[उ.] जहा पढमिल्लेणं अट्ठ दंडगा तहा अद्धेण वि अट्ठ दंडगा भाणियव्वा। नवरं जहिं देसेणं देसं उववज्जति तहिं अद्धेणं अद्धं उववज्जावेयव्वं, एयं णाणत्तं। एते सव्वे वि सोलस दंडगा भाणियव्वा।

६. [प्र.] भगवन् ! नैरयिकों मे उत्पन्न होता हुआ नारक जीव क्या (१) अर्द्ध-भाग से अर्द्ध-भाग को आश्रित करके उत्पन्न होता है ? या (२) अर्द्ध-भाग से सर्वभाग को आश्रित करके उत्पन्न होता है ? अथवा (३) सर्वभाग से अर्द्ध-भाग को आश्रित करके उत्पन्न होता है ? या (४) सर्वभाग से सर्वभाग को आश्रित करके उत्पन्न होता है ?

[उ.] गौतम ! जैसे पहले वालो के साथ आठ दण्डक कहे है, वैसे ही 'अर्द्ध' के साथ भी आठ दण्डक कहने चाहिए। विशेषता इतनी है कि-जहाँ 'एक भाग से एक भाग को आश्रित करके उत्पन्न होता है', ऐसा पाठ आये वहाँ 'अर्द्ध-भाग से अर्द्ध-भाग को आश्रित करके उत्पन्न होता है', ऐसा पाठ बोलना चाहिए। बस, यही भिन्नता है। ये सब मिलकर कुल सोलह दण्डक होते है।

6. [Q.] *Bhante* ! While being born, does an infernal being take birth—(1) as half a part in half a part, (2) as half a part in the whole, (3) as the whole in half a part, or (4) as the whole in the whole ?

[Ans.] Like the eight aforesaid alternatives about 'a part', eight statements should be repeated about 'half a part' The only difference being that instead of 'is born as a part in a part' state 'is born as half a part in half a part' That is the only difference All these add up to sixteen alternatives

विवेचन : उपपद्यमान और उत्पन्न—जीव जब पूर्व शरीर को छोडकर नये जन्म स्थान को ग्रहण करता है, तब उत्पत्ति के पहले समय मे आहार पर्याप्ति से पर्याप्त हो जाता है, इसके पश्चात् शरीर व इन्द्रिय पर्याप्तियो का निर्माण करता है। पर्याप्ति से निर्माण की पूर्ववर्ती अवस्था उपपद्यमान अवस्था है, पर्याप्ति से पूर्ण अवस्था उत्पन्न अवस्था है।

देश और सर्व का तात्पर्य—जीव जब नरक आदि मे उत्पन्न होता है, तब क्या वह यहाँ (पूर्वभव) के एकदेश से नारक के एकदेश-(अवयवरूप) मे उत्पन्न होता है ? अर्थात्-उत्पन्न होने वाले जीव का एक भाग ही नारक के एक भाग के रूप मे उत्पन्न होता है ? या पूरा जीव पूरे नारक के रूप मे उत्पन्न होता है ? यह उत्पत्ति-सम्बन्धी प्रश्न का आशय है। इसी प्रकार अन्य विकल्पो का आशय भी समझ लेना चाहिए। देश और सर्व के द्वारा उत्पाद उद्वर्तन और आहार के ८ दण्डक है-इसी प्रकार अर्द्ध और सर्व के द्वारा जीव के उत्पादादि के विषय में विचार करने पर भी पूर्वोक्तवत् आठ दण्डक (विकल्प) होते हैं। इस प्रकार कुल मिलाकर १६ दण्डक होते है।

नैरयिक की नैरयिकों में उत्पत्ति कैसे ? यद्यपि नारक मरकर नरक मे उत्पन्न नहीं होता, मनुष्य और तिर्यंच मरकर ही नरक मे उत्पन्न हो सकते है, फिर यहाँ नारक का नरक में उत्पन्न होना कैसे कहा ? इसका समाधान यह है कि जो जीव पूर्व गति का आयुष्य समाप्त कर चुका है, जिसके नरकायु का उदय हो चुका है, उस नरक मे उत्पन्न होने वाले जीव की अपेक्षा से यहाँ उस जीव को नारक कहा है।

जीव जिस समय उत्पन्न होता है, उस समय–जन्म के प्रथम समय में अपने सर्व आत्म–प्रदेशों के द्वारा सर्व आहार को ग्रहण करता है। उत्पत्ति समय के पश्चात् सर्व आत्म–प्रदेशों से किन्हीं आहार्य पुद्गलों को ग्रहण करता है, किन्हीं को नहीं।

इसे एक उदाहरण द्वारा समझाया है, जैसे तपी हुई तैल की कढाई मे छोडा हुआ मालपुआ प्रथम क्षण में लेने योग्य तैल को सर्व रूप से ग्रहण करता है, खींचता है। अत· यहाँ सव्वेणं सव्वं आहारेइ कहा है। उत्पत्ति के बाद जीव कितनेक पुद्गलो का आहार करता है और कितनेक छोड देता है। जैसे कढाई में मालपुआ डाल देने के बाद वह कुछ तैल को पीता है, कुछ नही पीता। इसलिए दूसरा विकल्प सव्वेणं वा देसेणं कहा है।

देश और अर्द्ध में अन्तर–जैसे मूँग, गेहूँ आदि मे सैकडों देश (अश या अवयव) है, उसका छोटे से छोटा टुकडा भी देश ही कहलायेगा, लेकिन अर्द्ध–भाग तभी कहलाता है, जब उसके बीचोबीच से दो हिस्से किये जाते है। यह देश और अर्द्ध मे अन्तर है। *(वृत्ति, पत्राक ८३-८४)*

Elaboration—*Upapadyamaan* and *utpanna*—When a soul abandons its body and reaches its new place of birth it attains full development (*paryapti*) with regard to intake of food at the moment of birth. After that it progresses towards full development (*paryapti*) of body and sense organs This state of progressive development prior to attaining full development is called *upapadyamaan* state or 'in process of being born'. The state when full development (*paryapti*) is attained is called *utpanna* state or 'born state'

Meaning of desh and sarva—While being born, does an infernal being take birth as a part (of the earlier birth) in a part (of the new birth in infernal world) ? The meaning of this question is that does only one part of the being reaching end of its existence here take birth as one part of the new infernal being or the being reaching end of its existence here as the whole take birth as the whole of the new infernal being ? This is the meaning of the question about birth Other alternatives too follow the same pattern In terms of *desh* (part) and *sarva* (whole) there are eight *dandaks* (alternatives) about *utpaad* (birth), *udvartan* (departure) and *aahaar* (intake) In the same way in terms of *ardh* (half) and *sarva* (whole) too there are eight *dandaks* (alternatives). All these add up to sixteen alternative statements.

Infernal beings reincarnating as infernal beings ? Why is here this wrong sounding statement when as a rule an infernal being after death cannot reincarnate as an infernal being. It is only humans and animals that reincarnate as infernal beings. The explanation is that here the term infernal being (*naarak*) has been used for the soul about to depart because its life-span of the present genus has ended and its *ayushya*

karma (life-span determining *karma*) for the destined infernal world has come to fruition. In this context it is called an infernal being.

In the first moment when a being is born it conducts all intake through all its soul-space-points. After that moment it conducts selective intake of matter particles through all its soul-space-points.

This has been elaborated with the example of putting a cookie in a frying pan. At the moment of putting it in the oil it absorbs all the required oil through its every portion. This is 'by the whole in the whole'. After being born a being conducts selective intake. It is like the cookie after the first moment of putting in oil absorbs oil selectively. This is 'by the whole in a part.'

Desh and ardh—In a grain of wheat or pulses there are hundreds of parts. Even the smallest part of it is called *desh* (non-defined part). However, *ardh* (half) is only when it is precisely divided into two equal parts. This is the difference between *desh* and *ardh*

जीवों की विग्रह–अविग्रह गति VIGRAHA AND AVIGRAHA GATI OF SOUL

७. [प्र. १] जीवे णं भंते ! किं विग्गहगतिसमावन्नए ? अविग्गहगतिसमावन्नए ?

[उ.] गोयमा ! सिय विग्गहगतिसमावन्नए, सिय अविग्गहगतिसमावन्नए। [२] एवं जाव वेमाणिए।

७. [प्र. १] भगवन् ! क्या जीव विग्रहगति को प्राप्त होता है, अथवा विग्रहगति को प्राप्त नही होता ?

[उ.] गौतम ! कभी (वह) विग्रहगति को प्राप्त होता है, और कभी नहीं होता। [२] इसी प्रकार वैमानिक पर्यन्त जानना चाहिए।

7. [Q. 1] *Bhante* ! Does a soul undergo *vigraha gati* (reincarnative movement with bend) or does it not ?

[Ans.] Gautam ! Sometimes it undergoes *vigraha gati* (reincarnative movement with bend/bends) and some times it does not **[2]** The same holds good up to Vaimaniks.

८. [प्र. १] जीवा णं भंते ! किं विग्गहगतिसमावन्नगा ? अविग्गहगतिसमावन्नगा ?

[उ.] गोयमा ! विग्गहगतिसमावन्नगा वि, अविग्गहगतिसमावन्नगा वि।

[प्र. २] नेरइया णं भंते ! किं विग्गहगतिसमावन्नगा ? अविग्गहगतिसमावन्नगा ?

[उ.] गोयमा ! सव्वे वि ताव होज्जा अविग्गहगतिसमावन्नगा १, अहवा अविग्गहगतिसमावन्नगा य विग्गहगतिसमावन्नगा य २, अहवा अविग्गहगतिसमावन्नगा य विग्गहगतिसमावन्नगा य ३, एवं जीव–एगिंदियवज्जो तियभंगो।

८. [प्र. १] भगवन् ! क्या बहुत से जीव विग्रहगति को प्राप्त होते हैं अथवा प्राप्त नहीं होते ?

[उ.] गौतम ! बहुत से जीव विग्रहगति को प्राप्त होते हैं और बहुत से जीव प्राप्त नहीं भी होते।

[प्र. २] भगवन् ! क्या नैरयिक विग्रहगति को प्राप्त होते है या नहीं प्राप्त होते ?

[उ.] गौतम ! (१) (कभी) वे सभी विग्रहगति को प्राप्त नहीं होते, अथवा (२) (कभी) बहुत से विग्रहगति को प्राप्त नहीं होते और कोई-कोई विग्रहगति को प्राप्त होता, अथवा (३) (कभी) बहुत से जीव विग्रहगति को प्राप्त नही होते और बहुत से (जीव) विग्रहगति को प्राप्त होते हैं। यों जीव सामान्य और एकेन्द्रिय को छोडकर सर्वत्र इसी प्रकार तीन-तीन भग कहने चाहिए।

8. [Q. 1] *Bhante* ! Do many souls undergo *vigraha gati* (reincarnative oblique movement) or do they not ?

[Ans.] Gautam ! Many souls undergo *vigraha gati* (reincarnative oblique movement) and many do not.

[Q. 2] *Bhante* ! Do infernal beings undergo *vigraha gati* (reincarnative oblique movement) or do they not ?

[Ans.] Gautam ! (1) (sometimes) all of them do not undergo *vigraha gati* (reincarnative movement), or (2) (sometimes) many of them do not undergo *vigraha gati* (reincarnative movement) and a few of them does, or (3) (sometimes) many of them do not undergo *vigraha gati* (reincarnative movement) and many of them do. In the same way these three alternatives should be repeated for all beings except for souls in general and one-sensed beings

विवेचन : विग्रहगति-अविग्रहगति की व्याख्या-सामान्यतया एक गति का आयुष्य समाप्त होने पर जीव शरीर छोडकर दूसरी गति मे जाते समय मार्ग मे गमन करता है, तब उसकी गति दो प्रकार की हो सकती है-विग्रहगति और अविग्रहगति। कोई-कोई जीव जब एक, दो या तीन बार मुडकर उत्पत्ति स्थान पर पहुँचता है, तब उसकी वह गति विग्रहगति कहलाती है और जब कोई जीव मार्ग मे बिना मुडे (मोड खाये) सीधा अपने उत्पत्ति स्थान पर पहुँच जाता है तब उसकी उस गति को अविग्रहगति कहते है। यहाँ अविग्रहगति का अर्थ ऋजु-सरल गति नही है, किन्तु 'विग्रहगति का अभाव' अर्थ ही सगत माना गया है। अर्थात्-दूसरी गति में जाते समय जो जीव मार्ग मे गति करता है, उस अवस्था को प्राप्त जीव विग्रहगति-समापन्न है और जो जीव किसी भी गति मे स्थित है, उस अवस्था को प्राप्त जीव अविग्रहगति-समापन्न है।

बहुत जीवों की अपेक्षा से-जीव अनन्त हैं। इसलिए प्रतिसमय बहुत से जीव विग्रहगति-समापन्न भी होते है, और विग्रहगति के अभाव वाले भी होते है। *(वृत्ति, पत्राक ८५-८६)*

Elaboration—*Vigraha gati* and *avigraha gati*—Generally speaking at the end of the life-span in one genus a soul leaves the body and moves to another genus. This movement can be of two types *vigraha gati* (oblique

movement) and *avıgraha gatı* (straight movement). When some soul reaches the destinatıon of reincarnation after one, two or three turns, its movement is called *vıgraha gati*. When it reaches the destination without any turn its movement is called *avigraha gati*. However, here the accepted meanıng of *avıgraha gati* is absence of *vigraha gati*. This conveys that here the term *vıgraha gatı* has been used for the movement of soul from one genus to another or the 'reincarnative movement'. Thus the term *avıgraha gatı* means absence of reincarnative movement or the state of a soul existıng in a specific genus.

Statement ın context of many souls—As the number of souls is infinite, every moment many beings are in state of reincarnative movement and many ın that of absence of such movement. *(Vritti, leaves 85-86)*

देव का च्यवनानन्तर आयुष्य प्रतिसंवेदन POST DESCENT EXPERIENCE OF LIFE BY A DIVINE BEING

९. [प्र.] देवे णं भंते ! महिड्ढिए महज्जुतीए महब्बले महायसे महासोक्खे महाणुभावे अविउक्कंतियं चयमाणे किंचि वि कालं हिरिवत्तियं दुगुंछावत्तियं परिस्सहवत्तियं आहारं नो आहारेति; अहे णं आहारेति, आहारिज्जमाणे आहारिए, परिणामिज्जमाणे परिणामिए, पहीणे य आउए भवइ, जत्थ उववज्जति तमाउयं पडिसंवेदेति, तं जहा–तिरिक्खजोणियाउयं वा मणुस्साउयं वा।

[उ.] हंता, गोयमा ! देवे णं महिड्ढीए जाव मणुस्साउगं वा ?

९. [प्र.] भगवन् ! (विमान व परिवार की अपेक्षा) महान् ऋद्धि वाला, (शरीर व आभूषणो की दीप्ति की अपेक्षा) महान् द्युति वाला, महान् बल (शारीरिक शक्ति) वाला, महायशस्वी (अनेक प्रकार के रूप करने की शक्ति की अपेक्षा), महाप्रभावशाली (महासामर्थ्य सम्पन्न) मरणकाल मे च्यवने वाला, महेश नामक देव (अथवा महाप्रभुत्वसम्पन्न देव) लज्जा के कारण, स्त्री के गर्भाशय को देखकर, घृणा के कारण, परीषह के कारण कुछ समय तक आहार नही करता, फिर आहार करता है और ग्रहण किया हुआ आहार परिणत भी होता है। अन्त मे उस देव की वहाँ की आयु समाप्त हो जाती है। इसलिए वह देव जहाँ उत्पन्न होता है, वहाँ की आयु भोगता है, तो हे भगवन् ! उसकी वह आयु तिर्यंच की समझी जाये या मनुष्य की आयु समझी जाये ?

[उ.] हाँ, गौतम ! उस महाऋद्धि वाले देव का यावत् च्यवन के पश्चात् तिर्यंच का आयुष्य अथवा मनुष्य का आयुष्य समझना चाहिए। (चूँकि देव मरकर देवगति या नरकगति मे नही जाता, इसलिए तिर्यंच या मनुष्य जिस गति मे भी जाता है, वहाँ की आयु भोगता है।)

9. [Q.] *Bhante* ! A majestic divine being (or a god named Mahesh) with great *rıddhı* (opulence ın terms of celestial vehıcles and retinue), great *dyutı* (radiance ın terms of body and embellishments), great *bal* (physıcal strength), great *yash* (fame ın terms of power to acquire many

forms), and great *anubhaava* (influence), about to commence his descent (at the time of death) does not have food intake for some time due to shame, indignation and pain (foreseeing the existence in a womb). After some time he has intake and the intake transforms as well. At last the life-span as a divine being comes to an end. Henceforth he experiences the life-span of the place he is to reincarnate at. Now, *Bhante* ! Of what genus may be this life-span—of an animal or of a human being ?

[Ans.] Well, Gautam ! Know that a majestic divine being... and so on up to either of an animal or of a human being. (As a divine being does not reincarnate as a divine or an infernal being, he experiences life-span of either an animal or a human being, wherever he is destined to reincarnate)

गर्भगत जीव–सम्बन्धी विचार **SOUL IN A WOMB**

१०. [प्र.] जीवे णं भंते ! गब्भं वक्कममाणे किं सइंदिए वक्कमति ? अणिंदिए वक्कमइ ?

[उ.] गोयमा ! सिय सइंदिए वक्कमइ, सिय अणिंदिए वक्कमइ।

[प्र.] से केणट्ठेणं० ?

[उ.] गोयमा ! दव्विंदियाइं पडुच्च अणिंदिए वक्कमति, भाविंदियाइं पडुच्च सइंदिए वक्कमति, से तेणट्ठेणं०।

१०. [प्र.] भगवन् ! गर्भ मे उत्पन्न होता हुआ जीव, क्या इन्द्रिय–सहित उत्पन्न होता है अथवा इन्द्रियरहित उत्पन्न होता है ?

[उ.] गौतम ! इन्द्रिय–सहित भी उत्पन्न होता है, इन्द्रियरहित भी उत्पन्न होता है।

[प्र.] भगवन् ! ऐसा आप किस कारण से कहते है ?

[उ.] गौतम ! द्रव्येन्द्रियो (इन्द्रियो की आकृति) की अपेक्षा बिना इन्द्रियों का उत्पन्न होता है और भावेन्द्रियो (इन्द्रियज्ञान की शक्ति) की अपेक्षा इन्द्रियों–सहित उत्पन्न होता है, इसलिए ऐसा कहा है।

10. [Q.] *Bhante* ! Is a soul descending in a womb conceived with sense organs (*indriya*) or without sense organs ?

[Ans.] Gautam ! It is conceived with sense organs as well as without sense organs ?

[Q.] *Bhante* ! Why do you say so ?

[Ans.] Gautam ! In context of physical sense organs (*dravyendriya*) it is conceived without sense organs and in context of sensual awareness (*bhaavendriya*) it is conceived with sense organs. That is why I have said so.

११. [प्र.] जीवे णं भंते ! गब्भं वक्कममाणे किं ससरीरी वक्कमइ ? असरीरी वक्कमइ ?

[उ.] गोयमा ! सिय ससरीरी वक्कमति, सिय असरीरी वक्कमति।

[प्र.] से केणट्ठेणं ?

[उ.] गोयमा ! ओरालिय-वेउव्विय-आहारयाइं पडुच्च असरीरी वक्कमति, तेया-कम्माइं पडुच्च ससरीरी वक्कमति; से तेणट्ठेणं गोयमा !

११. [प्र.] भगवन् ! गर्भ मे उत्पन्न होता हुआ जीव, क्या शरीर-सहित उत्पन्न होता है, अथवा शरीररहित भी उत्पन्न होता है।

[उ.] गौतम ! शरीर-सहित भी उत्पन्न होता है, शरीररहित भी उत्पन्न होता है।

[प्र.] भगवन् ! ऐसा आप किस कारण से कहते है ?

[उ.] गौतम ! औदारिक, वैक्रिय और आहारक शरीरो की अपेक्षा शरीररहित उत्पन्न होता है तथा तैजस्, कार्मण शरीरो की अपेक्षा शरीर-सहित उत्पन्न होता है। इस कारण ऐसा कहा है।

11. [Q.] *Bhante* ! Is a soul descending in a womb conceived with body (*sharira*) or without body ?

[Ans.] Gautam ! It is conceived with body as well as without body

[Q.] *Bhante* ! Why do you say so ?

[Ans.] Gautam ! In context of gross physical (*audarik*), transmutable (*vaikriya*) and telemigratory (*aahaarak*) bodies it is conceived without body and in context of fiery (*taijas*) and karmic (*karman*) bodies it is conceived with body. That is why I have said so

१२. [प्र.] जीवे णं भते ! गब्भं वक्कममाणे तप्पढमताए किमाहारमाहारेति ?

[उ.] गोयमा ! माउओयं पिउसुक्कं तं तदुभयसंसिट्ठं कलुसं किब्बिसं तप्पढमताए आहारमाहारेति।

१२. [प्र.] भगवन् ! गर्भ मे उत्पन्न होते ही जीव सर्वप्रथम क्या आहार करता है ?

[उ.] गौतम ! परस्पर एक-दूसरे मे मिला हुआ माता का आर्तव (रज) और पिता का शुक्र (वीर्य), जोकि कलुष (मलिन) और किल्विष (घृणास्पद) है, जीव गर्भ मे उत्पन्न होते ही सर्वप्रथम उसका आहार करता है।

12. [Q.] *Bhante* ! What is the first intake (*aahaar*) of a soul being conceived in a womb ?

[Ans.] Gautam ! The first intake (*aahaar*) of a soul being conceived in a womb is the grimy and repulsive mixture of menstrual discharge (*aartava*) of the mother and semen (*virya*) of the father.

१३. [प्र.] जीवे णं भंते ! गब्भगए समाणे किमाहारमाहारेति ?

[उ.] गोयमा ! जं से माता नाणाविहाओ रसविगतीओ आहारमाहारेति तदेक्कदेसेणं ओयमाहारेति।

१३. [प्र.] भगवन् ! गर्भ मे गया (रहा) हुआ जीव क्या आहार करता है ?

[उ.] गौतम ! उसकी माता जो नाना प्रकार की (दुग्धादि) रसविकृतियों का आहार करती है; उसके एक भाग के साथ गर्भगत जीव माता के आर्तव का आहार करता है।

13. [Q.] *Bhante* ! What is the intake (*aahaar*) of a soul conceived in a womb ?

[Ans.] Gautam ! Along with the mother's blood (*aartava*) it takes a portion of various flawed (with respect to soul) juices (like milk) that the mother consumes.

१४. [प्र. १] जीवस्स णं भंते ! गब्भगतस्स समाणस्स अत्थि उच्चारे इ वा पासवणे इ वा खेले इ वा सिंघाणे इ वा वंते इ वा पित्ते इ वा ?

[उ.] णो इणट्ठे समट्ठे।

[प्र. २] से केणट्ठेणं ?

[उ.] गोयमा ! जीवे णं गब्भगए समाणे जं आहारेति तं चिणाइ तं सोतिंदियत्ताए जाव फासिंदियत्ताए अट्ठि-अट्ठिमिंज-केस-मंसु-रोम-नहत्ताए, से तेणट्ठेणं०।

१४. [प्र. १] भगवन् ! क्या गर्भ मे रहे हुए जीव के मल होता है, मूत्र होता है, कफ होता है, नाक का मैल होता है, वमन होता है, पित्त होता है ?

[उ.] गौतम ! गर्भगत जीव के ये सब (मलमूत्रादि) नही होते है।

[प्र. २] भगवन् ! ऐसा आप किस कारण से कहते है ?

[उ.] हे गौतम ! गर्भ मे जाने पर जीव जो आहार करता है, जिस आहार का चय करता है, उस आहार को श्रोत्रेन्द्रिय (कान) के रूप मे यावत् स्पर्शेन्द्रिय के रूप मे तथा हड्डी, मज्जा, केश, दाढ़ी-मूँछ, रोम और नखो के रूप मे परिणत करता है। इसलिए हे गौतम ! गर्भ में गये हुए जीव के मलमूत्रादि नही होते।

14. [Q. 1] *Bhante* ! Does a soul conceived in a womb have stool, urine, phlegm, nose-mucus, vomit and bile ?

[Ans.] Gautam ! A soul conceived in a womb does not have all these.

[Q. 2] *Bhante* ! Why do you say so ?

[Ans.] Gautam ! All the intake and assimilation by a soul conceived in a womb is transformed by it into sense organ of hearing... and so on up

to .. that of touch as well as bone, marrow, hair, beard, body-hair and nails. That is why, Gautam ! A soul conceived in a womb does not have any excreta.

१५. [प्र. १] जीवे णं भंते ! गब्भगते समाणे पभू मुहेणं कावलियं आहारं आहारित्तए ?

[उ.] गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे।

[प्र. २] से केणट्ठेणं ?

[उ.] गोयमा ! जीवे णं गब्भगते समाणे सव्वतो आहारेति, सव्वतो परिणामेति, सव्वतो उस्ससति, सव्वतो निस्ससति, अभिक्खणं आहारेति, अभिक्खणं परिणामेति, अभिक्खणं उस्ससति अभिक्खणं निस्ससति, आहच्च आहारेति, आहच्च परिणामेति, आहच्च उस्ससति, आहच्च नीससति। मातुजीवरसहरणी पुत्तजीवरसहरणी मातुजीवपडिबद्धा पुत्तजीवफुडा तम्हा आहारेइ, तम्हा परिणामेति, अवरा वि य णं पुत्तजीवपडिबद्धा माउजीवफुडा तम्हा चिणाति, तम्हा उवचिणाति; से तेणट्ठेणं० जाव नो पभू मुहेणं कावलियं आहारं आहारित्तए।

१५. [प्र. १] भगवन् ! क्या गर्भ मे रहा हुआ जीव मुख से कवलाहार (ग्रासरूप में आहार) करने मे समर्थ है ?

[उ.] गौतम ! ऐसा होना सम्भव नही है।

[प्र. २] भगवन् ! किस कारण से ऐसा कहते है ?

[उ.] गौतम ! गर्भगत जीव सब ओर से (सारे शरीर से) आहार करता है, सारे शरीर से परिणमाता है, सर्वात्मना (सारे शरीर से) उच्छ्वास लेता है, सर्वात्मना निःश्वास लेता है, बार-बार आहार करता है, बार-बार (उसे) परिणमाता है, बार-बार उच्छ्वास लेता है, बार-बार निःश्वास लेता है, कदाचित् आहार करता है, कदाचित् परिणमाता है, कदाचित् उच्छ्वास लेता है, कदाचित् निःश्वास लेता है, तथा पुत्र (गर्भगत) के जीव को रस पहुँचाने में कारणभूत और माता के रस लेने मे कारणभूत जो मातृजीवरसहरणी नाम की नाडी है वह माता के जीव के साथ सम्बद्ध है और पुत्र (गर्भगत) के जीव के साथ जुडी हुई है। उस नाडी द्वारा वह (गर्भगत जीव) आहार लेता है और आहार को परिणमाता है तथा पुत्रजीवरसहरणी नाम की एक और नाडी है, जो पुत्र के जीव के साथ (नाभि से) सम्बद्ध है और माता के जीव के साथ जुडी हुई होती है, उससे (गर्भगत) पुत्र का जीव आहार का चय करता है और उपचय करता है। इस कारण से हे गौतम ! गर्भगत जीव मुख द्वारा कवलरूप आहार लेने मे समर्थ नही है।

15. [Q. 1] *Bhante* ! Is a soul conceived in a womb capable of consuming morsel-food (*kavalaahaar*) through mouth ?

[Ans.] Gautam ! That is not possible.

[Q. 2] *Bhante* ! Why do you say so ?

[Ans.] Gautam ! A soul conceived in a womb (fetus) indulges in intake through its whole body, transformation through his whole body, inhalation through his whole body and exhalation through his whole body. He indulges in intake very often, transformation through his whole body very often, inhalation very often and exhalation very often. He indulges in intake at times, transformation through his whole body at times, inhalation at times and exhalation at times. Also the placenta, responsible for transference of body fluids from mother to fetus which is called *matri-jiva-rasa-harani*, joins the body of the mother with the body of the fetus Through this cord he (fetus) takes nutrition and transforms it There is another tube called *putra-jiva-rasa-harani* (umbilical cord) that joins the body of the fetus (at his navel) to the body of the mother. Through this cord the fetus assimilates (*chaya*) and augments (*upachaya*) intake. That is why Gautam a soul conceived in a womb is incapable of taking morsel food (*kavalaahaar*) through mouth.

१६. [प्र.] कति णं भंते ! मातियंगा पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! तओ मातियंगा। तं जहा–मंसे सोणिते मत्थुलुंगे।

१६. [प्र.] भगवन् ! (जीव के शरीर में) माता के अंग कितने कहे गये हैं ?

[उ.] गौतम ! माता के तीन अंग कहे गये है, वे इस प्रकार है–(१) माँस, (२) शोणित (रक्त), और (३) मस्तक का भेजा (दिमाग) (ये अंग कोमल होते है)।

16. [Q.] *Bhante* ! What parts of the body of a being are said to be maternal (contributed by mother) ?

[Ans.] Gautam ! There are said to be three maternal parts—(1) flesh, (2) blood, and (3) brain (these parts are soft).

१७. [प्र.] कति णं भंते ! पितियंगा पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! तओ पितियंगा पण्णत्ता। तं जहा–अट्ठि अट्ठिमिंजा केस–मंसु–रोम–नहे।

१७. [प्र.] भगवन् ! पिता के कितने अंग है ?

[उ.] गौतम ! पिता के तीन अंग है, वे इस प्रकार है–(१) हड्डी, (२) मज्जा, और (३) केश, दाढी–मूँछ, रोम तथा नख (ये अंग कठोर होते हैं)।

17. [Q.] *Bhante* ! What parts of the body of a being are said to be paternal (contributed by father) ?

[Ans.] Gautam ! There are three paternal parts—(1) bone, (2) marrow, and (3) hair, beard, body-hair and nails (these parts are hard).

विवेचन : इस सन्दर्भ में आयुर्वेद के ग्रन्थ चरक की भी ऐसी मान्यता है कि जीव चार तन्मात्रा (स्पर्श, रस, रूप और गंध तन्मात्रा) को साथ लेकर नये जन्म में प्रवेश करता है। (चरक संहिता २१३१) अष्टांग हृदय के अनुसार गर्भ में प्रवेश करने वाला प्राणी सर्वप्रथम ओज आहार ग्रहण करता है। उसके पश्चात् शुक्ल-शोणित का आहार ग्रहण करता है। *(अष्टांग हृदय १७/२९)*

Elaboration—In this context *Charak Samhita*, an Ayurvedic text, also states that while taking a new birth soul comes along with four subtle attributes (*tanmatra*) of touch, taste, form and smell (*Charak Samhita*, 2131). According to *Ashtanga Hridaya* (an Ayurvedic text) the first intake of a soul entering a womb is *oj* (radiance or energy). After that it ingests blood (*shukla* or *shonit*) *(Ashtanga Hridaya 17/29)*.

१८. [प्र.] अम्मापेतिए णं भंते ! सरीरए केवइयं कालं संचिट्ठति ?

[उ.] गोयमा ! जावतियं से कालं भवधारणिज्जे सरीरए अव्वावन्ने भवति एवतियं कालं संचिट्ठति। अहे णं समए समए वोक्कसिज्जमाणे २ चरमकालसमयंसि वोच्छिन्ने भवइ।

१८. [प्र.] भगवन् ! माता और पिता के अंग सन्तान के शरीर मे कितने काल तक रहते हैं ?

[उ.] गौतम ! सन्तान का भवधारणीय शरीर जितने समय तक रहता है, उतने समय तक वे अंग रहते है, और जब भवधारणीय शरीर समय-समय पर हीन (क्षीण) होता हुआ अन्तिम समय मे नष्ट हो जाता है; तब माता-पिता के वे अंग भी नष्ट हो जाते है।

18. [Q.] *Bhante* ! For how long do the maternal and paternal parts remain in the body of the offspring ?

[Ans.] Gautam ! These parts remain as long as the incarnation sustaining body (*bhavadharaniya sharira*) lasts And after gradual weakening when the incarnation sustaining body gets destroyed at the last moment of life, these parental parts also get destroyed

१९. [प्र. १] जीवे णं भंते ! गब्भगते समाणे नेरइएसु उववज्जेज्जा ?

[उ.] गोयमा ! अत्थेगइए उववज्जेज्जा, अत्थेगइए नो उववज्जेज्जा।

१९. [प्र. १] भगवन् ! गर्भ मे रहा हुआ जीव क्या नारकों मे उत्पन्न होता है ?

[उ.] गौतम ! कोई उत्पन्न होता है और कोई नहीं उत्पन्न होता।

19. [Q. 1] *Bhante* ! Does a soul living as fetus in a womb take birth among infernal beings ?

[Ans.] Gautam ! Some are born in hell and some not.

[प्र. २] से केणट्ठेणं ?

[उ.] गोयमा ! से णं सन्नी पंचिंदिए सव्वाहिं पज्जत्तीहिं पज्जत्तए वीरियलद्धीए वेउव्वियलद्धीए पराणीयं आगयं सोच्चा निसम्म पदेसे निच्छुभति, निच्छुभित्ता वेउव्वियसमुग्घाएणं समोहण्णइ, वेउव्वियसमुग्घाएणं समोहण्णित्ता चाउरंगिणिं सेणं विउव्वइ, चाउरंगिणिं सेणं विउव्वेत्ता चाउरंगिणीए सेणाए पराणीएणं सद्धिं संगामं संगामेइ। से णं जीवे अत्थकामए रज्जकामए भोगकामए कामकामए, अत्थकंखिए रज्जकंखिए भोगकंखिए कामकंखिए, अत्थपिवासिते रज्जपिवासिते भोगपिवासिए कामपिवासिते, तच्चित्ते तम्मणे तल्लेसे तदज्झवसिए तत्तिव्वज्झवसाणे तदट्ठोवउत्ते तदप्पियकरणे तब्भावणाभाविते एतंसि णं अंतरंसि कालं करेज्ज नेरतिएसु उववज्जइ; से तेणट्ठेणं गोयमा ! जाव अत्थेगइए उववज्जेज्जा, अत्थेगइए नो उववज्जेज्जा।

[प्र. २] भगवन् ! इसका क्या कारण है ?

[उ.] गौतम ! गर्भ में रहा हुआ सञ्ज्ञी पंचेन्द्रिय और समस्त पर्याप्तियों से पर्याप्त जीव, वीर्यलब्धि (शक्ति सपन्नता) द्वारा, वैक्रियलब्धि (नाना रूप निर्माण की योग जनित सामर्थ्य) द्वारा शत्रुसेना को आई हुई सुनकर, अवधारण (विचार) करके अपने आत्म-प्रदेशो को गर्भ से बाहर निकालता है, बाहर निकालकर वैक्रियसमुद्घात करके चतुरगिणी सेना की विक्रिया करके उस सेना से शत्रुसेना के साथ युद्ध करता है। वह अर्थ (धन) का कामी, राज्य का कामी, भोग का कामी, काम का कामी, अर्थाकांक्षी, राज्याकाक्षी, भोगाकांक्षी, कामाकांक्षी (अर्थादि का लोलुप) तथा अर्थ का प्यासा, राज्य का प्यासा, भोगपिपासु एवं कामपिपासु, उन्ही मे चित्त वाला, उन्हीं में मन वाला, उन्ही मे आत्मपरिणाम वाला, उन्हीं में अध्यवसित, उन्हीं में प्रयत्नशील, उन्ही में सावधानतायुक्त, उन्ही के लिए क्रिया करने वाला और उन्हीं भावनाओं से भावित (उन्ही संस्कारों मे ओतप्रोत), यदि उसी (समय) मे मृत्यु को प्राप्त हो तो वह नरक में उत्पन्न होता है। इसलिए हे गौतम ! कोई जीव नरक में उत्पन्न होता है और कोई नहीं उत्पन्न होता।

[Q. 2] *Bhante* ! Why is it so ?

[Ans.] Gautam ! A sentient five-sensed being (highly endowed) living in a womb fully developed in all respects, on hearing about attacking inimical forces and after due consideration pushes out its soul-space-points with the help of its potency and special power of transmutation (*vaikriya labdhi*). Using the process of *Vaikriya Samudghat* (self controlled transformation or mutation) it creates a four pronged army and fights with the inimical forces. If such a being; having desire (*kaamana*) of wealth, desire of kingdom, desire of mundane pleasures, desire of carnal pleasures, craving (*kaanksha*) for wealth, craving for kingdom, craving for mundane pleasures, craving for carnal pleasures, obsessed (*pipasa*) with wealth, obsessed with kingdom, obsessed with mundane pleasures, obsessed with carnal pleasures; with his heart in them, with his mind in them, with his spiritual inclination (*atmaparinaam*) in them, persevering (*adhyavasit*) for them, striving for

them, careful about them, acting for them and having inclination for them; dies at that moment then he is born in the hell. That is why, Gautam ! Some are born in hell and some not.

२०. [प्र. १] जीवे णं भंते ! गब्भगते समाणे देवलोगेसु उववज्जेज्जा ?

[उ.] गोयमा ! अत्थेगइए उववज्जेज्जा, अत्थेगइए नो उववज्जेज्जा।

[प्र. २] से केणट्ठेणं ?

[उ.] गोयमा ! से णं सन्नी पंचिंदिए सव्वाहिं पज्जत्तीहिं पज्जत्तए तहारूवस्स समणस्स वा माहणस्स वा अंतिए एगमवि आरियं धम्मियं सुवयणं सोच्चा निसम्म ततो भवति संवेगजातसड्ढे तिव्वधम्माणुरागरत्ते, से णं जीवे धम्मकामए पुण्णकामए सग्गकामए मोक्खकामए, धम्मकंखिए पुण्णकंखिए सग्गकंखिए मोक्खकंखिए, धम्मपिवासिए पुण्णपिवासिए सग्गपिवासिए मोक्खपिवासिए, तच्चित्ते तम्मणे तल्लेसे तदज्झवसिते तत्तिव्वज्झवसाणे तदट्ठोवउत्ते तदप्पितकरणे तब्भावणाभाविते एतंसि णं अंतरंसि कालं करेज्ज देवलोएसु उववज्जति; से तेणट्ठेणं गोयमा !

२०. [प्र. १] भगवन् ! गर्भस्थ जीव क्या देवलोक मे जाता है ?

[उ.] हे गौतम ! कोई जीव जाता है, और कोई नही जाता।

[प्र. २] भगवन् ! इसका क्या कारण है ?

[उ.] गौतम ! गर्भ मे रहा हुआ सज्ञी पचेन्द्रिय और सब पर्याप्तियों से पर्याप्त जीव, तथारूप श्रमण या माहन के पास एक भी श्रेष्ठ धार्मिक सुवचन सुनकर, अवधारण करके शीघ्र ही सवेग से धर्मश्रद्धालु बनकर, धर्म मे तीव्र अनुराग से रक्त होकर, वह धर्म का कामी, पुण्य का कामी, स्वर्ग का कामी, मोक्ष का कामी, धर्माकांक्षी, पुण्याकाक्षी, स्वर्ग का आकांक्षी, मोक्षाकाक्षी तथा धर्मपिपासु, पुण्यपिपासु, स्वर्गपिपासु एव मोक्षपिपासु, उसी मे चित्त वाला, उसी मे मन वाला, उसी मे आत्मपरिणाम वाला, उसी में अध्यवसाययुक्त, उसी में तीव्र प्रयत्नशील, उसी मे सावधानतायुक्त, उसी के लिए अर्पित होकर क्रिया करने वाला, उसी की भावनाओ से भावित (उसी के सस्कारों से संस्कारित) जीव ऐसे ही समय मे मृत्यु को प्राप्त हो तो देवलोक मे उत्पन्न होता है। इसलिए हे गौतम ! कोई जीव देवलोक में उत्पन्न होता है और कोई नही उत्पन्न होता।

20. [Q. 1] *Bhante* ! Does a soul living as fetus in a womb take birth among divine beings ?

[Ans.] Gautam ! Some are born and some not

[Q. 2] *Bhante* ! Why is it so ?

[Ans.] Gautam ! A sentient five-sensed being (highly endowed) living in a womb fully developed in all respects, on hearing even a single noble and pious word from an ascetic (Shraman or Brahmin) conforming to the

description in *Agams* (*tatharupa*) and after due consideration develops yearning for liberation (*samveg*), soon acquires faith in religion and brims with profound love for religion. If such a being; having desire (*kaamana*) of faith, desire of meritorious *karmas*, desire of heavens, desire of liberation, craving (*kaanksha*) for religion, craving for meritorious *karmas*, craving for heavens, craving for liberation, obsessed (*pipasa*) with religion, obsessed with meritorious *karmas*, obsessed with heavens, obsessed with liberation; with his heart in them, with his mind in them, with his spiritual inclination (*atmaparinaam*) in them, persevering (*adhyavasit*) for them, striving for them, careful about them, acting for them and having inclination for them; dies at that moment then he is born in the heavens. That is why, Gautam ! Some are born in heavens and some not.

२१. [प्र.] जीवे णं भंते ! गब्भगए समाणे उत्ताणए वा पासिल्लए वा अंबुखुज्जए वा अच्छेज्ज वा चिट्ठेज्जा वा निसीएज्ज वा तुयट्टेज्ज वा, मातुए सुवमाणीए सुवति, जागरमाणीए जागरति, सुहियाए सुहिते भवइ, दुहिताए दुहिए भवति ?

[उ.] हंता गोयमा ! जीवे णं गब्भगए समाणे जाव दुहियाए भवति।

२१. [प्र.] भगवन् ! गर्भ मे रहा हुआ जीव क्या चित्त-लेटा हुआ (उत्तानक) होता है, या करवट वाला होता है, अथवा आम के समान कुबडा होता है, या खडा होता है, बैठा होता है या पडा हुआ (सोता हुआ) होता है, तथा माता जब सो रही हो तो सोया होता है, माता जब जागती हो तो जागता है, माता के सुखी होने पर सुखी होता है, एव माता के दु:खी होने पर दु:खी होता है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! गर्भ मे रहा हुआ जीव उक्त सभी प्रकार से रहता है। यावत्-जब माता दुःखित हो तो दुःखी होता है।

21. [Q.] *Bhante* ! Does a being lodged in a womb (fetus) lie in supine position ? Does he lie on its sides ? Is it hunchbacked like a mango ? Or does he remain standing, sitting or reclining ? Also, is he asleep when the mother is asleep ? Is he awake when the mother is awake ? Is he happy when the mother is happy ? And is he sad when the mother is sad ?

[Ans.] Yes, Gautam ! A being lodged in a womb (fetus) does all this... and so on up to... he is sad when the mother is sad.

२२. अहे णं पसवणकालसमयंसि सीसेण वा पाएहिं वा आगच्छति सममागच्छइ तिरियमागच्छइ विणिहायमावज्जति। वण्णवज्झाणि य से कम्माइं बद्धाइं पुट्ठाइं निहत्ताइं कडाइं पट्ठविताइं अभिनिविट्ठाइं अभिसमन्नागयाइं उदिण्णाइं, नो उवसंताइं भवंति; तओ भवइ दुरूवे दुव्वण्णे दुग्गंधे दुरसे दुप्फासे अणिट्ठे अंकते अप्पिए असुभे अमणुण्णे अमणामे हीणस्सरे दीणस्सरे अणिट्ठस्सरे अकंतस्सरे अप्पियस्सरे

असुभस्सरे अमणुण्णस्सरे अमणामस्सरे अणादेज्जवयणे पच्चायाए याऽवि भवति। वण्णवज्झाणि य से कम्माइं नो बद्धाइं, पसत्थं नेतव्वं जाव आदेज्जवयणे पच्चायाए याऽवि भवति।

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति.।

॥ पढमे सए : सत्तमो उद्देसो समत्तो ॥

२२. इसके पश्चात् प्रसवकाल मे अगर वह गर्भगत जीव मस्तक द्वारा या पैरों द्वारा (गर्भ से) बाहर आये तब तो ठीक तरह आता है, यदि वह टेढा (आडा) होकर आये तो मर जाता है। गर्भ से निकलने के पश्चात् उस जीव के कर्म यदि अशुभरूप में बँधे हो–स्पृष्ट हो, निधत्त हों, कृत हो, प्रस्थापित हों, अभिनिविष्ट हो, अभिसमन्वागत हों, उदीर्ण हो और उपशान्त न हो, तो वह जीव कुरूप, कुवर्ण (खराब वर्ण वाला), दुर्गन्ध वाला, कुरस वाला, कुस्पर्श वाला, अनिष्ट, अकान्त, अप्रिय, अशुभ, अमनोज्ञ, अमनाम (जिसका स्मरण भी बुरा लगे), हीन स्वर वाला, दीन स्वर वाला, अनिष्ट, अकान्त, अप्रिय, अशुभ, अमनोरम एवं अमनाम स्वर वाला; तथा अनादेय वचन वाला होता है, और यदि उस जीव के कर्म अशुभरूप में न बँधे हुए हो, तो उसके उपर्युक्त सब बाते प्रशस्त होती है, ' यावत्–वह आदेयवचन वाला होता है।'

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है।'

॥ प्रथम शतक : सप्तम उद्देशक समाप्त ॥

22. After that at the time of delivery if that being in the womb comes out from head first or leg first it is the right position but if it comes out sideways, it dies. If his *karmas* are ignobly bound (*baddha*), touched (*sprishtra*), in state of partial intransigence (*nidhatt*), acquired (*krit*), established (*prasthapit*), thoroughly assimilated (*abhinivisht*), are about to fructify (*abhisamanvagat*), fructified (*udirna*) and not pacified (*upashant*) then that being is born with bad form, bad appearance, bad odour, bad taste and bad touch. He is *anisht* (not desirable), *akaant* (not beautiful), *apriya* (not lovable), *ashubha* (ignoble), *amanojna* (not attractive) and *amanama* (not adorable or whose mere thought is repulsive). He is born with a voice that is feeble, meek, *anisht* (not desirable), *akaant* (not beautiful), *apriya* (not lovable), *ashubha* (ignoble), *amanojna* (not attractive) and *amanama* (not adorable or whose mere thought is repulsive). His language is also unpleasant. However if *karmas* are not ignobly bound then all the aforesaid attributes are noble... and so on up to... His language is also pleasant.

"*Bhante* ! Indeed that is so Indeed that is so." With these words... and so on up to... ascetic Gautam resumed his activities.

● END OF THE SEVENTH LESSON OF THE FIRST SHATAK ●

प्रथम शतक : अष्टम उद्देशक
FIRST SHATAK (Chapter One) : EIGHTH LESSON

बाल BAAL (UNRIGHTEOUS)

बाल, पण्डित आदि का आयुष्यबन्ध **LIFE-SPAN BONDAGE OF BAAL, PUNDIT ETC.**

रायगिहे समोसरणं ! जाव एवं वयासी–

१. [प्र.] एगंतबाले णं भंते ! मणुस्से किं नेरइयाउयं पकरेति ? तिरिक्खाउयं पकरेति ? मणुस्साउयं पकरेति ? देवाउयं पकरेति ? नेरइयाउयं किच्चा नेरइएसु उववज्जति ? तिरियाउयं किच्चा तिरिएसु उववज्जइ ? मणुस्साउयं किच्चा मणुस्सेसु उववज्जइ ? देवाउयं किच्चा देवलोगेसु उववज्जति ?

[उ.] गोयमा ! एगंतबाले णं मणुस्से नेरइयाउयं पि पकरेइ, तिरियाउयं पि पकरेइ, मणुयाउयं पि पकरेइ, देवाउयं पि पकरेइ; णेरइयाइयं पि किच्चा नेरइएसु उववज्जति, तिरियाउयं पि किच्चा तिरिएसु उववज्जति, मणुस्साउयं पि किच्चा मणुस्सेसु उववज्जति, देवाउयं पि किच्चा देवेसु उववज्जति।

राजगृह नगर मे समवसरण हुआ वहाँ श्री गौतम स्वामी ने इस प्रकार प्रश्न पूछे–

१. [प्र.] भगवन् ! क्या एकान्तबाल–(मिथ्यादृष्टि) मनुष्य, नारक की आयु बाँधता है, तिर्यंच की आयु बाँधता है, मनुष्य की आयु बाँधता है अथवा देव की आयु बाँधता है ? तथा क्या वह नरक की आयु बाँधकर नैरयिको मे उत्पन्न होता है, मनुष्य की आयु बाँधकर मनुष्यो मे उत्पन्न होता है अथवा देव की आयु बाँधकर देवलोक मे उत्पन्न होता है ?

[उ.] गौतम ! एकान्तबाल मनुष्य नारक की भी आयु बाँधता है, तिर्यंच की भी आयु बाँधता है, मनुष्य की भी आयु बाँधता है और देव की भी आयु बाँधता है, तथा नरकायु बाँधकर नैरयिको में उत्पन्न होता है, तिर्यंचायु बाँधकर तिर्यंचो मे, मनुष्यायु बाँधकर मनुष्यो मे और देवायु बाँधकर देवो में उत्पन्न होता है।

At the *Samavasaran* (religious assembly) held in Rajagriha Gautam Swami submitted as follows—

1. [Q.] *Bhante* ! Does a singularly unrighteous or ignorant (*ekanta-baal*) human being acquire bondage of life-span as an infernal being, life-span as an animal, life-span as a human being, or life-span as a divine being ? Also is he born as an infernal being after acquiring life-span as an infernal being, born as an animal after acquiring life-span as an animal, born as a human being after acquiring life-span as a human being, or born as a divine being after acquiring life-span as a divine being ?

[Ans.] Gautam ! A singularly unrighteous or ignorant human being can acquire bondage of life-span as an infernal being, life-span as an animal, life-span as a human being and life-span as a divine being. Then he is born as an infernal being after acquiring life-span as an infernal being, as an animal after acquiring life-span as an animal, as a human being after acquiring life-span as a human being and as a divine being after acquiring life-span as a divine being

२. [प्र.] एगंतपंडिए णं भंते ! मणुस्से किं नेरइयाउयं पकरेइ ? जाव देवाउयं किच्चा देवलोएसु उववज्जति ?

[उ.] गोयमा ! एगंतपंडिए णं मणुस्से आउयं सिय पकरेति, सिय नो पकरेति। जइ पकरेइ नो नेरइयाउयं पकरेइ, नो तिरियाउयं पकरेइ, नो मणुस्साउयं पकरेइ, देवाउयं पकरेति। नो नेरइयाउयं किच्चा नेरइएसु उववज्जइ, णो तिरि., णो मणुस्सा., देवाउयं किच्चा देवेसु उववज्जति।

[प्र.] से केणट्ठेणं जाव देवाउयं किच्चा देवेसु उववज्जति ?

[उ.] गोयमा ! एगंतपंडितस्स णं मणुसस्स केवलमेव दो गतीओ पन्नायंति, तं जहा–अंतकिरिया चेव, कप्पोववत्तिया चेव। से तेणट्ठेणं गोयमा ! जाव देवाउयं किच्चा देवेसु उववज्जति।

२. [प्र.] भगवन् ! एकान्तपण्डित मनुष्य क्या नरकायु बाँधता है ? या यावत् देवायु बाँधता है ? और यावत् देवायु बाँधकर देवलोक मे उत्पन्न होता है ?

[उ.] हे गौतम ! एकान्तपण्डित मनुष्य, कदाचित् आयु बाँधता है और कदाचित् आयु नहीं बाँधता। यदि आयु बाँधता है तो देवायु बाँधता है, किन्तु नरकायु, तिर्यंचायु और मनुष्यायु नही बाँधता। वह नरकायु नहीं बाँधने से नारको मे उत्पन्न नहीं होता, इसी प्रकार तिर्यंचायु न बाँधने से तिर्यंचों मे और मनुष्यायु न बाँधने से मनुष्यों मे भी उत्पन्न नहीं होता, किन्तु देवायु बाँधकर देवो मे उत्पन्न होता है।

[प्र.] भगवन् ! इसका क्या कारण है कि देवायु बाँधकर देवो मे उत्पन्न होता है ?

[उ.] गौतम ! एकान्तपण्डित मनुष्य की केवल दो गतियाँ होती है -(१) अन्तक्रिया, और (२) कल्पोपत्तिका (सौधर्मादि कल्पो मे उत्पन्न होना)। इस कारण हे गौतम ! एकान्तपण्डित मनुष्य देवायु बाँधकर देवो में उत्पन्न होता है।

2. [Q.] *Bhante* ! Does a singularly righteous or enlightened (*ekanta-pundit*) human being acquire bondage of life-span as an infernal being, ...and so on up to... is he born as a divine being after acquiring life-span as a divine being ?

[Ans.] Gautam ! A singularly righteous human being sometimes acquires bondage of life-span and sometimes not. In case he acquires bondage of life-span it is only as a divine being and never as an infernal

being, animal or a human being. As he does not acquire life-span as an infernal being he is not born as an infernal being. In the same way as he does not acquire life-span as an animal he is not born as an animal and as he does not acquire life-span as a human being he is not born as a human being. But he is born as a divine being after acquiring life-span as a divine being.

[Q.] *Bhante* ! What is the reason that he is born as a divine being after acquiring life-span as a divine being ?

[Ans.] Gautam ! A singularly righteous human being is said to be destined for two states—(1) *Antakriya* (ultimate act or liberation), and (2) *Kalpopattika* (birth in higher divine realms like *Saudharma kalp*). Therefore, Gautam ! A singularly righteous human being is born as a divine being after acquiring life-span as a divine being.

३. [प्र.] बालपंडिते णं भंते ! मणुस्से किं नेरइयाउयं पकरेति जाव देवाउयं किच्चा देवेसु उववज्जति ?

[उ.] गोयमा ! नो नेरइयाउयं पकरेति जाव देवाउयं किच्चा देवेसु उववज्जति।

[प्र.] से केणट्ठेणं जाव देवाउयं किच्चा देवेसु उववज्जंति ?

[उ.] गोयमा ! बालपंडिए णं मणुस्से तहारूवस्स समणस्स वा माहणस्स वा अंतिए एगमवि आरियं धम्मियं सुवयणं सोचा निसम्म देसं उवरमति, देसं नो उवरमइ, देसं पच्चक्खाति, देसं णो पच्चक्खाति; से णं तेणं देसोवरम–देसपच्चक्खाणेणं नो नेरयाउयं पकरेति जाव देवाउयं किच्चा देवेसु उववज्जति। से तेणट्ठेणं जाव देवेसु उववज्जइ।

३. [प्र.] भगवन् ! क्या बालपण्डित मनुष्य नरकायु बाँधता है, यावत्–देवायु बाँधता है ? और यावत्–देवायु बाँधकर देवलोक में उत्पन्न होता है ?

[उ.] गौतम ! वह नरकायु नहीं बाँधता और यावत् (तिर्यंचायु तथा मनुष्यायु नही बाँधता), देवायु बाँधकर देवो मे उत्पन्न होता है।

[प्र.] भगवन् ! इसका क्या कारण है कि बालपण्डित मनुष्य यावत् देवायु बाँधकर देवों में उत्पन्न होता है ?

[उ.] गौतम ! बालपण्डित मनुष्य तथारूप श्रमण या माहन के पास से एक भी आर्य तथा धार्मिक सुवचन सुनकर, अवधारण करके एकदेश से (आंशिक रूप से) विरत होता है और एकदेश से विरत नहीं होता। एकदेश से प्रत्याख्यान करता है और एकदेश से प्रत्याख्यान नही करता। इसलिए हे गौतम ! देश–विरति और देश–प्रत्याख्यान के कारण वह नरकायु, तिर्यंचायु और मनुष्यायु का बन्ध नहीं करता और यावत्–देवायु बाँधकर देवों मे उत्पन्न होता है। इसलिए हे गौतम ! पूर्वोक्त कथन किया गया है।

3. [Q.] *Bhante* ! Does a partially righteous (*baal-pundit*) human being acquire bondage of life-span as an infernal being, . and so on up to... is he born as a divine being after acquiring life-span as a divine being ?

[Ans.] Gautam ! A partially righteous human being does not acquire bondage of life-span as an infernal being and so on up to. . (not as an animal or a human being) but he is born as a divine being after acquiring life-span as a divine being

[Q.] *Bhante* ! What is the reason that he is born as a divine being after acquiring life-span as a divine being ?

[Ans.] Gautam ! A partially righteous human being after hearing even one noble and pious word from an ascetic (Shraman or Brahmin) conforming to the description in *Agams* (*tatharupa*) and after due consideration partially abstains (*desh virati*) and partially does not. He partially restrains (*desh pratyakhyan*) and partially does not. Therefore, Gautam ! Due to partial abstainment and partial renunciation he does not acquire life-span as an infernal being, animal or a human being .. and so on up to. is born as a divine being after acquiring life-span as a divine being. That is why there is the aforesaid statement, Gautam !

विवेचन : मिथ्यादृष्टि और अविरत को एकान्तबाल, महाव्रतधारी मुनि को पण्डित और वह देशविरत श्रमणोपासक बालपण्डित कहलाता है।

एकान्तबाल मनुष्य के चारो गतियो का आयुष्यबन्ध–एकान्तबालत्व समान होते हुए भी एक ही गति का आयुष्यबन्ध न होकर चारो गतियो का आयुबन्ध होता है। इसका कारण एकान्तबाल जीवो का प्रकृतिवैविध्य है। कई एकान्तबाल जीव महारम्भ, महापरिग्रही, पापाचारी होते है, वे नरकायु या तिर्यंचायु का बन्ध करते है। कई एकान्तबाल जीव अल्पकषायी, अकामनिर्जरा, बालतप आदि से युक्त होते है। वे मनुष्यायु या देवायु का बन्ध करते है।

एकान्तपण्डित की दो गतियाँ–जिनके सम्यक्त्वसप्तक (अनन्तानुबन्धी चार कषाय और मोहनीयत्रिक इन सात प्रकृतियो) का क्षय हो गया है तथा जो तद्‌भवमोक्षगामी है, वे आयुष्यबन्ध नही करते। यदि इन सात प्रकृतियो के क्षय से पूर्व उनके आयुष्यबन्ध हो गया हो तो सिर्फ एक वैमानिक देवायु का बन्ध करते है। इसी कारण एकान्तपण्डित मनुष्य की क्रमश दो गतियाँ कही है- अन्तक्रिया (मोक्षगति) अथवा कल्पोपपत्तिका। *(वृत्ति, पत्राक ९०-९१)*

Elaboration—An unrighteous and non-abstaining person is called *ekanta-baal* An ascetic observing five great vows (*mahavrat*) is called *pundit*. A partially abstaining *Shramanopasak* (a layman observing twelve vows including five *anuvrats*) is called *baal-pundit*.

Life-span bondage of an ekanta-baal—Although singular unrighteousness is a single category, individuals of this category have bondage of life-span determining *karmas* for varied genuses and not a single one. The reason for this is the varied nature of such beings. Some singularly unrighteous persons are extremely violent, covetous and sinful. They acquire bondage of life-span as infernal beings or animals. Some singularly unrighteous persons are with mild passions and they undergo involuntary shedding of *karmas* as well as indulge in ignorant austerities. They acquire bondage of life-span as divine beings or humans.

Two destinies of ekanta-pundit—Those who have shed *Samyaktvasaptak* (seven modes of righteousness) or the seven species of *karmas* including four *anantanubandhi kashaya* (passions that enhance the unending cycles of rebirth) and three *Mohaniya* (deluding) *karmas*, and are destined to liberate at the end of the present birth, do not acquire bondage of life-span If they have acquired life-span bondage prior to the shedding of the said seven species of *karmas*, it is only the life-span as Vaimanik gods Therefore only two destinies for *ekanta-pundit* have been mentioned—*Antakriya* (ultimate act or liberation) and *Kalpopattika* (birth in higher divine realms like *Saudharma kalp*). *(Vritti, leaves 90-91)*

मृगघातकादि को लगने वाली क्रिया INVOLVEMENT IN ACTIVITIES

४. [प्र.] पुरिसे णं भंते ! कच्छंसि वा १ दहंसि वा २ उदगंसि वा ३ दवियंसि वा ४ बलयंसि वा ५ नूमंसि वा ६ गहणंसि वा ७ गहणविदुग्गंसि वा ८ पव्वतंसि वा ९ पव्वतविदुग्गंसि वा १० वणंसि , वा ११ वणविदुग्गंसि वा १२ मियवित्तीए मियसंकप्पे मियपणिहाणे मियवहाए गंता 'एते मिए' त्ति काउं अन्नयरस्स मियस्स वहाए कूडपासं उद्दाइ; ततो णं भंते ! से पुरिसे कतिकिरिए ?

[उ.] गोयमा ! जावं च णं से पुरिसे कच्छंसि वा १२ जाव कूडपासं उद्दाइ तावं च णं से पुरिसे सिय तिकिरिए, सिय चउकिरिए, सिय पंचकिरिए।

[प्र.] से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चति 'सिय तिकिरिए, सिय चउकिरिए, सिय पंचकिरिए ?'

[उ.] गोयमा ! जे भविए उद्दवणयाए, णो बंधणयाए, णो मारणयाए तावं च णं से पुरिसे काइयाए अहिगरणियाए पादोसियाए तीहिं किरियाहिं पुट्ठे। जे भविए उद्दवणयाए वि बंधणयाए वि, णो मारणयाए तावं च णं से पुरिसे काइयाए अहिगरणियाए पाओसियाए पारियावणियाए चउहिं किरियाहिं पुट्ठे। जे भविए उद्दवणयाए वि बंधणयाए वि मारणयाए वि तावं च णं से पुरिसे काइयाए जाव पाणातिवातकिरियाए पंचहिं किरियाहिं पुट्ठे। से तेणट्ठेणं जाव पंचकिरिए।

४. [प्र.] भगवन् ! मृगों से आजीविका चलाने वाला, मृगों का शिकारी, मृगों के शिकार में तल्लीन कोई पुरुष मृगवध के लिए निकला हुआ कच्छ (नदी के पानी से घिरे हुए झांड़ियों वाले स्थान) में, द्रह मे, जलाशय मे, घास आदि मे, समूह में, वलय (गोलाकार नदी आदि के पानी से टेढे-मेढ़े स्थान) में, अन्धकारयुक्त प्रदेश मे, गहन (वृक्ष, लता आदि झुण्ड से सघन वन) मे, पर्वत के एक भागवर्त्ती वन मे, पर्वत पर पर्वतीय दुर्गम प्रदेश मे, वन मे, बहुत से वृक्षो से दुर्गम वन में 'ये मृग हैं' ऐसा सोचकर किसी मृग को मारने के लिए कूटपाश रचे (गड्ढा बनाकर जाल फैलाए) तो हे भगवन् ! उस पुरुष को कितनी क्रियाएँ लगती है ?

[उ.] हे गौतम ! वह पुरुष कच्छ मे, यावत्-जाल फैलाए तो कदाचित् तीन क्रिया वाला, कदाचित् चार क्रिया वाला और कदाचित् पाँच क्रिया वाला होता है।

[प्र.] भगवन् ! किस कारण से ऐसा कहा जाता है कि 'वह पुरुष कदाचित् तीन क्रियाओ वाला, कदाचित् चार क्रियाओ वाला और कदाचित् पाँच क्रियाओं वाला होता है ?'

[उ.] गौतम ! जब तक पुरुष जाल को धारण करता है, और मृगो को बाँधता नही है तथा मृगो को मारता नही है, तब तक वह पुरुष कायिकी, आधिकरणिकी और प्राद्वेषिकी, इन तीन क्रियाओ वाला होता है। जब तक वह जाल को धारण किये हुए है और मृगो को बाँधता है किन्तु मारता नही, तब तक वह पुरुष कायिकी, आधिकरणिकी, प्राद्वेषिकी और पारितापनिकी, इन चार क्रियाओ वाला होता है। जब वह पुरुष जाल को धारण किये हुए है, मृगो को बाँधता है और मारता है, तब वह कायिकी, आधिकरणिकी, प्राद्वेषिकी, पारितापनिकी और प्राणातिपातिकी, इन पाँचो क्रियाओं वाला होता है। इस कारण हे गौतम ! वह पुरुष कदाचित् तीन क्रियाओ वाला, कदाचित् चार क्रियाओ वाला और कदाचित् पाँचो क्रियाओ वाला कहा जाता है।

4. [Q.] *Bhante* ! A person earning his livelihood from deer (or other animals), a hunter committed to deer hunting sets out for a hunt in a bush on an island, in a river (*kachchha*), in a lake, in a pond, in thick grass, at river bend, in a dark area, in a dense forest, in a jungle on a mountain, in a difficult terrain on a mountain, in an impassable forest and with an idea that 'there are deer' he sets a trap to kill a deer In such case, *Bhante* ! in how many activities (*kriya*) is he involved ?

[Ans.] Gautam ! When that person sets out for a hunt and so on up to... sets a trap to kill a deer he is involved in may be three activities, may be four or may be five activities.

[Q.] *Bhante* ! Why is it said that he is involved in may be three activities, may be four or may be five activities ?

[Ans.] Gautam ! So long as he holds the net, does not trap deer and does not kill deer he is involved in three activities—*kaayiki* (physical activity), *aadhikaraniki* (activity of collecting instruments of violence)

and *praadveshiki* (activity of harbouring aversion). So long as he holds the net, entraps deer but does not kill deer he is involved in four activities—*kaayiki, aadhikaraniki, praadveshiki* and *paaritapaniki* (activity of inflicting pain). When he holds the net, entraps deer and also kills the deer he is involved in five activities—*kaayiki, aadhikaraniki, praadveshiki, paaritapaniki* and *pranatipatiki* (activity of killing a living being). That is why it is said that he is involved in may be three activities, may be four or may be five activities.

५. [प्र.] पुरिसे णं भंते ! कच्छंसि वा जाव वणविदुग्गंसि वा तणाइं ऊसविय ऊसविय अगणिकायं निसिरइ तावं च णं भंते ! से पुरिसे कतिकिरिए ?

[उ.] गोयमा ! सिय तिकिरिए सिय चउकिरिए सिय पंचकिरिए।

[प्र.] से केणट्ठेणं ?

[उ.] गोयमा ! जे भविए उस्सवणयाए तिहिं; उस्सवणयाए वि निसिरणयाए वि, नो दहणयाए चउहिं; जे भविए उस्सवणयाए वि निसिरणयाए वि दहणयाए वि तावं च णं से पुरिसे काइयाए जाव पंचहिं किरियाहिं पुट्ठे। से तेणट्ठेणं गोयमा !

५. [प्र.] भगवन् ! कच्छ मे यावत्-वनविदुर्ग-(अनेक वृक्षों के कारण दुर्गम वन) में कोई पुरुष घास के तिनके इकट्ठे करके और उनमें अग्नि डाले तो वह पुरुष कितनी क्रिया वाला होता है ?

[उ.] गौतम ! वह पुरुष कदाचित् तीन क्रियाओ वाला, कदाचित् चार क्रियाओं वाला और कदाचित् पाँच क्रियाओं वाला होता है।

[प्र.] भगवान् ! किस कारण से ऐसा कहा जाता है ?

[उ.] गौतम ! जब तक वह पुरुष तिनके इकट्ठे करता है, तब तक वह तीन क्रियाओं वाला होता है। जब वह तिनके इकट्ठे कर लेता है, और उनमे अग्नि डालता है, किन्तु जलाता नही है, तब तक वह चार क्रियाओं वाला होता है। जब वह तिनके इकट्ठे करता है, उनमें आग डालता है और जलाता है, तब वह पुरुष कायिकी आदि पाँचो क्रियाओ वाला होता है। इसलिए हे गौतम ! वह (पूर्वोक्त) पुरुष कदाचित् तीन क्रियाओ वाला, कदाचित् चार क्रियाओं वाला एवं कदाचित् पाँचों क्रियाओं वाला कहा जाता है।

5. [Q.] *Bhante* ! A person going in a bush on an island in a river (*kachchha*) .. and so on up to... in an impassable forest collects dry grass and puts fire in the heap. In such case, *Bhante* ! in how many activities (*kriya*) is he involved ?

[Ans.] Gautam ! He is involved in may be three activities, may be four or may be five activities.

[Q.] *Bhante* ! Why is it so ?

[Ans.] Gautam ! As long as he collects dry grass he is involved in three activities. When he collects dry grass, puts fire into the heap but does not inflame it he is involved in four activities. When he collects dry grass, puts fire into the heap and also inflames, it he is involved in five activities including *kaayiki*. That is why it is said that he is involved in may be three activities, may be four or may be five activities.

६. [प्र.] पुरिसे णं भंते ! कच्छंसि वा जाव वणविदुग्गंसि वा मियवित्तीए मियसंकप्पे मियपणिहाणे मियवहाए गंता 'एए मिये' त्ति काउं अन्नयरस्स मियस्स वहाए उसुं निसिरइ, ततो णं भंते ! से पुरिसे कतिकिरिए ?

[उ.] गोयमा ! सिय तिकिरिए, सिय चउकिरिए, सिय पंचकिरिए।

[प्र.] से केणट्ठेणं ?

[उ.] गोयमा ! जे भविए निसिरणयाए नो विद्धंसणयाए नो मारणयाए वि तावं च णं पुरिसे तिहिं; जे भविए निसिरणयाए वि विद्धंसणयाए वि, नो मारणयाए चउहिं; जे भविए निसिरणयाए वि विद्धंसणयाए वि मारणयाए वि तावं च णं से पुरिसे जाव पंचहिं किरियाहिं पुट्ठे। से तेणट्ठेणं गोयमा ! सिय तिकिरिए, सिय चउकिरिए, सिय पंचकिरिए।

६. [प्र.] भगवन् ! मृगो से आजीविका चलाने वाला, मृगों का शिकार करने के लिए कृत-सकल्प, मृगो के शिकार मे तन्मय, मृगवध के लिए कच्छ मे यावत् वनविदुर्ग मे जाकर 'ये मृग है' ऐसा सोचकर किसी एक मृग को मारने के लिए बाण फेकता है, तो वह पुरुष कितनी क्रिया वाला होता है (अर्थात् उसे कितनी क्रिया लगती है ?)

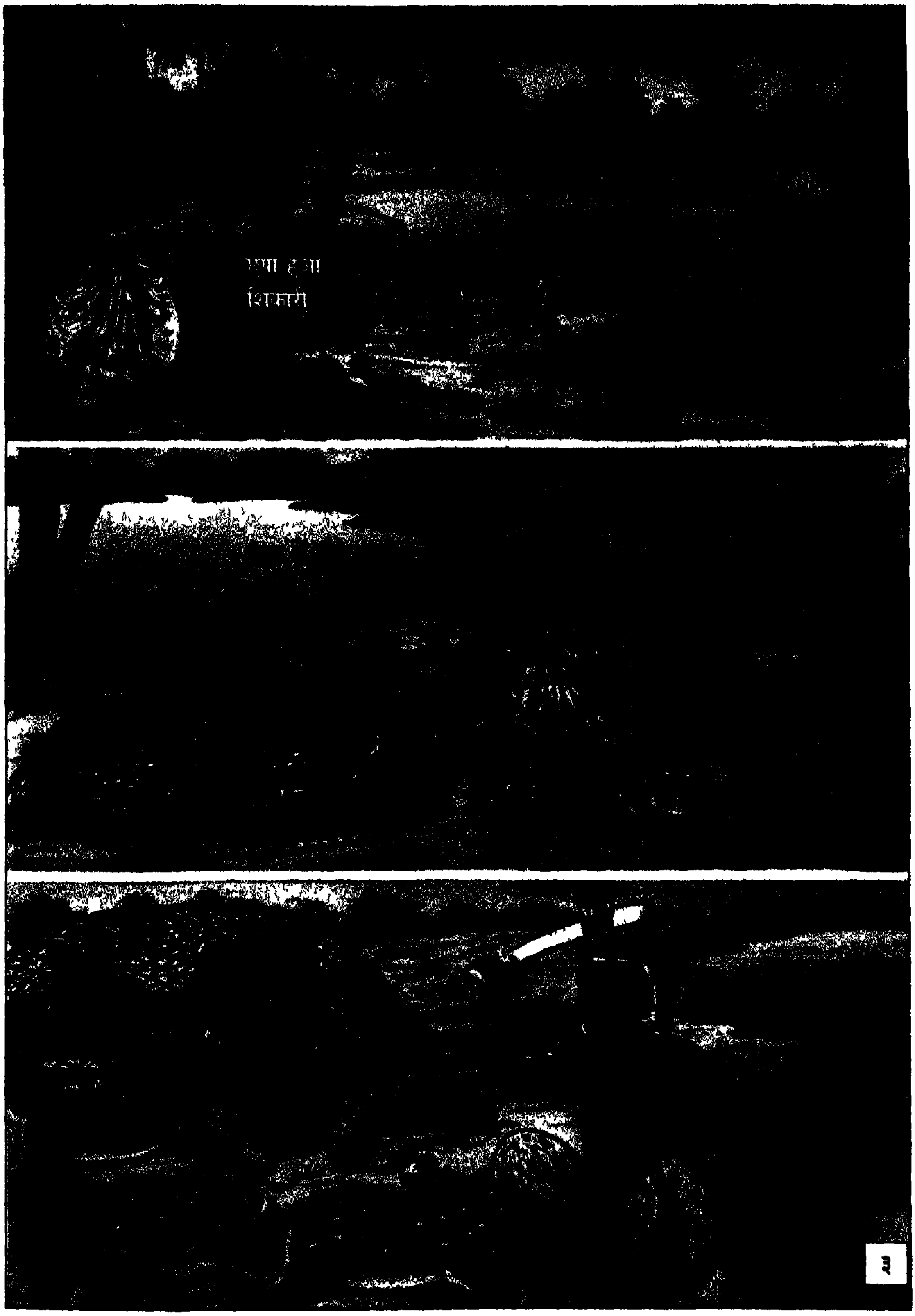
[उ.] हे गौतम ! वह पुरुष कदाचित् तीन क्रिया वाला, कदाचित् चार क्रिया वाला और कदाचित् पाँच क्रिया वाला होता है।

[प्र.] भगवन् ! किस कारण से ऐसा कहा जाता है ?

[उ.] गौतम ! जब तक वह पुरुष बाण फेकता है, परन्तु मृग को बेधता नही है तथा मृग को मारता नही है, तब तक वह पुरुष तीन क्रिया वाला है। जब वह बाण फेकता है और मृग को बेधता है, पर मृग को मारता नही है, तब तक वह चार क्रिया वाला है, जब वह बाण फेकता है, मृग को बेधता है और मारता है, तब वह पुरुष पाँच क्रिया वाला है। हे गौतम ! इस कारण ऐसा कहा जाता है कि 'कदाचित् तीन क्रिया वाला, कदाचित् चार क्रिया वाला और कदाचित् पाँच क्रिया वाला होता है।'

6. [Q.] *Bhante* ! A person earning his livelihood from deer (or other animals), a hunter committed to deer hunting sets out for a hunt in a bush on an island, in a river (*kachchha*)... and so on up to .. in an impassable forest and with an idea that 'here is a deer' he launches an

मृगघातक की क्रियाएँ



चित्र परिचय-३

Illustration No. 3

मृगघातक को कितनी क्रियाएँ

(१) कोई मृगो का शिकार करने वाला जगल मे मृगो को फँसाने के लिए नदी अथवा सरोवर के पास वाले गड्ढे मे जाल बिछाकर झाडियो, उन्हे फँसाने की ताक मे वृक्षो की ओट मे छुपकर खडा रहता है। तब तक उसे कायिकी, **आधिकरणिकी** और **प्राद्वेपिकी** ये तीन क्रियाएँ लगती है।

(२) जब वह शिकारी मृगो को जाल मे फँसाकर बाँध लेता है, परन्तु मारता नही है, तब तक उसे तीन क्रियाएँ प्रथम तथा चोथी **पारितापनिकी**–ये चार क्रियाएँ लगती है।

(३) जब वह निर्दयता पूर्वक मृग आदि का वध करने लगता है, तब उक्त चारो क्रियाएँ तथा **प्राणातिपातिकी**। ये पाँचो क्रिया वाला होता है।

यही उदाहरण प्रत्येक सावद्य क्रिया प्रवृत्ति के सम्बन्ध मे समझना चाहिए।

शतक १ उ ८ सूत्र ४

DEER-HUNTER'S INVOLVEMENT IN ACTIVITIES

(1) A deer-hunter sets a trap to kill a deer in a bush near a river or a lake and stands hiding behind trees So long as he waits he is involved in three activities--**kaayiki** (physical activity), **aadhikaraniki** (activity of collecting instruments of violence) and **praadveshiki** (activity of harbouring aversion)

(2) So long as he entraps deer but does not kill it he is involved in four activities—the aforesaid three and **paaritapaniki** (activity of inflicting pain)

(3) When he also kills the deer cruelly he is involved in five activities—the aforesaid four and **pranatipatiki** (activity of killing a living being) Such person is involved in all the five activities

This example holds good for all sinful activities

—Shatak 1, lesson 8, Sutra 4

arrow to kill a deer. In such case, *Bhante* ! in how many activities (*kriya*) is he involved ?

[Ans.] Gautam ! He is involved in may be three activities, may be four or may be five activities.

[Q.] *Bhante* ! Why is it so ?

[Ans.] Gautam ! As long as he launches the arrow but neither hits the deer nor kills it he is involved in three activities. When he launches the arrow and hits the deer but does not kill it he is involved in four activities When he launches the arrow, hits the deer and also kills it he is involved in five activities. That is why it is said that he is involved in may be three activities, may be four or may be five activities.

७. [प्र.] पुरिसे णं भंते ! कच्छंसि वा जाव अन्नयरस्स मियस्स वहाए आयतकण्णायतं उसुं आयामेत्ता चिट्ठिज्जा, अन्ने य से पुरिसे मग्गतो आगम्म सयपाणिणा असिणा सीसं छिंदेज्जा, से य उसू ताए चेव पुव्वायामणयाए तं मियं विंधेज्जा, से णं भंते ! पुरिसे किं मियवेरेणं पुट्ठे ? पुरिसवेरेणं पुट्ठे !

[उ.] गोयमा ! जे मियं मारेति से मियवेरेणं पुट्ठे, जे पुरिसं मारेइ से पुरिसवेरेणं पुट्ठे।

[प्र.] से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ जाव से पुरिसवेरेणं पुट्ठे ?

[उ.] से नूणं गोयमा ! कज्जमाणे कडे, संधिज्जमाणे संधिते, निव्वतिज्जमाणे निव्वत्तिए, निसिरिज्जमाणे निसट्ठे त्ति वत्तव्वं सिया ?

हंता, भगवं ! कज्जमाणे कडे जाव निसट्ठे त्ति वत्तव्वं सिया। से तेणट्ठेणं गोयमा ! जे मियं मारेति से मियवेरेणं पुट्ठे जे पुरिसं मारेइ से पुरिसवेरेणं पुट्ठे। अंतो छण्हं मासाणं मरइ। काइयाए जाव पंचहिं किरियाहिं पुट्ठे।

बाहिं छण्हं मासाणं मरति। काइयाए जाव पारितावणियाए चउहिं किरियाहिं पुट्ठे।

७. [प्र.] भगवन् ! कोई पुरुष, कच्छ में यावत् किसी मृग का वध करने के लिए कान तक ताने (लम्बे किये) हुए बाण को प्रयत्नपूर्वक खीचकर खडा हो और दूसरा कोई पुरुष पीछे से आकर उस खड़े हुए पुरुष का मस्तक अपने हाथ से तलवार द्वारा काट डाले। वह बाण पहले के खिचाव से उछलकर उस मृग को बीध डाले, तो हे भगवन् ! वह पुरुष मृग के वैर से स्पृष्ट है या (उक्त) पुरुष के वैर से स्पृष्ट है ?

[उ.] गौतम ! जो पुरुष मृग को मारता है, वह मृग के वैर से स्पृष्ट है और जो पुरुष, पुरुष को मारता है, वह पुरुष के वैर से स्पृष्ट है।

[प्र.] भगवन् ! आप ऐसा किस कारण से कहते है कि यावत् वह पुरुष, पुरुष के वैर से स्पृष्ट है ?

[उ.] हे गौतम ! यह तो निश्चित है कि 'जो किया जा रहा है, वह किया हुआ' कहलाता है; 'जो साधा (धनुष पर बाण चढाना) जा रहा है, वह साधा हुआ', 'जो मोडा जा रहा है, वह मुडा हुआ' और 'जो फेंका जा रहा है, वह फेंका हुआ' कहलाता है।

(गौतम) हाँ, भगवन् ! जो किया जा रहा है, वह किया हुआ कहलाता है, और यावत्-जो फेंका जा रहा है, वह फेका हुआ कहलाता है।

(भगवान्-) इसलिए हे गौतम ! 'इसी कारण से जो मृग को मारता है, वह मृग के वैर से स्पृष्ट और जो पुरुष को मारता है, वह पुरुष के वैर से स्पृष्ट कहलाता है। यदि मरने वाला छह मास के अन्दर मरे, तो मारने वाला कायिकी आदि यावत् पाँचो क्रियाओ से स्पृष्ट कहलाता है और यदि मरने वाला छह मास के पश्चात् मरे तो मारने वाला पुरुष कायिकी यावत् पारितापनिकी इन चार क्रियाओं से स्पृष्ट कहलाता है।

7. [Q.] *Bhante* ! A person sets out for a hunt in a bush on an island in a river (*kachchha*)... and so on up to.. in an impassable forest and he stands drawing an arrow (set on his bow) up to his ear and suddenly another person comes behind him and beheads him with a sword. The already drawn arrow gets launched and pierces the deer In such case, *Bhante* ! is that person touched by animosity for the deer or that of the other person ?

[Ans.] Gautam ! The person who kills the deer is touched by animosity for the deer and the other person who kills this person is touched by animosity for that person

[Q.] *Bhante* ! Why do you say that the person who kills.. and so on up to .. is touched by animosity for that person ?

[Ans.] Gautam ! Is it not a fact that what is 'being done' is called 'done', what is 'being aimed' is called 'aimed', what is 'being bent' is called 'bent' and what is 'being launched' is called 'launched' ?

(Gautam) Yes, *Bhante* ! What is 'being done' is called 'done', .. and so on up to... what is 'being launched' is called 'launched'.

(*Bhagavan*) Therefore, Gautam ! The person who kills the deer is touched by animosity for the deer and the other person who kills this person is touched by animosity for the person If the victim dies within six months the killer is said to be touched by all the five activities including *kaayiki*. On the other hand if the victim dies after six months the killer is said to be touched by four activities—*kaayiki*.. and so on up to.. *paaritapaniki*.

८. [प्र.] पुरिसे णं भंते ! पुरिसं सत्तीए समभिधंसेज्जा, सयपाणिणा वा से असिणा सीसं छिंदेज्जा, ततो णं भंते ! से पुरिसे कतिकिरिए ?

[उ.] गोयमा ! जावं च णं से पुरिसे तं पुरिसं सत्तीए समभिधंसेइ सयपाणिणा वा से असिणा सीसं छिंदइ तावं च णं से पुरिसे काइयाए, अहिगरणियाए, जाव पाणातिवायकिरियाए पंचहिं किरियाहिं पुट्ठे, आसन्नवहएण य अणवकंखणवत्तिएणं पुरिसवेरेणं पुट्ठे।

८. [प्र.] भगवन् ! कोई पुरुष किसी पुरुष को बरछी (या भाले) से मारे अथवा अपने हाथ से तलवार द्वारा उस पुरुष का मस्तक काट डाले, तो वह पुरुष कितनी क्रिया वाला होता है ?

[उ.] गौतम ! जब वह पुरुष उसे बरछी द्वारा मारता है, अथवा अपने हाथ से तलवार द्वारा उस पुरुष का मस्तक काटता है, तब वह पुरुष कायिकी, आधिकरणिकी यावत् प्राणातिपातिकी इन पाँचों क्रियाओ से स्पृष्ट होता है और वह आसन्नवधक (तुरन्त मरने वाला) एवं दूसरे के प्राणों की परवाह न करने वाला पुरुष, पुरुष-वैर से स्पृष्ट होता है।

8. [Q.] *Bhante* ! If a person kills another person by a lance or beheads him with a sword then in how many activities (*kriya*) that person is involved ?

[Ans.] Gautam ! When that person kills another person by a lance or beheads him with a sword then he is involved in five activities—***kaayiki***, *aadhikaraniki*, . . and so on up to. . *pranatipatiki*. And that spontaneous killer who is careless of the life of others is touched by animosity for man.

विवेचन : षट्मास की अवधि क्यो ? जिस पुरुष के प्रहार से मृगादि प्राणी छह मास के भीतर मर जाये तो उसके मरण मे वह प्रहार निमित्त माना जाता है। इसलिए मारने वाले को पाँचो क्रियाएँ लगती हैं, किन्तु वह मृगादि प्राणी छह महीने के बाद मरता है तो उसके मरण में वह प्रहार निमित्त नहीं माना जाता, इसलिए उसे प्राणातिपातिकी के अतिरिक्त शेष चार क्रियाएँ ही लगती हैं। यह कथन व्यवहारनय की दृष्टि से है, अन्यथा उस प्रहार के निमित्त से जब कभी भी मरण हो, उसे पाँचो क्रियाएँ लगती है। *(वृत्ति १३-१४)*

पंचक्रियाएँ-(१) **कायिकी**-काया द्वारा होने वाला सावद्य व्यापार, (२) **आधिकरणिकी**-हिंसा के साधन-शस्त्रादि जुटाना, (३) **प्राद्वेषिकी**-तीव्र द्वेषभाव से लगने वाली क्रिया, (४) **पारितापनिकी**-किसी जीव को पीड़ा पहुँचाना, और (५) **प्राणातिपातिकी**-जिस जीव को मारने का सकल्प किया था, उसे मार डालना।

Elaboration—Six month period—When a deer or other living being dies within six months of hitting by a person, that attack is believed to be the cause of death. Therefore there is said to be an involvement of all the five activities. However, if the victim dies after six months, that attack is not considered to be the cause of death. Therefore it is said to be an involvement of four activities leaving aside the act of killing. This statement is from *vyavahar naya* (empirical or conventional standpoint)

otherwise no matter when the victim dies there is an involvement of all the five activities. *(Vritti, leaves 93-94)*

Five activities—(1) *kaayiki*—physical activity or sinful act performed by body (2) *aadhikaraniki*—activity of collecting instruments of violence, (3) *praadveshiki*—activity of harbouring intense aversion, (4) *paaritapaniki*—activity of inflicting pain on some living being, and (5) *pranatipatiki*—activity of killing the chosen living being.

दो योद्धाओं में जय-पराजय का कारण **CAUSE OF VICTORY AND DEFEAT**

९. [प्र.] दो भंते ! पुरिसा सरिसया सरित्तया सरिव्वया सरिसभंडमत्तोवगरणा अन्नमन्नेणं सद्धिं संगामं संगामेंति, तत्थ णं एगे पुरिसे पराइणइ एगे पुरिसे पराइज्जइ, से कहमेयं भंते ! एवं ?

[उ.] गोयमा ! सवीरिए पराइणइ, अवीरिए पराइज्जति।

[प्र.] से केणट्ठेणं जाव पराइज्जति ?

[उ.] गोयमा ! जस्स णं वीरियवज्झाइं कम्माइं नो बद्धाइं नो पुट्ठाइं जाव नो अभिसमन्नागताइं, नो उदिण्णाइं, उवसंताइं भवंति से णं पुरिसे परायिणति; जस्स णं वीरियवज्झाइं कम्माइं बद्धाइं जाव उदिण्णाइं, कम्माइं नो उवसंताइं भवंति से णं पुरिसे परायिज्जति। से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ सवीरिए पराजिणइ, अवीरिए पराइज्जति !

९. [प्र.] भगवन् ! एक सरीखे, एक सरीखी चमडी वाले, समान वयस्क, समान द्रव्य और उपकरण (शस्त्रादि साधन) वाले कोई दो पुरुष परस्पर एक-दूसरे के साथ सग्राम करे, तो उनमे से एक पुरुष जीतता है और एक पुरुष हारता है; भगवन् ! ऐसा क्यो होता है ?

[उ.] हे गौतम ! जो पुरुष सवीर्य (वीर्यवान् = आत्म-शक्तिसम्पन्न, मनोबली) होता है, वह जीतता है और जो वीर्यहीन (सकल्प व साहसहीन) होता है, वह हारता है।

[प्र.] भगवन् ! इसका क्या कारण है यावत्-वीर्यहीन हारता है ?

[उ.] गौतम ! जिसने वीर्य-विघातक कर्म नहीं बाँधे है, नही स्पर्श किये है यावत् प्राप्त नहीं किये हैं और उसके वे कर्म उदय में नही आये हैं परन्तु उपशान्त है, वह पुरुष जीतता है। जिसने वीर्य विघातक कर्म बाँधे है, स्पर्श किये हैं, यावत् उसके वे कर्म उदय मे आये है, परन्तु उपशान्त नहीं है, वह पुरुष पराजित होता है। अतएव हे गौतम ! इस कारण ऐसा कहा जाता है कि सवीर्य पुरुष विजयी होता है और वीर्यहीन पुरुष पराजित होता है।

9. [Q.] *Bhante* ! When two individuals, wholly alike with similar skin, same age and equipped with similar things and devices (weapons), fight each other, one of them wins and the other loses. *Bhante* ! Why does it happen like that ?

[Ans.] Gautam ! One who is *savirya* (with potency, resolve and valour) wins and one who is *viryaheen* (without potency, resolve and valour) loses.

[Q.] *Bhante* ! What is the reason for this... and so on up to... *viryaheen* loses.

[Ans.] Gautam ! A person who has not bound (*baddha*), touched (*sprishtra*), ... and so on up to.. is not about to fructify (*abhisamanvagat*) the potency impeding *karmas* (*virya-vighatak karma*) and his said *karmas* have not fructified (*udirna*) but are in the subdued (*upashant*) state, such person wins. A person who has bound (*baddha*), touched (*sprishtra*), ... and so on up to. . is about to fructify (*abhisamanvagat*) the potency impeding *karmas* (*virya-vighatak karma*) and his said *karmas* have fructified (*udirna*) and are not in the pacified (*upashant*) state, such person loses. That is why, Gautam ! It is said that one who is *savirya* (with potency, resolve and valour) wins and one who is *viryaheen* (without potency, resolve and valour) loses

सवीर्यत्व–अवीर्यत्व की प्ररूपणा **ABOUT POTENCY**

१०. [प्र.] जीवा णं भंते ! किं सवीरिया ? अवीरिया ?

[उ.] गोयमा ! सवीरिया वि, अवीरिया वि।

[प्र.] से केणट्ठेणं ?

[उ.] गोयमा ! जीवा दुविहा पण्णत्ता; तं जहा–संसारसमावन्नगा या, असंसारसमावन्नगा य। तत्थ णं जे ते असंसारसमावन्नगा ते णं सिद्धा, सिद्धा णं अवीरिया। तत्थ णं जे ते संसारसमावन्नगा ते दुविहा पन्नत्ता; तं जहा–सेलेसिपडिवन्नगा य, असेलेसिपडिवन्नगा य। तत्थ णं जे ते सेलेसिपडिवन्नगा ते णं लद्धिवीरिएणं सवीरिया, करणवीरिएणं अवीरिया। तत्थ णं जे ते असेलेसिपडिवन्नगा ते णं लद्धिवीरिएणं सवीरिया, करणवीरिएणं सवीरिया वि अवीरिया वि। से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चति जीवा दुविहा पण्णत्ता; तं जहा–सवीरिया वि अवीरिया वि।

१०. [प्र.] भगवन् ! क्या जीव सवीर्य है अथवा अवीर्य हैं ?

[उ.] गौतम ! जीव सवीर्य भी हैं, अवीर्य भी है।

[प्र.] भगवन् ! किस कारण से आप ऐसा कहते हैं ?

[उ.] गौतम ! जीव दो प्रकार के है–संसारसमापन्नक (संसारी) और असंसारसमापन्नक (सिद्ध)। इनमे जो जीव असंसारसमापन्नक है, वे सिद्ध जीव हैं, वे अवीर्य (करणवीर्य से रहित) है। इनमे जो जीव संसारसमापन्नक है, वे दो प्रकार के है, यथा–शैलेशीप्रतिपन्न और अशैलेशीप्रतिपन्न। इनमें जो शैलेशीप्रतिपन्न है, वे लब्धिवीर्य की अपेक्षा सवीर्य है और करणवीर्य की अपेक्षा अवीर्य हैं। जो

अशैलेशीप्रतिपन्न हैं वे लब्धिवीर्य की अपेक्षा सवीर्य है, किन्तु करणवीर्य की अपेक्षा सवीर्य भी हैं और अवीर्य भी हैं।

10. [Q.] *Bhante* ! Are souls (*jiva*) with potency (*savirya*) or without potency (*avirya*) ?

[Ans.] Gautam ! Souls (*jiva*) are with potency (*savirya*) as well as without potency (*avirya*).

[Q.] *Bhante* ! Why do you say that ?

[Ans.] Gautam ! Souls (*jiva*) are of two kinds—*Samsar-samapannak* (worldly souls) and *Asamsar-samapannak* (non-worldly souls) Of these the non-worldly souls are *Siddhas* (liberated souls) and the *Siddhas* are *avirya* (without active potency). The worldly souls are of two kinds—*Shaileshipratipanna* (who has attained rock-like steady state) and *Ashaileshipratipanna* (who has not attained rock-like steady state) Of these the *Shaileshipratipanna* ones are *savirya* in terms of *labdhivirya* (dormant potency or intent) and *avirya* in terms of *karan-virya* (active potency or indulgence) And the *Ashaileshipratipanna* ones are *savirya* in terms of *labdhivirya* (dormant potency) and *savirya* as well as *avirya* in terms of *karan-virya* (active potency)

११. [प्र. १] नेरइया णं भंते ! किं सवीरिया ? अवीरिया ?

[उ.] गोयमा ! नेरइया लद्धिवीरिएणं सवीरिया, करणवीरिएणं सवीरिया वि अवीरिया वि।

[प्र.] से केणट्ठेणं ?

[उ.] गोयमा ! जेसि णं नेरइयाणं अत्थि उट्ठाणे कम्मे बले वीरिए पुरिसक्कारपरक्कमे ते णं नेरइया लद्धिवीरिएण वि सवीरिया, करणवीरिएण वि सवीरिया, जेसि णं नेरइयाणं नत्थि उट्ठाणे जाव परक्कमे ते णं नेरइया लद्धिवीरिएणं सवीरिया, करणवीरिएणं अवीरिया। से तेणट्ठेणं।

[२] जहा नेरइया एवं जाव पंचिंदियतिरिक्खजोणिया।

[३] मणुस्सा जहा ओहिया जीवा। नवरं सिद्धवज्जा भाणियव्वा।

[४] वाणमन्तर–जोइस–वेमाणिया जहा नेरिया। सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति.।

॥ पढमे सए : अट्ठमो उद्देसो समत्तो ॥

११. [प्र. १] भगवन् ! क्या नारक जीव सवीर्य है या अवीर्य ?

[उ.] गौतम ! नारक जीव लब्धिवीर्य (आत्म–शक्ति की उपलब्धि) की अपेक्षा सवीर्य है और करणवीर्य (प्रवृत्ति) की अपेक्षा सवीर्य भी है और अवीर्य भी है।

[प्र.] भगवन् ! इसका क्या कारण है ?

[उ.] गौतम ! जिन नैरयिको में उत्थान, कर्म, बल, वीर्य और पुरुषकार पराक्रम है, वे नारक लब्धिवीर्य और करणवीर्य, दोनो से सवीर्य है, और जो नारक उत्थान, कर्म, बल, वीर्य, पुरुषकार पराक्रम से रहित हैं, वे लब्धिवीर्य से सवीर्य है, किन्तु करणवीर्य से अवीर्य है। इसलिए हे गौतम ! इस कारण से पूर्वोक्त कथन किया गया है।

[२] जिस प्रकार नैरयिको के विषय मे कथन किया है, उसी प्रकार पंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिक तक के जीवो के लिए समझना चाहिए।

[३] मनुष्य के विषय मे सामान्य जीवों के समान समझना चाहिए, विशेषता यह है कि सिद्धों को छोड़ देना चाहिए।

[४] वाणव्यन्तर, ज्योतिष्क और वैमानिक देवो के विषय में नैरयिको के समान कथन समझना चाहिए। हे भगवन् ! 'यह इसी प्रकार है, यह इसी प्रकार है', यों कहकर श्री गौतम स्वामी सयम और तप से आत्मा को भावित करते हुए विचरने लगे।

11. [Q. 1] *Bhante* ! Are infernal beings (*naarak jiva*) with potency (*savirya*) or without potency (*avirya*) ?

[Ans.] Gautam ! Infernal beings are *savirya* in terms of *labdhivirya* (dormant potency) and *savirya* as well as *avirya* in terms of *karan-virya* (active potency)

[Q.] *Bhante* ! Why do you say that ?

[Ans.] Gautam ! The infernal beings endowed with inclination to rise (*utthaan*), action (*karma*), strength (*bal*), potency (*virya*), and self-exertion (*purushakar-parakram*) are *savirya* both in terms of *labdhivirya* (dormant potency) as well as *karan-virya* (active potency). And the infernal beings devoid of inclination to rise (*utthaan*), action (*karma*), strength (*bal*), potency (*virya*), and self-exertion (*purushakar-parakram*) are *savirya* in terms of *labdhivirya* (dormant potency) and *avirya* in terms of *karan-virya* (active potency). That is the cause of the aforesaid statement, Gautam !

[2] As has been said about infernal beings so should also be read for beings up to five-sensed animals.

[3] As has been said about living beings in general so should also be read for human beings, the only difference is that *Siddhas* should be omitted.

[4] As has been said about infernal beings so should also be read for Vanavyantar, Jyotishk and Vaimanik gods.

"*Bhante* ! Indeed that is so. Indeed that is so." With these words.. and so on up to... ascetic Gautam resumed his activities.

विवेचन : अन्तराय कर्म के क्षय व क्षयोपशम तथा शरीर नाम कर्म के उदय से 'वीर्य' (शक्ति) उत्पन्न होता है। अनन्तवीर्य सिद्ध अवीर्य कैसे ? सिद्धों में सकरणवीर्य क्रियात्मकता के अभाव की अपेक्षा से उन्हे अवीर्य कहा है, क्योंकि सिद्ध कृतकृत्य है, उन्हे किसी प्रकार का पुरुषार्थ करना शेष नहीं है। अकरणवीर्य (लब्धिवीर्य) की अपेक्षा से सिद्ध सवीर्य (अनन्तवीर्य) है ही। शैलेशी का अर्थ है-सर्वसंवररूपचारित्र मे समर्थ (प्रभु)। उसकी यह अवस्था, अथवा शैलेश-मेरु पर्वत, उसकी तरह निष्कम्प-स्थिर अवस्था।

॥ प्रथम शतक : अष्टम उद्देशक समाप्त ॥

Elaboration—Potency (*virya*) manifests as a consequence of destruction (*kshaya*) and destruction-cum-pacification (*kshayopasham*) of *antaraya karma* (power hindering *karma*) and fruition of *sharira naam karma* (body-type determining *karma*). Why *Siddhas* having infinite potency (*anant-virya*) are said to be without potency (*avirya*) ? In context of absence of any activity or active potency (*sakaran virya*) *Siddhas* have been called without potency. As *Siddhas* are perfect souls who have attained liberation they are beyond any need of endeavour. In context of dormant potency (*akaran virya*) *Siddhas*, indeed, have potency (*savirya*) and they are endowed with infinite potency (*anant virya*). *Shaileshi* means the state in which there is absolute blockage of inflow of *karmas* (*sarva samvar*) or the conduct of a completely detached individual (*vitaraga*). *Shailesh* also means Meru mountain, state of absolute stillness or complete absence of wavering is called *shaileshi avastha*

● END OF THE EIGHTH LESSON OF THE FIRST SHATAK ●

प्रथम शतक : नवम उद्देशक
FIRST SHATAK (Chapter One) : NINTH LESSON

गुरुक GURUK (HEAVY)

जीवों के गुरुत्व–लघुत्वादि की प्ररूपणा **HEAVINESS AND LIGHTNESS OF SOULS**

१. [प्र.] कहं णं भंते ! जीवा गरुयत्तं हव्वमागच्छंति ?

[उ.] गोयमा ! पाणातिवातेणं मुसावादेणं अदिण्णा० मेहुण० परिग्ग० कोह० माण० माया० लोभ० पेज्ज० दोस० कलह० अब्भक्खाण० पेसुन्न० रति–अरति० परपरिवाय० मायामोस० मिच्छादंसणसल्लेणं, एवं खलु गोयमा ! जीवा गरुयत्तं हव्वमागच्छंति।

१. [प्र.] भगवन् ! जीव किस प्रकार शीघ्र गुरुत्व को प्राप्त होते हैं ?

[उ.] गौतम ! प्राणातिपात से, मृषावाद से, अदत्तादान से, मैथुन से, परिग्रह, क्रोध, मान, माया, लोभ, प्रेय (राग), द्वेष, कलह, अभ्याख्यान, पैशुन्य, रति–अरति, परपरिवाद (परनिन्दा), मायामृषा और मिथ्यादर्शनशल्य से, हे गौतम ! (इन अठारह ही पापस्थानो का सेवन करने से) जीव शीघ्र गुरुत्व को प्राप्त होते हैं।

1. [Q.] *Bhante* ! How do souls soon attain heaviness ?

[Ans.] Gautam ! Through *pranatipat* (harming or destruction of life), through *mrishavad* (falsity), through *adattadan* (taking without being given; act of stealing), through *maithun* (indulgence in sexual activities), through *parigraha* (act of possession of things with attachment), through *krodh* (anger), through *maan* (conceit), through *maaya* (deceit), through *lobha* (greed), through *raag* (attachment inspired by love, deceit and greed), through *dvesh* (aversion inspired by suppressed anger and conceit), through *kalah* (dispute), through *abhyakhyan* (blaming falsely), through *paishunya* (inculpating someone), through *paraparivad* (slandering), through *rati-arati* (inclination towards indiscipline and against discipline), through *maayamrisha* (betraying or telling a lie deceptively) and *mithyadarshan shalya* (the thorn of wrong belief or unrighteousness) Gautam ! Thus (by indulging in these eighteen causes of sin) souls soon attain heaviness.

२. [प्र.] कहं णं भंते ! जीवा लहुयत्तं हव्वमागच्छंति ?

[उ.] गोयमा ! पाणातिवातवेरमणेणं जाव मिच्छादंसणसल्लवेरमणेणं, एवं खलु गोयमा ! जीवा लहुयत्तं हव्वमागच्छंति।

२. [प्र.] भगवन् ! जीव किस प्रकार शीघ्र लघुत्व को प्राप्त करते हैं ?

[उ.] गौतम ! प्राणातिपात से विरत होने से यावत् मिथ्यादर्शनशल्य से विरत होने से जीव शीघ्र लघुत्व को प्राप्त होते है।

2. [Q.] *Bhante* ! How do souls soon attain lightness ?

[Ans.] Gautam ! Through abstaining from *pranatipat* (harming or destruction of life), ... and so on up to... *mithyadarshan shalya* (the thorn of wrong belief or unrighteousness). Gautam ! Thus (by abstaining from indulgence in these eighteen causes of sin) souls soon attain lightness.

३. एवं आउलीकरेंति, एवं परित्तीकरेंति। एवं दीहीकरेंति, एवं हस्सीकरेंति, एवं अणुपरियट्टंति, एवं वीतीवयंति। पसत्था चत्तारि। अप्पसत्था चत्तारि।

३. इसी प्रकार जीव प्राणातिपात आदि पापो का सेवन करने से ससार को आकुल करते है–भव भ्रमण करते हैं, दीर्घकालीन करते है, और बार-बार भव-भ्रमण करते है, तथा प्राणातिपात आदि पापो से निवृत्त होने से जीव ससार को परिमित करते है, ह्रस्व-अल्पकालीन (छोटा) करते हैं, और संसार को लाँघ जाते हैं। उनमें से चार (लघुत्व, संसार का परित्तीकरण, ह्रस्वीकरण एव व्यतिक्रमण) प्रशस्त है, और चार (गुरुत्व, संसार का वृद्धीकरण, दीर्घीकरण एवं पुनः-पुनः भव-भ्रमण) अप्रशस्त हैं।

3. Also (through indulgence in sins like killing) souls expand, lengthen and continue to repeat the cycles of rebirth. And (through abstaining from indulgence in sins like killing) souls limit, shorten and terminate the cycles of rebirth. Of the aforesaid, four (lightness, limitation, shortening and termination) are noble and four (heaviness, expansion, lengthening and continuation) are ignoble.

पदार्थों के गुरुत्व-लघुत्व आदि की प्ररूपणा HEAVINESS AND LIGHTNESS OF SUBSTANCES

४. [प्र.] **सत्तमे णं भंते ! ओवासंतरे किं गरुए, लहुए, गरुयलहुए, अगरुयलहुए ?**

[उ.] **गोयमा ! नो गरुए, नो लहुए, नो गरुयलहुए, अगरुयलहुए।**

४. [प्र.] भगवन् ! क्या सातवाँ अवकाशान्तर गुरु है, वह लघु है, या गुरु-लघु है, अथवा अगुरु-लघु है ?

[उ.] गौतम ! वह गुरु नही है, लघु नही, गुरु-लघु नही है, किन्तु अगुरु-लघु है।

4. [Q.] *Bhante* ! Is the seventh intervening space (*avakashantar*) heavy (*guru*), light (*laghu*), *guru-laghu* (heavy-light) or *aguru-laghu* (neither heavy nor light) ?

[Ans.] Gautam ! It is neither heavy (*guru*), nor light (*laghu*), nor *guru-laghu* (heavy-light) but *aguru-laghu* (neither heavy nor light).

५. [प्र. १] सत्तमे णं भंते ! तणुवाते किं गरुए, लहुए गरुयलहुए, अगरुयलहुए ?

[उ.] गोयमा ! नो गरुए, नो लहुए, गरुयलहुए, नो अगरुयलहुए। [२] एवं सत्तमे घणवाए, सत्तमे घणोदही, सत्तमा पुढवी। [३] ओवासंतराइं सव्वाइं जहा सत्तमे ओवासंतरे (सु. ४)। [४] [सेसा] जहा तणुवाए। एवं–ओवास वाय घणउदहि पुढवी दीवा य सागरा वासा।

५. [प्र. १] भगवन् ! सप्तम तनुवात क्या गुरु है, लघु है या गुरु–लघु है अथवा अगुरु–लघु है ?

[उ.] गौतम ! वह गुरु नही है, लघु नही है, किन्तु गुरु–लघु है, अगुरु–लघु नहीं है। [२] इसी प्रकार सप्तम घनवात, सप्तम घनोदधि और सप्तम पृथ्वी के विषय में भी जानना चाहिए। [३] जैसा सातवे अवकाशान्तर के विषय में कहा है, वैसा ही सभी अवकाशान्तरो के विषय मे समझना चाहिए। [४] तनुवात के विषय मे जैसा कहा है, वैसा ही सभी घनवात, घनोदधि, पृथ्वी, द्वीप, समुद्र और क्षेत्रों के विषय मे भी जानना चाहिए।

5. [Q. 1] *Bhante* ! Is the seventh ring of rarefied air (*tanuvaat*) heavy (*guru*), light (*laghu*), *guru-laghu* (heavy-light) or *aguru-laghu* (non-heavy-non-light) ?

[Ans.] Gautam ! It is neither heavy (*guru*), nor light (*laghu*), but *guru-laghu* (heavy-light) and not *aguru-laghu* (non-heavy-light). **[2]** The same is true for the seventh ring of dense air (*ghanavaat*), the seventh ring of frozen water (*ghanodadhi*) and the seventh hell (*prithvi*). **[3]** As has been said about seventh intervening space should also be read for all the intervening spaces. **[4]** As has been said about ring of rarefied air should also be read for all the rings of dense air, frozen water, hells continents (*dveep*), seas (*samudra*), and sub-continental areas (*kshetra*).

६. [प्र. १] नेरइया णं भंते ! किं गरुया जाव अगरुयलहुया ?

[उ.] गोयमा ! नो गरुया, नो लहुया, गरुयलहुया वि, अगरुयलहुया वि।

६. [प्र. १] भगवन् ! नारक जीव गुरु हैं, लघु है, गुरु–लघु है या अगुरु–लघु है ?

[उ.] गौतम ! नारक जीव गुरु नही है, लघु नही, किन्तु गुरु–लघु हैं और अगुरु–लघु भी है।

6. [Q. 1] *Bhante* ! Are the infernal beings (*naarak jivas*) heavy (*guru*), light (*laghu*), *guru-laghu* (heavy-light) or *aguru-laghu* (non-heavy-non-light) ?

[Ans.] Gautam ! They are neither heavy (*guru*), nor light (*laghu*), but *guru-laghu* (heavy-light) as well as *aguru-laghu* (non-heavy-light).

[प्र. २] से केणट्ठेणं ?

[उ.] गोयमा ! वेउव्विय-तेयाइं पडुच्च नो गरुया, नो लहुया, गरुयलहुया, नो अगरुयलहुया, जीवं च कम्मणं च पडुच्च नो गरुया, नो लहुया, नो गरुयलहुया, अगरुयलहुया। से तेणट्ठेणं.। [३] एवं जाव वेमाणिया। नवरं णाणत्तं जाणियव्वं सरीरेहिं।

[प्र. २] भगवन् ! किस कारण से ऐसा कहा जाता है ?

[उ.] गौतम ! वैक्रिय और तैजसशरीर की अपेक्षा नारक जीव गुरु नही है, लघु नहीं हैं, अगुरु-लघु भी नही है, किन्तु गुरु-लघु है। किन्तु जीव और कार्मणशरीर की अपेक्षा नारक जीव गुरु नही है, लघु भी नही है, गुरु-लघु भी नही है, किन्तु अगुरु-लघु है। इस कारण हे गौतम ! पूर्वोक्त कथन किया गया है। [३] इसी प्रकार वैमानिकों (अन्तिम दण्डक) तक जानना चाहिए, किन्तु विशेष यह है कि शरीरो में भिन्नता कहना चाहिए।

[Q. 2] *Bhante* ! Why is it so ?

[Ans.] Gautam ! In context of *vaikriya* and *taijas sharira* (transmutable and fiery bodies) infernal beings are neither heavy (*guru*), nor light (*laghu*), but *guru-laghu* (heavy-light) and not *aguru-laghu* (non-heavy-light) But in context of soul (*jiva*) and *karmic* body (*karman sharira*) infernal beings are neither heavy (*guru*), nor light (*laghu*), nor *guru-laghu* (heavy-light) but *aguru-laghu* (non-heavy-light) Hence is the aforesaid statement. [3] Same is true for all beings up to Vaimaniks (the last *dandak*) The only variation is that the bodies are different and should be stated so

७. धम्मत्थिकाए जाव जीवत्थिकाए चउत्थपदेणं।

७. धर्मास्तिकाय से लेकर यावत् (अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय और) जीवास्तिकाय तक चौथे पद से (अगुरु-लघु) जानना चाहिए।

7. *Dharmastikaya* (motion entity).. and so on up to.. (*adharmastikaya* or rest entity, *akashastikaya* or space entity) *jivastikaya* (soul entity) conform to the fourth term (*aguru-laghu*)

८. [प्र. १] पोग्गलत्थिकाए णं भंते ! किं गरुए, लहुए, गरुयलहुए, अगरुयलहुए ?

[उ.] गोयमा ! णो गरुए, नो लहुए, गरुयलहुए वि, अगरुयलहुए वि।

[प्र. २] से केणट्ठेणं ?

[उ.] गोयमा ! गरुयलहुयदव्वाइं पडुच्च नो गरुए, नो लहुए, गरुयलहुए, नो अगरुयलहुए। अगरुयलहुयदव्वाइं पडुच्च नो गरुए, नो लहुए, नो गरुयलहुए, अगरुयलहुए।

८. [प्र. १] भगवन् ! पुद्गलास्तिकाय क्या गुरु है, लघु है, गुरु-लघु है अथवा अगुरु-लघु है ?

[उ.] गौतम ! पुद्गलास्तिकाय न गुरु है, न लघु है, किन्तु गुरु-लघु है और अगुरु-लघु भी है।

[प्र. २] भगवन् ! इसका क्या कारण है ?

[उ.] गौतम ! गुरु-लघु द्रव्यो की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय गुरु नही है, लघु नहीं है, किन्तु गुरु-लघु है, अगुरु-लघु नहीं है। अगुरु-लघु द्रव्यों की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय गुरु नही है, लघु नही है, न गुरु-लघु है, किन्तु अगुरु-लघु है।

8. [Q. 1] *Bhante* ! Is *pudgalastikaya* (matter entity) heavy (*guru*), light (*laghu*), *guru-laghu* (heavy-light) or *aguru-laghu* (non-heavy-non-light) ?

[Ans.] Gautam ! *Pudgalastikaya* is neither heavy (*guru*), nor light (*laghu*), but *guru-laghu* (heavy-light) as well as *aguru-laghu* (non-heavy-light)

[Q. 2] *Bhante* ! Why is it so ?

[Ans.] Gautam ! In context of heavy-light substances *pudgalastikaya* is neither heavy (*guru*), nor light (*laghu*), but *guru-laghu* (heavy-light) and not *aguru-laghu* (non-heavy-light). But in context of non-heavy-non-light substances *pudgalastikaya* is neither heavy (*guru*), nor light (*laghu*), nor *guru-laghu* (heavy-light) but *aguru-laghu* (non-heavy-light).

९. समया कम्माणि य चउत्थपदेणं।

९. समयो और कर्मों (कार्मणशरीर) को चौथे पद से जानना चाहिए अर्थात्-समय और कार्मणशरीर अगुरु-लघु है।

9. *Samayas* (ultimate fractions of time) and *karmas* (*karmic* bodies) conform to the fourth term (*i.e.* they are *aguru-laghu*)

१०. [प्र. १] कण्हलेसा णं भंते ! किं गरुया, जाव अगरुयलहुया ?

[उ.] गोयमा ! नो गरुया, नो लहुया, गरुयलहुया वि, अगरुयलहुया वि।

१०. [प्र. १] भगवन् ! कृष्णलेश्या क्या गुरु है, लघु है ? या गुरु-लघु है अथवा अगुरु-लघु है ?

[उ.] गौतम ! कृष्णलेश्या गुरु नही है, लघु नहीं है, किन्तु गुरु-लघु है और अगुरु-लघु भी है।

10. [Q. 1] *Bhante* ! Is *Krishna leshya* (black complexion of soul) heavy (*guru*), light (*laghu*), *guru-laghu* (heavy-light) or *aguru-laghu* (non-heavy-non-light) ?

[Ans.] Gautam ! *Krishna leshya* is neither heavy (*guru*), nor light (*laghu*), but *guru-laghu* (heavy-light) as well as *aguru-laghu* (non-heavy-light)

[प्र. २] से केणट्ठेणं ?

[उ.] गोयमा ! दव्वलेसं पडुच्च ततियपदेणं, भावलेसं पडुच्च चउत्थपदेणं। [३] एवं जाव सुक्कलेसा।

[प्र. २] भगवन् ! ऐसा कहने का क्या कारण है ?

[उ.] गौतम ! द्रव्यलेश्या की अपेक्षा तृतीय पद से (अर्थात्-गुरु-लघु) जानना चाहिए, और भावलेश्या की अपेक्षा चौथे पद से (अर्थात् अगुरु-लघु) जानना चाहिए। [३] इसी प्रकार शुक्ललेश्या तक जानना चाहिए।

[Q. 2] *Bhante* ! Why is it so ?

[Ans.] Gautam ! In context of *dravya leshya* (physical complexion) it conforms to the third term (*guru-laghu*), but in context of *bhaava leshya* (mental complexion) it conforms to the fourth term (*aguru-laghu*). [3] Same is true (for all *leshyas*) up to *shukla leshya* (white complexion)

११. दिट्ठी-दंसण-नाण-अण्णाण-सण्णाओ चउत्थपदेणं णेतव्वाओ।

११. दृष्टि, दर्शन, ज्ञान, अज्ञान और सञ्ज्ञा को भी चतुर्थ पद से (अगुरु-लघु) जानना चाहिए।

11. *Drishti* (outlook), *darshan* (perception/faith), *jnana* (knowledge), *ajnana* (ignorance) and *sanjna* (sentience) conform to the fourth term (*i.e.* they are *aguru-laghu*).

१२. हेट्ठिल्ला चत्तारि सरीरा नेयव्वा ततियएणं पदेणं। कम्मयं चउत्थएणं पदेणं।

१२. आदि के चारो शरीरों-औदारिक, वैक्रिय, आहारक और तैजस्शरीर-को तृतीय पद से (गुरु-लघु) जानना चाहिए, तथा कार्मणशरीर को चतुर्थ पद से (अगुरु-लघु) जानना चाहिए।

12. The first four types of *shariras* (bodies), *audarik* (gross physical), *vaikriya* (transmutable), *aahaarak* (telemigratory) and *taijas* (fiery) conform to the third term (*i.e.* they are *guru-laghu*) and the *karmic* body conforms to the fourth term (*i.e.* it is *aguru-laghu*)

१३. मणजोगो वइजोगो चउत्थएणं पदेणं। कायजोगो ततिएणं पदेणं।

१३. मनोयोग और वचनयोग को चतुर्थ पद से (अगुरु-लघु) और काययोग को तृतीय पद से (गुरु-लघु) जानना चाहिए।

13. *Manoyoga* (mind association) and *vachan yoga* (speech association) conform to the fourth term (*i.e.* they are *aguru-laghu*) and *kaya yoga* (body association) conforms to the third term (*i.e.* it is *guru-laghu*)

१४. सागारोवओगो अणागारोवओगो चउत्थएणं पदेणं।

१४. साकारोपयोग और अनाकारोपयोग को चतुर्थ पद से जानना चाहिए।

14. *Saakaaropayoga* (elaborate cognition) and *anaakaaropayog* (cursory cognition) conform to the fourth term (*i.e.* they are *aguru-laghu*).

१५. सव्वदव्वा सव्वपदेसा सव्वपज्जवा जहा पोग्गलत्थिकाओ (सु. ८)।

१५. सर्वद्रव्य, सर्वप्रदेश और सर्वपर्याय पुद्गलास्तिकाय के समान समझना चाहिए।

15. As has been said about *pudgalastikaya* (matter entity) so should also be read for *sarva dravya* (all substances), *sarva pradesh* (all sections) and *sarva paryaya* (all modes).

१६. तीयद्धा अणागतद्धा सव्वद्धा चउत्थेणं पदेणं।

१६. अतीतकाल, अनागत (भविष्य) काल और सर्वकाल चौथे पद से अर्थात् अगुरु-लघु जानना चाहिए।

16. *Ateet kaal* (past), *anagat kaal* (future) and *sarva kaal* (all time) conform to the fourth term (*i.e* they are *aguru-laghu*).

विवेचन : गुरु-लघु आदि की व्याख्या-गुरु का अर्थ है-भारी। भारी वस्तु होती है, जो पानी पर रखने से डूब जाती है, जैसे-पत्थर आदि। लघु का अर्थ है-हल्की। हल्की वह वस्तु है, जो पानी पर रखने से नहीं डूबती बल्कि ऊर्ध्वगामी हो, जैसे-लकडी आदि। तिरछी जाने वाली वस्तु गुरु-लघु है, जैसे-वायु। सभी अरूपी द्रव्य अगुरु-लघु है, जैसे-आकाश आदि, तथा कार्मणपुद्गल आदि। कोई-कोई रूपी पुद्गल चतु.स्पर्शी (चौफरसी) पुद्गल भी अगुरु-लघु होते है। अष्टस्पर्शी (अठफरसी) पुद्गल गुरु-लघु होते है। यह सब व्यवहारनय की अपेक्षा से है। निश्चयनय की अपेक्षा से कोई भी द्रव्य एकान्त-गुरु या एकान्त-लघु नहीं है।

अवकाशान्तर-चौदह राजू परिमाण पुरुषाकार लोक में नीचे की ओर ७ पृथ्वियाँ (नरक) हैं। प्रथम पृथ्वी के नीचे घनोदधि, उसके नीचे घनवात, उसके नीचे तनुवात है और तनुवात के नीचे आकाश है। इसी क्रम से सातों नरकपृथ्वियो के नीचे ७ आकाश है, इन्हे ही अवकाशान्तर कहते हैं। ये अवकाशान्तर आकाशरूप होने से अगुरु-लघु है। *(वृत्ति, पत्राक १६-१७)*

Elaboration—*Guru* means heavy or with downward movement. A heavy thing is that which sinks in water, such as stone. *Laghu* means light or with upward movement A light thing is that which does not sink in but floats on water, such as wood. A thing having transverse movement is called *guru-laghu*, such as air. All formless things are *aguru-laghu*, such as space. *Karma* particles are also *aguru-laghu*. Some matter particles having form, those with four attributes of touch, are also *aguru-laghu* Matter particles with eight attributes of touch are *guru-laghu*. All these qualities are from the phenomenal or empirical viewpoint (*Vyavahara naya*). From noumenal or transcendental viewpoint (*Nischaya naya*) no substance is singularly heavy or singularly light.

Avakashantar—In the lower section of the *Lok* (occupied space) resembling human form and having an expanse of 14 *Rajju* (a conceptual linear measure) there are seven *prithvis* (hells), one below the other. Below the first hell there is *ghanodadhi* (dense water) followed by *ghanavaat* (dense air), then *tanuvaat* (rarefied air) and lastly space. In this order there are seven sections of space under the seven hells. These layers of empty space are called *avakashantar* or intervening space. As it is nothing but space it is *aguru-laghu*. *(Vritti, leaves 96-97)*

श्रमणनिर्ग्रन्थों के लिए प्रशस्त **NOBLE QUALITIES OF ASCETICS**

१७. [प्र.] से नूणं भंते ! लाघवियं अप्पिच्छा अमुच्छा अगेही अपडिबद्धता समणाणं णिग्गंथाणं पसत्थं ?

[उ.] हंता, गोयमा ! लाघवियं जाव पसत्थं।

१७. [प्र.] भगवन् ! क्या लाघव, अल्प इच्छा, अमूर्च्छा, अनासक्ति (अगृद्धि) और अप्रतिबद्धता, ये श्रमणनिर्ग्रन्थो के लिए प्रशस्त है।

[उ.] हाँ, गौतम ! लाघव यावत् अप्रतिबद्धता प्रशस्त है।

17. [Q.] *Bhante* ! Are the qualities of *laaghav* (lightness in terms of possessions and passions), *alp-ichchha* (limited desires), *amurchchha* (absence of obsession), *agriddhi* (absence of covetousness) and *apratibaddhata* (seclusion or detachment) noble for *Shraman Nirgranthas* (Jain ascetics) ?

[Ans.] Yes, Gautam ! The qualities of *laaghav* (lightness in terms of possessions and passions), and so on up to *apratibaddhata* (seclusion or detachment) are noble.

१८. [प्र.] से नूणं भंते ! अकोहत्तं अमाणत्तं अमायत्तं अलोभत्तं समणाणं निग्गंथाणं पसत्थं ?

[उ.] हंता, गोयमा ! अकोहत्तं जाव पसत्थं।

१८. [प्र.] भगवन् ! क्रोधरहितता, मानरहितता, मायारहितता और अलोभत्व, क्या ये श्रमणनिर्ग्रन्थों के लिए प्रशस्त है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! क्रोधरहितता यावत् अलोभत्व, ये सब श्रमणनिर्ग्रन्थो के लिए प्रशस्त है।

18. [Q.] *Bhante* ! Are the qualities of absence of anger, absence of conceit, absence of deceit and absence of greed noble for *Shraman Nirgranthas* (Jain ascetics) ?

[Ans.] Yes, Gautam ! The qualities of absence of anger, . and so on up to... absence of greed are noble.

१९. [प्र.] से नूणं भंते ! कंखापदोसे खीणे समणे निग्गंथे अंतकरे भवति ? अंतिमसरीरिए वा, बहुमोहे वि य णं पुव्विं विहरित्ता अह पच्छा संवुडे कालं करेति तओ पच्छा सिज्झति बुज्झति, मुच्चति ? जाव अंतं करेइ ?

[उ.] हंता गोयमा ! कंखापदोसे खीणे जाव अंतं करेति।

१९. [प्र.] भगवन् ! क्या कांक्षाप्रदोष क्षीण होने पर श्रमणनिर्ग्रन्थ अन्तकर अथवा अन्तिम (चरम) शरीरी होता है ? अथवा पूर्वावस्था मे बहुत मोह वाला होकर विहरण करे और फिर संवृत (संवरयुक्त) होकर मृत्यु प्राप्त करे, तो क्या तत्पश्चात् वह सिद्ध, बुद्ध, मुक्त होता है, यावत् सब दुःखों का अन्त करता है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! काक्षाप्रदोष नष्ट हो जाने पर यावत् सब दुःखों का अन्त करता है।

19. [Q.] *Bhante* ! On the destruction of dogma of other faith (*kaanksha pradosh*) does an ascetic become capable of terminating the cycles of rebirth during that life time (*antakar*) or does he reincarnate for the last time (*charam-sharın*) ? Also, if he initially moves about with excessive fondness but later blocks the inflow of *karmas* completely and then dies, does he become perfected (*Siddha*), enlightened (*buddha*), liberated (*mukta*), and so on up to . end all miseries ?

[Ans.] Yes, Gautam ! On the destruction of dogma of other faith (*kaanksha pradosh*) an ascetic becomes capable of... and so on up to... end all miseries

विवेचन : लाघव आदि पदों के अर्थ–**लाघव**–शास्त्रमर्यादा से भी अल्प उपधि रखना। **अल्पेच्छा**–आहारादि मे अल्प अभिलाषा रखना। **अमूर्च्छा**–अपने पास रही उपधि मे भी ममत्व (सरक्षणानुबन्ध) न रखना। **अगृद्धि**–आसक्ति का अभाव। अर्थात्–भोजनादि के परिभोगकाल मे अनासक्ति रखना। **अप्रतिबद्धता**–स्वजनादि या द्रव्य-क्षेत्रादि मे स्नेह या राग के बन्ध को काट डालना। **कांक्षाप्रदोष**–अन्य दर्शनो का आग्रह–आसक्ति अथवा राग। इसका दूसरा नाम काक्षाप्रद्वेष भी है। जिसका आशय है–जिस बात को पकड रखा है, उससे विरुद्ध या भिन्न बात पर द्वेष होना। *(वृत्ति, पत्राक ९७)*

Elaboration—*Laaghav*—to have less possessions, even lesser than what is prescribed in scriptures *Alpechchha*—to have minimal desire for food and other things *Amurchchha*—absence of obsession for the limited possessions. *Agriddhi*—absence of covetousness for food and other things specially during consumption and use. *Apratibaddhata*—seclusion or detachment leading to breaking ties with kinfolk, material things and specific areas *Kaanksha pradosh*—dogma of and obsession for other faith It also means *kaanksha pradvesh* or dislike and aversion for anything contrary to one's ideas and beliefs *(Vritti, leaf 97)*

२०. [प्र.] अन्नउत्थिया णं भंते ! एवमाइक्खंति एवं भासेंति एवं पण्णवेंति एवं परूवेंति–"एवं खलु एगे जीवे एगेणं समएणं दो आउयाइं पगरेति, तं जहा–इहभवियाउयं च, परभवियाउयं च। जं समयं इहभवियाउयं पकरेति समयं परभवियाउयं पकरेति, जं समयं परभवियाउयं पकरेति तं समयं इहभवियाउयं पकरेइ; इहभवियाउयस्स पकरणयाए परभवियाउयं पकरेइ, परभवियाउयस्स पगरणताए इहभवियाउयं पकरेति। एवं खलु एगे जीवे एगेणं समएणं दो आउयाइं पकरेति, तं.–इहभवियाउयं च, परभवियाउयं च।" से कहमेतं भंते ! एवं ?

[उ.] गोयमा ! जं णं ते अण्णउत्थिया एवमाइक्खंति जाव परभवियाउयं च। जे ते एवमाहंसु मिच्छं ते एवमाहंसु। अहं पुण गोयमा ! एवमाइक्खामि जाव परूवेमि–एवं खलु एगे जीवे एगेणं समएणं एगं आउयं पकरेति, तं जहा–इहभवियाउयं वा, परभवियाउयं वा; जं समयं इहभवियाउयं पकरेति णो तं समयं परभवियाउयं पकरेति, जं समयं परभवियाउयं पकरेइ णो तं समयं इहभवियाउयं पकरेइ; इहभवियाउयस्स पकरणताए णो परभवियाउयं पकरेति, परभवियाउयस्स पकरणताए णो इहभवियाउयं पकरेति। एवं खलु एगे जीवे एगेणं समएणं एगं आउयं पकरेति, तं.–इहभवियाउयं वा, परभवियाउयं वा।

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति भगवं गोयमे जाव विहरति।

२०. [प्र.] भगवन् ! अन्यतीर्थिक इस प्रकार कहते है, इस प्रकार विशेष रूप से कहते है, इस प्रकार बताते हैं और इस प्रकार की प्ररूपणा करते है कि एक जीव एक समय मे दो आयुष्य बाँधता है, वह इस प्रकार है–इस भव का आयुष्य और परभव का आयुष्य। जिस समय इस भव का आयुष्य बाँधता है, उस समय परभव का आयुष्य बाँधता है और जिस समय परभव का आयुष्य बाँधता है, उस समय इस भव का आयुष्य बाँधता है। इस भव का आयुष्य बाँधने से परभव का आयुष्य बाँधता है और परभव का आयुष्य बाँधने से इस भव का आयुष्य बाँधता है। इस प्रकार एक जीव एक समय मे दो आयुष्य बाँधता है–इस भव का आयुष्य और परभव का आयुष्य। भगवन् ! क्या यह इसी प्रकार है ?

[उ.] गौतम ! अन्यतीर्थिक जो इस प्रकार कहते है, यावत् इस भव का आयुष्य और परभव का आयुष्य (बाँधता है); उन्होने जो ऐसा कहा है, वह मिथ्या कहा है। हे गौतम ! मै इस प्रकार कहता हूँ, यावत् प्ररूपणा करता हूँ कि एक जीव एक समय मे एक आयुष्य बाँधता है और वह या तो इस भव का आयुष्य बाँधता है अथवा परभव का आयुष्य बाँधता है। जिस समय इस भव का आयुष्य बाँधता है, उस समय परभव का आयुष्य नही बाँधता और जिस समय परभव का आयुष्य बाँधता है, उस समय इस भव का आयुष्य नहीं बाँधता। तथा इस भव का आयुष्य बाँधने से परभव का आयुष्य और परभव का आयुष्य बाँधने से इस भव का आयुष्य नही बाँधता। इस प्रकार एक जीव एक समय में एक आयुष्य बाँधता है–इस भव का आयुष्य अथवा परभव का आयुष्य।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है , ऐसा कहकर भगवान गौतम स्वामी यावत् विचरते है।

20. [Q.] *Bhante* ! People of other faiths say, assert, elaborate and propagate that a *jiva* (living being/soul) in one instant acquires two *ayushya* (*karmas* determining life-spans)—the span of this life and the span of the next life While acquiring the *ayushya* for this life he also acquires *ayushya* for next life and while acquiring the *ayushya* for next life he also acquires *ayushya* for this life. By acquiring the *ayushya* for this life he acquires *ayushya* for next life and by acquiring the *ayushya* for next life he acquires *ayushya* for this life. Thus in one instant a *jiva* acquires two *ayushya* (life-span determining *karmas*)—the span of this life and the span of the next life. *Bhante* ! Is it so ?

[Ans.] Gautam ! As regards people of other faiths who say... and so on up to . acquires two *ayushya* (life-span determining *karmas*)—the span of this life and the span of the next life, what they say is false. Gautam ! Here is what I say, assert, elaborate and propagate—that a *jiva* (living being/soul) in one instant acquires just one *ayushya* (*karmas* determining life-span)—either the span of this life or the span of the next life While acquiring the *ayushya* for this life he does not acquire *ayushya* for next life and while acquiring the *ayushya* for next life he does not acquires *ayushya* for this life. By acquiring the *ayushya* for this life he does not acquire *ayushya* for next life and by acquiring the *ayushya* for next life he does not acquire *ayushya* for this life. Thus in one instant a *jiva* acquires just one *ayushya* (life-span determining *karmas*)—either the span of this life or the span of the next life.

"*Bhante* ! Indeed that is so Indeed that is so " With these words... and so on up to ascetic Gautam resumed his activities.

विवेचन : दो आयुष्यबन्ध क्यों नहीं ?—यद्यपि आयुष्यबन्ध के समय जीव इस भव के आयुष्य को वेदता है और परभव के आयुष्य को बाँधता है, किन्तु उत्पन्न होते ही या इसी भव मे एक साथ दो आयुष्यो का बन्ध नहीं करता; अन्यथा, इस भव मे किये जाने वाले दान-धर्म आदि सब व्यर्थ हो जायेगे। *(वृत्ति, पत्रांक ९८-९९)*

Elaboration—Why negation of dual bondage ?—Although at the time of acquiring bondage of life-span determining *karmas* a living being experiences the *karmas* of this life-span and acquires the *karmas* of next life-span; however, on rebirth or after that he does not acquire *karmas* for two life-spans at the same time. This is because if he could do so all pious and religious activities like charity would become worthless. *(Vritti, leaf 98-99)*

२१. [१] तेणं कालेणं तेणं समएणं पासावच्चिज्जे कालासवेसियपुत्ते णामं अणगारे जेणेव थेरा भगवंतो तेणेव उवागच्छति, उवागच्छित्ता थेरे भगवंते एवं वयासी—थेरा सामाइयं न जाणंति, थेरा सामाइयस्स अट्ठं न याणंति, थेरा पच्चक्खाणं न याणंति, थेरा पच्चक्खाणस्स अट्ठं न याणंति, थेरा संजमं न याणंति, थेरा संजमस्स अट्ठं न याणंति, थेरा संवरं न याणंति, थेरा संवरस्स अट्ठं न याणंति, थेरा विवेगं न याणंति, थेरा विवेगस्स अट्ठं न याणंति, थेरा विउस्सग्गं न याणंति, थेरा विउस्सग्गस्स अट्ठं न याणंति।

२१. [१] उस काल, (भगवान पार्श्वनाथ के निर्वाण के लगभग २५० वर्ष पश्चात्) और उस समय (भगवान महावीर के शासनकाल) मे पार्श्वापत्यीय (पार्श्वनाथ की परम्परा के शिष्यानुशिष्य) कालास्यवेषिपुत्र (वैश्यपुत्र कालास) नामक अनगार जहाँ (भगवान महावीर के) स्थविर (श्रुतवृद्ध शिष्य) भगवान विराजमान थे, वहाँ गये। उनके पास आकर स्थविर भगवन्तों से उन्होने इस प्रकार कहा—'हे स्थविरो ! आप सामायिक को नही जानते, सामायिक का अर्थ नही जानते, आप प्रत्याख्यान को नही जानते और प्रत्याख्यान का अर्थ नहीं जानते; आप सयम को नही जानते और संयम का अर्थ नही जानते; आप सवर को नही जानते और संवर का अर्थ नहीं जानते, हे स्थविरो ! आप विवेक को नही जानते और विवेक का अर्थ नहीं जानते है, तथा आप व्युत्सर्ग को नहीं जानते और न व्युत्सर्ग का अर्थ जानते है।'

21. [1] *Bhante* ! During that period (about 250 years after the *nirvana* of Bhagavan Parshva Naath) of time (period of influence of Bhagavan Mahavir) an ascetic from the lineage of Bhagavan Parshva Naath named Kaalasyaveshiputra (Kalas, the son of a merchant) went where *sthavirs* (scholarly ascetics, disciples of Bhagavan Mahavir) were sitting Approaching the *sthavirs* he said—O *Sthavirs* ! You neither know *Samayik* (equanimity) nor its meaning, you neither know *Pratyakhyan* (renunciation) nor its meaning; you neither know *Samyam* (ascetic-discipline) nor its meaning; you neither know *Samvar* (blockage of inflow of *karmas*) nor its meaning; also, O *Sthavirs* ! You neither know *Vivek* (sagacity) nor its meaning; and you neither know *Vyutsarg* (dissociation from the body) nor its meaning

[२] तए णं ते थेरा भगवंतो कालासवेसियपुत्तं एवं वयासी—जाणामो णं अज्जो ! सामाइयं, जाणामो णं अज्जो ! सामाइयस्स अट्ठं जाव जाणामो णं अज्जो ! विउस्सग्गस्स अट्ठं।

[२] तब उन स्थविर भगवन्तो ने कालास्यवेषिपुत्र अनगार से इस प्रकार कहा—'हे आर्य ! हम सामायिक को जानते है, सामायिक का अर्थ भी जानते है, यावत् हम व्युत्सर्ग को जानते है और व्युत्सर्ग का अर्थ भी जानते है।'

[2] At this those *Sthavir Bhagavans* replied to Kaalasyaveshiputra—*O Arya* ! We know *Samayik* (equanimity) as well as its meaning... and so on up to.. we know *Vyutsarg* (dissociation from the body) as well as its meaning.

[प्र. ३] तए णं से कालासवेसियपुत्ते अणगारे ते थेरे भगवंते एवं वयासी–जति णं अज्जो ! तुब्भे जाणह सामाइयं, जाणह सामाइयस्स अट्ठं जाव जाणह विउस्सग्गस्स अट्ठं किं भे अज्जो ! सामाइए ? किं भे अज्जो ! सामाइयस्स अट्ठे ? जाव किं भे विउस्सग्गस्स अट्ठे ?

[उ. ४] तए णं थेरा भगवंतो कालासवेसियपुत्तं अणगारं एवं वयासी–आया णे अज्जो ! सामाइए, आया णे अज्जो ! सामाइयस्स अट्ठे जाव विउस्सग्गस्स अट्ठे।

[प्र. ३] उसके पश्चात् कालास्यवेषिपुत्र अनगार ने उन स्थविर भगवन्तो से इस प्रकार कहा–हे आर्य ! यदि आप सामायिक को (जानते हैं) और सामायिक के अर्थ को जानते हैं, यावत् व्युत्सर्ग को एव व्युत्सर्ग के अर्थ को जानते है, तो बतलाइये कि (आपके मतानुसार) सामायिक क्या है और सामायिक का अर्थ क्या है ? यावत् व्युत्सर्ग क्या है और व्युत्सर्ग का अर्थ क्या है ?

[उ. ४] तब उन स्थविर भगवन्तो ने इस प्रकार कहा कि–हे आर्य ! हमारी आत्मा सामायिक है, हमारी आत्मा सामायिक का अर्थ है; यावत् हमारी आत्मा व्युत्सर्ग है, हमारी आत्मा ही व्युत्सर्ग का अर्थ है।

[Q. 3] Kaalasyaveshiputra then asked further from the *Sthavirs*—*O Arya* ! If you know *Samayik* (equanimity) as well as its meaning... and so on up to know *Vyutsarg* (dissociation from the body) as well as its meaning then tell me what (according to you) is *Samayik* (equanimity) and its meaning... and so on up to. *Vyutsarg* (dissociation from the body) and its meaning ?

[Ans. 4] At this those *Sthavir Bhagavans* replied—*O Arya* ! Our soul is *Samayik* (equanimity) and our soul is its meaning... and so on up to... our soul is *Vyutsarg* (dissociation from the body) our soul is its meaning.

[प्र. ५] तए णं से कालासवेसियपुत्ते अणगारे थेरे भगवंते एवं वयासी–जति भे अज्जो ! आया सामाइए, आया सामाइयस्स अट्ठे एवं जाव आया विउस्सग्गस्स अट्ठे, अवहट्टु कोह–माण–माया–लोभे किमट्ठं अज्जो ! गरहह ?

[उ.] कालास ! संजमट्ठयाए।

[प्र. ५] इस पर कालास्यवेषिपुत्र, अनगार ने उन स्थविर भगवन्तो से इस प्रकार पूछा–'हे आर्यो ! यदि आत्मा ही सामायिक है, आत्मा ही सामायिक का अर्थ है और इसी प्रकार यावत् आत्मा ही व्युत्सर्ग

है तथा आत्मा ही व्युत्सर्ग का अर्थ है, तो आप क्रोध, मान, माया और लोभ का परित्याग करके क्रोधादि की गर्हा-निन्दा क्यो करते हैं ?'

[उ.] हे कालास ! हम सयम के लिए क्रोध आदि की गर्हा करते है।

[Q. 5] Kaalasyaveshiputra then asked further from the *Sthavirs*—*O Arya* ! If soul is *Samayik* (equanimity) and soul is its meaning... and so on up to .. soul is *Vyutsarg* (dissociation from the body) and soul is its meaning then why do you abstain from anger, conceit, deceit and greed, and censure (*garha*) them ?

[Ans.] O Kalas ! We censure (*garha*) anger and other passions for the sake of *Samyam* (ascetic-discipline).

[प्र. ६] से भंते ! किं गरहा संजमे ? अगरहा संजमे ?

[उ.] कालास ! गरहा संजमे, नो अगरहा संजमे, गरहा वि य णं सव्वं दोसं पविणेति, सव्वं बालियं परिण्णाए एवं खु णे आया संजमे उवहिते भवति, एवं खु णे आया संजमे उवचिते भवति, एवं खु णे आया संजमे उवट्ठिते भवति।

[प्र. ६] तो 'हे भगवन् ! क्या गर्हा (करना) सयम है या अगर्हा (करना) सयम है ?'

[उ.] हे कालास ! गर्हा (पापो की निन्दा) सयम है, अगर्हा सयम नहीं है। गर्हा सब दोषो को दूर करती है–आत्मा समस्त मिथ्यात्व को जानकर गर्हा द्वारा दोषनिवारण करता है। इस प्रकार हमारी आत्मा सयम में पुष्ट होती है और इसी प्रकार हमारी आत्मा सयम मे उपस्थित होती है।

[Q. 6] Then *Bhante* ! Is censure ascetic-discipline or non-censure ascetic-discipline ?

[Ans.] O Kalas ! Censure (of sins) is ascetic-discipline and non-censure is not ascetic-discipline Censure removes all faults. Knowing all that is unrighteous, the soul removes all faults through censure. Thus our soul enhances discipline and thus our soul transcends into discipline

२२. [१] एत्थ णं से कालासवेसियपुत्ते अणगारे संबुद्धे थेरे भगवंते वंदति णमंसति, २ एवं वयासी–एतेसि णं भंते ! पदाणं पुव्विं अण्णाणयाए असवणयाए अबोहीए अणभिगमेणं अदिट्ठाइं अस्सुताणं अमुयाणं अविण्णायाणं अव्वोगडाणं अव्वोच्छिन्नाणं अणिज्जूढाणं अणुवधारिताणं एयमट्ठे णो सद्दहिए, णो पत्तिए, णो रोइए। इदाणि भंते ! एतसिं पयाणं जाणयाए सवणयाए बोहीए अभिगमेणं दिट्ठाणं सुयाणं मुयाणं विण्णायाणं वोगडाणं वोच्छिन्नाणं णिज्जूढाणं उवधारियाणं एयमट्ठं सद्दहामि, पत्तियामि, रोएमि। एवमेयं से जहेयं तुब्भे वदह।

२२. [१] (स्थविर भगवन्तो का उत्तर सुनकर) वह कालास्यवेषिपुत्र अनगार बोध को प्राप्त हुए और उन्होने स्थविर भगवन्तों की वन्दना की, नमस्कार किया, वन्दना-नमस्कार करके इस प्रकार कहा-'हे भगवन् ! इन (पूर्वोक्त) पदो को न जानने से, पहले सुने हुए न होने से, बोध न होने से अभिगम (ज्ञान) न होने से, दृष्ट न होने से, विचारित (सोचे हुए) न होने से, सुने हुए न होने से, विशेष रूप से न जानने से, कहे हुए न होने से, अनिर्णीत होने से, उद्धृत न होने से और ये पद अवधारण किये हुए न होने से, इस अर्थ मे श्रद्धा नहीं की थी, प्रतीति नही की थी, रुचि नहीं की थी; किन्तु भगवन् ! अब इन (पदों) को जान लेने से, सुन लेने से, बोध होने से, अभिगमन होने से, दृष्ट होने से, चिन्तित (चिन्तन किये हुए) होने से, श्रुत (सुने हुए) होने से, विशेष जान लेने से, (आपके द्वारा) कथित होने से, निर्णीत होने से, उद्धृत होने से और इन पदों का अवधारण करने से इस अर्थ (कथन) पर मैं श्रद्धा करता हूँ, प्रतीति करता हूँ; रुचि करता हूँ, हे भगवन् ! आप जो यह कहते है, वह यथार्थ है, वह इसी प्रकार है।'

22. [1] (On hearing the reply from Sthavirs) Kaalasyaveshiputra got enlightened and paid homage and obeisance to them. After doing that he said—'*Bhante* ! As I was ignorant of these statements (aforesaid), as I never heard them, never knew them, never had knowledge of them, never perceived them, never thought about them, never acquired them, never thoroughly understood them, was never told about them, never determined them, never was cited them and never having accepted them, I did not have reverence, faith and interest in them. But now, *Bhante* ! Becoming aware of these statements (aforesaid), having heard them, having known them, having acquired knowledge of them, having perceived them, having thought about them, having acquired them, having thoroughly understood them, having been told about them (by you), having determined them, being cited them and having accepted them, I now have reverence, faith and interest in them. *Bhante* ! Indeed that is so. Indeed that is true.'

[२] तए णं ते थेरा भगवंतो कालासवेसियपुत्तं अणगारं एवं वयासी--सद्दहाहि अज्जो ! पत्तियाहि अज्जो ! रोएहि अज्जो ! से जहेयं अम्हे वदामो।

[२] तब उन स्थविर भगवन्तो ने कालास्यवेषिपुत्र अनगार से इस प्रकार कहा-'हे आर्य ! हम जैसा कहते है उस पर वैसी ही श्रद्धा करो, आर्य ! उस पर प्रतीति करो, आर्य ! उसमे रुचि रखो।'

[2] Then those *Sthavir Bhagavants* said to Kaalasyaveshiputra—*O Arya* ! Have reverence in them. *O Arya* ! Have faith in them *O Arya* ! Have interest in them. They are as we have said.

२३. [१] तए णं से कालासवेसियपुत्ते अणगारे थेरे भगवंते वंदइ नमंसइ, २ एवं वदासी--इच्छामि णं भंते ! तुब्भं अंतिए चाउज्जामाओ धम्माओ पंचमहव्वइयं सपडिक्कमणं धम्मं उवसंपजित्ताणं विहरित्तए।

अहासुहं देवाणुप्पिया ! मा पडिबंधं करेह।

२३. [१] तत्पश्चात् कालास्यवेषिपुत्र अनगार ने उन स्थविर भगवन्तों को वन्दना की, नमस्कार किया और तब वह इस प्रकार बोले–'हे भगवन् ! पहले मैंने (भगवान पार्श्वनाथ का) चातुर्याम–धर्म स्वीकार किया है, अब मैं आपके पास प्रतिक्रमण सहित पचमहाव्रतरूप धर्म स्वीकार करके विचरण करना चाहता हूँ।'

(स्थविर–) 'हे देवानुप्रिय ! जैसे तुम्हें सुख हो, वैसे करो। परन्तु (इस शुभ कार्य मे) विलम्ब (प्रतिबन्ध) न करो।'

23. [1] After that Kaalasyaveshiputra paid homage and said—'*Bhante* ! Earlier I got initiated in the four dimensional religion (of Bhagavan Parshva Naath), now I wish to accept the religion of five great vows and *pratikraman* (critical review or self-appraisal) from you and follow the codes.

(*Sthavirs*) "Beloved of gods ! Do as you please without any delay."

[२] तए णं से कालासवेसियपुत्ते अणगारे थेरे भगवंते वंदइ नमंसइ, वंदित्ता, नमंसित्ता चाउज्जामाओ धम्माओ पंचमहव्वइयं सपडिक्कमणं धम्मं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ।

[२] तदनन्तर कालास्यवेषिपुत्र अनगार ने स्थविर भगवन्तो को वन्दना की, नमस्कार किया और फिर चातुर्याम धर्म के स्थान पर प्रतिक्रमण सहित पचमहाव्रतात्मक धर्म स्वीकार किया और विचरण करने लगे।

[2] After that Kaalasyaveshiputra paid homage and obeisance and instead of the four dimensional religion accepted the religion of five great vows and *pratikraman* and commenced adhering to the codes.

२४. तए णं से कालासवेसियपुत्ते अणगारे बहूणि वासाणि सामण्णपरियागं पाउणइ, पाउणित्ता जस्सट्ठाए कीरइ नग्गभावे मुण्डभावे अण्हाणयं अदंतधुवणयं अच्छत्तयं अणोवाहणयं भूमिसेज्जा फलगसेज्जा कट्ठसेज्जा केसलोओ बंभचेरवासो परघरपवेसो लद्धावलद्धी, उच्चावया गामकंटगा बावीसं परिसहोवसग्गा अहियासिज्जंति तमट्ठं आराहेइ, आराहित्ता चरमेहिं उस्सास–नीसासेहिं सिद्धे बुद्धे मुक्के परिनिव्वुडे सव्वदुक्खप्पहीणे।

२४. इसके पश्चात् कालास्यवेषिपुत्र अनगार ने बहुत वर्षो तक श्रमणपर्याय (साधुत्व) का पालन किया और जिस प्रयोजन से नग्नभाव, मुण्डभाव, अस्नान, अदन्तधावन, छत्रवर्जन, पैरो में जूते न पहनना, भूमिशयन, फलक (पट्टे) पर शय्या, काष्ठ पर शयन, केशलोच, ब्रह्मचर्यवास, भिक्षार्थ गृहस्थो के घरो में प्रवेश, लाभ और अलाभ (सहना) अभीष्ट भिक्षा प्राप्त होने पर हर्षित न होना और भिक्षा न मिलने पर खिन्न न होना), अनुकूल और प्रतिकूल, इन्द्रियसमूह के लिए कण्टकसम चुभने वाले कठोर शब्दादि इत्यादि बाईस परीषहो को सहन करना, इन सब (साधनाओं) को स्वीकार किया, उस अभीष्ट प्रयोजन की सम्यक् रूप से आराधना की और अन्तिम उच्छ्वास–नि:श्वास द्वारा सिद्ध, बुद्ध, मुक्त हुए और समस्त दु:खो से रहित हुए।

24. After that ascetic Kaalasyaveshiputra lead ascetic life for many years At the last moment on achieving the ultimate goal for which he underwent and endured various hardships, such as—remaining unclad (*nagnabhaava* or detached from body); tonsured (*mundabhaava* or renouncing mundane relations and passions); giving up bathing (*asnana*); not cleaning teeth (*adantadhavan*); giving up use of umbrella and sandals (*achhatrak* and *anopahanagam*); lying on ground (*bhumishayan*); lying on wooden plank (*phalak shayan* and *kaashta shayan*); pulling out hair (*kesh lunchan*); practicing celibacy (*brahmacharyavaas*); visiting houses of other people to seek alms; remaining equanimous irrespective of getting alms or not; ignoring rude neglect by others; tolerating favourable and unfavourable afflictions including thorn-like piercing words and other twenty two kinds of physical afflictions, he accepted all these practices, immaculately observed them and with the last breath became perfect (*Siddha*), enlightened (*buddha*), liberated (*mukta*), free of cyclic rebirth (*parinivrit*) and ended all miseries

विवेचन : स्थविरों के उत्तर का विश्लेषण—स्थविरो का उत्तर निश्चयनय की दृष्टि से है। गुण और गुणी मे तादात्म्य-अभेदसम्बन्ध होता है। इस दृष्टि से आत्मा (गुणी) और सामायिक (गुण) अभिन्न हैं। आत्मा को सामायिक आदि और सामायिक आदि का अर्थ कहना इस (निश्चय) दृष्टि से युक्तियुक्त है। व्यवहारनय की अपेक्षा से आत्मा और सामायिक आदि पृथक्-पृथक् होने से सामायिक आदि छह पदो का अर्थ इस प्रकार होगा—

सामायिक—शत्रु-मित्र पर समभाव। **प्रत्याख्यान**—नवकारसी, पोरसी आदि का नियम करना। **संयम**—पृथ्वीकायादि जीवो की यतना-रक्षा करना। **संवर**—पाँच इन्द्रियो तथा मन को वश में रखना। **विवेक**—विशिष्ट बोध-ज्ञान। **व्युत्सर्ग**—शारीरिक हलन-चलन बन्द करके उस पर से ममत्व हटाना।

इनका प्रयोजन—**सामायिक का अर्थ**—नये कर्मों का बन्ध न करना, प्राचीन कर्मों की निर्जरा करना। **प्रत्याख्यान का प्रयोजन**—आस्रवद्वारो को रोकना। **संयम का प्रयोजन**—आस्रवरहित होना। **संवर का प्रयोजन**—इन्द्रियो और मन की प्रवृत्ति को रोककर आस्रवरहित होना। **विवेक का प्रयोजन**—हेय का त्याग, ज्ञेय का ज्ञान और उपादेय का ग्रहण करना। **व्युत्सर्ग का प्रयोजन**—सभी प्रकार के सग से रहित हो जाना।

Elaboration—Answer of Sthavirs—The *Sthavirs* replied from the noumenal or transcendental viewpoint (*Nischaya naya*) There is an intimate relationship between virtue and virtuous. From this viewpoint soul (virtuous) and *samayik* (virtue) are inseparable The statement that soul is equanimity (etc.) and equanimity (etc.) is soul is logically correct from this transcendental angle. From empirical viewpoint equanimity and other virtues are different from soul and there meanings are—

Samayik—equanimity of feeling for friend and foe. **Pratyakhyan**—to follow the rules of *navakarasi, porasi* (vows of fasting for specific period) and other ritual codes. **Samyam**—discipline of protecting earth-bodied

beings and other beings. **Samvar**—to have restraint over five senses and mind. **Vivek**—discerning capacity or sagacity. **Vyutsarg**—to stop activities of the body and rid oneself from fondness for the body.

Goal of these practices—Samayik—to avoid bondage of new *karmas* and to shed already acquired *karmas*. **Pratyakhyan**—to block the sources of inflow of *karmas*. **Samyam**—to be free of inflow of *karmas*. **Samvar**—to have restraint over five senses and mind and stop the inflow of *karmas*. **Vivek**—to abandon the worthless, to know what is worth knowing and to accept what is useful. **Vyutsarg**—to become completely dissociated.

चारों में अप्रत्याख्यान क्रिया : समान रूप से UNIFORMITY OF NON-RENUNCIATION

२५. [प्र.] 'भंते !' त्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदति नमंसति, २ एवं वदासी–से नूणं भंते ! सेट्ठिस्स य तणुयस्स य किविणस्स य खत्तियस्स य समा चेव अपच्चक्खाणकिरिया कज्जइ ?

[उ.] हंता, गोयमा ! सेट्ठिस्स य जाव अपच्चक्खाणकिरिया कज्जइ।

[प्र.] से केणट्ठे भंते !

[उ.] गोयमा ! अविरतिं पडुच्च; से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ सेट्ठिस्स य तणुयस्स जाव कज्जइ।

२५. [प्र.] 'भगवन् !' ऐसा कहकर भगवान गौतम ने श्रमण भगवान महावीर स्वामी को वन्दन-नमस्कार किया। तत्पश्चात् (वन्दन-नमस्कार करके) वे इस प्रकार बोले-भगवन् ! क्या श्रेष्ठी श्रीमन्त और दरिद्र को, रंक को और क्षत्रिय (राजा) को अप्रत्याख्यान क्रिया (प्रत्याख्यान क्रिया का अभाव अथवा अप्रत्याख्यानजन्य कर्मबन्ध) समान होती है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! श्रेष्ठी यावत् क्षत्रिय राजा (इन सब) के द्वारा अप्रत्याख्यान क्रिया समान की जाती है; (अर्थात्-अप्रत्याख्यानजन्य कर्मबन्ध भी समान होता है।)

[प्र.] भगवन् ! आप ऐसा किस हेतु से कहते है ?

[उ.] गौतम ! (इन चारों की) अविरति को लेकर, ऐसा कहा जाता है कि श्रेष्ठी और दरिद्र, कृपण (रंक) और राजा (क्षत्रिय) इन सबकी अप्रत्याख्यान क्रिया (प्रत्याख्यान क्रिया से विरति या तज्जन्यकर्मबन्धता) समान होती है।

25. [Q.] *'Bhante !'* Uttering thus Gautam paid homage and obeisance to Bhagavan Mahavir and submitted—*Bhante* ! Does a merchant and a pauper, a beggar and a king (*kshatriya*) have the same *apratyakhyan-kriya* (act and consequence of non-renunciation in terms of *karmic* bondage) ?

[Ans.] Yes, Gautam ! A merchant and a pauper, a beggar and a king (*kshatriya*) have the same *apratyakhyan-kriya* (act and consequence of non-renunciation in terms of *karmic* bondage).

[Q.] *Bhante* ! Why do you say so ?

[Ans.] Gautam ! It is because of the lack of abstinence (*avirati*), and so it is said that a merchant and a pauper, a beggar and a king (*kshatriya*) have the same *apratyakhyan-kriya* (act and consequence of non-renunciation in terms of *karmic* bondage).

आधाकर्म आहारसेवन का फल CONSEQUENCE OF VIOLATING PROHIBITION

२६. [प्र.] आहाकम्मं णं भुंजमाणे समणे निग्गंथे किं बंधति ? किं पकरेति ? किं चिणाति ? किं उवचिणाति ?

[उ.] गोयमा ! आहाकम्मं णं भुंजमाणे आउयवज्जाओ सत्त कम्मप्पगडीओ सिढिलबंधणबद्धाओ घणियबंधणबद्धाओ पकरेइ जाव अणुपरियट्टइ।

[प्र.] से केणट्ठेणं जाव अणुपरियट्टइ ?

[उ.] गोयमा ! आहाकम्मं णं भुंजमाणे आयाए धम्मं अतिक्कमति, आयाए धम्मं अतिक्कममाणे पुढविक्कायं णावकंखति जाव तसकायं णावकंखति, जेसिं पि य णं जीवाणं सरीराइं आहारमाहारेइ ते वि जीवे नावकंखति। से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ–आहाकम्मं णं भुंजमाणे आउयवज्जाओ सत्त कम्मपगडीओ जाव अणुपरियट्टति।

२६. [प्र.] भगवन् ! आधाकर्मदोषयुक्त आहारादि का उपभोग करता हुआ श्रमणनिर्ग्रन्थ क्या बाँधता है ? क्या करता है ? किसका चय (वृद्धि) करता है ? और किसका उपचय करता है ?

[उ.] गौतम ! आधाकर्मदोषयुक्त आहारादि का उपभोग करता हुआ श्रमणनिर्ग्रन्थ आयुकर्म को छोडकर शिथिल बन्धन से बँधी हुई सात कर्मप्रकृतियों को दृढ बन्धन से बँधी हुई बना लेता है, यावत्–ससार से बार–बार पर्यटन करता है।

[प्र.] भगवन् ! इसका क्या कारण है कि, यावत्–वह ससार में बार–बार पर्यटन करता है ?

[उ.] गौतम ! आधाकर्मी आहारादि का उपभोग करता हुआ श्रमणनिर्ग्रन्थ अपने आत्मधर्म का अतिक्रमण करता है। अपने आत्मधर्म का अतिक्रमण करता हुआ पृथ्वीकाय के जीवों की अपेक्षा (परवाह) नही करता और यावत्–त्रसकाय के जीवो की भी चिन्ता (परवाह) नहीं करता और जिन जीवों के शरीरों का वह भोग करता है, उन जीवो की भी चिन्ता नहीं करता। इस कारण हे गौतम ! ऐसा कहा गया है कि आधाकर्मदोषयुक्त आहार भोगता हुआ (श्रमण) आयुकर्म को छोड़कर सात कर्मों की शिथिलबद्ध प्रकृतियों को गाढबन्धन–बद्ध कर लेता है, यावत्–संसार में बार–बार परिभ्रमण करता है।

26. [Q.] *Bhante* ! While consuming food (etc.) with *adhakarmik* fault (food specifically prepared for an ascetic is called *adhakarmik* food and it is prohibited) what does an ascetic bind ? What does he acquire ? What does he assimilate (*chaya*) ? and what does he augment (*upachaya*) ?

[Ans.] Gautam ! While consuming food (etc.) with *adhakarmik* fault an ascetic turns the weak bondage of seven species of *karmas* other than

Ayu-karma (life-span determining *karma*) into strong bondage... and so on up to... and continues to wander in cycles of rebirth.

[Q.] *Bhante* ! What is the reason for this... and so on up to... continues to wander in cycles of rebirth ?

[Ans.] Gautam ! While consuming food (etc) with *adhakarmik* fault an ascetic violates the natural duty of his soul (*atmadharma*). While violating the natural obligation of his soul he does not care for earth-bodied beings... and so on up to . he also does not care for mobile beings, he also does not care for the beings whose bodies he enjoys. That is why, Gautam ! It is said that while consuming food (etc.) with *adhakarmik* fault an ascetic turns the weak bondage of seven species of *karmas* other than *Ayu-karma* (life-span determining *karma*) into strong bondage... and so on up to . and continues to wander in cycles of rebirth.

२७. [प्र.] फासुएसणिज्जं णं भंते ! भुंजमाणे किं बंधइ जाव उवचिणाइ ?

[उ.] गोयमा ! फासुएसणिज्जं णं भुंजमाणे आउयवज्जाओ सत्त कम्मपयडीओ धणियबंधणबद्धाओ सिढिलबंधणबद्धाओ पकरेइ जहा संवुडे णं (स. १, उ. १, सु. ११ [२]) नवरं, आउयं च णं कम्मं सिय बंधइ, सिय नो बंधइ। सेसं तहेव जाव वीतीवयति।

[प्र.] से केणट्ठेणं जाव वीतीवयति ?

[उ.] गोयमा ! फासुएसणिज्जं णं भुंजमाणे समणे निग्गंथे आयाए धम्मं णाइक्कमति, आयाए धम्मं अणतिक्कममाणे पुढविक्कायं अवकंखति जाव तसकायं अवकंखति, जेसिं पि य णं जीवाणं सरीराइं आहारेति ते वि जीवे अवकंखति, से तेणट्ठेणं जाव वीतीवयति।

२७. [प्र.] हे भगवन् ! प्रासुक और एषणीय आहारादि का उपभोग करने वाला श्रमणनिर्ग्रन्थ क्या बाँधता है ? यावत् किसका उपचय करता है ?

[उ.] गौतम ! प्रासुक और एषणीय आहारदि भोगने वाला श्रमणनिर्ग्रन्थ आयुकर्म को छोडकर सात कर्मों की दृढबन्धन से बद्धा प्रकृतियो को शिथिल करता है। उसे संवृत अनगार के समान समझना चाहिए। विशेषता यह है कि आयुकर्म को कदाचित् बाँधता है और कदाचित् नही बाँधता। शेष उसी प्रकार समझना चाहिए; यावत् ससार को पार कर जाता है।

[प्र.] भगवन् ! इसका क्या कारण है कि–यावत्–ससार को पार कर जाता है ?

[उ.] गौतम ! प्रासुक एषणीय आहारादि भोगने वाला श्रमणनिर्ग्रन्थ, अपने आत्मधर्म का उल्लंघन नहीं करता। अपने आत्मधर्म का उल्लंघन न करता हुआ वह श्रमणनिर्ग्रन्थ पृथ्वीकाय के जीवों का जीवन चाहता है, यावत्–त्रसकाय के जीवो का जीवन चाहता है और जिन जीवो का शरीर उसके उपभोग में आता है, उनका भी वह जीवन चाहता है। इस कारण से हे गौतम ! वह यावत्–संसार को पार कर जाता है।

27. [Q.] *Bhante* ! While consuming pure (*prasuk*) and acceptable (*eshaniya*) food (etc.) what does an ascetic bind ?... and so on up to... what does he augment (*upachaya*) ?

[Ans.] Gautam ! While consuming pure (*prasuk*) and acceptable (*eshaniya*) food (etc.) an ascetic turns the strong bondage of seven species of *karmas* other than *Ayu-karma* (life-span determining *karma*) into weak bondage as in case of the ascetic who has stopped the inflow of *karmas* (*samvrit*). The only difference is that he sometimes acquires and sometimes does not acquire the bondage of *Ayu-karma*. The rest is as aforesaid.. and so on up to .. terminates the cycles of rebirth.

[Q.] *Bhante* ! What is the reason for this... and so on up to... terminates the cycles of rebirth ?

[Ans.] Gautam ! While consuming pure (*prasuk*) and acceptable (*eshaniya*) food (etc) an ascetic does not violate the natural duty of his soul (*atmadharma*). While not violating the natural duty of his soul he cares for the life of earth-bodied beings... and so on up to... he also cares for the life of mobile beings, he also cares for the life of beings whose bodies he enjoys That is why, Gautam ! It is said that and so on up to... terminates the cycles of rebirth.

विवेचन : प्रासुकादि शब्दों के अर्थ–प्रासुक–अचित्त, निर्जीव। एषणीय–आहार आदि से सम्बन्धित दोषो से रहित। आधाकर्म–साधु के निमित्त सचित्त वस्तु को अचित्त की जाये अर्थात्–सजीव वस्तु को निर्जीव बनाया जाये, अचित्त वस्तु को पकाया जाये, घर, मकान आदि बँधवाये जाये, वस्त्रादि बनवाये जाएँ, इसे आधाकर्म कहते हैं।

Elaboration—Prasuk—lifeless, not infested with living organism. **Eshaniya**—free of faults and acceptable for ascetics. **Aadhakarma**—to sterilize a thing or make it uninfected with living organism specifically for the use of ascetics. Also to cook food, construct house, get dresses stitched specifically for use of ascetics.

स्थिर–अस्थिरादि निरूपण STABILITY AND UNSTABILITY

२८. [प्र.] से नूणं भंते ! अथिरे पलोट्टति, नो थिरे पलोट्टति; अथिरे भज्जति, नो थिरे भज्जति; सासए बालए, बालियत्तं आसायं; सासते पंडिते, पंडितत्तं असासतं ?

[उ.] हंता, गोयमा ! अथिरे पलोट्टति जाव पंडियत्तं असासतं।

सेवं भंते ! सेवं भंते त्ति जाव विहरति।

॥ पढमे सए : नवमो उद्देसो समत्तो ॥

२८. [प्र.] भगवन् ! क्या अस्थिर पदार्थ बदलता है और स्थिर पदार्थ नहीं बदलता है? क्या अस्थिर पदार्थ भग होता है और स्थिर पदार्थ भग नहीं होता? क्या बाल शाश्वत है तथा बालत्व अशाश्वत है? क्या पण्डित शाश्वत है और पण्डितत्व अशाश्वत है?

[उ.] हाँ, गौतम ! अस्थिर पदार्थ बदलता है यावत् पण्डितत्व अशाश्वत है।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है।' यों कहकर यावत् गौतम स्वामी विचरण करते है।

28. [Q.] *Bhante* ! Does an unstable thing change and a stable thing does not ? Does an unstable thing disintegrate and a stable thing does not ? Is the ignorant eternal and ignorance transitory ? Is the wise eternal and wisdom transitory ?

[Ans.] Yes, Gautam ! An unstable thing changes.. and so on up to .. wisdom transitory.

"*Bhante* ! Indeed that is so. Indeed that is so." With these words and so on up to ascetic Gautam resumed his activities.

विवेचन : 'अथिरे पलोट्टइ' आदि के दो अर्थ–व्यवहार पक्ष मे पलट जाने वाला अस्थिर होता है; जैसे–मिट्टी का ढेला है। अध्यात्म पक्ष मे कर्म अस्थिर हैं, वे प्रतिसमय जीवप्रदेशो से चलित–पृथक् होते है। कर्म अस्थिर होने से बन्ध, उदय और निर्जीर्ण आदि परिणामो द्वारा वे बदलते रहते है। व्यवहार पक्ष मे पत्थर की शिला स्थिर है, वह बदलती नहीं, अध्यात्म पक्ष में आत्मा स्थिर है। व्यवहार पक्ष मे तृणादि नश्वर स्वभाव के हैं, इसलिए भग्न हो जाते हैं, अध्यात्म पक्ष के कर्म अस्थिर होने से भग्न हो जाते है। जीव का प्रकरण होने से व्यवहार पक्ष में अबोध बच्चे को बाल कहते है, अध्यात्म पक्ष में असयत अविरत को बाल कहते हैं। यह जीव द्रव्य रूप होने से शाश्वत है और बालत्व, पण्डितत्व आदि जीव की पर्याय होने से अशाश्वत है। *(वृत्ति, पत्राक १०२)*

॥ प्रथम शतक : नवम उद्देशक समाप्त ॥

Elaboration—There are two facets of the aforesaid statement about stability and instability. In the mundane facet what changes is unstable. In the spiritual facet *karmas* are unstable as they get separated from the soul every moment Being unstable they continue to change through the processes of bondage, fruition and shedding In the mundane facet a rock is stable and in the spiritual facet soul is stable In the mundane facet straws are transitory therefore they get disintegrated. In spiritual facet *karmas* are transitory therefore they disintegrate. Here the context is *jiva* (soul) therefore for mundane facet *baal* means an ignorant child and for spiritual facet it means indisciplined or without self-restraint. As soul is an entity it is eternal. Ignorance, wisdom and other attributes are its qualities or modes and are thus transitory. *(Vritti, leaf 102)*

● END OF THE NINTH LESSON OF THE FIRST SHATAK ●

प्रथम शतक : दशम उद्देशक
FIRST SHATAK (Chapter One) : TENTH LESSON

चलना CHALANA (MOVEMENT)

परमाणु के विषय में अन्यतीर्थिक मत OTHER SCHOOLS ABOUT ULTIMATE PARTICLE

१. (१) अन्नउत्थिया णं भंते ! एवमाइक्खंति जाव एवं परूवेंति-"एवं खलु चलमाणे अचलिए जाव निज्जरिज्जमाणे अणिज्जिण्णे।

(२) दो परमाणुपोग्गला एगयओ न साहण्णंति। कम्हा दो परमाणुपोग्गला एगयओ न साहण्णंति ?

दोण्हं परमाणुपोग्गलाणं नत्थि सिणेहकाए तम्हा दो परमाणुपोग्गला एगयओ न साहण्णं।

(३) तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहण्णंति, कम्हा तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहण्णंति ?

तिण्हं परमाणुपोग्गलाणं अत्थि सिणेहकाए तम्हा तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहण्णंति। ते भिज्जमाणा दुहा वि तिहा वि कज्जंति, दुहा कज्जमाणा एगयओ दिवड्ढे परमाणुपोग्गले भवति, एगयओ वि दिवड्ढे परमाणुपोग्गले भवति; तिहा कज्जमाणा तिण्णि परमाणुपोग्गला भवंति, एवं जाव चत्तारि।

(४) पंच परमाणुपोग्गला एगयओ साहण्णंति, एगयओ साहण्णित्ता दुक्खत्ताए कज्जंति, दुक्खे वि य णं से सासए सया समितं उवचिज्जति य अवचिज्जति य।

(५) पुव्विं भासा भासा, भासिज्जमाणी भासा अभासा, भासासमयवीतिक्कंतं च णं भासिया भासा भासा।

[प्र.] सा किं भासओ भासा ? अभासओ भासा ? अभासओ णं सा भासा।

[उ.] नो खलु सा भासओ भासा।

(६) पुव्विं किरिया दुक्खा, कज्जमाणी किरिया अदुक्खा, किरियासमयवीतिक्कंतं च णं कडा किरिया दुक्खा;

[प्र.] जा सा पुव्विं किरिया दुक्खा, कज्जमाणी किरिया अदुक्खा, किरियासमयवीइक्कंतं च णं कडा किरिया दुक्खा। सा किं करणतो दुक्खा, अकरणओ दुक्खा ?

[उ.] अकरणओ णं सा दुक्खा, णो खलु सा करणओ दुक्खा, सेवं वत्तव्वं सिया।

(७) अकिच्चं दुक्खं, अफुसं दुक्खं, अकज्जमाणकडं दुक्खं अकट्टु अकट्टु पाण-भूत-जीव-सत्ता वेदणं वेदेंतीति वत्तव्वं सिया"

१. (१) (अन्यतीर्थिक पक्ष) भगवन् ! अन्यतीर्थिक इस प्रकार कहते हैं, यावत् इस प्रकार प्ररूपणा करते हैं कि–'जो चल रहा है, वह अचलित है–चला नही कहलाता और यावत्–जो निर्जीर्ण हो रहा है, वह निर्जीर्ण नहीं कहलाता।'

(२) 'दो परमाणु–पुद्गल एक साथ नही चिपकते।' दो परमाणु–पुद्गल एक साथ क्यो नहीं चिपकते ? इसका कारण यह है कि दो परमाणु–पुद्गलो मे स्निग्धता नही होती इसलिए 'दो परमाणु–पुद्गल एक साथ नहीं चिपकते।'

(३) 'तीन परमाणु–पुद्गल एक–दूसरे से चिपक जाते है।' तीन परमाणु–पुद्गल परस्पर क्यो चिपक जाते है ? इसका कारण यह है कि तीन परमाणु–पुद्गलो मे स्निग्धता (चिकनाहट) होती है; इसलिए तीन परमाणु–पुद्गल आपस मे चिपक जाते हैं। यदि तीनो परमाणु–पुद्गलो का भेदन (विभाग) किया जाये तो दो भाग भी हो सकते है एव तीन भाग भी हो सकते है। अगर तीन परमाणु–पुद्गलो के दो भाग किये जाये तो एक तरफ डेढ़ परमाणु होता है और दूसरी तरफ भी डेढ परमाणु होता है। यदि तीन परमाणु–पुद्गलों के तीन भाग किये जायें तो एक–एक करके तीन परमाणु अलग–अलग हो जाते है। इसी प्रकार यावत् चार परमाणु–पुद्गलो के विषय मे समझना चाहिए।

(४) 'पाँच परमाणु–पुद्गल परस्पर चिपक जाते है और वे दु खरूप (कर्मरूप) में परिणत होते है। वह दु.ख (कर्म) भी शाश्वत है और सदा सम्यक् प्रकार से उपचय को प्राप्त होता है और अपचय को प्राप्त होता है।'

(५) 'बोलने से पहले की जो भाषा (भाषा के पुद्गल) है, वह भाषा है। बोलते समय की भाषा अभाषा है और बोलने का समय व्यतीत हो जाने के बाद की बोली गई भाषा, भाषा है।'

[प्र.] 'यह जो बोलने से पहले की भाषा, भाषा है और बोलते समय की भाषा, अभाषा है तथा बोलने के समय के बाद की भाषा, भाषा है, सो क्या बोलते हुए पुरुष की भाषा है या न बोलते हुए पुरुष की भाषा है ?'

[उ.] 'न बोलते हुए पुरुष की वह भाषा है, बोलते हुए पुरुष की वह भाषा नही है।'

(६) 'करने से पूर्व की जो क्रिया है, वह दु'खरूप है, वर्तमान मे जो क्रिया की जाती है, वह दु.खरूप नही है और करने के समय के बाद की कृत क्रिया भी दु खरूप है।'

[प्र.] करने से पूर्व की क्रिया है, दु'ख का कारण है; की जाती हुई क्रिया दु ख का कारण नही है और करने के समय के बाद की क्रिया दु ख का कारण है, तो क्या वह करने से दु ख का कारण है या न करने से दु ख का कारण है ?

[उ.] न करने से वह दु ख का कारण है, करने से दु ख का कारण नही है, ऐसा कहना चाहिए।

[७] अकृत्य दु:ख है, अस्पृश्य दु'ख है और अक्रियमाण कृत दु'ख है। उसे न करके प्राण, भूत, जीव, सत्व, वेदना भोगते है, ऐसा कहना चाहिए।

1. (1) (View of other schools) *Bhante* ! Followers of other schools (*anyatirthak*) say, . . and so on up to... propagate that—"That which is 'moving' is not called 'moved'... and so on up to... that which is 'shedding' is not called 'shed'."

(2) Two ultimate-particles of matter (*paramanu pudgal*) do not combine together (*samhanyete*). Why do they not combine together ? There is an absence of *sineh-kaya* (*snigdha-kaya*; minute water-bodies, affinity, property of adhesion) between the two. Therefore two ultimate-particles of matter (*paramanu pudgal*) do not combine together

(3) Three ultimate-particles of matter (*paramanu pudgals*) do combine together. Why the three combine together ? Since there is a presence of *sineh-kaya* (*snigdha-kaya*; minute water-bodies; affinity; property of adhesion) between the three, three ultimate-particles of matter (*paramanu pudgals*) do combine together. If this bunch of three *paramanu pudgals* is split there may be two divisions as well as three. If the bunch of three is split into two parts we get one part having one and a half *paramanus* and the other part too having one and a half *paramanus* If this bunch of three *paramanu pudgals* is split into three parts we get three individual *paramanus* one by one The same holds good for four *paramanu pudgals*.

(4) Five ultimate-particles of matter combine together and they transform into misery (in the form of *karmas*) That misery (in the form of *karmas*) is eternal and it continues to wax and wane in this unified state.

(5) The speech (sound in particle form) before its utterance is speech The speech while being uttered is non-speech. The speech uttered after the time of utterance is over is speech.

[Q.] 'This speech (sound in particle form) before its utterance is speech; the speech while being uttered is non-speech, the speech uttered after the time of utterance is over is speech.' So, is that the speech of the person who is uttering or of the person who is not uttering ?

[Ans.] It is the speech of the person who is not uttering and not of the person who is uttering

(6) The activity preceding the action is misery The action being performed is not misery The activity following the action is also misery.

[Q.] 'The activity preceding the action is misery. The action being performed is not misery. The activity following the action is also misery.' So, is it misery when it is action or is it misery when it is non-action ?

[Ans.] It is misery when it is non-action and not misery when it is action ? So it should be said.

(7) Non-action is misery, non-touching is misery, non-action where action is required is misery. Not doing that *praan* (two to four-sensed beings; beings), *bhoot* (plant bodied beings; organisms), *jiva* (five-sensed beings; souls), and *sattva* (immobile beings; entities) suffer pain. So it should be said

स्व-समय पक्ष JAIN VIEW

[प्र.] से कहमेयं भंते ! एवं ?

[उ.] गोयमा ! जं णं ते अन्नउत्थिया एवमाइक्खंति जाव वेदणं वेदेंति इति वत्तव्वं सिया, जे ते एवमाहंसु मिच्छा ते एवमाहंसु। अहं पुण गोतमा ! एवमाइक्खामि-एवं खलु चलमाणे चलिए जाव निज्जरिज्जमाणे निज्जिण्णे।

(८) [प्र.] दो परमाणुपोग्गला एगयओ साहण्णंति। कम्हा दो परमाणुपोग्गला एगयओ साहण्णंति ?

[उ.] दोण्हं परमाणुपोग्गलाणं अत्थि सिणेहकाए, तम्हा दो परमाणुपोग्गला एगयओ साहण्णंति, ते भिज्जमाणा दुहा कज्जंति, दुहा कज्जमाणे एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ परमाणुपोग्गले भवति।

(९) तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहण्णंति।

[प्र.] कम्हा तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहण्णंति ?

[उ.] तिण्हं परमाणुपोग्गलाणं अत्थि सिणेहकाए, तम्हा तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहण्णंति; ते भिज्जमाणा दुहा वि तिहा वि कज्जंति, दुहा कज्जमाणा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ दुपदेसिए खंधे भवति, तिहा कज्जमाणा तिण्णि परमाणुपोग्गला भवंति। एवं जाव चत्तारि।

(१०) पंच परमाणुपोग्गला एगयओ साहन्नंति, साहन्नित्ता खंधत्ताए, कज्जंति, खंधे वि य णं से असासते सया समियं उवचिज्जइ य अवचिज्जइ य।

(११) पुव्विं भासा अभासा, भासिज्जमाणी भासा भासा, भासासमयवीतिक्कंतं च णं भासिता भासा अभासा; जा सा पुव्विं भासा अभासा, भासिज्जमाणी भासा भासा, भासासमयवीतिक्कंतं च णं भासिता भासा अभासा।

[प्र.] सा किं भासतो भासा अभासओ भासा ?

[उ.] भासओ णं सा भासा, नो खलु सा अभासओ भासा।

(१२) पुव्विं किरिया अदुक्खा जहा भासा तहा भाणितव्व किरिया वि जाव करणतो णं सा दुक्खा, नो खलु सा अकरणओ दुक्खा, सेवं वत्तव्वं सिया।

(१३) किच्चं दुक्खं, फुसं दुक्खं, कज्जमाणकडं दुक्खं कट्टु कट्टु पाण–भूत–जीव–सत्ता वेदणं वेदेंतीति वत्तव्वं सिया।

[प्र.] श्री गौतम स्वामी पूछते हैं–'भगवन् ! क्या अन्यतीर्थिकों का उक्त प्रकार का यह मत सत्य है ?'

[उ.] (स्वपक्ष) गौतम ! यह अन्यतीर्थिक जो कहते हैं–यावत् वेदना भोगते हैं, ऐसा कहना चाहिए, उन्होने यह सब जो कहा है, वह मिथ्या कहा है। हे गौतम ! मैं ऐसा कहता हूँ कि जो चल रहा है, वह 'चला' कहलाता है और यावत् जो निर्जीर्णमाण है, वह निर्जीर्ण कहलाता है।

(८) [प्र.] दो परमाणु–पुद्गल आपस मे चिपक जाते हैं। इसका क्या कारण है ?

[उ.] दो परमाणु–पुद्गलो मे चिकनापन है, इसलिए दो परमाणु–पुद्गल परस्पर चिपक जाते है। इन दो परमाणु–पुद्गलों के दो भाग हो सकते हैं। दो परमाणु–पुद्गलो के दो भाग किये जाये तो एक तरफ एक परमाणु और एक तरफ एक परमाणु होता है।

(९) तीन परमाणु–पुद्गल परस्पर चिपक जाते है।

[प्र.] तीन परमाणु–पुद्गल परस्पर क्यो चिपक जाते हैं ?

[उ.] तीन परमाणु–पुद्गल इस कारण चिपक जाते हैं, कि उन परमाणु–पुद्गलों में स्निग्धता है। इस कारण तीन परमाणु–पुद्गल परस्पर चिपक जाते है। उन तीन परमाणु–पुद्गलो के दो भाग भी हो सकते हैं और तीन भाग भी हो सकते है। दो भाग करने पर एक तरफ एक परमाणु और एक तरफ दो प्रदेश वाला एक द्वयणुक स्कन्ध होता है। तीन भाग करने पर एक-एक करके तीन परमाणु हो जाते हैं। इसी प्रकार यावत्–चार परमाणु–पुद्गल में भी समझना चाहिए। परन्तु तीन परमाणु के डेढ–डेढ़ (भाग) नही हो सकते।

(१०) पाँच परमाणु–पुद्गल परस्पर चिपक जाते है और परस्पर चिपककर एक स्कन्धरूप बन जाते है। वह स्कन्ध अशाश्वत है और सदा उपचय तथा अपचय होता रहता है अर्थात्–वह बढ़ता–घटता भी है।

(११) बोलने से पहले की भाषा, अभाषा है, बोलते समय की भाषा, भाषा है और बोलने के बाद की भाषा भी अभाषा है।

[प्र.] वह जो पहले की भाषा, अभाषा है, बोलते समय की भाषा, भाषा है और बोलने के बाद की भाषा, अभाषा है, सो क्या बोलने वाले पुरुष की भाषा है, या नही बोलते हुए पुरुष की भाषा है ?

[उ.] वह बोलने वाले पुरुष की भाषा है, नही बोलते हुए पुरुष की भाषा नही है।

(१२) (करने से) पहले की क्रिया दु:ख का कारण नहीं है, उसे भाषा के समान ही समझना चाहिए। यावत्–वह क्रिया करने से दु.ख का कारण है, न करने से दु.ख का कारण नही है, ऐसा कहना चाहिए।

(१३) कृत्य दुःख है, स्पृश्य दुःख है, क्रियमाण कृत दुःख है। उसे कर–करके प्राण, भूत, जीव और सत्व वेदना भोगते है, ऐसा कहना चाहिए।

[Q.] Gautam Swami asks—*Bhante* ! Is the aforesaid view of other schools correct ?

[Ans.] (Jain view) Gautam ! This assertion of other schools of thought... and so on up to they suffer pain, is false or incorrect. O Gautam ! I say as under—That which is 'moving' is called 'moved'... and so on up to. . that which is 'shedding' is called 'shed' "

(8) [Q.] Two ultimate-particles of matter (*paramanu pudgal*) combine together (*samhanyete*) What is the reason for this ?

[Ans.] This is because there is *sineh-kaya* (*snigdha-kaya*; minute water-bodies, affinity; property of adhesion) between the two, therefore two ultimate-particles of matter (*paramanu pudgal*) combine together. This bunch of two ultimate-particles can be split into two. If done so, one part has one *paramanu* (ultimate-particle) and the other too has one *paramanu* (ultimate-particle).

(9) Three ultimate-particles of matter (*paramanu pudgal*) do combine together

[Q.] Why three *paramanus* (ultimate-particles) combine together ?

[Ans.] This is because there is a presence of *sneh-kaya* (*snigdha-kaya*; minute water-bodies; affinity, property of adhesion) between the three, therefore three ultimate-particles of matter (*paramanu pudgal*) do combine together This bunch of three *paramanu pudgal* can be split into two parts as well as three If the bunch of three is split into two parts we get one part having one *paramanu* (ultimate-particle) and the other part having a molecule with two *paramanus* (ultimate-particle) If this bunch is split into three parts we get three individual *paramanus* one by one The same holds good for four *paramanu pudgals* However, a bunch of three *paramanus* (ultimate-particles) cannot be divided into two parts of one and a half *paramanu* (ultimate-particle) each

(10) Five ultimate-particles of matter combine together and they transform into a molecule (*skandh*) That molecule is non-eternal and it continues to wax and wane (gain or lose ultimate-particles)

(11) The speech (sound in particle form) before its utterance is non-speech. The speech while being uttered is speech. The speech uttered after the very act of utterance is over is non-speech

[Q.] 'This speech (sound in particle form) before its utterance is non-speech The speech while being uttered is speech The speech uttered

after the time of utterance is over is non-speech.' So, is that the speech of the person who is uttering or of the person who is not uttering ?

[Ans.] It is the speech of the person who is uttering and not of the person who is not uttering ?

(12) The act preceding the action is not the cause of misery What has been said about speech is applicable here... and so on up to... It is misery when it is action and not misery when it is non-action ? So it should be said

(13) Action is misery, touching is misery, action where action is required is misery Doing that *praan, bhoot, jiva* and *sattva* suffer pain. So it should be said

विवेचन : अन्यतीर्थिकों के मिथ्या मन्तव्यों का निराकरण–(१) चलमान कर्म प्रथम क्षण मे चलित नहीं होगा तो द्वितीय आदि समयो में भी अचलित ही रहेगा, फिर तो किसी भी समय वह कर्म चलित होगा ही नहीं। अत चलमान चलित नही होता, यह कथन अयुक्त है। (२) परमाणु सूक्ष्म और स्निग्धतारहित होने से नहीं चिपकते, यह कथन भी अयुक्त है, क्योंकि एक परमाणु मे भी स्निग्धता होती है, अन्यतीर्थिको ने जब डेढ–डेढ परमाणुओं के चिपक जाने की बात स्वीकार की है, तब उनके मत से आधे परमाणु मे भी चिकनाहट होनी चाहिए। ऐसी स्थिति मे दो परमाणु भी चिपकते है, यही मानना युक्तियुक्त है। (३) 'डेढ–डेढ परमाणु चिपकते हैं' यह अन्यतीर्थिक–कथन भी युक्तियुक्त नही, क्योंकि परमाणु के दो भाग हो ही नही सकते, दो भाग हो जायें तो वह परमाणु नही कहलायेगा। (४) 'चिपके हुए पाँच पुद्गल कर्मरूप (दु.खत्वरूप) होते है' यह कथन भी असगत है, क्योकि कर्म, अनन्त परमाणुरूप होने से अनन्त स्कन्धरूप है और पाँच परमाणु जुडने से तो स्कन्ध होता है, तथा कर्म जीव को आवृत करने के स्वभाव वाले है, अगर ये पाँच परमाणुरूप ही हो तो असंख्यात प्रदेश वाले जीव को कैसे आवृत कर सकेगे ? तथा (५) कर्म (दु.ख) को शाश्वत मानना भी ठीक नही क्योंकि कर्म को यदि शाश्वत माना जायेगा तो कर्म का क्षयोपशम, क्षय आदि न होने से ज्ञानादि की हानि और वृद्धि नहीं हो सकेगी परन्तु ज्ञानादि की हानि–वृद्धि लोक मे प्रत्यक्षसिद्ध है। अत कर्म (दु ख) शाश्वत नहीं है। तथा आगे उन्होने जो कहा है कि (६) कर्म (दु ख) चय को प्राप्त होता है, नष्ट होता है, यह कथन भी कर्म को शाश्वत मानने पर कैसे घटित होगा ? (७) भाषा की कारणभूत होने से बोलने से पूर्व की भाषा, भाषा है, वह कथन भी अयुक्त तथा औपचारिक है। बोलते समय की भाषा को अभाषा कहने का अर्थ हुआ–वर्तमानकाल व्यवहार का अंग नहीं है, यह कथन भी मिथ्या है। क्योंकि विद्यमानरूप वर्तमानकाल ही व्यवहार का अंग है। भूतकाल नष्ट हो जाने के कारण अविद्यमानरूप है और भविष्य असद्रूप होने से अविद्यमानरूप है, अत ये दोनो काल व्यवहार के अंग नहीं है। (८) बोलने से पूर्व की भाषा को भाषा मानकर भी उसे न बोलते हुए पुरुष की भाषा मानना तो और भी युक्तिविरुद्ध है। क्योंकि अभाषक की भाषा को ही भाषा माना जायेगा तो सिद्ध भगवान को या जड को भाषा की प्राप्ति होगी, जो भाषक है, उन्हे नही। (९) की जाती हुई क्रिया को दु खरूप न बताकर पूर्व की हुई या क्रिया के बाद की क्रिया बताना भी अनुभवविरुद्ध है, क्योंकि करने के समय ही क्रिया सुखरूप या दु.खरूप लगती है, करने से पहले या करने के बाद (नही करने से) क्रिया सुखरूप या दु खरूप नही लगती। इस प्रकार अन्यतीर्थिकों के मत का निराकरण करके भगवान द्वारा प्ररूपित स्वसिद्धान्त का प्रतिपादन किया गया है। *(वृत्ति, पत्रांक १०२–१०४)*

Elaboration—Correcting the misconceptions of followers of other schools—(1) When moving, if a *karma* particle has not moved in the first *Samaya* it will remain unmoved even in the second, third and all the following *Samayas*. Thus there will be no such *Samaya* when it could be called as moved. As such the statement that what is moving is not moved is wrong. (2) The assertion that one *paramanu* (ultimate-particle) is minute and devoid of the property of adhesion (*snigdhata*) is also wrong because even one *paramanu* (ultimate-particle) has the property of adhesion The followers of other schools have accepted that one and a half *paramanu* (ultimate-particle) combine together This means that according to them even half *paramanu* has the property of adhesion. Therefore it is logical to infer that two ultimate-particles also combine together. (3) The assertion that one and a half *paramanu* (ultimate-particle) adhere to one and a half *paramanu* is also illogical because a *paramanu* (ultimate-particle) cannot be divided into two. If it could be divided it would not be called ultimate-particle. (4) The statement that 'five ultimate-particles of matter combine together and they transform (into misery) in the form of *karmas*', is also wrong because *karmas* are in the form of infinite *paramanus*, thus they are combination of infinite *skandhs* (aggregates). Five *paramanus* make just one *skandh* Besides this, *karmas* have a tendency to envelope soul. If they are limited to five *paramanus* how could they envelope soul that has infinite space-points (*pradesh*) ? (5) It is also not right to accept misery (*karma*) as eternal This is because if *karmas* are accepted to be eternal there would be no destruction or pacification of *karmas*. Consequently there would be no loss or gain in attributes like knowledge, but the gain and loss in these attributes is self evident in this world. Moreover, in the later statement they themselves mention that (6) *karma* undergoes waxing and waning. If *karma* is eternal how could this happen ? (7) 'Being the cause of speech, the speech (sound) before utterance is speech', this statement is also wrong and theoretical. To say that the speech during utterance is not speech amounts to negating the functionality of present time, which is wrong. This is because only the existing form at present is functional. Past is destroyed, thus non-existent and future is non-manifested, thus non-existent, therefore these two are not functional. (8) Accepting speech (sound) before utterance as speech is illogical To accept it as the speech of a person who is not uttering is further compounding the fallacy. If speech of one who is not speaking is accepted as speech only matter or liberated

souls would be attributed with the ability to speak and not the actual speakers. (9) To call the act preceding and one following the action as misery instead of the action itself is against the evident reality because an action causes pleasure or pain only while it is being performed and not before or after. This way the views of followers of other schools have been negated and the view of our own school (Jain view) as propagated by *Bhagavan* has been established. *(Vritti, leaf 102-104)*

ऐर्यापथिकी और साम्परायिकी क्रिया AIRYAPATHIKI AND SAMPARAYIKI ACTIVITY

२. [प्र.] अन्नउत्थिया णं भंते ! एवमाइक्खंति जाव–एवं खलु एगे जीवे एगेणं समएणं दो किरियाओ पकरेति, तं जहा–इरियावहियं चं संपराइयं च। जं समयं इरियावहियं पकरेइ तं समयं संपराइयं पकरेइ., 'जं समयं संपराइयं पकरेइ तं समयं इरियावहियं पकरेइ; इरियावहियाए पकरणयाए संपराइयं पकरेइ, संपराइयए पकरणायाए इरियावहियं पकरेइ; एवं खलु एगे जीवे एगेणं समएणं दो किरियाओ पकरेति, तं जहा–इरियावहियं च संपराइयं च।' से कहमेयं भंते एवं ?

[उ.] गोयमा ! "जं णं ते अन्नउत्थिया एवमाइक्खंति जाव संपराइयं च, जे ते एवमाहंसु मिच्छा ते एवमाहंसु; अहं पुण गोयमा ! एवमाइक्खामि ४–एवं खलु एगे जीवे एगेणं समएणं एगं किरियं पकरेइ।" परउत्थियवत्तव्वं नेयव्वं। ससमयवत्तव्वयाए नेयव्वं। जाव इरियावहियं वा संपराइयं वा।

२. [प्र.] भगवन् ! अन्यतीर्थिक इस प्रकार कहते है–यावत् प्ररूपणा करते हैं कि एक जीव एक समय मे दो क्रियाएँ करता है। वह है–ऐर्यापथिकी और साम्परायिकी। जिस समय (जीव) ऐर्यापथिकी क्रिया करता है, उस समय साम्परायिकी क्रिया करता है और जिस समय साम्परायिकी क्रिया करता है, उस समय ऐर्यापथिकी क्रिया करता है। ऐर्यापथिकी क्रिया करने से साम्परायिकी क्रिया करता है और साम्परायिकी क्रिया करने से ऐर्यापथिकी क्रिया करता है, इत्यादि। इस प्रकार एक जीव, एक समय मे दो क्रियाएँ करता है–एक ऐर्यापथिकी और दूसरी साम्परायिकी। हे भगवन् ! क्या यह इसी प्रकार है ?

[उ.] गौतम ! जो अन्यतीर्थिक ऐसा कहते हैं, वह मिथ्या है। हे गौतम ! मैं इस प्रकार कहता हूँ कि एक जीव एक समय मे एक क्रिया करता है। यहाँ परतीर्थिको का तथा स्वसिद्धान्त का वक्तव्य कहना चाहिए। यावत् ऐर्यापथिकी अथवा साम्परायिकी क्रिया करता है।

2. [Q.] *Bhante* ! Followers of other schools say, ... and so on up to... propagate that—"That a living being (soul) performs two activities (*kriya*) at one given moment (*Samaya*). They are—*airyapathiki* (careful movement of an accomplished ascetic or an omniscient with non-vitiating *karmas*) and *samparayiki* (activity inspired by association and passions and leading to *karmic* bondage). When he performs *airyapathiki kriya* he also performs *samparayiki kriya* and when he performs *samparayiki*

kriya he also performs *airyapathiki kriya*. By performing *airyapathiki kriya* he performs *samparayiki kriya* and by performing *samparayiki kriya* he performs *airyapathiki kriya* (etc.). This way a living being (soul) performs two activities (*kriya*) at one given moment (*Samaya*)—*airyapathiki* and *samparayiki Bhante* ! Is it like that ?

[Ans.] This assertion of other schools of thought . and so on up to... *samparayiki kriya*, is false or incorrect O Gautam ! I say that—one living being (soul) performs only one action at one given moment (*Samaya*). Here the view of other schools and that of own school (Jain) should be stated.. and so on up to he performs either *airyapathiki* or *samparayiki kriya*

विवेचन : ऐर्यापथिकी–जो क्रिया केवल योग निमित्त से होती हो, ऐसी कषायरहित–वीतरागपुरुष की क्रिया ११वे से १३वें गुणस्थान तक लगती है। **साम्परायिकी**–जिस क्रिया मे योग का निमित्त होते हुए भी कषाय की प्रधानता हो ऐसी सकषाय जीव की क्रिया। यही क्रिया ससार परिभ्रमण का कारण है। पच्चीस क्रियाओ मे से चौबीस क्रियाएँ साम्परायिकी है, सिर्फ एक ऐर्यापथिकी है।

एक जीव द्वारा एक समय में ये दो क्रियाएँ सम्भव नही–जीव जब कषाययुक्त होता है, तो कषायरहित नही होता और जब कषायरहित होता है, तो सकषाय नही हो सकता। दसवे गुणस्थान तक सकषाय–दशा है। आगे के गुणस्थानो मे अकषाय–अवस्था है। ऐर्यापथिकी अकषाय–अवस्था की क्रिया है, साम्परायिकी कषाय–अवस्था की। अतएव एक ही जीव एक ही समय मे इन दोनो क्रियाओ को नही कर सकता। *(वृत्ति, पत्राक १०६)*

Elaboration—An action performed purely due to association (*yoga*) is called *airyapathiki kriya* Such passion-free and careful action or movement can be performed only by an accomplished ascetic (*vitarag*) who is at 11th to 13th *Gunasthan* (level of spiritual purity) and is short of omniscience due to residual *karmic* bondage An action involving association (*yoga*) but with predominance of passions is called *samparayiki kriya* Such action is performed by ordinary beings under the influence of passions and leads to *karmic* bondage This action is the cause of cycles of rebirth Of the twenty five enumerated actions twenty four are *samparayiki* and only one is *airyapathiki*

Two actions in one moment by one being are impossible—When a being is burdened by passions it cannot be free of passions and vise versa Up to the tenth *Gunasthan* a being is in a state encumbered with passions and beyond that he is in a passion-free state *Airyapathiki* movement is the action of passion-free state and *samparayiki* is the action of passion-encumbered state Therefore one being cannot perform both these actions at one given moment. *(Vritti, leaf 106)*

३. [प्र.] निरयगती णं भंते ! केवतियं कालं विरहिया उववाएणं पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! जहन्नेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं बारस मुहुत्ता। एवं वक्कंतीपदं भाणियव्वं निरवसेसं।

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव विहरति।

॥ पढमे सए : दसमो उद्देसो समत्तो ॥

॥ पढमं सतं समत्तं ॥

३. [प्र.] भगवन् ! नरकगति कितने समय तक उपपात से विरहित रहती है ?

[उ.] गौतम ! जघन्य एक समय तक और उत्कृष्ट बारह मुहूर्त्त तक। इस सम्बन्ध में यहाँ (प्रज्ञापनासूत्र का) 'व्युत्क्रान्तिपद' कहना चाहिए।

'भगवन् ! यह ऐसा ही है, यह ऐसा ही है', इस प्रकार कहकर यावत् गौतम स्वामी विचरते हैं।

3. [Q.] *Bhante* ! For what period the infernal realm (*narak gati*) has omission of instantaneous birth (*upapat*) ?

[Ans.] Gautam ! For a minimum of one *Samaya* and a maximum of twelve *Muhurts* (a unit equivalent to 48 minutes). In this regard the '*Vyutkrantipad*' (from *Prajnapana Sutra*) should be stated.

"*Bhante* ! Indeed that is so. Indeed that is so." With these words... and so on up to .. ascetic Gautam resumed his activities.

विवेचन : नरकादि में उत्पाद–विरहकाल–प्रज्ञापनासूत्र के छठे व्युत्क्रान्तिपद के अनुसार विभिन्न गतियों में जीवो की उत्पत्ति का विरहकाल सक्षेप मे इस प्रकार है–पहली नरक मे २४ मुहूर्त्त का, दूसरी में ७ अहोरात्र का, तीसरी मे १५ अहोरात्र का, चौथी मे १ मास का, पाँचवीं मे २ मास का, छठी में ४ मास का, सातवीं में ६ मास का विरहकाल होता है। इसी प्रकार तिर्यंचपचेन्द्रिय, मनुष्य एव देवगति मे जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट १२ मुहूर्त्त का उत्पाद–विरहकाल है। पचस्थावरो मे कभी विरह नही होता, विकलेन्द्रिय मे और असज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच मे अन्तर्मुहूर्त्त का तथा सज्ञी–तिर्यंच एव सज्ञी मनुष्य में १२ मुहूर्त्त का विरह होता है। सिद्ध अवस्था में उत्कृष्ट ६ मास का विरह होता है। इसी प्रकार उद्वर्तना के विरहकाल के विषय में भी जानना चाहिए। *(वृत्ति, पत्रांक १०७–१०८)*

॥ प्रथम शतक : दशम उद्देशक समाप्त ॥

॥ प्रथम शतक समाप्त ॥

Elaboration—Duration of omission of birth—According to the sixth chapter, *Vyutkrantipad*, of *Prjnapana Sutra* the brief description of the period of omission of birth in various genuses (*gati*) is as follows—In the

first hell it is 24 *Muhurts*, in second 7 days and nights (*Ahoratra*), in third 15 days and nights, in the fourth one month, in the fifth two months, in the sixth four months and in the seventh it is six months. In the same way the period of omission in genuses of five-sensed animals, human beings and divine beings is minimum one *Samaya* and maximum 12 *Muhurts*. In the genus of five immobile beings there is no period of omission. In the genuses of *vikalendriyas* (one to four-sensed beings) and non-sentient five-sensed animals it is *Antarmuhurt* (less than 48 minutes), and in sentient animals and sentient humans it is 12 *Muhurts*. In the perfected state (*Siddha gati*) the maximum period of omission is six months. These are the details about the period of omission of birth in various realms and genuses. *(Vritti, leaf 107-108)*

● END OF THE TENTH LESSON OF THE FIRST SHATAK ●

● END OF THE FIRST SHATAK (CHAPTER ONE) ●

द्वितीय शतक : प्रथम उद्देशक
SECOND SHATAK (Chapter Two) : FIRST LESSON

प्राथमिक परिचय INTRODUCTION

द्वितीय शतक के दस उद्देशकों का नाम-निरूपण NAMES OF THE TEN LESSONS

१. ऊसास खंदए वि य समुग्घाय २ पुढवी ३ इंदिय ४ णियंठ (अण्ण उत्थि) ५ भासा य ६।

देवा य ७ चमरचंचा ८, समयक्खित्त ९ ऽत्थिकायं १० बीयसए।

१. भगवतीसूत्र का यह द्वितीय शतक है। इसके भी दस उद्देशक हैं। उनके नाम क्रमशः इस प्रकार है–

गाथार्थ–द्वितीय शतक मे दस उद्देशक है। उनमे क्रमश इस प्रकार विषय हैं–(१) श्वासोच्छ्वास और स्कन्दक अनगार, (२) समुद्घात, (३) पृथ्वी, (४) इन्द्रियाँ, (५) निर्ग्रन्थ, (किसी-किसी प्रति मे 'अन्य यूथिक' पाठ है) (६) भाषा, (७) देव, (८) चमरचंचा, (९) समयक्षेत्र का स्वरूप, (१०) अस्तिकाय का विवेचन।

1. This is the second chapter (*shatak*) of *Bhagavati Sutra*. This too has ten lessons with the following titles—

The verse—The second *shatak* (chapter) has ten *uddeshaks* (lessons). They contain the following topics in this order—(1) *Shvasochchhvas* (Respiration) and *Skandak Anagar*, (2) *Samudghaat* (Bursting forth of soul-space-points), (3) *Prithvi* (Worlds), (4) *Indriya* (Sense organs), (5) *Nirgranth* (ascetics) (in some copies it is *Anya Yuthik* or heretics), (6) *Bhasha* (Language), (7) *Dev* (Divine beings), (8) *Chamarachancha*, (9) *Samayakshetra* (area inhabited by humans), and (10) *Astikaya* (conglamorative ontological category, fundamental entities).

श्वासोच्छ्वास SHVASOCHCHHVAS (RESPIRATION)

एकेन्द्रियादि जीवो में श्वासोच्छ्वास RESPIRATION IN ONE-SENSED AND OTHER BEINGS

२. तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे णामं नगरे होत्था। वण्णओ। सामी समोसढे। परिसा निग्गया। धम्मो कहिओ। परिसा पडिगया।

२. उस काल उस समय मे राजगृह नामक नगर था। भगवान महावीर स्वामी (वहाँ) पधारे। उनका धर्मोपदेश सुनने के लिए परिषद् निकली। भगवान ने धर्मोपदेश दिया। धर्मोपदेश सुनकर परिषद् वापस लौट गई।

2. During that period of time there was a city called Rajagriha. Description (as before) Bhagavan Mahavir arrived there. People came out *Bhagavan* gave his sermon. People dispersed.

३. [प्र.] तेणं कालेणं तेणं समएणं जेट्ठे अंतेवासी जाव पज्जुवासमाणे एवं वयासी–जे इमे भंते ! बेइंदिया तेइंदिया चउरिंदिया पंचिंदिया जाव, एएसि णं आणामं व पाणामं वा उस्सासं वा नीसासं वा जाणामो पासामो। जे इमे पुढविकाइया जाव वणस्सइकाइया एगिंदिया जीवा एएसि णं आणामं वा पाणामं वा उस्सासं वा निस्सासं वा ण याणामो ण पासामो, एए वि य णं भंते ! जीवा आणमंति वा पाणमंति वा उस्ससंति वा नीससंति वा ?

[उ.] हंता, गोयमा ! एए वि य णं जीवा आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा।

३. [प्र.] उस काल उस समय मे श्रमण भगवान महावीर स्वामी के ज्येष्ठ अन्तेवासी (शिष्य) श्री इन्द्रभूति गौतम अनगार यावत्–भगवान की पर्युपासना करते हुए इस प्रकार बोले–भगवन् ! ये जो द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय और पचेन्द्रिय जीव है, वे जो आभ्यन्तर और बाह्य उच्छ्वास लेते है, उनको हम जानते और देखते है, किन्तु पृथ्वीकाय यावत् वनस्पतिकाय तक एकेन्द्रिय जीवो के आभ्यन्तर एव बाह्य उच्छ्वास को तथा आभ्यन्तर एव बाह्य निःश्वास को हम न जानते है और न देखते है। तो भगवन् ! क्या ये पृथ्वीकायादि एकेन्द्रिय जीव आभ्यन्तर और बाह्य उच्छ्वास लेते है तथा आभ्यन्तर और बाह्य नि श्वास छोडते है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! ये पृथ्वीकायादि एकेन्द्रिय जीव भी आभ्यन्तर और बाह्य उच्छ्वास लेते है और आभ्यन्तर एव बाह्य नि श्वास छोडते है।

3. [Q.] During that period of time Indrabhuti Anagar, the senior disciple of Bhagavan Mahavir and so on up to paid his homage and obeisance and submitted—"*Bhante* ! We know about and perceive the breathing-in and breathing-out as well as inhalation and exhalation (*abhyantar* and *bahya uchchhavas* and *nihshvas*) of living beings with two, three, four and five sense organs But we do not know about and perceive the breathing-in and breathing-out as well as inhalation and exhalation of one-sensed beings including earth-bodied and so on up to plant-bodied beings *Bhante* ! Do these one-sensed beings including earth-bodied beings breathe-in and breathe-out as well as inhale and exhale ?

[Ans.] Yes, Gautam ! These one-sensed beings including earth-bodied beings do breathe-in and breathe-out as well as inhale and exhale.

४. [प्र. १] किं णं भंते ! एते जीवा आणमंति वा पाणमंति वा उस्ससंति वा नीससंति वा ?

[उ.] गोयमा ! दब्बओ णं अणंतपएसियाइं दब्बाइं, खेत्तओ णं असंखेज्जपएसोगाढाइं, कालओ अन्नयरट्ठितीयाइं, भावओ वण्णमंताइं गंधमंताइं रसमंताइं फासमंताइं आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा।

४. [प्र. १] भगवन् ! ये एकेन्द्रिय जीव बाह्य और आभ्यन्तर उच्छ्वास के रूप में किस प्रकार के द्रव्यो को ग्रहण करते हैं और छोडते है ?

[उ.] गौतम ! द्रव्य की अपेक्षा अनन्तप्रदेश वाले द्रव्यों को, क्षेत्र की अपेक्षा असंख्यप्रदेशो में रहे हुए द्रव्यों को, काल की अपेक्षा किसी भी प्रकार की स्थिति वाले (एक समय की, दो समय की स्थिति वाले इत्यादि) द्रव्यो को, तथा भाव की अपेक्षा वर्ण वाले, गन्ध वाले, रस वाले और स्पर्श वाले द्रव्यो को बाह्य और आभ्यन्तर उच्छ्वास के रूप मे ग्रहण करते है तथा नि श्वास के रूप में छोडते हैं।

4. [Q. 1] *Bhante* ! What type of substances do these one-sensed beings breathe-in and breathe-out as well as inhale and exhale ?

[Ans.] Gautam ! They breathe-in and breathe-out as well as inhale and exhale substances with infinite space-points (*anant pradesh*) in context of substance; substances existing in innumerable space-points in context of area; substances with any duration of existence (of one, two or more *Samaya*) in context of time; and substances having attributes of colour (*varna*), smell (*gandh*), taste (*rasa*) and touch (*sparsh*) in context of state (*bhaava*)

[प्र. २] जाइं भावओ वण्णमंताइं आणमंति पाणमंति, ऊससंति, नीससंति ताइं किं एगवण्णाइं आणमंति वा पाणमंति ऊस. नीससंतिवा ?

[उ.] आहारगमो नेयव्वो जाव ति–चउ–पंचदिसिं।

[प्र. २] भगवन् ! वे पृथ्वीकायादि एकेन्द्रिय जीव भाव की अपेक्षा वर्ण वाले जिन द्रव्यो को बाह्य और आभ्यन्तर श्वासोच्छ्वास के रूप मे ग्रहण करते और छोडते है, क्या वे द्रव्य एक वर्ण वाले है ?

[उ.] गौतम ! जैसा कि प्रज्ञापनासूत्र के अट्ठाईसवे आहारपद मे कथन किया है, वैसा ही यहाँ समझना चाहिए। यावत् वे तीन, चार, पाँच दिशाओ की ओर से श्वासोच्छ्वास के पुद्गलो को ग्रहण करते है।

[Q. 2] *Bhante* ! In context of state (*bhaava*), are the substances These one sensed beings (including earth-bodied beings) breathe-in and breathe-out (as well as inhale and exhale) of one colour (*varna*) ?

[Ans.] In this context it should be read as mentioned in the twenty eighth chapter, *Aahaar-pad*, of *Prajnapana Sutra*... and so on up to... have intake of breathable particles from three, four and five directions

५. [प्र.] किं णं भंते ! नेरइया आण. पाण. ऊस. नीस. ?

[उ.] तं चेव जाव नियमा छद्दिसिंआण. पाण. ऊस. नीस.।

जीवा एगिंदिया वाघाय-निव्वाघाय भाणियव्वा। सेसा नियमा छद्दिसिं।

५. [प्र.] भगवन् ! नैरयिक किस प्रकार के पुद्गलों को बाह्य और आभ्यन्तर श्वासोच्छ्वास के रूप मे ग्रहण करते और छोडते है ?

[उ.] गौतम ! इस विषय मे पूर्व कथनानुसार ही जानना चाहिए और यावत् ये नियम से (निश्चित रूप से) छहों दिशा से पुद्गलो को बाह्य एव आभ्यन्तर श्वासोच्छ्वास के रूप में ग्रहण करते और छोडते हैं।

जीवसामान्य और एकेन्द्रियो के सम्बन्ध मे इस प्रकार कहना चाहिए कि यदि व्याघात न हो तो वे सब दिशाओ से बाह्य और आभ्यन्तर श्वासोच्छ्वास के लिए पुद्गलो को ग्रहण करते है। यदि व्याघात हो तो कदाचित् तीन दिशा से, कदाचित् चार दिशा से और कदाचित् पाँच दिशा से श्वासोच्छ्वास के पुद्गलो को ग्रहण करते है। शेष सब जीव नियम से छह दिशा से श्वासोच्छ्वास के पुद्गलो को ग्रहण करते हैं।

5. [Q.] *Bhante* ! What type of substances do the infernal beings (*Nairayiks*) breathe-in and breathe-out as well as inhale and exhale ?

[Ans.] Gautam ! In this regard it should be read as aforesaid and so on up to as a rule they breathe-in and breathe-out as well as inhale and exhale substances from all the six directions

With regard to living beings in general and one-sensed beings in particular it should be said that in absence of any obstruction they breathe-in and breathe-out as well as inhale and exhale substances from all the six directions If there is some obstruction they do so may be from three, may be from four and may be from five directions All the remaining beings as a rule do so from all the six directions

विवेचन : व्याघात-अव्याघात का कारण-एकेन्द्रिय जीव लोक के अन्त भाग मे भी होते है, वहाँ उन्हे लोकान्त के कोणो द्वारा व्याघात होता है, इसलिए वे तीन, चार या पाँच दिशाओ से ही श्वासोच्छ्वास योग्य पुद्गल ग्रहण करते है, किन्तु व्याघातरहित जीव (नैरयिक आदि) त्रसनाडी के अन्दर ही होते है, अत उन्हे व्याघात न होने से वे छहो दिशाओ से श्वासोच्छ्वास-पुद्गल ग्रहण कर सकते है। *(वृत्ति, पत्राक १०९)*

Elaboration—Reason for obstruction—One-sensed beings also exist at the edge of the *Lok* (occupied space) and there they are obstructed by the angles or corners forming the edge of the *Lok* Thus there they are able to inhale and exhale matter particles from three, four and five directions Other beings including infernal ones exist only in *Tras-naadi* (the central spine of the *Lok* or occupied space where living beings exist), and therefore in absence of any obstruction they can inhale and exhale matter particles from all the six directions. *(Vritti, leaf 109)*

वायुकाय के श्वासोच्छ्वास RESPIRATION IN AIR-BODIED BEINGS

६. [प्र.] वाउयाए णं भंते ! वाउयाए चेव आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा ?

[उ.] हंता, गोयमा ! वाउयाए णं वाउयाए जाव नीससंति वा।

६. [प्र.] भगवन् ! क्या वायुकाय, वायुकायों को ही बाह्य और आभ्यन्तर उच्छ्वास और निःश्वास के रूप मे ग्रहण करता और छोड़ता है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! वायुकाय, वायुकायों को ही बाह्य और आभ्यन्तर उच्छ्वास और निःश्वास के रूप में ग्रहण करता और छोडता है।

6. [Q.] *Bhante* ! Do air-bodied beings (*vayu-kaya*) breathe-in and breathe-out as well as inhale and exhale only air-bodied beings ?

[Ans.] Yes, Gautam ! Air-bodied beings breathe-in and breathe-out as well as inhale and exhale only air-bodied beings.

७. [प्र. १] वाउयाए णं भंते ! वाउयाए चेव अणेगसयसहस्सखुत्तो उद्दाइत्ता उद्दाइत्ता तत्थेव भुज्जो भुज्जो पच्चायाति ?

[उ.] हंता, गोयमा ! जाव पच्चायाति।

७. [प्र. १] भगवन् ! क्या वायुकाय, वायुकाय मे ही अनेक लाखों बार मरकर पुनः-पुनः (वायुकाय मे ही) उत्पन्न होता है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! वायुकाय, वायुकाय मे ही अनेक लाखो बार मरकर पुनः-पुनः वही उत्पन्न होता है।

7. [Q. 1] *Bhante* ! Do air-bodied beings die and are reborn as air-bodied beings again and again several hundreds of thousand times ?

[Ans.] Yes, Gautam ! Air-bodied beings die and are reborn as air-bodied beings again and again several hundreds of thousand times.

[प्र. २] से भंते किं पुट्ठे उद्दाति ? अपुट्ठे उद्दाति ?

[उ.] गोयमा ! पुट्ठे उद्दाइ, नो अपुट्ठे उद्दाइ।

[प्र. २] भगवन् ! क्या वायुकाय स्व-जाति के अथवा पर-जाति के जीवो के साथ स्पृष्ट होकर मरण पाता है अथवा बिना स्पृष्ट हुए ही मरण पाता है ?

[उ.] गौतम ! वायुकाय, स्पृष्ट होकर (स्व-काय या पर-काय शस्त्र से) मरण पाता है, किन्तु स्पृष्ट हुए बिना मरण नही पाता।

[Q. 2] *Bhante* ! Do the air-bodied beings die by touch (of beings of the same or other class) or without touch ?

[Ans.] Gautam ! The air-bodied beings die by touch (of beings of the same or other class) and not without a touch.

[प्र. ३] से भंते ! किं ससरीरी निक्खमइ, असरीरी निक्खमइ ?

[उ.] गोयमा ! सिय ससरीरी निक्खमइ, सिय असरीरी निक्खमइ।

[प्र.] से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ सिय ससरीरी निक्खमइ, सिय असरीरी निक्खमइ ?

[उ.] गोयमा ! वाउकायस्स णं चत्तारि सरीरया पण्णत्ता, तं जहा—ओरालिए वेउव्विए तेयए कम्मए। ओरालिय-वेउव्वियाइं विप्पजहाय तेयय-कम्मएहिं निक्खमति, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ-सिय ससरीरी सिय असरीरी निक्खमइ।

[प्र. ३] भगवन् ! वायुकाय मरकर (जब दूसरी पर्याय मे परलोक मे जाता है, तब) शरीर-सहित होकर जाता है या शरीररहित होकर जाता है ?

[उ.] गौतम ! वह कथंचित् (किसी अपेक्षा से) शरीर-सहित होकर जाता है, कथंचित् शरीररहित होकर जाता है।

[प्र.] भगवन् ! ऐसा आप किस कारण से कहते है कि वायुकाय का जीव जब निकलता है, तब वह कथंचित् शरीर-सहित और कथंचित् शरीररहित होकर निकलता है ?

[उ.] गौतम ! वायुकाय के चार शरीर हैं-(१) औदारिक, (२) वैक्रिय, (३) तैजस्, और (४) कार्मण। इनमे से वह औदारिक और वैक्रियशरीर को छोडकर दूसरे भव मे जाता है, इस अपेक्षा से वह शरीररहित जाता है और तैजस् तथा कार्मणशरीर को साथ लेकर जाता है, इस अपेक्षा से वह शरीर-सहित (सशरीरी) जाता है। इसलिए गौतम ! ऐसा कहा जाता है कि वायुकाय मरकर दूसरे भव में कथंचित् सशरीरी और कथंचित् अशरीरी जाता है।

[Q. 3] *Bhante* ! On dying, do the air-bodied beings go out (to get reborn in other form and place) with the body or without it ?

[Ans.] Gautam ! In some context (*kathanchit*) they go out with the body and in some context without it.

[Q.] *Bhante* ! Why do you say that in some context (*kathanchit*) they go out with the body and in some context without it ?

[Ans.] Gautam ! Air-bodied beings have four types of bodies—(1) *Audarik* (gross physical), (2) *Vaikriya* (transmutable), (3) *Taijas* (fiery), and (4) *Karman* (*karmic*). Of these, they go out without gross physical and transmutable bodies to their next birth, in this context they go out without the body And they go with fiery and *karmic* bodies to their next birth; in this context they go with the body. That is why Gautam ! It is said that on dying the air-bodied beings go out (to get reborn in other form and place) with the body in some context and without it in some context.

विवेचन : वायुकाय के श्वासोच्छ्वास—सामान्यतया वायुकाय के अतिरिक्त पृथ्वी, जल, तेज एवं वनस्पति तो वायुरूप में श्वासोच्छ्वास ग्रहण करते हैं, किन्तु वायुकाय तो स्वयं वायुरूप है तो उसे श्वासोच्छ्वास के रूप में क्या दूसरे वायु की आवश्यकता रहती है? यहाँ पर यह प्रश्न किया है।

इस शंका का समाधान यह है कि वायुकाय जीव है, उसे दूसरी वायु के रूप में श्वासोच्छ्वास की आवश्यकता रहती है, लेकिन ग्रहण की जाने वाली वह दूसरी वायु सजीव नहीं, निर्जीव (जड) होती है, उसे किसी दूसरे सजीव वायुकाय की श्वासोच्छ्वास के रूप मे आवश्यकता नहीं रहती इसलिए यहाँ अनवस्थादोष भी नहीं आ सकता।

वायुकाय आदि की कायस्थिति—पृथ्वीकाय, अप्काय, तेजस्काय और वायुकाय, इन चार की कायस्थिति असंख्य अवसर्पिणी–उत्सर्पिणी तक है तथा वनस्पतिकाय की कायस्थिति अनन्त अवसर्पिणी–उत्सर्पिणी पर्यन्त है।

Elaboration—Respiration in air-bodied beings—Generally speaking other beings, such as earth, water, fire and plant-bodied ones, inhale and exhale air. But air-bodied beings exist in the form of air only, so do they require outside air for respiration ? This is the doubt expressed.

The explanation for this is that air-bodied beings are living organism therefore they certainly require respiration. However, the air they inhale and exhale is lifeless and they do not require other air-bodied beings for this Thus the concept is neither illogical nor impractical.

The life of air-bodied and the lot—The duration of existence of earth, water. fire and air-bodied beings is innumerable *Avasarpini-utsarpini* (regressive and progressive cycle of time) and that of plant-bodied ones is infinite *Avasarpini-utsarpini*.

मृतादी निर्ग्रन्थों के भवभ्रमण REBIRTHS OF MRITADI ASCETICS

८. [प्र. १] मडाई णं भंते ! नियंठे नो निरुद्धभवे, नो निरुद्धभवपवंचे, णो पहीणसंसारे, णो पहीणसंसारवेदणिज्जे, णो वोच्छिण्णसंसारे, णो वोच्छिण्णसंसारवेदणिज्जे, नो निट्ठियट्ठे नो निट्ठियट्ठकरणिज्जे पुणरवि इत्तत्थं हव्वमागच्छति ?

[उ.] हंता, गोयमा ! मडाई णं नियंठे जाव पुणरवि इत्तत्थं हव्वमागच्छइ।

८. [प्र. १] भगवन् ! जिसने भव (जन्म) का निरोध नही किया, भव (जन्म) के प्रपचो का निरोध नहीं किया, जिसका ससार क्षीण नही हुआ, जिसका संसार–वेदनीयकर्म क्षीण नही हुआ, जिसका चतुर्गति रूप ससार व्युच्छिन्न नही हुआ, जिसका ससार–वेदनीयकर्म व्युच्छिन्न नहीं हुआ, जो निष्ठितार्थ (कृतार्थ) नही हुआ, जिसका कार्य (करणीय) समाप्त नहीं हुआ; ऐसा मृतादि (अचित्त, निर्दोष आहार करने वाला) अनगार पुनः मनुष्यभव आदि भवो को प्राप्त होता है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! पूर्वोक्त स्वरूप वाला मृतादी निर्ग्रन्थ फिर मनुष्यभव आदि भवो को प्राप्त होता है।

8. [Q. 1] *Bhante* ! Does a *mrıtadi* (alms eating; one who eats only *cchitt* and faultless food) ascetic, who has not eliminated rebirth (*bhava nırodh*), who has not eliminated vagaries of life (*bhava-prapanch nirodh*), who has not destroyed the cycles of rebirth (*samsar*), who has not destroyed the *karma* responsible for his cyclic rebirth (*samsar-vedaniya karma*), who has not terminated the cyclic rebirths in four genuses, who has not terminated the *karma* responsible for his cyclic rebirths ın four genuses, who has not attained the desired (*nishtitarth*), and who has not accomplished hıs mıssion (*karaniya*), get reborn again as human and other beings ?

[Ans.] Yes, Gautam ! A *mrıtadi* ascetıc as descrıbed here gets reborn agaın as human and other beings

[प्र. २] से णं भंते ! किं ति वत्तव्वं सिया ?

[उ.] गोयमा ! पाणे' त्ति वत्तव्वं सिया, भूते' त्ति वत्तव्वं सिया, जीवे' त्ति वत्तव्वं सिया, सत्ते' त्ति वत्तव्वं सिया, विण्णू' त्ति वत्तव्वं सिया, वेदे' त्ति वत्तव्वं सिया–पाणे भूए जीवे सत्ते विण्णू वेदे त्ति वत्तव्वं सिया।

[प्र.] से केणट्ठेणं भंते ! पाणे त्ति वत्तव्वं सिया जाव वेदे त्ति वत्तव्वं सिया ?

[उ.] गोयमा ! जम्हा आणमइ वा पाणमइ वा उस्ससइ वा नीससइ वा तम्हा पाणे त्ति वत्तव्वं सिया। जम्हा भूते भवति भविस्सति य तम्हा भूए त्ति वत्तव्वं सिया। जम्हा जीवे जीवइ जीवत्तं आउयं च कम्मं उवजीवइ तम्हा जीवे त्ति वत्तव्वं सिया। जम्हा सत्ते सुभासुभेहिं कम्मेहिं तम्हा सत्ते त्ति वत्तव्वं सिया। जम्हा तित्त–कडुय–कसायंऽबिल–महुरे रसे जाणइ तम्हा विण्णू त्ति वत्तव्वं सिया। जम्हा वेदेइ य सुह–दुक्खं तम्हा वेदे त्ति वत्तव्वं सिया। से तेणट्ठेणं जाव पाणे त्ति वत्तव्वं सिया जाव वेदे त्ति वत्तव्वं सिया।

[प्र. २] भगवन् ! पूर्वोक्त निर्ग्रन्थ के जीव को किस शब्द से कहना चाहिए ?

[उ.] गौतम ! उसे कदाचित् 'प्राण' कहना चाहिए, कदाचित् 'भूत' कहना चाहिए, कदाचित् 'जीव' कहना चाहिए, कदाचित् 'सत्व' कहना चाहिए, कदाचित् 'विज्ञ' कहना चाहिए, कदाचित् 'वेद' कहना चाहिए और कदाचित् 'प्राण, भूत, जीव, सत्त्व, विज्ञ और वेद' कहना चाहिए।

[प्र.] हे भगवन् ! उसे 'प्राण' कहना चाहिए, यावत्–'वेद' कहना चाहिए, इसका क्या कारण है ?

[उ.] गौतम ! पूर्वोक्त निर्ग्रन्थ का जीव, बाह्य और आभ्यन्तर उच्छ्वास तथा नि श्वास लेता और छोडता है, इसलिए उसे **'प्राण'** कहना चाहिए। वह भूतकाल मे था, वर्तमान मे है और भविष्यकाल में रहेगा, इसलिए उसे **'भूत'** कहना चाहिए। तथा वह जीव होने से जीता है, जीवत्व एवं आयुष्यकर्म का अनुभव करता है, इसलिए उसे **'जीव'** कहना चाहिए। वह शुभ और अशुभ कर्मों से सम्बद्ध है, इसलिए उसे **'सत्व'** कहना चाहिए। वह तिक्त (तीखा), कटु, कषाय (कसैला), खट्टा और मीठा, इन रसों का वेत्ता (ज्ञाता) है, इसलिए उसे **'विज्ञ'** कहना चाहिए, तथा वह सुख–दु ख का वेदन (अनुभव) करता है,

इसलिए उसे 'वेद' कहना चाहिए। इस कारण गौतम ! पूर्वोक्त निर्ग्रन्थ के जीव को 'प्राण' यावत्-'वेद' कहा जा सकता है।

[Q. 2] *Bhante* ! What should the aforesaid ascetic be called ?

[Ans.] Gautam ! He may be called *praan*, he may be called *bhoot*, he may be called *jiva*, he may be called *satva*, he may be called *vijna*, he may be called *veda* and he may also be called *praan, bhoot, jiva, satva, vijna* and *veda* (all together)

[Q.] *Bhante* ! What is the reason that he may be called *praan*... and so on up to .. *veda* ?

[Ans.] Gautam ! He may be called *praan* because he breathes-in and breathes-out as well as inhales and exhales. He may be called *bhoot* because (as soul) he existed in the past, exists at present and will exist in the future He may be called *jiva* because he lives, experiences the state of existence as a living being and the *karmas* determining life-span. He may be called *satva* because he is associated with noble and ignoble *karmas*. He may be called *vijna* because he knows and distinguishes tastes including bitter (*tikt*), pungent (*katu*), astringent (*kashaya*), sour (*khatta*) and sweet (*meetha*) He may be called *veda* because he experiences happiness and misery This is the reason, Gautam ! The aforesaid ascetic may be called *praan* and so on up to... *veda*.

९. [प्र. १] मडाई णं भंते ! नियंठे निरुद्धभवे निरुद्धभवपवंचे जाव निट्ठियट्ठकरणिज्जे णो पुणरवि इत्तत्थं हव्वमागच्छति ?

[उ.] हंता, गोयमा ! मडाई णं नियंठे जाव नो पुणरवि इत्थत्थं हव्वमागच्छति।

[प्र. २] से णं भंते ! किं ति वत्तव्वं सिया ?

[उ.] गोयमा ! सिद्धे त्ति वत्तव्वं सिया, बुद्धे त्ति वत्तव्वं सिया, मुत्ते त्ति वत्तव्वं सिया, पारगए त्ति व., परंपरगए त्ति व., सिद्धे बुद्धे मुत्ते परिनिव्वुडे अंतकडे सव्वदुक्खप्पहीणे त्ति वत्तव्वं सिया।

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ, संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरति।

९. [प्र. १] भगवन् ! जिसने ससार का निरोध किया है, जिसने ससार के प्रपंच का निरोध किया है, यावत् जिसने अपना कार्य सिद्ध कर लिया है, ऐसा मृतादी (प्रासुकभोजी) अनगार क्या फिर मनुष्यभव आदि भवों को प्राप्त नही होता है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! पूर्वोक्त स्वरूप वाला निर्ग्रन्थ अनगार फिर मनुष्यभव आदि भवो को प्राप्त नहीं होता।

[प्र. २] भगवन् ! पूर्वोक्त स्वरूप वाले निर्ग्रन्थ के जीव को किस शब्द से कहना चाहिए ?

[उ.] गौतम ! पूर्वोक्त स्वरूप वाले निर्ग्रन्थ को 'सिद्ध' कहा जा सकता है, 'बुद्ध' कहा जा सकता है, 'मुक्त' कहा जा सकता है, 'पारगत' (संसार के पार पहुँचा हुआ) कहा जा सकता है, 'परम्परागत' (अनुक्रम से संसार के पार पहुँचा हुआ) कहा जा सकता है। उसे सिद्ध, बुद्ध, मुक्त, परिनिर्वृत, अन्तकृत् एव सर्वदु:खप्रहीण कहा जा सकता है।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है'; यों कहकर भगवान गौतम स्वामी श्रमण भगवान महावीर को वन्दना-नमस्कार करके फिर संयम और तप से अपनी आत्मा को भावित करते हुए विचरण करते है।

9. [Q. 1] *Bhante* ! Does a *mritadi* (alms eating, one who eats only *achitt* and faultless food) ascetic, who has eliminated rebirth, who has eliminated vagaries of life . and so on up to , who has accomplished his mission, not get reborn again as human and other beings ?

[Ans.] Yes, Gautam ! A *mritadi* ascetic as described here does not get reborn again as human and other beings.

[Q. 2] *Bhante* ! What should the aforesaid ascetic be called ?

[Ans.] Gautam ! He may be called *Siddha* (perfected one), he may be called *Buddha* (enlightened one), he may be called *Mukta* (liberated one), he may be called *Paaragat* (one who has reached across the ocean of rebirths), he may be called *Paramparagat* (who has gradually crossed the ocean of rebirths), and he may also be called *Siddha, Buddha, Mukta, Paaragat* and *Paramparagat* (all together)

"*Bhante* ! Indeed that is so Indeed that is so " With these words . and so on up to. ascetic Gautam resumed his activities

स्कन्दक परिव्राजक SKANDAK PARIVRAJAK

१०. तए णं समणे भगवं महावीरे रायगिहाओ नगराओ गुणसिलाओ चेइयाओ पडिनिक्खमइ, पडिनिक्खमित्ता बहिया जणवयविहारं विहरइ।

११. तेणं कालेणं तेणं समएणं कयंगला नामं नयरी होत्था। वण्णओ। तीसे णं कयंगलाए नयरीए बहिया उत्तरपुरत्थिमे दिसीभाए छत्तपलासए नामं चेइए होत्था। वण्णओ। तए णं समणे भगवं महावीरे उप्पण्णनाण-दंसणधरे जाव समोसरणं। परिसा निगच्छति।

१०. एक समय श्रमण भगवान महावीर स्वामी राजगृह नगर के गुणशील चैत्य (उद्यान) से विहार कर अन्य जनपदो मे विचरने करने लगे।

११. उस काल उस समय में कृतंगला नाम की नगरी थी। उसका वर्णन औपपातिकसूत्र के अनुसार है। उस कृतंगला नगरी के बाहर उत्तर-पूर्व दिशा के मध्य (ईशानकोण) में छत्रपलाशक नाम का चैत्य था। चैत्य वर्णन औपपातिकसूत्र के अनुसार है। वहाँ किसी समय केवलज्ञान-केवलदर्शन के धारक श्रमण भगवान महावीर स्वामी पधारे। यावत्-भगवान का समवसरण लगा। परिषद् धर्मोपदेश सुनने के लिए गई।

10. Once Shraman Bhagavan Mahavir left Gunashila Chaitya in Rajagriha city and moved about in other inhabited areas.

11. During that period of time there was a city called Kritangala. Description as in *Aupapatik Sutra*. In the north-eastern direction outside the city there was a garden called Chhatrapalashak. Description of the *Chaitya* as in *Aupapatik Sutra*. Endowed with *Keval-jnana* and *Keval-darshan*, Bhagavan Mahavir arrived there... and so on up to... *Bhagavan* arrived at *Samavasaran* (divine assembly). People came out to attend.

१२. तीसे णं कयंगलाए नयरीए अदूरसामंते सावत्थी नामं नयरी होत्था। वण्णओ। तत्थ णं सावत्थीए नयरीए गद्दभालस्स अंतेवासी खंदए नामं कच्चायणसगोत्ते परिव्वायगे परिवसइ, रिउव्वेद-जजुव्वेद-सामवेद-अथव्वणवेद इतिहासपंचमाणं निघंटुछट्ठाणं चउण्हं वेदाणं संगोवंगाणं सरहस्साणं सारए वारए पारए सडंगवी सट्ठितंतविसारए संखाणे सिक्खाकप्पे वागरणे छंदे निरुत्ते जोतिसामयणे अन्नेसु य बहूसु बंभण्णएसु परिव्वायएसु य नयेसु सुपरिनिट्ठिए यावि होत्था।

१२. उस कृतंगला नगरी के निकट श्रावस्ती नगरी थी। उस श्रावस्ती नगरी में गर्दभाल नामक परिव्राजक का शिष्य कात्यायनगोत्रीय स्कन्दक नाम का परिव्राजक (तापस) रहता था। वह ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद, इन चार वेदो, पाँचवें इतिहास (पुराण), छठे निघण्टु नामक कोश का तथा अगो-उपागो सहित वेदों का सारक (स्मरण कराने वाला-पाठक), वारक (अशुद्ध पाठ बोलने से रोकने वाला), धारक (पढे हुए वेदादि को धारण करने वाला), पारक (वेदादि शास्त्रों का पारगामी), वेद के छह अगो का वेत्ता था। वह षष्टितंत्र (साख्यशास्त्र) मे विशारद था, वह गणितशास्त्र, शिक्षाशास्त्र, व्याकरणशास्त्र, छन्दशास्त्र, निरुक्त (व्युत्पत्ति) शास्त्र और ज्योतिषशास्त्र, इन सब शास्त्रों में तथा दूसरे बहुत से ब्राह्मण और परिव्राजक-सम्बन्धी नीति और दर्शनशास्त्रो मे भी अत्यन्त निष्णात था।

12. Not far from the city of Kritangala was a city called Shravasti. In Shravasti lived a *Parivrajak* (one who renounces everything and takes to peripatetic life) named Skandak He belonged to Katyayan clan (*gotra*) and was a disciple of *Parivrajak* Gardhabhal He was a reciter (*saarak*), amender (*vaarak*), recollector (*dhaarak*) and expert of four *Vedas* namely *Rigveda, Yajurveda, Saamveda, Atharvaveda,* fifth history (*Purana*), sixth *Nighantu* (*Vedic* lexicon) and all supplemental works on the *Vedas*. He was a scholar of six auxiliary parts of the *Vedas*. He was a master of *Shashtitantra* (*Sankhya* philosophy). He was also an accomplished

scholar of *Ganit Shastra* (mathematics), *Shiksha Shastra* (education), *Kalp* (rituals), *Vyakaran Shastra* (grammar), *Chhanda Shastra* (poetics or prosody), *Nirukta Shastra* (etymology) and *Jyotish Shastra* (astrolgoy) besides many other ethical and philosophical works related to Brahmins and *Parivrajaks*

१३. तत्थ णं सावत्थीए नयरीए पिंगलए नामं नियंठे वेसालियसावए परिवसइ। तए णं से पिंगलए णामं णियंठे वेसालियसावए अण्णदा कयाइं जेणेव खंदए कच्चायणसगोत्ते तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता खंदगं कच्चायणसगोत्तं इणमक्खेवं पुच्छे–मागहा ! किं सअंते लोए, अणंते लोए १, सअंते जीवे अणंते जीवे २, सअंता सिद्धी अणंता सिद्धी ३, सअंते सिद्धे अणंते सिद्धे ४, केण वा मरणेणं मरमाणे जीवे वड्ढति वा हायति वा ५ ? एतावं ताव आयक्खाहि। वुच्चमाणे एवं।

१३. उसी श्रावस्ती नगरी मे वैशालिक श्रावक–(भगवान महावीर के वचनो को सुनने वाला) पिगल नामक निर्ग्रन्थ था। एकदा वह वैशालिक श्रावक पिगल नामक निर्ग्रन्थ किसी दिन जहाँ कात्यायनगोत्रीय स्कन्दक परिव्राजक रहता था, उसके पास आया और उसने आक्षेपपूर्वक (सन्देह निवारण हेतु) कात्यायनगोत्रीय स्कन्दक से पूछा–'मागध ! (मगधदेश मे जन्मे हुए)', (१) लोक सान्त (अन्त वाला) है या अनन्त (अन्तरहित) है ? (२) जीव सान्त है या अनन्त है ? (३) सिद्धि सान्त है या अनन्त है ? (४) सिद्ध सान्त है या अनन्त है ? (५) किस मरण से मरता हुआ जीव ससार बढाता है और किस मरण से मरता हुआ जीव ससार घटाता है ? इतने प्रश्नो का उत्तर दो (कहो)।

13. In Shravasti also lived a *Vaishalik Shravak* (a person profoundly devoted to the words of Bhagavan Mahavir) named ascetic Pingal One day that *Vaishalik Shravak* ascetic Pingal came where *Parivrajak* Skandak of Katyayan clan lived and inquisitively asked—O Maagadh (Magadh born) ! (1) Is the *Lok* (occupied space) with or without limit ? (2) Are the souls (*jiva*) with or without limit ? (3) Is the state of *Siddhi* (perfection or liberation) with or without limit ? (4) Are the *Siddhas* (perfected or liberated souls) with or without limit ? (5) By what kind of death a dying being increases the cycles of rebirth (*samsar*) and by what kind of death a dying being reduces the cycles of rebirth (*samsar*) ? Please answer these questions

१४. तए णं से खंदए कच्चायणसगोत्ते पिंगलएणं णियंठेणं वेसालीसावएणं इणमक्खेवं पुच्छिए समाणे संकिए कंखिए वितिगिंछिए भेदसमावन्ने कलुससमावन्ने णो संचाएइ पिंगलयस्स नियंठस्स वेसलियसावयस्स किंचि वि पमोक्खमक्खाइउं, तुसिणीए संचिट्ठइ।

१४. इस प्रकार उस कात्यायनगोत्रीय स्कन्दक तापस से वैशालिक श्रावक पिगल निर्ग्रन्थ ने पूर्वोक्त प्रश्न पूछे, तब स्कन्दक तापस शकाग्रस्त हुआ, (इन प्रश्नों के उत्तर कैसे दूँ, मुझे इन प्रश्नो का उत्तर कैसे आयेगा ? इस प्रकार की) कांक्षा (मेरा उत्तर ठीक होगा या नही) उत्पन्न हुई; विचिकित्सा उत्पन्न हुई

(कि अब मै जो उत्तर दूँ, उससे प्रश्नकर्ता को सन्तोष होगा या नहीं ?); उसकी बुद्धि में भेद उत्पन्न हुआ (कि मैं क्या करूँ ?); उसके मन में कालुष्य (क्षोभ) उत्पन्न हुआ (कि अब मैं तो इस विषय में कुछ भी नहीं जानता), इस कारण वह तापस, वैशालिक श्रावक पिंगल निर्ग्रन्थ के प्रश्नों का कुछ भी उत्तर (प्रमोक्ष–प्रश्नरूपी बंधन से मुक्त होने का उपाय) नहीं सूझने पर चुपचाप रह गया।

14. When *Vaishalik Shravak* ascetic Pingal asked the aforesaid questions to *Parivrajak* Skandak of Katyayan clan, the latter was filled with *shanka* (doubt as to how to find answers to these questions and how to reply ?), *kanksha* (apprehension that the answers will be correct or not ?), *vichikitsa* (incredulity that the answer will satisfy the inquirer or not ?), *bhed* (disjunction as to what to do and what not ?) and *kalushya* (distress that he was ignorant on the subject). When he failed to find any solution (*pramoksh*) to the problem he faced, that *Parivrajak* gave no reply to *Vaishalik Shravak* ascetic Pingal's questions and remained silent.

१५. तए णं से पिंगलए नियंठे वेसालीसावए खंदयं कच्चायणसगोत्तं दोच्चं पि तच्चं पि इणमक्खेवं पुच्छे–मागहा ! किं सअंते लोए जाव केण वा मरणेणं मरमाणे जीवे वड्ढइ वा हायति वा ? एतावं ताव आइक्खाहि वुच्चमाणे एवं।

१५. इसके पश्चात् उस वैशालिक श्रावक पिंगल निर्ग्रन्थ ने कात्यायनगोत्रीय स्कन्दक परिव्राजक से दो बार, तीन बार भी उन्हीं प्रश्नो को पूछा कि–मागध ! लोक सान्त है या अनन्त ? यावत्–किस मरण से मरने से जीव का ससार बढता या घटता है ? इतने प्रश्नों का उत्तर दो।

15. Then *Vaishalik Shravak* ascetic Pingal repeated the aforesaid questions to *Parivrajak* Skandak of Katyayan clan two-three times— O Maagadh (Magadh born) ! Is the *Lok* with or without limit ?.. and so on up to . by what kind of death a dying being expands the cycles of rebirth (*samsar*) and by what kind of death a dying being reduces the cycles of rebirth (*samsar*) ? Please answer these questions.

१६. तए णं से खंदए कच्चाणसगोत्ते पिंगलएणं नियंठेणं वेसालीसावएणं दोच्चं पि तच्चं पि इणमक्खेवं पुच्छिए समाणे संकिए कंखिए वितिगिंछिए भेदसमावण्णे कलुससमावन्ने नो संचाएइ पिंगलयस्स नियंठस्स वेसालिसावयस्स किंचि वि पमोक्खमक्खाइउं, तुसिणीए संचिट्ठइ।

१६. जब वैशालिक श्रावक पिगल निर्ग्रन्थ ने कात्यायनगोत्रीय स्कन्दक परिव्राजक से दो–तीन बार पुन. उन्हीं प्रश्नो को पूछा तो वह पुन· पूर्ववत् शकित, काक्षित, विचिकित्साग्रस्त, भेदसमापन्न तथा कालुष्य को प्राप्त हुआ, किन्तु वैशालिक श्रावक पिगल निर्ग्रन्थ के प्रश्नों का कुछ भी उत्तर न दे सका। अत चुप होकर रह गया।

16. When *Vaishalik Shravak* ascetic Pingal again repeated the aforesaid questions to *Parivrajak* Skandak of Katyayan clan two-three times, the latter was filled with *shanka, kanksha, vichikitsa, bhed* and *kalushya*. He failed to reply to *Vaishalik Shravak* ascetic Pingal's questions and remained silent

स्कन्दक का भगवान की सेवा में आगमन SKANDAK APPROACHES BHAGAVAN

१७. तए णं सावत्थीए नयरीए सिंघाडग जाव महापहेसु महया जणसम्मद्दे इ वा जणवूहे इ वा परिसा निग्गच्छइ।

तए णं तस्स खंदयस्स कच्चायणसगोत्तस्स बहुजणस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म इमेयारूवे अज्झत्थिए चिंतिए पत्थिए मणोगए संकप्पे समुप्पज्जित्था–'एवं खलु समणे भगवं महावीरे, कयंगलाए नयरीए बहिया छत्तपलासए चेइए सजंमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ। तं गच्छामि णं, समणं भगवं महावीरं वंदामि नमंसामि सेयं खलु मे समणं भगवं महावीरं वंदित्ता णमंसित्ता सक्कारेत्ता सम्माणित्ता कल्लाणं मंगलं देवयं चेइयं पज्जुवासित्ता इमाइं च णं एयारूवाइं अट्ठाइं हेऊइं पसिणाइं कारणाइं वागरणाइं पुच्छित्तए' त्ति कट्टु।

एवं संपेहेइ, संपेहित्ता जेणेव परिव्वायावसहे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता तिदंडं च कुंडियं च कंचणियं च करोडियं च भिसियं च केसरियं च छन्नालयं च अंकुसयं च पवित्तयं च गणेत्तियं च छत्तयं च वाहणाओ य पाउयाओ य धाउरत्ताओ य गेण्हइ, गेण्हइत्ता परिव्वायावसहाओ पडिनिक्खमइ, पडिनिक्खमित्ता तिदंड–कुंडिय–कंचणिय–करोडिय–भिसिय–केसरिय–छन्नालय–अंकुसय–पवित्तय–गणेत्तियहत्थगए छत्तोवाहणसंजुत्ते धाउरत्तवत्थपरिहिए सावत्थीए नगरीए मज्झंमज्झेणं निग्गच्छइ, निग्गच्छित्ता जेणेव कयंगला नगरी जेणेव छत्तपलासए चेइए जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव पहारेत्थ गमणाए।

१७. उस समय श्रावस्ती नगरी मे जहाँ तीन मार्ग, चार मार्ग और बहुत से मार्ग मिलते हैं, वहाँ तथा महापथो मे जनता की भारी भीड समूह रूप में चल रही थी, लोग इस प्रकार बाते कर रहे थे कि 'श्रमण भगवान महावीर स्वामी कृतगला नगरी के बाहर छत्रपलाशक नामक उद्यान में पधारे है।' जनता भगवान महावीर को वन्दना करने के लिए निकली। उस समय बहुत से लोगों के मुँह से भगवान महावीर के पदार्पण की बात सुनकर उस कात्यायनगोत्रीय स्कन्दक तापस के मन मे इस प्रकार का अध्यवसाय, चिन्तन, अभिलाषा एवं सकल्प उत्पन्न हुआ कि श्रमण भगवान महावीर कृतंगला नगरी के बाहर छत्रपलाशक उद्यान मे तप–संयम से अपनी आत्मा को भावित करते हुए विराजमान हैं। अतः मैं उनके पास जाऊँ, उन्हें वन्दना–नमस्कार करूँ। मेरे लिए यह श्रेयस्कर है कि मै श्रमण भगवान महावीर को वन्दना–नमस्कार करके, उनका सत्कार–सम्मान करके, उन कल्याणरूप, मगलरूप, देवरूप और चैत्यरूप भगवान महावीर स्वामी की पर्युपासना करूँ, तथा उनसे इन और इस प्रकार के अर्थों, हेतुओ, प्रश्नों, कारणो और व्याख्याओ आदि को पूछूँ।

यों पूर्वोक्त प्रकार से विचार कर वह स्कन्दक तापस, जहाँ परिव्राजकों का मठ था, वहाँ आया। वहाँ आकर त्रिदण्ड, कुण्डी, रुद्राक्ष की माला (कांचनिका), करोटिका (एक प्रकार की मिट्टी का बर्तन), भृशिका आसन, केसरिका (बर्तनों को साफ करने का कपड़ा), त्रिगड़ी (छन्नालय), अंकुशक (वृक्ष के पत्तों को एकत्रित करने के अंकुश जैसा साधन), पवित्री (अंगूठी), गणेत्रिका (कलाई में पहनने का एक प्रकार का आभूषण), छत्र (छाता), पगरखी, पादुका (खड़ाऊँ), धातु (गैरिक) से रंगे हुए वस्त्र (गेरुए कपड़े), इन सब तापस के उपकरणो को लेकर परिव्राजकों के आवसथ (मठ) से निकला। वहाँ से निकलकर त्रिदण्ड, कुण्डी रुद्राक्षमाला, करोटिका, भृशिका, केसरिका, त्रिगडी, अंकुशक, अंगूठी और गणेत्रिका, इन्हे हाथ मे लेकर, छत्र और पगरखी से युक्त होकर, तथा गेरुए वस्त्र पहनकर श्रावस्ती नगरी के मध्य मे से निकलकर जहाँ कृतगला नगरी में जहाँ छत्रपलाशक चैत्य था और जहाँ श्रमण भगवान महावीर विराजमान थे, उसी ओर प्रस्थान किया।

17. At that time a large number of people were moving around at public places like triangular courtyards (*singhatak*), crossings of three, four and more paths and on highways in Shravasti city. They were talking among themselves—Shraman Bhagavan Mahavir has arrived in Chhatrapalashak garden outside Kritangala city. People went out to pay homage to Bhagavan Mahavir.

Listening from people about the arrival of Bhagavan Mahavir, that *Parivrajak* Skandak of Katyayan clan had an ausciety (***adhyavasaya***), thought (*chintan*), desire (***abhilasha***) and resolve (***sankalp***) as follows—'Shraman Bhagavan Mahavir is staying in Chhatrapalashak garden outside Kritangala city enkindling (***bhaavit***) his soul with ascetic-discipline and austerities. Therefore, I should go to him and pay my homage and obeisance. It would be beneficial for me that, after paying him homage and obeisance, after honouring and respecting him, I should worship him, who is the embodiment of beatitude, piety, who is the god of gods and pilgrimage personified Having done that I should ask him all such meanings (***arth***), causes (***hetu***), questions (***prashna***), reasons (***kaaran***) and elaborations (*vyakhya*) etc

With these thoughts he came to the abode of *Parivrajaks*. From there he collected all the traditional paraphernalia of his holy order including—*Tridand* (trident), *Kundi* (bowl), *Kanchanika* (garland of Rudraksh), *Karotika* (earthen pot), *Bhrishika* (mattress), *Kesarika* (a piece of cloth for cleaning pots), *Trigadi* or *Chhannalika* (a wooden instrument), *Ankush* (a lancet to cut leaves), *Pavitri* (copper ring), *Ganetrika* (wrist band), *Chhatra* (umbrella), *Upanah* (shoes), *Paduka* (wooden sandals) and saffron coloured dress and came out of that abode

of *Parivrajaks*. After that carrying *Tridand, Kundi, Kanchanika, Karotika, Bhrishika, Kesarika, Trigadi, Ankush, Pavitri* and *Ganetrika* in his hands; getting equipped with *Chhatra* and *Upanah* and attiring himself in saffron coloured dress, he passed through the city of Shravasti and proceeded towards Kritangala city where Shraman Bhagavan Mahavir was stationed in Chhatrapalashak garden.

गौतम स्वामी द्वारा स्कन्दक का स्वागत WELCOME BY GAUTAM SWAMI

१८. [१] 'गोयमा !' इ समणे भगवं महावीरे भगवं गोयमं एवं वयासी—दच्छिसि णं गोयमा ! पुव्वसंगतियं।

[प्र. २] कं णं भंते ?

[उ.] खंदयं नाम।

[प्र. ३] से काहे वा ? किह वा ? केवच्चिरेण वा ?

[उ.] एवं खलु गोयमा ! तेणं कालेणं तेणं समएण सावत्थी नामं नगरी होत्था। वण्णओ। तत्थ णं सावत्थीए नगरीए गद्दभालस्स अंतेवासी खंदए णामं कच्चायणसगोत्ते परिव्वायए परिवसइ, तं चेव जाव जेणेव ममं अंतिए तेणेव पहारेत्थ गमणाए। से य अदूरागते बहुसंपत्ते अद्धाणपडिवन्ने अंतरापहे वट्टइ। अज्जेव णं दच्छिसि गोयमा।

[प्र. ४] 'भंते !' त्ति भगवं गोयमे समणं भगवं वंदइ नमंसइ, २ एवं वयासी—पहू णं भंते ! खंदए कच्चायणसगोत्ते देवाणुप्पियाणं अंतिए मुंडे भवित्ता णं अगाराओ अणगारियं पव्वइत्तए ?

[उ.] हंता, पभू।

१८. [१] तब श्रमण भगवान महावीर स्वामी ने अपने ज्येष्ठ शिष्य इन्द्रभूति अनगार को सम्बोधित करके कहा–'गौतम ! (आज) तू अपने पूर्व के साथी (पूर्वजन्म के मित्र) को देखेगा।'

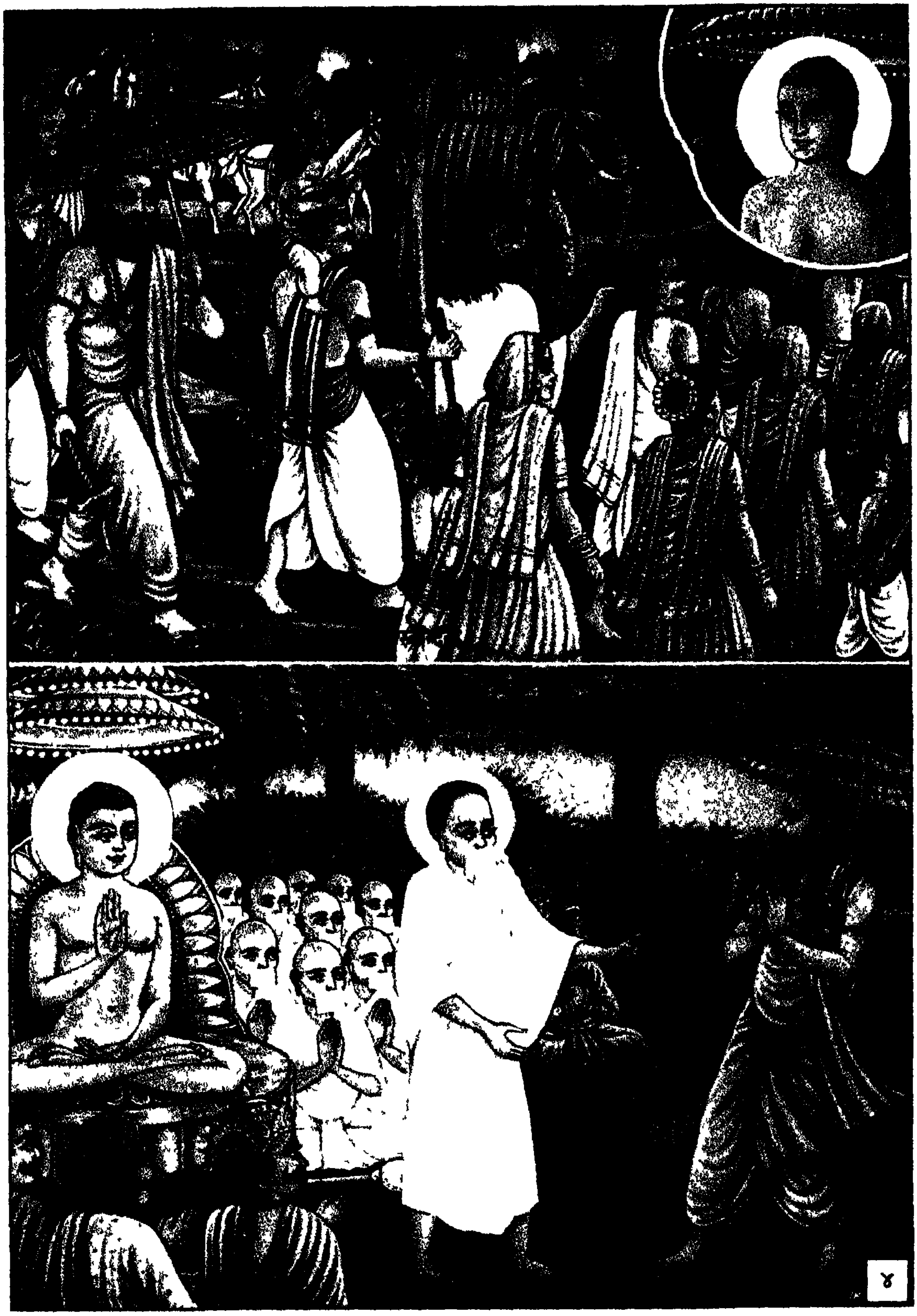
[प्र. २] 'भगवन् ! मै (आज) किसको देखूँगा ?

[उ.] गौतम ! तू स्कन्दक (नामक तापस) को देखेगा।

[प्र. ३] 'भगवन् ! मै उसे कब, किस तरह से और कितने समय बाद देखूँगा ?'

[उ.] 'गौतम ! उस काल उस समय मे श्रावस्ती नाम की नगरी थी। उस श्रावस्ती नगरी में गर्दभाल नामक परिव्राजक का शिष्य कात्यायनगोत्रीय स्कन्दक नामक परिव्राजक रहता है। इससे सम्बन्धित पूरा वृत्तान्त पहले के अनुसार जान लेना चाहिए। यावत्–उस स्कन्दक परिव्राजक ने जहाँ मै हूँ, वहाँ–मेरे पास आने के लिए सकल्प कर लिया है। वह अपने स्थान से प्रस्थान करके मेरे पास आ रहा है। वह बहुत–सा मार्ग पार करके (जिस स्थान में हम हैं उससे) अत्यन्त निकट पहुँच गया है। अभी वह मार्ग मे चल रहा है। वह बीच के मार्ग पर है। हे गौतम ! तू आज ही उसे देखेगा।'

स्कन्दक परिव्राजक



चित्र परिचय-४

Illustration No. 4

स्कन्दक परिव्राजक : भगवान के समवसरण में

(१) एक समय भगवान महावीर कृतगला नगरी के छत्रपलाश उद्यान मे पधारे। श्रावस्ती निवासी गर्दभाली ऋषि के शिष्य स्कन्दक परिव्राजक ने हजारो स्त्री पुरुषो को भगवान के दर्शन करने उद्यान की ओर जाते हुए देखा। स्कन्दक परिव्राजक भी भगवान महावीर के दर्शन करने को उत्सुक हुआ। अपने छत्र, आसन, दण्ड आदि साथ लेकर गले मे मालाएँ डाल ली मन की अनेक शकाओ का समाधान पाने के लिए भगवान के समवसरण की तरफ चला।

(२) समवसरण मे विराजित प्रभु महावीर ने गणधर गौतम से फरमाया-गौतम ! आज तुम अपने पूर्व (पूर्वजन्म) के परिचित मित्र स्कन्दक परिव्राजक को देखेगा। उससे मिलेगा।

गौतम ने पूछा-भन्ते ! कब कितने समय बाद मै उसे वहाँ देखूँगा ?

भगवान ने कहा-गौतम ! श्रावस्ती नगरी से चलकर वह शीघ्र की इस उद्यान की तरफ आ रहा है। कुछ ही समय बाद तुम उसे आते देखोगे ?

उसी समय स्कन्दक समवसरण की तरफ आता दिखाई दिया। गणधर गौतम अपने स्थान से उठकर उसके सन्मुख गये और प्रसन्न भाव के साथ बोले -हे स्कन्दक ! आओ, तुम्हारा यहा स्वागत है ! तुम्हारा आना बहुत अच्छा हुआ ! स्कन्दक भी अत्यन्त हर्षोल्लास पूर्वक अभिवन्दना करके गौतम की तरफ आगे बढता है।

-शतक २ उ. १ सूत्र १७

SKANDAK PARIVRAJAK IN BHAGAVAN'S SAMAVASARAN

(1) Once Bhagavan Mahavir arrived in Chhatrapalash Garden in Kritangala city Skandak Parivrajak, the disciple of Gardabhali Rishi of Shravasti saw thousands of men and women going to pay homage to Bhagavan Skandak Parivrajak also became eager to behold Bhagavan Mahavir He carried his umbrella, mattress, staff and put garlands on his neck He then proceeded towards Bhagavan's Samavasaran to remove numerous doubts in his mind

(2) Seated in the Samavasaran Bhagavan Mahavir said to Gautam Ganadhar—(Today) Gautam ! You are going to see and meet Skandak Parivrajak your friend (from past birth)

Gautam asked—Bhante ! When, how and after how much time will I see him ?

Bhagavan said—Gautam ! He has left Shravasti and is coming towards this garden He has come near and soon you will see him coming

Just then Skandak appeared approaching Ganadhar Gautam got up and stepped ahead to greet him with pleasure—"O Skandak ! Welcome ! A hearty welcome to you ! It is good that you have come " Skandak too greeted Gautam with joy and stepped ahead

—Shatak 2, lesson 1 Sutra 17

[प्र. ४] फिर 'हे भगवन् !' यो कहकर भगवान गौतम ने श्रमण भगवान महावीर को वन्दना-नमस्कार करके इस प्रकार पूछा-'भगवन् ! क्या वह कात्यायनगोत्रीय स्कन्दक परिव्राजक आप देवानुप्रिय के पास मुण्डित होकर आगार (घर) छोड़कर अनगार धर्म में प्रव्रजित होने मे समर्थ है ?'

[उ.] 'हाँ, गौतम ! वह अनगार धर्म मे प्रव्रजित होने मे समर्थ है।'

18. [1] Shraman Bhagavan Mahavir said to his senior disciple ascetic Indrabhuti—(Today) Gautam ! You are going to see your friend (from past birth).

[Q. 2] *Bhante* ! Whom do you mean ?

[Ans.] His name is Skandak (*Parivrajak*)

[Q. 3] *Bhante* ! When, how and after lapse of how much time will I see him ?

[Ans.] Gautam ! During that period of time there was a city named Shravasti Description (as aforesaid). In Shravasti lived a *Parivrajak* named Skandak. He belonged to Katyayan clan (*gotra*) and was a disciple of *Parivrajak* Gardhabhal Details should be read as already described... and so on up to... That Skandak *Parivrajak* has resolved to come here where I am He has left his place and is coming to me. He has covered a long distance and has come near. At this moment he is walking on the midway path O Gautam ! You are going to see him today itself.

[Q. 4] 'Bhante !' Addressing thus Gautam paid homage and obeisance to Bhagavan Mahavir and asked—'Bhante ! Is that *Parivrajak* Skandak of Katyayan clan capable of tonsuring his head, renounce his abode and become a homeless ascetic by getting initiated by you, Beloved of gods !"

[Ans.] 'Yes, Gautam ! He is capable of doing that.

१९. जावं च णं समणे भगवं महावीरे भगवओ गोयमस्स एयमट्ठं परिकहेइ तावं च से खंदए कच्चायणसगोत्ते तं देसं हव्वमागए।

१९. जब श्रमण भगवान महावीर स्वामी भगवान गौतम स्वामी से यह (पूर्वोक्त) बात कह ही रहे थे, कि इतने मे वह कात्यायनगोत्रीय स्कन्दक परिव्राजक उस स्थान में (भगवान महावीर के पास) आ पहुँचे।

19. While Shraman Bhagavan Mahavir was saying all this to Gautam Swami, *Parivrajak* Skandak of Katyayan clan arrived there (near Bhagavan Mahavir).

२०. [प्र. १] तए णं भगवं गोयमे खंदयं कच्चायणसगोत्तं अदूरआगयं जाणित्ता खिप्पामेव अब्भुट्ठेति, खिप्पामेव पच्चुवगच्छइ। जेणेव खंदए कच्चायणसगोत्ते तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता खंदयं

कच्चायणसगोत्तं एवं वयासी-"हे खंदया ! सागयं खंदया ! सुसागयं खंदया ! अणुरागयं खंदया ! सागयमणुरागयं खंदया ! से नूणं तुमं खंदया ! सावत्थीए नयरीए पिंगलएणं नियंठेणं वेसालियसावएणं इणमक्खेवं पुच्छिए 'मागहा ! किं संअते लोगे अणंते लोगे ? एवं तं चेव' जेणेव इहं तेणेव हव्वमागए। से नूणं खंदया ! अत्थे समत्थे ?

[उ.] हंता अत्थि।

[प्र. २] तए णं से खंदए कच्चायणसगोत्ते भगवं गोयमं एवं वयासी-से केस णं गोयमा ! तहारूवे नाणी वा तवस्सी वा जेणं तव एस अट्ठे मम ताव रहस्सकडे हव्वमक्खाए, जओ णं तुमं जाणसि ?

[उ.] तए णं से भगवं गोयमे खंदयं कच्चायणसगोत्तं एवं वयासी-एवं खलु खंदया ! मम धम्मायरिए धम्मोवएसए समणे भगवं महावीरे उप्पन्नणाण-दंसणधरे अरहा जिणे केवली तीयपच्चुप्पन्नमणागयवियाणए सव्वण्णू सव्वदरिसी जेणं ममं एस अट्ठे तव ताव रहस्सकडे हव्वमक्खाए, जओ णं अहं जाणामि खंदया !

[३] तए णं से खंदए कच्चायणसगोत्ते भगवं गोयमं एवं वयासी-गच्छामो णं गोयमा ! तव धम्मायरियं धम्मोवदेसयं समणं भगवं महावीरं वंदामो णमंसामो जाव पज्जुवासामो।

अहासुहं देवाणुप्पिया ! मा पडिबंधं करेह।

[४] तए णं से भगवं गोयमे खंदएणं कच्चायणसगोत्तेणं सद्धिं जेणेव समणे भगवं महावीरे तणेव पहारेत्थ गमणाए।

२०. [प्र. १] इसके पश्चात् भगवान गौतम कात्यायनगोत्रीय स्कन्दक परिव्राजक के पास आया हुआ जानकर शीघ्र अपने आसन से उठे और शीघ्र ही उसके सामने गये, और जहाँ स्कन्दक परिव्राजक था, वहाँ आये। स्कन्दक के पास आकर उससे इस प्रकार कहा-"हे स्कन्दक ! स्वागत है तुम्हारा, स्कन्दक ! तुम्हारा सुस्वागत है ! स्कन्दक ! तुम्हारा आगमन ठीक समय पर-उचित हुआ है। हे स्कन्दक ! पधारो ! आप भले पधारे !" फिर श्री गौतम स्वामी ने स्कन्दक से कहा-"स्कन्दक ! श्रावस्ती नगरी में वैशालिक श्रावक पिगलक निर्ग्रन्थ ने तुमसे इस प्रकार पूछा था कि हे मागध ! लोक सान्त है या अनन्त ? इत्यादि (पाँच प्रश्न पूछे थे।) उनके प्रश्नो से निरुत्तर होकर उत्तर पूछने के लिए यहाँ भगवान के पास आये हो। हे स्कन्दक ! कहो, यह बात सत्य है ?"

[उ.] (स्कन्दक) "हाँ, गौतम ! यह बात सत्य है।"

[प्र. २] फिर स्कन्दक परिव्राजक ने भगवान गौतम से इस प्रकार पूछा-"गौतम ! कौन ऐसा ज्ञानी और तपस्वी पुरुष है, जिसने मेरे मन की गुप्त बात (रहस्य) तुमसे शीघ्र कह दी; जिससे तुम मेरे मन की गुप्त बात को जान गये ?"

[उ.] तब भगवान गौतम ने स्कन्दक परिव्राजक से कहा-"हे स्कन्दक ! मेरे धर्मगुरु, धर्मोपदेशक, श्रमण भगवान महावीर, उत्पन्न ज्ञान-दर्शन के धारक है, अर्हन्त हैं, जिन है, केवली हैं, भूत, भविष्य

और वर्तमानकाल के ज्ञाता हैं, सर्वज्ञ–सर्वदर्शी हैं; उन्होने तुम्हारे मन में रही हुई गुप्त बात मुझे शीघ्र कही है, इसलिए स्कन्दक ! मै तुम्हारी उस गुप्त बात को जानता हूँ।'

[३] तत्पश्चात् स्कन्दक परिव्राजक ने भगवान गौतम से इस प्रकार कहा–"हे गौतम ! हम तुम्हारे धर्माचार्य, धर्मोपदेशक श्रमण भगवान महावीर स्वामी के पास चलें, उन्हें वन्दना–नमस्कार करें, यावत्–उनकी पर्युपासना करें।"

(गौतम स्वामी–) 'हे देवानुप्रिय ! जैसा तुम्हें सुख हो वैसा करो। (इस शुभ कार्य में) विलम्ब न करो।'

[४] तदनन्तर भगवान गौतम स्वामी ने स्कन्दक परिव्राजक के साथ जहाँ श्रमण भगवान महावीर स्वामी विराजमान थे, वहाँ जाने का सकल्प किया।

20. [Q. 1] Knowing that *Parivrajak* Skandak of Katyayan clan had come very near, Bhagavan Gautam got up and rushed ahead to greet him. Approaching *Parivrajak* Skandak of Katyayan clan he said—"O Skandak ! Welcome A hearty welcome to you Skandak ! Your arrival is timely and at opportune moment. O Skandak ! Please come. It is good that you have come " He then added—"Skandak ! In Shravasti, *Vaishalik Shravak* ascetic Pingal had asked you five questions including—'O Maagadh ! Is the *Lok* with or without limit ?' Failing to provide answers, you have come here to ask those questions to *Bhagavan*. O Skandak ! Tell me if it is true ?"

[Ans.] (Skandak) "Yes, Gautam ! It is true "

[Q. 2] Then Skandak *Parivrajak* asked Bhagavan Gautam—"Gautam ! Who is such enlightened sage, rich in austerities, who has at once revealed my inner thoughts to you and enabled you to know my secret musings ?"

[Ans.] Bhagavan Gautam replied to Skandak *Parivrajak*—"O Skandak ! My religious teacher and preceptor Shraman Bhagavan Mahavir is endowed with *Keval-jnana* and *Keval-darshan*. He is *Arihant, Jina* and *Kevali* (omniscient). He knows past, present and future He sees all and knows all It is he who at once told me about your inner thoughts. That is why, O Skandak ! I know your secret."

[3] Then Skandak *Parivrajak* said to Bhagavan Gautam—"Gautam ! Let us go to your religious teacher and preceptor Shraman Bhagavan Mahavir and pay him homage and obeisance... and so on up to... worship him "

(Gautam Swami) "O Beloved of gods ! Do as you please without any delay."

[4] After this Bhagavan Gautam Swami resolved to go with Skandak *Parivrajak* where Bhagavan Mahavir was seated.

भगवान द्वारा स्कन्दक का समाधान EXPLANATION BY BHAGAVAN

२१. तेणं कालेणं तेणं समए णं समणे भगवं महावीरे वियडभोई याऽवि होत्था। तए णं समणस्स भगवओ महावीरस्स वियडभोइस्स सरीरयं ओरालं सिंगारं कल्लाणं सिवं धण्णं मंगल्लं सस्सिरीयं अणलंकियविभूसियं लक्खण-वंजणगुणोववेयं सिरीए अतीव-अतीव उवसोभेमाणं चिट्ठइ।

२१. उस समय मे श्रमण भगवान महावीर व्यावृत्तभोजी (प्रतिदिन आहार करने वाले) थे। इसलिए व्यावृत्तभोजी श्रमण भगवान महावीर स्वामी का शरीर उदार (प्रधान), शृगाररूप, अतिशय शोभासम्पन्न, कल्याणरूप, धन्यरूप, मंगलरूप, बिना अलंकार के ही सुशोभित (दीप्तियुक्त), उत्तम लक्षणो (शुभ चिन्हो), व्यंजनो (तिल आदि) और गुणों से युक्त तथा शारीरिक शोभा से अत्यन्त शोभित हो रहा था।

21. During that period Shraman Bhagavan Mahavir was eating food everyday (*vyavrittabhoji*) As such, the body of *Vyavrittabhoji* Shraman Bhagavan Mahavir was noble (*udaar*), appealing and extremely graceful (*shringar*), beatific (*kalyan*), blissful (*dhanya*), auspicious (*mangal*), radiant without embellishments, endowed with noble signs (*lakshan*), marks (*vyanjan*) and attributes and it appeared exquisite with physical beauty

२२. तए णं से खंदए कच्चायणसगोत्ते समणस्स भगवओ महावीरस्स वियडभोइस्स सरीरयं ओरालं जाव अतीव-अतीव उवसोभेमाणं पासइ, पासित्ता हट्ठतुट्ठचित्तमाणंदिए नंदिए पीइमणे परमसोमणस्सिए हरिसवसविसप्पमाणहियए जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिण-पयाहिणं करेइ जाव पज्जुवासइ।

२२. तब व्यावृत्तभोजी श्रमण भगवान महावीर के उदार यावत् अतीव शोभायमान शरीर को देखकर स्कन्दक परिव्राजक को अत्यन्त हर्ष हुआ, सन्तोष हुआ एव उसका चित्त आनन्दित हुआ। वह आनन्दित, मन मे प्रीतियुक्त परम सौमनस्य प्राप्त तथा हर्ष से प्रफुल्ल हृदय होता हुआ जहाँ श्रमण भगवान महावीर विराजमान थे, वहाँ उनके निकट आया। निकट आकर श्रमण भगवान महावीर की दाहिनी ओर से प्रदक्षिणा की, यावत् पर्युपासना करने लगा। (सन्मुख बैठ गया)

22. Seeing the noble .. and so on up to.. exquisite body of *Vyavrittabhoji* Shraman Bhagavan Mahavir Skandak *Parivrajak* was extremely pleased, contented and happy. Overwhelmed with joy, intensely thrilled and exhilarated with bliss he came near the place where Shraman Bhagavan Mahavir was seated. Coming there, he went around Shraman Bhagavan Mahavir clockwise three times... and so on up to .. worshipped. (took his seat facing *Bhagavan*)

२३. [प्र.] 'खंदया !' ति समणे भगवं महावीरे खंदयं कच्चायणसगोत्तं एवं वयासी-से नूणं तुमं खंदया ! सावत्थीए नयरीए पिंगलएणं णियंठेणं वेसालियसावएणं इणमक्खेवं पुच्छिए 'मागहा ! किं सअंते लोए अणंते लोए ?' एवं ते चेव जाव जेणेव ममं अंतिए तेणेव हव्वमागए। से नूणं खंदया ! अयमट्ठे समट्ठे ?

[उ.] हंता, अत्थि।

२३. [प्र.] तत्पश्चात् 'स्कन्दक !' इस प्रकार सम्बोधित करके श्रमण भगवान महावीर ने कात्यायनगोत्रीय स्कन्दक परिव्राजक से इस प्रकार कहा-हे स्कन्दक ! श्रावस्ती नगरी में वैशालिक श्रावक पिंगल निर्ग्रन्थ ने तुमसे इस प्रकार पूछा था कि-मागध ! लोक सान्त है या अनन्त ! आदि। उसके प्रश्नो का उत्तर न दे पाने से व्याकुल होकर तुम मेरे पास (उत्तर जानने के लिए) आये हो। हे स्कन्दक ! क्या यह बात सत्य है ?

[उ.] (स्कन्दक-) 'हाँ, भगवन् ! यह बात सत्य है।'

23. [Q.] Then addressing him as 'Skandak !', Shraman Bhagavan Mahavir said to *Parivrajak* Skandak of Katyayan clan—"O Skandak ! In Shravasti, *Vaishalik Shravak* ascetic Pingal had asked you five questions including—'O Maagadh ! Is the *Lok* with or without limit ?' Failing to provide answers, you have come here to ask me those questions. O Skandak ! Tell me if it is true ?"

[Ans.] (Skandak) "Yes, *Bhagavan* ! It is true."

लोक : सान्त या अनन्त **LOK : WITH OR WITHOUT LIMIT**

२४. [१] जे वि य ते खंदया ! अयमेयारूवे अज्झत्थिए चिंतिए पत्थिए मणोगए संकप्पे समुप्पज्जित्था-किं सअंते लोए, अणंते लोए ? तस्स वि य णं अयमट्ठे-एवं खलु मए खंदया ! चउव्विहे लोए पण्णत्ते, तं जहा-दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ। दव्वओ णं एगे लोए सअंते। खेत्तओ णं लोए असंखेज्जाओ जोयणकोडाकोडीओ आयाम-विक्खंभेणं, असंखेज्जाओ जोयणकोडाकोडीओ परिक्खेवेणं पण्णत्ता, अत्थि पुण से अंते। कालओ णं लोए ण कयावि न आसी न कयावि न भवति न कयावि न भविस्सति, भुविं च भवइ य भविस्सइ य धुवे णियए सासए अक्खए अव्वए अवट्ठिए णिच्चे, णत्थि पुण से अंते। भावओ णं लोए अणंता वण्णपज्जवा गंध-रस-फासपज्जवा, अणंता संठाणपज्जवा, अणंता गरुय-लहुयपज्जवा, अणंता अगरुय-लहुयपज्जवा, नत्थि पुण से अंते। से त्तं खंदगा ! दव्वओ लोए सअंते, खेत्तओ लोए सअंते, कालओ लोए अणंते, भावओ लोए अणंते।

२४. [१] (भगवान-) हे स्कन्दक ! तुम्हारे मन में जो इस प्रकार का अध्यवसाय, चिन्तन, अभिलाषा एवं संकल्प, समुत्पन्न हुआ था कि 'लोक सान्त है, या अनन्त ?' उसका यह उत्तर है-हे स्कन्दक ! मैंने (चार दृष्टिकोणो से) चार प्रकार का लोक बताया है, वह इस प्रकार है-(१) द्रव्यलोक, (२) क्षेत्रलोक, (३) काललोक, और (४) भावलोक। (१) उन चारों मे से द्रव्य से लोक एक है, और

अन्त वाला है, (२) क्षेत्र से लोक असंख्य कोडाकोडी योजन तक लम्बा-चौडा है, असंख्य कोडाकोडी योजन की परिधि वाला है, तथा वह अन्त-सहित है, (३) काल से ऐसा कोई काल नही था, जिसमें लोक नही था, ऐसा कोई काल नहीं है, जिसमें लोक नही है, ऐसा कोई काल नहीं होगा, जिसमे लोक न होगा। लोक सदा था, सदा है और सदा रहेगा। लोक ध्रुव, नियत, शाश्वत, अक्षय, अव्यय, अवस्थित और नित्य है। उसका अन्त नही है। (४) भाव से लोक अनन्त वर्णपर्यायरूप, गन्धपर्यायरूप, रसपर्यायरूप और स्पर्शपर्यायरूप है। इसी प्रकार अनन्त संस्थानपर्यायरूप, अनन्त गुरु-लघुपर्यायरूप एवं अनन्त अगुरु-लघुपर्यायरूप है। उसका अन्त नहीं है। इस प्रकार हे स्कन्दक ! द्रव्यलोक अन्त-सहित है, क्षेत्रलोक अन्त-सहित है, काललोक अन्तरहित है और भावलोक भी अन्तरहित है। अतएव लोक अन्तसहित भी है और अन्त-रहित भी है।

24. [1] (*Bhagavan—*) Skandak ! Your mind is plagued with doubt (*adhyavasaya*), thought (*chintan*), curiosity (*abhilasha*), and inquisitiveness (*sankalp*) that 'Is the *Lok* with or without limit ?' In this regard I say—'O Skandak ! As I have said *Lok* is of four kinds (viewed from four standpoints)—(1) *Dravyalok*, (2) *Kshetralok*, (3) *Kaal-lok* and (4) *Bhaavalok*. (1) In context of substance (*dravya*) *Lok* is one and has a limit. (2) In context of area (*kshetra*) *Lok* is innumerable *Kodakodi* (hundred trillion or 1014) *Yojans* in length and width, innumerable *Kodakodi Yojan* in circumference and has a limit (3) In context of time (*kaal*) there was no such time when *Lok* did not exist, there is no such time when *Lok* does not exist, and there will be no such time when *Lok* will not exist. *Lok* existed, exists and will exist always. Therefore it is *dhruva* (constant), *niyat* (fixed), *shashvat* (eternal), *akshaya* (imperishable), *avyaya* (non-expendable), *avasthit* (steady) and *nitya* (perpetual) It is without limit. (4) In context of state (*bhaava*) *Lok* has infinite alternatives of colour, odour, taste and touch. In the same way it has infinite alternatives of structure, grossness-subtleness (*guru-laghu paryaya*) and non-grossness-subtleness (*aguru-laghu paryaya*). It is without a limit Thus Skandak ! *Dravyalok* is with limit, *Kshetralok* is with limit, *Kaal-lok* is without limit and *Bhaavalok* too is without limit. Therefore *Lok* is with limit as well as without limit

जीव : सान्त या अनन्त **JIVA : WITH OR WITHOUT LIMIT**

[२] जे वि य ते खंदया ! जाव सअंते जीवे, अणंते जीवे ? तस्स वि य णं अयमट्ठे—एवं खलु जाव दव्वओ णं एगे जीवे सअंते। खेत्तओ णं जीवे असंखेज्जपएसिए असंखेज्जपएसोगाढे, अत्थि पुण से अंते। कालओ णं जीवे न कयावि न आसि जाव निच्चे, नत्थि पुणाइ से अंते। भावओ णं जीवे अणंता णाणपज्जवा अणंता दंसणपज्जवा अणंता चरित्तपज्जवा अणंता गरुयलहुयपज्जवा अणंता

अगरुयलहुयपज्जवा, नत्थि पुण से अंते। से त्तं दव्वओ जीवे सअंते, खेत्तओ जीवे सअंते, कालओ जीवे अणंते, भावओ जीवे अणंते।

[२] हे स्कन्दक ! तुम्हारे मन में यह विकल्प उठा था, कि यावत्–'जीव सान्त है या अन्तरहित है?' उसका भी अर्थ (स्पष्टीकरण) इस प्रकार है–'यावत् (१) द्रव्य से एक जीव अन्त-सहित है। (२) क्षेत्र से–जीव असंख्य प्रदेश वाला है और असंख्य प्रदेशों का अवगाहन किये हुए है, अतः वह अन्त-सहित है। (३) काल से–ऐसा कोई काल नहीं था, जिसमें जीव न था, यावत्–जीव नित्य है, अन्तरहित है। (४) भाव से–जीव अनन्त ज्ञानपर्यायरूप है, अनन्त दर्शनपर्यायरूप है, अनन्त चारित्रपर्यायरूप है, अनन्त गुरु-लघुपर्यायरूप है, अनन्त-अगुरु-लघुपर्यायरूप है और उसका अन्त नहीं (अन्तरहित) है। इस प्रकार द्रव्य से और क्षेत्र से जीव अन्त-सहित है, तथा काल और भाव की अपेक्षा जीव अन्तरहित है। अतः हे स्कन्दक ! जीव अन्त-सहित भी है और अन्तरहित भी है।'

[2] Skandak ! Your mind is plagued with the doubt.. and so on up to... that 'Are the souls with or without limit ?' In this regard the answer follows the same pattern—'... and so on up to. (1) In context of substance (*dravya*) one *Jiva* (soul as a living being) has a limit. (2) In context of area (*kshetra*) *Jiva* (soul) has innumerable space-points (*pradesh*) and it occupies innumerable space-points (*pradesh*), thus it has a limit (3) In context of time (*kaal*) there was no such time when *Jiva* did not exist, ... and so on up to... *nitya* (perpetual). It is without limit (4) In context of state (*bhaava*) *Jiva* has infinite alternatives of knowledge (*jnana*), perception/faith (*darshan*) and conduct (*chaaritra*). In the same way it has infinite alternatives of grossness-subtleness (*guru-laghu paryaya*) and non-grossness-subtleness (*aguru-laghu paryaya*) It is without a limit. Thus Skandak ! In context of *Dravya* and *Kshetra Jiva* (soul) is with limit, and in context of *Kaal* (time) and *Bhaava* (state) *Jiva* (soul) is without limit. Therefore *Jiva* (soul) is with limit as well as without limit

सिद्धि-विषयक प्रश्न QUESTION ABOUT SIDDHI

[३] जे वि य ते खंदया ! पुच्छा। दव्वओ णं एगा सिद्धी सअंता; खेत्तओ णं सिद्धी पणयालीसं जोयणसयसहस्साइं आयाम-विक्खंभेणं, एगा जोयणकोडी बायालीसं च जोयणसयसहस्साइं तीसं च जोयणसहस्साइं दोन्नि य अउणापन्ने जोयणसए किंचि विसेसाहिए परिक्खेवेणं, अत्थि पुण से अंते; कालओ णं सिद्धी न कयावि न आसि; भावओ य जहा लोयस्स तहा भाणियव्वा। तत्थ दव्वओ सिद्धी सअंता, खेत्तओ सिद्धी सअंता, कालओ सिद्धी अणंता, भावओ सिद्धी अणंता।

[३] हे स्कन्दक ! तुम्हारे मन में जो यह विकल्प उठा था कि सिद्धि (सिद्धशिला) सान्त है या अन्तरहित है? उसका भी यह अर्थ (समाधान) है–हे स्कन्दक ! मैने चार प्रकार की सिद्धि बताई है–

द्रव्यसिद्धि, क्षेत्रसिद्धि, कालसिद्धि और भावसिद्धि। (१) द्रव्य से सिद्धि एक है, अतः अन्त-सहित है। (२) क्षेत्र से सिद्धि ४५ लाख योजन की लम्बी-चौडी है, तथा एक करोड बयालीस लाख तीस हजार दो सौ उनचास योजन से कुछ विशेषाधिक (झाझेरी) है, अत. अन्त-सहित है। (३) काल से ऐसा कोई काल नहीं था, जिसमें सिद्धि नहीं थी, ऐसा कोई काल नही है, जिसमे सिद्धि नहीं है तथा ऐसा कोई काल नहीं होगा, जिसमें सिद्धि नही रहेगी। अतः वह नित्य है, अन्तरहित है। (४) भाव से सिद्धि-जैसे भावलोक के सम्बन्ध मे कहा था, उसी प्रकार है। (अर्थात् वह अनन्त वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्श, गुरु-लघु, अगुरु-लघु, पर्यायरूप है तथा अन्तरहित है) इस प्रकार द्रव्यसिद्धि और क्षेत्रसिद्धि अन्त-सहित है तथा कालसिद्धि और भावसिद्धि अन्तरहित है। इसलिए हे स्कन्दक ! सिद्धि अन्त-सहित भी है और अन्तरहित भी है।

[3] Skandak ! Your mind ıs plagued with the doubt that '*Sıddhi* ıs with or wıthout lımit ?' In this regard the answer follows the same pattern— 'O Skandak ! I have said *Sıddhı* (state and abode of perfection or lıberation) ıs of four kınds (viewed from four stand-points)— *Dravyasıddhı, Kshetrasıddhı, Kaal-sıddhı* and *Bhaavasiddhı.* (1) In context of substance (*dravya*) *Sıddhı* (abode of *Siddhas*) is one and has a lımıt (2) In context of area (*kshetra*) *Sıddhı* is 4.5 mıllion *Yojans* in length and width, slightly more than 14.2 millıon thirty thousand two hundred forty nine *Yojans* in circumference and thus has a limıt (3) In context of time (*kaal*) there was no such time when *Sıddhı* dıd not exıst, there ıs no such tıme when *Sıddhı* does not exıst, and there will be no such tıme when *Sıddhı* will not exist Thus ıt ıs without lımıt. (4) In context of state (*bhaava*) *Sıddhı* ıs stated to be in detaıls as mentioned about *Lok.* (ıt has ınfinite alternatıves of colour, odour, taste, touch, structure, grossness-subtleness and non-grossness-subtleness Thus it is without a limit. Thus Skandak ! *Dravyasıddhı* ıs with limıt, *Kshetrasıddhı* is with limit, *Kaal-sıddhı* is wıthout lımit and *Bhaavasıddhı* too is without limıt. Therefore *Sıddhı* ıs with limit as well as wıthout lımıt.

[४] जे वि य ते खंदया ! जाव किं अणंते सिद्धे ? तं चेव जाव दव्वओ णं एगे सिद्धे सअंते; खेत्तओ णं सिद्धे असंखेज्जपएसिए असंखेज्जपएसोगाढे, अत्थि पुण से अंते; कालओ णं सिद्धे सादीए अपज्जवसिए, नत्थि पुण से अंते; भावओ सिद्धे अणंता णाणपज्जवा, अणंता दंसणपज्जवा जाव अणंता अगरुयलहुयपज्जवा, नत्थि पुण से अंते। से त्तं दव्वओ सिद्धे सअंते, खेत्तओ सिद्धे सअंते, कालओ सिद्धे अणंते, भावओ सिद्धे अणंते।

[४] हे स्कन्दक ! फिर तुम्हे यह सकल्प-विकल्प उत्पन्न हुआ था कि सिद्ध अन्त-सहित है या अन्तरहित है ? उसका अर्थ (समाधान) भी इस प्रकार है- (यहाँ सब कथन पूर्ववत् जानना चाहिए) यावत्-द्रव्य से-एक सिद्ध अन्त-सहित है। क्षेत्र से-सिद्ध असख्यप्रदेश वाले तथा असख्य आकाश-प्रदेशों का अवगाहन किये हुए है, अत' अन्त-सहित है। काल से-(कोई भी एक) सिद्ध आदि-सहित और अन्तरहित

है। भाव से–सिद्ध अनन्त ज्ञानपर्यायरूप हैं, अनन्त दर्शनपर्यायरूप हैं, यावत्–अनन्त–अगुरु–लघुपर्यायरूप हैं तथा अन्तरहित हैं। अर्थात्–द्रव्य से और क्षेत्र से सिद्ध अन्त–सहित हैं तथा काल से और भाव से सिद्ध अन्तरहित हैं। इसलिए हे स्कन्दक ! सिद्ध अन्त–सहित भी हैं और अन्तरहित भी हैं।

[4] Skandak ! Further, your mind is plagued with the doubt, 'Are the *Siddhas* with or without limit ?' In this regard the answer follows the same pattern—Read details as already stated... and so on up to... In context of substance one *Siddha* (liberated soul) has a limit. In context of area *Siddha* (soul) has innumerable space-points and it occupies innumerable space-points, thus it has a limit. In context of time (*kaal*) any single *Siddha* is with a beginning and without an end. It is without limit In context of state *Siddha* has infinite alternatives of knowledge (*jnana*), perception/faith (*darshan*)... and so on up to... non-grossness-subtleness. So it is without a limit. Thus in context of *Dravya* and *Kshetra Siddha* (soul) is with limit, and in context of *Kaal* (time) and *Bhaava* (state) *Siddha* (soul) is without limit Therefore, O Skandak ! *Siddha* liberated (soul) is with limit as well as without limit.

बालमरण–पण्डितमरण BAAL-MARAN AND PUNDIT-MARAN

२५. जे वि य ते खंदया ! इमेयारूवे अज्झत्थिए चिंतिए जाव समुप्पज्जित्था केण वा मरणेणं मरमाणे जीवे वड्ढति वा हायति वा ? तस्स वि य णं अयमट्ठे–एवं खलु खंदया ! मए दुविहे मरणे पण्णत्ते, तं जहा–बालमरणे य पंडितमरणे य ?

२५. पुनः हे स्कन्दक ! तुम्हें जो इस प्रकार का अध्यवसाय, चिन्तन, यावत् संकल्प उत्पन्न हुआ था कि कौन से मरण से मरते हुए जीव का संसार घटता है ? उसका भी अर्थ (समाधान) यह है–हे स्कन्दक ! मैने दो प्रकार के मरण बतलाये है। यथा–बालमरण और पण्डितमरण।

25. Skandak ! Lastly, your mind is plagued with the doubt. . and so on up to . that 'By what kind of death a dying being expands or reduces the cycles of rebirth (*samsar*) ? In this regard the answer is—O Skandak ! I have stated that death is of two kinds—*Baal-maran* (ignorant's death) and *Pundit-maran* (pundit's death).

२६. [प्र.] से किं तं बालमरणे ?

[उ.] बालमरणे दुवालसविहे प., तं जहा–वलयमरणे १ वसट्टमरणे २ अंतोसल्लमरणे ३ तब्भवमरणे ४ गिरिपडणे ५ तरुपडणे ६ जलप्पवेसे ७ जलणप्पवेसे ८ विसभक्खणे ९ सत्थोवाडणे १० वेहाणसे ११ गिद्धपट्ठे १२। इच्चेते णं खंदया ! दुवालसविहेणं बालमरणेणं मरमाणे जीवे अणंतेहिं नेरइयभवग्गहणेहिं अप्पाणं संजोएइ तिरिय–मणुय–देव., अणाइयं च णं अणवदग्गं दीहमद्धं चाउरंतं संसारकंतारं अणुपरियट्टइ, से त्तं मरमाणे वड्ढइ। से त्तं बालमरणे।

२६. [प्र.] 'वह बालमरण क्या है ?

[उ.] बालमरण बारह प्रकार का है; वह इस प्रकार है-(१) बलयमरण (बलन्मरण-तडफते हुए मरना), (२) वशार्तमरण (परधीनतापूर्वक या विषयवश होकर मरना), (३) अन्त:शल्यमरण (हृदय में शल्य रखकर मरना), शरीर मे कोई तीखा शस्त्रादि घुस जाने से मरना अथवा सन्मार्ग से भ्रष्ट होकर मरना, (४) तद्‌भवमरण (मरकर उसी भव में पुनः उत्पन्न होना और मरना), (५) गिरिपतन, (६) तरुपतन, (७) जल-प्रवेश (पानी मे डूबकर मरना), (८) ज्वलनप्रवेश (अग्नि मे जलकर मरना), (९) विषभक्षण (विष खाकर मरना), (१०) शस्त्रावपाटन (शस्त्राघात से मरना), (११) वैहानसमरण (गले मे फाँसी लगाने या वृक्ष आदि पर लटकने से मरना), और (१२) गृध्रपृष्ठमरण (गिद्ध आदि पक्षियो द्वारा पीठ आदि शरीरावयवों का माँस खाये जाने से होने वाला मरण)। हे स्कन्दक ! इन बारह प्रकार के बालमरणो से मरता हुआ जीव अनन्त बार नारक भवो को प्राप्त करता है, तथा नरक, तिर्यंच, मनुष्य और देव, इस चातुर्गतिक अनादि-अनन्त ससाररूप कान्तार (वन) मे बार-बार परिभ्रमण करता है। अर्थात्-इस तरह बारह प्रकार के बालमरण से मरता हुआ जीव अपने संसार को बढाता है। यह है-बालमरण का स्वरूप।

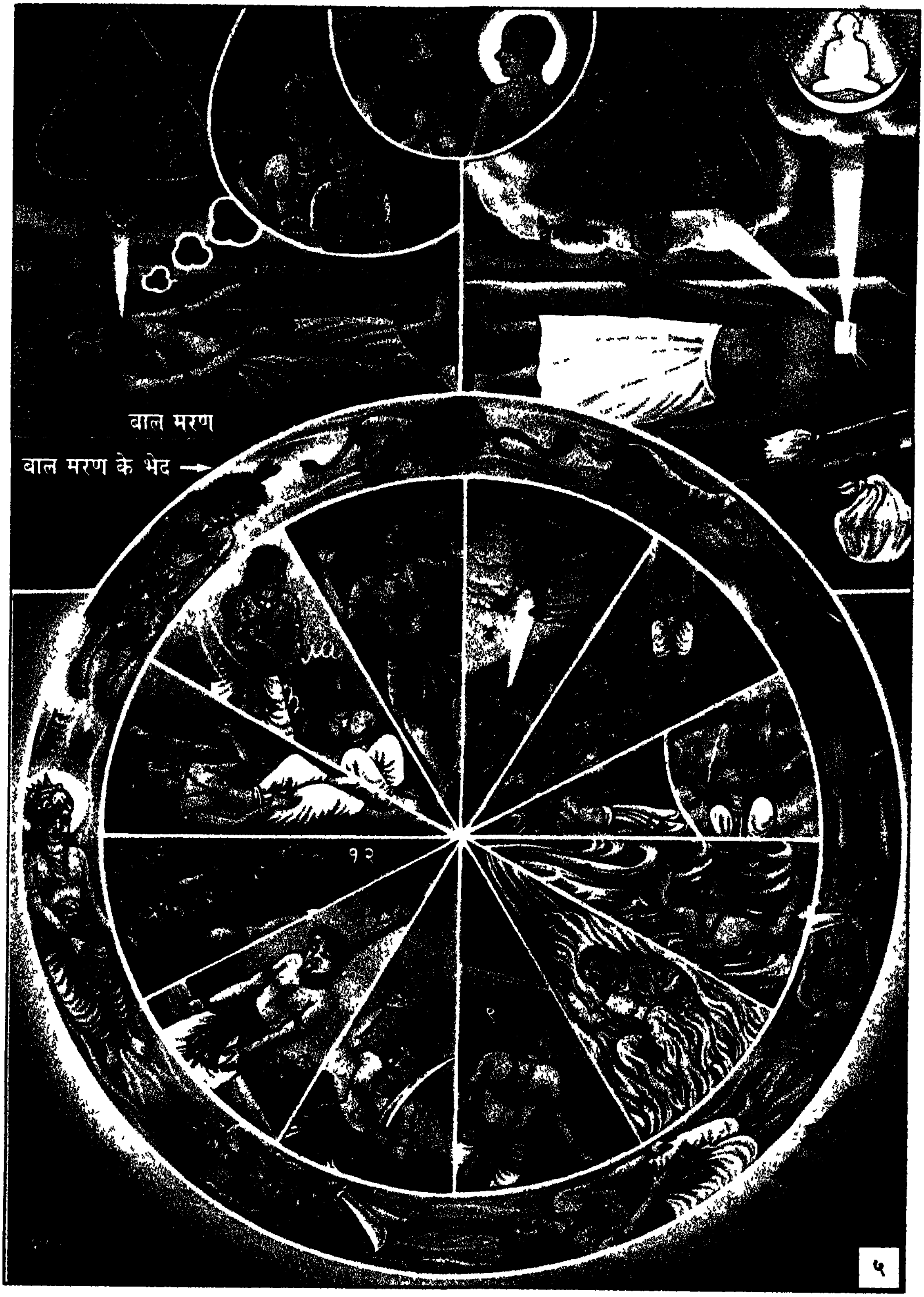
26. [Q.] What is that *Baal-maran* (ignorant's death) ?

[Ans.] *Baal-maran* (ignorant's death) is of twelve kinds—(1) *Balaya maran* (*balanmaran*—to die writhing), (2) *Vashart maran* (to die as a slave of man or passions), (3) *Antah-shalya maran* (to die with a thorn inside, a pointed weapon in the body or an inner thorn of falling from grace), (4) *Tadbhava maran* (to die after being reborn in the same genus), (5) *Giripatan* (to die due to fall from a hill), (6) *Tarupatan* (to die due to fall from a tree), (7) *Jala pravesh* (to die by drowning), (8) *Jvalan pravesh* (to die by entering into fire), (9) *Vish bhakshan* (to die by consuming poison), (10) *Shastravapatan* (to die due to being hit by a weapon), (11) *Vaihanas maran* (to die by hanging), and (12) *Gridhraprishtha maran* (to die due to body parts being pecked and snatched by birds like vulture) O Skandak ! Ignorant's death due to these twelve reasons leads a *Jiva* (soul) to infinite rebirths in hell and he is entrapped in the beginningless and endless wilderness of infinite cycles of rebirth in the four genuses including those of infernal beings, animals, human beings and divine beings. In other words these twelve kinds of ignorant's deaths causes a *Jiva* to expand his cycles of rebirth (*samsar*) This is *Baal-maran*.

२७. [प्र.] से किं तं पंडियमरणे ?

[उ.] पंडियमरणे दुविहे प., तं.-पाओवगमणे य भत्तपच्चक्खाणे य।

मरण के विविध भेद



चित्र परिचय-५

Illustration No. 5

मरण के विविध भेद

समवसरण मे पहुँचकर स्कन्दक ने भगवान से अनेक प्रश्नो के पश्चात् पुन पूछा-

भन्ते ! किस मरण से मरने पर जीव ससार को घटाता है ?

भगवान ने कहा-स्कन्दक ! मरण के दो भेद है-(१) **बालमरण**, तथा (२) **पण्डितमरण**। जिस मरण के साथ किसी प्रकार की भौतिक कामना रहती है, जैसे स्वर्ग-सुखो की अथवा चक्रवर्ती आदि भौतिक ऐश्वर्य पद की वह **बालमरण** है। सर्वथा मोक्ष की भावना के साथ प्राण विसर्जन करने वाले श्रमणो का **पण्डितमरण** होता है। पण्डितमरण वाला या तो वैमानिक देव बनकर फिर मोक्ष प्राप्त करता है अथवा सर्वकर्म क्षय कर सीधा मोक्ष मे जाता है। आर्त रौद्र ध्यान के साथ मृत्यु प्राप्त करना भी बालमरण है। उसके १२ भेद है-

जैसे-(१) **वलयमरण** (तडफते हुए मरना), (२) **वशार्तमरण** (परधीनतापूर्वक या विवश होकर मरना), (३) **अन्त:शल्यमरण** (हृदय मे शल्य रखकर अथवा शरीर मे कोई तीखा शस्त्रादि घुस जाने से मरना, (४) **तद्भवमरण** (मरकर उसी भव म पुन उत्पन्न होना और मरना), (५) **गिरिपतन**, (६) **तरुपतन**, (७) **जल-प्रवेश**, (८) **ज्वलनप्रवेश** (अग्नि मे जलकर मरना), (९) **विषभक्षण**, (१०) **शस्त्रावपाटन** (शस्त्राघात से मरना), (११) **वैहानस मरण** (गले मे फॉसी लगाने या वृक्ष आदि पर लटकने से मरना), और (१२) **गृध्रपृष्टमरण** (गिद्ध आदि पक्षियो द्वारा पीठ आदि शरीरावयवो का मॉस खाय जाने से होने वाला मरण)।

शतक २ उ १, सूत्र २६-२८

TYPES OF DEATH

Coming to Samavasaran, Skandak put various questions to Bhagavan and at last asked—Bhante ! What type of death reduces the cycles of rebirth ?

Bhagavan replied—Skandak there are two kinds of death—(1) **Baal Maran,** and (2) **Pundit Maran.** Death with some mundane desire, such as for divine pleasures or grandeur of an emperor, is Baal Maran The death of ascetics who exclusively desire for liberation is Pundit Maran and it leads either to liberation at once by destroying all karmas or after reincarnation as Vaimanik Dev Death with sentiments of pathos or anger is also Baal Maran and it is of 12 kinds—

(1) **Balaya maran** (to die writhing), (2) **Vashart maran** (to die as a slave of man or circumstances), (3) **Antah-shalya maran** (to die with a mental or physical thorn inside), (4) **Tadbhava maran** (to die after being reborn in the same genus), (5) **Giripatan** (to die due to fall from a hill), (6) **Tarupatan** (to die due to fall from a tree), (7) **Jala-pravesh** (to die by drowning), (8) **Jvalan pravesh** (to die by entering into fire), (9) **Vish bhakshan** (to die by consuming poison) (10) **Shastravapatan** (to die by a weapon), (11) **Vaihanas maran** (to die by hanging), and (12) **Gridhraprishtha maran** (to die due to body parts being pecked and snatched by birds like vulture)

—Shatuk 2, lesson 1 Sutra 26-28

२७. [प्र.] पण्डितमरण क्या है ?

[उ.] पण्डितमरण दो प्रकार का है। वह इस प्रकार है-(१) पादपोपगमन (वृक्ष की कटी हुई शाखा की तरह स्थिर निश्चल होकर मरना), और (२) भक्त-प्रत्याख्यान (यावज्जीवन तीनो या चारों आहारों का त्याग करने के बाद शरीर की सार सँभाल करते हुए जो मृत्यु होती है।)

27. [Q.] What is that *Pundit-maran* (noble death)?

[Ans.] *Pundit-maran* (noble death) is of two kinds—(1) *Padapopagaman* (to die lying still like a severed branch of tree), and (2) *Bhakt-pratyakhyan* (to die after abandoning intake of food till death and taking proper care of the body).

२८. [प्र.] से किं तं पाओवगमणे ?

[उ.] पाओवगमणे दुविहे प., तं जहा-नीहारिमे य अनीहारिमे य, नियमा अप्पडिकम्मे। से त्तं पाओवगमणे।

२८. पादपोपगमन (मरण) क्या है ?

[उ.] पादपोपगमन दो प्रकार का है-(१) निर्हारिम, और (२) अनिर्हारिम। यह दोनो प्रकार का पादपोपगमन मरण नियम से अप्रतिकर्म होता है। यह पादपोपगमन का स्वरूप है।

28. [Q.] What is this *Padapopagaman* (death)?

[Ans.] *Padapopagaman* (death) is of two kinds—(1) *Nirharim* (in inhabited surroundings), and (2) *Anirharim* (in uninhabited surroundings) These both kinds of *Padapopagaman* (death) entail, as a rule, total restraint of movement and care (*apratikarma*) This is *Padapopagaman*.

२९. [प्र.] से किं तं भत्तपच्चक्खाणे ?

[उ.] भत्तपच्चक्खाणे दुविहे प., तं जहा-नीहारिमे य अनीहारिमे य, नियमा सपडिकम्मे। से त्तं भत्तपच्चक्खाणे।

२९. [प्र.] भक्तप्रत्याख्यान (मरण) क्या है ?

[उ.] भक्तप्रत्याख्यान मरण दो प्रकार है। वह इस प्रकार है-(१) निर्हारिम, और (२) अनिर्हारिम। यह दोनो प्रकार का भक्तप्रत्याख्यान मरण नियम से सप्रतिकर्म होता है। यह-भक्तप्रत्याख्यान का स्वरूप है।

29. [Q.] What is this *Bhakt-pratyakhyan* (death)?

[Ans.] *Bhakt-pratyakhyan* (death) is of two kinds—(1) *Nirharim* (in inhabited surroundings), and (2) *Anirharim* (in uninhabited surroundings) These both kinds of *Bhakt-pratyakhyan* (death), as a rule, allow movement and care (*apratikarma*). This is *Bhakt-pratyakhyan*.

३०. इच्चेतेणं खंदया ! दुविहेणं पंडियमरणेणं मरमाणे जीवे अणंतेहिं नेरइयभवग्गहणेहिं अप्पाणं विसंजोएइ जाव वीईवयति। से त्तं मरमाणे हायइ। से त्तं पंडियमरणे।

३१. इच्चेएणं खंदया ! दुविहेणं मरणेणं मरमाणे जीवो वड्ढइ वा हायति वा।

३०. हे स्कन्दक ! इन दोनों प्रकार के पण्डितमरणो से मरता हुआ जीव नारकादि अनन्त भवों को प्राप्त नही करता; यावत् ससाररूपी अटवी का उल्लंघन (पार) कर जाता है। इस प्रकार इन दोनो प्रकार के पण्डितमरणो से मरते हुए जीव का ससार घटता है। यह पण्डितमरण का स्वरूप है।

३१. हे स्कन्दक ! इन दो प्रकार के मरणो से मरते हुए जीव का ससार क्रमश बढता और घटता है।

30. O Skandak ! Meritorious due to these two reasons does not lead a *Jiva* (soul) to infinite rebirths in hell. . and so on up to... he crosses the wilderness of cycles of rebirth In other words these two kinds of noble deaths cause a *Jiva* to reduce his cycles of rebirth (*samsar*) This is *Pundit-maran*

31. O Skandak ! Due to these two kinds of death a *Jiva* expands and reduces his cycles of rebirth (*samsar*) respectively.

विवेचन : पण्डितमरण के दो भेद है-(१) पादपोपगमन मरण, और (२) भक्तप्रत्याख्यान मरण। (१) पादपोपगमन मरण-सथारा करके वृक्ष के समान जिस स्थान पर जिस रूप मे एक बार लेट जाये, फिर उसी जगह उसी रूप मे लेटे रहना और इस प्रकार मृत्यु को प्राप्त होना 'पादपोपगमन मरण' है। इसके दो भेद है-निर्हारिम और अनिर्हारिम। (१) जो सथारा ग्राम, नगर आदि बस्ती मे किया जाये, जिससे मृत शरीर को ग्रामादि से बाहर ले जाकर अग्निदाहादि संस्कार करना पडे उसे, 'निर्हारिम' कहते है। (२) जो संथारा ग्राम, नगर आदि बस्ती से बाहर जगल आदि एकान्त स्थान मे किया जाय, जिससे मृत शरीर को वहाँ से ले जाने की आवश्यकता न रहे, उसे 'अनिर्हारिम' कहते है। यह दोनो प्रकार का पादपोपगमन मरण नियमा (नियमपूर्वक) अप्रतिकर्म (शरीर की सेवा-शुश्रूषा और हलन-चलन से रहित) होता है। (२) भक्तप्रत्याख्यान मरण-यावज्जीवन तीन या चारो आहारो का त्याग करके मृत्यु का वरण करना। उसके भी निर्हारिम और अनिर्हारिम ये दो भेद है। यह मरण सप्रतिकर्म है।

Elaboration—*Pundit-maran* (Meritorious death) is of two kinds—(1) *Padapopagaman maran,* and (2) *Bhakt-pratyakhyan maran.* (1) *Padapopagaman maran*—The aspirant should take the ultimate vow (*santhara*) and recline at a place. When he dies without changing the spot or shifting the posture it is called *Padapopagaman maran* (to die lying still like a severed branch of tree). This in turn is of two kinds—(1) *Nirharim,* and (2) *Anirharim.* (1) *Nirharim*—the ultimate vow taken at some inhabited place like a village or a town requiring the dead body to be taken out of the town for cremation is called *nirharim.* (2) *Anirharim*—the ultimate vow taken at some uninhabited place like a jungle or other forlorn place not requiring the dead body to be shifted is

called *anırharim* The prescribed code for both these *Padopagaman* deaths essentıally restrains any movement or care of the body thus it is *apratıkarma*. *Bhakt-pratyakhyan maran*—to die after abandoning intake of food till death. This also is of two kinds—(1) *Nirharim*, and (2) *Anırharim*. Thıs is *sapratikarma* (allows movement or care of the body).

स्कन्दक द्वारा निर्ग्रन्थ प्रव्रज्या SKANDAK'S INITIATION

३२. [१] एत्थ णं से खंदए कच्चायणसगोत्ते संबुद्धे समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी—इच्छामि णं भंते ! तुब्भं अंतिए केवलिपन्नत्तं धम्मं निसामेत्तए।

[२] अहासुहं देवाणुप्पिया ! मा पडिबंधं करेह।

३३. तए णं समणे भगवं महावीरे खंदयस्स कच्चायणसगोत्तस्स तीसे य महतिमहालियाए परिसाए धम्मं परिकहेइ। धम्मकहा भाणियव्वा।

३२. [१] (भगवान महावीर के उक्त वचनो से समाधान पाकर) स्कन्दक परिव्राजक को सम्बोध प्राप्त हुआ। उसने श्रमण भगवान महावीर को वन्दना-नमस्कार करके यो कहा–'भगवन् ! मैं आपके पास केवलिप्ररूपित धर्म सुनना चाहता हूँ।'

[२] देवानुप्रिय ! जैसा तुम्हे सुख हो, वैसा करो, शुभ कार्य मे विलम्ब मत करो।

३३. इसके पश्चात् श्रमण भगवान महावीर स्वामी ने स्कन्दक परिव्राजक को और उस बहुत बड़ी परिषद् को धर्मकथा कही। धर्मकथा का वर्णन औपपातिकसूत्र के अनुसार करना चाहिए।

32. [1] (After getting answers to his questions from Bhagavan Mahavır) Skandak *Parıvrajak* was contented. He paid homage and obeısance to Bhagavan Mahavır and saıd—"*Bhante* ! I am keen to hear the tenets of the relıgion propounded by *Kevalıs* (omniscients).

[2] "Beloved of gods ! Do as you please and avoid languor in a good auspıcious deed."

33. After that Shraman Bhagavan Mahavir gave his sermon to Skandak *Parıvrajak* and the large congregatıon. Descrıption of discourse should be read (from *Aupapatik Sutra*)

३४. तए णं से खंदए कच्चायणसगोत्ते समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठे जाव हियए उट्ठाए उट्ठेइ, उट्ठित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेइ, करित्ता एवं वयासी—सद्दहामि णं भंते ! निग्गंथं पावयणं, पत्तियामि णं भंते ! निग्गंथं पावयणं, रोएमि णं भंते ! निग्गंथं पावयणं, अब्भुट्ठेमि णं भंते ! निग्गंथं पावयणं, एवमेयं भंते ! तहमेयं भंते ! अवितहमेयं भंते ! असंदिद्धमेयं भंते ! इच्छियमेयं भंते ! पडिच्छियमेयं भंते ! इच्छिय–पडिच्छियमेयं भंते ! से जहेयं

तुब्भे वदह त्ति कट्टु समणं भगवं महावीरं वंदति नमंसति, वंदित्ता नमंसित्ता उत्तरपुरित्थमं दिसीभागं अवक्कमइ, अवक्कमित्ता तिदंडं च कुंडियं य जाव धातुरत्ताओ य एगंते एडेइ, एडित्ता जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेइ, करित्ता जाव नमंसित्ता एवं वयासी–

आलित्ते णं भंते ! लोए, पलित्ते णं भंते ! लोए, आलित्त–पलित्ते णं भंते ! लोए जराए मरणेण य। से जहाणामए केइ गाहावई अगारंसि झियायमाणंसि जे से तत्थ भंडे भवइ अप्पभारे मोल्लगरुए तं गहाय आयाए एगंतमंतं अवक्कमइ। एस मे नित्थारिए समाणे पच्छा पुरा य हियाए सुहाए खमाए निस्सेयसाए आणुगामियत्ताए भविस्सइ। एवामेव देवाणुप्पिया ! मज्झ वि आया एगे भंडे इट्ठे कंते पिए मणुन्ने मणामे थेज्जे वेसासिए सम्मए बहुमए अणुमए भंडकरंडगसमाणे, मा णं सीतं, मा णं उण्हं, मा णं खुहा, मा णं पिवासा, मा णं चोरा, मा णं वाला, मा णं दंसा, मा णं मसगा, मा णं वाइय–पित्तिय–सिंभिय–सन्निवाइय विविहा रोगायंका परीसहोवसग्गा फुसंतु त्ति कट्टु, एस मे नित्थारिए समाणे परलोयस्स हियाए सुहाए खमाए नीसेसाए आणुगामियत्ताए भविस्सइ। तं इच्छामि णं देवाणुप्पिया ! सयमेव पव्वावियं, सयमेव मुंडावियं, सयमेव सेहावियं, सयमेव सिक्खावियं, सयमेव आयार–गोयर–विणय–वेणइय–चरण–करण–जाया–मायावत्तियं धम्ममाइक्खिउं।

३४. तत्पश्चात् वह कात्यायनगोत्रीय स्कन्दक परिव्राजक श्रमण भगवान महावीर के श्रीमुख से धर्मकथा सुनकर एव हृदय मे अवधारण करके हर्षित हुआ, सन्तुष्ट हुआ, यावत् उसका हृदय हर्ष से विकसित हो गया। फिर खडे होकर और श्रमण भगवान महावीर को दाहिनी ओर से तीन बार प्रदक्षिणा करके स्कन्दक परिव्राजक ने कहा–'भगवन् ! निर्ग्रन्थ प्रवचन पर मैं श्रद्धा प्रतीति एव रुचि करता हूँ, भगवन् ! निर्ग्रन्थ प्रवचन को स्वीकार करता हूँ। हे भगवन् ! यह (निर्ग्रन्थ प्रवचन) इसी प्रकार है, यह तथ्य है, यह सत्य है, यह सन्देहरहित है, भगवन् ! यह मुझे इष्ट है, विशेष इष्ट है, इष्ट–प्रतीष्ट है। हे भगवन् ! जैसा आप फरमाते है, वैसा ही है।' यो कहकर स्कन्दक परिव्राजक ने श्रमण भगवान महावीर को वन्दन–नमस्कार किया। ऐसा करके उसने उत्तर–पूर्व दिशा के ईशानकोण में जाकर त्रिदण्ड, कुण्डिका, यावत् गेरुए वस्त्र आदि परिव्राजक के उपकरण एकान्त मे छोड दिये। फिर श्रमण भगवान महावीर स्वामी के पास आकर भगवान महावीर को तीन बार प्रदक्षिणा करके यावत् नमस्कार करके इस प्रकार बोला–

भगवन् ! जरा (वृद्धावस्था) और मृत्यु रूपी अग्नि से यह लोक (संसार) आदीप्त–प्रदीप्त (जल रहा है, विशेष जल रहा है) है, जैसे किसी गृहस्थ के घर मे आग लग गई हो और वह घर जल रहा हो, तब वह उस जलते घर मे से बहुमूल्य और अल्पभार वाले सामान को सबसे पहले बाहर निकालता है और उसे लेकर एकान्त मे ले जाकर यह सोचता है–'बाहर निकाला हुआ यह सामान भविष्य में आगे–पीछे मेरे लिए हितरूप, सुखरूप, क्षेमकुशलरूप, कल्याणरूप एव साथ चलने वाला होगा।' इसी तरह हे भगवन् ! मेरा आत्मा भी एक भाण्ड (समान) रूप है। यह मुझे इष्ट, कान्त, प्रिय, सुन्दर, मनोज्ञ, मनोरम, स्थिरता देने वाला, विश्वासपात्र, सम्मत, अनुमत, बहुमत और रत्नों (या आभूषणों) के पिटारे के समान है। इसलिए इसे ठड न लगे, गर्मी न लगे, यह भूख–प्यास से पीड़ित न हो, इसे चोर, सिंह और सर्प हानि न पहुँचायें,

इसे डांस और मच्छर न सताएँ, तथा वात, पित्त, कफ, सन्निपात आदि से होने वाले विविध रोग और आतंक (प्राणघातक रोग) परीषह और उपसर्ग इसे स्पर्श न करें, इस प्रकार मैं इनसे इसकी बराबर रक्षा करता हूँ। पूर्वोक्त विघ्नों से रहित किया हुआ मेरा आत्मा मुझे परलोक में हितरूप, सुखरूप, कुशलरूप, कल्याणरूप और अनुगामीरूप होगा। इसलिए भगवन् ! मै आपके पास स्वयं प्रव्रजित होना, मुण्डित होना चाहता हूँ। मेरी इच्छा है कि आप स्वय मुझे प्रव्रजित करें (मुनि वेश दें), मुण्डित (केश लुचन) करें, आप स्वयं मुझे प्रतिलेखनादि क्रियाएँ सिखाएँ, सूत्र और अर्थ पढाएँ। मै चाहता हूँ कि आप मुझे ज्ञानादि आचार, गोचर (भिक्षाचरी), विनय, विनय का फल, चरण (व्रतादि) और करण (पिण्ड–विशुद्धि) आदि तथा सयमयात्रा और संयमयात्रा के निर्वाहक आहारादि की मात्रा के ग्रहणरूप धर्म को बताएँ।

34. Listening to and understanding the religious discourse given by Bhagavan Mahavir, that *Parivrajak* Skandak of Katyayan clan became happy, contented and so on up to... his heart bloomed with bliss. He got up, went around Shraman Bhagavan Mahavir three times clockwise and said—"*Bhagavan* ! I have faith (*shraddha*), trust (*pratiti*) and interest (*ruchi*) in the *Nirgranth*-sermon. *Bhante* ! I am ready to embrace the *Nirgranth*-sermon. *Bhante* ! It is as you say. *Bhante* ! It is the ultimate reality *Bhante* ! It is the ultimate truth. *Bhante* ! It is beyond any doubt. *Bhante* ! It is desirable to me *Bhante* ! It is extremely desirable to me. *Bhante* ! Indeed, it is desirable, extremely desirable to me. *Bhante* ! It is exactly as you have stated." Saying thus Skandak *Parivrajak* paid homage and obeisance to Shraman Bhagavan Mahavir Doing that he went in the north-east direction (*Ishan Kone*) and discarded his *Parivrajak* paraphernalia including *Tridand* (trident), *Kundi* (bowl).. and so on up to . saffron coloured dress He then returned near Shraman Bhagavan Mahavir, went around him three times.. and so on up to... paid homage and said as follows—

"*Bhante* ! This world is ablaze *Bhante* ! This world is being consumed by fire *Bhante* ! This world is ablaze and is being consumed by the fire of old age and death. In a situation when his house is on fire a householder chooses the most valuable and least cumbersome objects and carrying them to a solitary place he thinks—'Sooner or later in the future these rescued objects (from fire) will be the cause of great help, happiness, support and welfare as they will go along with me.' In the same way, *Bhante* ! My soul is like a bowl (object) that I very much adore, desire, love and covet For me it is stabilizing, confidence boosting, assented (*sammat*), approved (*anumat*), sanctioned (*bahumat*) and is like a casket of jewels Therefore I continue to protect it in such a way that no harm is

caused to it by heat, cold, hunger, thirst, thief, snake, lion, wasp, mosquito and ailments caused by disturbed wind, bile and phlegm, as well as terrors, torments and afflictions. Free from the said troubles my soul will, in future, be the source of great help, happiness, support and welfare as also it will go along with me (to my next birth). Therefore, Beloved of gods ! I want to get initiated (*pravrajit*) by you in person I desire to be tonsured (*mundit*) by you. I wish to be a student (*shaikshapit*) of you I aspire to be taught (*shikshapit*) by you. I beseech you to personally initiate me in ascetic-conduct (*aachaar*), alms seeking (*gochar*), ascetic-modesty (*vinaya*), fruits of ascetic-modesty (*vainayik*), austerities including vows (*charan*), purity of alms including food (*karan*), practice of ascetic-discipline (*yatra*), quantity of food required in ascetic discipline (*matra*) as well as the desired ascetic behaviour covering all these "

३५. तए णं समणे भगवं महावीरे खंदयं कच्चायणसगोत्तं सयमेव पव्वावेइ जाव धम्ममाइक्खइ–एवं देवाणुप्पिया ! गंतव्वं, एवं चिट्ठियव्वं, एवं निसीइयव्वं, एवं तुयट्टियव्वं, एवं भुंजियव्वं, एवं भासियव्वं एवं उट्ठाए उट्ठाय पाणेहिं भूएहिं जीवेहिं सत्तेहिं संजमेणं संजमियव्वं, अस्सिं च णं अट्ठे णो किंचि वि पमाइयव्वं।

३५. तदनन्तर श्रमण भगवान महावीर स्वामी ने स्वय कात्यायनगोत्रीय स्कन्दक परिव्राजक को प्रव्रजित किया, यावत् स्वयमेव धर्म की शिक्षा दी कि–हे देवानुप्रिय ! इस प्रकार (यतना) से चलना चाहिए, इस तरह से खडा रहना चाहिए, इस तरह से बैठना चाहिए, इस तरह से सोना चाहिए, इस तरह से खाना चाहिए, इस तरह से बोलना चाहिए, इस प्रकार से उठकर सावधानीपूर्वक प्राण, भूत, जीव और सत्त्व के प्रति सयमपूर्वक बर्ताव करना चाहिए। इस विषय मे जरा भी प्रमाद नही करना चाहिए।

35. Then Shraman Bhagavan Mahavir himself initiated and so on up to . personally directed *Parivrajak* Skandak of Katyayan clan in religious conduct—"O Beloved of gods ! You should move this way, stand this way, sit this way, recline this way, eat this way, speak this way, get up this way and behave this way with all beings (*praan*), organisms (*bhoot*), souls (*jiva*) and entities (*sattva*) ensuring great care and restraint There should be no negligence (*pramad*) in this."

३६. तए णं से खंदए कच्चायणसगोत्ते समणस्स भगवओ महावीरस्स इमं एयारूवं धम्मियं उवएसं सम्मं संपडिवज्जति, तमाणाए तह गच्छइ, तह चिट्ठइ, तह निसीयइ, तह तुयट्टइ, तह भुंजइ, तह भासइ, तह उट्ठाए उट्ठाय पाणेहिं भूएहिं जीवेहिं सत्तेहिं संजमेणं संजमइ, अस्सिं च णं अट्ठे णो पमायइ।

३६. तब कात्यायनगोत्रीय स्कन्दक मुनि ने श्रमण भगवान महावीर स्वामी के पूर्वोक्त धार्मिक उपदेश को भलीभाँति स्वीकार किया और भगवान की आज्ञा के अनुसार ही चलना, खडे रहना, बैठना,

सोना, खाना, बोलना आदि क्रियाएँ करने लगे; तथा तदनुसार ही प्राणों, भूतों, जीवो और सत्त्वों के प्रति संयमपूर्वक बर्ताव करने लगे। इस विषय में वे जरा-सा भी प्रमाद नहीं करते थे।

36. Then *Parivrajak* Skandak of Katyayan clan duly accepted and embraced the aforesaid directions given by Shraman Bhagavan Mahavir and started moving, standing, sitting, reclining, eating, speaking and doing other activities accordingly. He also started behaving accordingly with all beings (*praan*), organisms (*bhoot*), souls (*jiva*) and entities (*sattva*) with great care and restraint. He was never negligent in this

३७. तए णं से खंदए कच्चायणसगोत्ते अणगारे जाए इरियासमिए भासासमिए एसणासमिए आयाणभंडमत्तनिक्खेवणासमिए उच्चार-पासवण-खेल-जल्लसिंघाण परिट्ठावणियासमिए मणसमिए वयसमिए कायसमिए मणगुत्ते वयगुत्ते कायगुत्ते गुत्ते गुत्तिंदिए गुत्तबंभचारी चाई लज्जू धण्णे खंतिखमे जिइदिए सोहिए अणियाणे अप्पुस्सुए अबहिल्लेस्से सुसामण्णरए दंते इणमेव णिग्गंथं पावयणं पुरओ काउं विहरइ।

३७. अब वह कात्यायनगोत्रीय स्कन्दक अनगार बन गए। वे अब ईर्यासमिति, भाषासमिति, एषणासमिति, आदानभाण्डमात्रनिक्षेपणासमिति, उच्चार-प्रस्रवण-खेल-जल्ल-सिंघाण-परिष्ठापनिका-समिति, एव मन समिति, वचनसमिति और कायसमिति, इन आठों समितियो का सम्यक् रूप से सावधानीपूर्वक पालन करने लगे। मनोगुप्ति, वचनगुप्ति और कायगुप्ति से गुप्त रहने लगे, अर्थात्-मन, वचन और काया को वश मे रखने लगे। वे सबको वश में रखने वाले, इन्द्रियों को वश में रखने वाले, गुप्तब्रह्मचारी (ब्रह्मचर्य को सुरक्षित रखने वाले) त्यागी, लज्जावान् (सयमी = सरल), धन्य (पुण्यवान् या धर्मधनवान्), क्षमावान्, जितेन्द्रिय, व्रतो आदि के शोधक (शुद्धिपूर्वक आचरणकर्ता), निदान (नियाणा) न करने वाले, आकाक्षारहित, उतावलरहित, सयम से बाहर चित्त न रखने वाले, श्रेष्ठ साधुव्रतो मे लीन, कषायो व इन्द्रियो का दमन करने वाले स्कन्दक मुनि इसी निर्ग्रन्थ प्रवचन को सम्मुख रखकर सब क्रियाएँ करने लगे।

37. Now, *Parivrajak* Skandak of Katyayan clan became a homeless ascetic He now duly practiced properly and with care the eight regulations (*samiti*) including careful movement (*irya samiti*), careful speech (*bhasha samiti*), careful alms-seeking (*eshana samiti*), careful upkeep of ascetic-equipment including bowls (*adan-bhand-matra-nikshepana samiti*), careful disposal of excreta (*uchchar-prasravan-khel-jalla-singhan-parishthapanika samiti*) [*ucchara-prasravan* = stool and urine, *khel* = phlegm coming out of mouth and nose; and *jalla-singhan* = dirt of the ear and nose], careful thought (*manah samiti*), careful speech (*vachan samiti*), careful action (*kaya samiti*). He also practiced the three restraints (*guptis*) including restraint of mind (*manogupti*), restraint of

speech (*vachan gupti*) and restraint of body (*kayagupti*). He exercised complete control over self (*gupta*), complete control over sense organs (*guptindriya*) and complete control over libido (*gupta brahmachari*). He became a renouncer (*tyagi*), disciplined and modest (*lajjavan*), pious and religious (*dhanya*), forgiver (*kshamavan*), victor over senses (*jitendriya*), steadfast observer of vows (*shodhak*), devoid of expectation (*anidan*), non-ambitious (*akanksharahit*), non-hasty, mentally not drifting away from ascetic-discipline, immersed in lofty ascetic practices and subjugator of passions and sense organs Such ascetic Skandak indulged in all activities keeping in mind the aforesaid *Nirgranth* sermon.

स्कन्दक द्वारा तपश्चरण AUSTERITIES OF SKANDAK

३८. तए णं समणे भगवं महावीरे कयंगलाओ नयरीओ छत्तपलासाओ चेइयाओ पडिनिक्खमइ, पडिनिक्खमित्ता बहिया जणवयविहारं विहरइ।

३९. तए णं से खंदए अणगारे समणस्स भगवओ महावीरस्स तहारूवाणं थेराणं अंतिए सामाइयमाइयाइं एक्कारस अंगाइं अहिज्जइ, अहिज्जित्ता जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं वंदइ, नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी—इच्छामि णं भंते ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे मासियं भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए।

अहासुहं देवाणुप्पिया ! मा पडिबंधं करेह।

३८. तत्पश्चात् श्रमण भगवान महावीर स्वामी कृतगला नगरी के छत्रपलाशक उद्यान से निकले और बाहर (अन्य) जनपदो (देशो) मे विचरण करने लगे।

३९. इसके बाद स्कन्दक अनगार ने श्रमण भगवान महावीर के तथारूप स्थविरो से सामायिक आदि ग्यारह अगो का अध्ययन किया। अध्ययन पूर्ण करके श्रमण भगवान महावीर के पास आकर वन्दना-नमस्कार करके इस प्रकार बोले-'भगवन् ! आपकी आज्ञा हो तो मै मासिकी भिक्षुप्रतिमा अंगीकार करके विचरना चाहता हूँ।'

(भगवान-) देवानुप्रिय ! जैसे तुम्हे सुख हो, वैसा करो। शुभ कार्य में विलम्ब न करो।

38. After that Shraman Bhagavan Mahavir left Chhatrapalashak garden in Kritangala city and resumed his itinerant way in other inhabited areas (states).

39. Ascetic Skandak then studied eleven *Angas* including *Samayik* under senior ascetics (*sthavir*) of Shraman Bhagavan Mahavir's order. Concluding his studies he approached Bhagavan Mahavir and after paying him homage and obeisance said—*Bhante* ! If you kindly permit me I wish to embrace and practice *Bhikshu Pratima* of one month duration.

(*Bhagavan* said—) "Beloved of gods ! Do as you please and avoid languor when doing a good deed."

४०. तए णं से खंदए अणगारे समणेणं भगवया महावीरेणं अब्भणुण्णाए समाणे हट्ठे जाव नमंसित्ता मासियं भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ।

४१. तए णं से खंदए अणगारे मासियं भिक्खुपडिमं अहासुत्तं अहाकप्पं अहामग्गं अहातच्चं अहासम्मं काएण फासेति पालेति सोहेति तीरेति पूरेति किट्टेति अणुपालेइ आणाए आराहेइ, काएण फासित्ता जाव आराहेत्ता जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता समणं भगवं जाव नमंसित्ता एवं वयासी—इच्छामि णं भंते ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे दोमासियं भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए।

अहासुहं देवाणुप्पिया ! मा पडिबंधं करेह। तं चेव।

४०. तत्पश्चात् स्कन्दक अनगार श्रमण भगवान महावीर की आज्ञा प्राप्त करके हर्षित हुए यावत् भगवान महावीर को नमस्कार करके मासिक भिक्षुप्रतिमा अंगीकार करके विचरण करने लगे।

४१. इसके बाद स्कन्दक अनगार के सूत्र (विधि) के अनुसार, कल्प (मर्यादा) के अनुसार, मार्ग (पद्धति) के अनुसार, यथातत्त्व (स्वरूप के अनुसार) और सम्यक् प्रकार (समभाव) से स्वीकृत मासिक भिक्षुप्रतिमा का काया से स्पर्श किया, पालन किया, उसे शोधित किया, पार लगाया, पूर्ण किया, उसका कीर्तन (गुणगान) किया, अनुपालन किया और आज्ञापूर्वक आराधन किया। उक्त प्रतिमा का काया से भली प्रकार स्पर्श करके यावत् उसका आज्ञापूर्वक आराधन करके जहाँ श्रमण भगवान महावीर विराजमान थे, वहाँ आए और श्रमण भगवान महावीर को वन्दन-नमस्कार करके इस प्रकार बोले—'भगवन् ! आपकी आज्ञा हो तो मै द्विमासिकी भिक्षुप्रतिमा स्वीकार करके विचरण करना चाहता हूँ।'

भगवान ने कहा—'देवानुप्रिय ! तुम्हे जिस प्रकार सुख हो, वैसा ही करो। किन्तु विलम्ब मत करो।'

40. Ascetic Skandak was pleased to get permission from Shraman Bhagavan Mahavir... and so on up to... after paying homage and obeisance to Bhagavan Mahavir he embraced and commenced practice of *Bhikshu Pratima* of one month duration

41. Thereafter ascetic Skandak embraced the month-long *Bhikshu Pratima* according to the scriptures (*yathasutra*), code of praxis (*yathakalp*), prescribed procedure (*yathamarg*) and perfectly following fundamentals (*yathatattva*), with equanimity (*samata*) and touching with the body (actually not just conceptually) sincerely observed (*palit*), purified (*shodhit*; for transgressions), completed (*purit*; for breaking fast), sang in praise of (*kirtit*) concluded (*anupalit*) and successfully performed (*aradhit*) as per the sanction. Thus after touching with the

body. . and so on up to... successfully performing (*arādhit*) as per the sanction, he returned to Shraman Bhagavan Mahavir and, after paying him homage and obeisance, submitted—*Bhante* ! If you kindly permit me I wish to embrace and practice *Bhikshu Pratima* of two month duration.

Bhagavan said—"Beloved of gods ! Do as you please and avoid languor when doing a good deed." And then ascetic Skandak embraced and commenced practice of *Bhikshu Pratima* of two month duration.. and so on up to. . successfully performed (*aradhit*) as per the sanction.

४२. एवं तेमासियं चाउम्मासियं पंच–छ–सत्तमा०। पढमं सत्तराइंदियं, दोच्चं सत्तराइंदियं, तच्चं सत्तराइंदियं, अहो राइंदियं, एगराइयं।

४३. तए णं से खंदए अणगारे एगराइयं भिक्खुपडिमं अहासुत्तं जाव आराहेत्ता जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छति, उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं जाव नमंसित्ता एवं वयासी–इच्छामि णं भंते ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे गुणरयणसंवच्छरं तवोकम्मं उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए।

अहासुहं देवाणुप्पिया ! मा पडिबंधं०।

४२. इसी प्रकार त्रैमासिकी, चातुर्मासिकी, पचमासिकी, षट्मासिकी एव सप्तमासिकी भिक्षुप्रतिमा की यथावत् आराधना की। तत्पश्चात् प्रथम सप्तरात्रि–दिवस की, द्वितीय सप्तरात्रि दिवस की एव तृतीय सप्तरात्रि–दिवस की, फिर एक अहोरात्रि की तथा एकरात्रि की, इस तरह बारह भिक्षुप्रतिमाओं का सूत्रानुसार यावत् आज्ञापूर्वक सम्यक् आराधन किया।

४३. स्कन्दक अनगार अन्तिम एकरात्रि की भिक्षुप्रतिमा का यथासूत्र यावत् आज्ञापूर्वक सम्यक् आराधन करने के पश्चात् श्रमण भगवान महावीर के निकट आये। वन्दना–नमस्कार करके इस प्रकार बोले–'भगवन् ! आपकी आज्ञा हो तो मै 'गुणरत्नसवत्सर' नामक तपश्चरण अगीकार करके विचरण करना चाहता हूँ।'

भगवान ने फरमाया–'तुम्हे जैसा सुख हो, वैसा करो; धर्मकार्य मे विलम्ब न करो।'

42. In the same way he successfully performed (*aradhit*), as per the sanction, *Bhikshu Pratimas* of three, four, five, six and seven month duration After that he embraced and commenced practice of first *Sapt-ratri-divas Bhikshu Pratima*, Second *Sapt-ratri-divas Bhikshu Pratima*, Third *Sapt-ratri-divas Bhikshu Pratima, Ahoratriki Pratima* (to be practiced for twenty four hours), and *Ek-ratriki Pratima* (to be practiced for one night) (completing all the twelve *Bhikshu Pratimas*)... and so on up to... successfully performed (*aradhit*) as per the sanction.

43. After successfully performing (*aradhit*), as per the sanction, the last *Ek-ratriki Pratima*, ascetic Skandak approached Shraman

Bhagavan Mahavir and after paying homage and obeisance *said*—*Bhante* ! If you kindly permit me I wish to embrace and practice the *Gunaratna-samvatsar* penance.

(*Bhagavan*—) "Beloved of gods ! Do as you please and avoid languor when doing a good deed."

विवेचन : भिक्षुप्रतिमा की आराधना विधि–निर्ग्रन्थ मुनियों के अभिग्रह (प्रतिज्ञा) विशेष को भिक्षुप्रतिमा कहते हैं। ये प्रतिमाएँ बारह होती हैं, जिनकी अवधि का उल्लेख मूल पाठ मे किया है। *(भिक्षु प्रतिमाओं का विस्तृत वर्णन सचित्र अन्तकृद्दशासूत्र, पृष्ठ ३८४ पर देखे)*

Elaboration—*Bhikshu Pratima*—Austerities to be performed by ascetics after taking some specific resolves are called *Bhikshu Pratima*. These are twelve in number and specific duration of each of them is mentioned in the text *(For detailed description of Bhikshu Pratimas refer to Illustrated Antakriddasha Sutra, p 384)*

४४. तए णं से खंदए अणगारे समणेणं भगवया महावीरेणं अब्भणुण्णाए समाणे जाव नमंसित्ता गुणरयणसंवच्छरं तवोकम्मं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ। तं जहा–पढमं मासं चउत्थं चउत्थेणं अणिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं दिया ठाणुक्कुडुए सूराभिमुहे आयावणभूमीए आयावेमाणे, रत्तिं वीरासणेणं अवाउडेण य। एवं दोच्चं मासं छट्ठं छट्ठेणं अणिक्खित्तेणं० दिया ठाणुक्कुडुए सूराभिमुहे आयावणभूमीए आयावेमाणे, रत्तिं वीरासणेणं अवाउडेण य। एवं तच्चं मासं अट्ठमं अट्ठमेणं, चउत्थं मासं दसमं दसमेणं, पंचमं मासं बारसमं बारसमेणं, छट्ठं मासं चोद्दसमं चोद्दसमेणं सत्तमं मासं सोलसमं, सोलसमेणं अट्ठमं मासं अट्ठारसमं अट्ठारसमेणं, नवमं मासं वीसइमं वीसइमेणं, दसमं मासं बावीसइमं बावीसइमेणं, एक्कारसमं मासं चउव्वीसइमं चउव्वीसइमेणं, बारसमं मासं छव्वीसइमं छव्वीसइमेणं, तेरसमं मासं अट्ठावीसइमं अट्ठावीसइमेणं, चोद्दसमं मासं तीसइमं तीसइमेणं, पन्नरसमं मासं बत्तीसइमं बत्तीसइमेणं, सोलसमं मासं चोत्तीसइमं चोत्तीसइमेणं, अनिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं दिया ठाणुक्कुडुए सूराभिमुहे आयावणभूमीए आयावेमाणे, रत्तिं वीरासणेणं अवाउडेणं।

४४. तत्पश्चात् श्रमण भगवान महावीर की आज्ञा प्राप्त होने पर स्कन्दक अनगार गुणरत्नसंवत्सर नामक तपश्चरण स्वीकार करके विचरण करने लगे। जैसे कि–(गुणरत्नसवत्सर तप की विधि) पहले महीने मे निरन्तर उपवास (चतुर्थभक्त तपःकर्म) करना, दिन मे सूर्य के सम्मुख दृष्टि रखकर आतापनाभूमि मे उत्कुटुक आसन से बैठकर सूर्य की आतापना लेना और रात्रि मे अपावृत (निर्वस्त्र) होकर वीरासन से बैठना एव शीत सहन करना। इसी तरह निरन्तर बेले–बेले पारणा करना। दिन में उत्कुटुक आसन से बैठकर सूर्य के सम्मुख मुख रखकर आतापनाभूमि मे सूर्य की आतापना लेना, रात्रि में अपावृत होकर वीरासन से बैठकर शीत सहन करना। इसी प्रकार तीसरे मास में उपर्युक्त विधि के अनुसार निरन्तर तेले–तेले पारणा करना। इसी विधि के अनुसार चौथे मास मे निरन्तर चौले–चौले पारणा करना। पाँचवे मास में पचौले–पचौले (पाँच–पाँच उपवास से) पारणा करना। छठे मास में

निरन्तर छह-छह उपवास करना। सातवें मास मे निरन्तर सात-सात उपवास करना। आठवें मास में निरन्तर आठ-आठ उपवास करना। नौवें मास में निरन्तर नौ-नौ उपवास करना। दसवें मास में निरन्तर दस-दस उपवास करना। ग्यारहवें मास मे निरन्तर ग्यारह-ग्यारह उपवास करना। बारहवें मास में निरन्तर बारह-बारह उपवास करना। तेरहवें मास मे निरन्तर तेरह-तेरह उपवास करना। चौदहवें मास मे निरन्तर चौदह-चौदह उपवास करना। पन्द्रहवे मास मे निरन्तर पन्द्रह-पन्द्रह उपवास करना और सोलहवे मास में निरन्तर सोलह-सोलह उपवास करना। इन सभी में दिन में उत्कुटुक आसन में बैठकर सूर्य के सम्मुख मुख करके आतापनाभूमि में आतापना लेना, रात्रि के समय वस्त्ररहित होकर वीरासन से बैठकर शीत सहन करना।

44. After getting permission from Shraman Bhagavan Mahavir ascetic Skandak commenced the practice of the *Gunaratna-samvatsar* penance. This was as follows (procedure of the *Gunaratna-samvatsar* penance)—To fast on alternate days (*i.e.* to miss four meals of a day, break the fast on second day and again miss four meals on the third day, and so on) during the first month Also to sit naked in *Utkatuk* posture facing the sun enduring heat during the day and to sit in *Virasan* posture enduring cold during the night. To fast for two days followed by a break (*i.e* to miss six meals, break the fast on following day and again miss six meals, and so on) during the second month The practice also includes sitting naked in *Utkatuk* posture facing the sun enduring heat during the day and sitting in *Virasan* posture enduring cold during the night. To do a series of three day fasts (missing eight meals) followed by a break with other rules remaining the same during the third month. With the other conditions remaining the same, to do a series of four day fasts (missing ten meals) followed by a break during the fourth month, five day fasts (missing twelve meals) during the fifth month, six day fasts (missing fourteen meals) during sixth month, seven day fasts (missing sixteen meals) during the seventh month, eight day fasts (missing eighteen meals) during the eighth month, nine day fasts (missing twenty meals) during the ninth month, ten day fasts (missing twenty two meals) during the tenth month, eleven day fasts (missing twenty four meals) during the eleventh month, twelve day fasts (missing twenty six meals) during the twelfth month, thirteen day fasts (missing twenty eight meals) during the thirteenth month, fourteen day fasts (missing thirty meals) during the fourteenth month, fifteen day fasts (missing thirty two meals) during the fifteenth month and sixteen day fasts (missing thirty four meals) during the sixteenth month. All through, the practice also includes sitting naked in *Utkatuk* posture

facing the sun enduring heat during the day and sitting in *Virasan* posture enduring cold during the night.

४५. तए णं से खंदए अणगारे गुणरयणसंवच्छरं तवोकम्मं अहासुत्तं अहाकप्पं जाव आराहेत्ता जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता बहूहिं चउत्थ-छट्ठऽट्ठम-दसम-दुवालसेहिं मासऽद्धमासखमणेहिं विचित्तेहिं तवोकम्मेहिं अप्पाणं भावेमाणे विहरति।

४५. तदनन्तर स्कन्दक अनगार ने गुणरत्नसंवत्सर नामक तपश्चरण की सूत्रानुसार, कल्पानुसार विधिपूर्वक आराधना की। इसके पश्चात् श्रमण भगवान महावीर के पास आये। उन्हें वन्दना-नमस्कार किया। इसके पश्चात् अनेक उपवास, बेला, तेला, चौला, पचौला, मासखमण (मासिक उपवास), अर्द्धमासखमण इत्यादि विविध प्रकार के तप से आत्मा को भावित करते हुए विचरण करने लगे।

45. After successfully performing (*aradhit*), as per the sanction, the *Gunaratna-samvatsar* penance ascetic Skandak approached Shraman Bhagavan Mahavir and paid homage and obeisance. He then resumed his activities enkindling (*bhaavit*) his soul with a variety of austerities including fasting for one, two, three, four and five days, one month and one fortnight

४६. तए णं से खंदए अणगारे तेणं ओरालेणं, विपुलेणं पयत्तेणं पग्गहिएणं कल्लाणेणं सिवेणं धण्णेणं मंगल्लेणं सस्सिरीएणं उदग्गेणं उदत्तेणं उदारेणं महाणुभागेणं तवोक्कम्मेणं सुक्के लुक्खे निम्मंसे अट्ठिचम्मावणद्धे किडिकिडियाभूए किसे धमणिसंतए जाए यावि होत्था, जीवंजीवेण गच्छइ, जीवंजीवेणं चिट्ठइ, भासं भासित्ता वि गिलाइ, भासं भासमाणे गिलाइ, भासं भासिस्सामीति गिलाइ; से जहा नामए कट्ठसगडिया इ वा पत्तसगडिया इ वा पत्त-तिलभंडगसगडिया इ वा एरंडकट्ठसगडिया इ वा इंगालसगडिया इ वा उण्हे दिण्णा सुक्का समाणी ससद्दं गच्छइ, ससद्दं चिट्ठइ, एवामेव खंदए वि अणगारे ससद्दं गच्छइ, ससद्दं चिट्ठइ, उवचिए तवेणं, अवचिए मंस-सोणिएणं, हुयासणे विव भासरासिपडिच्छन्ने, तवेणं तेएणं तवतेयसिरीए अतीव अतीव उवसोभेमाणे चिट्ठइ।

४६. इसके पश्चात् वे स्कन्दक अनगार पूर्वोक्त प्रकार के उदार (फलाशरहित), विपुल (दीर्घकालीन), प्रदत्त (गुरु द्वारा अनुज्ञात), प्रगृहीत (बहुमानपूर्वक आचरित), कल्याणरूप, शिवरूप (उपद्रवरहित), धन्यरूप, मगलरूप (अनिष्ट का उपशमन करने वाला), श्रीयुक्त (शोभास्पद), उत्तम, उदग्र (उत्तरोत्तर वृद्धियुक्त), उदात्त (उत्तम भावयुक्त), सुन्दर, उदार और महाप्रभावशाली तप से शुष्क हो गए, रूक्ष हो गए, माँसरहित हो गए, उनका शरीर केवल हड्डी और चमडी से ढका हुआ रह गया। चलते समय हड्डियाँ खड-खड करने लगी, वे कृश-दुर्बल हो गए, उनकी नाडियाँ सामने दिखाई देने लगी, अब वे केवल अपने आत्म-बल से चलते थे, खडे रहते थे, तथा वे इतने दुर्बल हो गए थे कि भाषा बोलने के बाद, भाषा बोलते-बोलते भी और भाषा बोलूँगा, इस विचार से भी ग्लानि (थकावट)

को प्राप्त होते थे (उन्हें बोलने मे भी कष्ट होता था)। जैसे कोई सूखी लकड़ियो से भरी हुई गाडी हो, पत्तों से भरी हुई गाडी हो, पत्ते, तिल और अन्य सूखे सामान से भरी हुई गाड़ी हो, एरण्ड की लकड़ियों से भरी हुई गाडी हो, या कोयले से भरी हुई गाडी हो, सभी गाड़ियाँ (गाड़ियों मे भरी सामग्री) धूप में अच्छी तरह सुखाई हुई हो और फिर जब चलती हैं तो खड़-खड आवाज करती हुई चलती हैं और आवाज करती हुई खडी रहती हैं, इसी प्रकार जब स्कन्दक अनगार चलते थे, खड़े रहते थे, तब खड़-खड आवाज होती थी। यद्यपि वे शरीर से दुर्बल हो गए थे, तथापि वे तप से पुष्ट थे। उनका माँस और रक्त क्षीण (अत्यन्त कम) हो गये थे, किन्तु राख के ढेर में दबी हुई अग्नि की तरह (बाहर से निस्तेज दिखने पर भी) वे तप और तेज से तथा तप-तेज की शोभा से अतीव सुशोभित हो रहे थे।

46. Then, as a consequence of the said austerities that were free of expectations (*udaar*), extended (*vipul*), consented by the guru (*pradatt*), and observed with great devotion (*pragrihit*); that promised beatitude (*kalyan rupa*), security (*shiva rupa*), bliss (*dhanya rupa*), well-being (*mangal rupa*), and nobility (*shriyukta*); that were lofty (*uttam*), progressively enhancing (*udagra*), ideal (*udaatt*), beautiful, generous, highly efficacious and severe; that ascetic Skandak became dehydrated, haggard and devoid of flesh. His body was reduced to a mere skeleton covered with skin When he walked his bones rattled He was famished and weak, so much so that his veins became prominent and visible It was through shear will power that he moved and stood. He was so emaciated that after speaking, or while speaking or even the thought of speaking exhausted him When ascetic Skandak walked or just remained standing his body produced a rattling sound just like a cart filled with dry wood, dry leaves, sesame seeds or other dry things, twigs of Erand, or coal and further dried in sun, that rattles whether it is moving or stationary. Although he was weak in body, he was strong in austerities Though his flesh ar d blood were almost reduced to nothingness, he still appeared exceptionally graceful due to his austerities and spiritual glow as well as the radiance of penance.

विवेचन : गुणरत्नसंवत्सर तप की संपूर्ण आराधना मे १६ महीने लगते है। जिनमे से ४०७ दिन तपस्या के और ७३ दिन पारणे के होते हैं। शेष सब विधि मूलपाठ मे है। *(विशेष वर्णन व चित्र देखें, सचित्र अन्तकृद्दशासूत्र, पृष्ठ ३५६)*

Elaboration—The complete practice of *Gunaratna-samvatsar* penance involves sixteen months This includes 407 days of fasting and 73 days of eating The procedure has already been mentioned in the text. *(For more details and illustration see Illustrated Antakriddasha Sutra, p. 356)*

४७. तेणं कालेणं तेण समएणं रायगिहे नगरे जाव समोसरणं जाव परिसा पडिगया।

४७. उस काल उस समय मे श्रमण भगवान महावीर स्वामी राजगृह नगर में पधारे। समवसरण की रचना हुई। यावत् जनता भगवान का धर्मोपदेश सुनकर वापस लौट गई।

47. During that period of time there was a city called Rajagriha... and so on up to... *Bhagavan* gave his sermon. People dispersed.

४८. तए णं तस्स खंदयस्स अणगारस्स अण्णया कयाइ पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि धम्म जागरियं जागरमाणस्स इमेयारूवे अज्झत्थिए चिंतिए जाव समुप्पज्जित्था-'एवं खलु अहं इमेणं एयारूवेणं ओरालेणं जाव (सु. ४६) किसे धमणिसंतए जाते जीवंजीवेणं गच्छामि, जीवंजीवेणं चिट्ठामि, जाव गिलामि, जाव (सु. ४६) एवामेव अहं पि ससद्दं गच्छामि, ससद्दं चिट्ठामि, तं अत्थि ता मे उट्ठाणे कम्मे बले वीरिए पुरिसक्कारपरक्कमे तं जावता मे अत्थि उट्ठाणे कम्मे बले वीरिए पुरिसक्कारपरक्कमे जाव य मे धम्मोवदेसए समणे भगवं महावीरे जिणे सुहत्थी विहरइ तावता मे सेयं कल्लं पाउप्पभायाए रयणीए फुल्लुप्पल-कमल-कोमलुम्मिल्लियम्मि अहपंडुरे पभाए रत्तासोयप्पकासकिंसुय-सुयमुह-गुंजऽद्धरागसरिसे कमलागरसंडबोहए उट्ठियम्मि सूरे सहस्सरस्सिम्मि दिणयरे तेयसा जलंते समणं भगवं महावीरं वंदित्ता नमंसित्ता जाव पज्जुवासित्ता, समणेणं भगवया महावीरेणं अब्भणुण्णाए समाणे सयमेव पंच महव्वयाणि आरोवेत्ता, समणा य समणीओ य खामेत्ता, तहारूवेहिं थेरेहिं कडाऽईहिं सद्धिं विपुलं पव्वयं सणियं सणियं दुरूहित्ता, मेघघणसन्निगासं देवसन्निवातं पुढवीसिलापट्टयं पडिलेहित्ता, दब्भसंथारयं संथरित्ता, दब्भसंथारोवगयस्स संलेहणाझूसणाझूसियस्स भत्त पाणपडियाइक्खियस्स पाओवगयस्स कालं अणवकंखमाणस्स विहरित्तए त्ति कट्टु एवं संपेहेइ, संपेहित्ता कल्लं पाउप्पभायाए रयणीए जाव जलंते जेणेव समणे भगवं महावीरे जाव पज्जुवासइ।

४८. तदनन्तर किसी एक दिन रात्रि के पिछले पहर में धर्म-जागरणा करते हुए स्कन्दक अनगार के मन मे इस प्रकार का अध्यवसाय, चिन्तन यावत् सकल्प उत्पन्न हुआ कि मै इस (पूर्वोक्त) प्रकार के उदार यावत् महाप्रभावशाली तप द्वारा शुष्क, रूक्ष यावत् कृश हो गया हूँ। यावत् मेरा शारीरिक बल क्षीण हो गया, मै केवल आत्म-बल से चलता हूँ और खडा रहता हूँ। यहाँ तक कि बोलने के बाद, बोलते समय और बोलने से पूर्व भी मुझे ग्लानि-खिन्नता होती है यावत् पूर्वोक्त गाडियो की तरह चलते और खडे रहते हुए मेरी हड्डियों से खड-खड आवाज होती है। अतः जब तक मुझमे उत्थान, कर्म, बल, वीर्य, पुरुषकार, पराक्रम है, जब तक मेरे धर्माचार्य, धर्मोपदेशक, तीर्थंकर श्रमण भगवान महावीर गन्धहस्ती की तरह विचरण कर रहे है, तब तक मेरे लिए श्रेयस्कर है कि इस रात्रि के व्यतीत हो जाने पर कल प्रातःकाल कोमल उत्पलकमलो को विकसित करने वाले, क्रमशः निर्मल प्रभायुक्त अशोक के समान प्रकाशमान, टेसू के फूल, तोते की चोच, गुजा के अर्द्ध-भाग जैसे लाल, कमलवनो को विकसित करने वाले, सहस्ररश्मि, तथा तेज से जाज्वल्यमान दिनकर सूर्य के उदय होने पर मैं श्रमण भगवान महावीर को वन्दना-नमस्कार यावत् पर्युपासना करके श्रमण भगवान महावीर की आज्ञा प्राप्त करके,

स्वयमेव पंचमहाव्रतों का आरोपण करके, श्रमण-श्रमणियों के साथ क्षमापना करके कृतादि (प्रतिलेखना आदि धर्मक्रियाओं में कुशल व समर्थ) तथारूप स्थविर साधुओं के साथ विपुलगिरि पर शनैः-शनैः चढ़कर, मेघसमूह के समान काले, देवो के अवतरणस्थानरूप पृथ्वीशिलापट्ट की प्रतिलेखना करके, उस पर डाभ (दर्भ) का सथारा (संस्तारक) बिछाकर, उस दर्भ संस्तारक पर बैठकर आत्मा को संलेखना तप द्वारा कर्मों को नष्ट करके, आहार-पानी का सर्वथा त्याग (प्रत्याख्यान) करके पादपोपगमन संथारा करके, मृत्यु की आकांक्षा न करता हुआ विचरण करूँ।

इस प्रकार का विचार किया और रात्रि व्यतीत होने पर प्रातःकाल यावत् जाज्वल्यमान सूर्य के उदय होने पर स्कन्दक अनगार श्रमण भगवान महावीर स्वामी की सेवा में आकर उन्हे वन्दना-नमस्कार करके यावत् पर्युपासना करने लगे।

48. Then one night, around last quarter, while doing religious studies ascetic Skandak had an inspiration (*adhyavasaya*), thought (*chintan*) .. and so on up to . resolve (*sankalp*) that as a consequence of the said austerities that were free of expectations (*udaar*). and so on up to.. severe, I have become dehydrated.. and so on up to. . It is through shear will power that I move and stand. So much so that after speaking, or while speaking or even the thought of speaking exhausts me... and so on up to . When I walk or remain standing my bones rattle just like aforesaid carts Therefore, as long as I am endowed with capacity to rise (*utthaan*) and act (*karma*), with strength (*bal*), potency (*virya*), and with the will of self-exertion (*purushakar-parakram*); as long as my spiritual teacher and guide Tirthankar Shraman Bhagavan Mahavir moves about like a king elephant; it would be good for me that tomorrow; when the night ends and the dawn breaks, when the blue and other lotuses bloom beautifully, when the sun rises with its crimson glow like *Ashoka* and *Palash* flowers, a parrot's beak, and red-half of *Gunja* seed, causing the multitude of lotuses to blossom and attains brilliance with its thousand rays; I should pay homage and obeisance... and so on up to. . worship Shraman Bhagavan Mahavir. After that I should seek permission from Bhagavan Mahavir, embrace the five great vows on my own, seek pardon from male and female ascetics (*Shraman* and *Shramani*), and slowly ascend Vipula mountain in the company of *tatharupa* (conforming to *Agams*) accomplished (in various ascetic rituals and codes) senior ascetics (*sthavirs*). After that I should seek, inspect and clean a cloud-like black rock suited for descent of gods and make a bed of hay (*darbh*). I should then destroy all the *karmas* through the ultimate vow (*Samlekhana*), give up all food intake, recline on the said bed, take the

vow of *Padapopagaman Santhara* (tree like end) and spend my time without desiring for death.

With this resolve, when the night ended and the dawn broke, ... and so on up to... with the brilliant sun, ascetic Skandak came to Shraman Bhagavan Mahavir and after paying homage and obeisance... and so on up to... commenced worship.

४९. 'खंदया !' इ समणे भगवं महावीरे खंदयं अणगारं एवं वयासी–से नूणं तव खंदया ! पुव्वरत्तावरत्त काल समयंसि जाव (सु. ४८) जागरमाणस्स इमेयारूवे अज्झत्थिए जाव (सु. १७) समुपज्जित्था–'एवं खलु अहं इमेणं एयारूवेणं ओरालेणं विपुलेणं तं चेव जाव (सु. ४८) कालं अणवकंखमाणस्स विहरित्तए त्ति कट्टु' एवं संपेहेसि, संपेहित्ता कल्लं पाउप्पभायाए जाव जलंते जेणेव मम अंतिए तेणेव हव्वमागए। से नूणं खंदया ! अट्ठे समट्ठे ?

हंता, अत्थि।

अहासुहं देवाणुप्पिया ! मा पडिबंधं करेह।

४९. 'हे स्कन्दक !' इस प्रकार सम्बोधित करके श्रमण भगवान महावीर ने स्कन्दक अनगार से इस प्रकार कहा– स्कन्दक ! रात्रि के पिछले पहर मे धर्म जागरणा करते हुए तुम्हे इस प्रकार का अध्यवसाय यावत् सकल्प उत्पन्न हुआ कि ''इस उदार यावत् महाप्रभावशाली तपश्चरण से मेरा शरीर अब कृश हो गया है, यावत् अब मै सलेखना–संथारा करके मृत्यु की आकाक्षा न करके पादपोपगमन अनशन करूँ।'' ऐसा विचार करके प्रात काल सूर्योदय होने पर तुम मेरे पास आए हो। हे स्कन्दक ! क्या यह सत्य है ?''

स्कन्दक अनगार ने कहा–हाँ, भगवन् ! यह सत्य है।

भगवान ने कहा–हे देवानुप्रिय ! जैसा तुम्हे सुख हो, वैसा करो; इस कार्य में विलम्ब मत करो।

49. "O Skandak !" Addressing thus, Shraman Bhagavan Mahavir said to ascetic Skandak—"Skandak ! Around the last quarter of the night, while doing religious studies you had an inspiration (*adhyavasaya*), ... and so on up to. . resolve (*sankalp*), 'as a consequence of the said austerities, which were free of expectations (*udaar*) . and so on up to... severe, I have become dehydrated . and so on up to. . take the ultimate vow (*Samlekhana*) and the vow of *Padapopagaman Santhara* (tree like end)' With this resolve you have come to me at dawn. O Skandak ! Is it correct ?"

Ascetic Skandak said—Yes, *Bhagavan* ! It is so.

Bhagavan said—"Beloved of gods ! Do as you please and avoid languor when doing a good deed "

५०. तए णं से खंदए अणगारे समणेणं भगवया महावीरेणं अब्भणुण्णाए समाणे हट्ठतुट्ठ० जाव हयहियए उट्ठाए उट्ठेइ, उट्ठित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेइ जाव नमंसित्ता

सयमेव पंच महव्वयाइं आरुहेइ, आरुहित्ता समणे य समणीओ य खामेइ, तहारूवेहिं थेरेहिं कडाऽऽईहिं सद्धिं विपुलं पव्वयं सणियं सणियं दुरूहेइ, दुरूहित्ता मेघघणसन्निगासं देवसन्निवायं पुढविसिलावट्टयं पडिलेहेइ, पडिलेहित्ता उच्चारपासवणभूमिं पडिलेहेइ, पडिलेहित्ता दब्भसंथारयं संथरेइ, संथेरित्ता पुरत्थाभिमुहे संपलियंकनिसण्णे करयलपरिग्गहियं दसनहं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु एवं वयासी-

नमोऽत्थु णं अरहंताणं भगवंताणं जाव संपत्ताणं, नमोऽत्थु णं समणस्स भगवओ महावीरस्स जाव संपाविउकामस्स, वंदामि णं भगवंतं तत्थगयं इहगयं, पासउ मे भयवं तत्थगए इहगयं ति कट्टु वंदइ नमंसति, वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी-"पुव्विं पि मए समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए सव्वे पाणातिवाए पच्चक्खाए जावज्जीवाए जाव मिच्छादंसणसल्ले पच्चक्खाए जावज्जीवाए, इयाणिं वि य णं समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए सव्वं पाणाइवायं पच्चक्खामि जावज्जीवाए जाव मिच्छादंसणसल्लं पच्चक्खामि। एवं सव्वं असणं पाणं खाइमं साइमं चउव्विहं पि आहारं पच्चक्खामि जावज्जीवाए। जं पि य इमं सरीरं इट्ठं कंतं पियं जाव फुसंतु त्ति कट्टु एयं पि णं चरिमेहिं उस्सास-नीसासेहिं वोसिरामि" त्ति कट्टु संलेहणा-झूसणाझूसिए भत्त-पाणपडियाइक्खिए पाओवगए कालं अणवकंखमाणे विहरइ।

५०. तदनन्तर स्कन्दक अनगार श्रमण भगवान महावीर की आज्ञा प्राप्त हो जाने पर अत्यन्त हर्षित, संतुष्ट यावत् प्रफुल्ल हृदय हुए। फिर खडे होकर श्रमण भगवान महावीर को तीन बार दाहिनी ओर से प्रारम्भ कर प्रदक्षिणा की और वन्दना-नमस्कार करके स्वयमेव पाँच महाव्रतो का आरोपण किया। फिर श्रमण-श्रमणियों से क्षमायाचना की और तथारूप योग्य कृतादि स्थविरो के साथ शनै.-शनै विपुलाचल पर चढे। वहाँ मेघ-समूह के समान काले, देवो के उतरने योग्य स्थानरूप एक पृथ्वीशिलापट्ट की प्रतिलेखना की तथा उच्चार-प्रस्रवणादि परिष्ठापनभूमि की प्रतिलेखना की। ऐसा करके उस पृथ्वीशिलापट्ट पर डाभ का सथारा बिछाकर, पूर्व दिशा की ओर मुख करके, पर्यंकासन से बैठकर, दसो नख सहित दोनो हाथो को मिलाकर मस्तक पर रखकर, दोनो हाथ जोडकर इस प्रकार बोले-

अरिहन्त भगवन्तो को, यावत् जो मोक्ष को प्राप्त हो चुके हैं, उन्हे नमस्कार हो तथा अविचल शाश्वत सिद्ध स्थान को प्राप्त करने की इच्छा वाले श्रमण भगवान महावीर स्वामी को नमस्कार हो। (अर्थात् 'नमोत्थुण' के पाठ का दो बार उच्चारण किया।) तत्पश्चात् कहा-'वहाँ रहे हुए भगवान महावीर स्वामी को यहाँ रहा हुआ मैं वन्दना करता हूँ। वहाँ विराजमान श्रमण भगवान महावीर स्वामी यहाँ पर रहे हुए मुझको देखें।' ऐसा कहकर भगवान को वन्दना-नमस्कार किया। वन्दना-नमस्कार करके वे इस प्रकार बोले-'मैने पहले भी श्रमण भगवान महावीर स्वामी के पास यावज्जीवन के लिए सर्व प्राणातिपात का त्याग किया था, यावत् मिथ्यादर्शनशल्य तक अठारह ही पापो का त्याग किया था। इस समय भी श्रमण भगवान महावीर स्वामी के पास यावज्जीवन के लिए सर्व प्राणातिपात से लेकर मिथ्यादर्शनशल्य तक अठारह ही पापों का त्याग करता हूँ और यावज्जीवन के लिए अशन, पान, खादिम और स्वादिम, इन चारो प्रकार के आहार का त्याग करता हूँ। तथा यह मेरा शरीर, जोकि मुझे इष्ट, कान्त, प्रिय है, यावत् जिसकी मैंने बाधा-पीडा, रोग, आतंक, परीषह और उपसर्ग आदि से रक्षा की है, ऐसे शरीर का भी अन्तिम श्वासोच्छ्वास तक व्युत्सर्ग (ममत्व-विसर्जन) करता हूँ, यों कहकर सलेखना संथारा करके, भक्त-पान का सर्वथा त्याग करके पादपोपगमन अनशन करके मृत्यु की आकांक्षा न करते हुए विचरण करने लगे।

50. On getting permission from Bhagavan Mahavir, ascetic Skandak was extremely pleased, contented... and so on up to... exhilarated with bliss. He got up, went around Shraman Bhagavan Mahavir clockwise three times and after paying homage and obeisance he reaffirmed the five great vows on his own. He then sought pardon from male and female ascetics (*Shraman* and *Shramani*), and slowly ascended Vipula mountain in the company of *tatharupa* (conforming to *Agams*) accomplished (in various ascetic rituals and codes) senior ascetics (*sthavir*). Reaching there he found, inspected and cleaned (*pratilekhana*) a cloud-like black rock suited for descent of gods. He also found, inspected and cleaned a suitable spot for disposal of excreta. He then made a bed of hay (*darbh*) on that slab of rock, sat down in *Paryank* posture facing east, joined his ten fingers and palms, touched them to his forehead and uttered—

I bow and convey my reverence to the worthy ones (*Arhantanam*), the supreme ones (*bhagavantanam*)... and so on up to .. who have attained the state of ultimate perfection. I bow and pay homage to Shraman Bhagavan Mahavir and so on up to . who is the aspirant of and destined to attain the state of ultimate perfection (*siddha gai* or *siddha gati*) (In other words he recited the *Namotthunam* panegyric twice.) He then added—"From this place I bow to Shraman Bhagavan Mahavir who is seated there. Seated there, may he see me here " With these words he paid homage and obeisance to *Bhagavan* and added—"Earlier too I had renounced for life the eighteen sinful acts including all harm to living beings and so on up to.. thorn of unrighteousness. At this moment as well I renounce for life the eighteen sinful acts including all harm to living beings... and so on up to... thorn of unrighteousness Also, I abandon for life four kinds of intake including staple food, liquids, general food and savoury food (*ashan, paan, khadya* and *svadya*). Also I dissociate my self, till my least breath, from this body of mine; the body that is desirable (*isht*), fond (*kaant*), lovable (*priya*) to me.. and so on up to. . and which I protected from pain, disease, fear, afflictions, torments etc. With these words he took the ultimate vow (*Samlekhana*), gave up all food intake, took the vow of *Padapopagaman Santhara* (tree like end) and spent his time without desiring for death.

५१. तए ण से खंदए अणगारे समणस्स भगवओ महावीरस्स तहारूवाणं थेराणं अंतिए सामाइयमाइयाइं एक्कारस्स अंगाइं अहिज्जित्ता बहुपडिपुण्णाइं दुवालसवासाइं सामण्णपरियागं पाउणित्ता

मासियाए संलेहणाए अत्ताणं झूसित्ता सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए छेदेत्ता आलोइयपडिक्कंते समाहिपत्ते आणुपुव्वीए कालगए।

५१. इसके पश्चात् स्कन्दक अनगार, श्रमण भगवान महावीर स्वामी के तथारूप स्थविरों के पास ग्यारह अंगो का अध्ययन, पूरे बारह वर्ष तक श्रमण-पर्याय का पालन करके, एक मास की संलेखना से अपनी आत्मा को सलिखित (सेवित = युक्त) करके साठ भक्त का त्यागरूप अनशन करके, आलोचना और प्रतिक्रमण करके समाधि प्राप्त करके क्रमश कालधर्म को प्राप्त हुए।

51. After that, having concluded his study of eleven *Angas* under senior ascetic disciples (*sthavirs*) of Shraman Bhagavan Mahavir, having completed twelve year span of ascetic life, having enriched his soul with month long final fasting (*samlekhana*), having performed fast by missing sixty meals and doing self-appraisal (*pratikraman*) and critical review (*alochana*), ascetic Skandak attained the transcendental state (*samadhi*) and passed away.

५२. तए णं ते थेरा भगवंतो खंदयं अणगारं कालगयं जाणित्ता परिनिव्वाणवत्तियं काउस्सग्गं करेंति, करित्ता, पत्त-चीवराणि गिण्हंति, गिण्डित्ता विपुलाओ पव्वयाओ सणियं २ पच्चोसक्कंति, पच्चोसक्कित्ता जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं वंदंति नमंसंति, वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी-एवं खलु देवाणुप्पियाणं अंतेवासी खंदए नामं अणगारे पगइभद्दए पगतिविणीए पगतिउवसंते पगति-पयणुकोह-माण-माया-लोभे मिउ-मद्दवसंपन्ने अल्लीणे भद्दए विणीए। से णं देवाणुप्पिएहिं अब्भणुण्णाए समाणे सयमेव पंच महव्वयाणि आरोवित्ता समणे य समणीओ य खामेत्ता, अम्हेहिं सद्धिं विपुलं पव्वयं तं चेव निरवसेसं जाव (सु. ५०) अहाणुपुव्वीए कालगए। इमे य से आयारभंडए।

५२. तत्पश्चात् उन स्थविर भगवन्तो ने स्कन्दक अनगार को कालधर्म प्राप्त हुआ जानकर उनके परिनिर्वाण (समाधिमरण) सम्बन्धी कायोत्सर्ग किया। फिर उनके पात्र, वस्त्र आदि उपकरणों को लेकर वे विपुलगिरि से शनै.-शनै नीचे उतरे। उतरकर जहाँ श्रमण भगवान महावीर स्वामी विराजमान थे, वहाँ आए। भगवान को वन्दना-नमस्कार कर उन स्थविर मुनियो ने इस प्रकार कहा-हे भगवन्! आप देवानुप्रिय के शिष्य स्कन्दक अनगार, जोकि प्रकृति से भद्र, प्रकृति के विनीत, स्वभाव से उपशान्त, अल्पक्रोध-मान-माया-लोभ वाले, कोमलता और नम्रता से युक्त, इन्द्रियो को वश मे करने वाले, भद्र और विनीत थे, वे आपकी आज्ञा लेकर स्वयमेव पचमहाव्रतो का आरोपण करके, साधु-साध्वियो से क्षमापना करके, हमारे साथ विपुलगिरि पर गये थे, यावत् वे पादपोपगमन संथारा करके कालधर्म को प्राप्त हो गए है। ये उनके धर्मोपकरण है।

52. When the senior ascetics accompanying ascetic Skandak realized that he was dead, they performed the ritual meditation prescribed to be done on meditational death (*parinirvana*) They picked up his equipment (the things like broom, wooden pots etc) and slowly came down from the

mountain. Then they came where Shraman Bhagavan Mahavir was seated. After paying homage, those senior ascetics submitted—"*Bhante* ! Your disciple ascetic Skandak was by nature noble, humble and serene; had only traces of anger, conceit, deceit and greed; was soft and polite; had subdued his sense organs and was gentle and modest. Getting your permission, taking five great vows on his own, and seeking forgiveness from all the ascetics he had gone to the Vipul mountain with us... and so on up to... Following the prescribed procedure he took the ultimate vow and consequently met his end These are his ascetic-equipment."

स्कन्दक की गति विषय में कथन ABOUT REBIRTH OF SKANDAK

५३. [प्र.] 'भंते !' त्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदति नमंसति, वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी–एवं खलु देवाणुप्पियाणं अंतेवासी खंदए नामं अणगारे कालमासे कालं किच्चा कहिं गए, कहिं उववण्णे ?

[उ.] 'गोयमा !' इ समणे भगवं महावीरे भगवं गोयमं एवं वयासी–एवं खलु गोयमा ! मम अंतेवासी खंदए नामं अणगारे पगतिभद्दए जाव से णं मए अब्भणुण्णाए समाणे सयमेव पंच महव्वयाइं आरोवित्ता तं चेव सव्वं अविसेसियं नेयव्वं जाव (सु. ५०–५१) आलोइयपडिक्कंते समाहिपत्ते कालमासे कालं किच्चा अच्चुए कप्पे देवत्ताए उववण्णे। तत्थ णं एगइयाणं देवाणं बावीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता। तत्थ णं खंदयस्स वि देवस्स बावीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता।

५३. [प्र.] तत्पश्चात् भगवान गौतम स्वामी ने श्रमण भगवान महावीर स्वामी को वन्दना-नमस्कार करके पूछा–'भगवन् ! आपके शिष्य स्कन्दक अनगार कालधर्म को प्राप्त करके कहाँ गए और कहाँ उत्पन्न हुए ?'

[उ.] श्रमण भगवान महावीर स्वामी ने फरमाया–'हे गौतम ! मेरा शिष्य स्कन्दक अनगार, प्रकृतिभद्र यावत् विनीत मेरी आज्ञा प्राप्त करके, स्वयमेव पचमहाव्रतो का आरोपण करके, यावत् सल्लेखना-सथारा करके समाधि को प्राप्त होकर काल करके अच्युतकल्प (देवलोक) मे देवरूप में उत्पन्न हुआ है। वहाँ कतिपय देवो की स्थिति बाईस सागरोपम की है। तदनुसार स्कन्दक देव की स्थिति भी बाईस सागरोपम की है।'

53. [Q.] Gautam Swami asked Shraman Bhagavan Mahavir after offering due homage and obeisance—"*Bhante* ! After his death where has your disciple ascetic Skandak has gone and where has he taken birth ?"

[Ans.] Shraman Bhagavan Mahavir replied, "Gautam ! My disciple ascetic Skandak was by nature noble . and so on up to. modest Getting my permission, taking five great vows on his own... and so on up to . took the ultimate vow, met his end and has reincarnated as a divine being in

Achyut Kalp (a divine dimension). There some of the gods have a life-span of twenty two *Sagaropam* (a metaphoric unit of time). Skandak Dev too has the life-span of twenty two *Sagaropam* (a metaphoric unit of time).

५४. [प्र.] से णं भंते ! खंदए देवे ताओ देवलोगाओ आउक्खएणं भवक्खएणं ठिइक्खएणं अणंतरं चयं चइत्ता कहिं गच्छिहिति ? कहिं उववज्जिहिति ?

[उ.] गोयमा ! महाविदेहे वासे सिज्झिहिति बुज्झिहिति मुच्चिहिति परिनिव्वाहिति सव्वदुक्खाणमंतं करेहिति। खंदओ सम्मत्तो।

॥ बितीय सए : पढमो उद्देसो समत्तो ॥

५४. [प्र.] तत्पश्चात् गौतम स्वामी ने पूछा–'भगवन् ! स्कन्दक देव वहाँ की आयु का क्षय, भव का और स्थिति का क्षय करके उस देवलोक से कहाँ जाएँगे और कहाँ उत्पन्न होंगे ?'

[उ.] गौतम ! स्कन्दक देव वहाँ की आयु, भव और स्थिति का क्षय होने पर महाविदेह–वर्ष (क्षेत्र) मे जन्म लेकर सिद्ध होंगे, बुद्ध होंगे, मुक्त होंगे, परिनिर्वाण को प्राप्त करेंगे और सभी दुःखो का अन्त करेंगे। श्री स्कन्दक का जीवन–वृत्त पूर्ण हुआ।

54. [Q.] Gautam Swami again asked, "*Bhagavan* ! After completing the age, state and life there, where will Skandak Dev go from that divine realm and where will he be born ?"

[Ans.] "Gautam ! After concluding the age, state and life there, Skandak Dev will be born as a human being in the Mahavideh area and achieving purity, enlightenment, and freedom he will attain *Nirvana* and terminate all his miseries" This concludes the story of life of Shri Skandak.

विशेष शब्दार्थ–आउक्खएणं = आयुष्यकर्म के दलिको की निर्जरा होने से, **भवक्खएणं** = देवभव के कारणभूत गत्यादि (नाम) कर्मों की निर्जरा होने से, **ठिइक्खएणं** = आयुष्यकर्म भोग लेने से स्थिति का क्षय होने के कारण।

॥ द्वितीय शतक : प्रथम उद्देशक समाप्त ॥

TECHNICAL TERMS

Aaukkhayenam—on shedding of the particles of *ayushya karma* (life-span determining *karmas*); concluding the age. **Bhavakkhayenam**—on shedding of the particles of *naam-karma* responsible for the divine state; concluding the state. **Thi-ikkhayenam**—end of life due to conclusion of life-span determining *karmas*, concluding the life

● END OF THE FIRST LESSON OF THE SECOND SHATAK ●

द्वितीय शतक : द्वितीय उद्देशक
SECOND SHATAK (Chapter Two) : SECOND LESSON

समुद्घात SAMUDGHAT

समुद्घात : तत्सम्बन्धी विश्लेषण **SAMUDGHAT : AN ANALYSIS**

१. [प्र.] कइणं भंते ! समुग्घाया पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! सत्त समुग्घाया पण्णत्ता, तं जहा—वेदणासमुग्घाए। एवं समुग्घायपदं छाउमत्थियसमुग्घायवज्जं भाणियव्वं जाव वेमाणियाणं कसायसमुग्घाया अप्पाबहुयं।

[प्र.] अणगारस्स णं भंते ! भावियप्पणो केवलीसमुग्घाए जाव सासयमणागयद्धं चिट्ठंति ?

[उ.] समुग्घाय पदं णेयव्वं।

॥ बितीय सए : बितीयो उद्देसो समत्तो॥

१. [प्र.] भगवन् ! समुद्घात कितने है ?

[उ.] गौतम ! समुद्घात सात है। जैसे-(१) वेदना-समुद्घात, (२) कषाय-समुद्घात, (३) मारणान्तिक-समुद्घात, (४) वैक्रिय-समुद्घात, (५) तैजस्-समुद्घात, (६) आहारक-समुद्घात, और (७) केवलि-समुद्घात। यहाँ प्रज्ञापनासूत्र का छत्तीसवाँ समुद्घात पद कहना चाहिए, किन्तु उसमे प्रतिपादित छद्मस्थ समुद्घात का वर्णन यहाँ नही कहना चाहिए और इस प्रकार यावत् वैमानिक तक जानना चाहिए, तथा कषाय-समुद्घात और अल्पबहुत्व कहना चाहिए।

[प्र.] हे भगवन् ! भावितात्मा अनगार के क्या केवली-समुद्घात यावत् समग्र भविष्यकालपर्यन्त शाश्वत रहता है ?

[उ.] हे गौतम ! यहाँ भी उपर्युक्त कथनानुसार समुद्घात पद जान लेना चाहिए।

1. [Q.] *Bhante* ! How many *Samudghats* are there ?

[Ans.] Gautam ! There are seven *Samudghats*—(1) *Vedana-samudghat*, (2) *Kashaya-samudghat*, (3) *Maranantik-samudghat*, (4) *Vaikriya-samudghat*, (5) *Taijas-samudghat*, (6) *Aharak-samudghat*, and (7) *Kevali-samudghat*. Here the thirty sixth chapter, *Samudghat-pad*, of *Prajnapana Sutra* should be stated except for the description of *Chhadmasth Samudghat* In the same way it should be stated as . and so on up to. . Vaimanik Also to be added is comparative statement (*alpabahutva*) regarding *Kashaya Samudghat*.

[Q.] *Bhante* ! Does *Kevali-samudghat* of an accomplished ascetic (*bhaavitatma*)... and so on up to... sustains for an ever extending future ?

[Ans.] Gautam ! This also should be read as mentioned in the aforesaid *Samudghat-pad*, of *Prajnapana Sutra*.

विवेचन : विशेष स्थिति में जीव के आत्म-प्रदेशो का विस्फोट जैसी क्रिया के द्वारा अपनी सीमा से बाहर निकालने के लिए समुद्घात कहते हैं। इसके सात भेद इस प्रकार है–

(१) **वेदना-समुद्घात**–वेदना से पीडित होने पर अनुभव योग्य वेदनीय कर्म-प्रदेशो के उदीरणा को उदय में लाना। (२) **कषाय-समुद्घात**–तीव्र क्रोधादि की दशा मे कुछ आत्म-प्रदेशो का बाहर निकलना। (३) **मारणान्तिक-समुद्घात**–मरण से पूर्व कुछ आत्म-प्रदेशो का बाहर निकलना। (४) **वैक्रिय-समुद्घात**–विक्रिया करते समय मूल शरीर को नही छोडते हुए उत्तर शरीर मे जीव-प्रदेशो का प्रवेश करना। विविध रूपो का निर्माण करना। (५) **तैजस्-समुद्घात**–तेजोलेश्या प्रकट करते समय कुछ आत्म-प्रदेशो का बाहर निकलना। इसका प्रयोग अनुग्रह तथा निग्रह के लिए किया जाता है, जैसे-शीतल तेजोलेश्या तथा उष्ण तेजोलेश्या। (६) **आहारक-समुद्घात**–समीप मे केवली के न होने पर चतुर्दशपूर्वी साधु की शका के समाधानार्थ मस्तक से एक श्वेत पुतले के रूप मे कुछ आत्म-प्रदेशो का केवली के निकट जाना और वापस आना। यह शरीर स्फटिक के समय श्वेत, सप्त धातुओ से रहित तथा अप्रतिहत गति वाला होता है। (७) **केवलि-समुद्घात**–आयुष्य के अन्तर्मुहूर्त रहने पर तथा वेदनीय आदि तीन कर्मों की स्थिति बहुत अधिक होने पर उसके समीकरण करने के लिए दण्ड, कपाट आदि के रूप मे जीव-प्रदेशो का शरीर से बाहर फैलना। इसमें केवल आठ समय लगते है। *(केवलि-समुद्घात का वर्णन देखे, अनुयोगद्वार, भाग-१, सूत्र १०८)*

॥ द्वितीय शतक : द्वितीय उद्देशक समाप्त ॥

Elaboration—Bursting forth of soul-space-points (*atma-pradesh*) from their normal confines is called *Samudghat* Its seven types are briefly described as follows—

(1) Vedana-samudghat—Bursting forth of some soul-space-points due to suffering of pain **(2) Kashaya-samudghat**—Bursting forth of some soul-space-points due to intense anger and other passions. **(3) Maranantik-samudghat**—Bursting forth of some soul-space-points just before death **(4) Vaikriya-samudghat**—Controlled bursting forth of some soul-space-points without completely abandoning the original body during the process of creating secondary transmuted body (*vaikriya sharira*). **(5) Taijas-samudghat**—Bursting forth of some soul-space-points during launching fire-power (*tejoleshya*) **(6) Aharak-samudghat**—Bursting forth of some soul-space-points in the form of a white puppet, which goes to an omniscient and returns after getting answers This is done by a *Chaturdashpurvi* ascetic (a scholar of fourteen subtle canons) to clear his doubts. **(7) Kevali-samudghat**—Bursting forth and withdrawal of soul-space-points after acquiring shapes of a rod, a slab etc in order to balance the three excessive residual *karmas* including *Vedaniya* (*karma* responsible for mundane experience of pain and pleasure). This is done by a *Kevali* when one *Antarmuhurt* of his life-span is left and the duration of *karmas* still to be experienced is more This process takes eight *Samayas* to conclude *(For details see Illustrated Anuyogadvar Sutra, Part-1, aphorism 108)*

● END OF THE SECOND LESSON OF THE SECOND SHATAK ●

द्वितीय शतक : तृतीय उद्देशक
SECOND SHATAK (Chapter Two) : THIRD LESSON

पृथ्वी PRITHVI (HELL)

सात नरकपृथ्वियाँ सम्बन्धित वर्णन DESCRIPTION OF SEVEN HELLS

१. [प्र.] कइ णं भंते ! पुढवीओ पण्णत्ताओ ?

[उ.] जीवाभिगमे नेरइयाणं जो बितिओ उद्देसो सो नेयब्वो।

[प्र.] पुढवी ओगाहित्ता निरया संठाणमेव बाहल्लं। जाव

किं सब्वे पाणा उववन्नपुब्वा ?

[उ.] हंता, गोयमा ! असइं अदुवा अणंतखुत्तो।

॥ बितीय सए : तइओ उद्देसो समत्तो॥

१. [प्र.] भगवन् ! पृथ्वियाँ कितनी हैं ?

[उ.] गौतम ! जीवाभिगमसूत्र में नैरयिकों का दूसरा उद्देशक कहा है, उसमें पृथ्वी-सम्बन्धी (नरकभूमि से सम्बन्धित) उनके सस्थान, मोटाई आदि का तथा यावत्-अन्य जो भी वर्णन है, वह सब यहाँ कहना चाहिए।

[प्र.] भगवन् ! क्या सब जीव उत्पन्नपूर्व है ? अर्थात्-सभी जीव पहले रत्नप्रभा आदि पृथ्वियों में उत्पन्न हुए है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! सभी जीव रत्नप्रभा आदि नरकपृथ्वियो मे अनेक बार अथवा अनन्त बार पहले उत्पन्न हो चुके है। यावत्-यहाँ जीवाभिगमसूत्र का पृथ्वी-उद्देशक कहना चाहिए।

1. [Q.] *Bhante* ! How many *prithvis* (hells) are there ?

[Ans.] Gautam ! In *Jivabhigam Sutra* the second chapter is about infernal beings (*nairayiks*). From that all details about *prithvis* (hells) including their structure, depth etc. should be repeated here.

[Q.] *Bhante* ! Have all beings been born there (in hells including Ratnaprabha) before ?

[Ans.] Yes, Gautam ! All beings have been born there (in hells including Ratnaprabha) many times or infinite times. (Here the chapter titled *Prithvi* from *Jivabhigam Sutra* should be repeated.)

विवेचन : जीवाभिगमसूत्र के द्वितीय उद्देशक मे पृथ्वियो का वर्णन इस प्रकार है–

"पुढवी ओगाहित्ता णिरया, संठाणमेव बाहल्लं।
विक्खंभ-परिक्खेवो, वण्णो गंधो य फासो य॥" (संग्रहणी गाथा)

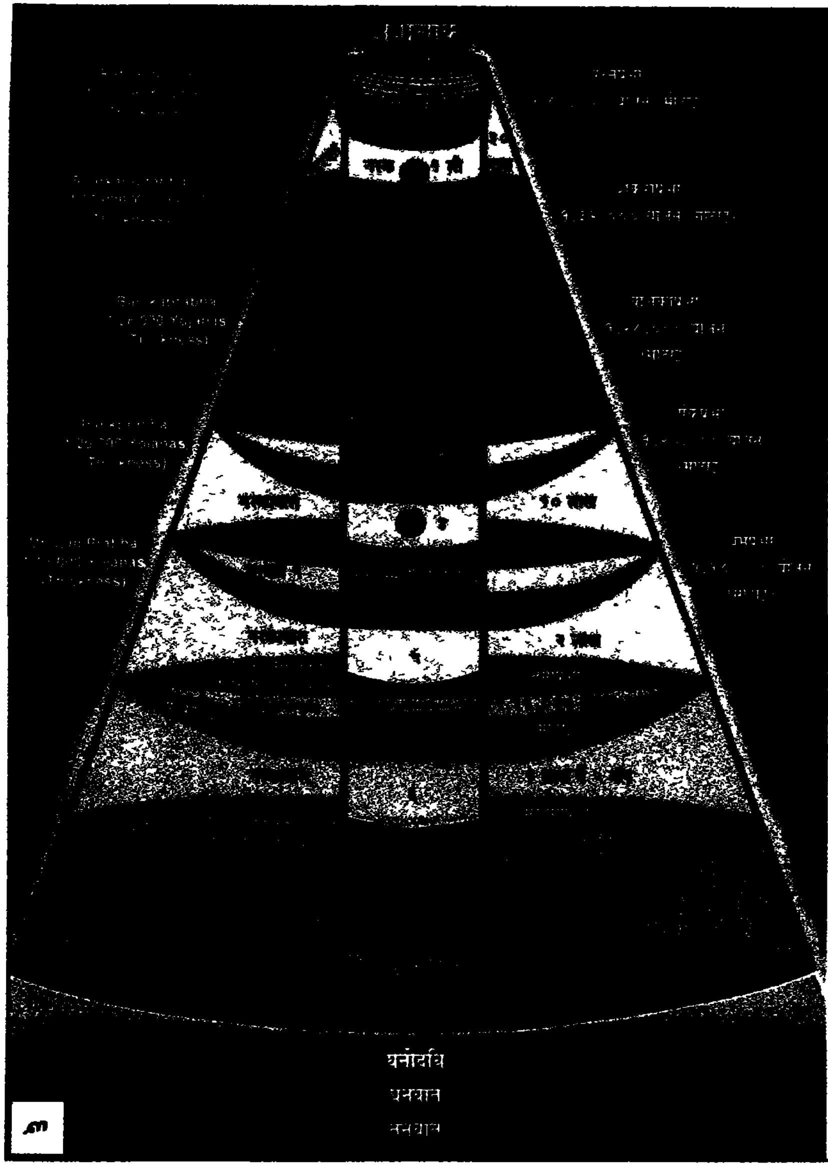
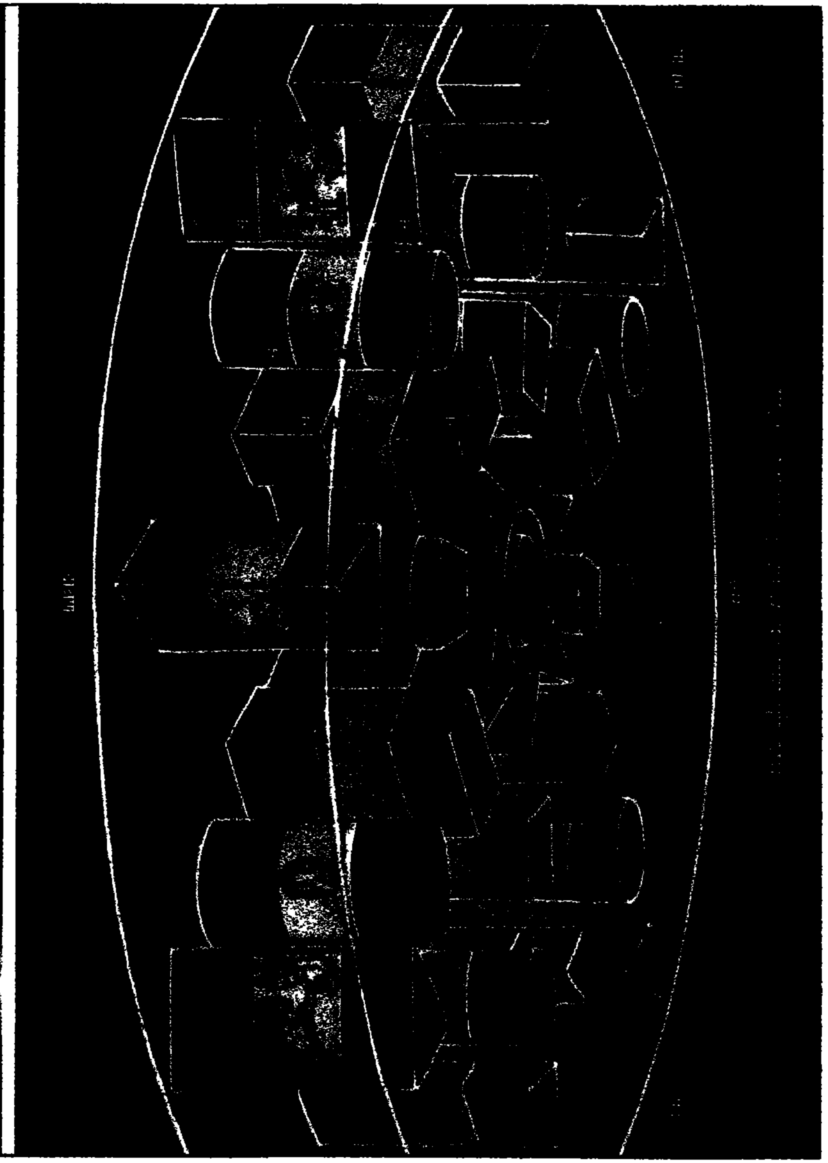
(१) रत्नप्रभा आदि, पृथ्वियाँ सात हैं। (२) कितनी दूर जाने पर नरकावास हैं? रत्नप्रभा पृथ्वी की मोटाई एक लाख अस्सी हजार योजन है, उसमें से एक-एक हजार योजन ऊपर और नीचे छोड़कर बीच के १,७८,००० योजन मे ३० लाख नरकावास हैं। शर्कराप्रभा की मोटाई १,३२,००० योजन, बालुकाप्रभा की १,२८,००० योजन, पकप्रभा की १,२०,००० योजन, धूमप्रभा की १,१८,००० योजन, तम.प्रभा की १,१६,००० योजन, तमस्तम प्रभा की १,०८,००० योजन है। (३) संस्थान-आवलिका प्रविष्ट नरकावासों का सस्थान गोल, त्रिकोण और चतुष्कोण होता है। शेष का नाना प्रकार का। (४) बाहल्य (मोटाई)-प्रत्येक नरकावास की ३,००० योजन है। (५) विष्कम्भ परिक्षेप (लम्बाई, चौड़ाई और परिधि)-कुछ नरकावास संख्येय (योजन) विस्तृत हैं, कुछ असख्येय योजन विस्तृत है। (६) वर्ण-नारको का वर्ण भयंकर काला, उत्कटरोमाचयुक्त (७) गन्ध-सर्पादि के मृत कलेवर से भी कई गुनी बुरी गन्ध। (८) स्पर्श-क्षुरधारा, खड्गधारा आदि से भी गई गुना तीक्ष्ण। अग्नि ज्वाला और बिच्छू के डक से भी अधिक कष्टप्रद। *(स्पष्टता हेतु सलग्न रेखाचित्र देखे। सौजन्य वृहत् सग्रहणी आचार्य विजय यशोदेव सूरि)*

॥ द्वितीय शतक : तृतीय उद्देशक समाप्त॥

Elaboration—The description of hells in the second chapter of *Jivabhigam Sutra* according to the collative verse is as follows—

(1) There are seven *prithvis* (hells) including Ratnaprabha. (2) At what distance are the infernal abodes ? The depth of Ratnaprabha *prithvi* is one hundred eighty thousand *Yojans* Leaving one thousand *Yojans* from top as well as bottom there are three million infernal abodes in the remaining 1,78,000 *Yojans* The depth of Sharkaraprabha is 1,32,000 *Yojans*, that of Balukaprabha is 1,28,000 *Yojans*, that of Pankaprabha is 1,20,000 *Yojans*, that of Dhoom-prabha is 1,18,000 *Yojans*, that of Tamah-prabha is 1,16,000 *Yojans*, and that of Tamstamah-prabha is 1,08,000 *Yojans*. (3) Structure (*samsthan*)—The infernal abodes in a row (*avalika pravisht*) are round, triangular and quadrangular in shape Others spread at random are in various shapes (4) *Bahalya* (width or thickness)—It is 3,000 *Yojans* for each infernal abode (5) *Vishkambh Parikshep* (length, width and circumference)—Some infernal abodes are stretched over dimensions that measure countable *Yojans* while others that measure innumerable *Yojans* (6) *Varna* (colour)—The colour of infernal beings is fearfully black and extremely terrifying (7) *Gandh* (odour)—It is many times more repulsive than that of a rotten carcass of a snake or other animal. (8) *Sparsh* (touch)—Many times sharper than the edge of a razor or sword. More painful than a flame or sting of a scorpion (for clarity see illustration reproduced from *Brihat Sangrahani* by Acharya Vijaya Yashodev Suri)

● END OF THE THIRD LESSON OF THE SECOND SHATAK ●


घनोदधि
घनवात
तनवात


चित्र परिचय-६ | Illustration No. 6

सात पृथ्वियाँ : नरकावास

(अ) गणधर गौतम द्वारा सात नरक पृथ्वियो के विषय मे पूछने पर भगवान बताते है-मेरु पर्वत के समभूतला से १ हजार योजन नीचे जाने पर रत्नप्रभा नामक प्रथम पृथ्वी की सीमा प्रारम्भ होती है। इसकी मोटाई (ऊँचाई) एक लाख अस्सी हजार योजन की है। १ हजार योजन ऊपर एक हजार योजन नीचे छोडकर १ ७८ हजार योजन मे स्थित १३ पाथडो मे तीस लाख नारकावास है। इसके नीचे शर्करा प्रभा, बालुका प्रभा आदि सात पृथ्वियाँ (नरक भूमियाँ) स्थित है। इनके सभी पाथडो (प्रस्तर) की मोटाई तीन हजार योजन की है। जिनमे नीचे का १ हजार योजन निबिड अधकारमय बीच का १ हजार योजन पोला (खाली) तथा ऊपर का १ हजार योजन सकुचित आकार का है। प्रथम नरक के १३ प्रतरो मे ४४३३ आवलिका प्रविष्ट, बाकी २९,९५,५६७ प्रकीर्णक है। सातो नरको मे कुल ८४ लाख नारकावास है।

(ब) **नरको का सस्थान**–चारो दिशाओ मे पक्ति रूप मे अवस्थित–**आवलिका प्रविष्ट** है। वे गोल त्रिकोण तथा चतुष्कोण है। तथा शेष प्रकीर्णक (बिखरे हुए) विविध आकार के है।

इनमे सबसे बीच मे स्थित सीमन्तक नामक नरकेन्द्रक है। यह सबसे बडा है। बाकी चारो दिशाओ व विदिशाओ मे भिन्न-भिन्न प्रमाण मे नारकावास है।

नरको का वर्ण अत्यन्त कृष्ण रोमहर्षक दुर्गन्ध युक्त बिच्छू के डक की तरह तीक्ष्ण स्पर्श वाला, धधकती अगार ज्वाला के समान कष्टदायक है।

शतक २ उ ३ सूत्र १ (विशेष वर्णन जीवाभिगम तृतीय प्रतिपत्ति)

SEVEN PRITHVIS (HELLS)

(A) On being asked by Gautam Ganadhar about seven hells Bhagavan explains—Going 1000 Yojans below the flat land at the base of Meru mountain starts boundary of the first hell called Ratnaprabha Prithvi The depth of Ratnaprabha prithvi is one hundred eighty thousand Yojans Leaving one thousand Yojans from top as well as bottom there are three million infernal abodes in the 13 sections of the remaining 1,78,000 Yojans Below this are seven hells including Sharkaraprabha and Balukaprabha The depth of each of these including all sections is three thousand Yojans Of these the lowest section of one thousand Yojans is pitch dark the middle section of the same depth is hollow and the upper one is tapered In the 13 sections there are 4433 abodes in rows and remaining 29,95,567 are scattered at random The total number of abodes in the seven hells is 8 4 million

(B) Structure—Some of the abodes in hells are in rows in all the four directions They are round, triangular and quadrangular in shape The remaining are scattered at random

In the middle is the central abode called Simantak It is the largest Other abodes scattered all around this are of different dimensions

The colour of the hells is fearfully black and extremely terrifying The odour very repulsive The touch is more painful than a flame or sting of a scorpion

--Shatak 2 lesson 3 Sutra 1 (more detail Jivabhigam third Pratipatti)

द्वितीय शतक : चतुर्थ उद्देशक
SECOND SHATAK (Chapter Two) : FOURTH LESSON

इन्द्रिय INDRIYA (SENSE ORGANS)

इन्द्रियों के संस्थानादि का वर्णन **DESCRIPTION OF INDRIYAS**

१. [प्र.] कइ णं भंते ! इंदिया पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! पंच इंदिया पण्णत्ता, तं जहा–पढमिल्लो इंदियउद्देसओ नेयव्वो, संठाणं बाहल्लं पोहत्तं जाव अलोगो। इंदिय उद्देसो।

॥ बितीय सए : चउत्थो उद्देसो समत्तो॥

१. [प्र.] भगवन् ! इन्द्रियाँ कितनी है ?

[उ.] गौतम ! पाँच इन्द्रियाँ हैं। जैसे–श्रोत्रेन्द्रिय, चक्षुरिन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, रसनेन्द्रिय और स्पर्शेन्द्रिय। यहाँ प्रज्ञापनासूत्र के पन्द्रहवे, इन्द्रियपद का प्रथम उद्देशक कहना चाहिए। उसमें कथित इन्द्रियो का सस्थान, बाहल्य (मोटाई), चौडाई, यावत् अलोक (द्वार) तक के विवेचन–पर्यन्त समग्र इन्द्रिय–उद्देशक कहना चाहिए।

1. [Q.] *Bhante* ! How many *Indriyas* (sense organs) are there ?

[Ans.] Gautam ! There are five sense organs—*Shrotrendriya* (sense organ of hearing, ears), *Chakshurindriya* (sense organ of seeing; eyes), *Ghranendriya* (sense organ of smell; nose), *Rasanendriya* (sense organ of tasting, tongue) and *Sparshendriya* (sense organ of touch; skin). Here the first lesson of the fifteenth chapter, Indriyapad, of *Prajanapana Sutra* should be repeated All the information about structure, thickness and width of sense organs up to *Alok* mentioned there should be included The whole chapter on sense organs should be stated

विवेचन : इन्द्रिय–सम्बन्धी द्वारगाथा–प्रज्ञापनासूत्र के पन्द्रहवे इन्द्रियपद के प्रथम उद्देशक में वर्णित इन्द्रिय–सम्बन्धित द्वारो की गाथा इस प्रकार है–

'संठाणं बाहल्लं पोहत्तं कइ–पएस ओगाढे।
अप्पाबहु पुट्ठ–पविट्ठ–विसय–अणगार–आहासरे' ॥ २०२ ॥

अद्दाय असी य मणी उडुपाणे तेल्ल फाणिय वसाय।
कंबल थूणा थिग्गल दीवोदहि लोगऽलोगे ॥ २०३ ॥

अर्थात्–(१) संस्थान (आकारविशेष)–श्रोत्रेन्द्रिय का सस्थान कदम्बपुष्प के आकार का है, चक्षुरिन्द्रिय का मसूर की दाल या चन्द्रमा के आकार का, घ्राणेन्द्रिय का अतिमुक्तक पुष्पवत् है, रसनेन्द्रिय का क्षुरप्र (उस्तरे) के

आकार का है और स्पर्शेन्द्रिय का सस्थान नाना प्रकार का है। (२) **बाहल्य (मोटाई)**–पाँचो इन्द्रियों की मोटाई अगुल के असख्यातवे भाग है। (३) **विस्तार–लम्बाई आदि की**–तीन इन्द्रियो की लम्बाई अगुल के असख्यातवे भाग है। रसनेन्द्रिय की दो से नौ अगुल तक तथा स्पर्शेन्द्रिय की लम्बाई अपने-अपने शरीर प्रमाण है। (४) **कतिप्रदेश**–प्रत्येक इन्द्रिय अनन्त प्रदेशी है। (५) **अवगाढ़**–प्रत्येक इन्द्रिय असंख्यात प्रदेशो में अवगाढ है। (६) **अल्पबहुत्व**–सबसे कम अवगाहना चक्षुरिन्द्रिय की, उससे संख्यातगुणी अवगाहना क्रमश श्रोत्रेन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय की और उससे असख्यातगुणी अवगाहना रसनेन्द्रिय की और उससे भी सख्यातगुणी स्पर्शेन्द्रिय की है। इसी प्रकार का अल्पबहुत्व प्रदेशो के विषय मे समझना चाहिए। (७–८) **स्पृष्ट और प्रविष्ट**–चक्षुरिन्द्रिय को छोडकर शेष चार इन्द्रियाँ प्राप्यकारी है। (९) **विषय**–श्रोत्रेन्द्रिय के ५, चक्षुरिन्द्रिय के ५, घ्राणेन्द्रिय के २, रसनेन्द्रिय के ५ और स्पर्शेन्द्रिय के ८ विषय है। पाँचो इन्द्रियो का विषय (ग्रहण–क्षमता) जघन्य अगुल का असख्यातवाँ भाग है, उत्कृष्ट श्रोत्रेन्द्रिय का १२ योजन, चक्षुरिन्द्रिय का साधिक १ लाख योजन, घ्राणेन्द्रिय, रसनेन्द्रिय और स्पर्शेन्द्रिय का ९–९ योजन है। इतनी दूरी से ये स्वविषय को ग्रहण कर लेती है। इसके पश्चात्–(१०) अनगारद्वार, (११) आहारद्वार, (१२) आदर्शद्वार, (१३) असिद्वार, (१४) मणिद्वार, (१५) उदपान (दुग्धपान) द्वार, (१६) तैलद्वार, (१७) फाणितद्वार, (१८) वसाद्वार, (१९) कम्बलद्वार (२०) स्थूणाद्वार, (२१) थिग्गलद्वार, (२२) द्वीपोदधिद्वार, (२३) लोकद्वार, और (२४) अलोकद्वार। यो अलोकद्वार पर्यन्त चौबीस द्वारो के माध्यम से इन्द्रिय-सम्बन्धी प्ररूपणा की गई है। इस सम्बन्ध मे विशेष विवेचन प्रज्ञापनासूत्र के पन्द्रहवे इन्द्रियपद के प्रथम-उद्देशक से जान लेना चाहिए। *(प्रज्ञापनासूत्र मलय वृत्ति, पत्राक २९५–३०८)*

॥ द्वितीय शतक : चतुर्थ उद्देशक समाप्त ॥

Elaboration—The attributes (*dvar*) of the sense organs (*indriyas*) according to the collative verse in the first lesson of the fifteenth chapter, Indriyapad, of *Prajnapana Sutra* are as follows—

(1) *Samsthan* (structure or shape)—The shape of *Shrotrendriya* (sense organ of hearing, ears) is like *Kadamba* (Nauclea cadamba) flower, that of *Chakshurindriya* (sense organ of seeing; eyes) is like *Masur* (Lens esculenta, a small grained pulse) or the moon, that of *Ghranendriya* (sense organ of smell, nose) is like *Atimuktak* (*Madhavi* creeper or Gaertnera racemosa) flower, that of *Rasanendriya* (sense organ of tasting; tongue) is like a razor (*kshurapra*), and *Sparshendriya* (sense organ of touch, skin) has a variety of shapes (2) *Bahalya* (thickness)—The thickness of each of the five sense organs is innumerable fraction of an *Angul* (a linear measure equivalent to the thickness of a finger) (3) *Vistar* (length)—The length of each of the first three sense organs is innumerable fraction of an *Angul*, that of *Rasanendriya* is two to nine *Anguls* and that of *Sparshendriya* is equal to the dimension of the body of the individual. (4) *Katipradesh* (composition)—Each sense organ has infinite space-points or fractions.

(5) *Avagadh* (occupied space)—Each sense organ occupies infinite space-points. (6) *Alpabahutva* (comparative dimensions)—*Chakshurindriya* occupies minimum space, each following sense organ in the aforesaid order occupies innumerable times more space than the preceding sense organ. The same holds good for composition in space-point units. (7-8) *Sprisht* and *Pravisht* (touched and entered; this means contact with and passage into the sense organ)—These are applicable to all sense organs other than *Chakshurindriya*. (9) *Vishaya* (subject)—*Shrotrendriya* has five subjects, *Chakshurindriya* has five, *Ghranendriya* has two, *Rasanendriya* has five and *Sparshendriya* has eight subjects. The minimum range of receptivity of all sense organs is innumerable fraction of an *Angul* and maximum is 12 *Yojans* for *Shrotrendriya*, more than one hundred thousand *Yojans* for *Chakshurindriya*, and 9 *Yojans* each for *Ghranendriya, Rasanendriya* and *Sparshendriya*. These are the distances from which the sense organs are capable of acquiring their respective subjects. After these come—(10) *Anagar-dvar*, (11) *Aahar-dvar*, (12) *Adarsh-dvar*, (13) *Asi-dvar*, (14) *Mani-dvar*, (15) *Udpaan (Dugdhapaan)-dvar*, (16) *Tail-dvar*, (17) *Fanit-dvar*, (18) *Vasa-dvar*, (19) *Kambal-dvar*, (20) *Sthuna-dvar*, (21) *Thiggal-dvar*, (22) *Dveepodadhi-dvar*, (23) *Lok-dvar*, and (24) *Alok-dvar* Thus sense organs have been described on the basis of the said 24 attributes (*dvars*). For more details refer to the first lesson of the fifteenth chapter, Indriyapad, of *Prajnapana Sutra (Malayagiri Vritti of Prajnapana Sutra, leaves 295-308)*

● END OF THE FOURTH LESSON OF THE SECOND SHATAK ●

द्वितीय शतक : पंचम उद्देशक
SECOND SHATAK (Chapter Two) : FIFTH LESSON

निर्ग्रन्थ NIRGRANTH (ASCETIC)

निर्ग्रन्थदेव : परिचारणा–सम्बन्धी प्ररूपणा **ASCETIC : ON SEXUAL ACTIVITY**

१. [प्र.] अण्णउत्थिया णं भंते ! एवमाइक्खंति भासंति पण्णवेंति परूवेंति–एवं खलु नियंठे कालगए समाणे देवब्भूएणं अप्पाणेणं से णं तत्थ णो अन्ने देवे, नो अन्नेसिं देवाणं देवीओ अभिजुंजिय अभिजुंजिय परियारेइ (१) णो अप्पणिच्चियाओ देवीओ अभिजुंजिय २ परियारेइ (२) अप्पणामेव अप्पाणं विउव्विय २ परियारेइ (३) एगे वि य णं जीवे एगेणं समएणं दो वेदे वेदेइ, तं जहा–इत्थिवेदं च पुरिसवेदं च। एवं परउत्थियवत्तव्वया नेयव्वा जाव इत्थिवेदं च पुरिसवेदं च। से कहमेयं भंते ! एवं ?

[उ.] गोयमा ! जं णं ते अन्नउत्थिया एवमाइक्खंति जाव इत्थिवेदं च पुरिसवेदं च। जे ते एवमाहंसु मिच्छं ते एवमाहंसु, अहं पुण गोयमा ! एवमाइक्खामि भासामि, पण्णवेमि, परूवेमि एवं खलु नियंठे कालगए समाणे अन्नयरेसु देवलोएसु देवत्ताए उववत्तारो भवंति महिड्ढिएसु जाव महाणुभागेसु दूरगतीसु चिरट्ठितीएसु। से णं तत्थ देवे भवति महिड्ढीए जाव दस दिसाओ उज्जोवेमाणे पभासेमाणे जाव पडिरूवे। से णं तत्थ अन्ने देवे, अन्नेसिं देवाणं देवीओ अभिजुंजिय २ परियारेइ (१) अप्पणिच्चियाओ देवीओ अभिजुंजिय २ परियारेइ (२) नो अप्पणामेव अप्पाणं विउव्विय २ परियारेइ (३) एगे वि य णं जीवे एगेणं समएणं एगं वेदं वेदेइ, तं जहा–इत्थिवेदं वा पुरिसवेदं वा, जं समय इत्थिवेदं वेदेइ णो तं समयं पुरिसवेयं वेइए, जं समयं पुरिसवेयं वेएइ णो तं समयं इत्थिवेयं वेएइ। इत्थिवेयस्स उदएणं नो पुरिसवेदं वेएइ, पुरिस वेयस्स उदएणं नो इत्थिवेयं वेएइ। एवं खलु एगे जीवे एगेणं समएणं एगे वेदे वेएइ, तं जहा–इत्थिवेयं वा पुरिसवेयं वा। इत्थी इत्थिवेएणं उदिण्णेणं पुरिसं पत्थेइ, पुरिसो पुरिसवेएणं उदिण्णेणं इत्थिं पत्थेइ। दो वि ते अन्नमन्नं पत्थेंति, तं जहा–इत्थी वा पुरिसं, पुरिसे वा इत्थिं।

१. [प्र.] भगवन् ! अन्यतीर्थिक इस प्रकार कहते है, भाषण करते है, बताते है और प्ररूपणा करते है कि कोई भी निर्ग्रन्थ मरने पर देव होता है और वह देव, वहाँ (देवलोक मे) दूसरे देवो के साथ, या दूसरे देवो की देवियो के साथ, उन्हे वश मे करके या उनका आलिगन करके, परिचारणा (मैथुन–सेवन) नही करता, तथा अपनी देवियो को वश मे करके या आलिंगन करके उनके साथ भी परिचारणा नही करता। परन्तु वह देव वैक्रिय से स्वय अपने ही दो रूप बनाता है। (जिसमे एक रूप देव का और एक रूप देवी का बनाता है।) यो दो रूप बनाकर वह, उस वैक्रियकृत (कृत्रिम) देवी के साथ परिचारणा करता है। इस प्रकार एक जीव एक ही समय मे दो वेदो का अनुभव (वेदन) करता है, यथा–स्त्रीवेद का और पुरुषवेद का। भगवन् ! यह इस प्रकार कैसे हो सकता है? अर्थात् क्या यह अन्यतीर्थिको का कथन सत्य है?

[उ.] हे गौतम ! वे अन्यतीर्थिक जो यह कहते यावत् प्ररूपणा करते हैं कि–यावत् स्त्रीवेद और पुरुषवेद, (अर्थात्–एक ही जीव एक समय में दो वेदों का अनुभव करता है;) उनका वह कथन मिथ्या है। हे गौतम ! मैं इस प्रकार कहता हूँ कि कोई एक निर्ग्रन्थ जो मरकर, किन्हीं महर्द्धिक यावत् महाप्रभावयुक्त, दीर्घकाल की स्थिति (आयु) वाले देवलोकों में से किसी एक में देवरूप में उत्पन्न होता है, ऐसे देवलोक मे वह महती ऋद्धि ये युक्त यावत् दशों दिशाओं में उद्योत करता हुआ, विशिष्ट कान्ति से शोभायमान यावत् अतीव रूपवान् देव होता है और वह देव वहाँ दूसरे देवो के साथ, तथा दूसरे देवों की देवियों के साथ उन्हे वश मे करके परिचारणा करता है और अपनी देवियों को वश में करके उनके साथ भी परिचारणा करता है; किन्तु स्वयं वैक्रिय करके अपने दो रूप बनाकर परिचारणा नहीं करता, (क्योंकि एक जीव एक समय मे स्त्रीवेद और पुरुषवेद, इन दोनों वेदों में से किसी एक वेद का ही अनुभव करता है। जब स्त्रीवेद को वेदता है, तब पुरुषवेद को नहीं वेदता; जिस समय पुरुषवेद को वेदता है, उस समय स्त्रीवेद को नही वेदता। स्त्रीवेद के उदय होने से पुरुषवेद को नहीं वेदता और पुरुषवेद का उदय होने से स्त्रीवेद को नही वेदता। अतः एक जीव एक समय में स्त्रीवेद और पुरुषवेद, इन दोनो वेदो में से किसी एक वेद को ही वेदता है। जब स्त्रीवेद का उदय होता है, तब स्त्री, पुरुष की अभिलाषा करती है और जब पुरुषवेद का उदय होता है, तब पुरुष, स्त्री की अभिलाषा करता है। अर्थात्–पुरुष और स्त्री परस्पर एक-दूसरे की इच्छा करते हैं। वह इस प्रकार–स्त्री, पुरुष की और पुरुष, स्त्री की अभिलाषा करता है।

1. **[Q.]** *Bhante* ! People of other faiths (*anyatirthik*) or heretics say (*akhyanti*), assert (*bhashante*), elaborate (*prajnapayanti*) and propagate (*prarupayanti*) that after death when an ascetic (*nirgranth*) becomes a *Dev* (divine being), he does not indulge there (in the divine realm) in acts of sexual gratification (*paricharana*) by overpowering and embracing other gods and consorts of other gods. He also does not do so by overpowering and embracing his own consorts. Instead, he transforms himself into two bodies (one male and one female) through the process of transmutation (*vikriya*) Transformed thus into two bodies, he indulges in acts of sexual gratification with that transmuted female (goddess) Thus a single soul (*jiva*) experiences two genders (*veda*) at the same time—male gender and female gender *Bhante* ! How is it possible ? (Is the statement of heretics true ?)

[Ans.] Gautam ! What the people of other faiths (*anyatirthik*) or heretics say (*akhyanti*). and so on up to .. propagate... and so on up to. . a single soul (*jiva*) experiences two genders (*veda*) at the same time—male gender and female gender, is false. O Gautam ! I say that—An ascetic who, on death, reincarnates in one of the divine realms with great opulence. and so on up to... great influence and great life-span

becomes a god endowed with great opulence... and so on up to... with ability to shine in all the ten directions and radiant with unique glow and beauty. That god indulges there (in the divine realm) in acts of sexual gratification (*paricharana*) by overpowering and embracing other gods and consorts of other gods. He also does so by overpowering and embracing his own consorts. But he does not transform himself into two bodies (one male and one female) through the process of transmutation (*vikriya*) and indulge in acts of sexual gratification This is because at one time one being (*jiva*) experiences only one gender out of the two, namely male gender and female gender. When he experiences female gender he does not experience male gender and when he experiences male gender he does not experience female gender. On fruition of (*karma* responsible for) female gender he does not experience male gender and on fruition of (*karma* responsible for) male gender he does not experience female gender Thus one being at one time experiences only one gender out of the two, namely male gender and female gender. On fruition of (*karma* responsible for) female gender a female desires for a male and on fruition of (*karma* responsible for) male gender a male desires for a female. In other words male and female desire for each others company—female desires for male and male desires for female

उदकगर्भ आदि की कालस्थिति PERIOD OF PREGNANCY

२. [प्र.] उदगगब्भे णं भंते ! 'उदगगब्भे' त्ति कालतो केवच्चिरं होइ ?

[उ.] गोयमा ! जहन्नेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं छम्मासा।

२. [प्र.] भगवन् ! उदकगर्भ (पानी का गर्भ) उदकगर्भ के रूप मे कितने समय तक रहता है ?

[उ.] गौतम ! जघन्य एक समय और उत्कृष्ट छह मास तक उदकगर्भ उदकगर्भरूप मे रहता है।

2. [Q.] *Bhante* ! How long does the pregnancy of water-bodied beings (*udak garbh*) last in that state as water-bodied being ?

[Ans.] Gautam ! The pregnancy of water-bodied beings lasts in that state as water-bodied being for a minimum of one *Samaya* and maximum of six months.

३. [प्र.] तिरिक्खजोणियगब्भे णं भंते ! 'तिरिक्खजोणियगब्भे' त्ति कालओ केवच्चिरं होति ?

[उ.] गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेणं अट्ठ संवच्छराइं।

३. [प्र.] भगवन् ! तिर्यग्योनिकगर्भ कितने समय तक तिर्यग्योनिकगर्भरूप मे रहता है ?

[उ.] गौतम ! जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त और उत्कृष्ट आठ वर्ष तक तिर्यग्योनिकगर्भ तिर्यग्योनिकगर्भरूप में रहता है।

3. [Q.] *Bhante* ! How long does the pregnancy of animals (*tiryakyonik garbh*) last in that state as animal ?

[Ans.] Gautam ! The pregnancy of animals lasts in that state as animal for a minimum of one *Antarmuhurt* and maximum of eight years.

४. [प्र.] मणुस्सीगब्भे णं भंते ! 'मणुस्सीगब्भे' त्ति कालओ केवच्चिरं होइ ?

[उ.] गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेणं बारस संवच्छराइं।

४. [प्र.] भगवन् ! मानुषीगर्भ कितने समय तक मानुषीगर्भरूप मे रहता है ?

[उ.] गौतम ! जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त और उत्कृष्ट बारह वर्ष तक मानुषीगर्भ मानुषीगर्भरूप मे रहता है।

4. [Q.] *Bhante* ! How long does the pregnancy of humans (*manushi garbh*) last in that state as animal ?

[Ans.] Gautam ! The pregnancy of humans lasts in that state as human for a minimum of one *Antarmuhurt* and maximum of twelve years.

५. [प्र.] कायभवत्थे णं भंते ! 'कायभवत्थे' त्ति कालओ केवच्चिरं होइ ?

[उ.] गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेणं चउव्वीसं संवच्छराइं।

५. [प्र.] भगवन् ! काय-भवस्थ कितने समय तक काय-भवस्थ रूप मे रहता है ?

[उ.] गौतम ! जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त और उत्कृष्ट चौबीस वर्ष तक काय-भवस्थ काय-भवस्थ के रूप मे रहता है।

5. [Q.] *Bhante* ! How long does *kaya-bhavasth* last in that state as *kaya-bhavasth* ?

[Ans.] Gautam ! A *kaya-bhavasth* lasts in that state as *kaya-bhavasth* for a minimum of one *Antarmuhurt* and maximum of twenty four years.

६. [प्र.] मणुस्स-पंचेंदियतिरिक्खजोणियबीए णं भंते ! जोणिब्भूए केवइयं कालं संचिट्ठइ ?

[उ.] गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेणं बारस मुहुत्ता।

६. [प्र.] भगवन् ! मानुषी और पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्ची-सम्बन्धी योनिगत बीज (वीर्य) योनिभूतरूप में कितने समय तक रहता है ?

[उ.] गौतम ! जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त और उत्कृष्ट बारह मुहूर्त्त।

6. [Q.] *Bhante* ! How long does the semen of a human being and a five-sensed animal planted in a womb (*yonigat*) last in that state as womb-planted (*yoniboot*) ?

[Ans.] Gautam ! For a minimum of one *Antarmuhurt* and maximum of twelve *Muhurt*.

विवेचन : उदकगर्भ : कायस्थिति और पहचान–कालान्तर मे पानी बरसने के कारणरूप पुद्गल–परिणाम को 'उदकगर्भ' कहते हैं। वह कम से कम एक समय बाद बरस जाता है, अधिक से अधिक छह महीने बाद बरसता है। यह उसकी कायस्थिति है। "मार्गशीर्ष और पौष मास मे दिखाई देने वाला सन्ध्याराग, मेघ की उत्पत्ति या मार्गशीर्ष मास मे ठण्ड न पडना और पौष मास मे अत्यन्त हिमपात होना, ये सब उदकगर्भ के चिह्न हैं।"

काय–भवस्थ–माता के उदर में स्थित निजदेह (गर्भ के अपने शरीर) मे जन्म को '**काय–भव**' कहते है, उसी निजकाय मे जो पुन जन्म ले, उसे काय–भवस्थ कहते है। जैसे–कोई जीव माता के उदर में गर्भरूप मे आकर उसी शरीर मे बारह वर्ष तक रहकर वही मर जाए यह काय–भव है। फिर अपने द्वारा निर्मित उसी शरीर मे उत्पन्न होकर पुन बारह वर्ष तक रहे। यो एक जीव अधिक से अधिक २४ वर्ष तक '**काय–भवस्थ**' के रूप मे रह सकता है।

योनिभूतरूप मे बीज की कालस्थिति–मनुष्य या तिर्यंचपञ्चेन्द्रिय का मानुषी या तिर्यञ्ची की योनि मे गया हुआ वीर्य बारह मुहूर्त्त तक योनिभूत रहता है। अर्थात्–उस वीर्य मे बारह मुहूर्त्त तक सन्तानोत्पादन की शक्ति रहती है।

Elaboration—Udak-garbh—The state of constituent particles (saturated with water droplets) of cloud about to rain is called *udak-garbh* (impregnated water-bodies) It rains after a lapse of minimum one *Samaya* and maximum six months This is its *kaya-sthiti* or duration of the physical state The signs of such impregnated clouds in nature are said to be—"Crimson evening sky and hovering clouds in the month of Margashirsha and Paush Lack of cold during the month of Margashirsha and excessive snowfall in the month of Paush "

Kaya-bhavasth—The entry of the soul in its own body (body of the embryo) or fetus in the mother's womb is called *kaya-bhava* To take rebirth in the same body is *kayabhavasth* For example a soul enters as a fetus in the mother's womb and dies within the womb after a stay of twelve years, this is called *kaya-bhava*. If it takes the next birth too in the same body, earlier created by it, and remains in that state for another twelve years, it is called *kaya-bhavasth* A soul can remain in this *kaya-bhavasth* state for a maximum period of 24 years.

Womb-planted semen—The semen of a human being and a five-sensed animal planted in a womb (*yonigat*) lasts in that state as womb-planted (*yonibhoot*) for a maximum period of twelve *Muhurt*. This means that the semen implanted in a womb has the capacity to turn into an embryo for twelve *Muhurt*.

७. [प्र.] एगजीवे णं भंते ! एगभवग्गहणेणं केवतियाणं पुत्तत्ताए हव्वमागच्छति ?

[उ.] गोयमा ! जहन्नेणं इक्कस्स वा दोण्हं वा तिण्हं वा, उक्कोसेणं सयपुहत्तस्स जीवाणं पुत्तत्ताए हव्वमागच्छति।

७. [प्र.] भगवन् ! एक जीव, एक भव की अपेक्षा कितने जीवो का पुत्र हो सकता है ?

[उ.] गौतम ! एक जीव, एक भव मे जघन्य एक जीव का, दो जीवों का अथवा तीन जीवों का, और उत्कृष्ट शतपृथक्त्व (दो सौ से लेकर नौ सौ तक) जीवो का पुत्र हो सकता है।

7. [Q.] *Bhante* ! How many living beings (*jiva*) can a soul (*jiva*) be progeny of ?

[Ans.] Gautam ! A soul (*jiva*) can be progeny of minimum one, two or three living beings (*jiva*) and maximum *Shat-prithakatva* (two hundred to nine hundred) living beings.

८. [प्र. १] एगजीवस्स णं भंते ! एगभवग्गहणेणं केवइया जीवा पुत्तत्ताए हव्वमागच्छंति ?

[उ.] गोयमा ! जहन्नेणं इक्को वा दो वा तिण्णि वा, उक्कोसेणं सयसहस्सपुहत्तं जीवा णं पुत्तत्ताए हव्वमागच्छंति।

[प्र. २] से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ–जाव हव्वमागच्छंति ?

[उ.] गोयमा ! इत्थीए पुरिसस्स य कम्मकडाए जोणीए मेहुणवत्तिए नामं संजोए समुप्पज्जइ। ते दुहओ सिणेहं संचिणंति, संचिणित्ता तत्थ णं जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिण्णि वा, उक्कोसेणं सयसहस्सपुहत्तं जीवा णं पुत्तत्ताए हव्वमागच्छंति। ते तेणट्ठेणं जाव हव्वमागच्छंति।

८. [प्र. १] भगवन् ! एक जीव के एक भव मे कितने जीव पुत्ररूप मे (उत्पन्न) हो सकते हैं ?

[उ.] गौतम ! जघन्य एक, दो अथवा तीन और उत्कृष्ट लक्षपृथक्त्व (दो लाख से लेकर नौ लाख तक) जीव पुत्ररूप मे (उत्पन्न) हो सकते है।

[प्र. २] भगवन् ! किस कारण से ऐसा कहा जाता है कि जघन्य एक यावत् दो लाख से नौ लाख तक जीव पुत्ररूप में (उत्पन्न) हो सकते है ?

[उ.] हे गौतम ! कर्मकृत (नामकर्म से निष्पन्न अथवा कामोत्तेजित) योनि मे स्त्री और पुरुष का जब मैथुनवृत्तिक (सम्भोग निमित्तक) सयोग निष्पन्न होता है, तब उन दोनों के स्नेह (पुरुष के वीर्य और स्त्री के रक्त = रज) का सचय (सम्बन्ध) होता है, फिर उसमे से जघन्य एक, दो अथवा तीन और उत्कृष्ट लक्षपृथक्त्व (दो लाख से लेकर नौ लाख तक) जीव पुत्ररूप में उत्पन्न होते हैं। हे गौतम ! इसीलिए पूर्वोक्त कथन किया गया है।

8. [Q. 1] *Bhante* ! In one life-time how many progenies (*jivas*) can a living beings (*jiva*) give birth to ?

[Ans.] Gautam ! Minimum one, two or three living beings (*jiva*) and maximum *Laksh-prithakatva* (two hundred thousand to nine hundred thousand) living beings can be given birth to

[Q. 2] *Bhante* ! Why is it said that minimum one... and so on up to... two hundred thousand to nine hundred thousand living beings can be given birth to ?

[Ans.] Gautam ! In the excited state (*karmakrit*) of sex organs when a male and female establish a sexual contact (*maithun-vrittik samyoga*), their fluids (*sneha*, semen of the male and menstrual discharge of the female) are mixed This mixture gives birth to minimum one, two or three and maximum two hundred thousand to nine hundred thousand living beings That is the reason for the aforesaid statement.

९. [प्र.] मेहुणं भंते ! सेवमाणस्स केरिसिए असंजमे कज्जइ ?

[उ.] गोयमा ! से जहानामए केइ पुरिसे रूयनालियं वा बूरनालियं वा तत्तेणं कणएणं समविद्धंसेज्जा। एरिसए णं गोयमा ! मेहुणं सेवमाणस्स असंजमे कज्जइ।

सेवं भंते ! सेव भंते ! जाव विहरति।

९. [प्र.] भगवन् ! मैथुनसेवन करते हुए जीव के किस प्रकार का असंयम होता है ?

[उ.] गौतम ! जैसे कोई पुरुष तपी हुई सलाई (डालकर, उस) से बाँस की रुई से भरी हुई नली, या बूर नामक वनस्पति से भरी नली को जलाकर विध्वस्त कर डालता है, हे गौतम ! ऐसा ही असंयम मैथुनसेवन करते हुए जीव के होता है।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है', ऐसा कहकर-गौतम स्वामी विचरण करते है।

9. [Q.] *Bhante* ! While indulging in sexual intercourse what sort of indiscipline (*asamyam*, non-restraint) a living being commits ?

[Ans.] Gautam ! When a person takes a red-hot rod and inserts it into a tube filled with cotton or *Bura* plant he destroys the contents of the tube by burning Gautam ! The person indulging in sexual intercourse commits a similar indiscipline (non-restraint).

"*Bhante* ! Indeed that is so. Indeed that is so." With these words... and so on up to ascetic Gautam resumed his activities.

विवेचन : मैथुन प्रत्ययिक सन्तानोत्पत्ति संख्या एवं मैथुनसेवन से असंयम का निरूपण–प्रस्तुत तीन सूत्रो मे से प्रथम दो सूत्रो मे यह बताया गया है कि एक जीव के एक जन्म मे कितने पुत्र (सतान) हो सकते है और उसका

क्या कारण है? तीसरे सूत्र में मैथुनसेवन से कितना और किस प्रकार का असयम होता है? यह सोदाहरण बताया गया है।

एक जीव शतपृथक्त्व जीवों का पुत्र कैसे ?—गाय आदि की योनि मे गया हुआ शतपृथक्त्व (दो सौ से लेकर नौ सौ तक) साडो का वीर्य, वीर्य ही गिना जाता है, क्योंकि वह वीर्य बारह मुहूर्त्त तक वीर्यरूप पर्याय में रहता है। उस वीर्य पिण्ड मे उत्पन्न हुआ एक जीव उन सबका (जिनका कि वीर्य गाय की योनि मे गया है) पुत्र (संतान) कहलाता है। इस प्रकार एक जीव, एक ही भव मे दो सौ से लेकर नौ सौ जीवो का पुत्र हो सकता है।

एक जीव के, एक ही भव मे शत-सहस्रपृथक्त्व पुत्र कैसे ?—मत्स्य आदि जब मैथुनसेवन करते हैं तो एक बार के संयोग से उनके दो लाख से लेकर नौ लाख तक जीव पुत्र रूप से उत्पन्न होते हैं और जन्म लेते हैं। इससे ध्वनित होता है, सयोग काल मे उत्कर्षत नौ लाख सज्ञी जीवो की हिंसा होती है। *(वृत्ति, पत्रांक १३४)*

Elaboration—Number of progeny and indiscipline—In the first two of the three aforesaid aphorisms the number and cause of progenies of a living being in one life-time have been stated. The third aphorism states the indiscipline committed during sexual act giving an example.

How can a living being be progeny of two hundred to nine hundred living beings in one life-time ?—The semen of two to nine hundred bulls entering the womb of a cow is considered mixed semen because it remains potent for twelve *Muhurts* The progeny of this apparent mixture of semen from numerous sources is called the progeny of all those bulls Thus a living being can be progeny of two hundred to nine hundred living beings in one life-time.

How can one living being produce two to nine hundred thousand beings in one life time ?—Many living beings like fish produce two to nine hundred thousand beings as a consequence of one intercourse. This also indicates that during an intercourse a maximum of nine hundred thousand sentient beings get destroyed. *(Vritti, leaf 134)*

तुंगिका के श्रमणोपासकों का जीवन LIFE OF SHRAMANOPASAKS OF TUNGIKA

१०. तए णं समणे भगवं महावीरे रायगिहाओ नगराओ गुणसिलाओ चेइयाओ पडिनिक्खमइ, पडिनिक्खमित्ता बहिया जणवयविहारं विहरति।

१०. इसके पश्चात् (एकदा) श्रमण भगवान महावीर राजगृह नगर के गुणशील उद्यान से निकलकर बाहर जनपदो मे विहार करने लगे।

10. After that, once Shraman Bhagavan Mahavir left Gunashila garden of Rajagriha city and moved around in other populated areas.

११. (१) तेणं कालेणं तेणं समएणं तुंगिया नामं नगरी होत्था। वण्णओ। तीसे णं तुंगियाए नगरीए बहिया उत्तरपुरत्थिमे दिसीभाए पुप्फवतीए नामं चेइए होत्था। वण्णओ। तत्थ णं तुंगियाए नगरीए बहवे

समणोवासया परिवसंति अड्ढा दित्ता वित्थिण्णविपुलभवण–सयणाऽऽसण–जाण–वाहणाइण्णा बहुधण–बहुजायरूव–रयया आयोग–पयोगसंपउत्ता विच्छड्डियविपुलभत्त–पाणा बहुदासी–दास–गो–महिस–गवेलयप्पभूता बहुजणस्स अपरिभूता।

(२) अभिगयजीवाजीवा उवलद्धपुण्ण–पावा–आसव–संवर–निज्जर–किरियाहिकरण–बंधमोक्खकुसला असेहज्जदेवासुर–नाग–सुवण्ण–जक्ख–रक्खस–किन्नर–किंपुरिस–गरुल–गंधव्व–महोरगादिएहिं देवगणेहिं निग्गंथाओ पावयणाओ अणतिक्कमणिज्जा, णिग्गंथे पावयणे निस्संकिया निक्कंखिया निव्वितिगिंच्छा लद्धट्ठा गहियट्ठा पुच्छियट्ठा अभिगयट्ठा विणिच्छियट्ठा, अट्ठिमिंज–पेम्माणुरागरत्ता–'अयमाउसो ! निग्गंथे पावयणे अट्ठे, अयं परमट्ठे, सेसे अणट्ठे'।

(३) ऊसिय–फलिहा अवंगुयदुवारा चियत्तंतेउर–घरप्पवेसा, बहूहिं सीलव्वय–गुण–वेरमण–पच्चक्खाण–पोसहोववासेहिं चाउद्दसऽट्ठमुद्दिट्ठपुण्ण–मासिणीसु पडिपुण्णं पोसहं सम्मं अणुपालेमाणा, समणे निग्गंथे फासु एसणिज्जेणं असण–पाण–खाइम–साइमेणं वत्थ–पडिग्गह–कंबल–पादपुंछणेणं पीढ–फलग–सेज्जा–संथारगेणं ओसह–भेसज्जेण य पडिलाभेमाणा, अहापडिग्गहिएहिं तवोकम्मेहिं अप्पाणं भावेमाणा विहरंति।

११. उस काल उस समय मे तुगिया (तुगिका) नाम की (पाटलिपुत्र से १० किमी दूर) नगरी थी। उस तुगिका नगरी के बाहर उत्तर–पूर्व दिशा भाग (ईशानकोण) मे पुष्पवतिक नाम का चैत्य (उद्यान) था। इत्यादि वर्णन औपपातिकसूत्रानुसार कहे।

[**१. तुंगिका के श्रावकों का ऐश्वर्य वर्णन**] उस तुगिका नगरी मे बहुत से श्रमणोपासक रहते थे। वे आढ्य (विपुल धन–सम्पत्ति वाले) और दीप्त (स्वाभिमानी) थे। उनके विशाल अनेक भवन थे। तथा वे शयनो (शयन सामग्री), आसनो, यानो (रथ, गाडी आदि) तथा वाहनो (बैल, घोडे आदि) से सम्पन्न थे। उनके पास प्रचुर धन (रुपये आदि सिक्के), बहुत–सा सोना–चाँदी आदि था। वे **आयोग**–(रुपया उधार देकर उसके ब्याज आदि द्वारा दुगुना तिगुना अर्थोपार्जन करने का व्यवसाय) और **प्रयोग**–(अन्य कलाओ का व्यवसाय) करने मे कुशल थे। उनके घर बहुत जन भोजन करते थे, इसलिए बहुत भोजन तैयार होता था। उनके यहाँ बहुत–सी दासियाँ और दास थे, तथा बहुत–सी गाये, भैसे, भेडे और बकरियाँ आदि थी। वे बहुत–से मनुष्यो द्वारा भी अपरिभूत दबते नही थे।

[**२. श्रावको का आध्यात्मिक जीवन**] वे जीव (चेतन) और अजीव (जड) के स्वरूप को भलीभाँति जानते थे। उन्होने पुण्य और पाप को समझ लिया था। वे आस्रव, सवर, निर्जरा, क्रिया, अधिकरण, बन्ध और मोक्ष के विषय मे कुशल थे। (अर्थात्–इनमे से हेय, ज्ञेय और उपादेय को सम्यक् रूप से जानते थे।) वे (किसी भी कार्य मे दूसरो से) सहायता की अपेक्षा नही रखते थे। (वे निर्ग्रन्थ प्रवचन मे इतने दृढ थे कि) देव, असुर, नाग, सुपर्ण, यक्ष, राक्षस, किन्नर, किम्पुरुष, गरुड, गन्धर्व, महोरग आदि देवगणो के द्वारा निर्ग्रन्थ प्रवचन से विचलित नही किये जा सकते थे। वे निर्ग्रन्थ प्रवचन के प्रति नि शकित थे, निष्काक्षित थे तथा विचिकित्सारहित थे। उन्होने शास्त्रो के अर्थों को भलीभाँति ग्रहण कर

लिया था, (शास्त्रों के अर्थों में जहाँ सदेह था, वहाँ) पूछकर उन्होंने यथार्थ निर्णय कर लिया था। उन्होंने शास्त्रों के अर्थों और उनके रहस्यो को निर्णयपूर्वक जान लिया था। उनकी हड्डियाँ और मज्जाएँ (नसें) (निर्ग्रन्थ प्रवचन के प्रति) प्रेमानुराग में रंगी हुई (व्याप्त) थीं। (इसीलिए वे कहते थे कि–) 'आयुष्मान् बन्धुओ ! यह निर्ग्रन्थ प्रवचन ही अर्थ (सार्थक) है, यही परमार्थ है, शेष सब अनर्थ (निरर्थक) हैं।

[३] वे इतने उदार थे कि उनके घरो मे दरवाजो के पीछे रहने वाली अर्गला (आगल भोगल) सदैव ऊँची खुली रहती थी। उनके घर के द्वार (याचको के लिए) सदा खुले रहते थे। उनका अन्तःपुर तथा पर–गृह मे प्रवेश लोकप्रीतिकर विश्वसनीय होता था। अथवा उनके घर मे कोई सत्पुरुष आता तो उन्हे प्रीतिकर लगता था। वे शीलव्रत (शिक्षाव्रत), गुणव्रत, विरमणव्रत (अणुव्रत), प्रत्याख्यान (त्याग–नियम), पौषधोपवास आदि का सम्यक् आचरण करते थे, तथा चतुर्दशी, अष्टमी, अमावस्या और पूर्णिमा, इन पर्वतिथियो मे (प्रतिमास छह) प्रतिपूर्ण पौषध का सम्यक् अनुपालन करते थे। वे श्रमणनिर्ग्रन्थो को उनके कल्पानुसार प्रासुक (अचित्त) और एषणीय निर्दोष अशन, पान, खादिम, स्वादिम, वस्त्र, पात्र, कम्बल, रजोहरण, पीठ (चौकी या बाजोट), फलक (पट्टा या तख्त), शय्या, सस्तारक, औषध और भेषज आदि से प्रतिलाभित करते थे; और (अपनी शक्ति के अनुसार ग्रहण किये हुए) तप कर्मों से अपनी आत्मा को भावित करते हुए जीवनयापन करते थे।

11. During that period of time there was a city called Tungika (ten kilometers away from Pataliputra). Description (as in *Aupapatik Sutra*). In the north-eastern direction (*Ishan Kone*) outside the city there was a garden called Pushpavatika Description (of the *Chaitya* as in *Aupapatik Sutra*)

[1. Grandeur of Shravaks of Tungika] Many *Shramanopasaks* (devotees of ascetics) lived in that Tungika city. They were affluent (*aadhya*) and self-respecting (*deept*). They had many grand mansions They owned unlimited furniture, vehicles (chariots, carts etc.), and mounts (horses, ox etc.). They had abundant wealth (coins) including gold and silver. They were proficient in a variety of methods (including money lending) of expanding their wealth (*ayoga*), and putting them to use (in other trades) with great efficiency (*prayoga*). Large quantity of food was cooked in their kitchens as many people ate there They had innumerable servants and maids and also abundant livestock including cows, buffalos and sheep. They could not be subdued by many individuals collectively

[2. Spiritual life of shravaks] They had properly acquired the knowledge of the living (*jiva*) and the non-living (*ajiva*). They had understood merit (*punya*) and demerit (*paap*) They were proficient on the topics of inflow of *karmas* (*ashrava*), blocking of inflow of *karmas*

(*samvar*), shedding of *karmas* (*nirjara*), action (*kriya*), tools and equipment (*adhikaran*), bondage of *karmas* (*bandh*) and liberation (*moksha*). (They were well aware of the rejectable, comprehensible and acceptable among these.) They did not seek help from others. They (being firm in their belief) could not be forced to waver from the *Nirgranth* sermon by gods, lower gods including Asur, Naag, Suparn, Yaksh, Rakshas, Kinnar, Kimpurush, Garud, Gandharva and Mahorag Being free of any doubt, perplexity and ambiguity in the *Nirgranth* sermon they had received, acquired, confirmed by raising questions, absorbed and finalized the real fundamentals of religion The affinity and attachment for religion had penetrated deep into their bone and marrow (That is why they used to say—) 'Long lived ones ! Only this *Nirgranth* sermon is meaningful or beatific and everything else is meaningless or worthless '

[3] They were so liberal that in their houses inner door-bolts were always raised (*Uchchhrit phaliha*) or never used. In their houses doors were never closed to anyone (including alms-seekers) (*Apavritadvar*) Their entry to the inner (ladies) quarters of any house never offended anyone (*Tyaktantahpura griha dvar pravesh*) This also means that they always liked the entry of noble people into their homes They immaculately observed all vows including *Sheel-vrats* or *shikshavrats* (instructive or complimentary vows of spiritual discipline), *Gunavrats* (restraints that reinforce the practice of *anuvrats*), *Viraman-vrats* or *Anuvrats* (five minor vows), *pratyakhyan* (rules of renouncing) and *paushadhopavas* (partial ascetic vow and fasting) generally, and strictly on eighth, fourteenth and fifteenth days of every fortnight They offered uncontaminated and acceptable food (four kinds—*ashan, paan, khadya* and *svadya*), garb, blanket, napkin, medicine, bed etc to *Shraman-nirgranths* as required by them Thus they spent their life enkindling (*bhaavit*) their souls with austerities accepted to the best of their abilities

पार्श्वापत्यीय स्थविरों का पदार्पण ARRIVAL OF SENIOR ASCETICS OF PARSHVA-SCHOOL

१२. तेणं कालेणं तेणं समएणं पासावच्चिज्जा थेरा भगवंतो जातिसंपन्ना कुलसंपन्ना बलसंपन्ना रूवसंपन्ना विणयसंपन्ना णाणसंपन्ना दंसणसंपन्ना चरित्तसंपन्ना लज्जासंपन्ना लाघवसंपन्ना ओयंसी तेयंसी वच्चंसी जसंसी जितकोहा जियमाणा जियमाया जियलोभा जियनिद्दा जितिंदिया जितपरीसहा जीवियासा-मरणभयविप्पमुक्का जाव कुत्तियावणभूया बहुस्सुया बहुपरिवारा, पंचहिं अणगारसएहिं सद्धिं, संपरिवुडा, अहाणुपुव्विं चरमाणा, गामाणुगामं दूइज्जमाणा, सुहंसुहेणं विहरमाणा जेणेव तुंगिया नगरी, जेणेव

पुप्फवतीए चेतिए तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता अहापडिरूवं उग्गहं ओगिण्हित्ताणं संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणा विहरंति।

१२. उस काल और उस समय मे पार्श्वापत्यीय (भगवान पार्श्वनाथ की परम्परा के) स्थविर भगवान पाँच सौ अनगारों के साथ यथाक्रम से विचरते हुए, ग्रामानुग्राम जाते हुए, सुखपूर्वक विहार करते हुए तुंगिका नगरी के बाहर ईशानकोण में पुष्पवतिक चैत्य में पधारे। वहाँ पधारकर (अपने अनुकूल मर्यादित स्थान की याचना करके) आज्ञा लेकर सयम और तप से आत्मा को भावित करते हुए विहरण करने लगे। वे स्थविर भगवन्त जातिसम्पन्न, कुलसम्पन्न, बलसम्पन्न, रूपसम्पन्न, विनयसम्पन्न, ज्ञानसम्पन्न, दर्शनसम्पन्न, चारित्रसम्पन्न, लज्जासम्पन्न, लाघवसम्पन्न, ओजस्वी, तेजस्वी, वर्चस्वी (विशिष्ट प्रभावयुक्त) और यशस्वी थे। उन्होने क्रोध, मान, माया, लोभ, निद्रा, इन्द्रियो और परीषहो को जीत लिया था। वे जीवन (जीने) की आशा और मरण के भय से विमुक्त थे, वे कुत्रिकापणभूत (जैसे कुत्रिकापण मे तीनों लोकों की आवश्यक समस्त वस्तुएँ मिल जाती हैं, वैसे ही वे समस्त अभीष्ट पदार्थों की प्राप्ति मे समर्थ अथवा समस्त गुणों की उपलब्धि से युक्त) थे। वे बहुश्रुत और बहुपरिवार वाले थे।

12. During that period of time a *Sthavir Bhagavan* (senior ascetic) of the Parshva tradition along with five hundred ascetic disciples, comfortably wandering from one village to another in course of his usual itinerant way, arrived at Pushpavatika Chaitya located in the north-eastern direction outside Tungika city Seeking a suitable place and permission he spent his time enkindling his soul with ascetic-discipline and austerities That *Sthavir Bhagavan* was' *jatisampanna* (belonged to high castes), *kulasampanna* (came from noble families), *balasampanna* (rich in physical strength), *roop-sampanna* (handsome), *vinayasampanna* (modest), *jnanasampanna* (rich in knowledge), *darshan-sampanna* (having profound perception/faith), *charitrasampanna* (strict adherent of ascetic-conduct), *lajjasampanna* (shy of indulging in sinful activities) and *laghav-sampanna* (having minimum possessions as well as passions).

He was brilliant and radiant with power (*ojasvi*) and aura (*tejasvi*), influential (*varchasvi*) and famous (*yashasvi*). He had conquered his anger, conceit, deceit, greed, senses, sleep and pain of torments. He was free of the desire for life and fear of death. He was like a market place (*Kutrikapanbhoot*) (As all essential commodities are available in a market place, so was he with regard to all essential qualities and abilities to acquire everything desired) He was a great scholar with a large family of disciples

१३. तए ण तुंगियाए नगरीए सिंघाडग–तिग–चउक्क–चच्चर–महापहपहेसु जाव एगदिसादभिमुहा णिज्जायंति।

१३. तदनन्तर तुगिका नगरी के शृगाटक (सिघाडे के आकार वाले त्रिकोण) मार्ग मे, त्रिक (तीन मार्ग मिलते हैं, ऐसे) रास्तो मे (चार मार्ग मिलते है, ऐसे चौराहों) मे तथा अनेक मार्ग मिलते हैं, ऐसे मार्गों में राजमार्गों में एवं सामान्य मार्गो मे सर्वत्र उन स्थविर भगवन्तो के पदार्पण की बात फैल गई। जनता एक ही दिशा मे उन्हे वदन करने के लिए जाने लगी है।

13. Then the news of his arrival spread all over in Tungika city including triangular courtyards (*shringatak*), crossings of three, four and more paths and on highways People started moving in just one direction in order to pay homage to him

१४. तए णं ते समणोवासया इमीसे कहाए लद्धट्ठा समाणा हट्ठतुट्ठा जाव सद्दावेंति, सद्दावित्ता एवं वयासी–एवं खलु देवाणुप्पिया ! पासावच्चेज्जा थेरा भगवंतो विहरंति। तं महाफलं खलु देवाणुप्पिया ! तहारूवाणं थेराणं भगवंताणं णाम–गोत्तस्स वि सवणयाए किमंग पुण अभिगमण–वंदण–नमंसण–पडिपुच्छण–पज्जुवासणयाए जाव गहणयाए ? तं गच्छामो णं देवाणुप्पिया ! थेरे भगवंते वंदामो नमंसामो जाव पज्जुवासामो, एयं णं इहभवे वा परभवे वा जाव आणुगामियत्ताए भविस्सति, इति।

कट्टु अन्नमन्नस्स अंतिए एयमट्टं पडिसुणेंति, पडिसुणित्ता जेणेव सयाइं सयाइं गिहाइं तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता ण्हाया कयबलिकम्मा कयकोउय–मंगल–पायच्छित्ता, सुद्धप्पावेसाइं मंगल्लाइं वत्थाइं पवराइं परिहिया, अप्पमहग्घा–भरणालंकियसरीरा सएहिं सएहिं गेहेहिंतो पडिनिक्खमंति, पडिनिक्खमित्ता, एगयओ मेलायंति। मेलायित्ता पायविहारचारेणं तुंगियाए नगरीए मज्झं मज्झेणं निग्गच्छंति, निग्गच्छित्ता जेणेव पुप्फवतीए चेतिए तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता थेरे भगवंत पंचविहेणं अभिगमेणं अभिगच्छंति, तं जहा १. सचित्ताणं दव्वाणं विउसरणयाए, २. अचित्ताणं दव्वाणं अविओसरणताए, ३. एगसाडिएणं उत्तरासंगकरणेणं, ४. चक्खुप्फासे अंजलिप्पग्गहेणं, ५. मणसो एगत्तीकरणेणं, जेणेव थेरा भगवंतो तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता तिक्खुत्तो आयाहिण–पयाहिणं करेंति, करित्ता जाव तिविहाए पज्जुवासणाए पज्जुवासेंति। तं जहा–काइ० वाइ० माण०। तत्थ काइयाए–संकुचियपाणि–पाए सुस्सूसमाणे णमंसमाणे अभिमुहे विणएण पंडलिउडे पजलिउडे पज्जुवासंति। (२) वाइयाए–जं जं भगवं वागरेति 'एवमेयं भंते ! तहमेयं भंते ! अवितहमेयं भंते ! असंदिद्धमेयं भंते ! इच्छियमेयं भंते ! पडिच्छियमेयं भंते ! इच्छियपडिच्छियमेयं भंते ! वायाए अपडिकूलेमाणा विणएणं पज्जुवासंति। (३) माणसियाए–संवेगं जणयंता तिव्वधम्माणुरागरत्ता विगह–विसोत्तियपरिवज्जियमई अन्नत्थ कत्थइ मणं अकुव्वमाणा विणएणं पज्जुवासंति।'

१४. जब यह बात तुगिका नगरी के श्रमणोपासको को ज्ञात हुई तो वे अत्यन्त हर्षित और सन्तुष्ट हुए, परस्पर एक–दूसरे को बुलाकर इस प्रकार कहने लगे–हे देवानुप्रियो ! (सुना है कि) भगवान

पार्श्वनाथ के शिष्यानुशिष्य स्थविर भगवन्त, जो जातिसम्पन्न आदि अनेक विशेषणो से युक्त है, यहाँ पधारे है और यथाप्रतिरूप अवग्रह ग्रहण करके संयम और तप से अपनी आत्मा को भावित करते हुए विहरण करते हैं।

हे देवानुप्रियो ! तथारूप स्थविर भगवन्तों के नाम-गोत्र को सुनने का भी महाफल होता है, तब फिर उनके सामने जाना, वन्दन-नमस्कार करना, उनका कुशल-मगल (सुख-साता) पूछना और उनकी पर्युपासना (सेवा) करना, यावत् उनसे प्रश्न पूछकर अर्थ-ग्रहण करना, इत्यादि बातो के कल्याण रूप फल का तो कहना ही क्या ? अत हे देवानुप्रियो ! हम सब उन स्थविर भगवन्तो के पास चले और उन्हे वन्दन-नमस्कार करे, यावत् उनकी पर्युपासना करे। ऐसा करना अपने लिए इस भव मे, तथा परभव में हितरूप होगा; यावत् परम्परा से (परलोक में कल्याण का) अनुगामी होगा।''

इस प्रकार बातचीत करके उन्होने उस बात को एक-दूसरे के सामने स्वीकार किया। स्वीकार करके वे सब श्रमणोपासक अपने-अपने घर गये। घर जाकर स्नान किया, फिर **बलिकर्म** (कौए, कुत्ते, गाय आदि को अन्नादि दिया, तथा स्नान से सम्बन्धित तिलक आदि कार्य) किया। (तदनन्तर दुःस्वप्न आदि के फल नाश के लिए) कौतुक और मगल-रूप प्रायश्चित्त किया। फिर शुद्ध (स्वच्छ), तथा धर्मसभा आदि मे प्रवेश करने योग्य (अथवा सज्जनो के पहनने योग्य) एवं श्रेष्ठ वस्त्र पहने। थोडे-से (या कम वजन वाले) किन्तु बहुमूल्य आभूषणो से शरीर को विभूषित किया। फिर वे अपने-अपने घरो से निकले और एक जगह मिले।

तत्पश्चात् वे सम्मिलित होकर पैदल चलते हुए तुगिका नगरी के बीचोंबीच होकर निकले और जहाँ पुष्पवतिक चैत्य था, वहाँ आये। (वहाँ) स्थविर भगवन्तो (को दूर से देखते ही) के पास पाँच प्रकार के अभिगम करके गये। वे (पाँच अभिगम) इस प्रकार है-(१) (अपने पास रहे हुए) सचित्त द्रव्यो (फूल, ताम्बूल आदि) का त्याग करना, (२) अचित्त द्रव्य वस्त्र आदि को संकुचित करना अथवा मर्यादित करना, (३) एकशाटिक उत्तरासग करना (एक पट के बिना सिले हुए वस्त्र-दुपट्टे को यतनार्थ मुख पर रखना), (४) स्थविर-भगवन्तो को देखते ही दोनो हाथ जोडना, तथा (५) मन को एकाग्र करना।

इस प्रकार पाँच प्रकार का अभिगम करके वे श्रमणोपासक स्थविर भगवन्तो के निकट पहुँचे। निकट आकर उन्होने दाहिनी ओर से तीन बार उनकी प्रदक्षिणा की, वन्दन-नमस्कार किया यावत् कायिक, वाचिक और मानसिक, इन तीनो प्रकार से उनकी पर्युपासना करने लगे। [(१) वे हाथ-पैरों को सिकोडकर शुश्रूषा करते हुए, नमस्कार करते हुए, उनके सम्मुख विनय से हाथ जोड़कर काया से पर्युपासना करते है। (२) जो-जो बाते स्थविर भगवान फरमा रहे थे, उसे सुनकर-'भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यही तथ्य है, यही सत्य है, भगवन् ! यही इष्ट और विशेष इष्ट है', इस प्रकार वाणी से अनुकूल होकर विनयपूर्वक पर्युपासना करते है तथा (३) मन से (हृदय से) सवेगभाव उत्पन्न करते हुए तीव्र धर्मानुराग मे रगे हुए विग्रह (कलह) और प्रतिकूलता (विरोध) से रहित बुद्धि वाले होकर, मन को अन्यत्र कही न लगाते हुए विनयपूर्वक उपासना करते है।]

14. When the *Shramanopasaks* of Tungika city came to know of this they were very pleased and contented. They called one another and

deliberated—"Beloved of gods ! A *Sthavir Bhagavant* (senior ascetic) of the lineage of Bhagavan Parshva Naath, who is endowed with many virtues including *Jatisampanna*, has arrived here and seeking a suitable place and permission, he spends his time enkindling his soul with ascetic-discipline and austerities

"O Beloved of gods ! What to say of being able to go near him, pay homage to him, bow to him, inquire about his well being, worship him, ... and so on up to. ask questions to him and listen to his discourse when mere hearing of his name and lineage is highly meritorious ? Therefore, O Beloved of gods ! Let us all go to the *Sthavir Bhagavant* and pay homage to him . and so on up to worship him This act of obeisance will prove to be beneficial and so on up to means of continued beatitude for us in this, next and following births "

Thus they (*sharamanopasaks*) said to one another and had a consensus Once agreed upon, all the *shramanopasaks* returned to their respective homes Reaching there, they took their bath and performed propitiatory rites (*Bali-karma*, this includes applying auspicious mark on forehead and giving grains and other eatables to crows, cows and dogs) They also performed conciliatory and auspicious rituals (*Kautuk-mangal*, done in order to ward of ill effects of bad dreams etc) After that they put on clean and excellent ceremonial dresses suited for formal congregations (or suitable for noble persons) and embellished themselves with light but costly ornaments After all this they came out of their homes and gathered at one place

Having assembled at one place, they walked together through Tungika city and arrived at Pushpavatik Chaitya. There (seeing Sthavir *Bhagavants)* they observed the five codes of courtesy meant for a religious assembly (*abhigam*) and approached Sthavir Bhagavants. The five codes being—(1) to discard things infested with living organisms (*sachit*, such as flowers, beetle-leaves etc), (2) to carefully retain things free of living organisms (*achit*), (3) to place a one-piece shawl (*uttariya*) on shoulders, (4) to join palms the instant the senior ascetics are seen, and (5) to focus attention

Concluding the five *abhigams* those *shramanopasaks* came near the senior ascetics After this they went around the senior ascetics three times, paid homage and obeisance and so on up to. . commenced their threefold worship—physical, vocal and mental [(1) Physical worship—

With a desire to listen to religious sermon they faced *Bhagavant*, bowed to him and sat down at proper place drawing in and folding their limbs and humbly joining their palms. (2) Vocal worship—When senior ascetics uttered something they responded by saying in compliance—"*Bhante* ! It is, indeed, so. *Bhagavan* ! So is the reality and so is the truth. *Bhante* ! Your word is what we need and what we accept." (3) Mental worship—Filling their mind with intense and sincere feeling of renouncing the mundane, freeing their mind of any contradictions, antagonism and distraction, they devoted themselves keenly to the pursuance of the path of liberation]

१५. तए णं ते थेरा भगवंतो तेसिं समणोवासयाणं तीसे य महतिमहालयाए परिसाए चाउज्जामं धम्मं परिकहेंति, जहा केसिसामिस्स जाव समणोवासियत्ताए आणाए आराहगे भवंति जाव धम्मो कहिओ।

१५. तत्पश्चात् उन स्थविर भगवन्तो ने उन श्रमणोपासको तथा उस महती परिषद् को केशीश्रमण की तरह चातुर्याम-धर्म का उपदेश दिया। यावत् वे श्रमणोपासक अपनी श्रमणोपासकता द्वारा (उन स्थविर भगवन्तो की) आज्ञा के आराधक हुए। यावत् धर्मकथा पूर्ण हुई।

15. Then those illustrious senior ascetics, as Keshi Shraman had done in the past, gave their sermon of four dimensional religion (*Chaturyam Dharma*) to those *shramanopasaks* and the large congregation... and so on up to those *shramanopasaks* became followers of the tenets of those senior ascetics through their devotion for the ascetic order and so on up to The sermon was concluded

श्रमणोपासको के प्रश्न . स्थविरो के उत्तर

QUESTIONS BY SHRAMANOPASAKS . ANSWERS BY STHAVIRS

१६. तए णं ते समणोवासया थेराणं भगवंताणं अंतिए धम्मं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठ जाव हयहियया तिक्खुत्तो आयाहिण-पयाहिणं करेंति, जाव तिविहाए पज्जुवासणाए पज्जुवासंति, पज्जुवासित्ता एवं वयासी-

[प्र.] संजमे णं भंते ! किंफले ? तवे णं भंते ! किंफले ?

[उ.] तए णं ते थेरा भगवंतो ते समणोवासए एवं वयासी-संजमे णं अज्जो ! अणण्हयफले, तवे वोदाणफले।

१६. तदनन्तर वे श्रमणोपासक स्थविर भगवन्तो से धर्मोपदेश सुनकर एवं हृदयगम करके बडे हर्षित और सन्तुष्ट हुए, उनका हृदय खिल उठा और उन्होंने स्थविर भगवन्तों की दाहिनी ओर से तीन बार प्रदक्षिणा की। तीन प्रकार की उपासना द्वारा उनकी पर्युपासना की और फिर इस प्रकार पूछा-

[प्र.] भगवन् ! सयम का क्या फल है ? भगवन् ! तप का क्या फल है ?

[उ.] स्थविर भगवन्तो ने उन श्रमणोपासकों को इस प्रकार उत्तर दिया-'हे आर्यो ! संयम का फल अनास्रवता (संवरसम्पन्नता) है। तप का फल व्यवदान (कर्मों को विशेष रूप से काटना आत्मा को शुद्ध करना) है।'

16. Listening to and understanding the religious discourse given by *Sthavir Bhagavants*, those *shramanopasaks* became pleased, contented... and so on up to.. their hearts bloomed with bliss. They went around *Sthavir Bhagavants* three times clockwise. They performed their threefold worship and then said—

[Q.] *Bhante* ! What is the outcome of restraint (*samyam*) ? *Bhante* ! What is the outcome of austerities (*tap*) ?

[Ans.] The *Sthavir Bhagavants* replied as follows—O noble ones ! The outcome of restraint (*samyam*) is blockage of inflow of *karmas* (*anashravata*) The outcome of austerities (*tap*) is purification of soul by extensive shedding of *karmas* (*vyavadaan*).

१७. [प्र. १] तए णं ते समणोवासया थेरे भगवंते एवं वयासी—जइ णं भंते ! संजमे अणण्हयफले, तवे वोदाणफले किंपत्तियं णं भंते ! देवा देवलोएसु उववज्जंति ?

१७. [प्र. १] (उत्तर सुनकर) श्रमणोपासको ने स्थविर भगवन्तो से (पुन) इस प्रकार पूछा-'भगवन् ! यदि सयम का फल अनास्रवता है और तप का फल व्यवदान है तो देव देवलोको मे किस कारण से उत्पन्न होते है ?'

17. [Q. 1] (At this) the *shramanopasak* further asked—"*Bhante* ! If The outcome of restraint (*samyam*) is blockage of inflow of *karmas* (*anashravata*) and the outcome of austerities (*tap*) is purification of soul by extensive shedding of *karmas* (*vyavadaan*) then why gods (*Devs*) are born in divine realms (*Dev-loks*) ?

[उ. २] तत्थ णं कालियपुत्ते नामं थेरे ते समणोवासए एवं वयासी—पुव्वतवेणं अज्जो ! देवा देवलोएसु उववज्जंति।

[उ. ३] तत्थ णं मेहिले नाम थेरे ते समणोवासए एवं वयासी—पुव्वसंजमेणं अज्जो ! देवा देवलोएसु उववज्जंति।

[उ. ४] तत्थ णं आणंदरक्खिए णामं थेरे ते समणोवासए एवं वयासी—कम्मियाए अज्जो ! देवा देवलोएसु उववज्जंति।

[उ. ५] तत्थ णं कासवे णामं थेरे ते समणोवासए एवं वयासी—संगियाए अज्जो ! देवा देवलोएसु उववज्जंति। पुव्वतवेणं पुव्वसंजमेणं कम्मियाए संगियाए अज्जो ! देवा देवलोएसु उववज्जंति। सच्चे णं एस अट्ठे, नो चेव णं आयभाववत्तव्वयाए।

[उ. २] (श्रमणोपासकों का प्रश्न सुनकर) उन स्थविरो में से कालिकपुत्र नामक स्थविर ने श्रमणोपासकों से यो कहा-'आर्यो ! पूर्वतप के कारण देव देवलोक में उत्पन्न होते हैं।'

[उ. ३] उनमे से मेहिल (मेधिल) नाम के स्थविर ने इस प्रकार कहा-'आर्यो ! पूर्व-संयम के कारण देव देवलोकों में उत्पन्न होते है।'

[उ. ४] फिर उनमे से आनन्दरक्षित नामक स्थविर ने इस प्रकार कहा-'आर्यो ! कर्मिता (कर्मों की विद्यमानता या कर्म शेष रहने) के कारण देवता देवलोकों मे उत्पन्न होते है।'

[उ. ५] उनमे से काश्यप नामक स्थविर ने यो कहा-'आर्यो ! संगिता-(रागभाव = आसक्ति) के कारण देव देवलोको मे उत्पन्न होते हैं। इस प्रकार हे आर्यो ! (वास्तव मे) पूर्व (रागभावयुक्त) तप से, पूर्व (सराग) संयम से, कर्मिता (कर्मक्षय न होने से या कर्मों के रहने) से, तथा संगिता (द्रव्यासक्ति) से, देवता देवलोको में उत्पन्न होते है। यह बात (अर्थ) सत्य है। इसलिए कही है, हमने अपना आत्मभाव (अपना अहंभाव या अभिप्राय) बताने की दृष्टि से नहीं कही है।'

[Ans. 2] (On hearing this question from the *shramanopasaks*) Sthavir Kalik-putra said to the *shramanopasak*—"Noble ones ! Gods (*Devs*) are born in divine realms (*Dev-loks*) due to past austerities (*purva-tap*)."

[Ans. 3] Sthavir Mehil (Medhil) said—"Noble ones ! Gods (*Devs*) are born in divine realms (*Dev-loks*) due to past restraints (*purva-samyam*)."

[Ans. 4] Sthavir Anandarakshit said—"Noble ones ! Gods (*Devs*) are born in divine realms (*Dev-loks*) due to residual *karmas* from the past (*karmita*)"

[Ans. 5] Sthavir Kashyap said—"Noble ones ! Gods (*Devs*) are born in divine realms (*Dev-loks*) due to feeling of attachment or craving (*sangita*) Thus, Noble ones ! (In fact) gods (*Devs*) are born in divine realms (*Dev-loks*) due to past (attachment-infested) austerities (*purva-tap*), past (attachment-infested) restraints (*purva-samyam*), residual *karmas* from the past (*karmita*) and feeling of attachment or craving (*sangita*) We state this because this is the truth and not because this is what we want to say (out of ego or personal prejudice)."

१८. तए णं ते समणोवासया थेरेहिं भगवंतेहिं इमाइं एयारूवाइं वागरणाइं वागरिया समाणा हट्ठतुट्ठा थेरे भगवंते वंदंति नमंसंति, वंदित्ता नमंसित्ता पसिणाइं पुच्छंति, पुच्छित्ता अट्ठाइं उवादियंति, उवादिएत्त उट्ठाए उट्ठेंति, उट्ठित्ता थेरे भगवंते तिक्खुत्तो वंदंति णमंसंति, वंदित्ता नमंसित्ता थेराणं भगवंताणं अंतियाओ पुप्फवतियाओ चेइयाओ पडिनिक्खमंति, पडिनिक्खमित्ता जामेव दिसिं पाउब्भूया तामेव दिसिं पडिगया।

१८. तत्पश्चात् वे श्रमणोपासक, स्थविर भगवन्तो द्वारा प्रदत्त उत्तरो को सुनकर हर्षित एवं सन्तुष्ट हुए और स्थविर भगवन्तों को वन्दना नमस्कार करके अन्य प्रश्न भी पूछने लगे। प्रश्न पूछकर फिर

स्थविर भगवन्तों द्वारा दिये गये उत्तरो (अर्थों) को ग्रहण करते है। तत्पश्चात् वे वहाँ से उठते हैं और तीन बार वन्दना–नमस्कार करते है। फिर वे उन स्थविर भगवन्तों के पास से और उस पुष्पवतिक चैत्य से निकलकर जिस दिशा से आये थे, उसी दिशा मे वापस (अपने–अपने स्थान पर) लौट गये।

18. Listening to and understanding the religious discourse given by *Sthavir Bhagavants*, those *shramanopasaks* became pleased and contented After paying homage and obeisance to *Sthavir Bhagavants* they started asking other questions After asking questions they listened to and understood the answers. They then got up and paid homage and obeisance three times At last they took leave of the *Sthavir Bhagavants*, came out of the Pushpavatik *chaitya* and proceeded in the direction they had come from (to their respective abodes)

१९. तए णं ते थेरा अन्नया कयाइं तुंगियाओ पुप्फवतियाओ, चेइयाओ पडिनिग्गच्छंति, बहिया जणवयविहारं विहरंति।

१९. इधर वे स्थविर भगवन्त भी किसी एक दिन तुगिका नगरी के उस पुष्पवतिक चैत्य से निकले और बाहर (अन्य) जनपदो मे विचरण करने लगे।

19. The *Sthavir Bhagavants* too left the Pushpavatik *chaitya* and Tungika city one day, and resumed their itinerant way in other inhabited areas (*janapad*)

राजगृह मे गौतम स्वामी का भिक्षाचर्यार्थ पर्यटन **ALMS-SEEKING BY GAUTAM SWAMI IN RAJAGRIHA**

२०. तेणं कालेणं तेणं समए णं रायगिहे नामं नगरे जाव परिसा पडिगया।

२०. उस काल, उस समय मे राजगृह नामक नगर था। वहाँ भगवान महावीर स्वामी पधारे। परिषद् (वन्दना करने गई) यावत् (धर्मोपदेश सुनकर) परिषद् वापस लौट गई।

20. During that period of time there was a city called Rajagriha. Description (as before) Bhagavan Mahavir arrived there. People came out *Bhagavan* gave his sermon People dispersed

२१. तेणं कालेणं तेणं समए णं समणस्स भगवओ महावीरस्स जेट्ठे अंतेवासी इंदभूती नामं अणगारे जाव संखित्तविउलतेयलेस्से छट्ठंछट्ठेणं अणिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे जाव विहरति।

२१. उस काल, उस समय मे श्रमण भगवान महावीर के ज्येष्ठ अन्तेवासी (शिष्य) इन्द्रभूति नामक अनगार थे। यावत् वे विपुल तेजोलेश्या को अपने शरीर में सक्षिप्त करके रखते थे। वे निरन्तर छट्ठ–छट्ठ के तपश्चरण से तथा सयम और तप से अपनी आत्मा को भावित करते हुए विचरते थे।

21. During that period of time the senior disciple of Bhagavan Mahavir was one Indrabhuti Anagar.. and so on up to... He had

tempered the *vipul tejoleshya* (great radiant energy or fire power) he was endowed with. He spent his time enkindling (*bhaavit*) his soul by observing a series of two day fasts (missing six meals), ascetic-discipline (restraints) and austerities.

२२. तए णं से भगवं गोयमे छट्ठक्खमणपारणगंसि पढमाए पोरिसीए सज्झायं करेइ, बीयाए पोरिसीए झाणं झियायइ, तइयाए पोरिसीए अतुरियमचवलमसंभंते मुहपोत्तियं पडिलेहेति, पडिलेहित्ता भायणाइं वत्थाइं पडिलेहेइ, पडिलेहित्ता भायणाइं पमज्जइ, पमज्जित्ता भायणाइं उग्गाहेति, उग्गहित्ता जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छति, उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं वंदति नमंसति, २ एवं वयासी–इच्छामि णं भंते ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए छट्ठक्खमणपारणगंसि रायगिहे नगरे उच्च–नीय–मज्झिमाइं कुलाइं घरसमुदाणस्स भिक्खायरियाए अडित्तए।

अहासुहं देवाणुप्पिया ! मा पडिबंधं करेह।

२२. इसके पश्चात् छट्ठ के पारणे के दिन भगवान इन्द्रभूति गौतम स्वामी ने प्रथम प्रहर में स्वाध्याय किया; द्वितीय प्रहर मे ध्यान किया, तृतीय प्रहर मे शारीरिक शीघ्रतारहित, मानसिक चपलतारहित, आकुलता से रहित होकर मुखवस्त्रिका की प्रतिलेखना की; फिर पात्रो और वस्त्रों की प्रतिलेखना की; तदनन्तर पात्रो का प्रमार्जन किया और फिर उन पात्रो को लेकर जहाँ श्रमण भगवान महावीर स्वामी विराजमान थे, वहाँ आये। वहाँ आकर भगवान को वन्दन–नमस्कार कर इस प्रकार निवेदन किया- 'भगवन् ! आज मेरे छट्ठ तप के पारणे का दिन है। अत. आपसे आज्ञा प्राप्त होने पर मै राजगृह नगर मे उच्च, नीच और मध्यम कुलों के गृह–समुदाय मे भिक्षाचर्या की विधि के अनुसार, भिक्षाटन करना चाहता हूँ।'

भगवान ने कहा–'हे देवानुप्रिय ! जिस प्रकार तुम्हे सुख हो, वैसे करो; किन्तु विलम्ब मत करो।'

22. Then on the day of breaking his two-day fast Bhagavan Indrabhuti Gautam Swami did studies during the first quarter of the day and meditation during the second quarter of the day. During the third quarter he inspected (*pratilekhana*) his *mukh-vastrika* (a handkerchief-like piece of cloth used to cover mouth; also a specially designed mouth-cover) followed by inspection of pots and clothes. He then cleaned the pots and carrying them came where Bhagavan Mahavir was seated. After paying homage and obeisance he submitted—"*Bhante* ! Today is the day of breaking my two day fast (*shashthakhaman tap*). Therefore, seeking your permission I wish to go to Rajagriha city and visit low, medium and high caste families to collect alms following the prescribed procedure."

Bhagavan said—"Beloved of gods ! Do as you please without any delay."

२३. तए णं भगवं गोयमे समणेणं भगवया महावीरेणं अब्भणुण्णाए समाणे समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियाओ गुणसिलाओ चेइयाओ पडिनिक्खमइ, पडिनिक्खमित्त अतुरियमचवलमसंभंते जुगंतरपलोयणाए दिट्ठीए पुरतो रियं सोहेमाणे जेणेव रायगिहे नगरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता रायगिहे नगरे उच्च-नीय-मज्झिमाइं कुलाइं घरसमुदाणस्स भिक्खायरियं अडति।

२३. इसके बाद भगवान गौतम स्वामी श्रमण भगवान महावीर के पास से तथा गुणशील चैत्य से निकले। फिर शीघ्रता, चपलता (चचलता) और सभ्रम (आकुलता) से रहित होकर, युगान्तर-युग-गाडी का जुआ। (चलते समय अपने शरीर का भाग तथा दृष्टिगोचर होने वाले मार्ग का भाग; इन दोनो के बीच का अन्तर युगान्तर कहलाता है।) प्रमाण दूर तक की भूमि को देखते हुए, अपनी दृष्टि से आगे-आगे के गमन मार्ग पर ईर्यासमितिपूर्वक चलते हुए जहाँ राजगृह नगर था, वहाँ आये। वहाँ ऊँच, नीच और मध्यम कुलो के गृह-समुदाय मे विधिपूर्वक भिक्षाचरी करने के लिए पर्यटन करने लगे।

23. After this Bhagavan Gautam Swami took leave of Bhagavan Mahavir and left Gunashila *Chaitya* He moved without any haste, hurry and eagerness While walking on the path, he carefully observed the ground to a distance measuring one yoke (*yugantar*) and followed the code of care of movement (*irya samiti*). Walking thus he came to Rajagriha city and started visiting the houses of low, medium and high caste families to collect alms following the prescribed procedure "

स्थविरो के विषय में जिज्ञासा CURIOSITY ABOUT STHAVIRS

२४. तए णं से भगवं गोयमे रायगिहे नगरे जाव (सु. २३) अडमाणे बहुजणसद्दं निसामेइ-"एवं खलु देवाणुप्पिया ! तुंगियाए नगरीए बहिया पुप्फवतीए चेतिए पासावच्चिज्जा थेरा भगवंतो समणोवासएहिं इमाइं एतारूवाइं वागरणाइं पुच्छिया-संजमे णं भंते ! किंफले, तवे णं भंते ! किंफले ? तए णं ते थेरा भगवंता ते समणोवासए एवं वयासी-संजमे णं अज्जो ! अणण्हयफले, तवेणं वोदाणफले तं चेव जाव (सु. १७) पुव्वतवेणं पुव्वसंजमेणं कम्मियाए संगियाए अज्जो ! देवा देवलोएसु उववज्जंति, सच्चे णं एसमट्ठे, णो चेव णं आयभाववत्तव्वयाए" से कहमेयं मन्ने एवं ?

२४. उस समय राजगृह नगर मे भिक्षाटन करते हुए भगवान गौतम ने बहुत से लोगो के मुख से ऐसे शब्द सुने-"हे देवानुप्रिय ! तुगिका नगरी के बाहर पुष्पवतिक नामक उद्यान मे भगवान पार्श्वनाथ की परम्परा के स्थविर भगवन्त पधारे थे, उनसे श्रमण भगवान महावीर के श्रमणोपासको ने इस प्रकार के प्रश्न पूछे थे कि 'भगवन् ! संयम का क्या फल है, तप का क्या फल है ?' तब उन स्थविर भगवन्तो ने श्रमणोपासको से इस प्रकार कहा था-"आर्यो ! सयम का फल अनास्रवता (सवर) है, और तप का फल व्यवदान (कर्मों का क्षय) है।" यह सारा वर्णन पहले (सू १७) की तरह कहना चाहिए, यावत्-'हे आर्यो ! पूर्वतप से, पूर्वसयम से, कर्मिता-(कर्म शेष रहने से) और संगिता-(रागभाव या असक्ति) से देवता देवलोक मे उत्पन्न होते है। यह बात सत्य है, इसलिए हमने कही है, हमने अपने अहभाववश यह

बात नहीं कही है। तो मैं (गौतम) यह (इस जनसमूह की) बात कैसे मान लूँ? (गौतम स्वामी के मन में शंका उठी।)

24. While moving about in Rajagriha city seeking alms, Bhagavan Gautam heard many people talking—"Beloved of gods ! *Sthavir Bhagavants* (senior ascetics) of the lineage of Bhagavan Parshva Naath, had come to Pushpavatik garden outside Tungika city. Some *shramanopasaks* of Shraman Bhagavan Mahavir's order had asked such questions to them—'*Bhante* ! What is the outcome of restraint (*samyam*) ? *Bhante* ! What is the outcome of austerities (*tap*) ?' Then the *Sthavir Bhagavants* replied as follows—'O noble ones ! The outcome of restraint (*samyam*) is *anashravata* and that of austerities (*tap*) is *vyavadaan*. Aphorism 17 should be repeated here up to 'Noble ones ! Gods (*Devs*) are born in divine realms (*Dev-loks*) due to *purva-tap, purva-samyam, karmita* and *sangita* We state this because this is the truth and not out of ego " Now why should I (Gautam Swami) believe this statement (by these people) ? (This doubt plagued Gautam Swami.)

२५. [१] तए णं से समणे भगवं गोयमे इमीसे कहाए लद्धट्ठे समाणे जायसड्ढे जाव समुप्पन्नकोतुहल्ले अहपज्जत्तं समुदाणं गेण्हति, २ रायगिहातो नगरातो पडिनिक्खमति, अतुरियं जाव सोहेमाणे जेणेव गुणसिलाए चेइए जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छति, सम. भ. महावीरस्स अदूरसामंते गमणागमणाए पडिक्कमति, एसणमणेसणं आलोएति, भत्तपाणं पडिदंसेति, २ समणं भगवं महावीरं जाव एवं वयासि–

"एवं खलु भंते ! अहं तुब्भेहिं अब्भणुण्णाते समाणे रायगिहे नगरे उच्च–नीच–मज्झिमाणि कुलाणि घरसमुदाणस्स भिक्खायरियाए अडमाणे बहुजणसद्दं निसामेमि "एवं खलु देवाणुप्पिया ! तुंगियाए नगरीए बहिया पुप्फवईए चेइए पासावच्चिज्जा थेरा भगवंतो समणोवासएहिं इमाइं एतारूवाइं पुच्छिता–'संजमे णं भंते ! किंफले ? तवे किंफले ? तं. चेव जाव (सु. १७) सच्चे णं एसमट्ठे, णो चेव णं आयभाववत्तव्वयाए।"

२५. [१] इसके पश्चात् श्रमण भगवान गौतम ने लोगो के मुख से यह बात सुनी तो उन्हे श्रद्धा–जिज्ञासा उत्पन्न हुई, और उस बात के लिए उनके मन मे कुतूहल भी जगा। अत भिक्षाविधिपूर्वक भिक्षा लेकर वे राजगृहनगर से बाहर निकले और मध्यम गति से ईर्यासमितिपूर्वक चलते हुए गुणशीलक चैत्य मे जहाँ श्रमण भगवान महावीर विराजमान थे, वहाँ उनके पास आये। फिर उनके निकट उपस्थित होकर गमनागमन सम्बन्धी प्रतिक्रमण किया, भिक्षाचर्या में लगे हुए एषणादोषो की आलोचना की, फिर लाया हुआ आहार–पानी भगवान को दिखाया। तत्पश्चात् श्री गौतम स्वामी ने श्रमण भगवान महावीर स्वामी से इस प्रकार निवेदन किया–

"भगवन् ! मैं आपसे आज्ञा प्राप्त करके राजगृहनगर मे उच्च, नीच और मध्यम कुलों मे भिक्षाचर्या की विधिपूर्वक भिक्षाटन कर रहा था, उस समय बहुत से लोगों के मुख से इस प्रकार की बातें सुनी कि तुंगिका नगरी के बाहर पुष्पवतिक नामक उद्यान मे पार्श्वापत्यीय स्थविर भगवन्त पधारे थे, उनसे वहाँ के श्रमणोपासको ने इस प्रकार के प्रश्न पूछे थे कि 'भगवन् ! सयम का क्या फल है? और तप का क्या फल है?' यह सारा वर्णन पहले (सू. १७) की तरह जानना चाहिए, यावत् यह बात सत्य है, इसलिए कही है, किन्तु हमने अह (आत्म) भाव के वश होकर नही कही।"

25. [1] When Bhagavan Gautam heard people talking thus an interest... and so on up to curiosity got triggered and surfaced in his mind. Thereafter collecting required alms following the prescribed procedure, he left Rajagriha city, moved with medium pace taking proper care and came where Shraman Bhagavan Mahavir was seated in Gunashila *Chaitya*. After critical review (*pratikraman*) of his movement for alms collection and censure of the faults committed during alms-collection (*alochana*), he showed the food to *Bhagavan*. Having done that Shri Gautam Swami submitted to Shraman Bhagavan Mahavir as follows—

"*Bhante* ! Seeking your permission I went to Rajagriha city and, following the prescribed procedure, was collecting alms from low, medium and high caste families. At that time I heard many people talking that *Sthavir Bhagavants* (senior ascetics) of the lineage of Bhagavan Parshva Naath, had come to Pushpavatik garden outside Tungika city. There some *shramanopasaks* had asked such questions to them—'*Bhante* ! What is the outcome of restraint (*samyam*) ? *Bhante* ! What is the outcome of austerities (*tap*) ?' Aphorism 17 should be repeated here up to—We state this because this is the truth and not out of ego"

[प्र. २] "तं पभू णं भंते ! ते थेरा भगवंतो तेसिं समणोवासयाणं इमाइं एतारूवाइं वागरणाइं वागरित्तए ? उदाहु अप्पभू ? समिया णं भंते ! ते थेरा भगवंतो तेसिं समणोवासगाणं इमाइं एतारूवाइं वागरणाइं वागरित्तए ? उदाहु असमिया ? आउज्जिया णं भंते ! ते थेरा भगवंतो तेसिं समणोवासयाणं इमाइं एयारूवाइं वागरणाइं वागरित्तए ? उदाहु अणाउज्जिया ? पलिउज्जिया णं भंते ! ते थेरा भगवंतो तेसिं समणोवासयाणं इमाइं एयारूवाइं वागरणाइं वागरित्तए ? उदाहु अपलिउज्जिया ? पुव्वतवेणं अज्जो ! देवा देवलोएसु उववज्जंति, पुव्वसंजमेणं. कम्मियाए., संगियाए., पुव्वतवेणं पुव्वसंजमेणं कम्मिए संगियाए अज्जो ! देवा देवलोएसु उववज्जंति। सच्चे णं एसमट्ठे णो चेव णं आयभाववत्तव्वयाए ?"

[प्र. २] (यो कहकर गौतम स्वामी ने पूछा-) "भगवन् ! क्या वे स्थविर भगवन्त उन श्रमणोपासको के प्रश्नो के इस प्रकार के उत्तर देने मे समर्थ है अथवा असमर्थ है? भगवन् ! क्या वे स्थविर भगवन्त उन श्रमणोपासको को ऐसा उत्तर देने में सम्यक् रूप से ज्ञान-सम्पन्न हैं, अथवा असम्पन्न या अनभ्यस्त है? (और) हे भगवन् ! क्या वे स्थविर भगवन्त उन श्रमणोपासकों को ऐसा

उत्तर देने मे उपयोग वाले हैं या नही है ? भगवन् ! क्या वे स्थविर भगवन्त उन श्रमणोपासको को ऐसा उत्तर देने में परिज्ञानी (विशिष्ट ज्ञानवान्) है, अथवा नही हैं कि आर्यो; पूर्वतप से देवता देवलोकों में उत्पन्न होते हैं, तथा पूर्वसयम से, कर्मिता से और संगिता के कारण देवता देवलोकों में उत्पन्न होते हैं। यह बात सत्य है, इसलिए हम कहते हैं, किन्तु अपने अहंभाववश नहीं कहते है ?''

[Q. 2] (Stating thus Gautam Swami asked—) "*Bhante* ! Are those *Sthavir Bhagavants* capable or incapable of giving such answers to those *shramanopasaks* ? *Bhante* ! Are those *Sthavir Bhagavants* genuinely qualified or unqualified to give such answers to those *shramanopasaks* ? And, *Bhante* ! Are those *Sthavir Bhagavants* experienced (inclined) or inexperienced to give such answers to those *shramanopasaks* ? *Bhante* ! Do those *Sthavir Bhagavants* have special qualification or ordinary qualification to give such answers to those *shramanopasaks* that—'Noble ones ! Gods (*Devs*) are born in divine realms (*Dev-loks*) due to *purva-tap, purva-samyam, karmita* and *sangita*. We state this because this is the truth and not out of ego ' "

[उ. ३] पभू णं गोयमा ! ते थेरा भगवंतो तेसिं समणोवासयाणं इमाइं एयारूवाइं वागरणाइं वागरेत्तए, णो चेव णं अप्पभू, तह चेव नेयव्वं अविसेसियं जाव पभू समिया आउज्जिया पलिउज्जिया जाव सच्चे णं एसमट्ठे णो चेव णं आयभाववत्तव्वयाए।

[उ. ३] हे गौतम ! वे स्थविर भगवन्त उन श्रमणोपासको को इस प्रकार के उत्तर देने में समर्थ है, असमर्थ नहीं, (शेष–सब पूर्ववत् जानना) यावत् वे सम्यक् रूप से सम्पन्न (समित) है; असम्पन्न नही; वे उपयोग वाले है, अनुपयोग वाले नही, वे विशिष्ट ज्ञानी है, सामान्य ज्ञानी नही। यह बात सत्य है, इसलिए उन स्थविरो ने कही है, किन्तु अपने अहभाव के वश होकर नही कही।

[Q. 3] Gautam ! Those *Sthavir Bhagavants* are capable and not incapable of giving such answers to those *shramanopasaks* (other points as aforesaid). and so on up to... genuinely qualified and not unqualified, experienced (inclined) and not inexperienced, and have special qualification and not ordinary qualification. They have stated this because this is the truth and not out of their ego

[४] अहं पि णं गोयमा ! एवमाइक्खामि भासेमि पण्णवेमि परूवेमि–पुव्वतवेणं देवा देवलोएसु उववज्जंति, पुव्वसंजमेणं देवा देवलोएसु उववज्जंति, कम्मियाए देवा देवलोएसु उववज्जंति, संगियाए देवा देवलोएसु उववज्जंति, पुव्वतवेणं पुव्वसंजमेणं कम्मियाए संगियाए अज्जो ! देवा देवलोएसु उववज्जंति; सच्चे णं एसमट्ठे, णो चेव णं आयभाववत्तव्वयाए।

[४] हे गौतम ! मै भी इसी प्रकार कहता हूँ, भाषण करता हूँ, बताता हूँ और प्ररूपणा करता हूँ कि पूर्वतप के कारण से देवता देवलोको मे उत्पन्न होते हैं, पूर्वसयम के कारण देव देवलोको मे उत्पन्न होते हैं,

कर्मिता से देव देवलोको मे उत्पन्न होते हैं तथा संगिता के कारण देवता देवलोकों में उत्पन्न होते है। (निष्कर्ष यह है कि) आर्यो ! पूर्वतप से, पूर्वसयम से, कर्मिता और संगिता से देवता देवलोकों मे उत्पन्न होते हैं। यही बात सत्य है, इसलिए उन्होंने कही है, किन्तु अपनी अहता प्रदर्शित करने के लिए नहीं कही।

[Q. 4] Gautam ! I too say, assert, elaborate and propagate that Gods (*Devs*) are born in divine realms (*Dev-loks*) due to *purva-tap*, Gods (*Devs*) are born in divine realms (*Dev-loks*) due to *purva-samyam*, Gods (*Devs*) are born in divine realms (*Dev-loks*) due to *karmita* and Gods (*Devs*) are born in divine realms (*Dev-loks*) due to *sangita*. (The conclusion is that) 'Noble ones ! Gods (*Devs*) are born in divine realms (*Dev-loks*) due to *purva-tap, purva-samyam, karmita* and *sangita*. They have stated this because this is the truth and not in order to demonstrate their ego.'

पर्युपासना का फल **OUTCOME OF WORSHIP**

२६. [प्र. १] **तहारूवं णं भंते ! समणं वा माहणं वा पज्जुवासमाणस्स किंफला पज्जुवासणा ?**

[उ.] **गोयमा ! सवणफला।**

२६. [प्र. १] भगवन् ! तथारूप-(जैसा वेश है, तदनुरूप गुणों वाले) श्रमण या माहन की पर्युपासना करने वाले मनुष्य को उसकी पर्युपासना का क्या फल मिलता है ?

[उ. १] गौतम ! उसकी पर्युपासना का फल है-श्रवण। सत्-शास्त्र श्रवणरूप फल मिलता है।

26. [Q. 1] *Bhante* ! What is the fruit of *paryupasana* (worship) of a *tatharupa Shraman-mahan* (Jain ascetic as described in the scriptures, having virtues as per the garb) done by a layman ?

[Ans.] "Long lived one ! The fruit of his worship is *shravan* (listening to the sermon or scriptures).

[प्र. २] **से णं भंते ! सवणे किंफले ?**

[उ.] **णाणफले।**

[प्र. २] भगवन् ! उस श्रवण का क्या फल होता है ?

[उ.] गौतम ! श्रवण का फल ज्ञान है।

[Q. 2] *Bhante* ! What is the fruit of *shravan* ?

[Ans.] The fruit of *shravan* is *jnana* (acquisition of knowledge).

[प्र. ३] **से णं भंते ! नाणे किंफले ?**

[उ.] **विण्णाणफले।**

[प्र. ३] भगवन् ! उस ज्ञान का क्या फल है ?

[उ.] गौतम ! ज्ञान का फल विज्ञान (हेय और उपादेय का विवेक) की प्राप्ति है।

[Q. 3] *Bhante* ! What is the fruit of *jnana* ?

[Ans.] The fruit of *jnana* is *vijnana* (capacity to discern between acceptable and rejectable)

[प्र. ४] से णं भंते ! विण्णाणे किंफले ?

[उ.] पच्चक्खाणफले।

[प्र. ४] भगवन् ! उस विज्ञान का क्या फल है ?

[उ.] गौतम ! विज्ञान का फल प्रत्याख्यान है।

[Q. 4] *Bhante* ! What is the fruit of *vijnana* ?

[Ans.] The fruit of *vijnana* is *pratyakhyan* (to renounce sinful activity).

[प्र. ५] से णं भंते ! पच्चक्खाणे किंफले ?

[उ.] संजमफले।

[प्र. ५] भगवन् ! प्रत्याख्यान का क्या फल है ?

[उ.] गौतम ! प्रत्याख्यान का फल संयम है।

[Q. 5] *Bhante* ! What is the fruit of *pratyakhyan* ?

[Ans.] The fruit of *pratyakhyan* is *samyam* (discipline or restraint).

[प्र. ६] से णं भंते ! संजमे किंफले ?

[उ.] अणण्हयफले।

[प्र. ६] भगवन् ! सयम का क्या फल है ?

[उ.] गौतम ! सयम का फल अनास्रवत्व (नवीन कर्मों का निरोध) है।

[Q. 6] *Bhante* ! What is the fruit of *samyam* ?

[Ans.] The fruit of *samyam* is *anasrava* (blockage of inflow of *karmas*).

[७] एवं अणण्हए तवफले। तवे वोदाणफले। वोदाणे अकिरियाफले।

[७] इसी तरह अनास्रवत्व का फल तप है, तप का फल व्यवदान (कर्मनिर्जरा) है और व्यवदान का फल अक्रिया (प्रवृत्ति का निरोध) है।

[7] In the same way the fruit of *anasrava* is *tap* (austerities), that of *tap* is *vyavadaan* (shedding of *karmas*) and that of *vyavadaan* is *akriya* (complete cessation of all activity and inclination of mind, speech and body)

[प्र. ८] से णं भंते ! अकिरिया किंफला ?

[उ.] सिद्धिपज्जवसाणफला पण्णत्ता गोयमा !

गाहा–सवणे णाणे य विण्णाणे पच्चक्खाणे य संजमे।
अणण्हये तवे चेव वोदाणे अकिरिया सिद्धी॥१॥

[प्र. ८] भगवन् ! उस अक्रिया का क्या फल है ?

[८] गौतम ! अक्रिया का अन्तिम फल सिद्धि है। (अर्थात्–प्रवृत्ति निरोध होने पर अन्त मे मुक्ति प्राप्त होती है।)

(गाथा का अर्थ)–(१) (पर्युपासना का प्रथम फल) श्रवण, (२) (श्रवण का फल) ज्ञान, (३) (ज्ञान का फल) विज्ञान, (४) (विज्ञान का फल) प्रत्याख्यान, (५) (प्रत्याख्यान का फल) संयम, (६) (सयम का फल) अनास्रवत्व, (७) (अनास्रवत्व का फल) तप, (८) (तप का फल) व्यवदान, (९) (व्यवदान का फल) अक्रिया, और (१०) (अक्रिया का फल) सिद्धि है।

[Q. 8] *Bhante* ! What is the fruit of *akriya* ?

[Ans.] Gautam ! The ultimate fruit of *akriya* is *Siddhi* (liberation) (In other words complete cessation of inclination and indulgence in all activity ultimately leads to liberation.)

Verse—(1) (The first fruit of *paryupasana* is) *shravan* (listening to the sermon or scriptures), (2) (fruit of *shravan*) *jnana* (acquisition of knowledge), (3) (fruit of *jnana*) *vijnana* (capacity to discern), (4) (fruit of *vijnana*) *pratyakhyan* (renunciation), (5) (fruit of *pratyakhyan*) *samyam* (ascetic-discipline), (6) (fruit of *samyam*) *anasrava* (blockage of inflow of *karmas*), (7) (fruit of *anasrava*) *tap* (austerities), (8) (fruit of *tap*) *vyavadaan* (shedding of *karmas*), (9) (fruit of *vyavadaan*) *akriya* (cessation of activity), and (10) (fruit of *akriya*) *Siddhi* (liberation).

राजगृह का गर्म जल स्रोत HOT WATER STREAMS OF RAJAGRIHA

२७. [प्र.] अण्णउत्थिया णं भंते ! एवमाइक्खंति भासेंति पण्णवेंति, परूवेंति–एवं खलु रायगिहस्स नगरस्स बहिया वेभारस्स पव्वयस्स अहे एत्थ णं महं हरए अप्पे (अघे) पण्णत्ते, अणेगाइं, जोयणाइं–आयाम–विक्खंभेणं नाणादुमसंड–मंडिउद्देसे सस्सिरीए जाव पडिरूवे। तत्थ णं बहवे ओराला बलाहया संसेयंति सम्मुच्छंति वासंति तव्वतिरित्ते य णं सया समियं उसिणे उसिणे आउकाए अभिनिस्सवइ। से कहमेयं भंते ! एवं ?

[उ.] गोयमा ! जं णं ते अण्णउत्थिया एयमाइक्खंति जाव जे ते एवं परूवेंति मिच्छं ते एवमाइक्खंति जाव सव्वं नेयव्वं। अहं पुण गोयमा ! एवमाइक्खामि भासेमि पन्नवेमि परूवेमि–एवं खलु रायगिहस्स नगरस्स बहिया वेभारस्स पव्वयस्स अदूरसामंते एत्थ णं महातवोवतीरप्पभवे नामं पासवणे पण्णत्ते; पंच

धणुसयाणि आयाम-विक्खंभेणं नाणादुमसंडमंडिउद्देसे सस्सिरीए पासादीए दरिसणिज्जे अभिरूवे पडिरूवे। तत्थ णं बहवे उसिणजोणिया जीवा य पोग्गला य उदगत्ताए वक्कमंति विउक्कमंति चयंति उववज्जंति तव्वतिरित्ते वि य णं सया समितं उसिणे उसिणे आउयाए अभिनिस्सवति-एस णं गोयमा ! महातवोवतीरप्पभवे पासवणे, एस णं गोयमा ! महातवोवतीरप्पभवस्स पासवणस्स अट्ठे पण्णत्ते।

सेवं भंते ! २ त्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदति नमंसति।

॥ बितीए सए : पंचमो उद्देसो समत्तो ॥

२७. [प्र.] भगवन् ! अन्यतीर्थिक इस प्रकार कहते है, भाषण करते है, बतलाते है और प्ररूपणा करते है कि 'राजगृह नगर के बाहर वैभारगिरि के नीचे एक महान् (बडा) पानी का ह्रद (कुण्ड) है। उसकी लम्बाई-चौडाई अनेक योजन है। उसका अगला भाग अनेक प्रकार के वृक्ष समूह से सुशोभित है, वह सुन्दर है, यावत् दर्शको की आँखो को सन्तुष्ट करने वाला है। उस ह्रद मे अनेक उदार मेघ संस्वेदित (उत्पन्न) होते, गिरते है, बरसते है। इसके अतिरिक्त (कुण्ड भर जाने के उपरान्त) उसमें से सदा परिमित (सीमित) गर्म-गर्म जल (अप्काय) झरता रहता है।' भगवन् ! (अन्यतीर्थिको का) इस प्रकार का कथन कैसा है ? क्या यह (कथन) सत्य है ?

[उ.] हे गौतम ! अन्यतीर्थिक जो इस प्रकार कहते हैं, भाषण करते है, बतलाते हैं और प्ररूपणा करते है कि राजगृह नगर के बाहर यावत् गर्म-गर्म जल झरता रहता है, यह सब (पूर्वोक्त वर्णन) वे मिथ्या कहते है, किन्तु हे गौतम ! मै इस प्रकार कहता हूँ और प्ररूपणा करता हूँ कि राजगृह नगर के बाहर वैभारगिरि के निकटवर्ती एक महातपोपतीर-प्रभव नामक झरना (प्रस्रवण) है। वह लम्बाई-चौडाई मे पाँच-सौ धनुष है। उसके आगे का भाग अनेक प्रकार के वृक्ष-समूह से सुशोभित है, सुन्दर है, प्रसन्नताजनक है, दर्शनीय है, रमणीय है और दर्शको के नेत्रो को सन्तुष्ट करने वाला है। उस झरने मे बहुत से उष्णयोनिक जीव और पुद्‌गल जल के रूप मे उत्पन्न होते है, नष्ट होते है, च्यवते (च्युत होते) है और उपचय (वृद्धि) को प्राप्त होते है। इसके अतिरिक्त उस झरने मे से सदा परिमित गर्म-गर्म जल (अप्काय) झरता रहता है। हे गौतम ! यह महातपोपतीर-प्रभव नामक झरना है, हे गौतम ! यही महातपोपतीरप्रभव नामक झरने का अर्थ (रहस्य) है।[1]

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है', यो कहकर भगवान गौतम स्वामी श्रमण भगवान महावीर को वन्दन-नमस्कार करते है।

॥ द्वितीय शतक : पंचम उद्देशक समाप्त ॥

---

१ वर्तमान मे भी यह गर्म पानी का कुण्ड राजगृह मे वैभरिगिरि के निकट प्रत्यक्ष देखा जा सकता है। वास्तव मे यह पर्वत मे से झर-झर कर झरने के रूप मे ही आकर इस कुण्ड मे गिरता है। कुण्ड स्वाभाविक नही है, यह तो सरकार द्वारा बना दिया गया है। बहुत से यात्री या पर्यटक आकर धर्मबुद्धि से इसमे नहाते हैं, कई चर्मरोगो को मिटाने के लिए इसमे स्नान करते है। इटली के आरमिआ के निकट भी एक ऐसा झरना है, जिसमे सर्दियो मे गर्म पानी होता है और गर्मियो मे बर्फ जैसा ठण्डा पानी रहता है। *(देखे-ससार के १,५०० अद्‌भुत आश्चर्य, भाग २, पृष्ठ १५१)-स*

(शेष अगले पृष्ठ पर)

27. [Q.] *Bhante* ! People of other faiths (*anyatirthik*) say, assert, elaborate and propagate that outside the city of Rajagriha at the foot of Vaibhar hill there is a large reservoir of water. Its length and width is many *Yojans*. Its front is covered with bunches of a variety of trees, it looks beautiful. and so on up to.. pleasing to the eyes of onlookers. Numerous large clouds are formed there, they glide down and cause rain there. When the reservoir is full there is a limited but steady flow of warm water from it. *Bhante* ! Is it so ? Is it true ?

[Ans.] Gautam ! What the *anyatirthiks* say, assert, elaborate and propagate that outside the city of Rajagriha. and so on up to .. there is a limited but steady flow of warm water from it, all that (the aforesaid statement) is wrong. However, here is what I say and propagate—that outside the city of Rajagriha near Vaibhar hill there is a spring (*prasravan*) named Mahatapopatir-prabhav It is 500 *Dhanush* (a linear measure equivalent to four cubits) long and wide Its front is covered with bunches of a variety of trees, it looks beautiful, delightful, attractive, charming and pleasing to the eyes of onlookers. Numerous living organisms, capable of being born in hot conditions (*ushna-yonik*), and matter particles are continuously created in the form of water in that spring They also continue to undergo the processes of destruction, transformation and assimilation Besides this there is a limited but steady flow of warm water from it Gautam ! This is Mahatapopatir-prabhav spring Gautam ! This is the information about Mahatapopatir-prabhav spring

"*Bhante* ! Indeed that is so. Indeed that is so " With these words .. and so on up to . ascetic Gautam resumed his activities.

● END OF THE FIFTH LESSON OF THE SECOND SHATAK ●

(पिछले पृष्ठ का शेष)

☐ उष्ण योनिक जीव गर्म वातावरण मे भी पनपते है। २५० अंश सेंटीग्रेट तक गर्म ताप मे भी जीवित रहते है। *(देखे-भगवई भाग १, पृष्ठ २८०, आचार्य महाप्रज्ञ लुइ टामस का उद्धरण)*

1 These warm water springs (hot springs) can still be seen in Rajagriha near Vaibhar hills There are springs in the mountain that stream down to a man-made pool. Many tourists and pilgrims come here to take a dip inspired by their religious sentiments as also for curing their skin ailments There are other such springs in the world including the famous springs of Aramia in Italy where natural warm water in winter and natural cold water in summers is available *(see—1,500 Wonders of the World, Part-2 p 159)*

☐ *Ushna-yonik* living beings thrive in hot conditions as well They remain alive in temperatures up to 250 degrees Centigrade *(Bhagavai by Acharya Mahaprajna, Part-1, p 280, quoted reference by Louis Thomas)*

द्वितीय शतक : छठा उद्देशक
SECOND SHATAK (Chapter Two) : SIXTH LESSON

भाषा BHASHA (SPEECH)

भाषा का स्वरूप FORM OF SPEECH

१. [प्र.] से णूणं भंते ! "मन्नामी" ति ओहारिणी भासा ?

[उ.] एवं भासापदं भाणियव्वं।

॥ बितीय सए : छट्ठो उद्देसो समत्तो ॥

१. [प्र.] भगवन् ! मै मनन करता हूँ, क्या यह अवधारिणी भाषा है ?

[उ.] गौतम ! उपर्युक्त प्रश्न के उत्तर मे प्रज्ञापनासूत्र के ग्यारहवे भाषापद का समग्र वर्णन जान लेना चाहिए।

1. [Q.] *Bhante* ! 'I contemplate.' Is that a meaningful speech (*avadharini bhasha*) (In other words, is that utterance the carrier of thoughts or language ?)

[Ans.] Gautam ! For the answer of this question the eleventh chapter, Bhashapad, of *Prajnapana Sutra* should be repeated here.

विवेचन : जिस भाषा के द्वारा अर्थ का अवबोध–ज्ञान होता है, वह अवधारिणी भाषा है। (वृत्ति) प्रज्ञापनासूत्र के ११वे भाषापद मे अनेक द्वारो से भाषा का वर्णन किया है। यथा–(१) भाषा के ४ भेद हैं–सत्या, मृषा, सत्या–मृषा (मिश्र) और असत्याऽमृषा (व्यवहारभाषा)। (२) **भाषा का आदि (मूल) कारण–जीव है।** (३) **भाषा की उत्पत्ति**–(औदारिक, वैक्रिय तथा आहारक) शरीर से होती है। (४) **भाषा का संस्थान–वज्र के** आकार का है। (५) **भाषा के पुद्गल**–लोक के अन्त तक जाते है। (६) **भाषारूप में ग्रहण किये जाने वाले पुद्गल**–अनन्तानन्तप्रदेशी स्कन्ध पुद्गल, असख्यात आकाशप्रदेशो को अवगाहित पुद्गल; एक समय, दो समय यावत् दस समय सख्यात और असख्यात समय की स्थिति वाले पुद्गल, पाँच वर्ण, दो गंध, पाँच रस और आठ स्पर्शो मे से चार स्पर्श (स्निग्ध, रूक्ष, ठण्डा, गर्म) वाले पुद्गल, तथा नियमतः छह दिशा के पुद्गल भाषा के रूप में गृहीत होते है। (७) **सान्तर–निरन्तर**–भाषावर्गणा के पुद्गल निरन्तर गृहीत होते है, किन्तु सान्तर त्यागे (छोडे) जाते हैं। सान्तर का अर्थ यह नहीं कि बीच मे रुक–रुककर त्यागे जाते है, अपितु सान्तर का वास्तविक अर्थ यह है कि प्रथम समय मे गृहीत भाषा–पुद्गल दूसरे समय मे, तथा दूसरे समय मे गृहीत तीसरे समय में त्यागे जाते है, इत्यादि। प्रथम समय मे सिर्फ ग्रहण होता है, और अन्तिम समय में सिर्फ त्याग होता है; बीच के समयों में निरन्तर दोनो क्रियाएँ होती रहती है। यही सान्तर–निरन्तर का तात्पर्य है। (८) **भाषा की स्थिति**–जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट असंख्येय समय की। (९) **भाषा का अन्तर (व्यवधान)**–जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त का, उत्कृष्ट अनन्तकाल का है। (१०) **भाषा के पुद्गलों का ग्रहण और त्याग**–ग्रहण काययोग से और त्याग वचनयोग से। **ग्रहणकाल**–जघन्य एक समय, उत्कृष्ट असख्येय समय, **त्यागकाल**–जघन्य दो समय, उत्कृष्ट असख्येय सामयिक

अन्तर्मुहूर्त। (११) किस योग से, किस निमित्त से, कौन-सी भाषा-ज्ञानावरणीय एव दर्शनावरणीय कर्म के क्षयोपशम से और मोहनीयकर्म के उदय से, वचनयोग से असत्या और सत्यामृषा-भाषा बोली जाती है, तथा ज्ञानावरणीय एव दर्शनावरणीय के क्षयोपशम से सत्य और असत्यामृषा-भाषा बोली जाती है, तथा ज्ञानावरणीय एव दर्शनावरणीय के क्षयोपशम से सत्या और असत्याऽऽमृषा (व्यवहार) भाषा वचनयोग से बोली जाती है। (१२) भाषक-अभाषक-अपर्याप्त-जीव, एकेन्द्रिय, सिद्ध भगवान और शैलेशीप्रतिपन्न जीव अभाषक होते है। शेष सब जीव भाषक होते है। (१३) अल्पबहुत्व-सबसे थोडे सत्य भाषा बोलने वाले, उनसे असख्यातगुने मिश्र भाषा बोलने वाले, उनसे असख्यातगुना असत्य भाषा बोलने वाले, उनसे असख्यातगुने व्यवहार भाषा बोलने वाले है तथा उनसे अनन्तगुने अभाषक जीव है। *(पण्णवणासुत्त मूलपाठ, पृष्ठ २१४-२१५)*

॥ द्वितीय शतक : छठा उद्देशक समाप्त ॥

Elaboration—The speech or sound that conveys some meaning is called *avadharini bhasha* (language)—*Vritti*. In the eleventh chapter, Bhashapad, of *Prajnapana Sutra* speech has been described with the help of many attributes *(dvar)*—(1) There are four kinds of *speech—satyaa* (speaking truth), *mrisha* (speaking a lie), *satyaa-mrisha* (speaking truth and lie mixed) and *asatyaa-amrisha bhasha* (speaking neither truth nor lie, customary speech). (2) The fundamental cause of speech is *jiva* (living being or soul) (3) Origin of speech is from body (*audarik* or gross physical body, *vaikriya* or transmuted body and *aharak* or telemigratory body) (4) The structure of speech resembles the shape of *Vajra* (the weapon of Indra, thunder-bolt). (5) The speech-particles (*bhasha pudgal*) go up to the edge of *Lok* (occupied space, universe) (6) *Pudgals* (matter particles) accepted as speech are—aggregates of infinite ultimate-particles (*anantanant pradeshi skandh pudgal*); matter particles occupying innumerable space-points (*asankhyat akash-pradesh avagahit pudgal*), matter particles having life of one *Samaya* (ultimate fractional unit of time), two *Samayas* and so on up to ten *Samayas*, countable *Samayas* and innumerable *Samayas*, matter particles having five colours, two odours, five tastes and four (smooth, rough, cold and hot) out of eight touches and, as a rule, matter particles from six directions (7) Continuous and with a break—The matter particles of the speech class (*bhasha vargana*) are received continuously (*nirantar*) and emitted with a gap (*saantar*) Here 'gap' does not mean silence, it means shift of sequence, in other words the particles received during the first *Samaya* (ultimate fractional unit of time) are emitted during the second *Samaya*, those received during the second *Samaya* are emitted during the third *Samaya* and so on During the first *Samaya* there is only

reception and during the last *Samaya* there is only emission, and in between, both activities continue. This is the meaning of *saantar* and *nirantar*. (8) Duration of speech—The minimum duration is one *Samaya* (ultimate fractional unit of time) and maximum is innumerable *Samayas* (9) Pause in speech—Minimum pause is for one *Antarmuhurt* and maximum is infinite time. (10) Reception and emitting—The reception of speech-particles is through association of body (*kayayoga*) and emitting is through speech association (*vachan-yoga*). (11) Association, instrumental cause and speech—*Asatyaa* and *satyaa-mrisha bhasha* is spoken due to destruction-cum-pacification of *jnanavaraniya karmas* (knowledge veiling *karmas*) and *darshanavaraniya karmas* (perception veiling *karmas*), fruition of *mohaniya karmas* (deluding *karmas*) and speech-association (*vachan yoga*) *Satyaa* and *asatyaa-mrisha bhasha* is spoken due to destruction-cum-pacification of *jnanavaraniya karmas* (knowledge veiling *karmas*) and *darshanavaraniya karmas* (perception veiling *karmas*). *Satyaa* and *asatyaa-amrisha bhasha* is spoken due to destruction-cum-pacification of *jnanavaraniya karmas* (knowledge veiling *karmas*) and *darshanavaraniya karmas* (perception veiling *karmas*), and speech-association (*vachan yoga*). (12) Speaker and non-speaker—Under developed living beings, one-sensed beings, *Siddhas* and humans in mountain-like state of stillness (*shaileshi pratipanna*) are non-speakers (*abhashak*) All the remaining beings are speakers (*bhashak*). (13) Comparative numbers (*alpa-bahutva*)—Those speaking truth (*satya*) are minimum in number Innumerable times more than these are those (living beings) speaking mixed speech (*mishra bhasha*). Innumerable times more than these are those speaking untruth (*asatya* or *mrisha*). And innumerable times more than these are those speaking customary speech *(Pannavanasuttam, original text, pp 214-215)*

● END OF THE SIXTH LESSON OF THE SECOND SHATAK ●

द्वितीय शतक : सप्तम उद्देशक
SECOND SHATAK (Chapter Two) : SEVENTH LESSON

देव DEV (DIVINE BEINGS OR GODS)

देवों के प्रकार KINDS OF GODS

१. [प्र.] कइ णं भंते ! देवा पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! चउव्विहा देवा पण्णत्ता, तं जहा—भवणवइ—वाणमंतर—जोइस—वेमाणिया।

१. [प्र.] भगवन् ! देव कितने प्रकार के होते है ?

[उ.] गौतम ! देव चार प्रकार के होते है। जैसे—भवनपति, वाणव्यन्तर, ज्योतिष्क और वैमानिक।

1. [Q.] *Bhante* ! Of how many kinds are *Devas* (divine beings or gods) ?

[Ans.] Gautam ! *Devas* are of four kinds—*Bhavan-pati* (abode-dwelling), *Vanavyantar* (interstitial), *Jyotishk* (stellar) and *Vaimanik* (celestial-vehicular)

२. [प्र.] कहि णं भंते ! भवणवासीणं देवाणं ठाणा पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवी जहा ठाणपदे देवाणं वत्तव्वया सा भाणियव्वा। उववादेणं लोयस्स असंखेज्जइभागे। एवं सव्वं भाणियव्वं जाव (पण्णवणासुत्त, सु १७७)

सिद्धगंडिया समत्ता "कप्पाण पतिट्ठाणं बाहल्लुच्चत्तमेव संठाणं। जीवाभिगमे जो वेमाणियुद्देसो भाणियव्वो सव्वो।

॥ बितीय सए : सत्तमो उद्देसो समत्तो ॥

२. [प्र.] भगवन् ! भवनवासी देवो के स्थान कहाँ पर है ?

[उ.] गौतम ! भवनवासी देवो के स्थान इस रत्नप्रभा पृथ्वी के नीचे है; इत्यादि देवो की सारी वक्तव्यता प्रज्ञापनासूत्र के दूसरे स्थान–पद मे कहे अनुसार कहनी चाहिए। किन्तु विशेषता इतनी है कि यहाँ भवनवासियो के भवन कहने चाहिए। उनका उपपात लोक के असख्यातवे भाग मे होता है। यह समग्र वर्णन सिद्धगण्डिका पर्यन्त पूरा कहना चाहिए। कल्पो का प्रतिष्ठान (आधार) उनकी मोटाई, ऊँचाई और सस्थान आदि का सारा वर्णन जीवाभिगमसूत्र प्रतिपत्ति ४ के वैमानिक उद्देशक पर्यन्त कहना चाहिए।

2. [Q.] *Bhante* ! Where are the areas inhabited by *Bhavan-vaasi Devs* (abode-dwelling gods) ?

[Ans.] Gautam ! The areas inhabited by *Bhavan-vaasi Devs* (abode-dwelling gods) are below this Ratnaprabha *prithvi* (hell); other details

about gods should be quoted from the second chapter, Sthan-pad, of *Prajnapana Sutra*. The difference being that here abodes of the *Bhavan-vaasi Devs* (abode-dwelling gods) should be mentioned; and also that their instantaneous birth (*upapat*) occurs only in innumerable fraction of *Lok* (occupied space; universe). All these details should be repeated in full up to *Siddhagandika*. The location (*pratishthan*) of divine realms (*kalps*), their depth, height and structure as well as other related information should be quoted from the Pratipatti-4 of *Jivabhigam Sutra* up to the lesson titled Vaimanik.

विवेचन : देवों के स्थान आदि–प्रज्ञापनासूत्र के दूसरे स्थानपद मे भवनवासियो का स्थान इस प्रकार बताया है–रत्नप्रभा पृथ्वी की मोटाई एक लाख अस्सी हजार योजन है। उसमे से एक हजार योजन ऊपर और एक हजार योजन नीचे छोडकर बीच में १ लाख ७८ हजार योजन में भवनपति देवो के भवन हैं। **उपपात**–भवनपतियो का उपपात लोक के असख्यातवे भाग मे होता है। मारणान्तिक समुद्घात की अपेक्षा और स्थान की अपेक्षा वे लोक के असख्येय भाग में ही रहते है, क्योंकि उनके ७ करोड ७२ लाख भवन लोक के असख्येय भाग मे ही है। इसी तरह असुरकुमार आदि के विषय मे तथा वाणव्यन्तर, ज्योतिष्क और वैमानिक, सभी देवो के स्थानो का कथन करना चाहिए, यावत् सिद्ध भगवान के स्थानों का वर्णन करने वाले 'सिद्धगण्डिका' नामक प्रकरण तक कहना चाहिए। *(प्रज्ञापनासूत्र, द्वितीय स्थानपद, पृष्ठ १४-१३०)*

वैमानिक–प्रतिष्ठान आदि–जीवाभिगमसूत्र के वैमानिक उद्देशक मे कथित वर्णन सक्षेप मे इस प्रकार है–(१) **प्रतिष्ठान**–सौधर्म और ईशान कल्प मे विमान की पृथ्वी घनोदधि के आधार पर टिकी हुई है। इससे आगे के तीन घनोदधि और वात पर प्रतिष्ठित है। उससे आगे के सभी ऊपर के विमान आकाश के आधार पर प्रतिष्ठित है। (२) **बाहल्य** (मोटाई) और **उच्चत्व**–सौधर्म और ईशान कल्प मे विमानो की मोटाई २,७०० योजन और ऊँचाई ५०० योजन है। सनत्कुमार और माहेन्द्र कल्प मे मोटाई २,६०० योजन और ऊँचाई ६०० योजन है। ब्रह्मलोक और लान्तक मे मोटाई २,५०० योजन, ऊँचाई ७०० योजन है। महाशुक्र और सहस्रार कल्प मे मोटाई २,४०० योजन, ऊँचाई ८०० योजन है। आनत, प्राणत, आरण और अच्युत देवलोको मे मोटाई २,३०० योजन, ऊँचाई ९०० योजन है। नवग्रैवेयक के विमानो की मोटाई २,२०० योजन और ऊँचाई १,००० योजन है। पच अनुत्तर विमानो की मोटाई २,१०० योजन और ऊँचाई १,१०० योजन है। (३) **संस्थान**–दो प्रकार के (१) आवलिकाप्रविष्ट, और (२) आवलिकाबाह्य। वैमानिक देव आवलिकाप्रविष्ट (पक्तिबद्ध) तीनो सस्थानो वाले है–वृत्त (गोल), त्र्यस (त्रिकोण) और चतुरस्र (चतुष्कोण); आवलिकाबाह्य नाना प्रकार के सस्थानो वाले है। इसी तरह विमानो के प्रमाण, रग, कान्ति, गन्ध आदि का सब वर्णन जीवाभिगमसूत्र से जान लेना चाहिए। *(जीवाभिगमसूत्र, प्रतिपत्ति ४, विमान–उद्देशक २, सू २०९-२१२)*

॥ द्वितीय शतक : सप्तम उद्देशक समाप्त ॥

Elaboration—Areas inhabited by gods—In the second chapter, Sthan-pad, of *Prajnapana Sutra* the areas inhabited by *Bhavan-vaasi Devs* (abode-dwelling gods) is described as follows—The depth of Ratnaprabha *prithvi* is one hundred eighty thousand *Yojans*. Leaving one thousand

Yojans from top as well as bottom there are abodes of *Bhavan-vaasi Devs* in the remaining 1,78,000 *Yojans. Upapat* (instantaneous birth)—The instantaneous birth (*upapat*) of *Bhavan-vaasi Devs* occurs only in innumerable fraction of *Lok* In context of *Maranantik Samudghat* (bursting forth of some soul-space-points just before death) and area of habitation they live only in innumerable fraction of *Lok*, this is because their seventy seven million two hundred thousand abodes are confined only to innumerable fraction of *Lok*. In the same way details about *Asur Kumars*, *Vanavyantar* (interstitial), *Jyotishk* (stellar) and *Vaimanik* (celestial-vehicular) should be repeated up to the *Siddhagandika* section that describes the areas where *Siddhas* (liberated souls) dwell *(Prajnapana Sutra, second chapter, Sthan-pad, pp 94-130)*

Vaimanik locations (*pratishthan*) and other information given in the *Vaimanik* lesson of *Jivabhigam Sutra* is briefly as follows—(1) *Pratishthan* (base or location)—In Saudharma and Ishan *kalps* (divine realms) the base of the celestial vehicles (*vimaans*) rests on *Ghanodadhi* (dense water) Three higher kalps rest on *Ghanodadhi* and *Ghanavaat* (dense water and dense air) All *kalps* beyond that rest on space (2) *Bahalya* (thickness or depth) and *uchchatva* (height)—In Saudharma and Ishan *kalps* the thickness of *vimaans* is 2,700 *Yojans* and the height is 500 *Yojans* In Sanatkumar and Maahendra *kalps* the thickness is 2,600 *Yojans* and the height is 600 *Yojans*. In Brahmalok and Lantak *kalps* the thickness is 2,500 *Yojans* and the height is 700 *Yojans* In Mahashukra and Sahasrar *kalps* the thickness is 2,400 *Yojans* and the height is 800 *Yojans* In Anat, Pranat, Aran and Achyut *kalps* the thickness is 2,300 *Yojans* and the height is 900 *Yojans*. In the nine Graiveyak *vimaans* the thickness is 2,200 *Yojans* and the height is 1,000 *Yojans* In the five Anuttar Vimaans the thickness is 2,100 *Yojans* and the height is 1,100 *Yojans* (3) Structure (*samsthan*)—are of two kinds—(a) *avalika pravisht* (in a row), and (b) *avalika bahya* (random) The *Vaimanik* abodes in a row (*avalika pravisht*) are round, triangular and quadrangular in shape. Those spread at random (*avalika bahya*) are in various shapes In the same way the dimensions, colours, hues, odours and other properties of *vimaans* should be read from *Jivabhigam Sutra*. *(Jivabhigam, Pratipatti-4, Uddeshak-2 Vimaan, aphorisms 209-212)*

● END OF THE SEVENTH LESSON OF THE SECOND SHATAK ●

द्वितीय शतक : अष्टम उद्देशक
SECOND SHATAK (Chapter Two) : EIGHTH LESSON

सभा SABHA (ASSEMBLY)

चमरेन्द्र की सुधर्मा सभा **SUDHARMA SABHA OF CHAMARENDRA**

१. [प्र.] कहि णं णं भंते ! चमरस्स असुररण्णो सभा सुहम्मा पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स दाहिणेणं तिरियमसंखेज्जे दीव-समुद्दे वीईवइत्ता अरुणवरस्स दीवस्स बाहिरिल्लातो वेइयंतातो अरुणोदयं समुद्दं बायालीसं जोयणसहस्साइं ओगाहित्ता एत्थ णं चमरस्स असुररण्णो तिगिंछिकूडे नामं उप्पायपव्वते पण्णत्ते, सत्तरसएक्कवीसे जोयणसते उड्ढं उच्चत्तेणं, चत्तारितीसे जोयणसते कोसं च उव्वेहेणं; गोत्थुभस्स आवासपव्वयस्स पमाणेणं नेयव्वं, नवरं उवरिल्लं पमाणे मज्झे भाणियव्वं [मूले दसबावीसे जोयणसते विक्खंभेणं, मज्झे चत्तारि चउवीसे जोयणसते विक्खंभेणं, उवरिं सत्ततेवीसे जोयणसते विक्खंभेणं; मूले तिण्णि जोयणसहस्साइं दोण्णि य बत्तीसुत्तरे जोयणसए किंचिविसेसूणे परिक्खेवेणं, मज्झे एगं जोयणसहस्सं तिण्णि य इगयाले जोयणसए किंचिविसेसूणे परिक्खेवेणं उवरिं दोण्णि य जोयणसहस्साइं दोण्णि य छलसीए जोयणसए किंचिविसेसाहिए परिक्खेवेणं]; जाव मूले वित्थडे, मज्झे संखित्ते, उप्पिं विसाले। मज्झे वरवइरविग्गहिए महामउंद संठाणसंठिए सव्वरयणामए अच्छे जाव पडिरूवे।

से णं एगाए पउमवरवेइयाए एगेणं वणसंडेण य सव्वतो समंता संपरिक्खित्ते। पउमवरवेइयाए वणसंडस्स य वण्णओ।

तस्स णं तिगिंछिकूडस्स उप्पायपव्वयस्स उप्पिं बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते। वण्णओ। तस्स णं बहुसमरमणिज्जस्स भूमिभागस्स बहुमज्झदेसभागे। एत्थ णं महं एगे पासायवडिंसए पण्णत्ते। अड्ढाइज्जाइं जोयणसयाइं उड्ढं उच्चत्तेणं, पणवीसं जोयणसयं विक्खंभेणं। पासायवण्णओ। उल्लोयभूमिवण्णओ। अट्ठ जोयणाइं मणिपेढिया। चमरस्स सीहासणं सपरिवारं भाणियव्वं।

तस्स णं तिगिंछिकूडस्स दाहिणेणं छक्कोडिसए पणपन्नं च कोडीओ पणतीसं च सतसहस्साइं पण्णासं च सहस्साइं अरुणोदए समुद्दे तिरियं वीइवइत्ता, अहे य रयणप्पभाए पुढवीए चत्तालीसं जोयणसहस्साइं ओगाहित्ता एत्थ णं चमरस्स असुरिंदस्स असुररण्णो चमरचंचा नामं रायहाणी पण्णत्ता। एगं जोयणसतसहस्सं आयाम-विक्खंभेणं जंबुद्दीवपमाणा। पागारो दिवड्ढं जोयणसयं उड्ढं उच्चत्तेणं, मूले पन्नासं जोयणाइं विक्खंभेणं, उवरिं अद्धतेरसजोयणा कविसीसगा अद्धजोयणआयामं कोसं विक्खंभेणं देसूणं अद्धजोयणं उड्ढं उच्चत्तेणं एगमेगाए बाहाए पंच पंच दारसया, अड्ढाइज्जाइं जोयणसयाइं-[२५०] उड्ढं उच्चत्तेणं, अद्धं-[१२५] विक्खंभेणं ओवारियलेणं सोलस जोयणसहस्साइं आयामविक्खंभेणं,

पन्नासं जोयणसहस्साइं पंच य सत्ताणउए जोयणसए किंचिविसेसूणं परिक्खेवेणं, सव्वप्पमाणं वेमाणियप्पमाणस्स अद्धं नेयव्वं। सभा सुहम्मा उत्तरपुरत्थिमेणं, जिणघरं, ततो उववायसभा हरओ अभिसेय. अलंकारो जहा विजयस्स।

उववाओ संकप्पो अभिसेय विभूसणा य ववसाओ।
अच्चणियं सुहगमो वि य चमर परिवार इड्ढत्तं॥१॥

॥ बितीए सए : अट्ठमो उद्देसो समत्तो ॥

१. [प्र.] भगवन् ! असुरकुमारो के इन्द्र और उनके राजा चमर की सुधर्मा-सभा कहाँ पर है?

[उ.] गौतम ! जम्बूद्वीप नामक द्वीप के मध्य मे स्थित मन्दर (मेरु) पर्वत से दक्षिण दिशा मे तिरछे असख्य द्वीपो और समुद्रो को लाँघने के बाद अरुणवर द्वीप आता है। उस द्वीप की वेदिका के बाहरी किनारे से आगे बढने पर अरुणोदय नामक समुद्र आता है। इस अरुणोदय समुद्र मे बयालीस लाख योजन जाने के बाद उस स्थान मे असुरकुमारो के इन्द्र, असुरकुमारो के राजा चमर का तिगिच्छकूट नामक उत्पात पर्वत है। उसकी ऊँचाई १,७२१ योजन है। उसका उद्वेध-(जमीन मे गहराई) ४३० योजन और एक कोस है। इस पर्वत का नाप गोस्तुभ नामक आवासपर्वत के नाप की तरह है। विशेष बात यह है कि गोस्तुभ पर्वत के ऊपर के भाग का जो नाप है, वह नाप यहाँ बीच के भाग का है। (अर्थात्-तिगिंच्छकूट पर्वत का विष्कम्भ (चौड़ाई) मूल मे १,०२२ योजन है, मध्य मे ४२४ योजन है और ऊपर का विष्कम्भ ७२३ योजन है। उसका बीच का परिक्षेप (घेरा) मूल मे ३,२३२ योजन से कुछ विशेषोन है, मध्य में १,३४१ योजन तथा कुछ विशेषोन है और ऊपर का परिक्षेप २,२८६ योजन तथा कुछ विशेषाधिक है।) वह मूल में विस्तृत है, मध्य मे सकीर्ण (सँकडा) है और ऊपर फिर विस्तृत है। उसके बीच का भाग उत्तम वज्र जैसा है, बडे मुकुन्द के सस्थान का-सा आकार है। पर्वत पूरा रत्नमय है, सुन्दर यावत् प्रतिरूप है। वह पर्वत एक पद्मवरवेदिका से और एक वनखण्ड से चारो ओर से घिरा हुआ है। (यहाँ वेदिका और वनखण्ड का वर्णन करना चाहिए।)

उस तिगिच्छकूट नामक उत्पात पर्वत का ऊपरी भू-भाग बहुत ही सम (प्राय. सम) एव रमणीय है। उस प्राय सम एव रमणीय ऊपरी भूमिभाग के ठीक बीचोबीच एक महान् प्रासादावतंसक (श्रेष्ठ महल) है। उसकी ऊँचाई २५० योजन है और उसका विष्कम्भ (चौडाई) १२५ योजन है। (यहाँ उस प्रासाद का वर्णन करना चाहिए, तथा प्रासाद के सबसे ऊपर की भूमि [अट्टालिका] का वर्णन करना चाहिए।) आठ योजन की मणिपीठिका है। (यहाँ चमरेन्द्र के सिंहासन का सपरिवार वर्णन करना चाहिए।)

उस तिगिच्छकूट के दक्षिण की ओर अरुणोदय समुद्र मे छह सौ पचपन करोड, पैंतीस लाख, पचास हजार योजन तिरछा जाने के बाद नीचे रत्नप्रभापृथ्वी का ४० हजार योजन भाग अवगाहन करने के पश्चात् यहाँ असुरकुमारो के इन्द्र-राजा चमर की चमरचचा नाम की राजधानी है। उस राजधानी का आयाम और विष्कम्भ (लम्बाई-चौडाई) एक लाख योजन है। वह राजधानी जम्बू द्वीप जितनी है। उसका प्राकार (कोट) १५० योजन ऊँचा है। उसके मूल का विष्कम्भ ५० योजन है। उसके ऊपरी भाग

का विष्कम्भ साढे, तेरह योजन है। उसके कंगूरों की लम्बाई आधा योजन और विष्कम्भ एक कोस है। कपिशीर्षकों की ऊँचाई आधे योजन से कुछ कम है। उसकी एक-एक भुजा मे पाँच-पाँच सौ दरवाजे हैं। उसकी ऊँचाई २५० योजन है। ऊपरी तल की लम्बाई-चौड़ाई सोलह हजार योजन है। उसका घेरा ५०,५९७ योजन से कुछ विशेषोन है। यहाँ समग्र प्रमाण वैमानिक के प्रमाण से आधा समझना चाहिए। उत्तर-पूर्व मे सुधर्मासभा, जिनगृह, उसके पश्चात् उपपातसभा, ह्रद, अभिषेकसभा और अलंकारसभा; यह सारा वर्णन विजय की तरह कहना चाहिए। (यह सब भी सौधर्म-वैमानिको से आधे-आधे प्रमाण वाले है।)

(गाथार्थ-) उपपात (तत्काल उत्पन्न देव का), संकल्प, अभिषेक, विभूषण, व्यवसाय, अर्चनिका और सिद्धायतन-सम्बन्धी कथन, तथा चमरेन्द्र का परिवार और उसकी ऋद्धिसम्पन्नता; (आदि का वर्णन यहाँ समझ लेना चाहिए।)

1. [Q.] *Bhante* ! Where is the Sudharma Sabha (Sudharma assembly) of Chamarendra, the Indra (king or overlord) of Asur Kumar gods ?

[Ans.] Gautam ! In the south of the Mandar (Meru) mountain, located at the center of the continent called Jambu Dveep, on obliquely crossing innumerable islands and seas there is the island called Arunavar Dveep. Beyond outer *vedika* (plateau) of this island is Arunodaya sea. Crossing 4.2 million *Yojans* in that Arunodaya, sea comes Tingichchha koot, the Utpat Parvat of Chamar Asurendra, the king of Asur Kumar gods. Its height is 1,721 *Yojans*. Its depth inside the ground (*udvedh*) is 430 *Yojans* and 1 *Kosa* Its dimensions are same as those of Gostubha mountain. The difference being that its middle measures same as the top of Gostubha mountain (The Tingichchha koot mountain is 1,022 *Yojans* wide at its base, 424 *Yojans* in the middle and 723 *Yojans* at the top. Its circumference or *parikshep* is a little less than 3,232 *Yojan* at its base, a little less than 1,341 *Yojans* in the middle and a little more than 2,286 *Yojans* at the top.) It is wide at the base, narrow in the middle and wide at the top Its middle is like a good quality diamond and its shape is like a huge *Mukund* (a drum-like musical instrument). The whole mountain is gem-strewn, beautiful. . and so on up to... picturesque. This mountain is surrounded by a *Padmavar vedika* (a lotus like plateau) and a forest strip (*vanakhand*) (*vedika* and *vanakhand* should be described here)

The top of the said Tingichchha mountain is perfectly level and beautiful. At the exact center of that perfectly level and beautiful plateau at the top there is a great grand palace (*prasadavatamsak* or the crown of palaces) Its height is 250 *Yojans* and width 125 *Yojans* (here

that palace should be described along with its spire). It has a gem studded platform of eight *Yojans* (here the throne and the family of Chamarendra should be described).

To the south of that Tingichchha *koot*, as one covers 65,53,55,000 *Yojans* obliquely in the Arunodaya sea and going down 40,000 *Yojans* from the surface within Ratnaprabha *prithvi*, there is Chamarchancha, the capital city of Chamarendra, the king of Asur Kumar gods. The length and breadth of that capital city is one hundred thousand *Yojans*. It is as big as Jambu dveep Its fortress is 150 *Yojans* in height Its spread is 50 *Yojans* at the base and 13.5 *Yojans* at the top. The height of its cornices is half a *Yojan* and their length and breadth is one *Kosa*. The height of its *kapishirshaks* (an indentation or hole in the wall of a fortification resembling head of a monkey) is a little less than half a *Yojan*. Each of its sides has five hundred gates having a height of 250 *Yojans* The length and breadth of the roof-top is sixteen thousand *Yojans* Its circumference is a little less than 50,597 *Yojans*. All the measures stated here are half those of *Vaimanik* (capital city) In the north-eastern side are *Sudharma Sabha* and *Jinagriha* (temple of *Jina*) followed by *Upapat Sabha* (hall of birth), lake, *Abhishek Sabha* (hall of anointing) and *Alankar Sabha* (hall of embellishment), all this description is similar to that of Vijaya

Verse—Instantaneous birth (*upapat*), desire (*sankalp*), anointing (*abhishek*), embellishment (*vibhushan*), recitation (*vyavasaya*), prayer (*archanika*), temple of *Siddhas* (*siddhayatan*) and Chamar's family and his opulence (All these should be described here.)

विवेचन : शब्दों के विशेषार्थ–तिरछालोक मे जाने के लिए इस पर्वत पर आकर चमर उत्पतन करता–उडता है, इससे इसका नाम **उत्पात पर्वत** पडा है। **मुकुन्द** = वज्र के आकार का मुकुन्द एक प्रकार का वाद्य विशेष है। **प्रासादावतंसक**–वह प्रासादो मे सर्वोपरि सर्वश्रेष्ठ प्रासाद बादलो की तरह ऊँचा और अपनी चमक–दमक के कारण हँसता हुआ–सा प्रतीत होता है। उस पर हाथी, घोडे, बैल आदि के चित्र है। **चमरेन्द्र का सिंहासन**–यह प्रासाद के बीच मे है। इस सिहासन के पश्चिमोत्तर में, उत्तर मे तथा उत्तर–पूर्व मे चमरेन्द्र के ६४ हजार सामानिक देवो के ६४ हजार भद्रासन है। पूर्व मे पाँच पटरानियो के ५ भद्रासन सपरिवार है। दक्षिण–पूर्व मे आभ्यन्तर परिषद् के २४ हजार देवो के २४ हजार, दक्षिण में मध्यम परिषद् के २८ हजार देवो के २८ हजार और दक्षिण–पश्चिम मे बाह्य परिषद् के ३२ हजार देवो के ३२ हजार भद्रासन हैं। पश्चिम मे ७ सेनाधिपतियो के सात और चारो दिशाओ मे आत्मरक्षक देवो के ६४–६४ हजार भद्रासन है।

चमरेन्द्रसभा वर्णन–(१) **उपपातसभा** मे तत्काल उत्पन्न हुए इन्द्र को यह सकल्प उत्पन्न होता है कि मुझे पहले क्या और पीछे क्या कार्य करना है? मेरा जीताचार क्या है?, (२) **अभिषेकसभा** फिर सामानिक देवो द्वारा बडी

ऋद्धि से अभिषेकसभा में अभिषेक होता है। (३) अलंकारसभा में उसे वस्त्राभूषणों से अलंकृत किया जाता है। (४) व्यवसायसभा में पुस्तक का वाचन किया जाता है। (५) सिद्धायतन मे सिद्ध भगवान के गुणों का स्मरण तथा भाववन्दन-पूजन किया जाता है। फिर सामानिक देव आदि परिवार सहित सुधर्मासभा (चमरेन्द्र की) में आते हैं। *(जीवाभिगम ५२१-६३२)*

॥ द्वितीय शतक : अष्टम उद्देशक समाप्त ॥

Elaboration—***Utpat Parvat***—in order to travel to the transverse world (*Tiryak Lok*) Chamarendra uses the top of this mountain for his take-off (*utpatan*), hence the name ***Mukund***—a musical instrument of the shape of thunder-bolt (*Vajra*). ***Prasadavatamsak***—This best among palaces is lofty and reaches sky. It appears charming due to its grandeur and radiance It has frescoes of elephants, horses, bulls and other motifs. **The throne of *Chamarendra***—It is at the center of the palace. To the north-west, north and north-east of this throne are placed 64,000 thrones of the 64,000 *Samanik* gods (of equal status) of Chamarendra. In the east are the five thrones of the five chief queens and seats of their families (retinue). To the south-east are the thrones of 24 thousand gods of the inner assembly, to the south those of 28 thousand gods of the central assembly and to the south-west those of the 32 thousand gods of the outer assembly To the west are the seven thrones of the seven commanders. In each of the four directions there are 64 thousand thrones of the guard-gods (*Atmarakshak Devs*).

Passage through assemblies—(1) *Upapat-sabha* (hall of birth)—Where the gods take instantaneous birth The moment one is born he has the awareness of what he has to do and in what order, and what is his divine conduct. (2) *Abhishek-sabha* (hall of anointing)—Gods of equal status anoint him in this hall with great fan-fare. (3) *Alankar-sabha* (hall of embellishment)—He is embellished with grand dresses and ornaments (4) *Vyavasaya-sabha* (hall of recitation)—Here scriptures are recited (5) *Siddhayatan* (temple of *Siddhas*)—Here virtues of *Siddhas* are chanted and their worship is done. (6) *Sudharma-sabha* (the main assembly hall)—Finally he comes to this assembly with his divine family (retinue). *(Jivabhigam, 521-632)*

● END OF THE EIGHTH LESSON OF THE SECOND SHATAK ●

द्वितीय शतक : नवम उद्देशक
SECOND SHATAK (Chapter Two) : NINTH LESSON

द्वीप (समयक्षेत्र) DVEEP OR SAMAYAKSHETRA (CONTINENTS OR THE SPHERE OF TIME)

समयक्षेत्र–सम्बन्धी प्ररूपणा **SAMAYAKSHETRA (THE SPHERE OF TIME)**

१. [प्र.] किमिदं भंते ! 'समयखेत्ते' त्ति पवुच्चति ?

[उ.] गोयमा ! अड्ढाइज्जा दीवा दो य समुद्दा–एस णं एवतिए 'समयखेत्ते' त्ति पवुच्चति। 'तत्थ णं अयं जंबुद्दीवे सव्वदीव–समुद्दाणं सव्वब्भंतरए' (जीवाजीवाभि सू १२४, पत्र १७७) **एवं जीवाभिगमवत्तव्वया नेयव्वा जाव अब्भिंतरं पुक्खरद्धं जोइसविहूणं।**

॥ बितीए सए : नवमो उद्देसो समत्तो ॥

१. [प्र.] भगवन् ! समय क्षेत्र किसे कहा जाता है ?

[उ.] गौतम ! अढाई द्वीप और दो समुद्र इतना यह प्रदेश 'समयक्षेत्र' है। इनमे जम्बूद्वीप नामक द्वीप समस्त द्वीपो और समुद्रो के बीचोबीच है। इस प्रकार जीवाभिगमसूत्र मे कहा हुआ सारा वर्णन यहाँ यावत् आभ्यन्तर पुष्करार्द्ध तक कहना चाहिए, किन्तु ज्योतिष्को का वर्णन छोड देना चाहिए।

1. [Q.] *Bhante* ! What is called *Samayakshetra* or Sphere of Time ?

[Ans.] Gautam ! The area covering Adhai Dveep (two and a half continents) and two oceans is called *Samayakshetra* or Sphere of Time Of these, the continent called Jambu Dveep is at the center of all continents and oceans In the same way all description from *Jivabhigam Sutra* should be quoted here up to inner Pushkarardh but excluding the description of Jyotishks

विवेचन : समयक्षेत्र का स्वरूप–समय अर्थात् काल, सूर्य की गति से पहचाना जाने वाला दिवस–मासादि रूप काल समयक्षेत्र–मनुष्यक्षेत्र मे ही है, इससे आगे नही है, क्योकि इससे आगे के सूर्य चर (गतिमान) नही है, अचर है। जीवाभिगमसूत्र मे मनुष्यक्षेत्र सम्बन्धी एक गाथा है–

अरिहंत–समय–बायर–विज्जू–थणिया बलाहगा अगणी।
आगर–णिहि–णई–उवराग–णिग्गमे वुड्ढिवयणं च॥

अर्थात्–मानुषोत्तर पर्वत तक मनुष्यक्षेत्र कहलाता है। जहाँ तक अरिहत, चक्रवर्ती, बलदेव, वासुदेव, प्रतिवासुदेव, साधु–साध्वी, श्रावक–श्राविका और मनुष्य है, वहाँ तक मनुष्यलोक कहलाता है। जहाँ तक समय, आवलिका आदि काल है, स्थूल अग्नि है, आकर, निधि, नदी, उपराग (चन्द्र–सूर्यग्रहण) है, चन्द्र, सूर्य, तारो

का उत्तरायण और दक्षिणायन है तथा रात्रि-दिन का बढना-घटना इत्यादि है, वहाँ तक समयक्षेत्र-मनुष्यक्षेत्र है। *(जीवाभिगमसूत्र, क आ ७९२-८०३)*

॥ द्वितीय शतक : नवम उद्देशक समाप्त ॥

Elaboration—*Samayakshetra*—*Samaya* means time. The time recognized through the movement of the sun, in the units of day, month etc. is confined to the *Manushyakshetra* (area inhabited by humans) and not beyond that. This is because the suns beyond that lack movement (*char*), they are stationary (*achar*) *Jivabhigam Sutra* has a verse briefly describing *Manushyakshetra*—

The area up to Manushottar mountain is called *Manushyakshetra*. The area within which *Arihant, Chakravarti, Baladev, Vasudev, Prativasudev, sadhu-sadhvi* (male and female ascetics) and *shravak-shravika* (layman and woman) exist is called *Manushyakshetra* The area within which *Samaya* (ultimate fractional unit of time), *Avalika* and other units of time (*kaal*); gross fire (*sthula agni*), mines (*aakar*), treasures (*nidhi*), rivers, solar and lunar eclipses (*uparaag*), the moon, the sun, stars, summer and winter solstice (*uttarayan* and *dakshinayan*), lengthening and shortening of day and night and other such phenomena prevail is called *Samayakshetra* or *Manushyakshetra*. *(Jivabhigam Sutra, K A 792-803)*

● **END OF THE NINTH LESSON OF THE SECOND SHATAK** ●

द्वितीय शतक : दशम उद्देशक
SECOND SHATAK (Chapter Two) : TENTH LESSON

अस्तिकाय ASTIKAYA (CONGLAMORATIVE ENTITY)

पंच अस्तिकाय FIVE ASTIKAYAS

१. [प्र.] कति णं भंते ! अत्थिकाया पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! पंच अत्थिकाया पण्णत्ता, तं जहा—धम्मत्थिकाए अधम्मत्थिकाए आगासत्थिकाए जीवत्थिकाए पोग्गलत्थिकाए।

१. [प्र.] भगवन् ! अस्तिकाय कितने है ?

[उ.] गौतम ! अस्तिकाय (प्रदेशो का समूह अथवा तीनो काल मे विद्यमान द्रव्य) पाँच हैं। जैसे—(१) धर्मास्तिकाय, (२) अधर्मास्तिकाय, (३) आकाशास्तिकाय, (४) जीवास्तिकाय, और (५) पुद्गलास्तिकाय।

1. [Q.] *Bhante* ! How many *Astikayas* are there ?

[Ans.] Gautam ! There are five *Astikayas* (conglamorative entities or ontological categories)—(1) *Dharmastikaya* (motion entity), (2) *Adharmastikaya* (inertia entity), (3) *Akashastikaya* (space entity), (4) *Jivastikaya* (soul entity), and (5) *Pudgalastikaya* (matter entity)

२. [प्र.] धम्मत्थिकाए णं भंते ! कतिवण्णे कतिगंधे कतिफासे ?

[उ.] गोयमा ! अवण्णे अगंधे अरसे अफासे अरूवी अजीवे सासये अवट्ठिए लोगदव्वे। से समासओ पंचविहे पण्णत्ते, तं जहा—दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ गुणओ। दव्वओ णं धम्मत्थिकाए एगे दव्वे। खेत्तओ णं लोगप्पमाणमेत्ते। कालतो न कदाइ न आसि, न कयाइ नत्थि, जाव निच्चे। भावओ अवण्णे अगंधे अरसे अफासे। गुणओ गमणगुणे।

२. [प्र.] भगवन् ! धर्मास्तिकाय मे कितने वर्ण, कितने गन्ध, कितने रस और कितने स्पर्श है ?

[उ.] गौतम ! धर्मास्तिकाय वर्णरहित, गन्धरहित, रसरहित और स्पर्शरहित है, अर्थात्—धर्मास्तिकाय अरूपी है, शाश्वत है, अवस्थित है, लोक (प्रमाण) द्रव्य है। संक्षेप मे धर्मास्तिकाय पाँच प्रकार का है—द्रव्य से, क्षेत्र से, काल से, भाव से और गुण से। धर्मास्तिकाय द्रव्य की अपेक्षा एक द्रव्य है, क्षेत्र से लोकप्रमाण है, काल की अपेक्षा कभी नही था, ऐसा नही; कभी नहीं है, ऐसा नहीं; और कभी नही रहेगा, ऐसा भी नही; किन्तु वह था, है और रहेगा, यावत् वह नित्य है। भाव की अपेक्षा वर्णरहित, गन्धरहित, रसरहित और स्पर्शरहित है। गुण की अपेक्षा गतिगुण वाला (गतिपरिणत जीवों और पुद्गलो के गमन मे सहायक) है।

2. [Q.] *Bhante* ! How many colours, odours, tastes and touches *Dharmastikaya* (motion entity) has ?

[Ans.] Gautam ! *Dharmastikaya* (motion entity) is an entity (*dravya*) that is *varna rahit* (devoid of appearance or colour), *gandh rahit* (devoid of smell), *rasa rahit* (devoid of taste), *sparsh rahit* (devoid of touch), as also *arupi* (formless), *ajiva* (lifeless), *shashvat* (eternal), *avasthit* (indestructible) and integral part of *Lok* (occupied space or universe). Briefly speaking, it has five attributes in context of—*dravya* (entity), *kshetra* (space or area), *kaal* (time), *bhaava* (state) and *guna* (properties). In context of *Dravya* (entity) *Dharmastikaya* is one entity. In context of *Kshetra* (space or area) it pervades the whole *Lok*. In context of *Kaal* (time) it is not that it never existed, it is not that it does not exist, it is not that it will never exist; it existed in the past, it exists in the present and it will continue to exist in the future; therefore it is *dhruva* (constant), *niyat* (fixed), *shashvat* (eternal), *akshaya* (imperishable), *avyaya* (non-expendable), *avasthit* (steady), and *nitya* (perpetual) In context of *Bhaava* (state) it is devoid of colour, smell, taste and touch In context of *Guna* (properties) it has the property of motion (it moves and helps beings and matter move).

३. अधम्मत्थिकाए वि एवं चेव। गुणओ ठाणगुणे।

४. आगासत्थिकाए वि एवं चेव। नवरं खेत्तओ णं आगासत्थिकाए लोया लोयप्पमाणमेत्ते अणंते चेव जाव (सु. २) गुणओ अवगाहणागुणे।

३. जिस तरह धर्मास्तिकाय का कथन है, उसी तरह अधर्मास्तिकाय के विषय मे भी कहना चाहिए; किन्तु इतना अन्तर है कि अधर्मास्तिकाय गुण की अपेक्षा स्थिति गुण वाला (जीवों–पुद्‌गलों की स्थिति मे सहायक) है।

४. आकाशस्तिकाय के विषय में भी इसी प्रकार कहना चाहिए, किन्तु इतना अन्तर है कि क्षेत्र की अपेक्षा आकाशास्तिकाय लोकालोक–प्रमाण (अनन्त) है और गुण की अपेक्षा अवगाहना गुण वाला है।

3. The aforesaid statement about *Dharmastikaya* (motion entity) should be repeated for *Adharmastikaya* (inertia entity) too, the only difference being that in context of *Guna* (properties) it has the property of inertia (it rests and helps beings and matter to come to rest).

4. The aforesaid statement should also be repeated for *Akashastikaya* (space entity), the only difference being that in context of *kshetra* (space or area) it pervades the whole *Lok* (occupied space; universe) and *Alok*

(*i.e* it is infinite) and in context of *Guna* (properties) it has the property of *avagahana* (occupation) In other words it provides space-occupation.

५. [प्र.] जीवत्थिकाए णं भंते ! कतिवण्णे कतिगंधे कतिरसे कतिफासे ?

[उ.] गोयमा ! अवण्णे जाव (सु. २) अरूवी जीवे सासते अवट्ठिए लोगदव्वे। से समासओ पंचविहे पण्णत्ते; तं जहा–दव्वओ जाव गुणओ। दव्वओ णं जीवत्थिकाए अणंताइं जीवदव्वाइं। खेत्तओ लोगप्पमाणमेत्ते। कालओ न कयाइ न आसि जाव (सु. २) निच्चे। भावओ पुण अवण्णे अगंधे अरसे अफासे। गुणओ उवओगगुणे।

५. [प्र.] भगवन् ! जीवास्तिकाय मे कितने वर्ण, कितने गन्ध, कितने रस और कितने स्पर्श हैं ?

[उ.] गौतम ! जीवास्तिकाय वर्ण–गन्ध–रस–स्पर्शरहित है वह अरूपी है, जीव (आत्म) है, शाश्वत है, अवस्थित (और प्रदेशो की अपेक्षा) लोकद्रव्य (–लोकाकाश के बराबर) है। सक्षेप मे, द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव और गुण की अपेक्षा जीवास्तिकाय के पाँच प्रकार है। द्रव्य की अपेक्षा–अनन्त जीवद्रव्यरूप है। क्षेत्र की अपेक्षा–लोक–प्रमाण है। (सम्पूर्ण लोक मे व्याप्त है) काल की अपेक्षा–वह कभी नही था, ऐसा नही, यावत् वह नित्य है। भाव की अपेक्षा–जीवास्तिकाय मे वर्ण नही, गन्ध नही, रस नही और स्पर्श नही है। गुण की अपेक्षा उपयोग गुण वाला है।

5. [Q.] *Bhante* ! How many colours, odours, tastes and touches *Jivastikaya* (soul entity) has ?

[Ans.] Gautam ! *Jivastikaya* (soul entity) is an entity (*dravya*) that is *varna rahit* (devoid of appearance or colour), *gandh rahit* (devoid of smell), *rasa rahit* (devoid of taste), *sparsh rahit* (devoid of touch), as also *arupi* (formless), *jiva* (with life or soul), *shashvat* (eternal), *avasthit* (indestructible) and integral part of *Lok* (occupied space or universe). Briefly speaking, it has five attributes in context of—*dravya* (entity), *kshetra* (space or area), *kaal* (time), *bhaava* (state) and *guna* (properties) In context of *Dravya* (entity) *Jivastikaya* (soul entity) is infinite entities In context of *Kshetra* (space or area) it pervades the whole *Lok* (occupied space, universe) In context of *Kaal* (time) it is not that it never existed and so on up to.. it is *nitya* (perpetual). In context of *Bhaava* (state) it is devoid of colour, smell, taste and touch. In context of *Guna* (properties) it has the property of *upayog* (intent or sentience).

६. [प्र.] पोग्गलत्थिकाए णं भंते ! कतिवण्णे कतिगंधे कतिरसे कतिफासे ?

[उ.] गोयमा ! पंचवण्णे पंचरसे दुगंधे अट्ठफासे रूवी अजीवे सासए अवट्ठिए लोगदव्वे। से समासओ पंचविहे पण्णत्ते; तं जहा–दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ गुणओ। दव्वओ णं पोग्गलत्थिकाए अणंताइं

दव्वाइं। खेत्तओ लोगप्पमाणमेत्ते। कालओ न कयाइ न आसि जाव (सु. २) निच्चे। भावओ वण्णमंते गंध. रस. फासमंते। गुणओ गहणगुणे।

६. [प्र.] भगवन् ! पुद्गलास्तिकाय में कितने वर्ण, कितने गन्ध, कितने रस और कितने स्पर्श हैं ?

[उ.] गौतम ! पुद्गलास्तिकाय में पाँच वर्ण, पाँच रस, दो गन्ध और आठ स्पर्श है। वह रूपी है, अजीव है, शाश्वत और अवस्थित लोकद्रव्य है। संक्षेप मे उसके पाँच प्रकार है, यथा–द्रव्य से, क्षेत्र से, काल से, भाव से और गुण से। द्रव्य की अपेक्षा–अनन्त द्रव्यरूप है, क्षेत्र की अपेक्षा–लोक प्रमाण है, काल की अपेक्षा–वह कभी नही था ऐसा नही, यावत् नित्य है। भाव की अपेक्षा–वह वर्ण वाला, गन्ध वाला, रस वाला और स्पर्श वाला है। गुण की अपेक्षा–वह ग्रहण गुण वाला है।

6. [Q.] *Bhante* ! How many colours, odours, tastes and touches *Pudgalastikaya* (matter entity) has ?

[Ans.] Gautam ! *Pudgalastikaya* (matter entity) is an entity (*dravya*) that has five *varnas* (colours), five *rasas* (tastes), two *gandh* (two smells), eight *sparsh* (touches), as also it is *rupi* (with form), *ajiva* (lifeless), *shashvat* (eternal), *avasthit* (indestructible) and integral part of *Lok* (occupied space or universe). Briefly speaking, it has five attributes in context of *dravya* (entity), *kshetra* (space or area), *kaal* (time), *bhaava* (state) and *guna* (properties). In context of *Dravya* (entity) *Pudgalastikaya* (matter entity) is infinite entities In context of *Kshetra* (space or area) it pervades the whole *Lok* (occupied space; universe). In other words, it is confined to *Lok*. In context of *Kaal* (time) it is not that it never existed. and so on up to... it is *nitya* (perpetual). In context of *Bhaava* (state) it is endowed with colour, smell, taste and touch. In context of *Guna* (properties) it has the property of *grahan* (being acquirable) (In other words it is acquired by bodies including gross physical body and sense organs This also means it has the property of combining and separating or integrating and disintegrating)

धर्मास्तिकायादि के स्वरूप का निश्चय CONFIRMING THE FORM OF DHARMASTIKAYA

७. [प्र. १] एगे भंते ! धम्मत्थिकायपदेसे 'धम्मत्थिकाए' त्ति वत्तव्वं सिया ?

[उ.] गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे।

७. [प्र. १] भगवन् ! क्या धर्मास्तिकाय के एक प्रदेश को 'धर्मास्तिकाय' कहा जा सकता है ?

[उ.] गौतम ! धर्मास्तिकाय के एक प्रदेश को धर्मास्तिकाय नहीं कहा जा सकता।

7. [Q. 1] *Bhante* ! Can one section (*pradesh*) of *Dharmastikaya* (motion entity) be called *Dharmastikaya* ?

[**Ans.**] No, Gautam ! One section (*pradesh*) of *Dharmastikaya* (motion entity) cannot be called *Dharmastikaya*.

[प्र. २] एवं दोण्णि तिण्णि चत्तारि पंच छ सत्त अट्ठ नव दस संखेज्जा असंखेज्जा भंते ! धम्मत्थिकायप्पदेसा 'धम्मत्थिकाए' त्ति वत्तव्वं सिया ?

[उ.] गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे।

[प्र. २] भगवन् ! क्या धर्मास्तिकाय के दो प्रदेशों, तीन प्रदेशों, चार प्रदेशों, पाँच प्रदेशों, छह प्रदेशो, सात प्रदेशो, आठ प्रदेशो, नौ प्रदेशो, दस प्रदेशो, संख्यात प्रदेशों तथा असंख्येय प्रदेशों को 'धर्मास्तिकाय' कहा जा सकता है ?

[उ.] गौतम ! यह बात भी सम्भव नहीं है।

[**Q. 2**] *Bhante* ! Can two, three, four, five, six, seven, eight, nine, ten, countable and innumerable sections (*pradeshas*) of *Dharmastikaya* (motion entity) be called *Dharmastikaya* ?

[**Ans.**] No, Gautam ! That too is not possible.

[प्र. ३] एगपदेसूणे वि य णं भंते ! धम्मत्थिकाए 'धम्मत्थिकाए' त्ति वत्तव्वं सिया ?

[उ.] णो इणट्ठे समट्ठे।

[प्र. ३] भगवन् ! एक प्रदेश से कम धर्मास्तिकाय को क्या 'धर्मास्तिकाय' कहा जा सकता है ?

[उ.] गौतम ! एक प्रदेश कम धर्मास्तिकाय को भी धर्मास्तिकाय नही कहा जा सकता।

[**Q. 3**] *Bhante* ! Can less than one section (*pradesh*) of *Dharmastikaya* (motion entity) be called *Dharmastikaya* ?

[**Ans.**] No, Gautam ! Less than one section (*pradesh*) of *Dharmastikaya* (motion entity) can also not be called *Dharmastikaya*

[प्र. ४] से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ 'एगे धम्मत्थिकायपदेसे नो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया जाव (सु. ७) एगपदेसूणे वि य णं धम्मत्थिकाए नो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया ?'

[उ.] से नूणं गोयमा ! खंडे चक्के ? सगले चक्के ?

भगवं ! नो खंडे चक्के ? सगले चक्के ?

एवं छत्ते चम्मे दंडे दूसे आउहे मोयए। से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ–'एगे धम्मत्थिकायपदेसे नो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया जाव एगपदेसूणे वि य णं धम्मत्थिकाए नो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया।'

[प्र. ४] भगवन् ! किस कारण से ऐसा कहा जाता है कि धर्मास्तिकाय के एकप्रदेश को यावत् एकप्रदेश कम हो, वहाँ तक उसे धर्मास्तिकाय नही कहा जा सकता ?

[उ.] गौतम ! क्या चक्र का खण्ड (भाग या टुकड़ा) चक्र कहलाता है, या सम्पूर्ण चक्र, चक्र कहलाता है?

(गौतम–) भगवन् ! चक्र का खण्ड चक्र नहीं कहलाता, किन्तु सम्पूर्ण चक्र, चक्र कहलाता है।

(भगवान–) इसी प्रकार छत्र, चर्म, दण्ड, वस्त्र, शस्त्र और मोदक के विषय में भी जानना चाहिए। अर्थात्–समग्र हो, तभी छत्र आदि कहे जाते है, इनके खण्ड को छत्र आदि नहीं कहा जाता। इसी कारण से, हे गौतम ! ऐसा कहा जाता है कि धर्मास्तिकाय के एक प्रदेश को, यावत् जब तक उसमें एक प्रदेश भी कम हो, तब तक उसे धर्मास्तिकाय नहीं कहा जा सकता।

[Q. 4] *Bhante* ! Why is it said that one section (*pradesh*)... and so on up to less than one section of *Dharmastikaya* (motion entity) cannot be called *Dharmastikaya* ?

[Ans.] Gautam ! Can a part (*khand*) of a wheel be called a wheel or the whole wheel is called a wheel ?

(Gautam—) A part (*khand*) of a wheel is not called a wheel only the whole wheel is called a wheel.

(*Bhagavan*—) The same holds good for *chhatra* (umbrella), cushion (*charma*), staff (*dand*), apparel (*vastra*), weapon (*shastra*) and *modak* (a spherical sweet), meaning that only the whole is called by that name and not any part thereof That is why, Gautam ! It is said that one section (*pradesh*) and so on up to . less than one section of *Dharmastikaya* (motion entity) cannot be called *Dharmastikaya*.

८. [प्र. १] से किं खाइए णं भंते ! 'धम्मत्थिकाए' त्ति वत्तव्वं सिया।

[उ.] गोयमा ! असंखेज्जा धम्मत्थिकायपदेसा ते सव्वे कसिणा पडिपुण्णा निरवसेसा एगग्गहण–गहिया, एस णं गोयमा ! 'धम्मत्थिकाए' त्ति वत्तव्वं सिया। [२] एवं अहम्मत्थिकाए वि। [३] आगासत्थिकाय–जीवत्थिकाय–पोग्गलत्थिकाया वि एवं चेव। नवरं पदेसा अणंता भाणियव्वा। सेसं तं चेव।

८. [प्र. १] भगवन् ! तब फिर धर्मास्तिकाय किसे कहा जा सकता है?

[उ.] हे गौतम ! धर्मास्तिकाय मे असख्यात प्रदेश हैं, जब वे सब कृत्स्न (पूरे), परिपूर्ण, निरवशेष (एक भी बाकी न रहे) तथा एकग्रहणगृहीत अर्थात्–एक शब्द से कहने योग्य हो जाये, तब उस (असंख्येयप्रदेशात्मक सम्पूर्ण द्रव्य) को 'धर्मास्तिकाय' कहा जा सकता है। [२] इसी प्रकार 'अधर्मास्तिकाय' के विषय में जानना चाहिए। [३] इसी तरह आकाशास्तिकाय, जीवास्तिकाय और पुद्गलास्तिकाय के विषय मे भी जानना चाहिए। विशेष बात यह है कि इन तीनों द्रव्यों के अनन्त प्रदेश कहना चाहिए। बाकी सारा वर्णन पूर्ववत् समझना।

8. [Q. 1] *Bhante* ! Then what is called *Dharmastikaya* ?

[Ans.] *Dharmastikaya* (motion entity) has innumerable sections (*pradesh*) When all of them, the sum-total, leaving none out, as the whole can be included in one expression then it (the whole entity inclusive of innumerable sections) can be called *Dharmastikaya* (motion entity) [2] The same is true for *Adharmastikaya* (inertia entity). [3] The same also holds good for *Akashastikaya* (space entity), *Jivastikaya* (soul entity) and *Pudgalastikaya* (matter entity), difference being that these three entities have infinite sections, rest of the details are as aforesaid.

विवेचन : प्रस्तुत मे जो यह बताया गया है कि जब तक एक भी प्रदेश कम हो, तब तक वे धर्मास्तिकाय आदि नही कहे जा सकते, किन्तु जब सभी प्रदेश परिपूर्ण हो, तभी वे धर्मास्तिकाय आदि कहे जा सकते है। अर्थात् जब वस्तु पूरी हो, तभी वह वस्तु कहलाती है, अधूरी वस्तु, वस्तु नही कहलाती, यह निश्चयनय का मन्तव्य है। व्यवहारनय की दृष्टि से तो थोडी-सी अधूरी या विकृत वस्तु को भी उसी नाम से पुकारा जाता है। जैसे-मोदक के टुकडे या घडे के एक भाग को भी मोदक या घडा ही कहा जाता है। जीवास्तिकाय के अनन्तप्रदेशो का कथन समस्त जीवो की अपेक्षा से समझना चाहिए। एक जीवद्रव्य के प्रदेश असंख्यात ही होते है। एक पुद्गल के संख्यात, असख्यात अथवा अनन्तप्रदेश होते है। समस्त पुद्गलास्तिकाय के मिलकर अनन्त (अनन्तानन्त) प्रदेश होते है। धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय के असख्य प्रदेश है। *(वृत्ति, पत्राक १४९)*

Elaboration—Even one section short cannot be called *Dharmastikaya* (motion entity) or any other entity, only the whole can be called that. In other words only the whole is called by a particular name and not any part thereof This proclamation is from the noumenal or transcendental viewpoint (*Nischaya naya*) However, from the phenomenal or conventional viewpoint (*Vyavahara naya*) a part of thing or a distorted thing is also called by the name of the whole. For example a piece of a cake is called cake and piece of a pitcher is called pitcher The statement about infinite sections of *Jivastikaya* (soul entity) is in context of all living beings. A single soul has infinite space-points. One particle of matter may have countable, innumerable and infinite sections (ultimate particles). All inclusive *Pudgalastikaya* (matter entity) has infinite times infinite sections *Dharmastikaya* (motion entity) and *Adharmastikaya* (inertia entity) have innumerable sections. *(Vritti, leaf 149)*

उत्थानादियुक्त जीव द्वार SOUL AND ITS ATTRIBUTES

९. [प्र. १] जीवे णं भंते ! स-उट्ठाणे स-कम्मे स-बले स-वीरिए स-पुरिसक्कारपरक्कमे आयभावेणं जीवभावं उवदंसेतीति वत्तव्वं सिया ?

[उ.] हंता, गोयमा ! जीवे णं स-उट्ठाणे जाव उवदंसेतीति वत्तव्वं सिया।

९. [प्र. १] भगवन् ! उत्थान, कर्म, बल, वीर्य और पुरुषकार–पराक्रम वाला जीव आत्मभाव (अपने उत्थानादि क्रियाओ) से जीवभाव (चैतन्य) को प्रकट करता है, क्या ऐसा कहा जा सकता है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! उत्थान, कर्म, बल, वीर्य और पुरुषकार–पराक्रम से युक्त जीव आत्मभाव से जीवभाव को प्रकट करता है, ऐसा कहा जा सकता है।

9. [Q. 1] *Bhante* ! Can it be stated that a soul (*jiva*) endowed with inclination to rise (*utthaan*), action (*karma*), strength (*bal*), potency (*virya*) and self-exertion (*purushakar-parakram*) asserts its state of life (*jiva bhaava* or *chetana*) through self-expression (*atma-bhaava* or the intrinsic capacity of aforesaid activities) ?

[Ans.] Yes, Gautam ! It can be stated that a soul (*jiva*) endowed with inclination to rise (*utthaan*), .. and so on up to . asserts its state of life (*jiva bhaava* or *chetana*) through self-expression (*atma-bhaava* or the aforesaid activities)

[प्र. २] से केणट्ठेणं जाव वत्तव्वं सिया ?

[उ.] गोयमा ! जीवे णं अणंताणं आभिणिबोहियनाणपज्जवाणं एवं सुयनाणपज्जवाणं ओहिनाणपज्जवाणं मणपज्जवनाणपज्जवाणं केवलनाणपज्जवाणं मइअण्णाणपज्जवाणं सुयअण्णाणपज्जवाणं विभंगनाणपज्जवाणं चक्खुदंसणपज्जवाणं अचक्खुदंसणपज्जवाणं ओहिदंसणपज्जवाणं केवलदंसणपज्जवाणं उवओगं गच्छइ। उवओगलक्खणे णं जीवे। से तेणट्ठेणं एवं वुच्चइ–गोयमा ! जीवे णं सउट्ठाणे जाव वत्तव्वं सिया।

[प्र. २] भगवन् ! ऐसा किस कारण से कहा है कि तथारूप जीव आत्मभाव से जीवभाव को प्रदर्शित करता है, ऐसा कहा जा सकता है ?

[उ.] गौतम ! जीव आभिनिबोधिकज्ञान के अनन्त पर्यायो, श्रुतज्ञान के अनन्त पर्यायो, अवधिज्ञान के अनन्त पर्यायो, मनःपर्यवज्ञान के अनन्त पर्यायो एव केवलज्ञान के अनन्त पर्यायो के तथा मति–अज्ञान, श्रुत–अज्ञान, विभग (अवधि) अज्ञान के अनन्त पर्यायो के एव चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन और केवलदर्शन के अनन्त पर्यायो के उपयोग को प्राप्त करता है, क्योंकि जीव का लक्षण उपयोग है। इसी कारण से, हे गौतम ! ऐसा कहा जाता है कि उत्थान, कर्म, बल, वीर्य और पुरुषकार–पराक्रम वाला जीव, आत्मभाव से जीवभाव (चैतन्य स्वरूप) को प्रकट करता है।

[Q. 2] *Bhante* ! Why is it said that 'it can be stated that a soul (*jiva*) endowed with inclination to rise .. and so on up to... asserts its state of life through self-expression' ?

[Ans.] Gautam ! A soul acquires the intent of application of infinite modes (*paryayas*) of *Abhinibodhik jnana* or *Mati-jnana* (sensory

knowledge or to know the apparent form of things appearing before the soul by means of five sense organs and the mind), infinite modes (*paryayas*) of *Shrut-jnana* (scriptural knowledge), infinite modes (*paryayas*) of *Avadhi-jnana* (knowledge acquired through extrasensory perception of the physical dimension; something akin to clairvoyance), infinite modes (*paryayas*) of *Manahparyav jnana* (extrasensory perception and knowledge of thought process and thought-forms of other beings, something akin to telepathy); infinite modes of *Mati-ajnana* (ignorance related to sensory knowledge), *Shrut-ajnana* (ignorance of scriptural knowledge), *Vibhang-jnana* or *Avadhi-ajnana* (ignorance related to *Avadhi-jnana* or pervert *Avadhi-jnana*); and infinite modes of *Chakshu-darshan* (visual perception), *Achakshu-darshan* (non-visual perception), *Avadhi-darshan* (extrasensory perception) and *Keval-darshan* (all enveloping perception). This is because the unique attribute of *jiva* (soul) is *upayog* (intent or sentience) That is why, Gautam ! It is said that 'it can be stated that a soul (*jiva*) endowed with inclination to rise and so on up to.. asserts its state of life through self-expression'.

आकाशास्तिकाय के भेद–प्रभेद CATEGORIES OF AKASHASTIKAYA

१०. [प्र.] कइविहे णं भंते ! आगासे पण्णत्ते ?

[उ.] गोयमा ! दुविहे आगासे पण्णत्ते, तं जहा–लोयागासे य अलोयागासे य।

१०. [प्र.] भगवन् ! आकाश कितने प्रकार का है ?

[उ.] गौतम ! आकाश दो प्रकार का है, यथा–लोकाकाश और अलोकाकाश।

10. [Q.] *Bhante* ! Of how many types is *akash* (space) ?

[Ans.] Gautam ! *Akash* (space) is of two types—*Lokakash* (occupied space, universe) and *Alokakash* (unoccupied space; space beyond).

११. [प्र.] लोयागासे णं भंते ! किं जीवा ? जीवदेसा, जीवपदेसा, अजीवा, अजीवदेसा, अजीवपएसा ?

[उ.] गोयमा ! जीवा वि जीवदेसा वि जीवपदेसा वि, अजीवा वि अजीवदेसा वि अजीवपदेसा वि। जे जीवा ते नियमा एगिंदिया बेइंदिया तेइंदिया चउरिंदिया पंचेंदिया अणिंदिया। जे जीवदेसा ते नियमा एगिंदियदेसा जाव अणिंदियदेसा। जे जीवपदेसा ते नियमा एगिंदियपदेसा जाव अणिंदियपदेसा।

जे अजीवा ते दुविहा पण्णत्ता, तं जहा–रूवी य अरूवी य। जे रूवी ते चउव्विहा पण्णत्ता, तं जहा–खंधा खंधदेसा खंदपदेसा, परमाणु पोग्गला। जे अरूवी ते पंचविहा पण्णत्ता, तं जहा–धम्मत्थिकाए, नोधम्मत्थिकायस्स देसे, धम्मत्थिकायस्स पदेसा, अधम्मत्थिकाए, नोअधम्मत्थिकायस्स देसे, अधम्मत्थिकायस्स पदेसा, अद्धासमए।

११. [प्र.] भगवन् ! क्या लोकाकाश में जीव है ? जीव के देश हैं ? जीव के प्रदेश हैं ? क्या अजीव है ? अजीव के देश हैं ? अजीव के प्रदेश है ?

[उ.] गौतम ! लोकाकाश मे जीव भी हैं, जीव के देश भी हैं, जीव के प्रदेश भी है; अजीव भी हैं, अजीव के देश भी हैं और अजीव के प्रदेश भी है। जो जीव है, वे नियमतः (निश्चित रूप से) एकेन्द्रिय है, द्वीन्द्रिय हैं, त्रीन्द्रिय है, चतुरिन्द्रिय हैं, पंचेन्द्रिय हैं और अनिन्द्रिय हैं।

जो जीव के देश हैं, वे नियमत· एकेन्द्रिय के देश हैं, यावत् अनिन्द्रिय के देश है। जो जीव के प्रदेश हैं, वे नियमत· एकेन्द्रिय के प्रदेश हैं, यावत् अनिन्द्रिय के प्रदेश हैं। जो अजीव हैं, वे दो प्रकार के हैं। यथा–रूपी और अरूपी। जो रूपी हैं, उनके चार भेद हैं। यथा–स्कन्ध, स्कन्धदेश, स्कन्धप्रदेश और परमाणुपुद्गल। जो अरूपी हैं, उनके पाँच भेद हैं, वे इस प्रकार है–धर्मास्तिकाय, नोधर्मास्तिकाय का देश, धर्मास्तिकाय के प्रदेश, अधर्मास्तिकाय, नोअधर्मास्तिकाय का देश, अधर्मास्तिकाय के प्रदेश और अद्धासमय।

11. [Q.] *Bhante* ! Are there souls (*jivas*) in *Lokakash* (occupied space) ? And also *deshas* (sections) of souls, and *pradeshas* (soul-space-points) of souls Are there non-souls or matter (*ajivas*) in *Lokakash* (occupied space) ? And also *deshas* (sections) of matter and *pradeshas* (*paramanu*) of matter ?

[Ans.] Gautam ! There are souls (*jivas*) in *Lokakash* (occupied space), *deshas* (sections, divisions; parts) of souls and *pradeshas* (soul-space-points) of souls. Also there are non-souls or matter (*ajivas*) in *Lokakash* (occupied space), *deshas* (sections) of matter and *pradeshas* (*paramanu* or ultimate-particle) of matter As a rule the *jivas* are one-sensed (*ekendriya*), two-sensed (*dvindriya*), three-sensed (*trindriya*), four-sensed (*chaturindriya*), five-sensed (*panchendriya*), as well as devoid of senses or sense organs (*anindriya*).

As a rule the sections (*deshas*) of *jivas* are *deshas* of one-sensed (*ekendriya*)... and so on up to .. devoid of senses or sense organs (*anindriya*) As a rule the *pradeshas* of *jivas* are *pradeshas* of one-sensed (*ekendriya*). and so on up to devoid of senses or sense organs (*anindriya*). The *ajivas* (matter) are of two types—with form (*rupi*) and formless (*arupi*). The *rupis* are of four types—*skandh* (aggregate of matter), *skandh-desh* (part of an aggregate), *skandh-pradesh* (smaller part of an aggregate) and *paramanupudgal* (ultimate particle of matter). The *arupis* are of five types—(1) *Dharmastikaya* (motion entity), there is no desh of *Dharmastikaya*; (2) *pradeshas* of *Dharmastikaya*; (3) *Adharmastikaya* (inertia entity), there is no *desh* of *Adharmastikaya* (inertia entity); (4) *pradeshas* of *Adharmastikaya* (inertia entity); and (5) *Addha-samaya* (time).

१२. [प्र.] अलोयगासे णं भंते ! किं जीवा ? पुच्छा तह चेव (सु. ११)।

[उ.] गोयमा ! नो जीवा जाव नो अजीवप्पएसा। एगे अजीवदव्वदेसे अगुरुयलहुए अणंतेहिं अगुरुयलहुयगुणेहिं संजुत्ते सव्वागासे अणंतभागूणे।

१२. [प्र.] भगवन् ! क्या अलोकाकाश में जीव है, यावत् अजीवप्रदेश है ? इत्यादि पूर्ववत् पृच्छा।

[उ.] गौतम ! अलोकाकाश मे न जीव है, यावत् न ही अजीवप्रदेश है। वह एक अजीवद्रव्य देश है, अगुरु-लघु है तथा अनन्त अगुरु-लघु गुणो से सयुक्त है, (क्योकि लोकाकाश सर्वाकाश का अनन्तवाँ भाग है, अत) वह अनन्त भाग कम सर्वाकाशरूप है।

12. **[Q.]** *Bhante* ! Are there souls (*jivas*) in *Alokakash* (unoccupied space) ? and so on up to.. and *pradeshas* (*paramanu*) of matter ? (as aforesaid)

[Ans.] Gautam ! There are no souls (*jivas*) in *Alokakash* (unoccupied space) ? and so on up to and no *pradeshas* (*paramanu*) of matter ? It is a *desha* (section) of non-soul entity, it is *aguru-laghu* (non-heavy-non-light) and endowed with infinite *aguru-laghu* (non-heavy-non-light) attributes and it is infinite parts less than the whole space (this is because *Lokakash* or occupied space is an infinite fraction of the whole space)

विवेचन · देश, प्रदेश–प्रस्तुत प्रसग मे देश का अर्थ है–जीव या अजीव के बुद्धिकल्पित दो, तीन आदि विभाग, तथा प्रदेश का अर्थ है–जीवदेश या अजीवदेश के बुद्धिकल्पित ऐसे सूक्ष्मतम विभाग, जिनके फिर दो विभाग न हो सके। स्कन्ध, स्कन्धदेश, स्कन्धप्रदेश, परमाणुपुद्गल–परमाणुओ का समूह 'स्कन्ध' कहलाता है। स्कन्ध के दो, तीन आदि भागो को स्कन्धदेश कहते है, तथा स्कन्ध के ऐसे सूक्ष्म अश, जिनके स्कन्ध रूप मे फिर विभाग न हो सके, उन्हे स्कन्धप्रदेश कहते है, 'परमाणु' ऐसे सूक्ष्मतम अशो को कहते है, जो स्कन्धभाव को प्राप्त नही हुए–किसी से मिले हुए नही–स्वतत्र हैं। अद्धा–समय–अर्थात् आवलिका मुहूर्त्त आदि काल है।

Elaboration—*Desh* and *pradesh*—Here *desh* means imaginary sections of soul or matter, may be two, three or more *Pradesh* means such imaginary micro-sections of the said sections of soul or matter that cannot be further divided *Skandh, skandh-desh, skandh-pradesh* and *paramanupudgal—Skandh* is aggregate of ultimate particles of matter *Skandh-desh* are two, three or more larger parts of an aggregate of matter. *Skandh-pradesh* are minute parts of the said larger parts which cannot be further divided without loosing their identity as aggregates. *Paramanupudgal* are the ultimate particles of matter that have not become aggregates and exist independently. *Addha-samaya* is time and it includes various units of time, such as *Avalika, Muhurt* etc.

धर्मास्तिकाय आदि का प्रमाण DIMENSIONS OF DHARMASTIKAYA AND OTHERS

१३. [प्र. १] धम्मत्थिकाए णं भंते ! के महालए पण्णत्ते ?

[उ.] गोयमा ! लोए लोयमेत्ते लोयप्पमाणे लोयफुडे लोयं चेव फुसित्ताणं चिट्ठइ।

१३. [प्र. १] भगवन् ! धर्मास्तिकाय कितना बडा है ?

[उ.] गौतम ! धर्मास्तिकाय लोकरूप है, अर्थात् लोकमात्र है, लोक-प्रमाण है, लोक से स्पृष्ट है और लोक को ही स्पर्श करके रहा रहा हुआ।

13. [Q. 1] *Bhante* ! How large is *Dharmastikaya* (motion entity) ?

[Ans.] Gautam ! *Dharmastikaya* (motion entity) is like *Lok* (*Lok-matra*), it is as large as *Lok* (*Lok-praman*), it is touched by *Lok* (*Lok-sprisht*) and it exists touching *Lok*.

[२] एवं अधम्मत्थिकाए, लोयागासे, जीवत्थिकाए, पोग्गलत्थिकाए। पंच वि एक्काभिलावा।

[२] इसी प्रकार अधर्मास्तिकाय, लोकाकाश, जीवास्तिकाय और पुद्गलास्तिकाय के सम्बन्ध मे भी समझ लेना चाहिए। इन पाँचो के सम्बन्ध मे एक समान अभिलाप (पाठ) है।

[2] The same holds good for *Adharmastikaya* (inertia entity), *Lokakash* (occupied space), *Jivastikaya* (soul entity) and *Pudgalastikaya* (matter entity) The same statement should be repeated for these five.

धर्मास्तिकाय आदि की स्पर्शना TOUCH OF DHARMASTIKAYA AND OTHERS

१४. [प्र.] अहोलोए णं भंते ! धम्मत्थिकायस्स केवइयं फुसति ?

[उ.] गोयमा ! सातिरेगं अद्धं फुसइ।

१४. [प्र.] भगवन् ! धर्मास्तिकाय के कितने भाग को अधोलोक स्पर्श करता है ?

[उ.] गौतम ! अधोलोक धर्मास्तिकाय के आधे से कुछ अधिक भाग को स्पर्श करता है।

14. [Q.] *Bhante* ! What portion of *Dharmastikaya* (motion entity) is touched by the lower world (*Adholok*) ?

[Ans.] Gautam ! The lower world (*Adholok*) touches slightly more than half of *Dharmastikaya* (motion entity)

१५. [प्र.] तिरियलोए णं भंते ! पुच्छा०।

[उ.] गोयमा ! असंखेज्जइभागं फुसइ।

१५. [प्र.] भगवन् ! धर्मास्तिकाय के कितने भाग को तिर्यग्लोक स्पर्श करता है ? पृच्छा०।

[उ.] गौतम ! तिर्यग्लोक धर्मास्तिकाय के असख्येय भाग को स्पर्श करता है।

15. [Q.] *Bhante* ! What portion of *Dharmastikaya* (motion entity) is touched by the transverse world (*Tiryaklok*) ?

[Ans.] Gautam ! The transverse world (*Tiryaklok*) touches innumerable fraction of *Dharmastikaya* (motion entity).

१६. [प्र.] उड्ढलोए णं भंते ! पुच्छा०।

[उ.] गोयमा ! देसोणं अद्धं फुसइ।

१६. [प्र.] भगवन् ! धर्मास्तिकाय के कितने भाग को ऊर्ध्वलोक स्पर्श करता है ?

[उ.] गौतम ! ऊर्ध्वलोक धर्मास्तिकाय के देशोन (कुछ कम) अर्ध-भाग को स्पर्श करता है।

16. [Q.] *Bhante* ! What portion of *Dharmastikaya* (motion entity) is touched by the upper world (*Urdhvalok*) ?

[Ans.] Gautam ! The upper world (*Urdhvalok*) touches slightly less than half of *Dharmastikaya* (motion entity).

१७. [प्र.] इमा णं भंते ! रयणप्पभा पुढवी धम्मत्थिकायस्स किं संखेज्जइभागं फुसइ ? असंखेज्जइभागं फुसइ ? संखिज्जे भागे फुसइ ? असंखेज्जे भागे फुसइ ? सव्वं फुसइ ?

[उ.] गोयमा ! णो संखेज्जइभागं फुसइ, असंखेज्जइभागं फुसइ, णो संखेज्जे०, णो असंखेज्जे०, नो सव्वं फुसइ।

१७. [प्र.] भगवन् ! यह रत्नप्रभा पृथ्वी, क्या धर्मास्तिकाय के सख्यात भाग को स्पर्श करती है, या असख्यात भाग को स्पर्श करती है, अथवा सख्यात भागो को, या असंख्यात भागो को स्पर्श करती है अथवा समग्र को स्पर्श करती है ?

[उ.] गौतम ! यह रत्नप्रभा पृथ्वी, धर्मास्तिकाय के सख्यात भाग को स्पर्श नही करती, अपितु असख्यात भाग को स्पर्श करती है, इसी प्रकार सख्यात भागो को, असख्यात भागो को या समग्र धर्मास्तिकाय को स्पर्श नही करती।

17. [Q.] *Bhante* ! Does this Ratnaprabha *prithvi* (the first hell) touch countable fraction, or innumerable fraction, or countable fractions, or innumerable fractions, or the whole of *Dharmastikaya* (motion entity) ?

[Ans.] Gautam ! This Ratnaprabha *prithvi* (the first hell) does not touch countable fraction but innumerable fraction of *Dharmastikaya* (motion entity). Also it does not touch countable fractions, or innumerable fractions, or the whole of *Dharmastikaya* (motion entity).

१८. [प्र.] इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए घणोदही धम्मत्थिकायस्स किं संखेज्जइभागं फुसति ?

[उ.] जहा रयणप्पभा (सु. १७) तहा घणोदहि–घणवात–तणुवाया वि।

१८. [प्र.] भगवन् ! रत्नप्रभापृथ्वी का घनोदधि, धर्मास्तिकाय के सख्येय भाग को स्पर्श करता है; यावत् समग्र धर्मास्तिकाय को स्पर्श करता है ? इत्यादि पृच्छा।

[उ.] गौतम ! जिस प्रकार रत्नप्रभापृथ्वी के लिए कहा गया है, उसी प्रकार रत्नप्रभापृथ्वी के घनोदधि के विषय मे समझना चाहिए और उसी तरह घनवात और तनुवात के विषय में भी समझना चाहिए।

18. [Q.] *Bhante* ! Does the *Ghanodadhi* (section of dense water) of this Ratnaprabha *prithvi* (the first hell) touch countable fraction.. and so on up to... the whole of *Dharmastikaya* (motion entity) ?

[Ans.] Gautam ! As has been stated about Ratnaprabha *prithvi* (the first hell) so should be taken for the *Ghanodadhi* (section of dense water) of Ratnaprabha *prithvi* The same should also be taken for *Ghanavaat* (dense air) and *Tanuvaat* (rarefied air)

१९. [प्र. १] इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए ओवासंतरे धम्मत्थिकायस्स किं संखेज्जइ भागं फुसति, असंखेज्जइभागं फुसइ जाव (सु. १७) सव्वं फुसइ।

[उ.] गोयमा ! संखेज्जइभागं फुसइ, णो असंखेज्जइभागं फुसइ, नोसंखेज्जे, नो असंखेज्जे, नो सव्वं फुसइ।

१९. [प्र. १] भगवन् ! इस रत्नप्रभापृथ्वी का अवकाशान्तर क्या धर्मास्तिकाय के संख्येय भाग को स्पर्श करता है, अथवा असख्येय भाग को स्पर्श करता है। यावत् सम्पूर्ण धर्मास्तिकाय को स्पर्श करता है ?

[उ.] गौतम ! इस रत्नप्रभापृथ्वी का अवकाशान्तर, धर्मास्तिकाय के संख्येय भाग को स्पर्श करता है, किन्तु असंख्येय भाग को, संख्येय भागों को, असख्येय भागो को तथा सम्पूर्ण धर्मास्तिकाय को स्पर्श नही करता।

19. [Q. 1] *Bhante* ! Does the *avakashantar* (intervening space) of this Ratnaprabha *prithvi* (the first hell) touch countable fraction, or innumerable fraction... and so on up to... the whole of *Dharmastikaya* (motion entity) ?

[Ans.] Gautam ! The *avakashantar* of this Ratnaprabha *prithvi* (the first hell) touches countable fraction of *Dharmastikaya* (motion entity) but not innumerable fraction, or countable fractions, or innumerable fractions, or the whole of *Dharmastikaya* (motion entity).

[२] ओवासंतराइं सव्वाइं जहा रयणप्पभाए।

[२] इसी तरह समस्त अवकाशान्तरों के सम्बन्ध में कहना चाहिए।

[2] The same should be repeated for all intervening spaces.

२०. जहा रयणप्पभाए पुढवीए वत्तव्वया भणिया एवं जाव अहेसत्तमाए।

२०. जैसे रत्नप्रभा पृथ्वी के विषय मे कहा, वैसे ही यावत् नीचे सातवी पृथ्वी तक कहना चाहिए।

20. What has been said about Ratnaprabha *prithvi* should be repeated for all the lower *prithvis* (hells) up to the seventh one.

२१. जंबुदीवाइया दीवा, लवणसमुद्दाइया समुद्दा एवं सोहम्मे कप्पे जाव ईसिपब्भारा-पुढवीए। एए सव्वे वि असंखेज्जइभागं फुसति, सेसा पडिसेहियव्वा।

२२. एवं अधम्मत्थिकाए। एवं लोयागासे वि।

गाहा–पुढवोदही घण तणू कप्पा गेवेज्जऽणुत्तरा सिद्धी।
संखेज्जइभागं अंतरेसु सेसा असंखेज्जा॥१॥

॥ बितीय सए : दसमो उद्देसो समत्तो ॥

॥ बिइयं सयं समत्तं ॥

२१. तथा जम्बूद्वीप आदि द्वीप और लवणसमुद्र आदि समुद्र सौधर्मकल्प से लेकर ईषत्प्राग्भारा पृथ्वी तक, ये सभी धर्मास्तिकाय के असख्येय भाग को स्पर्श करते है। शेष भागो की स्पर्शना का निषेध करना चाहिए।

२२. जिस तरह धर्मास्तिकाय की स्पर्शना कही, उसी तरह अधर्मास्तिकाय और लोकाकाशास्तिकाय की स्पर्शना के विषय मे भी कहना चाहिए।

(गाथा का अर्थ) पृथ्वी, घनोदधि, घनवात, तनुवात, कल्प, ग्रैवेयक, अनुत्तर, सिद्धि (ईषत्प्राग्भारा पृथ्वी) तथा सात अवकाशान्तर, इनमे से अवकाशान्तर तो धर्मास्तिकाय के सख्येय भाग का स्पर्श करते है और शेष सब धर्मास्तिकाय के असख्येय भाग का स्पर्श करते हैं।

21. Also, Jambu dveep and other continents, Lavan *samudra* and other oceans, and Saudharma *kalp* and beyond up to Ishatpragbhara *prithvi* (the abode of *Siddhas*), all these touch innumerable fraction of *Dharmastikaya* (motion entity). Touching of other fractions should be negated.

22. What has been said about touch of *Dharmastikaya* (motion entity) should also be repeated for the touch of *Adharmastikaya* (inertia entity) and *Lokakashastikaya* (occupied space).

Verse—Out of *Prithvi, Ghanodadhi, Ghanavaat, Tanuvaat, Kalp, Graiveyak, Anuttar, Siddhi* (*Ishatpragbhara prithvi*) and seven *Avakashantars*, the *Avakashantars* touch countable fraction of

Dharmastikaya (motion entity) and all the others touch innumerable fraction of *Dharmastikaya* (motion entity).

विवेचन : धर्मास्तिकाय चतुर्दश रज्जुप्रमाण समग्र लोकव्यापी है और अधोलोक का परिमाण सात रज्जु से कुछ अधिक है। इसीलिए अधोलोक धर्मास्तिकाय के आधे से कुछ अधिक भाग का स्पर्श करता है। तिर्यग्लोक मध्य मे है उसका परिमाण १,८०० योजन है और धर्मास्तिकाय का परिमाण असख्येय योजन का है। इसलिए तिर्यग्लोक धर्मास्तिकाय के असख्येय भाग का स्पर्श करता है। ऊर्ध्वलोक देशोन सात रज्जु-परिमाण है और धर्मास्तिकाय चौदह रज्जु-परिमाण है। इसलिए ऊर्ध्वलोक धर्मास्तिकाय के देशोन अर्ध-भाग का स्पर्श करता है।

॥ द्वितीय शतक : दशम उद्देशक समाप्त ॥

॥ द्वितीय शतक समाप्त ॥

Elaboration—*Dharmastikaya* (motion entity) pervades the whole *Lok* (occupied space; universe) measuring 14 *Rajjus* (a conceptual unit of linear measure) and the dimension of the lower world (*Adholok*) is a little more than 7 *Rajjus* Therefore the lower world (*Adholok*) touches slightly more than half of *Dharmastikaya* (motion entity). The transverse world (*Tiryaklok*) is in the middle and its size is 1,800 *Yojans*, whereas the size of *Dharmastikaya* (motion entity) is innumerable *Yojans* Therefore the transverse world (*Tiryaklok*) touches innumerable fraction of *Dharmastikaya* (motion entity). The size of the upper world (*Urdhvalok*) is a little less than 7 *Rajjus* and that of *Dharmastikaya* (motion entity) is 14 *Rajjus* Therefore, the upper world (*Urdhvalok*) touches slightly less than half of *Dharmastikaya* (motion entity).

● END OF THE TENTH LESSON OF THE SECOND SHATAK ●

● END OF THE SECOND SHATAK (CHAPTER TWO) ●

तृतीय शतक : प्रथम उद्देशक
THIRD SHATAK (Chapter Three) : FIRST LESSON

विकुर्वणा VIKURVANA (TRANSMUTATION)

तृतीय शतक की संग्रहणी गाथा **COLLATIVE VERSE**

१. केरिस विउव्वणा, २. चमर, ३ किरिय, ४–५. जाणित्थि, ६. नगर, ७. पाला य॥

८. अहिवइ, ९. इंदिय, १०. परिसा तइयम्मि सए दसुद्देसा॥१॥

१. तृतीय शतक मे दस उद्देशक है–प्रथम में चमरेन्द्र की विकुर्वणा–शक्ति सम्बन्धी प्रश्नोत्तर है, दूसरे मे चमरेन्द्र के उत्पात की घटना, तृतीय मे क्रियाओ की प्ररूपणा, चतुर्थ में क्या देव द्वारा विकुर्वित यान को क्या साधु जानता है? इत्यादि प्रश्न, पाँचवें में साधु द्वारा बाह्य पुद्‌गलों को ग्रहण करके स्त्री आदि के रूपों की विकुर्वणा–सम्बन्धी प्रश्नोत्तर है, छठे मे नगर–सम्बन्धी वर्णन, सातवें में लोकपाल–विषयक चर्चा है, आठवे मे अधिपति–सम्बन्धी वर्णन, नौवे मे इन्द्रियो के सम्बन्ध मे विचारणा और दसवें उद्देशक में चमरेन्द्र की परिषद् (सभा) का वर्णन है।

1. The third chapter (*shatak*) has ten lessons (*uddeshak*) The first has questions about Chamrendra's power of transmutation (*vikurvana*). The second has the incident of Chamrendra's mischief. The third discusses actions and fourth is about the possibility of an ascetic knowing about a vehicle created by a *Dev* and other such questions. The fifth has questions and answers about an ascetic acquiring outside matter and creating various forms including that of a woman The sixth has description of city etc. The seventh has discussion about *Lok-pal*. The eighth is about overlords, the ninth about sense organs and the tenth describes the assembly of Chamarendra. These are the ten lessons of the third chapter.

उपोद्घात **INTRODUCTION**

२. तेणं कालेणं तेणं समएणं 'मोया' नामं नगरी होत्था। वण्णओ। तीसे णं मोयाए नगरीए बहिया उत्तरपुरत्थिमे दिसीभागे णं नंदणे नामं चेइए होत्था। वण्णओ। तेणं कालेणं तेणं समएणं सामी समोसढे परिसा निग्गच्छति। पडिगया परिसा।

२. उस काल और उस समय में 'मोका' नाम की नगरी थी। नगर वर्णन। उस नगरी के बाहर उत्तर–पूर्व के दिशा भाग में नन्दन नाम का चैत्य था। चैत्य वर्णन। उस काल उस समय में श्रमण भगवान महावीर वहाँ पधारे। परिषद् (उनके दर्शनार्थ) निकली। (भगवान का धर्मोपदेश सुनकर) परिषद् वापस चली गई।

2. During that period of time there was a city called Moka. Description (of the city). In the north-eastern direction outside the city there was a *Chaitya* (temple complex) called Nandan. Description (of the *Chaitya*). During that period of time Shraman Bhagavan Mahavir arrived there People came out (to attend). (After listening to *Bhagavan's* sermon) the assembly dispersed

चमरेन्द्र की ऋद्धि-विषयक प्रश्न CHAMARENDRA'S OPULENCE

३. [प्र.] तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स दोच्चे अंतेवासी अग्गिभूई नामं अणगारे गोतमे गोत्तेणं सत्तुस्सेहे जाव पज्जुवासमाणे एवं वयासी–चमरे णं भंते ! असुरिंदे असुरराया केमहिड्ढीए ? केमहज्जुतीए ? केमहाबले ? केमहायसे ? केमहासोक्खे ? केमहाणुभागे ? केवतियं च णं पभू विकुव्वित्तए ?

[उ.] गोयमा ! चमरे णं असुरिंदे असुरराया महिड्ढीए जाव महाणुभागे। से णं तत्थ चोत्तीसाए भवणावाससयसहस्साणं, चउसट्ठीए सामाणियसाहस्सीणं, तायत्तीसाए तायत्तीसगाणं जाव विहरइ। एमहिड्ढीए जाव एमहाणुभागे। एवतियं च णं पभू विकुव्वित्तए–से जहानामए जुवती जुवाणे हत्थेणं हत्थे गेण्हेज्जा, चक्कस्स वा नाभी अरगाउत्तासिया, एवामेव गोयमा ! चमरे असुरिंदे असुरराया वेउव्वियसमुग्घाएणं समोहण्णति, समोहणित्ता संखेज्जाइं जोअणाइं दंडं निसिरति, तं जहा–रयणाणं जाव रिट्ठाणं, अहाबायरे पोग्गले परिसाडेइ, परिसाडित्ता अहासुहुमे पोग्गले परियाएइ, परियाइत्ता दोच्चं पि वेउव्वियसमुग्घाएणं समोहण्णति, समोहणित्ता पभू णं गोयमा ! चमरे असुरिंदे असुरराया केवलकप्पं जंबुद्दीवं दीवं बहूहिं असुरकुमारेहिं देवेहिं देवीहि य आइण्णं वितिकिण्णं उवत्थडं संथडं फुडं अवगाढावगाढं करेत्तए। अदुत्तरं च णं गोयमा ! पभू चमरे असुरिंदे असुरराया तिरियमसंखेज्जे दीव–समुद्दे बहूहिं असुरकुमारेहिं देवेहिं देवीहि य आइण्णे वितिकिण्णे उवत्थडे संथडे फुडे अवगाढावगाढे करेत्तए।

एस णं गोयमा ! चमरस्स असुरिंदस्स असुररण्णो अयमेयारूवे विसए विसयमेत्ते बुइए; णो चेव णं संपत्तीए विकुव्विंसु वा, विकुव्वति वा, विकुव्विस्सति वा।

३. [प्र.] उस काल और उस समय में श्रमण भगवान महावीर के द्वितीय अन्तेवासी (शिष्य) अग्निभूति नामक अनगार (गणधर) जिनका गौतम गोत्र था, जो सात हाथ ऊँचे थे, यावत् (औपपातिकसूत्र–कथित विशेषणो से युक्त) (भगवान की) पर्युपासना करते हुए इस प्रकार बोले– "भगवन् ! असुरो का इन्द्र असुरराज चमरेन्द्र कितनी महान् ऋद्धि वाला है ? कितनी महान् द्युति–कान्ति वाला है ? कितने महान् बल से सम्पन्न है ? कितना महान् यशस्वी है ? कितने महान् सुखों व कितने महान् प्रभाव वाला है और वह कितनी विकुर्वणा करने में समर्थ है ?"

[उ.] गौतम ! असुरों का इन्द्र असुरराज चमर महान् ऋद्धि वाला है यावत् महाप्रभावशाली है। वह चमरचंचा राजधानी मे चौंतीस लाख भवनावासो पर, चौंसठ हजार सामानिक देवों पर और तेतीस

त्रायस्त्रिंशक देवो पर आधिपत्य करता हुआ यावत् विचरण करता है। (अर्थात्–) वह चमरेन्द्र इतनी महान् ऋद्धि वाला है, यावत् ऐसे महाप्रभाव वाला है; तथा उसकी विक्रिया करने की शक्ति इस प्रकार है–हे गौतम ! जैसे–कोई युवा पुरुष (अपने) हाथ से युवती स्त्री के हाथ को (दृढतापूर्वक) पकडता है, अथवा जैसे–गाड़ी के पहिये (चक्र) की धुरी (नाभि) आरों से अच्छी तरह जुड़ी हुई एवं सुसम्बद्ध होती है, इसी प्रकार असुरेन्द्र असुरराज चमर, वैक्रिय–समुद्घात करता है, समुद्घात करके शरीर से संख्यात योजन लम्बा दण्ड निकालता है तथा उसके द्वारा कर्केतन रत्नो के, यावत् रिष्ट रत्नों के स्थूल (असार) पुद्गलो को झटक देता है और सूक्ष्म पुद्गलो को ग्रहण करता है। फिर दूसरी बार वैक्रिय समुद्घात करता है। (ऐसी प्रक्रिया से) हे गौतम ! वह असुरेन्द्र असुरराज चमर–बहुत–से (स्वशरीर प्रमाण) असुरकुमार देवो और (असुरकुमार–) देवियो द्वारा (इस तिर्यग्लोक मे) परिपूर्ण जम्बूद्वीप नामक द्वीप को **आकीर्ण** (व्याप्त), **व्यतिकीर्ण** (मिश्रित एकीभूत), **उपस्तीर्ण** (आच्छादित), **संस्तीर्ण** (समग्र रूप मे आच्छादित), **स्पृष्ट** (छूता हुआ), **गाढ़ावगाढ़** करने (ठसाठस भरने मे समर्थ है। हे गौतम ! इसके उपरान्त वह असुरेन्द्र असुरराज चमर, अनेक असुरकुमार–देव–देवियो द्वारा इस तिर्यग्लोक मे भी असख्यात द्वीपो और समुद्रो तक के स्थल को आकीर्ण, व्यतिकीर्ण, उपस्तीर्ण, संस्तीर्ण, स्पृष्ट और गाढावगाढ कर सकता है। (अर्थात्–चमरेन्द्र अपनी वैक्रिय शक्ति से दूसरे रूप इतने अधिक विकुर्वित कर सकता है, जिनसे असंख्य द्वीप–समुद्रो तक का स्थल भर जाता है।)

हे गौतम ! असुरेन्द्र असुरराज चमर की ऐसी (पूर्वोक्त प्रकार की) शक्ति है, यह विषय मात्र है, परन्तु क्रियात्मक दृष्टि से चमरेन्द्र ने इस शक्ति की सम्प्राप्ति से कभी (इतने रूपो की) विकुर्वणा की नहीं, न ही करता है, और न ही करेगा।

3. [Q.] During that period of time Agnibhuti Anagar, the second senior disciple of Bhagavan Mahavir, who belonged to the Gautam clan, who was seven cubits tall. and so on (was endowed with virtues as mentioned in *Aupapatik Sutra*) up to. . while indulging in worship (of *Bhagavan*) he submitted—*Bhante* ! How great is the opulence (*riddhi*) of Chamarendra, the *Indra* (overlord) of *Asurs* ? How great is his radiance (*dyuti*) ? How great is his strength (*bal*) ? How great is his fame (*yash*) ? How great are his pleasures ? How great is his influence ? And how much is his capacity of transmutation (*vikurvana*) ?

[Ans.] Gautam ! Chamarendra, the *Indra* (overlord) of *Asurs* has great opulence . and so on up to... influence. Reigning over sixty four thousand *Samanik Devs* (gods of same status) and thirty three *Trayastrinshak Devs* (gods qualified to be priests or ministers).. and so on up to. he lives in his capital city Chamarchancha. (In other words—) that Chamarendra is endowed with such great opulence... and so on up to... influence, and his capacity of transmutation (*vikurvana*) is as

follows—Chamarendra performs *Vaikriya Samudghat* and from his body creates a countable *Yojans* long rod, ejects gross (worthless) particles and acquires fine particles of gems like *Karketan*... and so on up to... *Risht*. After this he once again performs *Vaikriya Samudghat*. O Gautam ! With this process that Chamarendra, the overlord of *Asurs*, has the power to pervade (*akirna*), merge (*vyatıkirna*), enshroud (*upastirna*), envelope (*samstirna*), touch (*sprısht*) and tightly pack (*gaadhavagaadh*) the whole of Jambudveep continent (in this transverse world) with numerous *Asur Kumar* gods and goddesses (thus created and matching the size of his body), exactly like a young man tightly holds the hand of a young woman or as spokes of a wheel are tightly held by its axle. Moreover, O Gautam ! That Chamarendra, the overlord of Asurs, has the power to pervade (*akırna*), merge (*vyatıkirna*), enshroud (*upastirna*), envelope (*samstirna*), touch (*sprısht*) and tightly pack (*gaadhavagaadh*) an area covering ınnumerable ıslands and seas ın this transverse world with numerous *Asur Kumar* gods and goddesses. (This means that with his power of transmutation Chamarendra can create so many forms that are enough to fill an area covering ınnumerable ıslands and seas.)

However, Gautam ! The aforesaid great power of Chamarendra, the overlord of *Asurs* is theoretical. In practice Chamarendra has never performed transmutation (to aforesaid extant), neither he does, nor will he do

विवेचन : देवनिकाय मे दस कोटि के देव-(१) इन्द्र, (२) सामानिक, (३) त्रायस्त्रिंश, (४) पारिषद्य, (५) आत्मरक्षक, (६) लोकपाल, (७) अनीक, (८) प्रकीर्णक, (९) आभियोग्य, और (१०) किल्विषिक। ये दस भेद प्रत्येक देवनिकाय मे होते है, किन्तु व्यन्तर और ज्योतिष्क देवो में त्रायस्त्रिश और लोकपाल नहीं होते। दसों मे से यहाँ पाँच का उल्लेख है, उनके अर्थ इस प्रकार है-(१) **इन्द्र**-अन्य देवो से असाधारण अणिमादि गुणों से सुशोभित तथा सामानिक आदि सभी प्रकार के देवो का स्वामी। (२) **सामानिक**-आज्ञा और ऐश्वर्य के सिवाय आयु, वीर्य, परिवार, भोग-उपभोग आदि में इन्द्र के समान ऋद्धि वाले। (३) **त्रायस्त्रिंश**-जो देव मंत्री और पुरोहित का काम करते है, ये सख्या मे ३३ ही होते है। (४) **लोकपाल**-आरक्षक के समान अर्थचर, लोक (जनता) का पालन-रक्षण करने वाले। (५) **आत्मरक्षक**-जो अगरक्षक के समान शस्त्र धारण किये इन्द्र की रक्षा मे खडे रहते है।

Elaboration—In the divine genus (*Dev-nikaya*) there are ten classes of gods—(1) *Indra*, (2) *Samanık*, (3) *Trayastrinshak*, (4) *Parishadya*, (5) *Atmarakshak*, (6) *Lok-pal*, (7) *Aneek*, (8) *Prakirnak*, (9) *Aabhiyogya*, and (10) *Kilvishik* This is applicable to all divine genuses except that Vyantar and Jyotishk genuses do not have *Trayastrinshak* and *Lok-pal*

gods. Of these ten, five find mention here—(1) *Indra*—overlord of all other classes of gods, including *Samanik* and endowed with great powers like *Anima* (power of miniaturization). (2) *Samanik*—other than wealth and reign they command the same status as *Indra* in terms of life-span, potency, retinue and comforts. (3) *Trayastrinshak*—they act as ministers and priests of the overlords and are 33 in number. (4) *Lok-pal*—they are protectors and supporters of people as governors of different directions. (5) *Atmarakshak*—equipped with weapons they attend *Indras* as personal guards.

४. [प्र.] जति णं भंते ! चमरे असुरिंदे असुरराया एमहिड्ढीए जाव एवइयं च णं पभू विकुव्वित्तए, चमरस्स णं भंते ! असुरिंदस्स असुररण्णो सामाणिया देवा केमहिड्ढीया जाव केवतियं च णं पभू विकुव्वित्तए ?

[उ.] गोयमा ! चमरस्स असुरिंदस्स असुररण्णो सामाणिया देवा महिड्ढीया जाव महाणुभागा। ते णं तत्थ साणं साणं भवणाणं, साणं साणं सामाणियाणं, साणं साणं अग्गमहिसीणं, जाव दिव्वाइं भोगभोगाइं भुंजमाणा विहरंति। एमहिड्ढीआ जाव एवतियं च णं पभू विकुव्वित्तए–

से जहानामए जुवति जुवाणं हत्थेणं हत्थे गेण्हेज्जा, चक्कस्स वा नाभी अरस्सउत्ता सिया, एवामेव गोयमा ! चमरस्स असुरिंदस्स असुरण्णो एगमेगे सामाणिए देवे वेउव्वियसमुग्घाएणं समोहण्णइ, समोहणित्ता जाव दोच्चं पि वेउव्वियसमुग्घाएणं समोहण्णइ, पभू णं गोतमा ! चमरस्स असुरिंदस्स असुररण्णो एगमेगे सामाणिए देवे केवलकप्पं जंबुद्दीवं दीवं बहूहिं असुरकुमारेहिं देवेहिं देवीहि य आइण्णं वितिकिण्णं उवत्थडं संथडं फुडं अवगाढावगाढं करेत्तए।

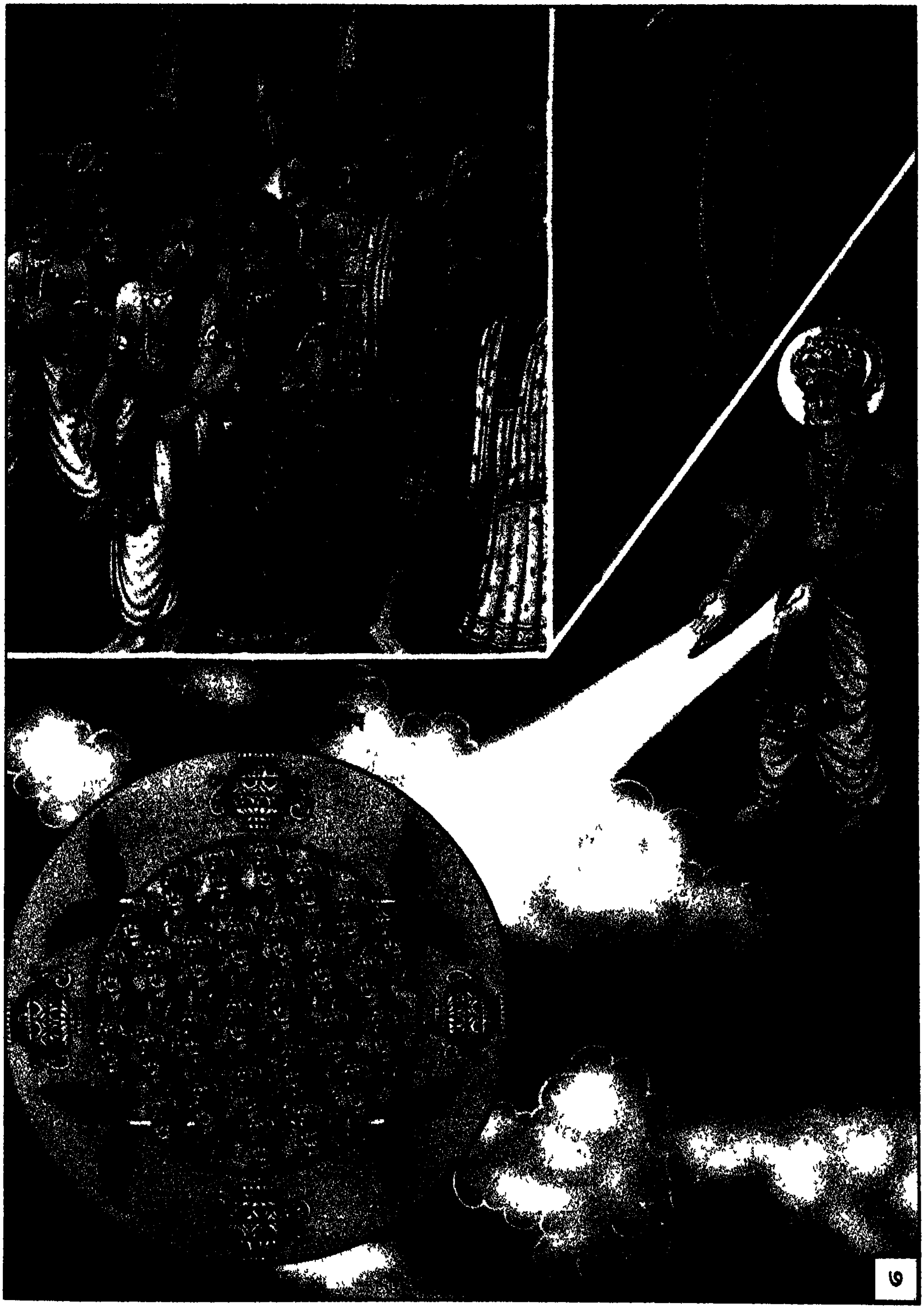
अदुत्तरं च णं गोयमा ! पभू चमरस्स असुरिंदस्स असुररण्णो एगमेगे सामाणियदेवे तिरियमसंखेज्जे दीव–समुद्दे बहूहिं असुरकुमारेहिं देवेहिं देवीहि य आइण्णे वितिकिण्णे उवत्थडे संथडे फुडे अवगाढावगाढे करेत्तए। एस णं गोयमा ! चमरस्स असुरिंदस्स असुररण्णो एगमेगस्स सामाणियदेवस्स अयमेयारूवे विसए विसयमेत्ते बुइए, णो चेव णं संपत्तीए विकुव्विंसु वा विकुव्वति वा विकुव्विस्सति वा।

४. [प्र.] भगवन् ! असुरेन्द्र असुरराज चमर जब (इतनी) ऐसी महान् ऋद्धि वाला है, यावत् इतनी विकुर्वणा करने मे समर्थ है, तब भगवन् ! उस असुरराज असुरेन्द्र चमर के सामानिक देवों की कितनी बडी ऋद्धि है, यावत् वे कितनी विकुर्वणा करने मे समर्थ हैं ?

[उ.] गौतम ! असुरेन्द्र असुरराज चमर के सामानिक देव, महती ऋद्धि वाले है, यावत् महाप्रभावशाली हैं। वे वहाँ अपने–अपने भवनो पर, अपने–अपने सामानिक देवो पर तथा अपनी–अपनी अग्रमहिषियो पर आधिपत्य करते हुए, यावत् देवलोक सम्बन्धी भोगों का उपभोग करते हुए विचरते है। वे इस प्रकार की महान् ऋद्धि वाले हैं, यावत् इतनी विकुर्वणा करने में समर्थ हैं–

'गौतम ! विकुर्वणा करने के लिए असुरेन्द्र असुरराज चमर का एक–एक सामानिक देव, वैक्रिय समुद्घात द्वारा समुद्घात क्रिया करता है। यावत् दूसरी बार भी वैक्रिय समुद्घात द्वारा समवहत होता

चमरेन्द्र की विकुर्वणा शक्ति



चित्र परिचय-७

Illustration No. 7

चमरेन्द्र की विकुर्वणा शक्ति

(१) **जम्बूद्वीप को अपने रूपो स भरना**–असुरराज चमर तथा उसके अन्य देवो की विकुर्वणा शक्ति इतनी प्रखर है कि वह यदि चाहे तो अपने जैसे अगणित प्रतिरूपो से तथा विविध प्रकार के देव देवि प्रतिरूपो से इस जम्बूद्वीप को ठसाठस भर सकता है। इतना ही नही, इसी प्रकार के असख्य द्वीप समुद्रो वाले सम्पूर्ण तिर्यक लोक को ठसाटस भर सकता है। ये वैक्रिय कृत रूप उसके असली रूप से भिन्न होते हुए भी उसके साथ सलग्न दिखाई देते है। जैसे कि (१) किसी मेले मे कोई युवक कामोद्रक अवस्था मे किसी युवती का हाथ पूरी दृढता व प्रगाढता से पकडकर चलता है तो दूर से वे दानो भिन्न होते हुए भी एकाकार दिखाई देते है, (२) जैसे गाडी के पहिये की धुरी (नाभि) आरो पहियो (चक्को) से भिन्न होते हुए भी सुसम्बद्ध दिखाई पडती है।

शतक ३, उ १ सूत्र २ ५

CHAMARENDRA'S CAPACITY OF TRANSMUTATION

(1) Filling Jambu continent—Chamarendra, the king of Asurs, and his subordinate gods are endowed with such great capacity of transmutation that they can tightly pack the whole of Jambudveep continent with numerous forms in their likeness and that of a variety of gods and goddesses Moreover, he can also tightly pack an area covering innumerable islands and seas in this transverse world These transmuted forms although separate appear to be attached to him It is exactly like—(1) a young man and a young woman in love tightly holding each other's hands in a fare appear to be united and (2) the spokes of a wheel are tightly held by its axle appear to be welded together

—Shatak 3, lesson 1, Sutra 3 5

है। जैसे कोई युवा पुरुष अपने हाथ से युवती स्त्री के हाथ को (कसकर) पकड़ता (हुआ चलता) है, तो वे दोनों दृढता से संलग्न मालूम होते है अथवा जैसे गाड़ी के पहिये की धुरी (नाभि) आरों से सुसम्बद्ध होती है, इसी प्रकार असुरेन्द्र असुरराज चमर का प्रत्येक सामानिक देव इस सम्पूर्ण जम्बूद्वीप नामक द्वीप को बहुत-से असुरकुमार देवों और देवियों द्वारा आकीर्ण, व्यतिकीर्ण, उपस्तीर्ण, संस्तीर्ण, स्पृष्ट, और गाढ़ावगाढ़ कर सकता है। इसके उपरान्त हे गौतम ! असुरेन्द्र असुरराज चमर का एक-एक सामानिक देव, इस तिर्यग्लोक के असंख्य द्वीपो और समुद्रों तक के स्थल को बहुत-से असुरकुमार देवों और देवियो से आकीर्ण, व्यतिकीर्ण, उपस्तीर्ण, सस्तीर्ण, स्पृष्ट और गाढ़ावगाढ़ कर सकता है। (अर्थात्-वह इतने रूपो की विकुर्वणा करने मे समर्थ है कि असंख्य द्वीप-समुद्रों तक का स्थल उन विकुर्वित देव-देवियो से ठसाठस भर जाये।) हे गौतम ! असुरेन्द्र असुरराज चमर के प्रत्येक सामानिक देव में इतनी विकुर्वणा करने की शक्ति है, वह शक्तिमात्र है, परन्तु क्रियात्मक रूप में उसने न तो कभी विकुर्वणा की है, न ही करता है और न ही करेगा।'

4. [Q.] *Bhante* ! When so great is the opulence (*riddhi*)... and so on up to . capacity of transmutation (*vikurvana*) of Chamarendra, the Indra (overlord) of *Asurs*, then how great is the opulence (*riddhi*)... and so on up to. capacity of transmutation (*vikurvana*) of *Samanik Devs* of Chamarendra, the *Indra* (overlord) of *Asurs* ?

[Ans.] Gautam ! *Samanik Devs* (gods of same status) of Chamarendra, the *Indra* (overlord) of *Asurs* have great opulence... and so on up to... influence. Reigning over their abodes, *Samanik Devs* (gods of same status) and their respective chief queens (*Agramahishis*)... and so on up to... live enjoying their divine pleasures and comforts. They are endowed with such great opulence .. and so on up to... influence and their capacity of transmutation (*vikurvana*) is as follows—Gautam ! For performing transmutation (*vikurvana*) each *Samanik Dev* (god of same status) of Chamarendra, the overlord of *Asurs*, performs *Samudghat* employing his power of *Vaikriya Samudghat* After this he once again performs *Vaikriya Samudghat* O Gautam ! With this process that *Samanik Dev* (god of same status) of Chamarendra, the overlord of *Asurs*, has the power to pervade (*akirna*), merge (*vyatikirna*), enshroud (*upastirna*), envelope (*samstirna*), touch (*sprisht*) and tightly pack (*gadhavagadh*) the whole of Jambudveep continent (in this transverse world) with numerous *Asur Kumar* gods and goddesses (matching the size of his body), exactly like a young man tightly holds the hand of a young woman or like the spokes of a wheel tightly held by its axle. Moreover, O Gautam ! That *Samanik Dev* (god of same status) of Chamarendra, the overlord of *Asurs*, has the power to pervade (*akirna*),

merge (*vyatıkırna*), enshroud (*upastırna*), envelope (*samstırna*), touch (*sprisht*) and tightly pack (*gadhavagadh*) an area covering innumerable islands and seas in this transverse world with numerous *Asur Kumar* gods and goddesses. (This means that with his power of transmutation he can create so many forms that are enough to fill an area covering innumerable islands and seas.) However, Gautam ! The aforesaid great power of that *Samanik Dev* (god of same status) of Chamarendra, the overlord of *Asurs* is theoretical. In practice he has never performed transmutation (to said extant), neither he does, nor will he do.

५. [प्र.] जइ णं भंते ! चमरस्स णं भंते ! असुरिंदस्स असुररण्णो सामाणिया देवा एमहिड्ढीया जाव एवतियं च णं पभू विकुव्वित्तए चमरस्स णं भंते ! असुरिंदस्स असुरण्णो तायत्तीसिया देवा केमहिड्ढीया ?

[उ.] तायत्तीसिया देवा जहा सामाणिया तहा नेयव्वा। लोयपाला तहेव। नवरं संखेज्जा दीव–समुद्दा भाणियव्वा।

५. [प्र.] भगवन् ! असुरेन्द्र असुरराज चमर के सामानिक देव यदि इस प्रकार की महती ऋद्धि से सम्पन्न है, तो हे भगवन् ! उस असुरेन्द्र असुरराज चमर के त्रायस्त्रिंशक देव कितनी महान् ऋद्धि वाले है ?

[उ.] हे गौतम ! जैसे सामानिक देवों (ऋद्धि एव विकुर्वणा शक्ति) के विषय मे कहा था, वैसा ही त्रायस्त्रिंशक देवों के विषय मे कहना चाहिए। लोकपालो के विषय में भी इसी तरह कहना चाहिए। किन्तु इतना विशेष कहना चाहिए कि लोकपाल (अपने द्वारा वैक्रिय किये हुए असुरकुमार देव–देवियो के रूपो से) संख्येय द्वीप–समुद्रो को व्याप्त कर सकते है।

5. [Q.] *Bhante* ! When so great ıs the opulence (*rıddhı*) of *Samanik Devs* of Chamarendra, the *Indra* (overlord) of *Asurs*, then how great ıs the opulence (*riddhı*) of *Trayastrınshak Devs* (gods qualified to be priests or ministers) of Chamarendra, the *Indra* (overlord) of *Asurs* ?

[Ans.] Gautam ! As has been stated about (the opulence and capacity of transmutation of) *Samanık Devs* (gods of same status) should be repeated for *Trayastrınshak Devs* (gods qualified to be priests or ministers) The same should also be repeated for *Lok-pals* (protector gods of people). The difference being that *Lok-pals* have the power to pervade only an area covering countable islands and seas (with numerous *Asur Kumar* gods and goddesses created by them).

६. [प्र.] जइ णं भंते ! चमरस्स असुरिंदस्स असुररण्णो लोगपाला देवा एमहिड्ढीया जाव एवतियं च णं पभू विकुव्वित्तए, चमरस्स णं भंते ! असुरिंदस्स असुररण्णो अग्गमहिसीओ देवीओ केमहिड्ढीयाओ जाव केवतियं च णं पभू विकुव्वित्तए ?

[उ.] गोयमा ! चमरस्स णं असुरिंदस्स असुररण्णो अग्गमहिसीओ देवीओ महिड्ढीयाओ जाव महाणुभागाओ। ताओ णं तत्थ साणं साणं भवणाणं, साणं साणं सामाणियसाहस्सीणं, साणं साणं महत्तरियाणं, साणं साणं परिसाणं जाव एमहिड्ढीयाओ, अन्नं जहा लोगपालाणं अपरिसेसं।

६. [प्र.] भगवन् ! जब असुरेन्द्र असुरराज चमर के लोकपाल ऐसी महाऋद्धि वाले हैं, यावत् वे इतना विकुर्वण करने मे समर्थ हैं, तब असुरेन्द्र असुरराज चमर की अग्रमहिषियाँ (पटरानी देवियाँ) कितनी बडी ऋद्धि वाली हैं, यावत् वे कितना विकुर्वण करने में समर्थ हैं ?

[उ.] गौतम ! असुरेन्द्र असुरराज चमर की अग्रमहिषी-देवियाँ महाऋद्धिसम्पन्न हैं, यावत् महाप्रभावशालिनी है, वे अपने-अपने भवनो पर, अपने-अपने एक हजार सामानिक देवों (देवीगण) पर, अपनी-अपनी (सखी) महत्तरिका देवियो पर और अपनी-अपनी परिषदाओं पर आधिपत्य करती हुई विचरती है, यावत् वे अग्रमहिषियाँ ऐसी महाऋद्धि वाली है। इस सम्बन्ध में शेष सब वर्णन लोकपालो के समान कहना चाहिए।

6. [Q.] Bhante ! When so great is the opulence (*riddhi*) . and so on up to capacity of transmutation (*vikurvana*) of *Lok-pals* (protector gods of people) of Chamarendra, the *Indra* (overlord) of *Asurs*, then how great is the opulence (*riddhi*). . and so on up to... capacity of transmutation (*vikurvana*) of chief queens (*Agramahishis*) of Chamarendra, the *Indra* (overlord) of *Asurs* ?

[Ans.] Gautam ! The chief queens (*Agramahishis*) of Chamarendra, the *Indra* (overlord) of *Asurs* have great opulence... and so on up to... influence Reigning over their abodes, their respective one thousand *Samanik Devs* (gods of same status), their respective *Mahattarika Devis* (friendly goddesses), and their respective assemblies (*parishads*) they live . and so on up to.. so great is their opulence. Remaining details should repeated as has been stated about *Lok-pals*.

७. सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति भगवं दोच्चे गोतमे समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता जेणेव तच्चे गोयमे वायुभूई अणगारे तेणेव उवागच्छति, उवागच्छित्ता तच्चं गोयमं वायुभूतिं अणगारं एवं वयासी-एवं खलु गोतमा ! चमरे असुरिंदे असुरराया एमहिड्ढीए तं चेव एवं सव्वं वयासी- एवं खलु गोतमा ! चमरे असुरिंदे असुरराया एमहिड्ढीए तं चेव एवं सव्वं अपुट्ठवागरणं नेयव्वं अपरिसेसियं जाव अग्गमहिसीणं जाव वत्तव्वया समत्ता।

७. 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है; हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है' (यों कहकर) द्वितीय गौतम गोत्रीय अग्निभूति अनगार श्रमण भगवान महावीर स्वामी को वन्दन-नमस्कार करते है, वन्दन-नमस्कार करके जहाँ तृतीय गौतम गोत्रीय वायुभूति अनगार थे, वहाँ आये। उनके निकट पहुँचकर वे, तृतीय गौतम वायुभूति अनगार से यों बोले-हे गौतम ! असुरेन्द्र असुरराज चमर ऐसी महाऋद्धि वाला

है, इत्यादि समग्र वर्णन (चमरेन्द्र, अग्रमहिषी देवियो तक का सारा वर्णन) अपृष्टव्याकरण (प्रश्न पूछे बिना ही उत्तर) के रूप मे यहाँ कहना चाहिए।

7. "*Bhante* ! Indeed that is so. Indeed that is so." With these words the second Gautam, ascetic Agnibhuti, paid homage and obeisance to Shraman Bhagavan Mahavir. After paying homage and obeisance he went where the third Gautam, ascetic Vayubhuti was seated. Coming near, he said to the third Gautam, ascetic Vayubhuti—Gautam ! So great is the opulence of Chamarendra, the *Indra* (overlord) of *Asurs* All aforesaid description (about Chamarendra his retinue and queens) should be stated here as *aprishtavyakaran* (answer without any question).

८. तेणं से तच्चे गोयमे वायुभूती अणगारे दोच्चस्स गोतमस्स अग्गिभूतिस्स अणगारस्स एवमाइक्खमाणस्स भासमाणस्स, पण्णवेमाणस्स परूवेमाणस्स एयमट्ठं नो सद्दहति, नो पत्तियति, नो रोएइ; एयमट्ठं असद्दहमाणे अपत्तियमाणे अरोएमाणे उट्ठाए उट्ठेति, उट्ठित्ता जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ जाव पज्जुवासमाणे एवं वयासी–एवं खलु भंते ! मम दोच्चे गोतमे अग्गिभूती अणगारे एवमाइक्खति भासइ पण्णवेइ परूवेइ–एवं खलु गोतमा ! चमरे असुरिंदे असुरराया महिड्ढीए जाव महाणुभावे से णं तत्थ चोत्तीसाए भवणावाससयसहस्साणं एवं तं चेव सव्वं अपरिसेसं भाणियव्वं जाव अग्गमहिसीणं वत्तव्वया समत्ता।

[प्र.] से कहमेयं भंते ! एवं ?

[उ.] 'गोयमा' दि समणे भगवं महावीरे तच्चं गोतमं वायुभूतिं अणगारं एवं वयासि–जं णं गोतमा ! तव दोच्चे गोयमे अग्गिभूती अणगारे एवमाइक्खइ ४–"एवं खलु गोयमा ! चमरे असुरिंदे असुरराया महिड्ढीए एवं तं चेव सव्वं जाव अग्गमहिसीओ।

सच्चे णं एसमट्ठे, अहं पि णं गोयमा ! एवमाइक्खामि भासेमि पन्नवेमि परूवेमि एवं खलु गोयमा ! चमरे असुरिंदे असुरराया जाव महिड्ढीए सो चेव [बितिओ गमो भाणियव्वो] जाव अग्गमहिसीओ, सच्चे णं एसमट्ठे।

८. तदनन्तर अग्निभूति अनगार द्वारा कथित, भाषित, प्रज्ञापित (निवेदित) और प्ररूपित उपर्युक्त बात पर तृतीय गौतम वायुभूति अनगार को श्रद्धा नही हुई, प्रतीति नहीं हुई, न ही उन्हें रुचिकर लगी। अतः उक्त बात पर श्रद्धा, प्रतीति और रुचि न करते हुए वे तृतीय गौतम वायुभूति अनगार उठे और उठकर जहाँ श्रमण भगवान महावीर स्वामी विराजमान थे, वहाँ (उनके पास) आये और यावत् उनकी पर्युपासना करते हुए इस प्रकार बोले–भगवन् ! द्वितीय गौतम अग्निभूति अनगार ने मुझसे इस प्रकार कहा, इस प्रकार भाषण किया, इस प्रकार बतलाया और प्ररूपित किया कि–'असुरेन्द्र असुरराज चमर ऐसी महान् ऋद्धि वाला है, यावत् ऐसा महान् प्रभावशाली है कि वह चौंतीस लाख भवनावासों आदि पर आधिपत्य करता हुआ विचरता है।' (यहाँ उसकी अग्रमहिषियों तक का शेष सब वर्णन पूर्ववत् कहना चाहिए); तो हे भगवन् ! यह बात कैसे है ?'

'हे गौतम !' इस प्रकार सम्बोधन करके श्रमण भगवान महावीर ने तृतीय गौतम वायुभूति अनगार से इस प्रकार कहा–'गौतम ! द्वितीय गौतम अग्निभूति अनगार ने तुमसे जो इस प्रकार कहा, भाषित किया, बतलाया और प्ररूपित किया कि 'हे गौतम ! असुरेन्द्र असुरराज चमर ऐसी महाऋद्धि वाला है; इत्यादि उसकी अग्रमहिषियों तक का समग्र वर्णन। हे गौतम ! यह कथन सत्य है। मै भी इसी तरह कहता हूँ, भाषण करता हूँ, बतलाता हूँ, और प्ररूपित करता हूँ कि असुरेन्द्र असुरराज चमर महाऋद्धिशाली है, इत्यादि उसकी अग्रमहिषियो तक का समग्र वर्णनरूप द्वितीय गम (आलापक) यहाँ कहना चाहिए। (अत· हे गौतम ! द्वितीय गौतम अग्निभूति द्वारा कथित) यह बात सत्य है।'

8. These words said, asserted, elaborated and propagated by ascetic Agnibhuti failed to evoke faith, trust and interest in the third Gautam, ascetic Vayubhuti. Therefore, having no faith, trust and interest in the said statement, the third Gautam, ascetic Vayubhuti got up and came where Shraman Bhagavan Mahavir was seated. Arriving there .. and so on up to. did his worship and submitted—*Bhante* ! Ascetic Agnibhuti, the second Gautam, has said, asserted, elaborated and propagated to me that—'So great is the opulence of Chamarendra, the *Indra* (overlord) of *Asurs* that he reigns over 3.4 million divine abodes (etc.).' (All aforesaid description up to his retinue and queens should be repeated here.) Bhante ! Is it so ?

"O Gautam !" Addressing thus, Shraman Bhagavan Mahavir said to ascetic Vayubhuti, the third Gautam—Gautam ! Ascetic Agnibhuti, the second Gautam, said, asserted, elaborated and propagated to you that—'So great is the opulence of Chamarendra, the *Indra* (overlord) of *Asurs*... and so on up to... description of his *Agramahishis* (chief queens).' O Gautam ! This statement is true. I too say, assert, elaborate and propagate that—'So great is the opulence of Chamarendra, the *Indra* (overlord) of *Asurs*... and so on up to... description of his *Agramahishis* (chief queens)' in the aforesaid second part of the statement (*Dvitiya Gum*) (Thus Gautam ! What Agnibhuti, the second Gautam has said) That is true.

९. सेवं भंते सेवं भंते त्ति तच्चे गोयमे वायुभूती अणगारे समणे भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ, वंदित्ता, नमंसित्ता जेणेव दोच्चे गोयमे अग्गिभूती अणगारे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता दोच्चं गोयमं अग्गिभूतिं अणगारं वंदइ नमंसति, वंदित्ता, नमंसित्ता एयमट्ठं सम्मं विणएणं भुज्जो भुज्जो खामेति।

९. 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है; (जैसा आप फरमाते हैं) भगवन् ! यह इसी प्रकार है'; यों कहकर तृतीय गौतम वायुभूति अनगार ने श्रमण भगवान महावीर को वन्दन-नमस्कार किया और फिर जहाँ द्वितीय गौतम अग्निभूति अनगार थे, वहाँ उनके निकट आये। वहाँ आकर द्वितीय गौतम

अग्निभूति अनगार को वन्दन-नमस्कार किया और पूर्वोक्त बात के लिए (उनकी कही हुई बात नही मानी थी, इसके लिए) उनसे सम्यक् प्रकार से विनयपूर्वक बार-बार क्षमायाचना की।

9. "*Bhante* ! Indeed that is so. Indeed that is so." With these words the third Gautam, ascetic Vayubhuti, paid homage and obeisance to Shraman Bhagavan Mahavir After paying homage and obeisance, he went where the second Gautam, ascetic Agnibhuti, was seated. Coming near, he paid homage and obeisance to the second Gautam, ascetic Agnibhuti and sought his forgiveness again and again with great sincerity and humility (for failing to accept his statement).

विवेचन : दो दृष्टान्तों द्वारा स्पष्टीकरण–चमरेन्द्र वैक्रियकृत बहुत-से असुरकुमार देव-देवियो से इस सम्पूर्ण जम्बूद्वीप को किस प्रकार ठसाठस भर देता है ? इसकी सघनता को स्पष्ट करने के लिए यहाँ दो दृष्टान्त दिये गये है -वृत्तिकार ने इनकी व्याख्या इस प्रकार की है-(१) जैसे कोई युवापुरुष कामोद्रेक की अवस्था मे युवती का हाथ दृढता से पकडता है, वैसे ही वैक्रिय शक्ति द्वारा निर्मित रूप सम्पूर्ण जम्बूद्वीप मे सघन रूप मे फैल जाते है। (२) जैसे गाडी के पहिये की धुरी चारो ओर आरो से सम्बद्ध रहती है, वैसे ही सम्पूर्ण जम्बूद्वीप वैक्रिय रूपो से व्याप्त हो जाता है। वृद्ध आचार्यों ने इस प्रकार व्याख्या की है-जैसे-यात्रा (मेले) आदि मे जहाँ बहुत भीड होती है, वहाँ युवती स्त्री युवा पुरुष के हाथ को दृढता से पकडकर उसके साथ सलग्न होकर चलती हुई भी उस पुरुष से पृथक् दिखाई देती है, वैसे ही वैक्रियकृत अनेक रूप वैक्रियकर्ता मूल पुरुष के साथ सलग्न होते हुए भी उससे पृथक् दिखाई देते है। अथवा अनेक आरो से जुडी पहिये की धुरी सघन (पोलरहित) और छिद्ररहित दिखाई देती है, इसी तरह से वह असुरेन्द्र असुरराज चमर अपने शरीर के साथ प्रतिबद्ध (सलग्न) वैक्रियकृत अनेक असुरकुमार देव-देवियो से पृथक् दिखाई देता हुआ इस सम्पूर्ण जम्बूद्वीप को ठसाठस भर देता है। इसी प्रकार अन्य देवो की विकुर्वणा-शक्ति के विषय मे समझ लेना चाहिए।

वैक्रिय-समुद्घात मे क्या रत्नादि औदारिक पुद्गलो का ग्रहण होता है ? इसका समाधान यह है कि वैक्रिय-समुद्घात मे ग्रहण किये जाने वाले रत्न आदि पुद्गल औदारिक नही होते, वे रत्न-सदृश सारयुक्त होते हैं, कुछ आचार्यों के मतानुसार रत्नादि औदारिक पुद्गल भी वैक्रिय-समुद्घात द्वारा ग्रहण करते समय वैक्रिय पुद्गल बन जाते है। *(भगवतीसूत्र . विवेचन, प घेवरचन्द जी, भाग २, पृष्ठ ५३१)*

Elaboration—Explanation with two examples—How does Chamarendra fill Jambu Dveep with numerous transmuted *Asur Kumar* gods and goddesses ? Two examples have been given to convey the compact nature of this crowding. The commentator (*Vritti*) has elaborated them as follows—(1) As a lusty young man tightly holds the hand of a young woman, in the same way the forms created by *Vaikriya* power compactly fill the whole Jambu Dveep (2) As the spokes of a wheel tightly held by its axle, in the same way the *Vaikriya* forms tightly envelope the whole Jambu Dveep The senior *acharyas* have explained as follows—In a crowded fair a young woman holds the hand of her young male companion and walks in his close proximity, but is still separately

visible. In the same way numerous *Vaikriya* forms although connected with the original are separately visible. The axle connected with many spokes has no visible gaps or holes; in the same way Chamarendra, although connected with numerous transmuted *Asur Kumar* gods and goddesses, is separately visible but still tightly packs the whole Jambu continent The same is true for the power of transmutation of other gods.

Are gross particles acquired during the process of *Vaikriya Samudghat* ? The answer is that the particles of gems acquired during the process of *Vaikriya Samudghat* are not gross. They are minute but have purity like gems. However, some *acharyas* are of the opinion that gems and other gross particles get transformed into *vaikriya pudgals* (transmutable particles). *(Bhagavati Sutra elaboration by Pt. Ghevar Chand, part-2, p 539)*

वैरोचनेन्द्र बलि की ऋद्धि OPULENCE OF VAIROCHANENDRA BALI

१०. [प्र.] तए णं से तच्चे गोयमे वायुभूती अणगारे दोच्चेणं गोयमेणं अग्गिभूइणा अणगारेण सद्धिं जेणेव समणे भगवं महावीरं जाव पज्जुवासमाणे एवं वयासी—जइ णं भंते ! चमरे असुरिंदे असुरराया एमहिड्ढीए जाव एवइयं च णं पभू विकुव्वित्तए, बली णं भंते ! वइरोयणिंदे वइरोयणराया केमहिड्ढीए जाव केवइयं च णं पभू विकुव्वित्तए ?

[उ.] गोयमा ! बली णं वइरोयणिंदे वइरोयणराया महिड्ढीए जाव महाणुभागे। से णं तत्थ तीसाए भवणावाससयसहस्साणं, सट्ठीए सामाणियसाहस्सीणं सेसं जहा चमरस्स, तहा बलिस्सवि णेयव्वं णवरं सातिरेगं केवलकप्पं जंबुद्दीवं दीवं ति भाणियव्वं। तं चेव णिरवसेसं णेयव्वं, णवरं णाणत्तं जाणियव्वे भवणेहिं सामाणिएहिं य।

सेवं भंते ! सेवं भंते ! ति तच्चे गोयमे वाउभूइ विहरइ।

१०. [प्र.] इसके पश्चात् तीसरे गौतम (–गोत्रीय) वायुभूति अनगार द्वितीय गौतम अग्निभूति अनगार के साथ जहाँ श्रमण भगवान महावीर थे वहाँ आये, यावत् श्रमण भगवान महावीर की पर्युपासना करते हुए पूछा–'भगवन् ! यदि असुरेन्द्र असुरराज चमर इतनी विशाल ऋद्धि वाला है, यावत् इतनी विकुर्वणा-शक्ति से सम्पन्न है, तो हे भगवन् ! वैरोचनेन्द्र वैरोचनराज बलि (उत्तर दिशा का इन्द्र) कितनी बड़ी ऋद्धि वाला है ? यावत् वह कितनी विकुर्वणा करने मे समर्थ है ?'

[उ.] गौतम ! वैरोचनेन्द्र वैरोचनराज बलि महाऋद्धि-सम्पन्न है, यावत् महाप्रभावशाली है। वह वहाँ तीस लाख भवनावासों का तथा साठ हजार सामानिक देवों का अधिपति है। जैसे चमरेन्द्र के सम्बन्ध में वर्णन किया गया, वैसे बलि के विषय में भी शेष वर्णन जान लेना चाहिए। विशेषता इतनी ही है कि बलि वैरोचनेन्द्र अपनी विकुर्वणा-शक्ति से सातिरेक सम्पूर्ण जम्बूद्वीप (जम्बूद्वीप से कुछ

अधिक स्थल) को भर देता है। शेष सारा वर्णन पूर्ववत् (उसी तरह) समझ लेना चाहिए। अन्तर इतना यह है कि भवन ३० लाख और सामानिक देवो की संख्या साठ हजार है।

'हे भगवन् ! जैसा आप कहते हैं, वह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह उसी प्रकार है', यों कहकर तृतीय गौतम वायुभूति अनगार ने श्रमण भगवान महावीर स्वामी को वन्दन-नमस्कार किया और फिर पर्युपासना करने लगे।

10. [Q.] After that the third Gautam, ascetic Vayubhuti, with the second Gautam, ascetic Agnibhuti, came where Shraman Bhagavan Mahavir was seated... and so on up to after doing worship submitted—*Bhante* ! When so great is the opulence (*riddhi*)... and so on up to... capacity of transmutation (*vikurvana*) of Chamarendra, the Indra (overlord) of *Asurs*, then how great is the opulence (*riddhi*).. and so on up to . capacity of transmutation (*vikurvana*) of Vairochanendra Bali, the *Indra* (overlord) of *Vairochanas* ?

[Ans.] Gautam ! Vairochanendra Bali, the *Indra* (overlord) of *Vairochanas* has great opulence .. and so on up to .. influence He reigns over three million divine abodes and sixty thousand *Samanik Devs* (gods of same status). The rest of the description about Bali should be repeated as has been stated about Chamarendra The difference being that Vairochanendra Bali can pervade an area slightly more than Jambu Dveep with his power of transmutation (*vikurvana*) The remaining description should be repeated verbatim as aforesaid with the difference that the number of abodes is three million and that of *Samanik Devs* is sixty thousand.

"*Bhante* ! Indeed that is so Indeed that is so " With these words... and so on up to.. the third Gautam, ascetic Vayubhuti resumed his activities.

विवेचन : वैरोचनेन्द्र का परिचय—ये उत्तर दिशावर्ती असुरकुमारो के इन्द्र है। बलि वैरोचनेन्द्र का सब वर्णन प्रायः चमरेन्द्र की तरह है। इसकी विकुर्वणा-शक्ति सातिरेक जम्बूद्वीप तक की है, क्योंकि उत्तर दिशा के इन्द्र होने से चमरेन्द्र की अपेक्षा वैरोचनेन्द्र बलि की लब्धि विशिष्टतर होती है। *(वृत्ति, पत्रांक १५७)*

Elaboration—Vairochanendra—He is the overlord of *Asur Kumar* gods of the north. All the description of Vairochanendra Bali is almost same as that of Chamarendra. His power of transmutation extends to slightly more than Jambu Dveep. This is because being the overlord of northern direction the opulence of Vairochanendra Bali is more than that of Chamarendra. *(Vritti, leaf 157)*

११. [प्र.] तए णं से दोच्चे गोयमे अग्गिभूती अणगारे समणं भगवं वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी–जइ णं भंते ! बली वइरोयणिंदे वइरोयणराया एमहिड्ढीए जाव एवइयं च णं पभू विकुव्वित्तए धरणे णं भंते ! नागकुमारिंदे नागकुमारराया केमहिड्ढीए जाव केवतियं च णं पभू विकुव्वित्तए ?

[उ.] गोयमा ! धरणे णं नागकुमारिंदे नागकुमारराया एमहिड्ढीए जाव से णं तत्थ चोयालीसाए भवणावाससयसहस्साणं, छण्हं सामाणियसाहस्सीणं, तायत्तीसाए तायत्तीसगाणं, चउण्हं लोगपालाणं, छण्हं अग्गमहिसीणं सपरिवाराणं, तिण्हं परिसाणं, सत्तण्हं अणियाणं, सत्तण्हं अणियाहिवईणं, चउवीसाए आयरक्खदेवसाहस्सीणं, अन्नेसिं च जाव विहरइ। एवइयं च णं पभू विउव्वित्तए–से जहानामए जुवइं जुवाणे जाव पभू केवलकप्पं जंबुद्दीवं दीवं जाव तिरियमसंखेज्जे दीवसमुद्दे बहूहिं नागकुमारीहिं जाव विउव्विस्संति वा।

सामाणिय–तायत्तीस–लोगपाला अग्गमहिसीओ य तहेव जहा चमरस्स। नवरं संखिज्जे दीव–समुद्दे भाणियव्वं। एवं जाव थणियकुमारा, वाणमंतर–जोतिसिया वि। नवरं दाहिणिल्ले सव्वे अग्गिभूती पुच्छति, उत्तरिल्ले सव्वे वाउभूती पुच्छइ।

११. [प्र.] तत्पश्चात् द्वितीय गौतम अग्निभूति अनगार ने श्रमण भगवान महावीर को वन्दन–नमस्कार किया। वन्दन–नमस्कार करके इस प्रकार कहा–'भगवन् ! यदि वैरोचनेन्द्र वैरोचनराज बलि इस प्रकार की महाऋद्धि वाला है यावत् विकुर्वणा करने में इतनी सामर्थ्य है, तो भगवन् ! नागकुमारेन्द्र नागकुमारराज धरण कितनी बडी ऋद्धि वाला है ? यावत् कितनी विकुर्वणा करने में समर्थ है ?'

[उ.] गौतम ! वह नागकुमारेन्द्र नागकुमारराज धरणेन्द्र महान् ऋद्धि वाला है, यावत् वह चवालीस लाख भवनावासो पर, छह हजार सामानिक देवों पर, तेतीस त्रायस्त्रिंशक देवो पर, चार लोकपालों पर, परिवार सहित छह अग्रमहिषियों पर, तीन सभाओ पर, सात सेनाओं पर, सात सेनाधिपतियों पर और चौबीस हजार आत्मरक्षक देवो पर तथा अन्य अनेक दक्षिण दिशावर्ती नागकुमार देवों और देवियो पर आधिपत्य करता हुआ रहता है। उसकी विकुर्वणा–शक्ति इतनी है कि जैसे युवा पुरुष, युवती स्त्री के कर–ग्रहण करके अथवा गाड़ी के पहिये की धुरी में संलग्न आरो के दृष्टान्त से वह अपने द्वारा वैक्रियकृत बहुत से नागकुमार देवों और नागकुमार देवियों से सम्पूर्ण जम्बूद्वीप को भरने में समर्थ है और तिर्यग्लोक के संख्येय द्वीप–समुद्रों जितने स्थल को भरने की शक्ति वाला है। परन्तु यह उसकी शक्तिमात्र है, क्रियारहित विषय है, किन्तु ऐसा उसने कभी किया नहीं, करता नहीं और भविष्य में करेगा भी नहीं।

धरणेन्द्र के सामानिक देव, त्रायस्त्रिंशक देव, लोकपाल और अग्रमहिषियों की ऋद्धि आदि तथा वैक्रिय शक्ति का वर्णन चमरेन्द्र के वर्णन की तरह कहना चाहिए। विशेषता इतनी है कि इन सबकी विकुर्वणा–शक्ति सख्यात द्वीप–समुद्रों तक के स्थल को भरने की समझनी चाहिए। इसी तरह स्तनितकुमारो तक सभी भवनपति देवो, वाणव्यन्तर एवं ज्योतिष्क देवो (के इन्द्र और उनके अधीनस्थ देववर्ग की ऋद्धि आदि तथा विकुर्वणा–शक्ति) के सम्बन्ध में जानना चाहिए। विशेष यह है कि दक्षिण दिशा के सभी इन्द्रों के विषय में द्वितीय गौतम अग्निभूति अनगार प्रश्न पूछते है और उत्तर दिशा के सभी इन्द्रों के विषय में तृतीय गौतम वायुभूति अनगार प्रश्न करते हैं।

11. [Q.] After that the second Gautam, ascetic Agnibhuti, came, paid homage and obeisance to Shraman Bhagavan Mahavir and submitted—*Bhante* ! When so great is the opulence (*riddhi*). . and so on up to... capacity of transmutation (*vikurvana*) of Vairochanendra Bali, the *Indra* (overlord) of *Vairochanas*, then how great is the opulence (*riddhi*)... and so on up to... capacity of transmutation (*vikurvana*) of Naag Kumarendra Dharan, the *Indra* (overlord) of *Naag Kumars* ?

[Ans.] Gautam ! Naagkumarendra Dharan, the *Indra* (overlord) of *Naag Kumars* has great opulence . and so on up to... influence. He lives reigning over 4.4 million divine abodes, six thousand *Samanik Devs* (gods of same status), thirty three *Trayastrinshak Devs* (gods qualified to be priests or ministers), four *Lok-pals*, six *Agramahishis* (chief queens) with their retinue, three assemblies, seven armies, seven commanders and twenty four thousand guard-gods as well as numerous *Naag Kumar* gods and goddesses of the south direction His capacity of transmutation (*vikurvana*) is as follows—He has the power to pervade (*akirna*) the whole of Jambudveep continent and countable continents and seas in this transverse world with numerous *Naag Kumar* gods and goddesses, exactly like a young man tightly holds the hand of a young woman or like the spokes of a wheel tightly held by its axle. However, the aforesaid great power is theoretical In practice he has never performed transmutation (to said extant), neither he does, nor will he do.

The description about the opulence and power of transmutation of *Samanik Devs* (gods of same status), *Trayastrinshak Devs* (gods qualified to be priests or ministers), *Lok-pals* and *Agramahishis* (chief queens) of Dharanendra should be repeated as has been stated about Chamarendra. The difference being that the power of transmutation of all these is capable of pervading countable continents and seas. The same description should be repeated for (the overlords and subordinate gods of—) all abode dwelling gods up to *Stanit Kumars, Vanavyantars* (interstitial gods) and *Jyotishk* (stellar gods). The only difference being that the information for all *Indras* of southern direction is sought by the second Gautam, ascetic Agnibhuti and that for all *Indras* of northern direction is sought by the third Gautam, ascetic Vayubhuti.

विवेचन : धरणेन्द्र का परिचय–ये दक्षिण दिशावर्ती नागकुमारों के इन्द्र है। इनके निवास, लोकपालो का उपपात पर्वत, पाँच युद्ध सैन्य, पाँच सेनापति एव छह अग्रमहिषियो का वर्णन स्थानांग एवं प्रज्ञापनासूत्र मे है।

भवनपति देवो के दो निकाय हैं। दक्षिण निकाय (दाक्षिणात्य) और उत्तर निकाय (औदीच्य)। निम्न जाति के निम्न नाम के दस-दस प्रकार के भवनपति दोनों निकायों में होने से बीस भेद होते हैं-(१) असुरकुमार, (२) नागकुमार, (३) विद्युतकुमार, (४) सुपर्णकुमार, (५) अग्निकुमार, (६) पवनकुमार, (७) उदधिकुमार, (८) द्वीपकुमार, (९) दिशाकुमार, और (१०) स्तनितकुमार। इन बीस प्रकार के भवनपति देवो के दस दक्षिण निकाय के और दस उत्तर निकाय के कुल बीस इन्द्र हैं।

दक्षिण निकाय के इन्द्र-(१) चमर, (२) धरण, (३) वेणुदेव, (४) हरिकान्त, (५) अग्निशिख, (६) पूर्ण, (८) जलकान्त, (८) अमित, (९) विलम्ब, और (१०) घोष।

उत्तर निकाय के इन्द्र-(१) बलि, (२) भूतानन्द, (३) वेणुदालि, (४) हरिस्सह, (५) अग्निमाणव, (६) वशिष्ठ, (७) जलप्रभ, (८) अमितवाहन, (९) प्रभजन, और (१०) महाघोष।

सामानिक देव संख्या-चमरेन्द्र के ६४ हजार और बलीन्द्र के ६० हजार सामानिक देव है, शेष सब इन्द्रो के प्रत्येक ६-६ हजार सामानिक देव हैं। **आत्मरक्षक देव संख्या**-जिसके जितने सामानिक देव होते है, उससे चौगुने आत्मरक्षक देव होते हैं। **अग्रमहिषियों की संख्या**-चमरेन्द्र और बलीन्द्र के पाँच-पाँच; शेष धरणेन्द्र आदि प्रत्येक इन्द्र के छह-छह अग्रमहिषियाँ है। त्रायस्त्रिंश और लोकपालों की संख्या नियत है।

व्यन्तर देवों के इन्द्र-व्यन्तर देवो के ८ प्रकार हैं-(१) पिशाच, (२) भूत, (३) यक्ष, (४) राक्षस, (५) किन्नर, (६) किपुरुष, (७) महोरग, और (८) गन्धर्व। इनमें से प्रत्येक प्रकार के व्यन्तर देवों के दो-दो इन्द्र होते है अर्थात् १६ दक्षिण दिशा के, १६ उत्तर दिशा के। इस प्रकार कुल बत्तीस इन्द्र हैं। **व्यन्तर इन्द्रों का परिवार**-वाणव्यन्तर देवो मे प्रत्येक इन्द्र के चार-चार हजार सामानिक देव और इनसे चार गुने अर्थात् प्रत्येक के १६-१६ हजार आत्मरक्षक देव होते है। इनमें त्रायस्त्रिंश और लोकपाल नही होते। प्रत्येक इन्द्र के चार-चार अग्रमहिषियाँ होती हैं।

ज्योतिष्केन्द्र परिवार-ज्योतिष्क निकाय मे ५ प्रकार के देव हैं-सूर्य, चन्द्र, ग्रह, नक्षत्र और तारा। इनमे सूर्य और चन्द्र दो मुख्य एवं इन्द्र है। इनके भी प्रत्येक इन्द्र के चार-चार हजार सामानिक देव, १६-१६ हजार आत्मरक्षक और चार-चार अग्रमहिषियाँ होती हैं। ज्योतिष्क देवेन्द्रो के त्रायस्त्रिंश और लोकपाल नहीं होते।

वैक्रिय शक्ति-इनमे से दक्षिण के भवनपति देव और सूर्यदेव अपने वैक्रियकृत रूपो से सम्पूर्ण जम्बूद्वीप को ठसाठस भरने मे समर्थ है, और उत्तर दिशा के देव और चन्द्रदेव अपने वैक्रियकृत रूपो से सम्पूर्ण जम्बूद्वीप से कूछ अधिक स्थल को भरने मे समर्थ है। *(प्रज्ञापनासूत्र, तत्त्वार्थसूत्र, अ. ४, सू ६ व ११ का भाष्य)*

Elaboration—Dharanendra—He is the overlord (*Indra*) of *Naag Kumar* gods of the southern direction. The description of their abodes, the *Upapat Parvat* of *Lok-pals*, five armies, five commanders and six chief queens is available in *Sthananga* and *Prajnapana Sutra*.

Bhavan-pati Devs (abode dwelling gods have two classes (*nikaya*)— *Dakshin Nikaya* or *Dakshinatya* (southern class) and *Uttar Nikaya* or *Audichya* (northern class) There are ten clans of *Bhavan-pati Devs* (abode dwelling gods) in each of these classes with the same names making a total of twenty groups—(1) *Asur-kumar*, (2) *Naag-kumar*,

(3) *Suparn-kumar*, (4) *Vidyut-kumar*, (5) *Agni-kumar*, (6) *Dveep-kumar*, (7) *Udadhi-kumar*, (8) *Disha-kumar*, (9) *Vayu-kumar*, and (10) *Stanit-kumar*. Of these twenty groups of *Bhavan-pati Devs* (abode dwelling gods) there are twenty *Indras* (overlords), ten of *Dakshin Nikaya* (southern class) and ten of *Uttar Nikaya* (northern class).

Indras of Dakshin Nikaya (southern class)—(1) Chamar, (2) Dharan, (3) Venudev, (4) Harikant, (5) Agnishikh, (6) Purna, (7) Jalakant, (8) Amit, (9) Velamb, and (10) Ghosh.

Indras of Uttar Nikaya (northern class)—(1) Bali, (2) Bhootanand, (3) Venudali, (4) Harissaha, (5) Agnimanav, (6) Vishisht, (7) Jalaprabh, (8) Amit-vahan, (9) Prabhanjan, and (10) Mahaghosh.

Number of Samanik Devs—Chamarendra has 64 thousand *Samanik Devs* (gods of same status) and Balindra 60 thousand, all other *Indras* have 6 thousand *Samanik Devs* each. Number of *Atmarakshak Devs*—the number of *Atmarakshak Devs* (guard-gods) is four times that of *Samanik Devs* for each of the said *Indras*. Number of *Agramahishis*—Chamarendra and Balindra have five *Agramahishis* (chief queens) each, all the remaining *Indras* including Dharanendra have five *Agramahishis* each The number of *Trayastrinshak* and *Lok-pal* gods is fixed for all.

Sixteen Indras of Vyantar Devs—*Vyantar* or *Vanavyantar Devs* (interstitial gods) are of eight classes—(1) *Pishach*, (2) *Bhoot*, (3) *Yaksha*, (4) *Rakshas*, (5) *Kinnar*, (6) *Kimpurush*, (7) *Mahorag*, and (8) *Gandharva*. Each of these *Vyantar Devs* have two *Indras* (overlords), making sixteen of northern direction and sixteen of southern direction. Thus in total there are thirty two *Indras*. The retinue of *Vyantar Devs*—In *Vanavyantar* gods each *Indra* has four thousand *Samanik Devs* (gods of same status) and four times of this or sixteen thousand *Atmarakshak Devs* They do not have *Trayastrinshak* and *Lok-pal* gods. Each of these *Indras* have four *Agramahishis*.

Retinue of Jyotishkendra—The *Jyotishk* class has five groups of gods—*Surya, Chandra, Graha, Nakshatra* and *Tara*. Of these *Surya* and *Chandra* are main and *Indras* as well. Each of their *Indras* also has four thousand *Samanik Devs* (gods of same status), sixteen thousand *Atmarakshak Devs* and four *Agramahishis*. They do not have *Trayastrinshak* and *Lok-pal* gods.

Vaikriya Shakti (power of transmutation)—Of these *Bhavan-pati* gods of the south direction and Surya Dev have the power to pervade and

tightly pack whole of Jambu Dveep with their transmuted forms. *Bhavan-pati* gods of the north direction and *Chandra Dev* have the power to pervade and tightly pack a little more area than that of Jambu Dveep with their transmuted forms. *(Prajnapana Sutra; Tattvarth Sutra Bhashya, 4/6 and 11)*

शक्रेन्द्र आदि देवों की ऋद्धि OPULENCE OF SHAKRENDRA AND OTHER GODS

१२. [प्र.] "भंते !" त्ति भगवं दोच्चे गोयमे अग्गिभूइ अणगारे समणं भगवं महावीर वंदति नमंसति, वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी–जइ णं भंते ! जोतिसिंदे जोतिसराया एमहिड्ढीए जाव एवइयं च णं पभू विकुव्वित्तए सक्के णं भंते ! देविंदे देवराया केमहिड्ढीए जाव केवइयं च णं पभू विउव्वित्तए ?

[उ.] गोयमा ! सक्के णं देविंदे देवराया महिड्ढीए जाव महाणुभागे। से णं तत्थ बत्तीसाए विमाणावाससयसहस्साणं चउरासीए सामाणियसाहस्सीणं जाव चउण्हं चउरासीणं आयरक्खदेवसाहस्सीणं अन्नेसिं च जाव विहरइ। एमहिड्ढीए जाव एवतियं च णं पभू विकुव्वित्तए। एवं जहेव चमरस्स तहेव भाणियव्वं, नवरं दो केवलकप्पे जंबुद्दीवे दीवे, अवसेसं तं चेव। एस णं गोयमा ! सक्कस्स देविंदस्स देवरण्णो इमेयारूवे विसए विसयमेत्ते णं बुइए नो चेव णं संपत्तीए विकुव्विंसु वा विकुव्वति वा विकुव्विस्सति वा।

१२. [प्र.] 'भगवन् !' इस प्रकार सम्बोधन करके द्वितीय गणधर भगवान गौतमगोत्रीय अग्निभूति अनगार ने श्रमण भगवान महावीर को वन्दन-नमस्कार किया। वन्दन-नमस्कार करके पूछा–"भगवन् ! यदि ज्योतिष्केन्द्र ज्योतिष्कराज ऐसी महाऋद्धि वाला है, यावत् इतनी वैक्रिय शक्ति वाला है, तो देवेन्द्र देवराज शक्र कितनी महाऋद्धि वाला है और कितनी वैक्रिय शक्ति वाला है ?

[उ.] गौतम ! देवेन्द्र देवराज शक्र महान् ऋद्धि वाला है यावत् महाप्रभावशाली है। वह वहाँ बत्तीस लाख विमानवासो पर तथा चौरासी हजार सामानिक देवो पर यावत् (त्रायस्त्रिशक देवों एवं लोकपालों पर) तीन लाख छत्तीस हजार आत्मरक्षक देवो पर, दूसरे बहुत-से देवों पर आधिपत्य करता है। उसकी वैक्रिय शक्ति के विषय में चमरेन्द्र की तरह सब कथन यहाँ भी करना चाहिए; विशेष यह है कि (वह अपने वैक्रियकृत रूपों से) दो सम्पूर्ण जम्बूद्वीप जितने स्थल को भरने में समर्थ है; और शेष सब पूर्ववत् है। (अर्थात्-तिरछे असंख्यात द्वीप-समुद्रो जितने स्थल को भरने में समर्थ है।) गौतम ! देवेन्द्र देवराज शक्र की यह इस रूप की वैक्रिय शक्ति तो केवल शक्तिरूप (क्रियारहित शक्ति) है, किन्तु साक्षात् क्रिया द्वारा उसने ऐसी विक्रिया की नही, करता नही और न भविष्य में करेगा।

12. [Q.] *"Bhante !"* Addressing thus the second Gautam, ascetic Agnibhuti paid homage and obeisance to Shraman Bhagavan Mahavir and said—"When so great is the opulence (*riddhi*)... and so on up to... capacity of transmutation (*vikurvana*) of Jyotishkendra, the *Indra* (overlord) of *Jyotishks*, then how great is the opulence (*riddhi*). and so on up to... capacity of transmutation (*vikurvana*) of Devendra Shakra, the *Indra* (overlord) of *Devs* (gods) ?"

[Ans.] Gautam ! Devendra Shakra, the *Indra* (overlord) of *Devs* (gods) has great opulence... and so on up to... influence. He reigns over 3.2 million celestial vehicles (*vimaan-vas*) and eighty four thousand *Samanik Devs* (gods of same status) .. and so on up to... (*Trayastrinshak* and *Lok-pal* gods), three hundred thirty six thousand *Atmarakshak Devs* (guard gods) and numerous other gods. The description about his power of transmutation (*Vaikriya shakti*) should be repeated as has been stated about Chamarendra The difference being that he can pervade an area equivalent to that of two Jambu Dveeps with his transmuted forms. However, Gautam ! The aforesaid great power is theoretical. In practice he has never performed transmutation (to said extant), neither he does, nor will he do.

१३. [प्र.] जइ णं भंते ! सक्के देविंदे देवराया एमहिड्ढीए जाव एवइयं च णं पभू विकुव्वित्तए एवं खलु देवाणुप्पियाणं अंतेवासी तीसए णामं अणगारे पगइभद्दए जाव विणीए छट्ठंछट्ठेणं अणिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं अप्पाणं भावेमाणे बहुपडिपुण्णाइं अट्ठ संवच्छराइं सामण्णपरियागं पाउणित्ता मासियाए संलेहणाए अत्ताणं झूसेत्ता सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए छेदेत्ता आलोइय-पडिक्कंते समाहिपत्ते कालमासे कालं किच्चा सोहम्मे कप्पे सयंसि विमाणंसि उववायसभाए देवसयणिज्जंसि देवदूसंतरिए अंगुलस्स असंखेज्जइ भागमेत्ताए ओगाहणाए सक्कस्स देविंदस्स देवरणो सामाणियदेवत्ताए उववन्ने।

तए णं से तीसए देवे अहुणोववन्नमेत्ते समाणे पंचविहाए पज्जत्तीए पज्जत्तिभावं गच्छइ, तं जहा-आहार-पज्जत्तीए, सरीर इंदिय-आणापाणपज्जत्तीए भासा-मणपज्जत्तीए। तए णं तं तीसयं देवं पंचविहाए पज्जत्तीए पज्जत्तिभावंगयं समाणं सामाणियपरिसोववण्णया देवा करयलपरिग्गहियं दसनहं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु जएणं विजएणं वद्धाविंति, वद्धावित्ता एवं वयासी-अहो ! णं देवाणुप्पिएहिं दिव्वा देविड्ढी, दिव्वा देवजुती, दिव्वे देवाणुभावे लद्धे पत्ते अभिसमन्नागते, जारिसिया णं देवाणुप्पिएहिं दिव्वा देविड्ढी, दिव्वा देवज्जुती, दिव्वे देवाणुभावे लद्धे पत्ते अभिसमन्नागते, तारिसिया णं सक्केणं देविंदेणं देवरण्णा दिव्वा देविड्ढी जाव अभिसमन्नागता, जारिसिया णं सक्केणं देविंदेणं देवरण्णा दिव्वा देविड्ढी जाव अभिसमन्नागता तारिसिया णं देवाणुप्पिएहिं दिव्वा देविड्ढी जाव अभिसमन्नागता।

से णं भंते ! तीसए देवे केमहिड्ढीए जाव केवतियं च णं पभू विकुव्वित्तए ?

[उ.] गोयमा ! महिड्ढीए जाव महाणुभागे, से णं तत्थ सयस्स विमाणस्स, चउण्हं सामाणियसाहस्सीणं चउण्हं अग्गमहिसीणं सपरिवाराणं, तिण्हं परिसाणं, सत्तण्हं अणियाणं, सत्तण्हं अणियाहिवइणं, सोलसण्हं आयरक्खदेवसाहस्सीणं अन्नेसिं च बहूणं वेमाणियाणं देवाणं य देवीण य जाव विहरति। एमहिड्ढीए जाव एवइयं च णं पभू विकुव्वित्तए-से जहा णामए जुवइं जुवाणे हत्थेणं हत्थे गेण्हेज्जा जहेव सक्कस्स तहेव जाव एस णं गोयमा ! तीसयस्स देवस्स अयमेयारूवे विसए विसयमेत्ते बुइए, नो चेव णं संपत्तीए विउव्विंसु वा विउव्वइ वा विउव्विस्सइ वा।

१३. [प्र.] भगवन् ! यदि देवेन्द्र देवराज शक्र ऐसी महान् ऋद्धि वाला है, यावत् इतनी विकुर्वणा करने में समर्थ है, तो आप देवानुप्रिय का शिष्य 'तिष्यक' नामक अनगार, जो प्रकृति से भद्र, यावत् विनीत था, निरन्तर बेले-बेले की तपस्या से अपनी आत्मा को भावित करता हुआ, पूरे आठ वर्ष तक श्रमणपर्याय का पालन करके, एक मास की संलेखना से अपनी आत्मा को जुष्ट-(पोषित) करके, तथा साठ भक्त अनशन का पालन कर, आलोचना और प्रतिक्रमण करके, मृत्यु प्राप्त करके सौधर्मदेवलोक में गया है। वह वहाँ अपने विमान में, उपपातसभा में, देव-शयनीय (देवों की शय्या) में देवदूष्य (देवों के वस्त्र) से ढँके हुए अगुल के असंख्यात भाग जितनी अवगाहना मे देवेन्द्र देवराज शक्र के सामानिक देव के रूप में उत्पन्न हुआ है।

फिर तत्काल उत्पन्न हुआ वह तिष्यक देव पाँच प्रकार की पर्याप्तियों, जैसे-आहारपर्याप्ति, शरीरपर्याप्ति, इन्द्रियपर्याप्ति, श्वासोच्छ्वासपर्याप्ति और भाषा-मनःपर्याप्ति से पर्याप्तिभाव को प्राप्त हुआ। तदनन्तर जब वह तिष्यकदेव पाँच प्रकार की पर्याप्तियों से पर्याप्त हो चुका, तब सामानिक परिषद् के देवों ने दोनो हाथ जोडकर एव दसो अगुलियो के दसो नखो को इकट्ठे करके मस्तक पर अजलि करके जय-विजय शब्दो से बधाई दी। फिर इस प्रकार बोले-अहो ! आप देवानुप्रिय ने यह दिव्य देव-ऋद्धि, दिव्य देव-द्युति (कान्ति) (पूर्वकृत शुभकर्मों से-) उपलब्ध की है, प्राप्त की है, और दिव्य देवप्रभाव अभिमुख (अनुभव) किया है। जैसी दिव्य देव-ऋद्धि, दिव्य देव-कान्ति और दिव्य देवप्रभाव आप देवानुप्रिय ने उपलब्ध, प्राप्त और अभिमुख किया है, वैसी ही दिव्य देवऋद्धि, दिव्य देवकान्ति और दिव्य देवप्रभाव देवेन्द्र देवराज शक्र ने उपलब्ध, प्राप्त और अभिमुख किया है; जैसी दिव्य ऋद्धि दिव्य देवकान्ति और दिव्यप्रभाव देवेन्द्र देवराज शक्र ने लब्ध, प्राप्त एवं अभिमुख किया है, वैसी ही दिव्य देवऋद्धि, दिव देवकान्ति और दिव्य देवप्रभाव आप देवानुप्रिय ने उपलब्ध, प्राप्त और अभिमुख किया है।

तदनन्तर अग्निभूति अनगार भगवान से पूछते है-भगवन् ! वह तिष्यक देव कितनी महान् ऋद्धि वाला है, यावत् कितनी विकुर्वणा करने मे समर्थ है ?

[उ.] गौतम ! वह तिष्यकदेव महाऋद्धि वाला है, यावत् महाप्रभाव वाला है। वह वहाँ अपने विमान पर चार हजार सामानिक देवो पर, सपरिवार चार अग्रमहिषियो पर, तीन परिषदों (सभाओं)पर, सात सैन्यो पर, सात सेनाधिपतियो पर एवं सोलह हजार आत्मरक्षक देवों पर तथा अन्य बहुत-से वैमानिक देवों और देवियो पर आधिपत्य एव नेतृत्व करता है। यह तिष्यकदेव ऐसी महाऋद्धि वाला है, यावत् इतनी विकुर्वणा करने मे समर्थ है, जैसे कि कोई युवती (भय अथवा भीड़ के समय) युवा पुरुष का हाथ दृढ़ता से पकडकर चलती है, अथवा गाडी के पहिये की धुरी आरों से गाढ संलग्न होती है, इन्हीं दो दृष्टान्तों के अनुसार वह शक्रेन्द्र जितनी विकुर्वणा करने मे समर्थ है। हे गौतम ! यह जो तिष्यकदेव की इस प्रकार की विकुर्वणा-शक्ति कही है, वह उसका सिर्फ विषय है, विषयमात्र है, किन्तु सम्प्राप्ति (क्रिया) द्वारा कभी उसने इतनी विकुर्वणा की नहीं, करता भी नही और भविष्य में करेगा भी नहीं।

13. [Q.] *Bhante* ! (As you have said—) "So great is the opulence (*riddhi*)... and so on up to... capacity of transmutation (*vikurvana*) of

Devendra Shakra, the *Indra* (overlord) of *Devs* (gods)." Now, beloved of gods ! Your disciple, the ascetic named Tishyak, who was noble... and so on up to... humble, who led ascetic life for complete eight years enkindling his soul by observing a series of two day fasts. In the end he took the ultimate vow (*sallekhana*) of one month duration, avoiding sixty meals and embraced meditational death after doing *alochana* (self-criticism) and *pratikraman* (critical review). He has reincarnated in Saudharm *Dev-lok* Covered by a divine cloth (*Dev-dushya*) in the divine bed (*Dev-shayaniya*) in the divine hall of birth (*upapat sabha*) of his celestial vehicle (*vimaan*), he has taken instantaneous birth as a *Samanik Dev* (god of same status) of Devendra Shakra, the *Indra* (overlord) of *Devs* (gods) and having space occupation (*avagahana*) of innumerable fraction of an *Angul*

Then that instantaneously born Tishayk god attained the state of full development (*paryapti bhaava*) through five kinds of full development (*paryapti*) namely, *aahaar* (food) *paryapti, sharira* (body) *paryapti, indriya* (sense organs) *paryapti, shvasochchhavas* (breathing) *paryapti,* and *bhasha-man* (speech and mind) *paryapti*. When he attained full development the gods of the *Samanik* assembly brought together the ten nails of their ten fingers together, thus joining their palms and touching their forehead, they greeted him with hails of victory. They then said— "O Beloved of gods ! You have acquired, possessed and experienced this divine opulence, radiance and influence (due to the noble deeds of the past). The divine opulence, radiance and influence as you, O Beloved of gods, have acquired, possessed and experienced, the same divine opulence, radiance and influence has also been acquired, possessed and experienced by Devendra Shakra, the *Indra* (overlord) of *Devs* (gods). The divine opulence, radiance and influence as Devendra Shakra, the *Indra* (overlord) of *Devs* (gods) has acquired, possessed and experienced, the same divine opulence, radiance and influence has also been acquired, possessed and experienced by you, O Beloved of gods."

(Stating thus) Ascetic Agnibhuti asked *Bhagavan—Bhante* ! How great is the opulence (*riddhi*).. and so on up to... capacity of transmutation (*vikurvana*) of that Tishyak god ?

[Ans.] Gautam ! That Tishyak god has great opulence... and so on up to .. influence. He lives reigning over four thousand *Samanik Devs* (gods of same status), four *Agramahishis* (chief queens) with their retinue,

three assemblies, seven armies, seven commanders and sixteen thousand guard-gods as well as numerous other *Vaimanik Devs* (celestial vehicular gods) and goddesses. His capacity of transmutation (*vikurvana*) is as follows—He has the same power to pervade (*akirna*) as that of Shakrendra elaborated by the example of a young man tightly holding the hand of a young woman or like the spokes of a wheel tightly held by its axle. However, Gautam ! The aforesaid great power is theoretical. In practice he has never performed transmutation (to said extant), neither he does, nor will he do.

विवेचन : पर्याप्ति का अर्थ है जीवनी शक्ति की पूर्णता। शरीर निर्माण के प्रारम्भ काल में ही पर्याप्तियों की रचना हो जाती है। पर्याप्ति छह है। यहाँ देवों के भाषा–और मन-पर्याप्ति को एक मानने का कारण यह हो सकता है कि भाषापर्याप्ति का सम्बन्ध स्वरयंत्र से तथा मनःपर्याप्ति का सम्बन्ध मानसिक क्रिया से है। भाषा के बिना चिन्तन–मनन आदि मन की क्रियाएँ नही हो सकतीं और मन के बिना भाषा नहीं हो सकती। औपपातिक होने के कारण देवो के भाषा और मन-पर्याप्ति एक साथ निष्पन्न होती है। अतः यहाँ एक माना गया है। *(भगवई भाष्य, आचार्य महाप्रज्ञ, भाग २, पृष्ठ १५)*

Elaboration—*Paryapti* means full development of the life-energy. These *paryaptis* manifest themselves during the early stages of evolution of the body. They are six in number. Here the *bhasha* and *man* (speech and mind) *paryaptis* have been clubbed together. The possible reason for this is that faculty of speech is related to the vocal organs and that of mind is related to mental activity. The mental activities of thinking and contemplation are not possible in absence of language or faculty of speech. And in absence of mind there can be no language. Gods are born instantaneously; that is why the two have been clubbed together. *(Bhagavai, Bhashya by Acharya Mahaprajna, Part-2, p. 15)*

१४. [प्र.] जइ णं भंते ! तीसए देवे एमहिड्ढीए एवइयं च णं पभू विकुव्वित्तए, सक्कस्स णं भंते ! देविंदस्स देवरण्णो अवसेसा सामाणिया देवा केमहिड्ढीया ?

[उ.] तहेव सव्वं जाव एस णं गोयमा ! सक्कस्स देविंदस्स देवरण्णो एगमेगस्स सामाणियस्स देवस्स इमेयारूवे विसए विसयमेत्ते बुइए, नो चेव णं संपत्तीए विकुव्विंसु वा विकुव्वंति वा विकुव्विस्संति वा। तायत्तीसय–लोगपाल–अग्गमहिसीणं जहेव चमरस्स। नवरं दो केवलकप्पे जंबुद्दीवे दीवे, अन्नं तं चेव।

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति दोच्चे गोयमे जाव विहरति।

१४. [प्र.] भगवन् ! यदि तिष्यकदेव इतनी महाऋद्धि वाला है यावत् इतनी विकुर्वणा करने की शक्ति रखता है, तो हे भगवन् ! देवेन्द्र देवराज शक्र के दूसरे सब सामानिक देव कितनी महाऋद्धि वाले हैं यावत् उनकी विकुर्वणा–शक्ति कितनी है ?

[उ.] हे गौतम तिष्यकदेव की ऋद्धि एवं विकुर्वणा-शक्ति के समान शक्रेन्द्र के समस्त सामानिक देवों की ऋद्धि एवं विकुर्वणा-शक्ति आदि के विषय में जानना चाहिए, किन्तु यह विकुर्वणा-शक्ति देवेन्द्र देवराज शक्र के प्रत्येक सामानिक देव का विषय है, विषयमात्र है, सम्प्राप्ति द्वारा उन्होंने कभी इतनी विकुर्वणा की नही, करते नहीं और भविष्य में करेंगे भी नहीं। शक्रेन्द्र के त्रायस्त्रिंशक, लोकपाल और अग्रमहिषियो (की ऋद्धि, विकुर्वणा-शक्ति आदि) के विषय में चमरेन्द्र के त्रायस्त्रिंशक आदि (ऋद्धि आदि) की तरह कहना चाहिए। किन्तु इतना विशेष है कि वे अपने वैक्रियकृत रूपों से दो सम्पूर्ण जम्बूद्वीपो को भरने में समर्थ हैं। शेष समग्र वर्णन चमरेन्द्र की तरह है।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है', यों कहकर द्वितीय गौतम अग्निभूति अनगार यावत् विचरण करते हैं।

14. [Q.] Bhante ! When so great is the opulence (*riddhi*)... and so on up to. capacity of transmutation (*vikurvana*) of *Tishyak Dev*, then how great is the opulence (*riddhi*) . and so on up to... capacity of transmutation (*vikurvana*) of the other *Samanik Devs* (gods of same status) of Devendra Shakra, the *Indra* (overlord) of *Devs* (gods) ?"

[Ans.] Gautam ! The opulence (*riddhi*) and capacity of transmutation (*vikurvana*) of the other *Samanik Devs* (gods of same status) of Devendra Shakra, the *Indra* (overlord) of *Devs* (gods) should be read to be same as those of *Tishyak Dev* However, Gautam ! The aforesaid great power of *Samanik Devs* (gods of same status) of Devendra Shakra, the *Indra* (overlord) of *Devs* (gods) is theoretical. In practice none of them has ever performed transmutation (to said extant), neither he does, nor will he do. What has been stated about (the opulence etc. of) the *Trayastrinshak* and others gods of Chamarendra should be repeated here about (the opulence and power of transmutation etc. of) *Trayastrinshak* and *Lok-pal* gods as well as *Agramahishis* (chief queens) of Shakrendra. The difference being that he can pervade an area equivalent to that of two Jambu Dveeps with his transmuted forms. Rest of the description is same as that of Chamarendra.

"*Bhante* ! Indeed that is so. Indeed that is so." With these words... and so on up to. . ascetic Gautam resumed his activities.

देववर्ग की ऋद्धि OPULENCE OF GROUPS OF GODS

१५. [प्र.] 'भंते !' त्ति भगवं तच्चे गोयमे वाउभूई अणगारे भगवं जाव एवं वयासी-जइ णं भंते ! सक्के देविंदे देवराया एमहिड्ढीए जाव एवइयं च णं पभू विउव्वित्तए, ईसाणे णं भंते ! देविंदे देवराया केमहिड्ढीए ?

[उ.] एवं तहेव, नवरं साहिए दो केवलकप्पे जंबुद्दीवे दीवे, अवसेसं तहेव।

१५. [प्र.] 'भगवन् !' यों सम्बोधन कर तृतीय गौतम भगवान वायुभूति अनगार ने भगवान को वन्दन-नमस्कार करके इस प्रकार पूछा-"भगवन् ! यदि देवेन्द्र देवराज शक्र इतनी महाऋद्धि वाला है, यावत् इतनी विकुर्वणा करने में समर्थ है, तो भगवन् ! देवेन्द्र देवराज ईशान कितनी महाऋद्धि वाला है यावत् कितनी विकुर्वणा करने की शक्ति है ?"

[उ.] शक्रेन्द्र के समान ही सारा वर्णन ईशानेन्द्र के विषय में जानना चाहिए। विशेषता यह है कि वह सम्पूर्ण दो जम्बूद्वीप से कुछ अधिक स्थल को भर देता है।

15. **[Q.]** *"Bhante !"* Addressing thus the second Gautam, ascetic Agnibhuti paid homage and obeisance to Shraman Bhagavan Mahavir and said—"When so great is the opulence (*riddhi*)... and so on up to... capacity of transmutation (*vikurvana*) of Devendra Shakra, the *Indra* (overlord) of *Devs* (gods), then how great is the opulence (*riddhi*)... and so on up to... capacity of transmutation (*vikurvana*) of Devendra Ishan, the *Indra* (overlord) of *Devs* (gods) ?"

[Ans.] What has been stated about Shakrendra should also be repeated for Ishanendra. The difference being that he can pervade an area slightly more than that of two Jambu Dveeps with his transmuted forms.

१६. जइ णं भंते ! ईसाणे देविंदे देवराया एमहिड्ढीए जाव एवइयं च णं पभू विउव्वित्तए, एवं खलु देवाणुप्पियाणं अंतेवासी कुरुदत्तपुत्ते नामं पगतिभद्दए जाव विणीए अट्ठमं अट्ठमेणं अणिक्खित्तेणं, पारणए आयंबिलपरिग्गहिएणं तवोकम्मेणं उड्ढं बाहाओ पगिज्झिय पगिज्झिय सूराभिमुहे आयावणभूमीए आयावेमाणे बहुपडिपुण्णे छम्मासे सामण्णपरियागं पाउणित्ता अद्धमासियाए संलेहणाए अत्ताणं झोसित्ता तीसं भत्ताइं अणसणाए छेदित्ता आलोइयपडिक्कंते समाहिपत्ते कालमासे कालं किच्चा ईसाणे कप्पे सयंसि विमाणंसि जा चेव तीसए वत्तव्वया।

स चेव अपरिसेसा कुरुदत्तपुत्ते वि। नवरं सातिरेगे दो केवलकप्पे जंबुद्दीवे दीवे, अवसेसं तं चेव।

एवं सामाणिय-तायत्तीस-लोगपाल-अग्गमहिसीणं जाव एस णं गोयमा ! ईसाणस्स देविंदस्स देवरण्णो एवं एगमेगाए अग्गमहिसीए देवीए अयमेयारूवे विसए विसयमेत्ते बुइए, नो चेव णं संपत्तीए विकुव्विंसु व विकुव्वंति वा विकुव्विस्संति वा।

१६. भगवन् ! यदि देवेन्द्र देवराज ईशानेन्द्र इतनी बड़ी ऋद्धि से युक्त है यावत् वह इतनी विकुर्वणा-शक्ति रखता है, तो आप देवानुप्रिय का अन्तेवासी कुरुदत्तपुत्र अनगार, जो प्रकृति से भद्र यावत् विनीत, तथा निरन्तर अट्ठम (तेला) की तपस्या और पारणे में आयबिल, ऐसी कठोर तपश्चर्या से आत्मा को भावित करता हुआ, दोनों हाथ ऊँचे रखकर सूर्य की ओर मुख करके आतापना लेता था वह पूरा छह महीने तक श्रमणपर्याय का पालन करके, अर्द्ध-मासिकी संलेखना से अपनी आत्मा को

संसेवित करके, तीस भक्त अनशन का छेदन करके, आलोचना एवं प्रतिक्रमण करके, समाधिभावपूर्वक काल करके, ईशानकल्प में, अपने विमान मे, ईशानेन्द्र के सामानिक देव के रूप में उत्पन्न हुआ है, इत्यादि, तिष्यकदेव के समान समग्र वक्तव्यता कुरुदत्त देव के विषय में भी कहनी चाहिए। इस सम्बन्ध मे सब वक्तव्य पूर्ववत् जानना चाहिए।

विशेषता यह है कि कुरुदत्तपुत्रदेव की सम्पूर्ण दो जम्बूद्वीपों से कुछ अधिक स्थल को भरने की विकुर्वणा-शक्ति है।

इसी तरह (ईशानेन्द्र के अन्य) सामानिक देव, त्रायस्त्रिंशक देव एवं लोकपाल तथा अग्रमहिषियों के विषय मे जानना चाहिए। यावत्-हे गौतम ! देवेन्द्र देवराज ईशान की अग्रमहिषियों की इतनी यह विकुर्वणा-शक्ति, केवल शक्ति का विषयमात्र है, परन्तु सम्प्राप्ति द्वारा कभी इतना वैक्रिय किया नहीं, करती नही और भविष्य मे करेगी भी नहीं।

16. *Bhante* ! (As you have said—) "So great is the opulence (*riddhi*)... and so on up to . capacity of transmutation (*vikurvana*) of Ishanendra, the *Indra* (overlord) of *Devs* (gods)." Now, beloved of gods ! Your disciple, the ascetic named Kurudattaputra, who was noble... and so on up to... humble; who led ascetic life for complete six months enkindling his soul by rigorous austerities observing a series of three day fasts, breaking the fast with *Ayambil* (eating once in a day food cooked or baked with a single ingredient even without any salt or other condiments) and enduring heat by standing with raised hands facing the sun. In the end he took the ultimate vow (*sallekhana*) of half a month duration, avoiding thirty meals and embraced meditational death after doing *alochana* (self-criticism) and *pratikraman* (critical review). He has reincarnated in Ishan Kalp in his celestial vehicle (*vimaan*) as a *Samanik Dev* (god of same status) of Devendra Ishan. All details stated about *Tishyak Dev* should be repeated here for Kurudattaputra. All description is as aforesaid.

The difference being that Kurudattaputra can pervade an area slightly more than that of two Jambu Dveeps with his transmuted forms.

The same is true for the *Samanik, Trayastrinshak* and *Lok-pal* gods as well as *Agramahishis* (chief queens) of Ishanendra... and so on up to... However, Gautam ! The aforesaid great power of *Agramahishis* of Ishanendra, the *Indra* (overlord) of *Devs* (gods) is theoretical. In practice they have never performed transmutation (to said extant), neither they do, nor will they do.

१७. एवं सणंकुमारे वि, नवरं चत्तारि केवलकप्पे जंबुद्दीवे दीवे, अदुत्तरं च णं तिरियमसंखेज्जे। एवं सामाणिय-तायत्तीस-लोगपाल-अग्गमहिसीणं असंखेज्जे दीव-समुद्दे सव्वे विउव्वंति।

१७. इसी प्रकार सनत्कुमार देवलोक के देवेन्द्र (की ऋद्धि आदि) के विषय में भी समझना चाहिए। विशेषता यह है कि वह उसकी विकुर्वणा-शक्ति सम्पूर्ण चार जम्बूद्वीपों जितने स्थल को और तिरछे असंख्यात द्वीप समुद्रों जितने स्थल को भरने की है।

इसी तरह (सनत्कुमारेन्द्र के) सामानिक देव, त्रायस्त्रिंशक, लोकपाल एवं अग्रमहिषियों की विकुर्वणा-शक्ति असख्यात द्वीप समुद्रों जितने स्थल को भरने की है।

17. The same is true (about opulence etc.) for the overlord (*Indra*) of Sanatkumar Devlok. The difference being that he can pervade an area equivalent to that of four Jambu Dveeps and innumerable continents and seas in the transverse world (*Tiryak Lok*) with his transmuted forms.

In the same way the *Samanık, Trayastrinshak* and *Lok-pal* gods as well as *Agramahıshıs* (chief queens) of Ishanendra can pervade an area equivalent to that of innumerable continents and seas in the transverse world (*Tıryak Lok*) with their transmuted forms.

स्पष्टीकरण : यद्यपि सौधर्म-ईशान-इन दो कल्पों में ही देवियाँ उत्पन्न होती है। सनत्कुमार देवलोक में देवी उत्पन्न नही होती, तथापि सौधर्म'देवलोक मे जो अपरिगृहीता देवियाँ होती हैं, वे देवियाँ उन सनत्कुमार देवों की उपभोग्या होती हैं, इसी कारण सनत्कुमार-प्रकरण के मूलपाठ में 'अग्गमहिसीण' पद का उल्लेख है। *(भगवती वृत्ति, पत्रांक ३/३२, भाष्य, पृष्ठ १७)*

Clarification—Goddesses are born only in Saudharm and Ishan Kalps (divine realms) and not ın the Sanatkumar Kalp However, the unmarried goddesses in Saudharma Kalp are available to Sanatkumar gods. That ıs the reason for the mention of the term *Agramahishis* in context of Sanatkumar gods in the original text. *(Bhagavati Vrıttı, leaf 3/32, Bhashya, p. 17)*

१८. सणंकुमाराओ आरद्धा उवरिल्ला लोगपाला सव्वे वि असंखेज्जे दीव-समुद्दे विउव्वंति। एवं माहिंदे वि। नवरं साइरेगे चत्तारि केवलकप्पे जंबुद्दीवे दीवे।

१८. सनत्कुमार से लेकर ऊपर के (देवलोको के) सब लोकपाल असख्येय द्वीप-समुद्रों जितने स्थल को भरने की वैक्रिय-शक्ति वाले हैं। इसी तरह माहेन्द्र (नामक चतुर्थ देवलोक के इन्द्र तथा उसके सामानिक आदि देवो की ऋद्धि आदि) के विषय में भी समझना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि ये साधिक चार जम्बूद्वीपों जितने स्थल को भरने की विकुवर्णा-शक्ति वाले हैं।

18. Starting from Sanatkumar, all the *Lok-pals* in the higher divine realms (*Dev Loks*) have the power to pervade an area equivalent to that of innumerable continents and seas with their transmuted forms. The same is true for (the opulence etc. of *Indra* and other gods of the fourth heaven)

Maahendra. The difference being that they can pervade an area slightly more than that of four Jambu Dveeps with their transmuted forms.

१९. एवं बंभलोए वि, नवरं अट्ठ केवलकप्पे०। एवं लंतए वि, नवरं सातिरेगे अट्ठ केवलकप्पे०। महासक्के सोलस केवलकप्पे०। सहस्सारे सातिरेगे सोलस०। एवं पाणए वि, नवरं बत्तीसं केवलकप्पे। एवं अच्चुए वि, नवरं सातिरेगे बत्तीसं केवलकप्पे जंबुद्दीवे दीवे। अन्नं तं चेव। सेवं भंते !

सेवं भंते ! ति तच्चे गोयमे वायुभूती अणगारे समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ जाव विहरति।

१९. इसी प्रकार ब्रह्मलोक (नामक पंचम देवलोक के इन्द्र तथा देववर्ग की ऋद्धि आदि के विषय में भी जानना चाहिए। **विशेषता :** वे सम्पूर्ण आठ जम्बूद्वीपो (को भरने) की वैक्रिय-शक्ति रखते हैं। इसी प्रकार लान्तक नामक छठे देवलोक के इन्द्रादि के विषय मे समझना चाहिए विशेष यह है कि वे सम्पूर्ण आठ जम्बूद्वीपों से कुछ अधिक स्थल को भरने की विकुर्वणा-शक्ति रखते हैं। महाशुक्र के विषय मे विशेषता इतनी है कि वे सम्पूर्ण सोलह जम्बूद्वीपो को भरने की वैक्रिय-शक्ति रखते है। शेष वर्णन पूर्ववत्। सहस्रार देवलोक के इन्द्रादि के विषय में भी यही बात है। विशेषता इतनी है कि वे सम्पूर्ण सोलह जम्बूद्वीपो से कुछ अधिक स्थल को भरने की वैक्रिय-शक्ति रखते हैं। प्राणत (देवलोक के इन्द्र तथा उसके देववर्ग की ऋद्धि आदि) के विषय में भी इतनी विशेषता है कि वे सम्पूर्ण बत्तीस जम्बूद्वीपो जितने क्षेत्र को भरने की वैक्रिय-शक्ति वाले है। इसी तरह अच्युत के विषय मे भी जानना चाहिए। विशेषता इतनी है कि वे सम्पूर्ण बत्तीस जम्बूद्वीपो से कुछ अधिक क्षेत्र को भरने का वैक्रिय-सामर्थ्य रखते है।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है'; यो कहकर तृतीय गौतम वायुभूति अनगार श्रमण भगवान महावीर को वन्दन-नमस्कार कर विचरण करने लगे।

१२ कल्प सम्बन्धी तालिका (बृहत् संग्रहणी गाथा ११२ के अनुसार)

	देवलोक	वैक्रिय शक्ति	देव विमान	सामानिक देव-संख्या
१	सौधर्म	सम्पूर्ण दो जम्बूद्वीप प्रमाण	३२ लाख	८४ हजार
२	ईशान	सम्पूर्ण दो जम्बूद्वीप से कुछ अधिक	२८ लाख	८० हजार
३	सनत्कुमार	सम्पूर्ण चार जम्बूद्वीप	१२ लाख	७२ हजार
४	माहेन्द्र	कुछ अधिक चार जम्बूद्वीप	८ लाख	७० हजार
५	ब्रह्म	८ जम्बूद्वीप	४ लाख	६० हजार
६	लान्तक	कुछ अधिक ८ जम्बूद्वीप	५० हजार	५० हजार
७	महाशुक्र	१६ जम्बूद्वीप	४० हजार	४० हजार
८	सहस्रार	साधिक १६ जम्बूद्वीप	६ हजार	३० हजार
९	आनत	सम्पूर्ण ३२ जम्बूद्वीप	४ सौ	२० हजार
१०	प्राणत	सम्पूर्ण ३२ जम्बूद्वीप	४ सौ	२० हजार
११.	आरण	साधिक ३२ जम्बूद्वीप	३ सौ	१० हजार
१२.	अच्युत कल्प	साधिक ३२ जम्बूद्वीप	३ सौ	१० हजार

19. The same is true for (the opulence etc. of *Indra* and other gods of the fifth heaven) Brahmalok. The difference being that they can pervade an area equivalent to that of eight Jambu Dveeps with their transmuted forms. The same is true for (the sixth heaven) Lantak. The difference being that they can pervade an area slightly more than that of eight Jambu Dveeps with their transmuted forms. The same is true for Mahashukra with the difference that they can pervade an area equivalent to that of sixteen Jambu Dveeps with their transmuted forms. The same is true for Sahasrar with the difference that they can pervade an area slightly more than that of sixteen Jambu Dveeps with their transmuted forms. The same is true for Pranat with the difference that they can pervade an area equivalent to that of thirty two Jambu Dveeps with their transmuted forms. The same is true for Achyut with the difference that they can pervade an area slightly more than that of thirty two Jambu Dveeps with their transmuted forms.

"Bhante ! Indeed that is so Indeed that is so." With these words... and so on up to the third Gautam ascetic Vayubhuti resumed his activities.

TABLE OF 12 KALPS (DIVINE REALMS OR HEAVENS)
(ACCORDING TO BRIHAT SANGRAHANI GATHA 112)

	Dev-lok	Vaikriya Shakti	Celestial Vehicles	Samanik Gods
1	Saudharma	two Jambu Dveeps	3 2 million	84 thousand
2	Ishan	more than two Jambu Dveeps	2 8 million	80 thousand
3	Sanatkumar	four Jambu Dveeps	1.2 million	72 thousand
4	Maahendra	more than four Jambu Dveeps	0.8 million	70 thousand
5	Brahma	eight Jambu Dveeps	0 4 million	60 thousand
6	Lantak	more than eight Jambu Dveeps	50 thousand	50 thousand
7	Mahashukra	sixteen Jambu Dveeps	40 thousand	40 thousand
8	Sahasrar	more than sixteen Jambu Dveeps	6 thousand	30 thousand
9.	Anat	thirty two Jambu Dveeps	4 hundred	20 thousand
10	Pranat	thirty two Jambu Dveeps	4 hundred	20 thousand
11	Aran	more than thirty two Jambu Dveeps	3 hundred	10 thousand
12.	Achyut	more than thirty two Jambu Dveeps	3 hundred	10 thousand

२०. तए णं समणे भगवं महावीरे अन्नया कयाई मोयाओ नगरीओ नंदणाओ चेतियाओ पडिनिक्खमइ, पडिनिक्खमित्ता बहिया जणवयविहारं विहरइ।

२०. इसके पश्चात् एक समय श्रमण भगवान महावीर 'मोका' नगरी के 'नन्दन' नामक उद्यान से विहार कर जनपद में विचरण करने लगे।

20. After that one day Shraman Bhagavan Mahavir left Nandan garden in Moka city and resumed his itinerant way in other inhabited areas.

ईशानेन्द्र का वन्दनार्थ आगमन ARRIVAL OF ISHANENDRA TO PAY HOMAGE

२१. तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे नामं नगरे होत्था वण्णओ। जाव परिसा पज्जुवासइ।

२१. उस काल उस समय मे राजगृह नामक नगर था। (भगवान वहाँ पधारे) यावत् परिषद् भगवान की पर्युपासना करने लगी।

21. During that period of time there was a city called Rajagriha. Description (as before). and so on up to... (Bhagavan Mahavir arrived there) People commenced worship

२२. तेणं कालेणं तेण समएणं ईसाणे देविंदे देवराया सूलपाणी वसभवाहणे उत्तरड्ढलोगाहिवई अट्ठावीसविमाणावाससयसहस्साहिवई अरयंबरवत्थधरे आलइयमालमउडे नवहेमचारुचित्त-चंचलकुंडलविलिहिज्जमाणगंडे जाव दस दिसाओ उज्जोवेमाणे पभासेमाणे ईसाणे कप्पे ईसाणवडिंसे विमाणे जहेव रायप्पसेणइज्जे जाव दिव्वं देविड्ढिं जाव जामेव दिसिं पाउब्भूए तामेव दिसिं पडिगए।

२२. उस काल उस समय मे ईशानकल्प का देवेन्द्र देवराज, शूलपाणि (हाथ में त्रिशूल धारक) वृषभवाहन (बैल पर सवारी करने वाला) लोक के उत्तरार्द्ध का स्वामी, अट्ठाईस लाख विमानो का अधिपति, आकाश के समान रजरहित निर्मल वस्त्रधारक, सिर पर माला से सुशोभित मुकुटधारी, नवीन स्वर्णनिर्मित सुन्दर, विचित्र एव चचल कुण्डलो से कपोल को जगमगाता हुआ यावत् दसो दिशाओ को उद्योतित एवं प्रभासित करता हुआ, ईशानकल्प में ईशानावतसक विमान मे राजप्रश्नीयसूत्र मे सूर्याभ देव के वर्णन अनुसार दिव्य देव-ऋद्धि का अनुभव करता हुआ (भगवान के दर्शन-वन्दन करने आया) और यावत् जिस दिशा से आया था उसी दिशा मे वापस चला गया। *(सूर्याभदेव के आगमन एव नाट्य प्रदर्शन का सम्पूर्ण वर्णन सचित्र रायपेसेणियसूत्र मे देखें)*

22. During that period of time Ishanendra, the overlord (*Indra*) of Ishan Kalp, trident-bearing, bull-mounted, the master of the northern half of *Lok*, the owner of two million eight hundred thousand celestial vehicles, adorned in sky-like clean and pure dress, with a garland-embellished crown on his head, with cheeks glowing in radiance of exquisite and dangling ear-rings made of fresh gold.. and so on up to... brightening and enlightening the ten directions and dwelling in the Ishanavatamsak Vimaan in Ishan Kalp as described in *Rajaprashniya Sutra* in context of Suryabh Dev... and so on up to... enjoying his divine

opulence (came to pay homage and obeisance to *Bhagavan*)... and so on up to... went away in the direction from which he came. *(For the detailed description of arrival of Suryabh god and his dance display refer to Illustrated Rayapaseniya Sutra)*

कूटाकारशाला दृष्टान्त EXAMPLE OF KUTAKAR-SHALA

२३. [प्र. १] 'भंते ! त्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदति णमंसति, वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी–अहो णं भंते ! ईसाणे देविंदे देवराया महिड्ढीए। ईसाणस्स णं भंते ! सा दिव्वा देविड्ढी कहिं गया ? कहिं अणुपविट्ठा ?

[उ.] गोयमा ! सरीरं गता, सरीरं अणुपविट्ठा।

२३. [प्र. १] 'हे भगवन् !' इस प्रकार सम्बोधित करके भगवान गौतम स्वामी ने श्रमण भगवान महावीर को वन्दन-नमस्कार किया। वन्दन-नमस्कार करके इस प्रकार पूछा-"अहो, भगवन् ! देवेन्द्र देवराज ईशान इतनी महाऋद्धि वाला है। भगवन् ! ईशानेन्द्र की वह (नाट्य-प्रदर्शनकालिक) दिव्य देव-ऋद्धि (अब) कहाँ चली गई ? कहाँ प्रविष्ट हो गई ?'

[उ.] गौतम ! (ईशानेन्द्र द्वारा प्रदर्शित) वह दिव्य देव-ऋद्धि (उसके) शरीर में चली गई, शरीर मे प्रविष्ट हो गई है।

23. [Q. 1] "*Bhante* !" Addressing thus Gautam Swami asked Bhagavan Mahavir after paying homage and obeisance—"*Bhante* ! Ishanendra, the overlord (*Indra*) of gods is endowed with so great opulence. *Bhante* ! Where did that divine (display of) opulence (created by Ishanendra) go and disappear (now) ?"

[Ans.] "Gautam ! The divine opulence (displayed by Ishanendra) was drawn into and disappeared within his own body

[प्र. २] से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चति सरीरं गता, सरीरं अणुपविट्ठा ?

[उ.] गोयमा ! से जहानामए कूडागारसाला सिया दुहओ लित्ता गुत्ता गुत्तदुवारा णिवाया णिवायगंभीरा, तीसे णं कूडागारसालादिट्ठंतो भाणियव्वो।

[प्र. २] भगवन् ! ऐसा किस कारण से कहा जाता है कि वह दिव्य देव-ऋद्धि शरीर में चली गई और शरीर में प्रविष्ट हो गई ?

[उ.] गौतम ! जैसे कोई कूटाकार (शिखर के आकार की) शाला हो, जो दोनो तरफ से गोबर आदि से लीपी हुई हो, गुप्त हो, गुप्त-द्वार वाली हो, निर्वात हो, वायुप्रवेश से रहित गम्भीर (ऊँडी) हो, यावत् ऐसी कूटाकारशाला का दृष्टान्त (यहाँ) कहना चाहिए।

(पूर्वोक्त) कूटाकारशाला दृष्टान्त-जैसे शिखराकार अथवा वर्तुलाकार शाला जिसके ऊपर का भाग शिखर जैसा प्रतीत हो। कोई शाला हो और उसके पास बहुत-से मनुष्य खड़े हों, इसी बीच आकाश में

बादल उमड-घुमडकर आ गये हो और बरसने की तैयारी हो, ऐसी स्थिति मे वे तमाम मनुष्य वर्षा से रक्षा के लिए उस शाला मे प्रविष्ट हो जाते है, इसी प्रकार ईशानेन्द्र की वह दिव्य ऋद्धि, देव-प्रभाव एवं दिव्य काति ईशानेन्द्र के शरीर मे प्रविष्ट हो गई। *(सचित्र रायपसेणिय सूत्र मे विस्तृत वर्णन व चित्र देखे)*

[Q. 2] *Bhante* ! Why is it said that the divine opulence (displayed by Ishanendra) was drawn into and disappeared within his own body ?

[Ans.] Gautam ! Suppose there is a cone shaped (like hill-top) camouflaged house (*kutakar-shala*), large and deep underground. It is plastered within and outside with cow-dung. It is surrounded by a parapet wall and has strong and air-tight but concealed doors .. and so on up to.. the example of *kutakar-shala* should be cited here.

The example—Suppose there is a cone shaped (like hill-top) camouflaged house, large and deep underground. It is plastered within and outside with cow-dung It is surrounded by a parapet wall and has strong and air-tight but concealed doors A large crowd is sitting near that camouflaged house If that crowd suddenly sees dark rain bearing clouds or a terrible storm approaching, it at once enters that camouflaged house and disappears In the same way all the opulence and divine illusion displayed by Ishanendra entered and vanished into his body.

ईशानेन्द्र का पूर्वभव : तामली तापस PAST BIRTH OF ISHANENDRA : TAMALI TAPAS

२४. [प्र.] ईसाणेणं भंते ! देविंदेणं देवरण्णा सा दिव्वा देविड्ढी दिव्वा देवजुती दिव्वे देवाणुभागे किण्णालद्धे ? किण्णापत्ते ? किण्णा अभिसमन्नागए ? के वा एस आसि पुव्वभवे ? किंणामए वा ? किंगोत्ते वा ? कतरंसि वा गामंसि वा नगरंसि वा जाव सन्निवेसंसि वा ? किं वा सोच्चा ? किं वा दच्चा ? किं वा भोच्चा ? किं वा किच्चा ? किं वा समायरित्ता ? कस्स वा तहारूवस्स समणस्स वा माहणस्स वा अंतिए एगमवि आरियं धम्मियं सुवयणं सोच्चा निसम्म जं णं ईसाणेणं देविंदेणं देवरण्णा सा दिव्वा देविड्ढी जाव अभिसमन्नागया ?

[उ.] एवं खलु गोयमा ! तेणं कालेणं तेणं समएणं इहेव जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे तामलित्ती नामं नगरी होत्था। वण्णओ। तत्थ णं तामलित्तीए नगरीए तामली नामं मोरियपुत्ते गाहावती होत्था। अड्ढे दित्ते जाव बहुजणस्स अपरिभूए यावि होत्था।

२४. [प्र.] भगवन् ! देवेन्द्र देवराज ईशान ने वह दिव्य देव-ऋद्धि, दिव्य देव-द्युति (कान्ति) और दिव्य देव-प्रभाव किस कारण से उपलब्ध किया, किस कारण से प्राप्त किया और किस हेतु से अभिमुख (भोग के लिए सामने उपस्थित) किया ? यह ईशानेन्द्र पूर्वभव मे कौन था ? इसका क्या नाम, क्या गोत्र था ? यह किस ग्राम, नगर अथवा यावत् किस सन्निवेश में रहता था ? इसने क्या (धर्म-) सुनकर, क्या (आहार-पानी आदि-) देकर, क्या (रूखा-सूखा-) खाकर, क्या (तप एवं शुभ

ध्यानादि–) करके, क्या (शीलव्रतादि या प्रतिलेखन–प्रमार्जन आदि धर्मक्रियाओं का–) सम्यक् आचरण करके, अथवा किस तथारूप श्रमण या माहन के पास से एक भी आर्य (तीर्थंकरोक्त) एवं धार्मिक सुवचन सुनकर तथा हृदय में धारण करके (पुण्य–पुंज का उपार्जन किया), जिस (पुण्य–प्रताप) से देवेन्द्र देवराज ईशानेन्द्र ने वह दिव्य देव–ऋद्धि उपलब्ध की है, प्राप्त की है और अभिमुख की है ?

[उ.] गौतम ! उस काल उस समय में इसी जम्बूद्वीप नामक द्वीप मे भारतवर्ष मे ताम्रलिप्ती नाम की नगरी थी। उस ताम्रलिप्ती नगरी मे तामली नाम का मौर्यपुत्र (मौर्यवंश में उत्पन्न) गृहपति (गृहस्थ) रहता था। वह धनाढ्य था, दीप्तिमान (तेजस्वी) था, और बहुत–से मनुष्यों द्वारा अपराभूत (नहीं दबने वाला) था।

24. [Q.] "*Bhante* ! How did Ishanendra, the overlord (Indra) of gods acquire and manifest (*abhimukh*) that divine opulence, radiance and influence ? Who was he in the past birth ? What was his name and clan name (*gotra*) ? In which village, city... and so on up to... inhabited area did he live ? What (noble words) did he hear ? What did he give (charity) ? What did he eat (dry and drab food) ? What deed did he perform (austerities, meditation etc) ? What conduct did he properly follow (vows, critical review and other religious rituals) ? And what religious and noble words he listened to and accepted from a sagacious *Shraman* or Brahmin (to acquire heaps of meritorious *karmas*) ? By dint of which (meritorious *karmas*) that Ishanendra, the overlord (*Indra*) of gods got endowed with and manifested such divine opulence and power ?

[Ans.] Gautam ! During that period of time there was a city named Tamralipti in Bharat-varsh in this Jambu continent. In that Tamralipti city lived a householder (*gathapati*) named Tamali born in Maurya clan. He was very rich brilliant and insuperable (*aparabhoot*; due to his status and influence he could not be insulted, ignored or belittled) by one or more adversaries.

२५. तए णं तस्स मोरियपुत्तस्स तामलिस्स गाहावतिस्स अन्नया कयाइ पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि कुडुंबजागरियं जागरमाणस्स इमेयारूवे अज्झत्थियए जाव समुप्पज्जित्था–''अत्थि ता मे पुरा पोराणाणं सुचिण्णाणं सुपरक्कंताणं सुभाणं कल्लाणाणं कडाणं कम्माणं कल्लाणे फलवित्तिविसेसे जेणाहं हिरण्णेणं वड्ढामि, सुवण्णेणं वड्ढामि, धणेणं वड्ढामि, धन्नेणं वड्ढामि, पुत्तेहिं वड्ढामि, पसूहिं वड्ढामि, विउल धण–कणग–रयण–मणि–मोत्तिय–संख–सिल–प्पवाल–रत्तरयण–संतसारसावतेज्जेणं अतीव अतीव अभिवड्ढामि।

तं किं णं अहं पुरा पोराणाणं सुचिण्णाणं जाव कडाणं कम्माणं एगंतसोक्खयं उवेहेमाणे विहरामि ? तं जाव च णं मे मित्त–नाति–नियग–संबंधिपरियणो आढाति परियाणाइ सक्कारेइ सम्माणेइ कल्लाणं

मंगलं देवयं चेइयं विणएणं पज्जुवासइ तावता मे सेयं कल्लं पाउप्पभायाए रयणीए जाव जलंते सयमेव दारुमयं पडिग्गहगं करेत्ता विउलं असण–पाण–खाइम–साइमं उवक्खडावेत्ता मित्त–नाति–नियग–संबंधिपरियणं आमंतेत्ता, तं मित्त–नाइ–नियग–संबंधिपरयणं विउलेणं असण–पाण–खाइम–साइमेणं वत्थ–गंध–मल्ला–ऽलंकारेण य सक्कारेत्ता सम्माणेत्ता, तस्सेव मित्त–नाइ–नियग–संबंधिपरियणस्स पुरतो जेट्ठं पुत्तं कुटुंबे ठावेत्ता, तं मित्त–नाति–णियग–संबंधिपरियणं जेट्ठपुत्तं च आपुच्छित्ता, सयमेव दारुमयं पडिग्गहगं गहाय मुंडे भवित्ता पाणामाए पव्वज्जाए पव्वइत्तए। पव्वइत्ते वि य णं समाणे इमं एयारूवं अभिग्गहं अभिगिण्हिस्सामि–'कप्पइ मे जावज्जीवाए छट्ठंछट्ठेणं अणिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं उड्ढं बाहाओ पगिज्झिय पगिज्झिय सूराभिमुहस्स आयावणभूमीए आयावेमाणस्स विहरित्तए, छट्ठस्स वि य णं पारणयंसि आयावणभूमीओ पच्चोरुभित्ता सयमेव दारुमय पडिग्गहयं गहाय तामलित्तीए नगरीए उच्च–नीय–मज्झिमाइं कुलाइं घरसमुदाणस्स भिक्खायरियाए अडित्ता सुद्धोदणं पडिग्गाहेत्ता, तं तिसत्तखुत्तो उदएणं पक्खालेत्ता, तओ पच्छा आहारं आहारित्तए त्ति कट्टु। एवं संपेहइ।

संपेहित्ता कल्लं पाउप्पभायाए जाव जलंते सयमेव दारुमयं पडिग्गहगं करेइ, करित्ता विउलं असण–पाण–खाइम–साइमं उवक्खडावेइ, उवक्खडावित्ता तओ पच्छा ण्हाए कयबलिकम्मे कयकोउयमंगलपायच्छित्ते सुद्धप्पावेसाइं मंगल्लाइं वत्थाइं पवर परिहिए अप्पमहग्घाऽऽभरणालंकियसरीरे भोयणवेलाए भोयणमंडवंसि सुहासणवरगते। तए णं मित्त–नाइ–नियग–संबंधिपरिजणेणं सद्धिं तं विउलं असण–पाण–खाइम–साइमं आसादेमाणे वीसादेमाणे परिभाएमाणे परिभुंजेमाणे विहरइ।

२५. तत्पश्चात् किसी एक दिन पूर्व रात्रि व्यतीत होने पर पश्चिम रात्रि (तृतीय प्रहर) के समय कुटुम्ब जागरिका (कुटुम्ब के विषय मे चिन्तन) जागते हुए उस मौर्यपुत्र तामली गाथापति को इस प्रकार का यह अध्यवसाय यावत् मन मे सकल्प उत्पन्न हुआ कि–"मेरे द्वारा पूर्वकृत, पुरातन (दानादि रूप मे) सम्यक् आचरित, सुपराक्रमयुक्त, शुभ और कल्याणरूप कृतकर्मो का कल्याणफलरूप प्रभाव अभी तक तो विद्यमान है; जिस (पूर्वार्जित पुण्य–प्रभाव के कारण) मेरे घर मे हिरण्य (चाँदी), सुवर्ण, धन, धान्य, पुत्र–परिवार, पशुधन बढ रहा है तथा विपुल धन, कनक, रत्न, मणि, मोती, शंख, चन्द्रकान्त वगैरह मणिरूप पत्थर, प्रवाल (मूँगा) रक्तरत्न तथा माणिक्यरूप सारभूत धन की अधिकाधिक वृद्धि हो रही है।

तो क्या मै, पूर्वकृत, पुरातन (दानादिरूप मे) समाचरित यावत् पूर्वकृत (शुभकर्मों) का फल भोगने से उनका एकान्तरूप से क्षय हो रहा है, इसे अपने सामने देखता रहूँ–इस (क्षय = नाश) की उपेक्षा करता रहूँ? (अर्थात्–मुझे इतना सुख–साधनो का लाभ है, इतना ही बस मानकर क्या भविष्यकालीन लाभ के प्रति उदासीन बना रहूँ? यह मेरे लिए ठीक नही है।) अतः जब तक मै चाँदी–सोने यावत् माणिक्य आदि सारभूत पदार्थों के रूप मे सुखसामग्री द्वारा दिनानुदिन अतीव–अतीव अभिवृद्धि पा रहा हूँ और जब तक मेरे मित्र, ज्ञातिजन–(स्वगोत्रीय), निजक–कुटुम्बीजन, मातृपक्षीय (ननिहाल के) या श्वसुरपक्षी सम्बन्धी एव परिजन–(दास–दासी आदि) मेरा आदर करते है, मुझे स्वामी रूप मे मानते है, मेरा सत्कार–सम्मान करते हैं, मुझे कल्याणरूप, मगलरूप, देवरूप और चैतन्य (समझदार = अनुभवी) रूप मानकर विनयपूर्वक मेरी सेवा करते है; तब तक (मुझे) अपना कल्याण कर लेना चाहिए। यही मेरे लिए श्रेयस्कर है। अतः रात्रि

के व्यतीत होने पर प्रभात का प्रादुर्भाव होते ही (अर्थात् प्रातःकाल का प्रकाश होने पर) यावत् जाज्वल्यमान सूर्य के उदय होने पर मैं स्वयं अपने हाथ से काष्ठपात्र बनाऊँ और पर्याप्त अशन, पान, खादिम और स्वादिम रूप चारों प्रकार का आहार तैयार कराकर, अपने मित्र, ज्ञातिजन, स्वजन–सम्बन्धी तथा दास–दासी आदि परिजनो को आमन्त्रित करके उन्हे सम्मानपूर्वक अशनादि चारो प्रकार के आहार का भोजन कराऊँ, फिर वस्त्र, सुगन्धित पदार्थ, माला और आभूषण आदि द्वारा उनका सत्कार–सम्मान करके उन्हीं मित्र, ज्ञातिजन, स्वजन–सम्बन्धी और परिजनो के समक्ष अपने ज्येष्ठ पुत्र को कुटुम्ब का सारा दायित्व सौंपकर उन मित्र–ज्ञातिजन–स्वजन–परिजनादि तथा अपने ज्येष्ठपुत्र से पूछकर, मैं स्वयमेव काष्ठपात्र लेकर एव मुण्डित होकर 'प्रणामा' नाम की प्रव्रज्या अगीकार करूँ।

प्रव्रजित होते ही मै इस प्रकार का अभिग्रह (सकल्प = प्रतिज्ञा) धारण करूँ कि मै जीवनभर निरन्तर छट्ठ–छट्ठ (बेले–बेले) तपश्चरण करूँगा और सूर्य के सम्मुख दोनों भुजाएँ ऊँची करके आतापना भूमि मे आतापना लेता हुआ रहूँगा और छट्ठ भक्त के पारणे के दिन आतापनाभूमि से नीचे उतरकर स्वय काष्ठपात्र हाथ मे लेकर ताम्रलिप्ती नगरी के ऊँच, नीच और मध्यम कुलों के गृहसमुदाय मे भिक्षाचरी के लिए पर्यटन करके भिक्षाविधि द्वारा शुद्ध ओदन (केवल भात) लाऊँगा और उसे २१ बार धोकर खाऊँगा।'' इस प्रकार तामली गृहपति ने शुभ विचार किया।

इस प्रकार का विचार करके रात्रि व्यतीत होते ही प्रभात का प्रादुर्भाव होने पर यावत् तेज से जाज्वल्यमान सूर्य के उदय होने पर उसने स्वयमेव लकडी का पात्र बनाया। फिर अशन, पान, खादिम, स्वादिम रूप चारो प्रकार का आहार तैयार करवाया। तत्पश्चात् उसने स्नान किया, बलिकर्म किया, कौतुक मगल और प्रायश्चित्त किया, शुद्ध और उत्तम वस्त्र ठीक–से पहने, अल्पभार तथा बहुमूल्य आभूषणो से अपने शरीर को अलकृत किया। तत्पश्चात् भोजन के समय वह तामली गृहपति भोजनमण्डल मे आकर शुभासन पर सुखपूर्वक बैठा। इसके बाद तामली गृहपति (आमंत्रित) मित्र, ज्ञातिजन, स्वजन सम्बन्धी एव परिजन आदि के साथ उस विपुल, अशन, पान, खादिम और स्वादिम रूप चतुर्विध आहार का आस्वादन करता है, विशेष स्वाद लेता है, दूसरो को परोसता है, भोजन कराता है और स्वय भोजन करता है।

25. One night, past the first half and during the third quarter, while Mauryaputra Tamali Gathapati was awake thinking about family matters, an aspiration (*ajjhatthiye* or *adhyatmik*), ... and so on up to.. intention (*sankappe* or *sankalp*) surfaced—"These fruits of the auspicious and beatific deeds properly and steadfastly performed in the near and remote past continue to be with me till now. It is due to these that my silver, gold, wealth, stock of grains, family and livestock still continue to multiply Also my valuable wealth including cash, gold, gems, beads, pearls, conch-shells, gemstones like moon-stone (*Chandrakant mani*), coral, *Rakt-ratna* and rubies continues to accumulate in larger and larger quantities every day.

So should I continue to passively observe this singular depletion of fruits of the auspicious and beatific deeds, properly and steadfastly performed in the near and remote past, caused by enjoying them and ignore this (depletion) ? (In other words, with the assumption that I have the benefit of so much means of pleasure, should I be indifferent to the needs of the future ? This is not good for me.) Therefore, as long as my silver, gold, ... and so on up to. . rubies continue to accumulate in larger and larger quantities every day; as long as my friends, kinfolk, family members, maternal relatives, wife's relatives, and servants respect me, accept me as master, honour me, and serve me humbly accepting me to be beatific, auspicious, divine and sagacious; I should work for my own (future) well-being. Only that would be to my advantage. Therefore, tomorrow when the night ends and it is dawn (at first light) . and so on up to. when the sun is at its full glow I should make wooden bowls with my own hands. I should get large quantities of *ashan, paan, khadya, svadya* (staple food, liquids, general food and savoury food) cooked Having done that, I should invite my friends, family members, relatives and servants, greet them, offer them this food; and honour them with clothes, perfumes, garlands and ornaments. After that, in their presence I should hand over the responsibility of the family to my eldest son Then after seeking permission from them and my eldest son, carrying the wooden bowls along and tonsuring my head I should accept the *Pranama* initiation (*pravrajya*)

After getting initiated I will take this resolve—"I will observe a life long vow of continuous two day fasts (a two day fast followed by a day of eating and again followed by a two day fast and so on). While doing this I will endure the heat of the sun by standing in *Atapana Bhumi* (the allotted raised spot for austerities involving mortification by heat; the heat-mortification arena) with arms raised and facing the sun. On the day of breaking the fast I will get down from the *Atapana Bhumi*, carry the wooden bowl and collect pure cooked rice (*odan*) as alms by visiting houses of low, middle and high class families in Tamralipti city. Then I will wash the rice 21 times before eating " Thus merchant Tamali took this noble resolve.

Deciding thus, when the night ended and it was dawn (at first light)... and so on up to... when the sun was at its full glow he made a wooden bowl with his own hands. He then got large quantities of *ashan, paan,*

khadya, svadya (staple food, liquids, general food and savoury food) cooked. After that he took his bath, performed propitiatory rites (*Bali-karma*), conciliatory and auspicious rituals (*Kautuk-mangal* and *prayashchit*), put on clean and excellent ceremonial dresses and embellished himself with light but costly ornaments. At meal-time that Tamali Gathapati came to the dining area and took a comfortable seat. Thereafter he sat to dine with friends, family members, relatives and servants, tasting and savouring, serving, feeding and eating that ample *ashan, paan, khadya, svadya* (staple food, liquids, general food and savoury food).

२६. जिमियभुत्तुत्तरागए वि य णं समाणे आयंते चोक्खे परमसुइभूए तं मित्तं जाव परियणं विउलेणं असणपाणखाइम–साइम पुप्फ–वत्थ–गंध–मल्लाऽलंकारेण य सक्कारेइ, सम्माणेइ तस्सेव मित्त–नाइ जाव परियणस्स पुरओ जेट्ठं पुत्तं कुडुंबे ठावेइ, ठावेत्ता तं मित्त–नाइ–णियग–संबंधिपरिजणं जेट्ठपुत्तं च आपुच्छइ, आपुच्छित्ता मुण्डे भवित्ता पाणामाए पव्वज्जाए पव्वइए।

पव्वइए वि य णं समाणे इमं एयारूवं अभिग्गहं अभिगिण्हइ–'कप्पइ मे जावज्जीवाए छट्ठंछट्ठेणं जाव आहारित्तए' त्ति कट्टु इमं एयारूवं अभिग्गहं अभिगिण्हइ, अभिगिण्हित्ता जावज्जीवाए छट्ठंछट्ठेणं अनिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं उड्ढं बाहाओ पगिज्झिय २ सूराभिमुहे आयावणभूमीए आयावेमाणे विहरइ। छट्ठस्स वि य णं पारणयंसि आयावणभूमीओ पच्चोरुहइ, सयमेव दारुमयं पडिग्गहं गहाय तामलित्तीए नगरीए उच्च–नीय–मज्झिमाइं कुलाइं घरसमुदाणस्स भिक्खायरियाए अडइ, अडित्ता सुद्धोयणं पडिग्गाहेइ, तिसत्तखुत्तो उदएणं पक्खालेइ, तओ पच्छा आहारं आहारेइ।

२६. भोजन करने के बाद उसने पानी से हाथ धोये और चुल्लू में पानी लेकर कुल्ला किया, मुख साफ करके स्वच्छ हुआ। फिर उन सब मित्र–ज्ञाति–स्वजन–परिजनादि का विपुल अशन, पान, खादिम, स्वादिम, पुष्प, वस्त्र, सुगन्धित द्रव्य, माला, अलकार आदि से सत्कार–सम्मान किया। फिर उन्ही मित्र–स्वजन आदि के समक्ष अपने ज्येष्ठ पुत्र को कुटुम्ब में (प्रमुख स्थान पर) स्थापित किया–तत्पश्चात् उन्ही मित्र–स्वजन आदि तथा अपने ज्येष्ठ पुत्र को पूछकर और मुण्डित होकर 'प्राणामा' नाम की प्रव्रज्या अंगीकार की।

प्राणामा–प्रव्रज्या मे प्रव्रजित होते ही तामली ने इस प्रकार का अभिग्रह ग्रहण किया–'आज से मेरा कल्प यह होगा कि मै आजीवन निरन्तर छट्ठ–छट्ठ तप करूँगा, यावत् पूर्वकथितानुसार भिक्षाविधि से केवल भात (पके हुए चावल) लाकर उन्हे २१ बार पानी से धोकर उनका आहार करूँगा।' इस प्रकार अभिग्रह धारण करके वह तामली तापस यावज्जीवन निरन्तर बेले–बेले तप करके दोनो भुजाएँ ऊँची करके आतापना भूमि में सूर्य के सम्मुख आतापना लेता हुआ विचरण करने लगा। बेले के पारणे के दिन आतापना भूमि से नीचे उतरकर स्वयं काष्ठपात्र लेकर ताम्रलिप्ती नगरी में ऊँच, नीच और मध्यम कुलों के गृह–समुदाय से विधिपूर्वक भिक्षा के लिए घूमता था। भिक्षा में वह केवल भात लाता और उन्हें २१ बार पानी से धोता था, तत्पश्चात् आहार करता था।

26. When dinner was over he cleansed himself by washing his hands, mouth and face Once that was done he greeted and honoured his friends, family members, relatives and servants by offering them large quantities of *ashan, paan, khadya, svadya,* flowers, clothes, perfumes, garlands and ornaments. After that, in their presence he blessed his eldest son with the status of head of the family. Then after seeking permission from his friends... and so on up to . servants and his eldest son and tonsuring his head he accepted the *Pranama* initiation (*pravrajya*).

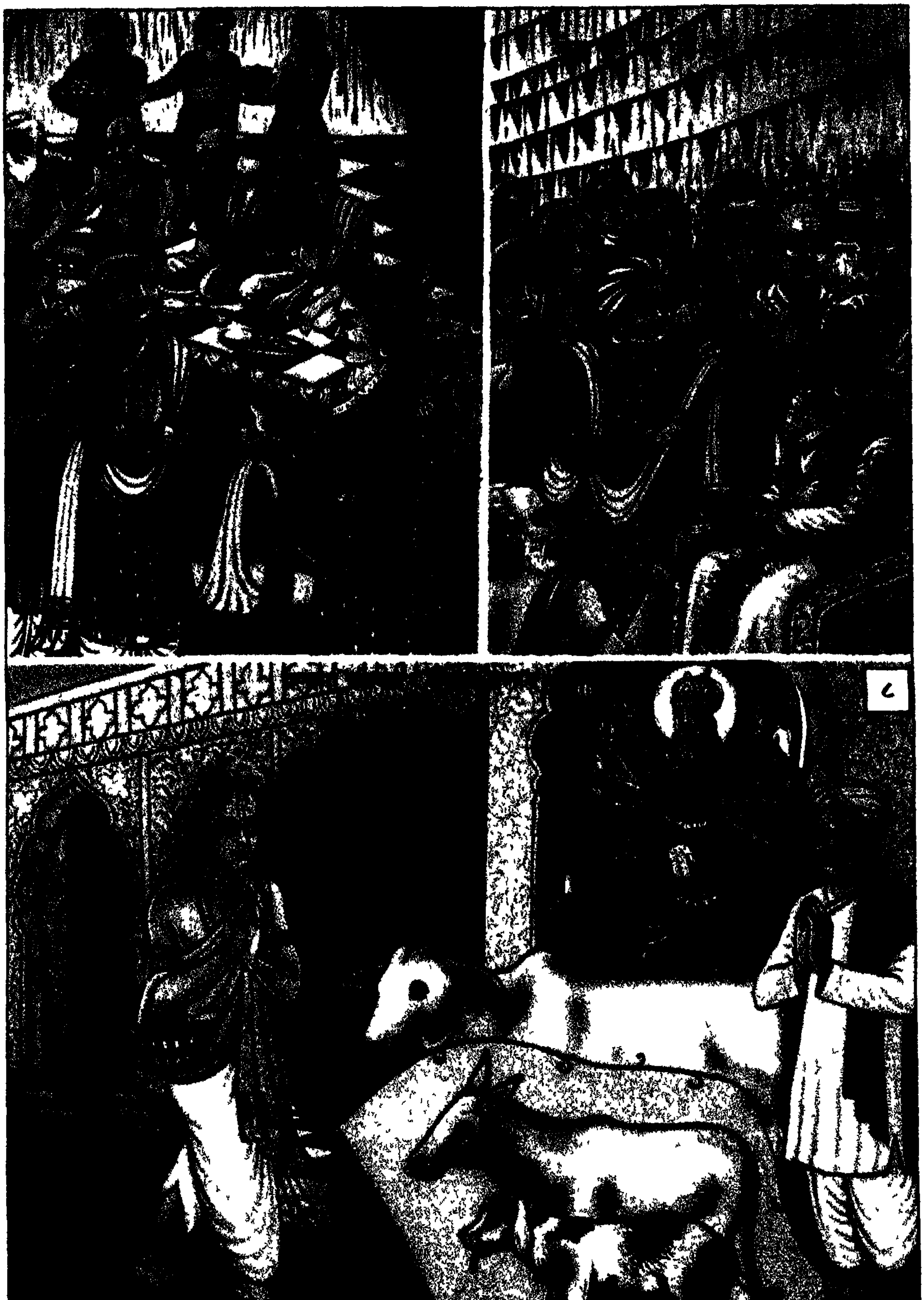
Immediately on accepting the *Pranama* initiation (*pravrajya*) Tamali took this resolve—"Since this day I will observe a life long vow of continuous two day fasts... and so on up to . collecting alms as aforesaid I will wash the rice 21 times before eating." Taking this resolve that Tamali hermit (*tapas)* spent his time observing the life long vow of continuous two day fasts enduring the heat of the sun by standing in *Atapana Bhumi* with arms raised and facing the sun. On the day of breaking the fast he would get down from the *Atapana Bhumi*, carry the wooden bowl and properly collect pure cooked rice (*odan*) as alms by visiting houses of low, middle and high class families in Tamralipti city Then he would wash the rice 21 times before eating "

विवेचन : ताम्रलिप्ती नगरी–भगवान महावीर से पूर्व भी यह नगरी बंग देश की राजधानी के रूप में प्रसिद्ध थी। तामली गृहपति के प्रकरण से भी यह बात सिद्ध होती है कि ताम्रलिप्ती के कारण बग देश का गौरवपूर्ण स्थान था। अनेक नदियाँ होने के कारण जलमार्ग और स्थलमार्ग दोनो से माल का आयात-निर्यात होने के कारण व्यापार की दृष्टि से तथा सरसब्ज होने से उत्पादन की दृष्टि से भी यह समृद्ध था। वर्तमान 'ताम्रलिप्ती' का नाम अपभ्रष्ट होकर 'तामलूक' हो गया है, यह कोलकाता के पास मिदनापुर जिले मे है। ताम्रलिप्ती के गृहपतियो मे मौर्य वश ख्याति प्राप्त था।

आतापना–तैजस् शक्ति या कुण्डलिनी के विकास की एक प्रकृष्ट साधना है, आतापना। यह सूर्य के तैजस् अर्थात् सौर ऊर्जा (सोलर एनर्जी) से प्राप्त होती है। तपस्वी और मुनिजन इसका प्रयोग प्राण-ऊर्जा के सवर्धन और चित्त की निर्मलता के लिए करते थे। आतापना के लिए पर्वत शिखर या कोई भी ऊँचा स्थान आदि चुना जाता है, जिसे आतापना भूमि कहते है। बृहत्कल्पभाष्य में इसके भेद-प्रभेद का विस्तृत वर्णन है। *(भगवई भाग १, भाष्य, पृष्ठ २४१)*

Elaboration—Tamralipti city—Even before Bhagavan Mahavir this city was famous as the capital of Bang Desh (Bengal). This story of Tamil Gathapati confirms that Tamralipti city was the cause of the glory of Bang Desh. Due to numerous rivers in that area access was available through both land and water routs. This facilitated flourishing of import and export trade. The rivers made the land fertile making the area rich

तामली तापस (१)



चित्र परिचय-८

Illustration No. 8

तामली तापस (१)

(१) ताम्रलिप्ती निवासी मौर्यपुत्र तामली गाथापति बहुत ही धनाढ्य तथा प्रतिष्ठा प्राप्त था। एकबार उसके मन मे विचार उत्पन्न हुआ, मुझे अभी जो सुख समृद्धि प्राप्त हुई है, वह पूर्वकृत पुण्यो का फल है। अब यदि मै इस जन्म मे कुछ शुभ कर्म, तप दान आदि नही करूँगा तो अगला जन्म तो दु खमय ही बीतेगा। अत इस घर परिवार को छोडकर मुझे तप आदि करना चाहिए। उसने अपने स्वजन परिजनो आदि को भोजन पर आमन्त्रित किया। सभी का भोजन कराया तथा मान सम्मान किया।

(२) पश्चात स्वजन परिजनो के समक्ष ज्येष्ठ पुत्र को अभिषेक किया। गृहभार सौपा पण्डितो ने मन्त्रोच्चार पूर्वक आशीर्वचन कहे।

(३) तामली गाथापति ने सिर का मुण्डन किया। परिव्राजक वेष धारण किया। हाथ मे काष्टपात्र लिए। **'प्रणामा प्रव्रज्या'** स्वीकार कर घर से निकल पडा। इस प्रव्रज्या के अनुसार मार्ग मे कुत्ता गधा, गाय आदि मानव या देवी देव कोई भी दिखाई पडता तो हाथ जोडकर उसे प्रणाम करता हुआ वन की ओर चला गया।

(४) वन मे जाकर तामली तापस ने अभिग्रह धारण किया- आज से मै निरन्तर बेले- बेले तप करूँगा। सूर्य के सम्मुख खडा होकर आतापना लूँगा। भिक्षा मे पके हुए चावल के सात दाने ग्रहण करूँगा। शुद्ध पानी मे २१ बार धोकर उन सात चावल दानो का ही आहार करूँगा।

शतक ३ उ १ सूत्र २१-२७

TAMALI TAPAS (1)

(1) In Tamralipti city lived a householder named Mauryaputra Tamali He was very rich and respected Once he thought—The happiness and wealth I have is due to the merits from my past birth Now if I do not indulge in good deeds, austerities, and charity my next life will be miserable Therefore I should renounce my household and do penance etc He invited his friends and relatives for meals He offered them food and honoured them

(2) In presence of his friends and relatives he anointed his eldest son and gave him the charge of the household Priests blessed him amidst chanting of mantras

(3) Tamali Gathapati tonsured his head and put on the Parivrajak garb He took wooden bowls in his hand and left his house after accepting **Pranama initiation.** Following the code of this initiation he moved towards a jungle greeting everything on the path with joined palms may that be a dog, donkey, cow, man or god-goddess

(4) When in jungle hermit Tamali resolved —"Since this day I will observe a series of two day fasts I will stand facing the sun and endure its heat As alms I will accept seven grains of cooked rice I will only eat those seven grains after washing them 21 times in water"

—Shatak 3 lesson 1, Sutra 21 27

in agricultural produce. With passage of time the name Tamralipti has been corrupted to Taamluke; it is near Kolkata in Midnapur district. Among the merchants of Tamralipti city Maurya was a well known clan.

Atapana—For the enhancement of radiant energy or *Kundalini*, *Atapana* is an effective technique. This is acquired through solar energy. Hermits and monks employ this technique to bolster life-force as well as inner purity. For this practice a high spot like hilltop is chosen and it is called *Atapana Bhumi*. *Brihatkalp Bhashya* contains detailed description of this technique and its branches. *(Bhagavai, Part-1, p. 241)*

प्रव्रज्या का नाम 'प्राणामा' क्यों ? **WHY 'PRANAMA' INITIATION ?**

२७. [प्र.] से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ–पाणामा पव्वज्जा ?

[उ.] गोयमा ! पाणामाए णं पव्वज्जाए पव्वइए समाणे जं जत्थ पासइ इंदं वा खंदं वा रुद्दं वा सिवं वा वेसमणं वा अज्जं वा कोट्टकिरियं वा रायं वा जाव सत्थवाहं वा, कागं वा साणं वा पाणं वा उच्चं पासइ उच्चं पणामं करेति, नीयं पासइ नीयं पणामं करेइ, जं जहा पासति तस्स तहा पणामं करेइ। से तेणट्ठेणं जाव पव्वज्जा।

२७. [प्र.] भगवन् ! तामली द्वारा ग्रहण की हुई प्रव्रज्या 'प्राणामा' क्यो कहलाती है ?

[उ.] हे गौतम ! प्राणामा प्रव्रज्या में प्रव्रजित होने पर वह (प्रव्रजित) व्यक्ति जिसे जहाँ देखता है, (उसे वही प्रणाम करता है) (अर्थात्–) इन्द्र को, स्कन्द (कार्तिकेय) को, रुद्र (महादेव) को, शिव (शकर या किसी व्यन्तरविशेष) को, वैश्रमण (उत्तर दिशा का लोकपाल कुबेर) को, आर्या (प्रशान्तरूपा पार्वती) को, रौद्ररूपा चण्डिका (महिषासुरमर्दिनी चण्डी) को, राजा को, यावत् सार्थवाह को, (अर्थात्–राजा, युवराज, तलवर, माडम्बिक, कौटुम्बिक, श्रेष्ठी एवं सार्थवाह–बनजारे को) अथवा कौआ, कुत्ता और श्वपाक = चाण्डाल (आदि सबको प्रणाम करता है।) इनमे से उच्च व्यक्ति को देखता है तो उच्च–रीति से (विशेष) प्रणाम करता है, नीच को देखकर नीची रीति से (सामान्य) प्रणाम करता है। (अर्थात्–) जिसे जिस रूप में देखता है, उसे उसी रूप में प्रणाम करता है। इस कारण हे गौतम ! इस प्रव्रज्या का नाम 'प्रणामा' प्रव्रज्या है।[1]

27. [Q.] *Bhante* ! Why the initiation accepted by Tamali is called *'Pranama'* ?

---

१ वर्तमान मे भी वैदिक सम्प्रदाय मे 'प्राणामा' प्रव्रज्या प्रचलित है। इस प्रकार की प्रव्रज्या मे दीक्षित हुए एक सज्जन के सम्बन्ध मे 'सरस्वती' (मासिक पत्रिका, भाग १३, अंक १, पृष्ठ १८०) में इस प्रकार के समाचार प्रकाशित हुए है–"... इसके बाद सब प्राणियों मे भगवान की भावना दृढ करने और अहकार छोडने के इरादे से प्राणिमात्र को ईश्वर समझकर आपने साष्टांग प्रमाण करना शुरू किया। जिस प्राणी को आप आगे देखते, उसी के सामने अपने पैरों पर आप जमीन पर लेट जाते। इस प्रकार ब्राह्मण से लेकर चाण्डाल तक और गौ से लेकर गधे तक को आप साष्टांग नमस्कार करने लगे।" *(शेष अगले पृष्ठ पर)*

[Ans.] Gautam ! On accepting the *Pranama* initiation the initiate is obliged to bow to (pay homage and obeisance; *pranam*) to whomsoever he meets wherever, be he Indra, Skand (Kartikeya), Rudra (Mahadev), Shiva (Shankar or some other *Vyantar* god), Vaishraman (Kuber, the *Lok-pal* of north), Aryaa (serene Parvati), furious Chandika (Durga); a king, ... and so on up to... caravan-chief; a crow, a dog, a *Shvapaak* or *Chandal* (keeper of cremation ground). Of these he offers greater courtesy to those of higher status and lesser courtesy to those of lower status (In other words) He bows to or greets with courtesy each and every one he comes across according to his rank and status. That is the reason this initiation is called *Pranama Pravrajya*.[1]

पादपोपगमन अनशन PADAPOPAGAMAN FASTING

२८. तए णं से तामली मोरियपुत्ते तेणं ओरालेणं विपुलेणं पयत्तेणं पग्गहिएणं बालतवोकम्मेणं सुक्के लुक्खे जाव धमणिसंतते जाये यावि होत्था।

२८. तत्पश्चात् वह मौर्यपुत्र तामली तापस उस उदार, विपुल, प्रदत्ता और प्रगृहीत बाल (अज्ञान) तप द्वारा (अत्यन्त) सूखा (शुष्क) हो गया, रूक्ष हो गया, यावत् (इतना दुर्बल हो गया कि) उसके समस्त नाडियो का जाल बाहर दिखाई देने लगा।

28. Then, as a consequence of the said naive austerity (*baal-tap*), that was free of expectations (*udaar*), extended (*vipul*), consented by the guru (*pradatt*), and observed with great devotion (*pragrihit*); that Mauryaputra Tamali Tapas became dehydrated, haggard. and so on up to . (He was famished and weak) so much so that the network of his veins became prominent and visible.

(पिछले पृष्ठ का शेष)

प्रस्तुत शास्त्र मे उल्लिखित 'प्राणामा' प्रव्रज्या और 'सरस्वती' मे प्रकाशित उपर्युक्त घटना, दोनो की प्रवृत्ति समान प्रतीत होती है। किन्तु ऐसी प्रवृत्ति सम्यग्ज्ञान के अभाव की सूचक है। *(भगवती, विवेचन (प घेवरचन्द जी), भा २, पृष्ठ ५९४)*

1 This *Pranama Pravrajya* is still prevalent in Vedic sects There is a mention about a person who accepted such *Pravrajya* in a Hindi periodical *Sarasvati* (Vol 13, No 1, p 184)—" . after that, in order to strengthen his faith in God and get rid of his conceit he started prostrating before every living being considering him to be the image of God The moment he came across any living being he prostrated before him to pay respect This way he started paying homage to everyone right from a high Brahmin to a lowly *Chandal* "

The *Pranama Pravrajya* mentioned here and that reported in *Sarasvati* appear to follow the same line of thought However, such attitude is a sign of absence of right knowledge (*samyak-jnana*) *(Bhagavati, Vivechana by Pt Ghevarchand ji, Part-2, p 594)*

२९. तए णं तस्स तामलिस्स बालतवस्सिस्स अन्नया कयाइं पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि अणिच्चजागरियं जागरमाणस्स इमेयारूवे अज्झत्थिए चिंतिए जाव समुप्पज्जित्था-'एवं खलु अहं इमेणं ओरालेणं विपुलेणं जाव उदग्गेणं उदत्तेणं उत्तमेणं महाणुभागेणं तवोकम्मेणं सुक्के लुक्खे जाव धमणिसंतते जाते, तं अत्थि जा मे उट्ठाणे कम्मे बले वीरिए पुरिसक्कारपरक्कमे तावता मे सेयं कल्लं जाव जलंते तामलित्तीए नगरीए दिट्ठाभट्ठे य पासंडत्थे य गिहत्थे य पुव्वसंगतिए य परियायंसगतिए य आपुच्छित्ता तामलित्तीए नगरीए मज्झंमज्झेणं निग्गछित्ता पाउग्गं कुण्डियमाइयं उवकरणं दारुमयं च पडिग्गहं एगंते एडित्ता तामलित्तीए नगरीए उत्तरपुरित्थमे दिसिभाए णियत्तणियमंडलं आलिहित्ता संलेहणा-झूसणा-झूसियस्स भत्त-पाणपडियाइक्खियस्स पाओवगयस्स कालं अणवकंखमाणस्स विहरित्तए त्ति कट्टु एवं संपेहेइ।

एवं संपेत्ता कल्लं जाव जलंते जाव आपुच्छइ, आपुच्छित्ता तामलित्तीए एगंते एडेइ। जाव भत्त-पाणपडियाइक्खिए पाओवगमणं निवन्ने।'

२९. किसी एक दिन पूर्व रात्रि व्यतीत होने पर पश्चिम रात्रि के समय अनित्य जागरिका अर्थात् संसार, शरीर आदि की क्षणभंगुरता का विचार करते हुए उस बालतपस्वी तामली को इस प्रकार चिन्तन यावत् मनोगत सकल्प उत्पन्न हुआ कि 'मै इस उदार, विपुल यावत् उदग्र, उदात्त, उत्तम और महाप्रभावशाली तप·कर्म करने से शुष्क और रूक्ष हो गया हूँ, यावत् मेरा शरीर इतना कृश हो गया है कि नाडियो का जाल बाहर दिखाई देने लग गया है। इसलिए जब तक मुझमे उत्थान, कर्म, बल, वीर्य और पुरुषकार-पराक्रम है, तब तक मेरे लिए श्रेयस्कर है कि कल प्रातःकाल जाज्वल्यमान सूर्योदय होने पर मैं ताम्रलिप्ती नगरी मे जाऊँ। वहाँ जो दृष्ट-भाषित-(जिनको पहले गृहस्थावस्था में देखा है और जिनके साथ बातचीत की है)' व्यक्ति है, जो पाषण्डस्थ (श्रमण तापस) हैं, या जो गृहस्थ हैं, जो पूर्व परिचित (गृहस्थावस्था के परिचित) है, या जो पश्चात् परिचित (तापस जीवन मे परिचय मे आये हुए) है, तथा जो समकालीन प्रव्रज्या-दीक्षा पर्याय से युक्त पुरुष है, उनसे पूछकर (विचार-विनिमय करके), ताम्रलिप्ती नगरी के बीचोबीच से निकलकर पादुका (खडाऊ), कुण्डी आदि उपकरणों तथा काष्ठ-पात्र को एकान्त मे रखकर, ताम्रलिप्ती नगरी के उत्तर-पूर्व दिशा भाग (ईशानकोण) मे निवर्तनिक (एक परिमित क्षेत्र विशेष, अथवा स्वशरीर प्रमाण स्थान) मण्डल का आलेखन (रेखा खींचकर क्षेत्रमर्यादा) करके, सलेखना (काय और कषाय को कृश करने वाला) तप से आत्मा को सेवित कर आहार-पानी का सर्वथा त्याग करके पादपोपगमन संथारा करूँ और मृत्यु की आकाक्षा नही करता हुआ (शान्तचित्त से समभाव मे) विचरण करूँ, मेरे लिए यही उचित है।

यो विचार करके प्रभातकाल होते ही यावत् जाज्वल्यमान सूर्योदय होने पर (पूर्वोक्त-पूर्व चिन्तित सकल्पानुसार सबसे यथायोग्य) पूछा। विचार विनिमय करके उस (तामली तापस) ने (ताम्रलिप्ती नगरी के बीचोबीच से निकलकर अपने उपकरण) एकान्त स्थान मे छोड दिये। फिर यावत् आहार-पानी का सर्वथा प्रत्याख्यान किया और पादपोपगमन नामक अनशन (संथारा) अंगीकार किया।

29. Later, some other night, past the first half and during the third quarter, while Mauryaputra Tamali Gathapati was awake pondering

over his ephemeral state, an aspiration (*ajjhatthiye* or *adhyatmik*), ... and so on up to... intention (*sankappe* or *sankalp*) surfaced—"As a consequence of the said excellent and highly efficacious austerity; that was free of expectations (*udaar*), extended (*vipul*), ... and so on up to... rigorous (*udagra*), I have become dehydrated, haggard... and so on up to. (I am famished and weak) so much so that the network of my veins has become prominent and visible. Therefore, as long as I am endowed with capacity to rise (*utthaan*) and act (*karma*), with strength (*bal*), potency (*virya*), and with the will of self-exertion (*purushakar-parakram*), it is good for me that tomorrow when the night ends and the brilliant sun rises I should go to Tamralipti city. I should consult the people I was acquainted with and talked to (*drisht-bhashit*), the ascetic-hermits (*pashandasth*) or householders who have been my companions of my pre-hermit and post-hermit states and those who have been recently initiated After due consultation I should move through the heart of the city and deposit my sandals, bowls and other belongings at some forlorn spot After doing that I should go towards north-east of Tamralipti city There I should select and demarcate a limited area (equivalent to the dimensions of the body), and spend my time enriching my soul by observing the ultimate vow (*sallekhana*), abandoning food and water completely and commencing the *padapopagaman santhara* (fast unto death lying still like a severed branch of tree) without a desire for death. That would be proper for me"

With these thoughts, the next morning when the brilliant sun dawned, as aforesaid he (Tamali Tapas) consulted people. After consultation (passing through the heart of Tamralipti city) he deposited his belongings at a forlorn spot and so on up to abandoning food and water completely he embraced the *padapopagaman santhara*.

बलिचंचावासी देवगण द्वारा प्रार्थना REQUEST BY GODS OF BALICHANCHA

३०. तेणं कालेणं तेणं समएणं बलिचंचा रायहाणी अणिंदा अपुरोहिया यावि होत्था। तए णं ते बलिचंचा रायहाणिवत्थव्वया बहवे असुरकुमारा देवा य देवीओ य तामलिं बालतवस्सिं ओहिणा आभोयंति, आभोइत्ता अन्नमन्नं सद्दावेंति, सद्दावेत्ता एवं वयासी—"एवं खलु देवाणुप्पिया ! बलिचंचा रायहाणी अणिंदा अपुरोहिया, अम्हे य णं देवाणुप्पिया ! इंदाधीणा इंदाधिट्ठिया इंदाहीणकज्जा। अयं च णं देवाणुप्पिया ! तामली बालतवस्सी तामलित्तीए नगरीए बहिया उत्तरपुरत्थिमे दिसीभाए नियत्तणियमंडलं आलिहित्ता संलेहणा—झूसणा—झूसिए भत्त—पाणपडियाइक्खिए पाओवगमणं निवन्ने।

तं सेयं खलु देवाणुप्पिया ! अम्हं तामलिं बालतवस्सिं बलिचंचाए रायहाणीए ठितिपकप्पं पकरावेत्तए'' त्ति कट्टु अन्नमन्नस्स अंतिए एयमट्ठं पडिसुणेंति, पडिसुणित्ता बलिचंचाए रायहाणीए मज्झंमज्झेणं निग्गच्छंति, निग्गच्छित्ता जेणेव रुयगिंदे उप्पायपव्वए तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता वेउव्वियसमुग्घाएणं समोहण्णंति जाव उत्तरवेउव्वियाइं रूवाइं विकुव्वंति, विकुव्वित्ता ताए उक्किट्ठाए तुरियाए चवलाए चंडाए जइणाए छेयाए सीहाए सिग्घाए दिव्वाए उद्धुयाए देवगतीए तिरियमसंखेज्जाणं दीव-समुद्दाणं मज्झंमज्झेणं जेणेव जंबुद्दीवे दीवे जेणेव भारहे वासे जेणेव तामलित्ती नगरी जेणेव तामली मोरियपुत्ते तेणेव उवागच्छंति उवागच्छित्ता तामलिस्स बालतवस्सिस्स उप्पिं सपक्खिं सपडिदिसिं ठिच्चा दिव्वं देविड्ढिं दिव्वं देवज्जुतिं दिव्वं देवाणुभागं दिव्वं बत्तीसविहं नट्टविहिं उवदंसेंति।

तामलिं बालतवस्सिं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेंति, वंदंति नमंसंति, नमंसित्ता एवं वयासी- ''एवं खलु देवाणुप्पिया ! अम्हे बलिचंचारायहाणीवत्थव्वया बहवे असुरकुमारा देवा य देवीओ य देवाणुप्पियं वंदामो नमंसामो जाव पज्जुवासामो। अम्हं णं देवाणुप्पिया ! बलिचंचा रायहाणी अणिंदा अपुरोहिया, अम्हे य णं देवाणुप्पिया ! इंदाहीणा इंदाहिट्ठिया इंदाहीणकज्जा, तं तुब्भे णं देवाणुप्पिया ! बलिचंचं रायहाणिं आढाह, परियाणह, सुमरह, अट्ठं बंधह, णिदाणं पकरेह, ठितिपकप्पं पकरेह। तए णं तुब्भे कालमासे कालं किच्चा बलिचंचारायहाणीए उववज्जिस्सह, तए णं तुब्भे अम्हं इंदा भविस्सह, तए णं तुब्भे अम्हेहिं सद्धिं दिव्वाइं भोगभोगाइं भुंजमाणा विहरिस्सह।''

३०. उस काल उस समय में बलिचचा (उत्तर दिशा के असुरेन्द्र असुरकुमारराज बलि की) राजधानी इन्द्रविहीन और (इन्द्र के अभाव मे) पुरोहित (शान्ति कर्म करने वाले देव) से विहीन थी। तब बलिचचा राजधानी निवासी बहुत-से असुरकुमार देवो और देवियों ने तामली बाल-तपस्वी को अवधिज्ञान से देखा। देखकर उन्होने एक-दूसरे को बुलाया और बुलाकर इस प्रकार कहा-'देवानुप्रियो ! (आपको मालूम ही है कि) बलिचचा राजधानी (इस समय) इन्द्र से विहीन और पुरोहित से भी विहीन है। हे देवानुप्रियो ! हम सब (अब तक) इन्द्राधीन और इन्द्राधिष्ठित (रहे) हैं, अपना सब कार्य इन्द्र की अधीनता मे होता है। हे देवानुप्रियो ! यह तामली बाल-तपस्वी ताम्रलिप्ती नगरी के बाहर उत्तर-पूर्व दिशाभाग मे निवर्तनिक मण्डल का आलेखन करके, सलेखना तप की आराधना से अपनी आत्मा को सेवित करके, आहार-पानी का सर्वथा प्रत्याख्यान कर, पादपोपगमन अनशन को स्वीकार कर स्थित है।

अत हे देवानुप्रियो ! हमारे लिए यही श्रेयस्कर है कि तामली बाल-तपस्वी को बलिचंचा राजधानी में (इन्द्र रूप में) स्थिति प्रकल्प-स्थिति करने (आकर रहने) का संकल्प कराएँ।' ऐसा विचार करके परस्पर एक-दूसरे के पास (इस बात के लिए) वचनबद्ध हुए। फिर वे सब बलिचंचा राजधानी के बीचोंबीच होकर निकले और जहाँ रुचकेन्द्र उत्पात पर्वत था, वहाँ आए। वहाँ आकर उन्होंने वैक्रिय समुद्घात से अपने आपको समवहत (युक्त) किया, यावत् उत्तरवैक्रिय रूपों की विकुर्वणा की। फिर उस उत्कृष्ट, त्वरित, चपल, चण्ड, जयिनी, छेक (निपुण), सिंहसदृश, शीघ्र, दिव्य और उद्धृत देवगति से तिरछे असंख्येय द्वीप-समुद्रों के मध्य में से होते हुए जहाँ जम्बूद्वीप नामक द्वीप था, जहाँ भारतवर्ष था,

जहाँ ताम्रलिप्ती नगरी थी, जहाँ मौर्यपुत्र तामली तापस था, वहाँ आये और तामली बाल-तपस्वी के (ठीक) ऊपर (आकाश में) चारो दिशाओ और चारों कोनों (विदिशाओ) में सामने खडे (स्थित होकर) दिव्य देव-ऋद्धि, दिव्य देव-द्युति, दिव्य देव-प्रभाव और बत्तीस प्रकार की दिव्य नाटकविधि बतलाई।

इसके पश्चात् तामली बाल-तपस्वी की दाहिनी ओर से तीन बार प्रदक्षिणा की, उसे वन्दन-नमस्कार किया। वन्दन-नमस्कार करके वे इस प्रकार बोले-हे देवानुप्रिय ! हम बलिचंचा राजधानी के निवासी बहुत-से असुरकुमार देव और देवीवृन्द आप देवानुप्रिय को वन्दन-नमस्कार करते हैं यावत् आपकी पर्युपासना करते है। हे देवानुप्रिय ! (इस समय) हमारी बलिचचा राजधानी इन्द्र और पुरोहित से विहीन है और हे देवानुप्रिय ! हम सब इन्द्राधीन और इन्द्राधिष्ठित रहने वाले है और हमारे सब कार्य इन्द्राधीन होते है। इसलिए हे देवानुप्रिय ! आप बलिचंचा राजधानी (के अधिपतिपद) का आदर करें (अपनावें)। उसके स्वामित्व को स्वीकार करे, उसका मन मे भलीभाँति स्मरण (चिन्तन) करें, उसके लिए (मन मे) निश्चय करे, उसका (बलिचचा राजधानी के इन्द्र पद की प्राप्ति का) निदान करें, बलिचचा मे उत्पन्न होकर स्थिति (इन्द्ररूप मे निवास) करने का संकल्प (निश्चय) करें। यदि (बलिचंचा राजधानी के अधिपति-पदप्राप्ति का आपका विचार स्थिर हो जायेगा, तब) आप मृत्यु प्राप्त करके बलिचचा राजधानी मे उत्पन्न होगे। फिर आप हमारे इन्द्र बन जायेगे और हमारे साथ दिव्य काम-भोगों को भोगते हुए विहरण करेगे।

30. During that period of time Balichancha, the capital city, (of Asurendra Bali, the *Indra* of *Asur Kumars*), was without an *Indra* (overlord) and a *Purohit* (the priest-god) At that time many *Asur Kumar* gods and goddesses residing in Balichancha, the capital city, saw Tamali, the naive hermit On seeing him they called each other and deliberated—"Beloved of gods ! (You are aware that) Balichancha, the capital city, is at present without an overlord and a priest-god. Beloved of gods ! We all have been subjects of an *Indra* and governed by an *Indra* (till now). All our activities are conducted under his guidance. O Beloved of gods ! This naive-hermit Tamali has demarcated a limited area to the north-east of Tamralipti city and is spending his time enriching his soul by observing the ultimate vow (*sallekhana*), abandoning food and water completely and commencing the *padapopagaman santhara*."

"Therefore, Beloved of gods ! It is good for us to inspire naive-hermit Tamali to decide to come to Balichancha, the capital city, and live here as our *Indra*." After these deliberations they committed to each other to act (as deliberated). Then they all passed through the heart of Balichancha, the capital city, and came to Ruchakendra Utpat mountain. There they prepared to perform *Vaikriya Samudghat* . and so on up to... created secondary transmuted forms (*uttar-vaikriya rupa*) Then with an

accelerating, fast, quick, fierce, winning, steady, lion-like, rushing, divine and billowing speed they crossed innumerable continents and seas in the transverse world and arrived where naive-hermit Tamali was stationed in Tamralipti city in Bharat-varsh in Jambu continent. Arriving there they stood (hovering) above naive-hermit Tamali in four directions and four intermediate directions, and displayed their divine opulence, divine radiance, divine influence and thirty two divine dances and plays.

After that they went around naive-hermit Tamali three times clockwise and paid him homage and obeisance. Having done that they said—"Beloved of gods ! We, a group of numerous *Asur Kumar* gods and goddesses from Balichancha, the capital city, pay our homage and obeisance to you... and so on up to... worship you. Beloved of gods ! Our Balichancha, the capital city, is at present without an overlord and a priest-god. Beloved of gods ! We all have been subjects of an *Indra* and governed by an *Indra* (till now). All our activities are conducted under his guidance. Therefore, O Beloved of gods ! Please take over Balichancha, the capital city. Please accept its reign. Please clearly ponder about it. Please take a decision about it. Please make up your mind for it. Please have a wish for it (the position of *Indra* of Balichancha). Please resolve to be born in Balichancha, the capital city, and live there as *Indra*. If your resolve (to be the *Indra* of Balichancha) is firm, after your death here, you will reincarnate in Balichancha, the capital city. Then you will become our *Indra* and live with us enjoying divine pleasures and comforts.

३१. तए णं से तामली बालतवस्सी तेहिं बलिचंचारायहाणिवत्थव्वएहिं बहुहिं असुरकुमारेहिं देवेहि य देवीहिं एवं वुत्ते समाणे एयमट्ठं नो आढाइ नो परियाणेइ, तुसिणीए संचिट्ठइ।

३१. जब बलिचंचा राजधानी में रहने वाले बहुत-से असुरकुमार देवों और देवियों ने उस तामली बाल-तपस्वी को इस प्रकार से कहा तो उनकी बात का आदर नहीं किया, उसे स्वीकार भी नही किया, किन्तु मौन रहा।

31. When numerous *Asur Kumar* gods and goddesses from Balichancha, the capital city, said thus to naive-hermit Tamali, he did not appreciate that and neither did he accept that. Instead, he remained silent.

३२. तए णं ते बलिचंचारायहाणिवत्थव्वया बहवे असुरकुमारा देवा य देवीओ य तामलिं मोरियपुत्ते दोच्चं पि तच्चं पि तिक्खुत्तो आयाहिणप्पयाहिणं करेंति, जाव अम्हं च णं देवाणुप्पिया ! बलिचंचा रायहाणी अणिंदा जाव ठितिपकप्पं पकरेह, जाव दोच्चं पि तच्चं पि एवं वुत्ते समाणे जाव तुसिणीए संचिट्ठइ।

३२. तब बलिचचा-राजधानी-निवासी उन बहुत-से देवो और देवियों ने उस तामली बाल-तपस्वी की फिर दाहिनी ओर से तीन बार प्रदक्षिणा करके दूसरी बार, तीसरी बार पूर्वोक्त बात कही कि "हे देवानुप्रिय ! हमारी बलिचचा राजधानी इन्द्रविहीन और पुरोहितरहित है, यावत् आप उसके स्वामी बनकर वहाँ स्थिति करने का सकल्प करिये।" उन असुरकुमार देव-देवियों द्वारा पूर्वोक्त बात दो-तीन बार दोहराई जाने पर भी तामली मौर्यपुत्र ने कुछ भी जवाब नहीं दिया यावत् वह मौन धारण करके बैठा रहा।

32. Then those numerous gods and goddesses from Balıchancha once again went around naive-hermıt Tamalı three times clockwise, paid him homage and obeisance, and repeated the aforesaid request a second and a third tıme—"Beloved of gods ! Our Balichancha, the capital city, is at present without an overlord and a prıest-god. and so on up to... Please take over Balichancha, the capıtal city." Even when numerous *Asur Kumar* gods and goddesses repeated theır request two-three times, Tamali Mauryaputra did not respond and so on up to he remaıned silent.

३३. तए णं ते बलिचंचारायहाणिवत्थव्वया बहवे असुरकुमारा देवा य देवीओ य तामलिणा बालतवस्सिणा अणाढाइज्जमाणा अपरियाणिज्जमाणा जामेव दिसिं पाउब्भूया तामेव दिसिं पडिगया।

३३. तत्पश्चात् अन्त मे जब तामली बाल-तपस्वी के द्वारा बलिचचा राजधानी-निवासी उन बहुत-से असुरकुमार देवो और देवियो का अनादर हुआ और उनकी बात नही मानी गई, तब वे (देव-देवीवृन्द) जिस दिशा से आये थे, उसी दिशा में वापस चले गये।

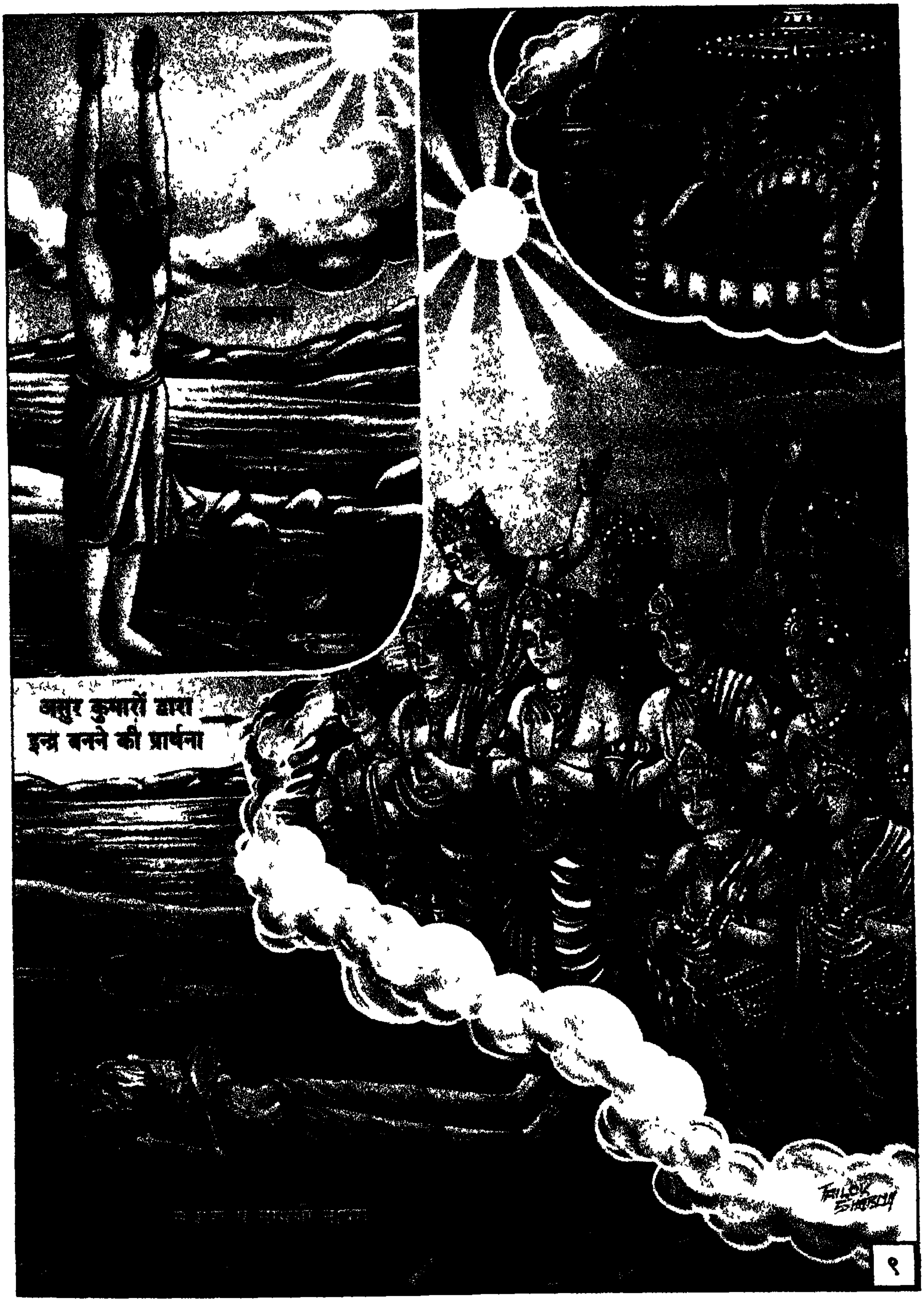
33. At last when those numerous gods and goddesses from Balichancha were thus insulted by naive-hermıt Tamalı and their request was not accepted, they went back ın the directıon they came from.

विवेचन : सूत्र ३० मे देवो की शीघ्र गति के १० विशेषण ध्यान देने योग्य हैं-उक्किट्ठा = उत्कर्षवती, तुरिया = त्वरावाली गति, चवला = शारीरिक चपलतायुक्त, चंडा = रौद्ररूपा, जइणा = दूसरो की गति को जीतने वाली, छेया = उपायपूर्वक प्रवृत्ति होने से निपुण, सीहा = सिंह की गति के समान अनायास होने वाली, सिग्घा = शीघ्रगामिनी, दिव्वा = दिव्य-देवो की, उद्धुया = गमन करते समय वस्त्रादि उडा देने वाली, अथवा उद्धत सदर्प गति। ये सब देवो की गति (चाल) के विशेषण है। (बत्तीस प्रकार की नाटक विधि का वर्णन रायपसेणियसूत्र मे देखें।)

बृहत्संग्रहणी ग्रन्थ मे देवताओ की गति का प्रमाण इस प्रकार बताया है-चंडा गति में एक कदम मे २,८३,५८० योजन प्रमाण दूरी तय की जाती है। चवला गति मे एक कदम में ४,७२,६३३ योजन, जइणा गति में ६,६१,६८६ योजन और वेगा (सिग्घा) गति में ८,५०,७४० योजन प्रमाण क्षेत्र एक कदम मे पार किया जाता है।

देवों ने बलिचंचा मे स्थिति प्रकल्प करने व इन्द्र पद स्वीकारने के लिए संकल्प (निदान) करने के लिए पाँच पदों का सकेत किया है-(१) आदर करें, (२) परिज्ञा-उनके स्वामी होने का लक्ष्य रखे। (३) स्मृति को स्थिर करें, (४) अर्थबंध-लक्ष्य के साथ तादात्म्य स्थापित करे, (५) निदान-~~लक्ष्य~~-प्राप्ति की तीव्र अभिलाषा करें।

तामली तापस (२)



चित्र परिचय-९	Illustration No. 9

तामली तापस (२)

तप का सकल्प लेकर वह नदी के किनारे पर अपनी चटाई बिछाकर सूर्य के सन्मुख खडा हो जाता। अपना कमण्डलु, अकुश, पादुका आदि उतार कर दूर रख देता है।

तप करते हुए बहुत दीर्घ काल व्यतीत हो गया। कठोर तपश्चरण से उसका शरीर अत्यन्त कृश (क्षीण) हो गया। तब अपनी मृत्यु का समय निकट जानकर वह नदी तट पर एकान्त स्थान पर गया। अपना आसन, कमण्डलु, पादुका आदि एक तरफ रखकर आहार-पानी का सर्वथा त्यागकर **पादपोपगमन सथारा** ग्रहण कर कटे हुए वृक्ष की भाँति निश्चल लेटकर शुभ भावो मे रमण करने लगा।

उस समय उत्तर दिशावर्ती असुर कुमारो की बलिचचा राजधानी इन्द्र विहीन हो गयी थी। इन्द्र का सिहासन खाली देखकर सभी देवताओ ने चिन्ता प्रकट की अब हमारा स्वामी कौन होगा? तभी उन असुर कुमार देवो ने तामली तपस्वी का कठोर उग्र तपश्चरण करते देखा। परस्पर विचार विनिमय किया यदि इस तपस्वी से आग्रह अनुरोध कर यह सकल्प (निदान) करा दिया जाये, उन्हे वचनबद्ध कर लिया जाय तो वह घोर तपस्वी मनुष्य आयु पूर्ण कर हमारा स्वामी (असुरकुमारेन्द्र) बन स[illegible]।

देवगण आकर अपना स्वर्गीय दिव्य वैभव ऋद्धि आदि का प्रदर्शन कर तामली तपस्वी से बलिचचा के इन्द्र बनने का सकल्प लेने की प्रार्थना कर रहे है।

शतक ३ उ. १ सूत्र ३०-३१

TAMALI TAPAS (2)

After taking the vow of penance he spread his mattress on the bank of a river and stood facing the sun He placed aside his bowl, lance slippers etc

He continued his penance for a very long period As a consequence of the harsh penance he became very weak Realizing that his end was near, he deposited his belongings in a corner and abandoning food and water completely, he embraced the **padapopagaman santhara.** Lying still like a broken branch of tree, he embraced pious thoughts

At that time Balichancha, the capital city of northern Asur Kumar gods was without an overlord Seeing this, Asur Kumar gods were worried—"Who is going to be our lord now?" Just then they saw hermit Tamali indulging in rigorous penance and deliberated—"If we beseech this hermit to resolve and promise to become our lord, this great hermit could become our lord after completing his life-span as a human being

Arriving there near Tamali the gods are displaying their divine opulence, divine radiance etc and requesting him to resolve to become their overlord Indra)

--Shatak 3, lesson 1, Sutra 30-31

Elaboration—The ten adjectives used for the speed (*gati*) of gods in aphorism-30 are worth a special attention. *Ukkittha* (*utkrisht*)—ever accelerating. *Turiya* (*tvarit*)—fast *Chavala* (*chapala*)—with quick body movement. *Chanda* (*chand*)—fierce. *Jaina* (*jayini*)—winning speed. *Chheya* (*chhek*)—expertly directed and steady. *Siha* (*simha*)—lion-like sudden. *Sigdha* (*shighra*)—rushing. *Divya*—divine. *Uddhuya* (*uddhrit*)—billowing speed that causes blowing over of dresses and other things around. This also means a wild rush. (for the description of 32 dances and plays refer to *Raipaseniya Sutra*)

In *Brihatsangrahini* the measure of some of these divine speeds is mentioned as follows—In *Chanda gati* a god covers a distance of 2,83,580 *Yojans* in one step. In *Chavala gati* this distance is 4,72,633 *Yojans*. In *Jaina gati* this distance is 6,62,686. In *Sigdha* (*Vega*) *gati* this distance is 8,50,740.

The gods have used fiv. ıditional terms in connection with decision of taking over and accepting the reign of Balichancha. These terms are related to the mental preparation before accepting that responsibility—(1) **Aadar**—appreciate and accept. (2) **Parijna**—have the goal to be the master. (3) **Smriti**—contemplate and arrive at a decision. (4) **Arthabandh**—identify yourself with the goal. (5) **Nidan**—have a craving to attain the goal.

ईशानकल्प में उत्पत्ति BIRTH IN ISHAN KALP

३४. तेणं कालेणं तेणं समएणं ईसाणे कप्पे अणिंदे अपुरोहिए यावि होत्था। तए णं से तामली बालतवस्सी रिसी बहुपडिपुण्णाइं सट्ठिवाससहस्साइं परियागं पाउणित्ता दोमासियाए संलेहणाए अत्ताणं झूसित्ता सवीसं भत्तसयं अणसणाए छेदित्ता कालमासे कालं किच्चा ईसाणे कप्पे ईसाणवडिंसए विमाणे उववायसभाए देवसयणिज्जंसि देवदूसंतरिते अंगुलस्स असंखेज्जभागमेत्तीए ओगाहणाए ईसाणदेविंदविरहकालसमयंसि ईसाणदेविंदत्ताए उववन्ने। तए णं से ईसाणे देविंदे देवराया अहुणोववन्ने पंचविहाए पज्जत्तीए पज्जत्तीभावं गच्छति, तं जहा—आहारपज्जत्तीए जाव भासा-मणपज्जत्तीए।

३४. उस काल और उस समय में ईशान देवलोक इन्द्रविहीन और पुरोहितरहित था। उस समय ऋषि तामली बाल-तपस्वी, पूरे साठ हजार वर्ष तक तापस पर्याय का पालन करके, दो महीने की संलेखना से अपनी आत्मा को सेवित करके, एक सौ बीस भक्त अनशन में काटकर (अर्थात्-दो मास तक अनशन का पालन कर) काल के अवसर पर काल करके ईशान देवलोक के ईशानावतंसक विमान में उपपातसभा की देवदूष्य-वस्त्र से आच्छादित देवशय्या में अंगुल के असंख्येय भाग जितनी अवगाहना में, ईशान देवलोक के इन्द्र के विरहकाल (अनुपस्थिति काल) में ईशान देवेन्द्र के रूप मे उत्पन्न हुआ।

तत्काल उत्पन्न वह देवेन्द्र देवराज ईशान, आहारपर्याप्ति से लेकर यावत् भाषा-मनःपर्याप्ति तक, पंचविध पर्याप्तियों से पर्याप्तिभाव को प्राप्त हुआ।

34. During that period of time Ishan Dev Lok was without an *Indra* (overlord) and a *Purohit* (the priest-god) At that time naive-hermit Tamali, who led *tapas* (hermit) life for complete sixty thousand years enkindling his soul by taking the ultimate vow (*sallekhana*) of two month duration, avoiding one hundred twenty meals, died at the time of death and reincarnated in Ishan Dev Lok Covered by a divine cloth (*Dev-dushya*) in the divine bed (*Dev-shayaniya*) in the divine hall of birth (*upapat sabha*) in the *Ishanavatamsak Vimaan* (celestial vehicle). In absence of the *Indra* there he has taken birth as Devendra Ishan the *Indra* (overlord) of *Devs* (gods) and having space occupation (*avagahana*) of innumerable fraction of an *Angul*. That instantaneously born Devendra Ishan the *Indra* (overlord) of *Devs* (gods) attained the state of full development (*paryapti bhaava*) through five kinds of full development (*paryapti*) namely, *aahaar* (food) *paryapti*.. and so on up to... *bhasha-man* (speech and mind) *paryapti*.

असुरों द्वारा तामली के शव की कदर्थना DISRESPECT OF TAMALI'S DEAD-BODY BY ASURS

३५. तए णं बलिचंचारायहाणिवत्थव्वया बहवे असुरकुमारा देवा य देवीओ य तामलिं बालतवस्सिं कालगयं जाणित्ता ईसाणे य कप्पे देविंदत्ताए उववन्नं पासित्ता आसुरुत्ता कुविया चंडिक्किया मिसिमिसेमाणा बलिचंचाए रायहाणीए मज्झंमज्झेणं निग्गच्छंति, निग्गच्छित्ता ताए उक्किट्ठाए, जाव जेणेव भारहे वासे जेणेव तामलित्ती नयरी जेणेव तामलिस्स बालतवस्सिस्स सरीरए तेणेव उवागच्छंति। वामे पाए सुंबेणं बंधंति, बंधित्ता तिक्खुत्तो मुहे उट्ठुहंति।

तामलित्तीए नगरीए सिंघाडग-तिग-चउक्क-चच्चर-चउम्मुह-महापह-पहेसु आकड्ढ-विकड्ढिं करेमाणा महया महया सद्देणं उग्घोसेमाणा उग्घोसेमाणा एवं वयासि-'केस णं भो ! से तामली बालतवस्सी सयंगहियलिंगे पाणामाए पव्वज्जाए पव्वइए ! केस णं से ईसाणे कप्पे ईसाणे देविंद देवराया' इति कट्टु तामलिस्स बालतवस्सिस्स सरीरयं हीलंति निंदंति खिंसंति गरिहंति अवमन्नंति तज्जंति तालेंति परिवहेंति पव्वहेंति आकड्ढ-विकड्ढिं करेंति, हीलेत्ता जाव आकड्ढ-विकड्ढिं करेत्ता एगंते एडेंति, जामेव दिसिं पाउब्भूया तामेव दिसिं पडिगया।

३५. उस समय बलिचंचा-राजधानी के निवासी बहुत-से असुरकुमार देवों और देवियो ने जब यह जाना कि तामली बाल-तपस्वी कालधर्म को प्राप्त हो गया है और ईशानकल्प मे वहाँ के देवेन्द्र के रूप में उत्पन्न हुआ है, तो यह जानकर वे एकदम क्रोध आवेश से मूढ़मति हो गये, (क्रोध से भड़क उठे) वे अत्यन्त कुपित हो गये, उनके चेहरे क्रोध से भयंकर उग्र रौद्र रूप हो गये, वे क्रोध की आग से

तिलमिला उठे और तत्काल वे सब बलिचंचा राजधानी के बीचोंबीच होकर निकले, यावत् उत्कृष्ट देवगति से इस जम्बूद्वीप में स्थित भरतक्षेत्र की ताम्रलिप्ती नगरी के बाहर, जहाँ तामली बाल-तपस्वी का शव (मृत शरीर) (पड़ा) था वहाँ आये। उन्होंने (तामली बाल-तपस्वी के मृत शरीर के) बायें पैर को रस्सी से बाँधा, फिर तीन बार उसके मुख मे थूका।

तत्पश्चात् ताम्रलिप्ती नगरी के शृंगाटकों-त्रिकोण मार्गों (तिराहों) में, चौकों में, प्रांगण मे, चतुर्मुख मार्ग में तथा महामार्गों में; अर्थात् ताम्रलिप्ती नगरी के सभी प्रकार के मार्गों में उसके शव को घसीटा; अथवा इधर-उधर खीचतान की और जोर-जोर से चिल्लाकर उद्घोषणा करते हुए इस प्रकार कहने लगे-'स्वयमेव तापस का वेश (ग्रहण) कर 'प्राणामा' प्रव्रज्या अगीकार करने वाला यह तामली बाल-तपस्वी हमारे सामने क्या है? तथा ईशानकल्प मे उत्पन्न हुआ देवेन्द्र देवराज ईशान भी हमारे सामने कौन होता है?' यो कहकर वे उस तामली बाल-तपस्वी के मृत शरीर की हीलना (अवहेलना), निन्दा करते है, उसे कोसते हैं, उसकी गर्हा करते है, उसकी अवमानना, तर्जना और ताड़ना करते हैं (उसे मारते-पीटते है)। उसकी कदर्थना (विडम्बना) और भर्त्सना करते हैं (उसकी बहुत बुरी हालत करते हैं), अपनी इच्छानुसार उसे इधर-उधर घसीटते है। इस प्रकार उस शव की हीलना यावत् मनमानी खीचतान करके फिर उसे एकान्त स्थान में डाल देते हैं। (हीलना से आकड्ढ-विकड्ढ तक १० विशेषणो से अवज्ञा की चरम उत्कर्षता प्रकट होती है) फिर वे जिस दिशा से आये थे, उसी दिशा मे वापस चले गये।

35. At that time numerous *Asur Kumar* gods and goddesses residing in Balichancha, the capital city, came to know that naive-hermit Tamali has met his end and has reincarnated in Ishan Kalp as king of gods. On getting this news they turned blind with anger, became very angry, their faces became fierce with anger, they lost their composure due to seething rage They at once moved through the heart of the capital city Balichancha and so on up to. . with their fast divine speed they arrived where the dead-body of naive-hermit Tamali was lying outside in Tamralipti city in Bharat-varsh in Jambu continent. They tied a rope to the left foot (of the dead-body of naive-hermit Tamali) and spat thrice in its mouth.

After that they pushed and dragged the body through triangles, where three roads meet, squares, courtyards, where four roads cross and highways; in other words, through all roads and streets of Tamralipti city. While doing that they uttered loudly the following pronouncement—"When compared with us where does that naive-hermit Tamali, who, on his own, accepted *Pranama* initiation, stand ? Also, what is that Devendra Ishan the *Indra* (overlord) of Devs (gods) as compared to us ?" So shouting, they insulted, decried, cursed, reproached, denounced,

abused and thrashed the dead-body of naive-hermit Tamali. They condemned and criticized it and dragged it recklessly as they pleased. (These ten adjectives convey the height of hatred.) After thus insulting... and so on up to... dragging the corpse recklessly as they pleased, they threw it at a forlorn place Then they returned back in the direction they came from.

ईशानेन्द्र का कोप ISHANENDRA'S RAGE

३६. तए णं ईसाणकप्पवासी बहवे वेमाणिया देवा य देवीओ य बलिचंचारायहाणिवत्थव्वएहिं बहूहिं असुरकुमारेहिं देवेहिं देवीहि य तामलिस्स बालतवस्सिस्स सरीरयं हीलिज्जमाणं निंदिज्जमाणं जाव आकड्ढ–विकड्ढिं कीरमाणं पासंति, पासित्ता आसुरुत्ता जाव मिसिमिसेमाणा जेणेव ईसाणे देविंदे देवराया तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता करयलपरिग्गहियं दसनहं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु जएणं विजएणं बद्धावेंति, एवं वयासी–एवं खलु देवाणुप्पिया ! बलिचंचारायहाणिवत्थव्वया बहवे असुरकुमारा देवा य देवीओ य देवाणुप्पिए कालगए जाणित्ता ईसाणे य कप्पे इंदत्ताए उववन्ने पासेत्ता आसुरुत्ता जाव एगंते एडेंति, जामेव दिसिं पाउब्भूया तामेव दिसिं पडिगया।

३६. तत्पश्चात् ईशानकल्पवासी बहुत–से वैमानिक देवो और देवियो ने देखा कि बलिचंचा–राजधानी–निवासी बहुत–से असुरकुमार देवों और देवियो द्वारा तामली बाल–तपस्वी के मृत शरीर की हीलना, निन्दा और आक्रोशना की जा रही है, यावत् उस शव को मनचाहे ढंग से इधर–उधर घसीटा व खीचा जा रहा है। अत. इस प्रकार उसके मृत शरीर की दुर्दशा होती देखकर वे वैमानिक देव–देवीगण शीघ्र ही क्रोध से भडक उठे यावत् क्रोधानल से तिलमिलाते (दाँत पीसते) हुए, जहाँ देवेन्द्र देवराज ईशान था, वहाँ पहुँचे। ईशानेन्द्र के पास पहुँचकर दोनो हाथ जोडकर मस्तक पर अजलि करके 'जय हो, विजय हो' इत्यादि शब्दो से उस (ईशानेन्द्र) को बधाया। फिर इस प्रकार बोले–'हे देवानुप्रिय ! बलिचचा राजधानी निवासी बहुत से असुरकुमार देव और देवीगण आप देवानुप्रिय को कालधर्म प्राप्त हुआ एव ईशानकल्प में इन्द्ररूप मे उत्पन्न हुआ देखकर अत्यन्त कोपायमान हुए यावत् आपके मृत शरीर को उन्होने मनचाहा आडा–टेढा खीच–घसीटकर एकान्त मे डाल दिया। तत्पश्चात् वे जिस दिशा से आये थे, उसी दिशा मे वापस चले गये।'

36. Many *Vaimanik* (celestial vehicular) gods and goddesses of Ishan Kalp saw that numerous *Asur Kumar* gods and goddesses from Capital city Balichancha were insulting... and so on up to... dragging the corpse of naive-hermit Tamali recklessly as they pleased. Seeing this (wretched state of the corpse) those *Vaimanik* gods and goddesses were soon enraged.. and so on up to .. gnashing their teeth in anger they came where Ishanendra was seated Arriving there they joined their palms, touched their foreheads and greeted Ishanendra with hails of victory. Then they said—"Beloved of gods ! Numerous *Asur Kumar* gods and

goddesses from Capital city Balichancha knowing that you, beloved of gods, had died and reincarnated in Ishan Kalp as king of gods, turned blind with anger.. and so on up to... dragging the corpse recklessly as they pleased, they threw it at a forlorn place. Then they returned back in the direction they came from.

३७. तए णं से ईसाणे देविंदे देवराया तेसिं ईसाणकप्पवासीणं बहूणं वेमाणियाणं देवाण य देवीण य अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म आसुरुत्ते जाव मिसिमिसेमाणे तत्थेव सयणिज्जवरगए तिवलियं भिउडिं निडाले साहट्टु बलिचंचं रायहाणिं अहे सपक्खिं सपडिदिसिं समभिलोएइ, तए णं सा बलिचंचा रायहाणी ईसाणेणं देविंदेणं देवरण्णा अहे सपक्खिं सपडिदिसिं समभिलोइया समाणी तेणं दिव्वप्पभावेणं इंगालब्भूया मुम्मुरब्भूया छारिब्भूया तत्तकवेल्लकब्भूया तत्ता समजोइब्भूया जाया यावि होत्था।

३७. उस समय ईशानकल्प के देवेन्द्र देवराज उन ईशानकल्पवासी बहुत-से वैमानिक देवों और देवियो से यह बात सुनकर और मन में विचारकर शीघ्र ही क्रोध से आगबबूला हो उठा, यावत् क्रोधाग्नि से तिलमिलाता हुआ, वहीं देवशय्या स्थित हुए ईशानेन्द्र ने ललाट पर तीन रेखाएँ डालकर एवं भ्रकुटि तानकर (भौहे चढाकर) बलिचंचा राजधानी को, नीचे ठीक सामने, सपक्ष-(चारों दिशाओं से बराबर सम्मुख) और सप्रतिदिक् (चारो विदिशाओं से भी एकदम सम्मुख) होकर एकटक दृष्टि से देखा। इस प्रकार कुपित दृष्टि से बलिचचा राजधानी को देखने से वह (राजधानी) उस दिव्य प्रभाव से जलते हुए अगारो के समान, अग्नि-कणो के समान, तपी हुई राख के समान, तपतपाती बालू जैसी या तपे हुए गर्म तवे या तप्त कडाही सरीखी और साक्षात् अग्नि की राशि जैसी हो गई, जलने लगी।

37. On hearing this from those numerous *Vaimanik* gods and goddesses from Ishan Kalp, and thinking about it, Ishanendra, the *Indra* (overlord) of *Devs* (gods) was soon enraged... and so on up to... gnashing their teeth in anger While still on his divine bed Ishanendra frowned, making three lines appear on his forehead. He then focused, from four cardinal direction (*sapaksh*) and four intermediate directions (*sapratidik*), and fixed his gaze down upon the capital city Balichancha. Due to his divine power of that angry gaze, the capital city Balichancha started burning and it looked like burning coal, sparks of fire, seething ash, scorching sand, red hot plate and pan, and a burning pyre.

३८. तए णं ते बलिचंचारायहाणिवत्थव्वया बहवे असुरकुमार देवा य देवीओ य तं बलिचंचं रायहाणिं इंगालब्भूयं जाव समजोतिब्भूयं पासंति, पासित्ता भीया तत्था तीसया उव्विग्गा संजायभया सव्वओ समंता आधावेंति परिधावेंति, अन्नमन्नस्स कायं समतुरंगेमाणा चिट्ठंति।

३८. जब बलिचंचा राजधानी में रहने वाले बहुत-से असुरकुमार देवों और देवियों ने उस बलिचंचा राजधानी को अंगारों सरीखी यावत् साक्षात् अग्नि की लपटों जैसी देखी तो वे उसे देखकर

अत्यन्त भयभीत हुए, भयत्रस्त (व्याकुल) होकर काँपने लगे, उनका आनन्दरस सूख गया। वे उद्विग्न हो गये और भय के मारे चारों ओर इधर-उधर भाग-दौड़ करने लगे। (इस भगदड़ में) वे एक-दूसरे के शरीर से चिपटने लगे अथवा एक-दूसरे के शरीर की ओट में छिपने लगे।

38. When numerous *Asur Kumar* gods and goddesses from the capital city Balichancha saw that capital city Balichancha looked like burning coal.. and so on up to... a burning pyre They were afraid, terrified and trembled. The stream of their happiness dried up. They were agitated and ran around in fear. In this confusion they tried to hide behind one another.

असुरों द्वारा क्षमायाचना ASURS SEEK FORGIVENESS

३९. तए णं ते बलिचंचारायहाणिवत्थव्वया बहवे असुरकुमारा देवा य देवीओ य ईसाणं देविंदं देवरायं परिकुवियं जाणित्ता ईसाणस्स देविंदस्स देवरण्णो तं दिव्वं देविड्ढिं दिव्वं देवज्जुतिं दिव्वं देवाणुभागं दिव्वं तेयलेस्सं असहमाणा सव्वे सपक्खिं सपडिदिसिं ठिच्चा करयलपरिग्गहियं दसनहं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु जएणं विजएणं वद्धाविंति, एवं वयासी–अहो णं देवाणुप्पिएहिं दिव्वा देविड्ढी जाव अभिसमन्नागता, तं दिट्ठा णं देवाणुप्पियाणं दिव्वा देविड्ढी जाव लद्धा पत्ता अभिसमन्नागया। तं खामेमो णं देवाणुप्पिया ! खमंतु णं देवाणुप्पिया ! खंतुमरिहंति णं देवाणुप्पिया ! णाइ भुज्जो एवं करणयाए त्ति कट्टु एयमट्ठं सम्मं विणयेणं भुज्जो भुज्जो खामेंति।

३९. (ऐसी दुःस्थिति होने पर) तब बलिचंचा-राजधानी के बहुत-से असुरकुमार देवों और देवियों ने यह जानकर कि देवेन्द्र देवराज ईशान के परिकुपित होने से (हमारी राजधानी इस प्रकार आग-सी तप्त हो गई है), वे सब असुरकुमार देवगण, ईशानेन्द्र की उस दिव्य देव-ऋद्धि, दिव्य देव-द्युति, दिव्य देव-प्रभाव और दिव्य तेजोलेश्या को सहन न कर पाते हुए देवेन्द्र देवराज ईशान के चारो दिशाओ मे और चारो विदिशाओ मे ठीक सामने खडे होकर (ऊपर की ओर मुख करके) मस्तक पर अजलि करके ईशानेन्द्र को जय-विजय शब्दो (के उच्चारणपूर्वक) से बधाने लगे-अभिनन्दन करने लगे। अभिनन्दन करके वे इस प्रकार बोले-'अहो ! (धन्य है !) आप देवानुप्रिय ने दिव्य देव-ऋद्धि उपलब्ध की है, प्राप्त की है और अभिमुख कर ली है ! हमने आपके द्वारा उपलब्ध, प्राप्त और अभिसमन्वागत दिव्य देव-ऋद्धि को, यावत् देव-प्रभाव को प्रत्यक्ष देख लिया है। अत हे देवानुप्रिय ! (अपने अपराध के लिए) हम आपसे क्षमा माँगते हैं। आप देवानुप्रिय हमे क्षमा करे। आप देवानुप्रिय हमे क्षमा करने योग्य है। (भविष्य मे) फिर कभी इस प्रकार नही करेगे।' इस प्रकार निवेदन करके उन्होंने ईशानेन्द्र से अपने अपराध के लिए विनयपूर्वक अच्छी तरह बार-बार क्षमा माँगी।

39. (In this wretched state) Those numerous *Asur Kumar* gods and goddesses from the capital city Balichancha became aware that all this (burning of their capital city) was due to the rage of Ishanendra, the *Indra* (overlord) of *Devs* (gods). Not being able to tolerate the divine opulence, radiance, influence and fire-power of Ishanendra, the *Indra* (overlord) of

Devs (gods), all those *Asur Kumar* gods and goddesses stood facing Ishanendra from all directions around him (facing up) and touching their forehead with joined palms they greeted Ishanendra with hails of victory. After greetings they submitted—"Blessed you are, O Beloved of gods ! You have acquired, attained and experienced divine opulence. We have witnessed in person the divine opulence... and so on up to. . influence •acquired, attained and experienced by you. Therefore, O Beloved of gods ! We beg your pardon (for the mistake we committed). Beloved of gods ! Please forgive us. Beloved of gods ! You are capable of forgiving us. We will never repeat this behaviour." With this submission they properly and humbly sought forgiveness from Ishanendra again and again.

४०. तते णं ईसाणे देविंदे देवराया तेहिं बलिचंचारायहाणीवत्थव्वएहिं बहूहिं असुरकुमारेहिं देवेहिं देवीहि य एयमट्ठं सम्मं विणएणं भुज्जो भुज्जो खामिए समाणे तं दिव्वं देविड्ढिं जाव तेयलेस्सं पडिसाहरइ।

तप्पभितिं च णं गोयमा ! ते बलिचंचारायहाणिवत्थव्वया बहवे असुरकुमारा देवा य देवीओ य ईसाणं देविंदं देवरायं आढंति जाव पज्जुवासंति, ईसाणस्स य देविंदस्स देवरण्णो आणा-उववाय-वय-निद्देसे चिट्ठंति।

४०. अब जब बलिचचा-राजधानी-निवासी उन बहुत-से असुरकुमार देवों और देवियो ने देवेन्द्र देवराज ईशान से अपने अपराध के लिए सम्यक् विनयपूर्वक बार-बार क्षमायाचना कर ली, तब ईशानेन्द्र ने उस दिव्य देव-ऋद्धि यावत् छोडी हुई तेजोलेश्या को वापस खीच (समेट) ली।

हे गौतम ! तब से बलिचचा-राजधानी-निवासी वे बहुत-से असुरकुमार देव और देवीवृन्द देवेन्द्र देवराज ईशान का आदर करते है यावत् उसकी पर्युपासना (सेवा) करते हैं। (और तभी से वे) देवेन्द्र देवराज ईशान की आज्ञा और सेवा मे, तथा आदेश (अनुशासनात्मक) और निर्देश (कर्त्तव्य का सूचन) मे रहते है।

40. Now when those *Asur Kumar* gods and goddesses from the capital city Balichancha properly and humbly sought forgiveness from Ishanendra again and again, Ishanendra withdrew that divine opulence... and so on up to... fire-power.

Gautam ! Since then those *Asur Kumar* gods and goddesses from the capital city Balichancha respect .. and so on up to... worship Ishanendra, the *Indra* (overlord) of *Devs* (gods). And since then they obey him, serve him and are under his order and command.

४१. एवं खलु गोयमा ! ईसाणेणं देविंदेणं देवरण्णा सा दिव्वा देविड्ढी जाव अभिसमन्नागया।

४१. हे गौतम ! देवेन्द्र देवराज ईशान ने वह दिव्य देव-ऋद्धि यावत् इस प्रकार लब्ध और अभिसमन्वागत की है।

41. Gautam ! This is how Ishanendra, the Indra (overlord) of *Devs* (gods) acquired and manifested that divine opulence... and so on up to... influence.

विवेचन : तामली तापस की यह घटना १८वे तीर्थंकर भगवान अरनाथ के शासनकाल की हो सकती है। क्योंकि तामली तापस ने ६० हजार वर्ष तक तपस्या की है। तो उसकी सम्पूर्ण आयु कम से कम ७५ हजार वर्ष की तो होगी ही। भगवान अरनाथ के समय मध्यम आयु ८४ हजार वर्ष की मानी जाती है, जो भगवान की सकल आयु थी। —सम्पादक

Elaboration—This incident of Tamali Tapas may be from the period of influence of the eighteenth Tirthankar Bhagavan Ar Naath. This is because Tamali Tapas is said to have done penance for sixty thousand years. This means that his total life-span must have been at least seventy thousand years. During the period of Bhagavan Ar Naath the average life-span is said to be eighty four thousand years, which is equal to his own life-span.

ईशानेन्द्र की स्थिति LIFE-SPAN OF ISHANENDRA

४२. [प्र.] ईसाणस्स णं भंते ! देविंदस्स देवरण्णो केवतियं कालं ठिइ पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! सातिरेगाइं दो सागरोवमाइं ठिइ पण्णत्ता।

४२. [प्र.] भगवन् ! देवेन्द्र देवराज ईशान की स्थिति कितने काल की है ?

[उ.] गौतम ! ईशानेन्द्र की स्थिति दो सागरोपम से कुछ अधिक की है।

42. [Q.] *Bhante* ! What is the life-span (*sthiti*) of Ishanendra, the *Indra* (overlord) of *Devs* (gods) ?

[Ans.] Gautam ! The life-span (*sthiti*) of Ishanendra is slightly more than two *Sagaropam* (a conceptual unit of time).

४३. [प्र.] ईसाणे णं भंते ! देविंदे देवराया ताओ देवलोगाओ आउक्खएणं जाव कहिं गच्छिहिति ? कहिं उववज्जिहिति ?

[उ.] गोयमा ! महाविदेहे वासे सिज्झिहिति जाव अंतं काहिति।

४३. [प्र.] भगवन् ! देवेन्द्र देवराज ईशान देव आयुष्य पूर्ण होने पर उस देवलोक से च्युत होकर कहाँ जायेगा ? कहाँ उत्पन्न होगा ?

[उ.] गौतम ! वह (देवलोक से च्यवकर) महाविदेह वर्ष (क्षेत्र) में जन्म लेकर सिद्ध होगा यावत् समस्त दु खों का अन्त करेगा।

43. [Q.] *Bhante* ! Completing the life-span of the dimension of gods and descending from that abode of gods, where will Ishanendra, the *Indra* (overlord) of *Devs* (gods) go ? Where will he be born ?

[Ans.] Gautam ! Descending from the dimension of gods, he will be born in the Mahavideh area and finally become a *Siddha* (liberated soul)... and so on up to... end all miseries."

शक्रेन्द्र और ईशानेन्द्र के विमानों की ऊँचाई **HEIGHT OF CELESTIAL VEHICLES**

४४. [प्र. १] सक्कस्स णं भंते ! देविंदस्स देवरण्णो विमाणेहिंतो ईसाणस्स देविंदस्स देवरण्णो विमाणा ईसिं उच्चयरा चेव ईसिं उन्नयतरा चेव ? ईसाणस्स वा देविंदस्स देवरण्णो विमाणेहिंतो सक्कस्स देविंदस्स देवरण्णो विमाणा ईसिं नीययरा चेव ईसिं निण्णयरा चेव ?

[उ.] हंता, गोयमा ! सक्कस्स तं चेव सव्वं नेयव्वं।

[प्र. २] से केणट्ठेणं ?

[उ.] गोयमा ! से जहानामए करतले सिया देसे उच्चे देसे उन्नये, देसे णीए देसे निण्णे, से तेणट्ठेणं।

४४. [प्र. १] भगवन् ! क्या देवेन्द्र देवराज शक्र के विमानों से देवेन्द्र देवराज ईशान के विमान कुछ (थोडे–से) उच्चतर (ऊँचे) है, कुछ उन्नततर (श्रेष्ठ) हैं ? अथवा देवेन्द्र देवराज ईशान के विमानों से देवेन्द्र देवराज शक्र के विमान कुछ नीचे हैं, कुछ निम्नतर हैं ?

[उ.] हाँ, गौतम ! यह इसी प्रकार है। अर्थात्–देवेन्द्र देवराज शक्र के विमानों से देवेन्द्र देवराज ईशान के विमान कुछ ऊँचे है, कुछ उन्नततर है तथा देवेन्द्र देवराज ईशान के विमानों से देवेन्द्र देवराज शक्र के विमान कुछ नीचे हैं, कुछ निम्नतर हैं।

[प्र. २] भगवन् ! ऐसा किस कारण से कहा जाता है ?

[उ.] गौतम ! जैसे किसी हथेली का एक भाग कुछ ऊँचा और उन्नततर होता है, तथा एक भाग कुछ नीचा और निम्नतर होता है, इसी तरह शक्रेन्द्र और ईशानेन्द्र के विमानों के सम्बन्ध में समझना चाहिए। इसी कारण से पूर्वोक्त रूप से कहा जाता है।

44. [Q. 1] *Bhante* ! Are the celestial vehicles (*vimaans*) of Ishanendra, the *Indra* (overlord) of *Devs* (gods) slightly higher and better than those of Devendra Shakra, the *Indra* (overlord) of *Devs* (gods) ? Or are the celestial vehicles (*vimaans*) of Devendra Shakra, the *Indra* (overlord) of *Devs* (gods) slightly lower and inferior than those of Ishanendra, the *Indra* (overlord) of *Devs* (gods) ?

[Ans.] Yes, Gautam ! It is so. That means the celestial vehicles (*vimaans*) of Ishanendra, the *Indra* (overlord) of *Devs* (gods) are slightly higher and better than those of Devendra Shakra, the *Indra* (overlord) of *Devs* (gods). And the celestial vehicles (*vimaans*) of Devendra Shakra, the *Indra* (overlord) of *Devs* (gods) slightly lower and inferior than those of Ishanendra, the *Indra* (overlord) of *Devs* (gods) ?

[Q. 2] *Bhante* ! Why is it said to be so ?

[Ans.] Gautam ! Just as certain part of a palm is slightly higher and better and another part is slightly lower and inferior, so should be taken for the celestial vehicles of Shakrendra and Ishanendra. That is why it is said to be so

दोनों इन्द्रों का शिष्टाचार COURTESY OF THE TWO INDRAS

४५. [प्र. १] पभू णं भंते ! सक्के देविंदे देवराया ईसाणस्स देविंदस्स देवरण्णो अंतियं पाउब्भवित्तए ?

[उ.] हंता, पभू।

४५. [प्र. १] भगवन् ! क्या देवेन्द्र देवराज शक्र, देवेन्द्र देवराज ईशान के पास प्रकट होने (जाने) मे समर्थ है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! शक्रेन्द्र ईशानेन्द्र के पास आने मे समर्थ है।

45. [Q. 1] *Bhante* ! Is Devendra Shakra, the *Indra* (overlord) of *Devs* (gods) capable of appearing before Ishanendra, the *Indra* (overlord) of *Devs* (gods) ?

[Ans.] Yes, Gautam ! Shakrendra is capable of appearing before Ishanendra.

[प्र. २] से णं भंते ! किं आढायमाणे पभू, अणाढायमाणे पभू ?

[उ.] गोयमा ! आढायमाणे पभू, नो अणाढायमाणे पभू।

[प्र. २] भगवन् ! (जब शक्रेन्द्र, ईशानेन्द्र के पास जाता है तो) क्या वह आदर करता हुआ आता है, या अनादर करता हुआ आता है ?

[उ.] हे गौतम ! वह उसका (ईशानेन्द्र का) आदर करता हुआ आता है, किन्तु अनादर करता हुआ नही।

[Q. 2] *Bhante* ! (When Shakrendra comes to Ishanendra) Does he come showing respect ? Or does he come showing disrespect ?

[Ans.] Gautam ! He comes showing respect and not disrespect (to Ishanendra).

४६. [प्र. १] पभू णं भंते ! ईसाणे देविंदे देवराया सक्कस्स देविंदस्स देवरण्णो अंतियं पाउब्भवित्तए ?

[उ.] हंता, पभू।

[प्र. २] से भंते ! किं आढायमाणे पभू, अणाढायमाणे पभू ?

[उ.] गोयमा ! आढायमाणे वि पभू, अणाढायमाणे वि पभू।

४६. [प्र. १] भगवन् ! देवेन्द्र देवराज ईशान, क्या देवेन्द्र देवराज शक्र के पास जाने मे समर्थ है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! शक्रेन्द्र के पास जाने में समर्थ है।

[प्र. २] भगवन् ! (जब ईशानेन्द्र, शक्रेन्द्र के पास जाता है तो), क्या वह आदर करता हुआ जाता है, या अनादर करता हुआ जाता है ?

[उ.] गौतम ! (जब ईशानेन्द्र, शक्रेन्द्र के पास जाता है, तब) वह आदर करता हुआ भी जा सकता है, और अनादर करता हुआ भी जा सकता है। (क्योंकि उसका स्थान ऊँचा है)

46. [Q. 1] *Bhante* ! Is Ishanendra, the *Indra* (overlord) of *Devs* (gods) capable of appearing before Devendra Shakra, the *Indra* (overlord) of *Devs* (gods) ?

[Ans.] Yes, Gautam ! Ishanendra is capable of appearing before Shakrendra.

[Q. 2] *Bhante* ! (When Ishanendra comes to Shakrendra) Does he come showing respect ? Or does he come showing disrespect ?

[Ans.] Gautam ! (When Ishanendra comes to Shakrendra) He may come showing respect and he may also come showing disrespect. (because his status is higher).

४७. [प्र.] पभू णं भंते ! सक्के देविंदे देवराया ईसाणं देविंदं देवरायं सपक्खिं सपडिदिसिं समभिलोएत्तए ?

[उ.] जहा पादुब्भवणा तहा दो वि आलावगा नेयव्वा।

४७. [प्र.] भगवन् ! क्या देवेन्द्र देवराज शक्र, देवेन्द्र देवराज ईशान के समक्ष (चारों दिशाओं में) तथा सप्रतिदिश (चारों कोनो मे = सब ओर) देखने में समर्थ है ?

[उ.] गौतम ! जिस तरह से प्रादुर्भूत होने (जाने) के सम्बन्ध में दो आलापक कहे है, उसी तरह से देखने के सम्बन्ध में भी दो आलापक कहने चाहिए।

47. [Q.] *Bhante* ! Is Devendra Shakra, the *Indra* (overlord) of *Devs* (gods) capable of looking in all the cardinal and intermediate directions before Ishanendra, the *Indra* (overlord) of *Devs* (gods) ?

[Ans.] Gautam ! Here the two statements about 'appearing' should be repeated about 'looking'.

४८. [प्र.] पभू णं भंते ! सक्के देविंदे देवराया ईसाणेणं देविंदेणं देवरण्णा सद्धिं आलावं वा संलावं वा करेत्तए ?

[उ.] हंता, पभू। जहा पादुब्भवणा।

४९. [प्र. १] अत्थि णं भंते ! तेसिं सक्कीसाणाणं देविंदाणं देवराईणं किच्चाइं करणिज्जाइं समुप्पज्जंति ?

[उ.] हंता, अत्थि।

[प्र. २] से कहमिदाणिं पकरेंति ?

[उ.] गोयमा ! ताहे चेव णं से सक्के देविंदे देवराया ईसाणस्स देविंदस्स देवरण्णो अंतियं पाउब्भवति, ईसाणे णं देविंदे देवराया सक्कस्स देविंदस्स देवरण्णो अंतियं पाउब्भवइ--'इति भो ! सक्का ! देवराया ! दाहिणड्ढलोगाहिवती !' 'इति भो ! ईसाणा ! देविंदा ! देवराया ! उत्तरड्ढलोगाहिवती !' 'इति भो' त्ति ते अन्नमन्नस्स किच्चाइं करणिज्जाइं पच्चणुभवमाणा विहरंति।

४८. [प्र.] भगवन् ! क्या देवेन्द्र देवराज शक्र, देवेन्द्र देवराज ईशान के साथ वार्तालाप करने में समर्थ है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! वह वार्त्तालाप करने मे समर्थ है। जिस तरह पास जाने के सम्बन्ध में दो आलापक कहे है, (उसी तरह यहाँ जाने)।

४९. [प्र. १] भगवन् ! उन देवेन्द्र देवराज शक्र और देवेन्द्र देवराज ईशान के बीच में परस्पर कोई कृत्य करणीय करने योग्य कार्य समुत्पन्न होते है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! समुत्पन्न होते है ?

[प्र. २] भगवन् ! जब इन दोनो के कोई कृत्य (प्रयोजन) या करणीय (विचार) होते हैं, तब वे कैसे व्यवहार (कार्य) करते हैं ?

[उ.] गौतम ! जब देवेन्द्र देवराज शक्र को कार्य होता है, तब वह (स्वयं) देवेन्द्र देवराज ईशान के समीप प्रकट होता है और जब देवेन्द्र देवराज ईशान को कार्य होता है, तब वह (स्वयं) देवेन्द्र देवराज शक्र के निकट जाता है। उनके परस्पर सम्बोधित करने का तरीका यह है-'हे दक्षिणार्द्ध लोकाधिपति देवेन्द्र देवराज शक्र !' (शक्रेन्द्र पुकारता है-) हे उत्तरार्द्ध लोकाधिपति देवेन्द्र देवराज ईशान !' (यहाँ), दोनों ओर से 'इति भो-इति भो !' (अजी ! ऐसी बात है) (इस प्रकार के शब्दों से परस्पर) सम्बोधित करके वे एक-दूसरे के कृत्यों (प्रयोजनों) और करणीयों (विचारों) को अनुभव करते समझते हैं।

48. [Q.] *Bhante* ! Is Devendra Shakra, the *Indra* (overlord) of *Devs* (gods) capable of conversation with Ishanendra, the *Indra* (overlord) of *Devs* (gods) ?

[Ans.] Gautam ! Here the two statements about 'appearing' should be repeated about 'conversation'.

49. [Q. 1] *Bhante* ! Does an occasion or need to come together arise between Devendra Shakra, the *Indra* (overlord) of *Devs* (gods) and Ishanendra, the *Indra* (overlord) of *Devs* (gods) ?

[Ans.] Yes, Gautam ! It does.

[Q. 2] *Bhante* ! When there is such an occasion how do they behave towards each other ?

[Ans.] When Devendra Shakra, the *Indra* (overlord) of *Devs* (gods) has some need then he appears before Ishanendra, the *Indra* (overlord) of *Devs* (gods), in person. When Ishanendra, the *Indra* (overlord) of *Devs* (gods) has some need then he appears before Devendra Shakra, the *Indra* (overlord) of *Devs* (gods), in person. They address each other as follows—(Ishanendra says—) "O Devendra Shakra, the *Indra* (overlord) of *Devs* (gods) and the sovereign of the southern half of *Lok* ! How do you do ?" and (Shakrendra says—) "O Ishanendra, the *Indra* (overlord) of *Devs* (gods) and the sovereign of the southern half of *Lok* ! How do you do ?" Addressing thus they communicate and exchange views about their needs and activities

५०. [प्र. १] अत्थि णं भंते ! तेसिं सक्कीसाणाणं देविंदाणं देवराईणं विवादा समुप्पज्जंति ?

[उ.] हंता, अत्थि।

[प्र. २] से कहमिदाणिं पकरेंति ?

[उ.] गोयमा ! ताहे चेव णं ते सक्कीसाणा देविंदं देवरायाणो सणंकुमारं देविंदे देवरायं मणसी करेंति। तए णं से सणंकुमारे देविंदे देवराया तेहिं सक्कीसाणेहिं देविंदेहिं देवराईहिं मणसीकए समाणे खिप्पामेव सक्कीसाणामं देविंदाणं अंतियं पादुब्भवति। जं से वदइ तस्स आणा–उववाय–वयण–निद्देसे चिट्ठंति।

५०. [प्र. १] भगवन् ! क्या देवेन्द्र शक्र और देवेन्द्र देवराज ईशान, इन दोनों मे विवाद भी समुत्पन्न होता है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! (इन दोनो इन्द्रों के बीच विवाद भी समुत्पन्न) होता है। (दोनो की सीमाएँ लगी हुई हैं तथा अन्य विषय भी हो सकते हैं)

[प्र. २] (भगवन् ! परस्पर विवाद उत्पन्न होने पर) वे क्या करते हैं ?

[उ.] गौतम ! जब शक्रेन्द्र और ईशानेन्द्र मे परस्पर विवाद उत्पन्न हो जाता है, तब वे दोनो, देवेन्द्र देवराज सनत्कुमारेन्द्र का मन में स्मरण करते हैं। (मानसिक सम्पर्क करते हैं) देवेन्द्र देवराज शक्रेन्द्र और ईशानेन्द्र द्वारा स्मरण करने पर (आसन प्रकम्पित होता है, तब) शीघ्र ही सनत्कुमारेन्द्र देवराज, शक्रेन्द्र और ईशानेन्द्र के निकट प्रकट होता है। वह जो भी कहता है, (उसे ये दोनों इन्द्र मान्य करते हैं।) ये दोनों इन्द्र उसकी आज्ञा, सेवा, आदेश और निर्देश में रहते है।

50. [Q. 1] *Bhante* ! Do Shakrendra and Ishanendra have dispute with each other ?

[Ans.] Yes, Gautam ! They (Shakrendra and Ishanendra) do (have dispute with each other). (They have common borders. There may be other points of dispute too.)

[Q. 2] *Bhante* ! What do they do ? (when such dispute arises)

[Ans.] Gautam ! When Shakrendra and Ishanendra have a dispute with each other, they think of Sanatkumarendra, the *Indra* (overlord) of *Devs* (gods) (establishing telepathic contact). When Shakrendra and Ishanendra think of him (his throne trembles and) Sanatkumarendra soon appears before them. Whatever he advises and commands (they accept) In fact these two *Indras* obey him, serve him and are under his command and direction.

विशेष–'आढायमाणे–अणाढायमाणे'–इन दोनो शब्दो का तात्पर्य–यह भी है कि शक्रेन्द्र की अपेक्षा ईशानेन्द्र का दर्जा ऊँचा है, इसलिए शक्रेन्द्र, ईशानेन्द्र के पास तभी जा सकता है जबकि ईशानेन्द्र शक्रेन्द्र को आदरपूर्वक बुलाए। अगर आदरपूर्वक न बुलाये तो वह ईशानेन्द्र के पास नही जाता, किन्तु ईशानेन्द्र शक्रेन्द्र के पास बिना बुलाए भी जा सकता है, क्योकि उसका दर्जा ऊँचा है। *(भगवतीसूत्र, प्रमेयचन्द्रिका टीका, हिन्दी–गुर्जर भावानुवादयुक्त, भाग ३, पृष्ठ २८६)*

Elaboration—Adhayamane-anadhayamane—This phrase also indicates that the status of Ishanendra is higher than that of Shakrendra. As such Shakrendra can visit Ishanendra only when Ishanendra calls Shakrendra with due respect; if not he cannot go to Ishanendra. But Ishanendra, enjoying higher status, can visit Shakrendra without being called *(Bhagavati Sutra, Prameyachandrika Tika with Hindi-Gujarati translation, part-3, p 286)*

सनत्कुमारेन्द्र की भवसिद्धिकता LIBERATION-WORTHINESS OF SANATKUMARENDRA

५१. [प्र.] सणंकुमारे णं भंते ! देविंदे देवराया किं (१) भवसिद्धिए, अभवसिद्धिए ? (२) सम्मद्दिट्ठी, मिच्छद्दिट्ठी ? (३) परित्तसंसारए, अणंतसंसारए ? (४) सुलभबोहिए, दुल्लभबोहिए ? (५) आराहए, विराहए ? (६) चरिमे अचरिमे ?

[उ.] गोयमा ! सणंकुमारे णं देविंदे देवराया भवसिद्धिए नो अभवसिद्धिए एवं सम्मद्दिट्ठी, परित्तसंसारए, सुलभबोहिए आराहण, चरिमे, पसत्थं नेयव्वं।

५१. [प्र.] भगवन् ! देवेन्द्र देवराज सनत्कुमार क्या (१) भवसिद्धिक (भविष्य में सिद्धि प्राप्त करने योग्य) है या अभवसिद्धिक है ? (२) सम्यग्दृष्टि है या मिथ्यादृष्टि है ? (३) परित्त (परिमित) संसारी है या अनन्त (अपरिमित) ससारी ? (४) सुलभबोधि है या दुर्लभबोधि ? (५) आराधक है अथवा विराधक ? (६) चरम (जिसका यही अन्तिम भव हो) है अथवा अचरम ?

[उ.] गौतम ! देवेन्द्र देवराज सनत्कुमार, भवसिद्धिक है, अभवसिद्धिक नहीं; इसी तरह वह सम्यग्दृष्टि है, परित्तसंसारी है, सुलभबोधि है, आराधक है, चरम है। (अर्थात्-इस सम्बन्ध मे सभी) प्रशस्त पद ग्रहण करने चाहिए।

51. [Q.] *Bhante* ! Is Sanatkumarendra, the *Indra* (overlord) of *Devs* (gods)—(1) worthy or unworthy of being liberated in future (*bhavasiddhik* or *abhavasiddhik*) ? (2) righteous or unrighteous (*samyagdrishti* or *mithyadrishti*) ? (3) with limited or unlimited cycles of rebirth (*parattasamsari* or *anant-samsari*) ? (4) capable of enlightenment with ease or difficulty (*sulabh-bodhi* or *durlabh-bodhi*) ? (5) devout or heretic (*aradhak* or *viradhak*) ? (6) in his final birth or not (*charam* or *acharam*) ?

[Ans.] Gautam ! Sanatkumarendra, the *Indra* (overlord) of *Devs* (gods) is worthy and not unworthy of being liberated in future (*bhavasiddhik* and not *abhavasiddhik*). In the same way he is righteous (*samyagdrishti*), with limited cycles of rebirth (*parattasamsari*), capable of enlightenment with ease (*sulabh-bodhi*), devout (*aradhak*) and in his final birth (*charam*). In other words only noble statements are valid.

५२. [प्र.] से केणट्ठेणं भंते ?

[उ.] गोयमा ! सणंकुमारे देविंदे देवराया बहूणं समणाणं बहूणं समणीणं बहूणं सावगाणं बहूणं साविगाणं हियकामए सुहकामए पत्थकामए आणुकंपिए निस्सेयसिए हिय-सुह-निस्सेसकामए, से तेणट्ठेणं गोयमा ! सणंकुमारे णं भवसिद्धिए जाव नो अचरिमे।

५२. [प्र.] भगवन् ! किस कारण से (ऐसा कहा जाता है) ?

[उ.] गौतम ! देवेन्द्र देवराज सनत्कुमार बहुत-से श्रमणों, बहुत-सी श्रमणियो, बहुत-से श्रावकों और बहुत-सी श्राविकाओं का हितकामी (हितैषी), सुखकामी (सुखेच्छु), पथ्यकामी (पथ्याभिलाषी अथवा कष्टों से बचाने का इच्छुक) आनुकम्पिक (कृपा व अनुकम्पा करने वाला), निःश्रेयसिक (निःश्रेयस = कल्याण या मोक्ष का इच्छुक) है। वह उनका हित, सुख और निःश्रेयस चाहने वाला है। इसी कारण, गौतम ! सनत्कुमारेन्द्र भवसिद्धिक है, यावत् (चरम है, किन्तु) अचरम नही।

52. [Q.] *Bhante* ! Why is it so ?

[Ans.] Gautam ! Sanatkumarendra, the *Indra* (overlord) of *Devs* (gods) wishes well (*hit-kaami*) of numerous *Shramans*, numerous *Shramanis*, numerous *Shravaks* and numerous *Shravikas*. He wishes them bliss (*sukh-kaami*) and comforts (*pathya-kaami*). Is compassionate

(*aanukampik*) towards them and wishes them beatitude or salvation (*nihshreyasik*). He wishes well (*hit-kaami*)... and so on up to... beatitude or salvation (*nihshreyasik*) for them.

That is why, Gautam ! Sanatkumarendra is worthy... and so on up to... in his final birth.

विवेचन : यहाँ भवसिद्धिक से चरम तक के छह पद परस्पर सम्बन्धित हैं। वृत्तिकार आचार्यों का कथन है–भव्य जीव सम्यग्दृष्टि व मिथ्यादृष्टि दोनो प्रकार का होता है। सम्यग्दृष्टि जीव परीत संसारी व अनन्त संसारी दोनों हो सकता है। परीत ससारी जीव सुलभबोधि और दुर्लभबोधि दोनो हो सकता है। आराधक जीव चरम और अचरम दोनों प्रकार का हो सकता है। *(रायपसेणिय वृत्ति मलयगिरि, भगवई, भाग २, पृष्ठ ३६)*

Elaboration—Here the five terms, from *bhavasiddhik* to *charam* are inter-linked. The *Acharyas* who wrote *Vritti* state that a being worthy of liberation in future (*bhavasiddhik*) can be both, righteous as well as unrighteous (*samyagdrishti* as well as *mithyadrishti*) The *samyagdrishti* can be both, with limited as well as unlimited cycles of rebirth (*parittasamsari* as well as *anant-samsari*). The *parittasamsari* can be both, capable of enlightenment with ease as well as difficulty (*sulabh-bodhi* as well as *durlabh-bodhi*). The *sulabh-bodhi* can be both, devout as well as heretic (*aradhak* as well as *viradhak*). The *aradhak* can be both, in his final birth as well as not (*charam* as well as *acharam*). *(Rayapaseniya Vritti by Malayagiri; Bhagavai, part-2, p 36)*

५३. [प्र.] सणंकुमारस्स णं भंते ! देविंदस्स देवरण्णो केवतियं कालं ठिती पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! सत्त सागरोवमाणि ठिती पण्णत्ता।

५३. [प्र.] भगवन् ! देवेन्द्र देवराज सनत्कुमार की स्थिति (आयु) कितने काल की है ?

[उ.] गौतम ! सनत्कुमारेन्द्र की स्थिति (उत्कृष्ट) सात सागरोपम की है।

53. [Q.] *Bhante* ! What is the life-span (*sthiti*) of Sanatkumarendra, the *Indra* (overlord) of *Devs* (gods) ?

[Ans.] Gautam ! The life-span (*sthiti*) of Sanatkumarendra is (maximum) seven *Sagaropam* (a metaphoric unit of time).

५४. [प्र.] से णं भंते ! ताओ देवलोगाओ आउक्खएणं जाव कहिं उववज्जिहिति ?

[उ.] गोयमा ! महाविदेहे वासे सिज्झिहिति जाव अंतं करेहिति।

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति॥

५४. [प्र.] भगवन् ! वह (सनत्कुमारेन्द्र) उस देवलोक से आयु क्षय होने के बाद कहाँ उत्पन्न होगा ?

[उ.] गौतम ! सनत्कुमारेन्द्र उस देवलोक से च्यवकर (आयुष्य पूर्ण कर) महाविदेह वर्ष (क्षेत्र) में, (जन्म लेकर वहीं से) सिद्ध-बुद्ध-मुक्त होगा, यावत् सर्वदु:खों का अन्त करेगा।

भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है ! (यों कहकर गौतम स्वामी यावत् भगवान की पर्युपासना करने लगे।)

54. [Q.] *Bhante* ! Completing the life-span of the dimension of gods and descending from that abode of gods, where will Sanatkumarendra, the *Indra* (overlord) of *Devs* (gods) go ? Where will he be born ?

[Ans.] Gautam ! Descending from the dimension of gods, he will be born in the Mahavideh area and finally become a *Siddha* (liberated soul)... and so on up to.. end all miseries.

"Bhante ! Indeed that is so Indeed that is so " With these words... and so on up to .. ascetic Gautam resumed his activities

प्रथम उद्देशक की उपसंहार गाथाएँ **CONCLUDING VERSES**

छट्ठऽट्ठम मासो अद्धमासे वासाइं अट्ठ छम्मासा।
तीसग-कुरुदत्ताणं तव भत्तपरिण्ण-परियाओ॥१॥

उच्चत्त विमाणाणं पादुब्भव पेच्छणा य संलावे।
किच्चि विवादुप्पत्ती सणंकुमारे य भवियत्तं॥२॥

॥ मोया समत्ता ॥

॥ तइए सए : पढमो उद्देसो समत्तो ॥

गाथाओं का अर्थ-तिष्यक श्रमण का तप छट्ठ-छट्ठ (निरन्तर बेला-बेला) था और उसका अनशन एक मास का था। कुरुदत्तपुत्र श्रमण का तप अट्ठम-अट्ठम (निरन्तर तेले-तेले) का था और उसका अनशन अर्द्ध-मासिक था-(१५ दिन का)। तिष्यक श्रमण की दीक्षापर्याय आठ वर्ष की थी और कुरुदत्तपुत्र श्रमण की छह मास की। (इन दोनों से सम्बन्धित विषय इस उद्देशक में आया है।) इसके अतिरिक्त (दूसरे विषय आये है, जैसे कि) दो इन्द्रों के विमानो की ऊँचाई, एक इन्द्र का दूसरे के पास आगमन, परस्पर प्रेक्षण (अवलोकन), उनका आलाप-संलाप, उनका कार्य, उनमें विवादोत्पत्ति तथा उनका निपटारा तथा सनत्कुमारेन्द्र की भवसिद्धिकता आदि विषयों का निरूपण इस उद्देशक में किया गया है।

॥ मोका समास ॥

॥ तृतीय शतक : प्रथम उद्देशक समाप्त ॥

Ascetic Tishyak observed the austerity of a series of two-day fasts and the ultimate vow of one month. Ascetic Kurudatt observed the austerity of a series of three-day fasts and the ultimate vow of half a month (15 days). The ascetic life of Ascetic Tishyak was eight years and that of Ascetic Kurudatt was six months. (These two are included in this lesson.) Besides these the height of the celestial vehicles of two *Indras*, arrival of one *Indra* near another, their looking at each other, their conversation, their activities, their disputes and settlement, and liberation-worthiness of Sanatkumarendra and other topics have been discussed in this lesson.

● END OF MOKA ●

● END OF THE FIRST LESSON OF THE THIRD CHAPTER ●

तृतीय शतक : द्वितीय उद्देशक
THIRD SHATAK (Chapter Three) : SECOND LESSON

चमर CHAMAR

उपोद्घात

द्वितीय उद्देशक मे बताया है कि राजगृह मे भगवान महावीर विराजमान थे। अपनी सुधर्मा सभा में चमरसिंहासन-स्थित चमरेन्द्र ने वही से भगवान को देखा और अपने समस्त देव परिवार के साथ ईशानेन्द्र की तरह भगवान महावीर और गौतमादि श्रमणवर्ग को विविध नाट्यविधि दिखलाई। वन्दना नमस्कार करके वापस चला गया। चमरेन्द्र के आगमन से और उसकी दिव्य ऋद्धि आदि पर से प्रश्नों और उत्तरो का प्रारम्भ होता है।

INTRODUCTION

The second lesson starts with the information that Bhagavan Mahavir was staying in Rajagriha. Chamarendra saw him from his throne in his *Sudharma Sabha* (main assembly). He descended with his retinue and displayed a variety of his dances and dramas. He returned after paying homage This incident inspired a series of questions and answers.

❑❑

१. तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे नगरे होत्था जाव परिसा पज्जुवासइ।

१. उस काल, उस समय मे राजगृह नाम का नगर था। श्रमण भगवान महावीर वहाँ पधारे और परिषद् पर्युपासना करने लगी।

1. During that period of time there was a city called Rajagriha. Shraman Bhagavan Mahavir arrived there... and so on up to... People commenced worship.

२. तेणं कालेणं तेणं समएणं चमरे असुरिंदे असुरराया चमरचंचाए रायहाणीए सभाए सुहम्माए चमरंसि सीहासणंसि चउसट्ठीए सामाणियसाहस्सीहिं जाव नट्टविहिं उवदंसेत्ता जामेव दिसिं पाउब्भूए तामेव दिसिं पडिगए।

२. उस काल, उस समय मे चौंसठ हजार सामानिक देवों से परिवृत, चरमचंचा नामक राजधानी की सुधर्मासभा मे चमर नामक सिहासन पर बैठे असुरेन्द्र असुरराज चमर ने (राजगृह में विराजमान भगवान महावीर को देखा), यावत् नाट्यविधि दिखलाकर जिस दिशा से आया था, उसी दिशा मे वापस चला गया।

2. During that period of time Chamarendra, the overlord (*Indra*) of *Asurs*, sitting on his throne called Chamar and surrounded by sixty four

Samanik Devs (gods of equal status) in his *Sudharma Sabha* (main assembly) in his capital city Chamarchancha (saw Bhagavan Mahavir stationed in Rajagriha)... and so on up to... after displaying his dances he went away in the direction from which he came.

असुरकुमार देवो का स्थान PLACE OF ASUR KUMAR DEVS

३. [प्र. १] 'भंते !' त्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदति नमंसति, वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी–अत्थि णं भंते ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए अहे असुरकुमारा देवा परिवसंति ?

[उ.] गोयमा ! नो इणट्ठे समट्ठे।

[प्र. २] एवं जाव अहेसत्तमाए पुढवीए, सोहम्मस्स कप्पस्स अहे जाव अत्थि णं भंते ! ईसिपब्भाराए पुढवीए अहे असुरकुमारा देवा परिवसंति ?

[उ.] णो इणट्ठे समट्ठे।

३. [प्र. १] 'हे भगवन् !' यो कहकर भगवान गौतम ने श्रमण भगवान महावीर को वन्दन-नमस्कार किया। वन्दन-नमस्कार करके इस प्रकार पूछा–'भगवन् ! क्या असुरकुमार देव इस रत्नप्रभापृथ्वी के नीचे रहते है ?'

[उ.] हे गौतम ! यह अर्थ (बात) समर्थ (शक्य) नहीं है।

[प्र. २] इसी प्रकार यावत् सप्तम (तमस्तमःप्रभा) पृथ्वी के नीचे भी वे (असुरकुमार देव) नहीं रहते; और न सौधर्मकल्प देवलोक के नीचे यावत् अन्य सभी कल्पो (देवलोकों) के नीचे वे नही रहते हैं। (तब फिर प्रश्न होता है–) भगवन् ! क्या वे असुरकुमार देव ईषत्प्राग्भारा (सिद्धशिला) पृथ्वी के नीचे रहते है ?

[उ.] (हे गौतम !) यह अर्थ भी समर्थ (शक्य) नही है।

3. [Q. 1] *"Bhante !"* Addressing thus Bhagavan Gautam paid homage and obeisance to Shraman Bhagavan Mahavir. Having paid homage and obeisance he asked—*Bhante* ! Do *Asur Kumar Devs* live beneath this Ratnaprabha *Prithvi* (first hell) ?

[Ans.] Gautam ! That is not correct.

[Q. 2] *Bhante* ! In the same way (when)... and so on up to... they do not live beneath the seventh hell (Tamastamahprabha *Prithvi*) and neither do they live beneath Saudharm Kalp (divine realm)... and so on up to... beneath all other divine realms; (a question arises) *Bhante* ! Do those *Asur Kumar Devs* live beneath Ishatpragbhara *Prithvi* (the abode of *Siddhas*) ?

[Ans.] Gautam ! That too is not correct.

४. [प्र.] से कहिं खाइं णं भंते ! असुरकुमारा देवा परिवसंति ?

[उ.] गोयमा ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए असीउत्तरजोयणसतसहस्सबाहल्लाए, एवं असुरकुमारदेववत्तव्वया जाव दिव्वाइं भोगभोगाइं भुंजमाणा विहरंति।

४. [प्र.] भगवन् ! तब ऐसा कौन-सा स्थान है, जहाँ असुरकुमार देव निवास करते है ?

[उ.] गौतम ! एक लाख अस्सी हजार योजन मोटी इस रत्नप्रभा पृथ्वी के बीच मे (असुरकुमार देव रहते हैं।) यहाँ असुरकुमार सम्बन्धी समस्त वक्तव्यता कहनी चाहिए, यावत् वे दिव्य भोगों का उपभोग करते हुए आनन्दपूर्वक जीवनयापन करते है।

4. [Q.] *Bhante* ! Then which is the place where *Asur Kumar Devs* live ?

[Ans.] Gautam ! In the middle of this one hundred eighty thousand *Yojan* thick Ratnaprabha *Prithvi* (live *Asur Kumar Devs*). Here all details about *Asur Kumar Devs* should be repeated... and so on up to... they spend their time enjoying divine pleasures

विवेचन : प्रज्ञापनासूत्र के अनुसार रत्नप्रभा का पृथ्वी-पिण्ड एक लाख अस्सी हजार योजन का है। उसमें से ऊपर एक हजार योजन और नीचे के एक हजार योजन छोडकर, बीच मे एक लाख अठहत्तर हजार योजन के भाग मे असुरकुमार देवो के ३४ लाख भवनावास है। *(चित्र देखो)*

Elaboration—According to *Prajnapana Sutra* the depth of Ratnaprabha *Prithvi* is one hundred eighty thousand *Yojans*. Leaving one thousand *Yojans* from top as well as bottom there are 3.4 million abodes (*bhavanavaas*) of *Bhavan-vaasi Devs* in the remaining 1,78,000 *Yojans*. *(see illustration)*

असुरकुमारों की गति-विषयक प्रश्न **MOVEMENT OF ASUR KUMAR DEVS**

५. [प्र.] अत्थि णं भंते ! असुरकुमाराणं देवाणं अहे गतिविसए पण्णत्ते ?

[उ.] हंता, अत्थि।

५. [प्र.] भगवन् ! क्या असुरकुमार देवो का अधोगमन-विषयक (सामर्थ्य) है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! (उनमे अपने स्थान से नीचे जाने का सामर्थ्य) है।

5. [Q.] *Bhante* ! Do *Asur Kumar Devs* have the capacity to go downward (from their abodes) ?

[Ans.] Gautam ! They have (the capacity to go downward from their abodes).

६. [प्र.] केवइयं ए च णं भंते ! पभू ते असुरकुमाराणं देवाणं अहेगतिविसए पण्णत्ते ?

[उ.] गोयमा ! जाव अहेसत्तमाए पुढवीए, तच्चं पुण पुढविं गता य गमिस्संति य।

६. [प्र.] भगवन् ! असुरकुमार देवों का (अपने स्थान से) अधोगमन-विषयक सामर्थ्य कितना (कहाँ तक) है?

[उ.] गौतम ! सप्तम पृथ्वी तक नीचे जाने की शक्ति उनमें है। (किन्तु वे वहाँ तक कभी गये नहीं, जाते नही और जायेंगे भी नही) वे तीसरी पृथ्वी (बालुकाप्रभा) तक गये है, जाते है और जायेगे।

6. [Q.] *Bhante* ! How far below (their abodes) they are capable of going ?

[Ans.] They are capable of going up to the seventh hell; (but they have never gone that far, neither they go that far and nor will they ever go that far), they have gone, go and will go only as far as the third *prithvi* (Balukaprabha)

७. [प्र.] किंपत्तियं णं भंते ! असुरकुमारा देवा तच्चं पुढविं गता य, गमिस्संति य ?

[उ.] गोयमा ! पुव्ववेरियस्स वा वेदणउदीरणयाए, पुव्वसंगतियस्स वा वेदणउवसामणयाए। एवं खलु असुरकुमारा देवा तच्चं पुढविं गता य, गमिस्संति य।

७. [प्र.] भगवन् ! किस प्रयोजन (या कारण) से असुरकुमार देव तीसरी पृथ्वी तक गये है, (जाते है) और भविष्य मे जायेगे ?

[उ.] हे गौतम ! अपने पूर्व शत्रु को (पूर्व वैर के कारण)-दुःख देने अथवा अपने पूर्व साथी (मित्रजन के स्नेहवश) की वेदना का उपशमन करके (दुःख-निवारण) के लिए असुरकुमार देव तृतीय पृथ्वी तक गये है, (जाते है) और जायेगे।

7. [Q.] *Bhante* ! For what reason *Asur Kumar Devs* have gone, go and will go up to the third *prithvi* (hell) ?

[Ans.] Gautam ! *Asur Kumar Devs* have gone, go and will go up to the third *prithvi* (hell) in order to torment their former foes (out of past animosity) or to pacify the pain (remove suffering) of their former friends (out of love).

८. [प्र.] अत्थि णं भंते ! असुरकुमाराणां देवाणं तिरियं गतिविसए पण्णत्ते ?

[उ.] हंता, अत्थि।

८. [प्र.] भगवन् ! क्या असुरकुमार देवो में तिर्यक् (तिरछे) गमन करने का (सामर्थ्य) है।

[उ.] हाँ, गौतम ! है।

8. [Q.] *Bhante* ! Do *Asur Kumar Devs* have the capacity to go in transverse (*tiryak*) direction ?

[Ans.] Yes, Gautam ! They have (the capacity to go in transverse direction).

९. [प्र.] केवतियं च णं भंते ! असुरकुमाराणं देवाणं तिरियं गतिविसए पण्णत्ते ?

[उ.] गोयमा ! जाव असंखेज्जा दीव–समुद्दा, नंदिस्सरवरं पुण दीवं गता य, गमिस्संति य।

९. [प्र.] भगवन् ! असुरकुमार देवों में तिरछा जाने की कितनी शक्ति है ?

[उ.] गौतम ! असुरकुमार देवों में (अपने स्थान से) असंख्येय द्वीप–समुद्रों तक जाने की सामर्थ्य है। किन्तु वे नन्दीश्वर द्वीप तक गये हैं और भविष्य में जायेंगे।

9. [Q.] *Bhante* ! How far in the transverse (*tiryak*) direction they are capable of going ?

[Ans.] They are capable of going up to innumerable continents and seas (from their abodes); but they have gone and will go only as far as Nandishvar Dveep (continent).

१०. [प्र.] किंपत्तियं णं भंते ! असुरकुमारा देवा नंदीसरवरदीवं गया य, गमिस्संति य ?

[उ.] गोयमा ! जे इमे अरिहंता भगवंता एतेसिं णं जम्मण–महेसु वा निक्खमण–महेसु वा णाणुप्पत्ति–महिमासु वा परिनिव्वाण–महिमासु वा एवं खलु असुरकुमारा देवा नंदीसरवरं दीवं गता य, गमिस्संति य।

१०. [प्र.] भगवन् ! असुरकुमार देव, नन्दीश्वरद्वीप तक किस प्रयोजन से गए हैं और जायेंगे ?

[उ.] गौतम ! अरिहत भगवान (तीर्थंकर) के जन्म–महोत्सव में, निष्क्रमण महोत्सव में, ज्ञानोत्पत्ति (केवलज्ञान उत्पन्न) होने पर, महिमा (उत्सव) करने, तथा परिनिर्वाण (मोक्षगमन) पर महिमा करने के लिए असुरकुमार देव नन्दीश्वरद्वीप तक गये है, जाते हैं और जायेंगे।

10. [Q.] *Bhante* ! For what reason *Asur Kumar Devs* have gone and will go up to Nandishvar Dveep ?

[Ans.] Gautam ! *Asur Kumar Devs* have gone and will go up to Nandishvar Dveep in order to participate in the ceremonies on the occasion of birth of *Arihant Bhagavan* (*Tirthankars*) and on the occasion of their renunciation as also to pay tributes to them on attaining omniscience and on attaining liberation (*parinirvana*).

११. [प्र.] अत्थि णं भंते ! असुरकुमाराणं देवाणं उड्ढं गतिविसए ?

[उ.] हंता, अत्थि।

११. [प्र.] भगवन् ! क्या असुरकुमार देवो में (अपने स्थान से) ऊपर जाने को सामर्थ्य है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! है।

11. [Q.] *Bhante* ! Do *Asur Kumar Devs* have the capacity to go in upward direction ?

[Ans.] Yes, Gautam ! They have (the capacity to go in upward direction).

१२. [प्र.] केवतियं च णं भंते ! असुरकुमाराणं देवाणं उड्ढं गतिविसए ?

[उ.] गोयमा ! जाव अच्चुए कप्पे। सोहम्मं पुण कप्पं गता य, गमिस्संति य।

१२. [प्र.] भगवन् ! असुरकुमारदेव अपने स्थान से कितने ऊँचे जा सकते हैं ?

[उ.] गौतम ! असुरकुमारदेव अपने स्थान से यावत् अच्युतकल्प (बारहवें देवलोक) तक ऊपर जाने मे समर्थ है। अपितु वे सौधर्मकल्प तक गये है, (जाते हैं) और जायेगे।

12. [Q.] *Bhante* ! How far in the upward direction they are capable of going ?

[Ans.] They are capable of going up to Achyut Kalp (the twelfth heaven), but they have gone and will go only as far as Saudharma Kalp.

१३. [प्र. १] किंपत्तियं णं भंते ! असुरकुमारा देवा सोहम्मं कप्पं गया य, गमिस्संति य ?

[उ.] गोयमा ! तेसि णं देवाणं भवपच्चइयवेराणुबंधे। ते णं देवा विकुव्वेमाणा, परियारेमाणा वा आयरक्खे देवे वित्तासेंति। अहालहुस्सगाइं रयणाइं गहाय आयाए एगंतमंतं अवक्कमंति।

[प्र. २] अत्थि णं भंते ! तेसिं देवाणं अहालहुस्सगाइं रयणाइं ?

[उ.] हंता, अत्थि।

[प्र. ३] से कहमिदाणिं पकरेंति ?

[उ.] तओ से पच्छा कायं पव्वहंति।

१३. [प्र. १] भगवन् ! असुरकुमार देव किस प्रयोजन से सौधर्मकल्प तक गये है, (जाते है) और जायेंगे ?

[उ.] हे गौतम ! उन (असुरकुमार) देवों का वैमानिक देवो के साथ भवप्रत्ययिक (जन्मजात) वैरानुबन्ध होता है। इस कारण वे देव क्रोधवश वैक्रिय-शक्ति द्वारा विशाल, विकराल रूप बनाते हैं। परकीय देवियो के साथ (परिचार) मैथुन क्रीडा करना चाहते है, (इन्द्र के) आत्मरक्षक देवो को त्रास (भयभीत करने) देने जाते है, तथा छोटे-मोटे रत्नो को चुराकर स्वयं एकान्त स्थान मे चले (छुप) जाते हैं।

[प्र. २] भगवन् ! क्या उन (वैमानिक) देवो के पास यथोचित छोटे-मोटे रत्न होते हैं ?

[उ.] हाँ, गौतम ! होते है।

[प्र. ३] भगवन् ! जब वे (असुरकुमार देव) वैमानिक देवो के यथोचित रत्न चुराकर भाग जाते है, तब वैमानिक देव उनका क्या करते हैं ?

[उ.] तत्पश्चात् वैमानिक देव उनके शरीर को अत्यन्त व्यथा (पीडा) पहुँचाते है।

13. [Q. 1] *Bhante* ! For what reason *Asur Kumar Devs* have gone and will go up to Saudharma Kalp ?

[Ans.] Gautam ! These (*Asur Kumar*) gods have inborn or traditional animosity with *Vaimanik* gods. For that reason these gods, out of anger, employing their power of transmutation (*vaikriya shakti*) create gigantic fearsome forms. Then they go to have sexual enjoyment with consorts of *Vaimanik* gods and to terrorize the guard-gods (of the *Indra*). They steal ordinary gems and elope to forlorn places.

[Q. 2] *Bhante* ! Do those (*Vaimanik*) gods posses enough ordinary gems ?

[Ans.] Yes, Gautam ! They do.

[Q. 3] *Bhante* ! When those (*Asur Kumar*) gods run away after stealing those gems from *Vaimanik* gods, how do they react ?

[Ans.] The *Vaimanik* gods cause them extreme physical pain.

[प्र. ४] पभू णं भंते ! ते असुरकुमारा देवा तत्थगया चेव समाणा ताहिं अच्छराहिं सद्धिं दिव्वाइं भोगभोगाइं भुंजमाणा विहरित्तए ?

[उ.] णो इणट्ठे समट्ठे। ते णं तओ पडिनियत्तंति, तओ पडिनियत्तिता इहमागच्छंति, आगच्छित्ता जइ णं ताओ अच्छराओ आढायंति परियाणंति, पभू णं ते असुरकुमारा देवा ताहिं अच्छराहिं सद्धिं दिव्वाइं भोगभोगाइं भुंजमाणा विहरित्तए। अह णं ताओ अच्छराओ नो आढायंति नो परियाणंति णो णं पभू ते असुरकुमारा देवा ताहिं अच्छराहिं सद्धिं दिव्वाइं भोगभोगाइं भुंजमाणा विहरित्तए। एवं खलु गोयमा ! असुरकुमारा देवा सोहम्मं कप्पं गया य, गमिस्संति य।

[प्र. ४] भगवन् ! क्या सौधर्मकल्प में गये हुए वे असुरकुमार देव उन (देवलोक की) अप्सराओं के साथ दिव्य भोग भोगने मे समर्थ है ?

[उ.] (गौतम !) ऐसा करने मे वे समर्थ नही। वे (असुरकुमार देव) वहाँ से वापस लौट जाते हैं। वहाँ से लौटकर वे अपने स्थान मे आते हैं। यदि वे (वैमानिक) अप्सराएँ उनका (असुरकुमार देवों का) आदर करें, उन्हे स्वामी-रूप मे स्वीकारे तो, वे असुरकुमार देव उन अप्सराओं के साथ दिव्य भोग भोग सकते है-यदि वे अप्सराएँ उनका आदर न करे, उनको स्वामी-रूप में स्वीकार न करें तो, असुरकुमार देव उन अप्सराओ के साथ दिव्य एवं भोग्य भोगो को नहीं भोग सकते। गौतम ! इस कारण से असुरकुमार देव सौधर्मकल्प तक गये है और जायेगे।

[Q. 4] *Bhante* ! Are the *Asur Kumar* gods reaching Saudharma Kalp capable of enjoying divine pleasures with the goddesses of that divine realm ?

[Ans.] (Gautam !) They are not capable of doing so. They (*Asur Kumar* gods) return from there and come to their own abodes. In case those goddesses (*Vaimanik*) like them (*Asur Kumar* gods) and accept them as their mates, only then those *Asur Kumar* gods can enjoy divine

pleasures with those goddesses. However, in case those goddesses (*Vaimanik*) do not like them (*Asur Kumar* gods) and do not accept them as their mates, then those *Asur Kumar* gods cannot enjoy divine pleasures with those goddesses. Gautam ! For that reason *Asur Kumar Devs* have gone and will go up to Saudharma Kalp ?

विवेचन : (सूत्र १३ मे) यहाँ सौधर्मकल्प तक जाने के तीन कारण बताये हैं-(१) भव प्रत्ययिक वैर, (२) दूसरे देवो की देवियो के साथ भोग भोगने की इच्छा, और (३) सौधर्मकल्प के छोटे-मोटे रत्नो को चुराने की लालसा। जो आत्मरक्षक देव शस्त्र लिए सदा इन्द्र के पीछे खडे रहते है, उन्हें विचित्र रूप बनाकर संत्रस्त करने के लिए भी असुरदेव सौधर्मकल्प मे जाते हैं। आगे इसी शतक के सूत्र ४४ मे चमरेन्द्र का सौधर्मकल्प में जाने का एक हेतु और बताया है-वहाँ के शक्रेन्द्र को अपनी दिव्य देव-ऋद्धि दिखाने के लिए तथा उनकी दिव्य देव-ऋद्धि देखने के लिए। अर्थात् दिव्य ऋद्धि का दर्शन और प्रदर्शन भी सौधर्मकल्प मे जाने का एक हेतु होता है।

Elaboration—(aphorism-13) Here three main reasons for *Asur Kumar* gods going to Saudharm Kalp have been mentioned—(1) inborn animosity, (2) desire of enjoying divine pleasures with consorts of other gods, and (3) longing to steal ordinary gems from Saudharm Kalp. They also go to Saudharma Kalp to frighten the guard-gods who stand equipped with weapons behind *Indra*, by creating bizarre forms. In aphorism-44 of this chapter an additional reason for Chamarendra's visit to Saudharma Kalp is mentioned—For showing his divine opulence to Shakrendra and witnessing Shakrendra's divine opulence. This means that display and witnessing of divine opulence is also one reason for a visit to Saudharma Kalp

१४. [प्र.] केवइयकालस्स णं भंते ! असुरकुमारा देवा उड्ढं उप्पयंति जाव सोहम्मं कप्पं गया य, गमिस्संति य।

[उ.] गोयमा ! अणंताहिं ओसप्पिणीहिं अणंताहिं उस्सप्पिणीहिं समतिक्कंताहि, अत्थि णं एस भावे लोयच्छेरयभूए समुप्पज्जइ, जं णं असुरकुमारा देवा उड्ढं उप्पयंति जाव सोहम्मो कप्पो।

१४. [प्र.] भगवन् ! कितने काल मे (कितना समय व्यतीत होने पर) असुरकुमार देव ऊर्ध्वगमन करते हैं तथा सौधर्मकल्प तक ऊपर गये है, जाते है और जायेंगे ?

[उ.] गौतम ! अनन्त उत्सर्पिणी काल और अनन्त अवसर्पिणी काल व्यतीत होने के पश्चात् लोक मे आश्चर्यजनक यह प्रसग आता है कि असुरकुमार देव ऊर्ध्वगमन करते हैं तथा सौधर्मकल्प तक ऊपर गये है, जाते हैं और जायेंगे ?

14. [Q.] *Bhante* ! After how much time *Asur Kumar Devs* did, do and will move upwards and go up to Saudharma Kalp ?

[Ans.] Gautam ! After a lapse of infinite *Utsarpini* (progressive cycle of time) and *Avasarpini* (regressive cycle of time) such occasion comes in *Lok* when *Asur Kumar Devs* did, do and will move upwards and go up to Saudharma Kalp.

१५. [प्र.] किं निस्साए णं भंते ! असुरकुमारा देवा उड्ढं उप्पयंति जाव सोहम्मो कप्पो ?

[उ.] गोयमा ! से जहानामए इह सबरा इ वा, बब्बरा इ वा, टंकणा इ वा, चुच्चुया इ वा, पल्हया इ वा, पुलिंदा इ वा, एगं महं रण्णं वा, गड्डं वा, खड्डं वा, दुग्गं वा, दरिं वा, विसमं वा, पव्वयं वा, णीसाए सुमहल्लमवि आसबलं वा हत्थिबलं वा जोहबलं वा धणुबलं वा आगलेंति, एवामेव असुरकुमारा वि देवा, णऽन्नत्थ अरिहंते वा, अरिहंतचेइयाणि वा, अणगारे वा भावियप्पणो निस्साए उड्ढं उप्पयंति जाव सोहम्मो कप्पो।

१५. [प्र.] भगवन् ! असुरकुमार देव किसका आश्रय (निश्रा) लेकर सौधर्मकल्प में ऊपर तक जाते है ?

[उ.] हे गौतम ! जिस प्रकार यहाँ (इस मनुष्यलोक में) शबर, बर्बर, टकण (जातीय म्लेच्छ) या चुचुक (अथवा भुत्तुय), मल्हय अथवा पुलिन्द जाति के लोग किसी बड़े अरण्य (जगल) का, गड्ढे का, खाई का, दुर्ग (किले) का, गुफा का, किसी विषम (ऊबड-खाबड प्रदेश या बीहड वृक्षो से सघन) स्थान का, अथवा पर्वत का आश्रय लेकर एक महान् एव व्यवस्थित अश्व सेना को, गज सेना को, पैदल (पदाति) सेना को, अथवा धनुर्धारियो की सेना को आकुल-व्याकुल करके जीत लेते हैं; इसी प्रकार असुरकुमार देव भी एकमात्र अरिहन्तो का या अरिहन्तदेव के चैत्यों का, अथवा भावितात्मा अनगारों का आश्रय (निश्रा) लेकर ऊर्ध्वगमन करते है, यावत् सौधर्मकल्प तक ऊपर जाते है।

15. [Q.] *Bhante* ! With what support do *Asur Kumar Devs* go upward... and so on up to... Saudharma Kalp ?

[Ans.] Just as here (in the world of men) people of the Shabar, Barbar, Tankan, Chuchuk (or Bhuttuya), Malhava or Pulind tribes harass, unsettle and defeat a large and organized army of cavalry, elephant-battalion, infantry or archers drawing support from some large forest, a ditch, a gorge, a fort, a cave, difficult terrain (including a dense grove), or a hill; in the same way *Asur Kumar Devs* drawing support of *Arihants* or *Chaitya* of *Arihants* or sagacious ascetics (*bhavitatma anagar*) go upwards... and so on up to .. Saudharma Kalp.

१६. [प्र.] सव्वे वि णं भंते ! असुरकुमारा देवा उड्ढं उप्पयंति जाव सोहम्मो कप्पो ?

[उ.] गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे, महिड्ढिया णं असुरकुमार देवा उड्ढं उप्पयंति जाव सोहम्मो कप्पो।

१६. [प्र.] भगवन् ! क्या सभी असुरकुमार देव सौधर्मकल्प तक ऊपर जाते हैं ?

[उ.] गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है। अर्थात् सभी असुरकुमार देव ऊपर सौधर्मकल्प तक नहीं जा सकते; किन्तु महती ऋद्धि वाले असुरकुमार देव ही सौधर्म-देवलोक तक ऊपर जाते हैं।

16. [Q.] *Bhante* ! Do all *Asur Kumar Devs* go upward... and so on up to... Saudharma Kalp ?

[Ans.] Gautam ! This is not correct. (That means all *Asur Kumar Devs* do not go upward... and so on up to... Saudharma Kalp.) Only those *Asur Kumar Devs* who are endowed with great opulence go upward... and so on up to... Saudharma Kalp.

१७. [प्र.] एस वि य णं भंते ! चमरे असुरिंदे असुरकुमारराया उड्ढं उप्पतियपुव्वे जाव सोहम्मो कप्पो ?

[उ.] हंता, गोयमा ! एस वि य णं चमरे असुरिंदे असुरराया उड्ढं उप्पतियपुव्वे जाव सोहम्मो कप्पो।

१७. [प्र.] हे भगवन् ! क्या असुरेन्द्र असुरराज चमर भी पहले कभी ऊपर-यावत् सौधर्मकल्प तक जा चुका है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! यह असुरेन्द्र असुरराज चमर भी पहले ऊपर-यावत् सौधर्मकल्प तक ऊर्ध्वगमन कर चुका है।

17. [Q.] *Bhante* ! Has Asurendra Chamar, the overlord (*Indra*) of *Asurs*, ever gone upward... and so on up to... Saudharma Kalp

[Ans.] Yes, Gautam ! Asurendra Chamar, the overlord (*Indra*) of *Asurs*, has gone upward... and so on up to . Saudharma Kalp in the past.

विवेचन : असुरेन्द्र चमर के सौधर्मकल्प तक ऊपर जाने के लिए तीन निश्रा (आश्रय-स्थान) का उल्लेख है-(१) अरिहंत-तीर्थंकर, केवलज्ञानी, अवधिज्ञानी तथा मन पर्यवज्ञानी। (२) अरिहत चैत्य-अरिहत की प्रतिमा अथवा अर्हत् मुनि (छद्मस्थ तीर्थंकर), (३) भावितात्मा अनगार (ज्ञान-दर्शन की भावना से आत्मा को भावित करने वाला सामान्य मुनि)।

Elaboration—There is a mention of three supports for Chamarendra rising up to Saudharma Kalp—(1) *Arihant—Tirthankar*, omniscient, *Avadhi jnani* and *Manah-paryav jnani*. (2) *Arihant-chaitya*—image of *Arihant* or *arhat-muni* (*Tirthankar* in *chhadmasth* state). (3) *Bhavitatma anagar*—sagacious ascetics who enrich their soul with pursuit of right knowledge and perception.

१८. [प्र.] अहो णं भंते ! चमरे असुरिंदे असुरकुमारराया महिड्ढीए महज्जुतीए जाव कहिं पविट्ठा ?

[उ.] कूडागारसालादिट्ठंतो भाणियव्वो।

१८. [प्र.] 'अहो, भगवन् ! (आश्चर्य है)' असुरेन्द्र असुरराज चमर ऐसी महाऋद्धि एवं महाद्युति वाला है ! तो हे भगवन् ! (नाट्यविधि दिखाने के पश्चात्) उसकी वह दिव्य देव-ऋद्धि यावत् दिव्य देव-प्रभाव कहाँ चला गया ?

[उ.] (गौतम) यहाँ भी कूटाकारशाला का दृष्टान्त समझना चाहिए।

18. [Q.] Oh ! *Bhante* ! (How astonishing !) Asurendra Chamar, the overlord (*Indra*) of *Asurs*, is endowed with so great opulence. *Bhante* ! Where did that divine opulence... and so on up to... influence go and disappear (after the dance performance) ?"

[Ans.] (Gautam !) Here the example of *Kootakar Shala* (camouflaged house) should be repeated.

चमरेन्द्र का पूर्वभव PAST BIRTH OF CHAMARENDRA

१९. [प्र.] चमरेणं भंते ! असुरिंदेणं असुररण्णा सा दिव्वा देविड्ढी तं चेव जाव किण्णा लद्धा पत्ता अभिसमन्नागया ?

[उ.] एवं खलु गोयमा ! तेणं कालेणं तेणं समएणं इहेव जंबुद्दीवे भारहे वासे विंझगिरिपायमूले बेभेले नामं सन्निवेसे होत्था। वण्णओ। तत्थ णं बेभेले सन्निवेसे पूरणे नामं गाहावती परिवसति अड्ढे दित्ते जहा तामलिस्स वत्तव्वया तहा नेयव्वा। नवरं चउप्पुडयं दारुमयं पडिग्गहं करेत्ता जाव विपुलं असण-पाण-खाइम-साइमं जाव सयमेव चउप्पुडयं दारुमयं पडिग्गहं गहाय मुंडे भवित्ता दाणामाए पव्वज्जाए पव्वइत्तए।

१९. [प्र.] भगवन् ! असुरेन्द्र असुरराज चमर को वह दिव्य देव-ऋद्धि और यावत् वह सब देव-प्रभाव किस प्रकार उपलब्ध हुई, प्राप्त हुई और अभिसमन्वागत हुई (अभिमुख आई) ?

[उ.] गौतम ! उस काल और उस समय में इसी जम्बूद्वीप नामक द्वीप में, भारतवर्ष में, विन्ध्याचल की तलहटी में 'बेभेल' नामक सन्निवेश था, वहाँ 'पूरण' नामक एक गृहपति रहता था। वह बहुत धनाढ्य और प्रभावशाली था। यहाँ तामली की तरह 'पूरण' गृहपति की प्रव्रज्या लेने तक की सारी वक्तव्यता जान लेनी चाहिए। विशेष यह है कि चार खानो (पुटकों) वाला काष्ठमय पात्र बनाकर यावत् विपुल अशन, पान, खादिम और स्वादिम रूप चतुर्विध आहार बनवाकर ज्ञातिजनों आदि को भोजन कराकर तथा उनके समक्ष अपने ज्येष्ठ पुत्र को कुटुम्ब का भार सौंपकर यावत् स्वयमेव चार खानो वाले काष्ठपात्र लेकर मुण्डित होकर 'दानामा' नामक प्रव्रज्या अंगीकार करने का संकल्प किया यावत् तदनुसार प्रव्रज्या अंगीकार की।

19. [Q.] *Bhante* ! How did Asurendra Chamar, the overlord (*Indra*) of *Asurs* get, acquire and manifest (*abhimukh*) that divine opulence... and so on up to. . and influence ?

[Ans.] Gautam ! During that period of time there was an inhabited area (*sannivesh*) named Bebhel in the valley of Vindhya mountain in Bharat-varsh in this Jambu continent. In Bebhel lived a householder (*gathapati*) named Puran. He was very rich and influential. Here the story of Tamali should be repeated till he accepted initiation. The difference being that he (Puran) made a wooden bowl with four

compartments... and so on up to.. got cooked and offered his kinfolk large quantities of *ashan, paan, khadya, svadya* etc. After that, in their presence he blessed his eldest son with the status of head of the family. Then after seeking permission from them, tonsuring his head and carrying that bowl, he resolved to accept the *Danama* initiation (*pravrajya*). and so on up to.. accepted initiation accordingly.

२०. पव्वइए वि य णं समाणे तं चेव, जाव आयावणभूमीओ पच्चोरुहइ पच्चोरुहित्ता सयमेव चउप्पुडयं दारुमयं पडिग्गहं गहाय बेभेले सन्निवेसे उच्च-नीय-मज्झिमाइं कुलाइं घरसमुदाणस्स भिक्खायरियाए अडेत्ता 'जं मे पढमे पुडए पडइ, कप्पइ मे तं पंथेपहियाणं दलइत्तए। जं मे दोच्चे पुडए पडइ, कप्पइ मे तं काक-सुणयाणं दलइत्तए। जं मे तच्चे पुडए पडइ, कप्पइ मे तं मच्छ-कच्छभाणं दलइत्तए। जं मे चउत्थे पुडए पडइ, कप्पइ मे तं अप्पणा आहारं आहारित्तए' त्ति कट्टु एवं संपेहेइ।

संपेहित्ता कल्लं पाउप्पभायाए रयणीए तं चेव निरवसेसं जाव जं से चउत्थे पुडए पडइ तं अप्पणा आहारं आहारेइ।

२०. प्रव्रजित होकर उसने तामली तापस की तरह सब प्रकार से तपश्चर्या की, आतापना भूमि मे आतापना लेने लगा, इत्यादि सब कथन पूर्ववत् जानना; यावत् बेले के तप के पारणे के दिन वह आतापना भूमि में नीचे उतरा। फिर स्वयमेव चार खानो वाला काष्ठमय पात्र लेकर 'बेभेल' सन्निवेश मे ऊँच, नीच और मध्यम कुलो के गृहसमुदाय से भिक्षा-विधि से भिक्षाचरी करने के लिए घूमा। भिक्षाटन करते हुए उसने इस प्रकार चार विभाग किये। "मेरे भिक्षापात्र के पहले खाने मे जो कुछ भिक्षा पडेगी उसे मार्ग मे मिलने वाले पथिको को दे देना है। मेरे (पात्र के) दूसरे खाने मे जो कुछ (खाद्य वस्तु) प्राप्त होगी, वह मुझे कौओ और कुत्तों को दे देनी है। जो (भोज्य-पदार्थ) मेरे तीसरे खाने मे आयेगा, वह मछलियो और कछुओ को दे देना है और चौथे खाने मे जो भिक्षा प्राप्त होगी, उसका स्वयं आहार करना है।" इस प्रकार भलीभाँति निश्चय करके दूसरे दिन रात्रि व्यतीत होने पर प्रभातकालीन प्रकाश होते ही-यावत् पूर्वोक्त विधि का पालन करता हुआ काष्ठपात्र के चौथे खाने मे जो भोजन पडता, उसका आहार स्वय करता है।

20. After accepting the initiation (*pravrajya*) he performed all austerities like Tamali Tapas, spent his time enduring heat standing in *Atapana Bhumi* and all other details should be read as already stated (in the story of Tamali). On the day of breaking the fast he would get down from the *Atapana Bhumi*, carry the wooden bowl (with four compartments) and properly collect alms by visiting houses of low, middle and high class families in Bebhel. While collecting alms he conceived of four divisions—"I will give whatever alms are collected in the first compartment of my bowl to the pedestrians I meet on the way. I will give whatever alms are collected in the second compartment of my

bowl to crows and dogs. I will give whatever alms are collected in the third compartment of my bowl to fish and turtles. Lastly, I will eat whatever alms are collected in the fourth compartment of my bowl." With this resolve, after two days of fasting, when the night ended and sun arose he would follow the aforesaid procedure and eat whatever alms were collected in the fourth compartment of his bowl.

२१. तए णं से पूरणे बालतवस्सी तेणं ओरालेणं विउलेणं पयत्तेणं पग्गहिएणं बालतवोकम्मेणं तं चेव जाव बेभेलस्स सन्निवेसस्स मज्झंमज्झेणं निग्गच्छति, निग्गच्छित्ता पाउयकुंडियमादीयं उवकरणं चउप्पुडयं च दारुमयं पडिग्गहं एगंतमंते एडेइ, एडित्ता बेभेलस्स सन्निवेसस्स दाहिणपुरत्थिमे दिसीभागे अद्धनियत्तणियमंडलं आलिहित्ता संलेहणा–झूसणाझूसिए भत्त–पाणपडियाइक्खिए पाओवगमणं निवण्णे।

२१. तदनन्तर पूरण बाल–तपस्वी उस उदार, विपुल, प्रदत्त और प्रगृहीत बाल–तपश्चरण के कारण शुष्क एव रूक्ष हो गया। (यहाँ बीच का सारा वर्णन तामली तापस की तरह जानना चाहिए) यावत् वह (पूरण बाल–तपस्वी) भी 'बेभेल' सन्निवेश के बीचोबीच होकर निकला। निकलकर उसने पादुका (खडाऊ) और कुण्डी आदि उपकरणो को तथा चार खानो वाले काष्ठपात्र को एकान्त प्रदेश मे छोड दिया। फिर बेभेल सन्निवेश के अग्निकोण (दक्षिण–पूर्व दिशाविभाग) में अर्द्ध–निर्वर्तनिक मण्डल (आधे शरीर प्रमाण रेखा खीचकर) बनाया, उसे साफ किया, यो मण्डल बनाकर उसने संलेखना की जूषणा (आराधना) से अपनी आत्मा को सेवित, किया। फिर यावज्जीवन आहार–पानी का प्रत्याख्यान करके उस पूरण बाल–तपस्वी ने पादपोपगमन अनशन–(सथारा) स्वीकार किया।

21. Then, as a consequence of the said naive austerity (*baal-tap*); that was free of expectations (*udaar*), extended (*vipul*), consented by the guru (*pradatt*), and observed with great devotion (*pragrihit*); that naive-hermit Puran became dehydrated and haggard (detailed description should be read as that of Tamali Tapas)... and so on up to... He moved through the heart of Bebhel and deposited his sandals, bowls and other belongings at some forlorn spot. After doing that he went towards south-east of Bebhel. There he selected, demarcated and cleaned a limited area (equivalent to the dimensions of half his body). Puran hermit then spent his time enriching his soul by observing the ultimate vow (*sallekhana*). He abandoned food and water completely and commenced the *padapopagaman santhara* (fast unto death lying still like a severed branch of tree).

२२. तेणं कालेणं तेणं समएणं अहं गोयमा ! छउमत्थकालियाए एक्कारसवासपरियाए छट्ठंछट्ठेणं अणिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे गामाणुगामं दूइज्जमाणे जेणेव सुंसुमारपुरे नगरे जेणेव असोगवणसंडे उज्जाणे जेणेव असोगवरपायवे जेणेवे पुढविसिलावट्टए तेणेव उवागच्छामि, असोगवरपायवस्स हेट्ठा पुढविसिलावट्टयंसि अट्ठमभत्तं पगिण्हामि, दो वि पाए साहट्टु

वग्घारियपाणी एगपोग्गलनिविट्ठदिट्ठी अणिमिसनयणे ईसिपब्भारगएणं काएणं अहापणिहिएहिं गत्तेहिं सव्विंदिएहिं गुत्तेहिं एगरातियं महापडिमं उवसंपज्जित्ताणं विहरामि।

२२. गौतम ! उस काल और उस समय मैं छद्मस्थ अवस्था मे था; मेरा दीक्षा-पर्याय ग्यारह वर्ष का था। उस समय मैं निरन्तर छट्ठ-छट्ठ तप करता हुआ, संयम और तप से अपनी आत्मा को भावित करता हुआ, पूर्वानुपूर्वी क्रम से विचरण करता हुआ, ग्रामानुग्राम घूमता हुआ, जहाँ सुंसुमारपुर नगर था, जहाँ अशोकवनषण्ड नामक उद्यान था, वहाँ श्रेष्ठ अशोक तरु के नीचे पृथ्वीशिलापट्टक के पास आया। मैंने उस समय अशोकतरु के नीचे स्थित पृथ्वीशिलापट्टक पर खड़े होकर अट्ठमभक्त तप ग्रहण किया। (उस समय) मैने दोनो पैरो को परस्पर सटा लिया। दोनों हाथो को नीचे की ओर लटकाए हुए (जिनेन्द्र मुद्रा में) सिर्फ एक पुद्‌गल पर (नासाग्र या भृकुटि पर) दृष्टि स्थिर कर, निर्निमेष नेत्र (आँखों की पलको को न झपकाते हुए) शरीर के अगले भाग को थोडा-सा आगे झुकाकर, यथावस्थित गात्रों (शरीर के अगों) से एव समस्त इन्द्रियो को गुप्त (स्वकेन्द्रित या अन्तर्लीन) करके एकरात्रि की महाप्रतिमा को अगीकार करके कायोत्सर्ग किया था।

22. Gautam ! During that period of time I was in the *Chhadmasth* state (one who is short of omniscience due to residual karmic bondage); my ascetic-life (*diksha-paryaya*) was only eleven years old. At that time observing a series of two day fasts, enkindling my soul with ascetic-discipline and austerities, comfortably wandering from one village to another in course of my usual itinerant way, I had arrived near a slab of rock lying under an excellent Ashoka tree in the Ashoka garden of Sumsumar-pur city. Standing on that slab under the Ashoka tree I had taken vow of a three day fast (avoiding eight meals). Then joining both feet and with hands hanging downward I had fixed my unblinking gaze on a single molecule (*pudgal*; or a point on the tip of nose or middle of eye-brows). With the upper half of the body slightly bent forward, making the whole body tranquil, and controlling all sense organs, I had accepted *Maha-pratima* for a night commencing *kayotsarg* meditation (complete dissociation from the body).

२३. तेणं कालेणं तेणं समएणं चमरचंचा रायहाणी अणिंदा अपुरोहिया याऽवि होत्था। तए णं से पूरणे बालतवस्सी बहुपडिपुण्णाइं दुवालसवासाइं परियागं पाउणित्ता मासियाए संलेहणाए अत्ताणं झूसेत्ता सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए छेदेत्ता कालमासे कालं किच्चा चमरचंचाए रायहाणीए उववायसभाए जाव इंदत्ताए उववन्ने।

२३. उस काल और उस समय में चमरचंचा राजधानी इन्द्रविहीन और पुरोहितरहित थी। (इधर) पूरण बाल-तपस्वी पूरे बारह वर्ष तक (दानामा) प्रव्रज्या-पर्याय का पालन करके, एकमासिक संलेखना की आराधना से अपनी आत्मा को सेवित करके, साठ भक्त अनशन रखकर मृत्यु के अवसर पर मृत्यु प्राप्त करके चमरचंचा राजधानी की उपपातसभा में यावत् इन्द्र के रूप मे उत्पन्न हुआ।

23. During that period of time capital city Chamarchancha was without an *Indra* (overlord) as well as *Purohit* (priest). (Here) After spending complete twelve years as a *Danama* initiate, naive-hermit Puran enkindled his soul with the ultimate vow (*sallekhana*) of one month duration, avoiding sixty meals and passed away at the time of death. He reincarnated in capital city Chamarchancha in the divine hall of birth (*upapat sabha*)... and so on up to as *Indra* (overlord).

२४. तए णं से चमरे असुरिंदे असुरराया अहुणोववन्ने पंचविहाए पज्जत्तीए पज्जत्तीभावं गच्छइ, तं जहा—आहारपज्जत्तीए जाव भास–मणपज्जत्तीए।

२४. उस समय तत्काल उत्पन्न हुआ असुरेन्द्र असुरराज चमर आहारपर्याप्ति से यावत् पाँच प्रकार की पर्याप्तियो से पर्याप्त बना।

24. Then that instantaneously born Chamarendra, the overlord (*Indra*) of *Asurs* attained the state of full development (*paryapti bhaava*) through *aahaar* (food) *paryapti*... and so on up to... all five kinds of full development (*paryapti*).

चमरेन्द्र द्वारा सौधर्मकल्प में उत्पात MISCHIEF BY CHAMARENDRA IN SAUDHARMA KALP

२५. तए णं से चमरे असुरिंदे असुरराया पंचविहाए पज्जत्तीए पज्जत्तीभावं गये समाणे उड्ढं वीससाए ओहिणा आभोएइ जाव सोहम्मो कप्पो। पासइ य तत्थ सक्कं देविंदं देवरायं मघवं पागसासणं सतक्कतुं सहस्सक्खं वज्जपाणिं पुरंदरं जाव दस दिसाओ उज्जोवेमाणं पभासेमाणं। सोहम्मे कप्पे सोहम्मवडेंसए विमाणे सभाए सुहम्माए सक्कंसि सीहासणंसि जाव दिव्वाइं भोगभोगाइं भुंजमाणं पासइ, पासित्ता इमेयारूवे अज्झत्थिए चिंतिए पत्थिए मणोगए संकप्पे समुप्पज्जित्था—केस णं एस अपत्थियपत्थए दुरंतपंतलक्खणे हिरि–सिरि–परिवज्जिए हीणपुण्णचाउद्दसे जे णं ममं इमाए एयारूवाए दिव्वाए देविड्ढीए जाव दिव्वे देवाणुभावे लद्धे पत्ते जाव अभिसमन्नागए उप्पिं अप्पुस्सुए दिव्वाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरइ ? एवं संपेहेइ, संपेहित्ता सामाणियपरिसोववन्नए देवे सद्दावेइ, एवं वयासी—केस णं एस देवाणुप्पिया ! अपत्थियपत्थए जाव भुंजमाणे विहरइ ?

२५. जब असुरेन्द्र असुरराज चमर पाँच पर्याप्तियो से पर्याप्त हो गया, तब उसने स्वाभाविक रूप से ऊपर सौधर्मकल्प तक अवधिज्ञान का उपयोग किया। वहाँ उसने देवेन्द्र देवराज, मघवा, पाकशासन, शतक्रतु, सहस्राक्ष, वज्रपाणि, पुरन्दर (ये छहो इन्द्र के गुण निष्पन्न नाम हैं) शक्र को दसों दिशाओं को उद्योतित एव प्रकाशित करते हुए एवं सौधर्मकल्प मे सौधर्मावतसक विमान में शक्र नामक सिंहासन पर बैठकर, दिव्य भोगों का उपभोग करते हुए देखा। इसे देखकर चमरेन्द्र के मन में इस प्रकार का आन्तरिक चिन्तन, भाव एवं मनोगत सकल्प समुत्पन्न हुआ कि–"अरे ! कौन यह अप्रार्थित–प्रार्थक–(अनिष्ट वस्तु की प्रार्थना–अभिलाषा करने वाला, मृत्यु का इच्छुक), निकृष्ट लक्षण वाला तथा लज्जा–(ह्री) और शोभा–(श्री) से रहित, हीनपुण्या (अपूर्ण–टूटती) चतुर्दशी को जन्मा हुआ है, जो मुझे इस

प्रकार की दिव्य देव-ऋद्धि यावत् दिव्य देव-प्रभाव लब्ध, प्राप्त और अभिसमन्वागत होने पर भी मेरे सिर पर बड़ी लापरवाही से बैठा। दिव्य भोगो का उपभोग करता हुआ विचर रहा है?'' इस प्रकार का विचार करके चमरेन्द्र ने अपनी सामानिक परिषद् मे उत्पन्न देवो को बुलाया और बुलाकर उनसे इस प्रकार पूछा-'हे देवानुप्रियो ! यह बताओ कि यह कौन मृत्यु को चाहने वाला यावत् दिव्य एवं भोगों का उपभोग करता हुआ विचरता है?'

25. When Chamarendra, the overlord (*Indra*) of *Asurs* attained the state of five kinds full development, he instinctively used his *Avadhi-jnana* to perceive up to Saudharma Kalp There he saw Devendra (king of gods) Shakra, Maghava (controller of mighty clouds), Paakshasan (conqueror of Paak), Shatkritu (performer of hundred *Pratimas*), Sahasraksh (having thousand eyes), Vajrapani (wielder of thunder-bolt), Purandar (destroyer of forts or cities) (These six are other names of *Indra* based on his virtues). He saw that *Indra* brightening and enlightening all the ten directions, sitting on the throne named *Shakra* in his Saudharmavatamsak Vimaan in Saudharma Kalp and enjoying divine pleasures. On seeing all this, Chamarendra had an inspiration (*adhyavasaya*), thought (*chintan*), desire (*abhilasha*) and resolve (*sankalp*) as follows—"Hey ! Who is this fellow hankering for the undesirable (death) (*aprarthik-prarthak*), with ominous marks, shameless and graceless, born on an inauspicious fourteenth day (a shortened date in a fortnight devised for adjustment between lunar and solar calendars), who is so carelessly perched over my head even though I am endowed with and have manifested such divine opulence . and so on up to. . influence ? And continues to enjoy divine pleasures ?" With these thoughts Chamarendra called the gods of his *Samanik Sabha* (gods having same status) and asked—"Beloved of gods ! Tell me who is this fellow hankering for the undesirable (death)... and so on up to... And continues to enjoy divine pleasures ?"

२६. तए णं ते सामाणियपरिसोववन्नगा देवा चमरेणं असुरिंदेणं असुररण्णा एवं वुत्ता समाणा हट्ठतुट्ठा जाव हयहियया करयलपरिग्गहियं दसनहं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु जयेणं विजयेणं वद्धावेंति, एवं वयासी-एस णं देवाणुप्पिया ! सक्के देविंदे देवराया जाव विहरइ।

२६. असुरेन्द्र असुरराज चमर द्वारा सामानिक परिषद् मे उत्पन्न देवों से इस प्रकार पूछने पर वे चित्त में अत्यन्त हर्षित और सन्तुष्ट हुए। यावत् प्रीतिपूर्ण मन वाले सौमनस्ययुक्त होकर दोनों हाथ जोड़कर दसों नखों को एकत्रित करके अंजलि को सिर के सम्मुख घुमाकर, मस्तक पर टिकाकर चमरेन्द्र को जय-विजय शब्दों से बधाई देते हैं। फिर वे इस प्रकार बोले-'हे देवानुप्रिय ! यह तो देवेन्द्र देवराज शक्र है, जो दिव्य भोगों का उपभोग कर रहा !'

26. On being asked thus by Chamarendra, the overlord (*Indra*) of *Asurs*, the gods of his *Samanik Sabha* (gods having same status) were very pleased and contented. With pleasure and contentment they joined their palms bringing all the ten nails together, waved them overhead and touched their forehead before greeting Chamrendra with hails of victory After that they said—"Beloved of gods ! This ıs Shakrendra, the overlord of gods who is enjoying divine pleasures."

२७. तए णं से चमरे असुरिंदे असुरराया तेसिं सामाणियपरिसोववन्नगाणं देवाणं अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म आसुरुत्ते रुट्ठे कुविए चंडिक्किए मिसिमिसेमाणे ते सामाणियपरिसोववन्नए देवे एवं वयासी-'अन्ने खलु भो ! से सक्के देविंदे देवराया, अन्ने खलु भो ! से चमरे असुरिंदे असुरराया, महिड्ढीए खलु से सक्के देविंदे देवराया, अप्पिड्ढीए खलु भो ! से चमरे असुरिंदे असुरराया। तं इच्छामि णं देवाणुप्पिया ! सक्कं देविंदं देवरायं सयमेव अच्चासाइत्तए' त्ति कट्टु उसिणे उसिणब्भूए याऽवि होत्था।

२७. तत्पश्चात् उन सामानिक परिषद् के देवो का उत्तर सुनकर मन मे अवधारण करके वह असुरेन्द्र असुरराज चमर शीघ्र ही क्रुद्ध (लाल-पीला), रुष्ट, कुपित एवं चण्ड, रौद्र आकृतियुक्त हुआ और क्रोधावेश मे आकर बडबडाने लगा। फिर उसने सामानिक परिषद् के देवों से इस प्रकार कहा-'अरे ! वह देवेन्द्र देवराज शक्र कोई दूसरा है, और यह असुरेन्द्र असुरराज चमर कोई दूसरा है ! देवेन्द्र देवराज शक्र तो महाऋद्धि वाला है। जबकि असुरेन्द्र असुरराज चमर अल्पऋद्धि वाला ही है, (यह सब मै जानता हूँ, फिर भी मै इसे कैसे सहन कर सकता हूँ ?) अतः हे देवानुप्रियो ! मैं चाहता हूँ कि मै स्वयमेव (अकेला ही) उस देवेन्द्र देवराज शक्र को उसके स्वरूप-(पद या शोभा) से भ्रष्ट कर दूँ।' यों कहकर वह चमरेन्द्र (कोपवश) उष्ण-(उत्तप्त) हो गया, उष्णभूत-(अस्वाभाविक रूप से उत्तेजित) हो उठा।

27. On hearing and understanding the reply from the gods born in his *Samanik Sabha*, that Chamarendra, the overlord (*Indra*) of *Asurs* soon became angry and enraged He lost his temper and looked dreadful. In fit of anger he started jabberıng. He then said to the gods of his *Samanik Sabha*—"Hey ! That is some other Shakrendra, the king of gods and that is some other Chamarendra, the overlord (*Indra*) of *Asurs*. That Shakrendra, the king of gods is endowed wıth great opulence and in comparison Chamarendra, the overlord (*Indra*) of *Asurs* is, indeed, endowed with lesser opulence. (I am aware of all this Still, how can I tolerate it ?) Therefore, O Beloved of gods ! I, on my own, want to dislodge this Shakrendra, the king of gods from his present state (of grandeur and status)." Uttering these words that Chamrendra became agitated (*ushna*) and enraged (*ushnabhoot*)

२८. (क) तए णं से चमरे असुरिंदे असुरराया ओहिं पउंजइ, पउंजित्ता ममं ओहिणा आभोएइ, आभोएत्ता इमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था-'एवं खलु समणे भगवं महावीरे जंबुद्दीवे दीवे भारहे

वासे सुंसुमारपुरे नगरे असोगवणसंडे उज्जाणे असोगवरपायवस्स अहे पुढविसिलावट्टयंसि अट्ठमभत्तं पगिण्हित्ता एगराइयं महापडिमं उवसंपज्जित्ताणं विहरति। तं सेयं खलु मे समणे भगवं महावीरं नीसाए सक्कं देविंदं देवरायं सयमेव अच्चासादेत्तए' त्ति कट्टु एवं संपेहेइ, संपेहित्ता सयणिज्जाओ अब्भुट्ठेइ, अब्भुट्ठेत्ता देवदूसं परिहेइ, परिहत्तिा उववायसभाए पुरत्थिमिल्लेणं दारेणं णिग्गच्छइ, णिग्गिच्छित्ता जेणेव सभा सुहम्मा, जेणेव चोप्पाले पहरणकोसे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता फलिहरयणं परामुसइ, परामुसित्ता एगे अबिइए फलिहरयणमायाए महया अमरिसं वहमाणे चमरचंचाए रायहाणीए मज्झंमज्झेणं निग्गच्छइ, निग्गच्छित्ता जेणेव तिगिंछिकूडे उप्पायपव्वए तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता वेउव्वियसमुग्घाएणं समोहण्णइ, समोहणित्ता संखेज्जाइं जोयणाइं जाव उत्तरवेउव्वियं रूवं विकुव्वइ। विउव्वित्ता ताए उक्किट्ठाए जाव जेणेव पुढविसिलावट्टए जेणेव ममं अंतिए तेणेव उवागच्छति, उवागच्छित्ता ममं तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेति, जाव नमंसित्ता एवं वयासी--'इच्छामि णं भंते ! तुब्भं नीसाए सक्कं देविंदं देवरायं सयमेव अच्चासाइत्तए।

२८. (क) इसके पश्चात् उस असुरेन्द्र असुरराज चमर ने अवधिज्ञान का प्रयोग किया। अवधिज्ञान के प्रयोग से उसने मुझे (महावीर स्वामी को) देखा। मुझे देखकर चमरेन्द्र को इस प्रकार का आन्तरिक मनोगत संकल्प उत्पन्न हुआ कि श्रमण भगवान महावीर जम्बूद्वीप नामक द्वीप मे, भरतवर्ष मे, सुंसुमारपुर नगर में, अशोकवनषण्ड नामक उद्यान मे, श्रेष्ठ अशोक वृक्ष के नीचे पृथ्वीशिलापट्टक पर अट्ठमभत्त तप स्वीकार कर एकरात्रि की महाप्रतिमा अंगीकार करके स्थित है। अत मेरे लिए यह श्रेयस्कर होगा कि मैं श्रमण भगवान महावीर के निश्रा (आश्रय) से देवेन्द्र देवराज शक्र को स्वयमेव (एकाकी ही) श्रीहीन करूँ। इस प्रकार विचार करके वह चमरेन्द्र अपनी शय्या से उठा और उठकर उसने देवदूष्य वस्त्र पहना। फिर, उपपातसभा के पूर्वीद्वार से होकर निकला और जहाँ सुधर्मासभा थी, तथा जहाँ चतुष्पाल (चौपाल) नामक शस्त्रभण्डार था, वहाँ आया। शस्त्रभण्डार मे से उसने एक परिघरत्न (मुद्गर) उठाया। फिर वह किसी को साथ लिए बिना अकेला ही उस परिघरत्न को लेकर अत्यन्त रोषाविष्ट होता हुआ चमरचंचा राजधानी के बीचोंबीच होकर निकला और तिगिंच्छकूट नामक उपपात पर्वत के निकट आया। वहाँ उसने वैक्रिय समुद्घात किया। संख्यात योजनपर्यन्त का विशाल उत्तरवैक्रियरूप बनाया। फिर वह उस उत्कृष्ट यावत् दिव्य देवगति से जहाँ पृथ्वीशिलापट्टक था, वहाँ मेरे पास आया। मेरे पास उसने दाहिनी ओर से मेरी तीन बार प्रदक्षिणा की, मुझे वन्दन--नमस्कार किया और यों बोला--''भगवन् ! मैं आपके निश्राय से अकेला ही देवेन्द्र देवराज शक्र को उसकी शोभा से भ्रष्ट करना चाहता हूँ।''

28. (a) After that Chamarendra, the overlord (*Indra*) of *Asurs*, employed his *Avadhi-jnana* and saw me (Bhagavan Mahavir). On seeing me he had this inner desire—"Taking the vow of a three day fast (avoiding eight meals) and accepting *Maha-pratima* for a night, Shraman Bhagavan Mahavir stands on a slab of rock lying under an excellent Ashoka tree in the Ashoka garden, in Sumsumar-pur city, in

Bharat-varsh in this Jambu continent. Therefore it would be good for me that I personally deprive Shakrendra, the king of gods, of his grandeur under the auspices of Shraman Bhagavan Mahavir." With these thoughts that Chamarendra got up from his bed and put on his divine dress. He then came out of the hall of birth through the eastern gate and went to the armoury called Chatushpal in the main assembly (*Sudharma Sabha*). From the armoury he picked up a *Parigh-ratna* (a special mace-like weapon). In his enraged state he passed through the heart of capital Chamarchancha and proceeded all alone, without any company, to the launching (*utpat*) hill called Tingichchhakoot. There he performed *Vaikriya Samudghat* and created a huge secondary transmuted body stretching up to countable *Yojans*. Then with his maximum . and so on up to... divine speed he came to this slab of rock near me Here he thrice went around me clockwise, paid me homage and obeisance and said—"*Bhante* ! I want to personally deprive Shakrendra, the king of gods, of his grandeur, under your auspices."

२८. (ख) त्ति कट्टु उत्तरपुरित्थमं दिसिभागं अवक्कमइ, २. वेउव्वियसमुग्घाएणं समोहण्णइ, २. जाव दोच्चं पि वेउव्वियसमुग्घाएणं समोहण्णइ, २. एगं महं घोरं घोरागारं भीमं भीमागारं भासरं भयाणीयं गंभीरं उत्तासणयं कालड्डरत्तमासरासिसंकासं जोयणसयसाहस्सीयं महाबोंदिं विउव्वइ, २. अप्फोडेइ, २. वग्गइ, २. गज्जइ, २. हयहेसियं करेइ, २. हत्थिगुलुगुलाइयं करेइ, २. रहघणघणाइयं करेइ, २. पायदद्दरगं करेइ, २. भूमिचवेडयं दलयइ, २. सीहणादं नदइ, उच्छोलेति, पच्छोलेति, तिवइं छिंदइ, वामं भुअं ऊसवेइ, दाहिणहत्थपदेसिणीए य अंगुट्ठनहेण य वितिरिच्छं मुहं विडंबेइ, विडंबित्ता महया महया सद्देणं कलकलरवं करेइ, एगे अबीए फलिहरयणमायाए उड्ढं वेहासं उप्पइए। खोभंते चेव अहेलोयं, कंपेमाणे व मेइणितलं, आकड्ढंते व तिरियलोयं, फोडेमाणे व अंबरतलं, कत्थइ गज्जंते, कत्थइ विज्जुयायंते, कत्थइ वासं वासमाणे, कत्थइ रयुग्घायं पकरेमाणे, कत्थइ तमुक्कायं पकरेमाणे, वाणमंतरे देवे वित्तासेमाणे जोइसिए देवे दुहा विभयमाणे, आयरक्खे देवे विपलायमाणे, फलिहरयणं अंबरतलंसि वियड्ढमाणे, विउब्भावेमाणे, ताए उक्किट्ठाए जाव तिरियमसंखेज्जाणं दीव-समुद्दाणं मज्झंमज्झेणं वीयीवयमाणे—

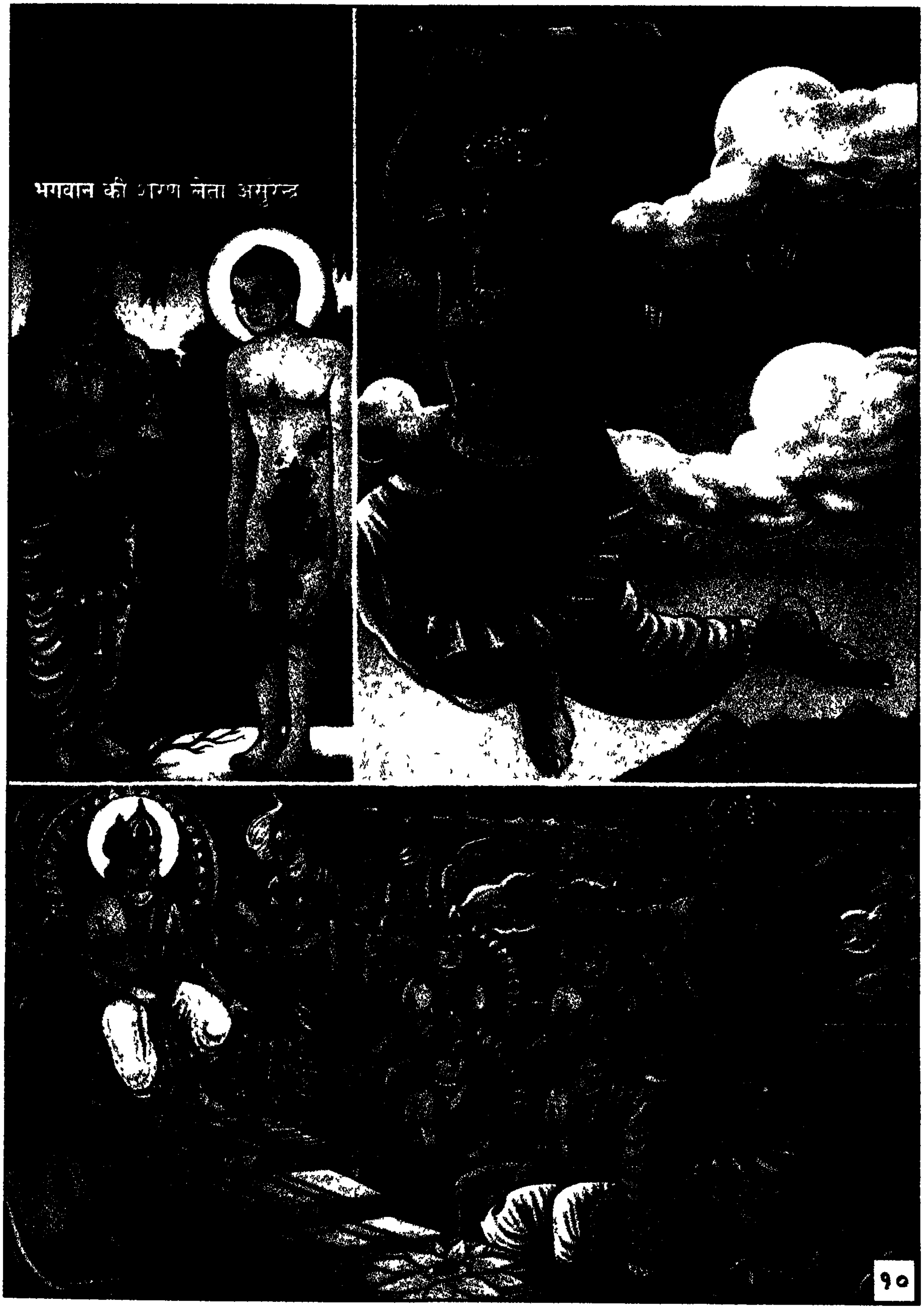
जेणेव सोहम्मे कप्पे, जेणेव सोहम्मवडेंसए विमाणे, जेणेव सभा सुहम्मा तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता एगं पायं पउमवरवेइयाए करेइ, एगं पायं सभाए सुहम्माए करेइ, फलिहरयणेणं महया महया सद्देणं तिक्खुत्तो इंदकीलं आउडेति, आउडित्ता एवं वयासी-'कहिं णं भो ! सक्के देविंदे देवराया ? कहिं णं ताओ चउरासीइं सामाणियसाहस्सीओ ? जाव कहिं णं ताओ चत्तारि चउरासीईओ आयरक्खदेवसाहस्सीओ ? कहिं णं ताओ अणेगाओ अच्छराकोडीओ ? अज्ज हणामि, अज्ज महेमि, अज्ज वहेमि, अज्ज ममं अवसाओ अच्छराओ वसमुवणमंतु' त्ति कट्टु तं अणिट्ठं अकंतं अप्पियं असुभं अमणुण्णं अमणामं फरुसं गिरं निसिरइ।

२८. (ख) इस प्रकार कहकर वह वहाँ से (सीधा) उत्तर-पूर्व दिशा-विभाग (ईशानकोण) मे चला गया। पुन. उसने वैक्रियसमुद्घात किया, (दूसरी बार) वैक्रियसमुद्घात से समवहत होकर उसने एक महाघोर, घोराकृतियुक्त, भयकर, भयकर आकार वाला, भास्वर, भयानक, गम्भीर, त्रासदायक, काली कृष्णपक्षीय (अमावस्या की) अर्ध-रात्रि एवं काले उडदों की राशि के समान काला, एक लाख योजन का ऊँचा, महाकाय शरीर बनाया। ऐसा करके वह चमरेन्द्र अपने हाथों को पछाड़ने लगा, (मेघ की तरह) गर्जना करने लगा, घोडे की तरह हिनहिनाने लगा, हाथी की तरह किलकिलाहट (चीत्कार) करने लगा, रथ की तरह घनघनाहट करने लगा, पैरो को जमीन पर जोर से पटकने (आघात करने) लगा, भूमि पर जोर से (हथेली से) थप्पड मारने लगा, सिंहनाद करने लगा, उछलने लगा, पछाड मारने लगा, (मल्ल की तरह मैदान मे) त्रिपदी को छेदने लगा, (भूमि पर तीन बार पदाघात करने लगा), बायीं भुजा ऊँची करने लगा, फिर दाहिने हाथ की तर्जनी अंगुली और अँगूठे के नख द्वारा अपने मुख को तिरछा फाडकर बिडम्बित-(टेढा-मेढ़ा) करने लगा, और बड़े जोर-जोर से कलकल शब्द करने लगा। यों करता हुआ वह चमरेन्द्र स्वय अकेला, किसी को साथ मे न लेकर परिघरत्न (मुद्गर) लेकर ऊपर आकाश मे उडा। (उडते समय अपनी उडान से) वह मानो अधोलोक को क्षुब्ध करता हुआ, पृथ्वीतल को मानो कँपाता हुआ, तिरछे लोक को खीचता हुआ-सा, गगनतल को मानो फोडता हुआ, कहीं गर्जना करता हुआ, कहीं बिजली की तरह कौधता हुआ, कहीं वर्षा के समान बरसता हुआ, कही धूल का ढेर उडाता (उछालता) हुआ, कही सघन अन्धकार का दृश्य उपस्थित करता हुआ, तथा (जाते-जाते) वाणव्यन्तर देवो को त्रास पहुँचाता हुआ, ज्योतिषी देवों के बीच में से दो भागो मे विभक्त करता हुआ एव आत्मरक्षक देवो को भगाता हुआ, परिघरत्न को आकाश मे घुमाता हुआ, उसे विशेष रूप से चमकाता हुआ, उस उत्कृष्ट दिव्य देवगति से तिरछे असख्येय द्वीपसमुद्रो के बीचोंबीच होकर निकला।

यो निकलकर जिस ओर सौधर्मकल्प था, सौधर्मावतसक विमान था और जहाँ सुधर्मासभा थी, उसके निकट पहुँचा। वहाँ पहुँचकर उसने एक पैर पद्मवरवेदिका पर रखा और दूसरा पैर सुधर्मासभा मे रखा। फिर बड़े जोर से हुकार (आवाज) करके उसने परिघरत्न से तीन बार इन्द्रकील (शक्रध्वज अथवा मुख्यद्वार के दोनो कपाटो के अर्गलास्थान) को पीटा (प्रताडित किया)। तत्पश्चात् उसने (जोर से चिल्लाकर) इस प्रकार कहा-'अरे ! वह देवेन्द्र देवराज शक्र कहाँ है ? कहाँ हैं उसके वे चौरासी हजार सामानिक देव ? यावत् कहाँ हैं उसके वे तीन लाख छत्तीस हजार आत्मरक्षक देव ? कहाँ गईं वे अनेक करोड अप्सराएँ ? आज ही मै उन सबको मार डालता हूँ, आज ही उनका मै वध कर डालता हूँ। जो अप्सराएँ मेरे अधीन नही है, वे अभी मेरी वशवर्तिनी हो जाये।' इस प्रकार चमरेन्द्र ने वे अनिष्ट, अकान्त, अप्रिय, अशुभ, अमनोज्ञ, अमनोहर और कठोर वचन बोले।

28. (b) After uttering these words he proceeded straight in the north-east direction (*Ishan Kone*). He underwent *Vaikriya Samudghat* a second time and acquired a grotesque and extremely repulsive form; a fearful and terrifying shape that was shining, dreadfully, densely and appallingly black, like a dark midnight or a pile of black pulses; and a

चमरेन्द्र द्वारा सौधर्म कल्प में उपद्रव



चित्र परिचय-१०

Illustration No. 10

चमरेन्द्र द्वारा सौधर्म कल्प में उपद्रव

एक बार नवोत्पन्न असुरराज चमरेन्द्र ने अवधिज्ञान से अपने ऊपर सौधर्मकल्प विमान को देखा। सौधर्मेन्द्र शक्र सिंहासन पर बैठा दिव्य स्वर्गीय सुखो का भोग करता दिखाई दिया। देखते ही असुरराज चमरेन्द्र का क्रोध भडका-' अरे मेरे सिर पर यह कौन मूर्ख इस प्रकार निर्लज्जता पूर्वक बैठा है ? ' सामानिक देवो ने बतााया यह सौधर्मेन्द्र देवराज शक्र है।''

क्रोधावेशग्रस्त चमरेन्द्र ने उसे कठोर शिक्षा देने का विचार किया। सोचा- वहाँ जाने से पहले मुझे किसी अरिहंत, श्रमण आदि महापुरुष की शरण (निश्रा) लेना चाहिए, ताकि आपत्ति मे फसने पर मेरी रक्षा हो सके। उस समय श्रमण भगवान महावीर अपने दीक्षा पर्याय के ग्यारहवे वर्ष मे सुसुमारपुर के उद्यान मे एक रात्रि की महाप्रतिमा मे ध्यानस्थ खडे थे। ध्यान मुद्रा स्थित भगवान महावीर के निकट आकर वन्दना करके बोला-' भगवन् ! आपकी निश्रा (शरण) ग्रहण कर मै अकेला ही देवेन्द्र शक्र को शोभा भ्रष्ट करने जा रहा हूँ।

चमरेन्द्र ने वैक्रिय कर अपना घोर विकराल रूप बनाया। हाथ मे मुद्गर लेकर घुमाता हुआ, सिंहनाद करके पैरो से जमीन पीटता हुआ, बिजली की तरह कौंधता हुआ, सौधर्म कल्प मे सुधर्मा सभा के निकट शक्रेन्द्र के विमान के सामने जा पहुँचा। सिंहनाद कर, एक पैर पद्मवेदिका पर तथा दूसरा पैर सुधर्मा सभा मे रखकर चिल्लाता हुआ बोला- 'अरे ! कहा है देवराज शक्र ! कहाँ है उसके चौरासी हजार सामानिक देव ! कहाँ गई व करोडो अप्सराएँ। मै आज ही सबका वध करके स्वर्ग को अपने अधीन बना लूगा।'

चकित हुए देवेन्द्र तथा सामानिक देव असुरराज को देखने लगे।

शतक ३ उ. २ सूत्र २७-३०

DISTURBANCE BY CHAMARENDRA IN SAUDHARMA KALP

Once newly born Chamarendra, the overlord of Asur Kumars saw Saudharma Vimaan overhead He saw Saudharmendra Shakra sitting on his throne and enjoying divine pleasures

On seeing this Chamarendra was enraged—"Hey ! Who is this fool so carelessly perched over my head ?" Gods of same status informed him—"He is Shakra the overlord of Saudharma Kalp "

In fit of anger Chamarendra thought of teaching him a lesson He thought—"Before going there I should seek refuge and auspices of some Arihant, Shraman or other great man so that if something untoward happens I may be saved " At that time Shraman Bhagavan Mahavir, during his eleventh year of initiation, was standing in meditation observing Mahapratima of one night in a garden in Sumsumarpur Chamarendra came there and after paying homage said—"Bhante ! I want to personally deprive Shakrendra, the king of gods, of his grandeur under your auspices "

Chamarendra acquired an extremely repulsive form and reached the Sudharma assembly in Shakrendra's Vimaan waving a mace in his hand, roaring, stomping and glowing like lightening Placing one foot on the lotus-pedestal and the other in the main assembly, he shouted "Hey ! Where is that Devendra Shakra ? Where are his eighty four thousand Samanik Devs ? Where have those millions of goddesses gone ? I will kill them all today and conquer the heaven

Shakrendra and his Samanik gods looked at Asurendra in surprise

—Shatak 3 lesson 2, Sutra 27 30

gigantic body one hundred thousand *Yojans* tall. Having done so he started throwing his hands; thundering like clouds; neighing like a horse, trumpeting like an elephant and rattling like a chariot; thumping the ground with his legs and slapping the ground forcefully with his palms; roaring like a lion; and jumping, hurling and digging earth with his toes (like a wrestler). He then raised his left arm and twisted his mouth with the thumb and forefinger of his right hand opening it wide and producing loud gurgling sound. Doing all this that Chamarendra flew in the sky alone with *Parigh-ratna* in his hand. As if disturbing the lower world, shaking the earth, pulling the transverse world, piercing the sky, he moved with maximum divine speed, sometimes thundering, sometimes flashing like lightening, sometimes showering water, sometimes showering sand, sometimes creating darkness, terrorizing the passing interstitial gods (*Vanavyantar Devs*), splitting the stellar gods (*Jyotishk Devs*) in two, routing the guard-gods and waving and flashing his special mace. This way he passed through innumerable continents and seas in the transverse world.

Travelling thus he arrived near the *Sudharma Sabha* (main assembly) in *Saudharmavatamsak Vimaan* in Saudharma Kalp. There he placed one foot on the lotus-pedestal (*Padmavar Vedika*) and the other in the main assembly. He then gave a thundering roar and struck the *Indrakeel* (central point of an architrave) with his special mace. After that he shouted—"Hey ! Where is that Devendra Shakra, the overlord of gods ? Where are his eighty four thousand *Samanik Devs* ?... and so on up to .. Where are his three hundred thirty six thousand guard-gods ? Where have those millions of goddesses gone ? I will kill them all today, I will annihilate them all. The divine damsels who are not under my command should at once come under my command." This way he uttered these *anisht* (not desirable), *akaant* (not beautiful), *apriya* (not loveable), *ashubha* (ignoble), *amanojna* (not attractive), *amanohar* (not adorable or whose mere thought is repulsive) and harsh words.

२१. तणं से सक्के देविंदे देवराया तं अणिट्ठं जाव अमणामं अस्सुयपुव्वं फरुसं गिरं सोच्चा निसम्म आसुरुत्ते जाव मिसिमिसेमाणे तिवलियं भिउडिं निडाले साहट्टु चमरं असुरिंदं असुररायं एवं वयासी— 'हं भो ! चमरा ! असुरिंदा ! असुरराया ! अपत्थियपत्थया ! जाव हीणपुण्णचाउद्दसा ! अज्ज न भवसि, नहि ते सुहमत्थि' त्ति कट्टु तत्थेव सीहासणवरगते वज्जं परामुसइ, परामुसित्ता तं जलंतं फुडंतं तडतडंतं उक्कासहस्साइं विणिम्मयुमाणं, जालासहस्साइं पमुंचमाणं, इंगालासहस्साइं पविक्खिरमाणं,

फुलिंगजालामालासहस्सेहिं चक्खुविक्खेव-दिट्ठिपडिघायं पि पकरेमाणं हुयवहअइरेग-तेयदिप्पंतं जइणवेगं फुल्लकिंसुयसमाणं महब्भयं भयंकरं चमरस्स असुरिंदस्स असुररण्णो वहाए वज्जं निसिरइ।

२९. चमरेन्द्र द्वारा यो उत्पात मचाये जाने पर देवेन्द्र देवराज शक्र इस (उपर्युक्त) अनिष्ट, यावत् अमनोज्ञ और अश्रुतपूर्व (पहले कभी न सुने हुए) कर्णकटु वचन सुन-समझकर एकदम कोपायमान हो गया। यावत् क्रोध से (होठो को चबाता हुआ) बडबड़ाने लगा तथा ललाट पर तीन रेखाएँ पड़े, इस प्रकार से भुकृटि चढाकर असुरेन्द्र असुरराज चमर से बोला-हे ! भो (अरे !) अप्रार्थित के प्रार्थक (अनिष्ट-मरण के इच्छुक) ! यावत् हीनपुण्या (अपूर्ण) चर्तुदशी के जन्मे हुए असुरेन्द्र ! असुरराज ! चमर ! आज तू नही रहेगा, तेरा अस्तित्व समाप्त हो जायेगा, यह समझ ले आज तेरी खैर (सुख) नहीं है। यो कहकर अपने श्रेष्ठ सिहासन पर बैठे-बैठे ही शक्रेन्द्र ने अपना वज्र उठाया और उस जाज्वल्यमान, विस्फोट करते हुए, तड-तड शब्द करते हुए हजारो उल्काएँ छोडते हुए, हजारो अग्निज्वालाओ को छोडते हुए, हजारो अगारो को बिखेरते हुए, हजारो स्फुलिग (चिनगारियो) की ज्वालाओ से उस पर दृष्टि फेकते ही आँखो के आगे चकाचौध के कारण रुकावट डालने वाले, अग्नि से अधिक तेज से देदीप्यमान, अत्यन्त वेगवान् खिले हुए टेसू (किंशुक) के फूल के समान लाल-लाल, महाभयावह एव भयकर वज्र को असुरेन्द्र असुरराज चमरेन्द्र के वध के लिए छोडा।

29. On hearing and understanding these *anisht*... and so on up to .. *amanojna*, unheard and harsh words, Devendra Shakra, the overlord of gods got angry at once. . and so on up to. . gnashing his teeth in anger, frowning and making three lines appear on his forehead, he addressed Chamarendra, the overlord (*Indra*) of *Asurs*—"O *Asurendra* ! *Asuraraj* ! Chamar ! O hankerer for the undesirable (death) (*aprarthik-prarthak*) ! .. and so on up to born on an inauspicious fourteenth day ! You will cease to live today. Your existence will come to end today Know that you are not secure anymore." With these words, while still sitting on his throne, Shakrendra raised his *Vajra* (thunderbolt) that was glowing, exploding, spluttering, emitting thousands of meteors, exuding thousands of flames, showering thousands of sparks making it difficult to look at, more brilliant than fire, having very swift movement, and red like *Kimshuk* flower He then launched such extremely dreadful and terrifying thunderbolt to kill Chamrendra, the overlord of *Asurs*.

३०. तए णं से चमरे असुरिंदे असुरराया तं जलंतं जाव भयंकरं वज्जमभिमुहं आवयमाणं पासइ, पासित्ता झियाइ पिहाइ, झियायित्ता पिहायित्ता तहेव संभग्गमउडविडए सालंबहत्थाभरणे उड्ढंपाए अहोसिरे कक्खागयसेयं पिव विणिम्मुयमाणे विणिम्मुयमाणे ताए उक्किट्ठाए जाव तिरियमंखेज्जाणं दीव-समुद्दाणं मज्झंमज्झेणं वीतीवयमाणे जेणेव जंबुद्दीवे दीवे जाव जेणेव असोगवरपायवे जेणेव ममं अंतिए तेणेव

उवागच्छइ, उवागच्छित्ता भीए भयगग्गरसरे 'भगवं सरणं' इति बुयमाणे ममं दोण्ह वि पायाणं अंतरंसि झत्ति वेगेणं समोवडिए।

३०. तत्पश्चात् उस असुरेन्द्र असुरराज चमर ने जब उस जाज्वल्यमान, यावत् भयंकर वज्र को सामने आता हुआ देखा, तब उसे देखकर ('यह क्या है ?') इस चिन्तन में डूब जाता है, फिर (अपने स्थान पर चले जाने की) इच्छा करने लगा, अथवा (वज्र को देखते ही उसने) अपनी दोनों आँखें मूँद लीं और (वहाँ से चले जाने का) पुनः विचार करने लगा। (कुछ क्षणों तक) चिन्तन में डूबे हुए ज्यों ही स्पृहा करने लगा (कि ऐसा अस्त्र मेरे पास होता तो कितना अच्छा होता।) त्यों ही उसके मुकुट का तुर्रा (छोगा) टूट गया, हाथों के आभूषण (भय के मारे शरीर सूख जाने से) नीचे लटक गये; तथा पैर ऊपर और सिर नीचा करके मानो काँख से पसीना-सा टपकाता हुआ, वह असुरेन्द्र चमर उस उत्कृष्ट यावत् दिव्य देवगति से तिरछे असंख्य द्वीप समुद्रों के बीचोबीच होता हुआ, जहाँ जम्बूद्वीप नामक द्वीप है, जहाँ भारतवर्ष है, यावत् जहाँ श्रेष्ठ अशोकवृक्ष है, वहाँ पृथ्वीशिलापट्टक पर जहाँ मैं (श्री महावीर स्वामी) स्थित था, वहाँ आया। मेरे निकट आकर भयभीत एवं भय से व्याकुल गहराते हुए स्वर में चमरेन्द्र बोला-'भगवन् ! (अब) आप ही मेरे लिए शरण है' इस प्रकार बोलता हुआ मेरे दोनों पैरों के बीच में वेगपूर्वक गिर पडा (छिप गया)।

30. When that Chamarendra, the overlord (*Indra*) of *Asurs* saw that glowing.. and so on up to. terrifying thunderbolt coming at him, he thought (what it was ?) and wished (to return to his abode) In other words, as soon as he saw the *Vajra* (thunderbolt) he closed his eyes and thought (of returning home). He was lost into his thoughts and wishes (It would have been good had I possessed such a weapon.) for a few moments when the crest of his crown shattered, the ornaments on his arms hung loose (as if his body had shrunk due to fear). With his legs up and head down, and sweat dripping from his armpits, that Chamarendra, the overlord (*Indra*) of *Asurs* rushed with his tremendous. . and so on up to .. divine speed and crossing innumerable continents and seas arrived where I (Bhagavan Mahavir) stood on a slab of rock lying under an excellent Ashoka tree in the Ashoka garden, in Sumsumar-pur city, in Bharat-varsh in this Jambu continent. Having come near me that terrified Chamarendra uttered in a voice hoarse with terror—"*Bhante* ! (Now) You are my only refuge." Uttering these words he thudded (and hid) between my feet.

शक्रेन्द्र का चिन्तन SHAKRENDRA'S WORRY

३१. तए णं तस्स सक्कस्स देविंदस्स देवरण्णो इमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था 'नो खलु पभू चमरे असुरिंदे असुरराया, नो खलु समत्थे चमरे असुरिंदे असुरराया, नो खलु विसए चमरस्स असुरिंदस्स

असुररण्णो अप्पणो निस्साए उड्ढं उप्पोइत्ता जाव सोहम्मो कप्पो, णऽन्नत्थ अरिहंते वा, अरिहंतचेइयाणि वा, अणगारे वा भावियप्पणो नीसाए उड्ढं उप्पयति जाव सोहम्मो कप्पो। तं महादुक्खं खलु तहारूवाणं अरिहंताणं भगवंताणं अणगाराण य अच्चासायणाए' त्ति कट्टु ओहिं पउंजति, पउंजित्ता ममं ओहिणा आभोएति, आभोइत्ता 'हा ! हा ! अहो !' हतो अहमंसि' त्ति कट्टु ताए उक्किट्ठाए जाव दिव्वाए देवगतीए वज्जस्स वीहिं अणुगच्छमाणे अणुगच्छमाणे तिरियमसंखेज्जाणं दीव समुद्दाणं मज्झंमज्झेणं जाव जेणेव असोगवरपायवे जेणेव ममं अंतिए तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता ममं चउरंगुलमसंपत्तं वज्जं पडिसाहरइ।

अवियाऽऽइं मे गोयमा ! मुट्ठिवाएणं केसग्गे वीइत्था।

३१. उसी समय देवेन्द्र शक्र को इस प्रकार का आन्तरिक अध्यवसाय यावत् मनोगत संकल्प उत्पन्न हुआ कि असुरेन्द्र असुरराज चमर इतनी शक्ति वाला नहीं है, न असुरेन्द्र असुरराज चमर इतना समर्थ है, और न ही असुरेन्द्र असुरराज चमर का इतना विषय (क्षमता) है कि वह अरिहंत भगवन्तों, अर्हन्त भगवान के चैत्यो अथवा भावितात्मा अनगार का आश्रय लिए बिना स्वयं अपने आश्रय से इतना ऊँचा (उठकर) यावत् सौधर्मकल्प तक आ सके। अत. वह असुरेन्द्र अवश्य अरिहन्त भगवन्तों यावत् अथवा किसी भावितात्मा अनगार के आश्रय से ही इतना ऊपर यावत् सौधर्मकल्प तक आया है। यदि ऐसा है तो उन तथारूप अर्हन्त भगवन्तों एवं अनगारो की (मेरे द्वारा फेंके हुए वज्र से) अत्यन्त आशातना होने से मुझे महा:दुख होगा। ऐसा विचार करके शक्रेन्द्र ने अवधिज्ञान का प्रयोग किया और उस अवधिज्ञान के प्रयोग से उसने मुझे ध्यानस्थ देखा ! मुझे देखते ही (उसके मुख से ये उद्‌गार निकल पडे–) "हा ! हा ! अरे रे ! मैं मारा गया !" इस प्रकार पश्चात्ताप करके (वह शक्रेन्द्र अपने वज्र को पकड लेने के लिए) उत्कृष्ट यावत् दिर्व्य देवगति से वज्र के पीछे–पीछे दौडा। वज्र का पीछा करता हुआ वह शक्रेन्द्र तिरछे असख्यात द्वीप–समुद्रों के बीचोंबीच होता हुआ यावत् उस श्रेष्ठ अशोकवृक्ष के नीचे जहाँ मै था, वहाँ आया और वहाँ मुझसे सिर्फ चार अंगुल दूर रहे हुए उस वज्र को उसने पकड लिया (वापस खीच लिया)।

हे गौतम ! (जिस समय शक्रेन्द्र ने वज्र को पकडा, उस समय उसने अपनी मुट्ठी इतनी जोर से बन्द की कि) उस मुट्ठी की हवा से मेरे केशाग्र हिलने लगे।

31. At that time Shakrendra, the overlord of gods, had an inspiration (*adhyavasaya*)... and so on up to... resolve (*sankalp*) that Chamarendra, the overlord (*Indra*) of *Asurs* does not have so much power, capacity or ability that without the support of *Arihants* or *Chaitya* of *Arihants* or sagacious ascetics (*bhavitatma anagar*) he could, on his own, go upwards.. and so on up to.. *Saudharma Kalp*. That means Chamarendra has, indeed, come upwards... and so on up to... Saudharma Kalp only with the support of *Arihants* . and so on up to... sagacious ascetics (*bhavitatma anagar*). If it is so, this (the thunderbolt launched by me) will cause great disturbance to those *Arihants*... and so on up to... sagacious ascetics (*bhavitatma anagar*) and it would be highly grievous

for me. With these thoughts Shakrendra used his *Avadhi-jnana* and saw me meditating. The moment he saw me (he involuntarily uttered)—"Oh ! Alas ! What have I done !" Repenting thus Shakrendra rushed after the *Vajra* (thunderbolt) with his maximum... and so on up to... divine speed and crossing innumerable continents and seas arrived where I (Bhagavan Mahavir) stood under that excellent Ashoka tree and he caught that *Vajra* when it was just four *Anguls* away from me.

O Gautam ! (When Shakrendra caught the *Vajra* he closed his fist with so great force that) The air blown from his fist blew the tips of my hair.

३२. तए णं से सक्के देविंदे देवराया वज्जं पडिसाहरति, पडिसाहरित्ता ममं तिक्खुत्तो आयाहिण-पयाहिणं करेइ, करित्ता वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी-'एवं खलु भंते ! अहं तुब्भं नीसाए चमरेणं असुरिंदेणं असुररण्णा सयमेव अच्चासाइए। तए णं मए परिकुविएणं समाणेणं चमरस्स असुरिंदस्स असुररण्णो वहाए वज्जे निसट्ठे। तए णं मे इमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था-नो खलु पभू चमरे असुरिंदे असुरराया तहेव जाव ओहिं पउंजामि, देवाणुप्पिए ओहिणा आभोएमि, 'हा ! हा ! अहो ! हतो मी' ति कट्टु ताए उक्किट्ठाए जाव जेणेव देवाणुप्पिए तेणेव उवागच्छामि, देवाणुप्पियाणं चउरंगुलमसंपत्तं वज्जं पडिसाहरामि, वज्जपडिसाहरणट्ठयाए णं इहमागए इह समोसढे, इह संपत्ते इहेव अज्ज उवसंपज्जित्ता णं विहरामि।

तं खामेमि णं देवाणुप्पिया ! खमंतु णं देवाणुप्पिया !, खमितुमरहंति णं देवाणुप्पिया ! णाइ भुज्जो एवं पकरणयाए' त्ति कट्टु ममं वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता उत्तरपुरत्थिमं दिसीभागं अवक्कमइ, वामेणं पादेणं तिक्खुत्तो भूमिं दलेइ, चमरं असुरिंदं असुररायं एवं वयासी-'मुक्को सि णं भो ! चमरा ! असुरिंदा ! असुरराया ! समणस्स भगवओ महावीरस्स पभावेणं, न हि ते इयाणिं ममाओ भयमत्थि' त्ति कट्टु जामेव दिसिं पाउब्भूए तामेव दिसिं पडिगए।

३२. तदनन्तर देवेन्द्र देवराज शक्र ने वज्र को लेकर दाहिनी ओर से मेरी तीन बार प्रदक्षिणा की और मुझे वन्दन-नमस्कार किया। वन्दन-नमस्कार करके कहा-भगवन् ! आपका ही आश्रय लेकर स्वयं असुरेन्द्र असुरराज चमर मुझे अपनी श्री से भ्रष्ट करने आया था। तब मैंने परिकुपित होकर उस असुरेन्द्र असुरराज चमर के वध के लिए वज्र फेंका था। इसके पश्चात् मुझे तत्काल इस प्रकार का विचार उत्पन्न हुआ कि असुरेन्द्र असुरराज चमर स्वयं इतना समर्थ नहीं है कि अपने ही आश्रय से इतना ऊँचा-सौधर्मकल्प तक आ सके, इत्यादि पूर्वोक्त सब बातें शक्रेन्द्र ने कह सुनाईं। शक्रेन्द्र ने आगे कहा-भगवन् ! फिर मैंने अवधिज्ञान का प्रयोग किया। आपको देखा। आपको देखते ही सहसा 'हा हा ! अरे रे ! मैं मारा गया।' ये उद्‌गार मेरे मुख से निकल पड़े। फिर मैं उत्कृष्ट तीव्र देवगति से जहाँ आप देवानुप्रिय विराजमान है, वहाँ आया; और आप देवानुप्रिय से सिर्फ चार अंगुल दूर रहे हुए वज्र को मैंने पकड़ लिया। (अन्यथा, घोर अनर्थ हो जाता !) मैं वज्र को वापस लेने के लिए ही यहाँ सुंसुमारपुर में और इस उद्यान में आया हूँ और अभी यहाँ हूँ।

'हे भगवन् ! मैं (अपने अपराध के लिए) आप देवानुप्रिय से क्षमा माँगता हूँ। आप देवानुप्रिय मुझे क्षमा करें। आप क्षमा करने योग्य (क्षमाशील) है। मै ऐसा (अपराध) पुनः नहीं करूँगा।' यों कहकर शक्रेन्द्र मुझे वन्दन-नमस्कार करके उत्तर-पूर्व दिशा मे चला गया। वहाँ जाकर शक्रेन्द्र ने अपने बायें पैर को तीन बार भूमि पर पीटकर के, उसने असुरेन्द्र असुरराज चमर से इस प्रकार कहा-"हे असुरेन्द्र असुरराज चमर ! आज तो तू श्रमण भगवान महावीर के ही प्रभाव से बच गया है, (जा) अब तुझे मुझसे (किंचित् भी) भय नही है।" यो कहकर वह शक्रेन्द्र जिस दिशा से आया था, उसी दिशा में वापस चला गया।

32. After that, Shakrendra, the overlord of gods, took the Vajra, went around me thrice clockwise, paid homage and obeisance to me and said—*Bhante* ! Taking your support, Chamarendra, the overlord (*Indra*) of *Asurs*, had come to deprive me of my grandeur. At that time, getting enraged, I had launched the *Vajra* to kill Chamarendra, the overlord (*Indra*) of *Asurs*. Immediately on doing that it occurred to me that on his own Chamarendra, the overlord (*Indra*) of *Asurs*, could not go upwards up to Saudharma Kalp. And he narrated the whole story. Shakrendra added—"*Bhante* ! I then used my *Avadhi-jnana* and saw you. The moment I saw you I exclaimed—'Oh ! Alas ! What have I done !' Then I rushed after the *Vajra* (thunderbolt) with my maximum divine speed, arrived where you, Beloved of gods, are stationed and caught that *Vajra* when it was just four *Anguls* away from you, Beloved of gods ! (Otherwise a great calamity would have struck.) I have come to and I am here in Sumsumar-pur and this garden just to retrieve my *Vajra* "

"*Bhante* ! I beg your forgiveness (for my fault) Kindly forgive me, O Beloved of gods ! You are kind enough to forgive me. I will never repeat such mistake " Saying thus Shakrendra paid me homage and obeisance and moved in north-east direction There Shakrendra stomped the ground thrice with his left leg and said to Chamarendra, the overlord (*Indra*) of *Asurs*—"O Chamarendra, the overlord (*Indra*) of *Asurs* ! Your life has been spared today by the grace of Shraman Bhagavan Mahavir. Now you have nothing to fear from me." Uttering these words Shakrendra proceeded in the direction he came from.

विवेचन : शक्रेन्द्र के विभिन्न विशेषणों की व्याख्या-मघवं (मघवा) = बडे-बडे मेघों को वश मे रखने वाला। पागसासणं (पाकशासन) = पाक नामक बलवान शत्रु पर शासन करने वाला। सयक्कउं (शतक्रतु) = सौ क्रतुओं-अभिग्रहरूप सौ प्रतिमाओं अथवा श्रावक की पञ्चम प्रतिमारूप सौ प्रतिमाओं को कार्तिक सेठ के भव में धारण करने वाला। सहस्सक्खं (सहस्राक्ष) = हजार नेत्रों वाला-इन्द्र के ५०० मंत्री होते है, उनके १,००० नेत्र इन्द्र के कार्य में प्रयुक्त होते हैं, इस अपेक्षा से सहस्राक्ष कहते हैं। वज्जपाणिं (वज्रपाणि) = इन्द्र के हाथ में वज्र नामक विशिष्ट शस्त्र होता है। पुरंदरं (पुरन्दर) = असुरादि के पुरो-नगरों का नाश करने वाला। *(वृत्ति, पत्रांक १७४)*

चमरेन्द्र पर वज्र प्रहार



चित्र परिचय-११

Illustration No. 11

सौधर्मेन्द्र द्वारा चमरेन्द्र पर वज्र प्रहार

(१) असुरराज की धृष्टता देखकर सौधर्मेन्द्र शक्र ने क्रोध मे आकर अपना दिव्य वज्र उस पर फैका। हजारो अग्निज्वालाएँ छोडता हुआ वज्र असुरराज अपनी जान बचाकर ऊपर पैर-नीचा सिर किये ओधे मुँह सुसुमारपुर की तरफ दौडा।

(२) शक्रेन्द्र ने सोचा- इस धृष्ट असुर ने सौधर्म कल्प तक आने की हिम्मत कैसे की ? बिना किसी अरिहंत आदि महापुरुष की निश्रा लिए वह इतना दु साहस कर नही सकता ? तभी देखा अरे, यह तो श्रमण भगवान महावीर की निश्रा लेकर आया है।

शक्रेन्द्र चिन्तित हो उठ अनर्थ हो जायेगा। मेरे वज्र प्रहार से यदि प्रभु वर्धमान की आशातना हो गइ। उन्हे कोई कष्ट पहुँचा तो ? शक्रेन्द्र अत्यन्त त्वरित गति मे अपने वज्र को पकडने के लिए उसका पीछा करने लगा। आगे दौडता असुरराज ! पीछा करता वज्र और पीछे उसे पकडने दौडता शक्रेन्द्र।

(३) तीव्र गति से आता असुरराज भगवान के चरणो मे छुपकर बोला- ' प्रभु ! आप ही मेरे शरणदाता है मेरी रक्षा कीजिए ! तब तक वज्र का पीछा करते हुए शक्रेन्द्र ने भगवान के चरणो से मात्र चार अगुल दूर रहे वज्र को पकडकर खीच लिया। भगवान के चरणो मे छुपे असुरराज को शक्र घूर कर देखता है।

(४) शक्र ने भगवान की वन्दना कर अविनय अपराध के लिए क्षमा माँगी। फिर असुरराज को डॉटा- आज भगवान महावीर की शरण से तेरी प्राण रक्षा हो गई। वर्ना तेरा बुरा हाल होता ! पुन देवेन्द्र ने भगवान को वन्दना कर क्षमा माँगी और स्वर्ग को चले गये।

–शतक ३ उ. २ सूत्र ३१-३२

SAUDHARMENDRA LAUNCHING VAJRA AT CHAMARENDRA

(1) Shakrendra, the king of gods was enraged at this villainy by Chamarendra He launched his Vajra (thunderbolt) at the villain Showering thousands of sparks the Vajra moved towards Chamarendra who flew with his legs up and head down in the direction of Sumsumarpur to save his life

(2) Shakrendra thought— How did this villainous Asur muster up the courage to come up to Saudharma Kalp ? Without the support of Arihant or some other great man he could not dare to do that ?" Just then he saw Bhagavan Mahavir and realized that the Asur king had dared to challenge him under the auspices of Bhagavan Mahavir

Shakrendra was worried—"It would be highly grievous for me if the Vajra causes disrespect and harm to him ?" Shakrendra rushed after the Vajra with his maximum divine speed Rushing ahead was Chamarendra chasing him was Vajra and lastly Shakrendra for grabbing Vajra

(3) Rushing with great speed, Chamarendra hid behind Bhagavan's feet and said—Prabhu ! You are my only refuge Kindly save me " Just then Shakrendra caught that Vajra when it was just four Anguls away from Bhagavan's feet and withdrew it Shakrendra glared at Chamarendra hiding behind Bhagavan's feet

(4) Shakrendra paid homage to Bhagavan and sought his forgiveness for his mistake He then reprimanded Chamarendra—"Your life has been spared today by the grace of Shraman Bhagavan Mahavir Otherwise you would have been severely punished " Shakrendra once again paid homage to Bhagavan and returned to his heaven

– Shatak 3 lesson 2 Sutra 31 32

कठिन शब्दों का अर्थ–दुरंतपंतलक्खणे = दुष्परिणाम वाले अमनोज्ञ लक्षणों वाला। **हीणपुण्णचाउद्दसे** = हीनपुण्या–अपूर्णा (रिक्ता) चतुर्दशी का जन्मा हुआ। **अप्पुस्सुए** = उत्सुकता–चिन्ता से रहित–लापरवाह। **'पायदद्दरगं करेइ'**–भूमि पर पैर पछाड़ता है। **उच्छोलेति** = अगले भाग से लात मारता अथवा उछलता है। **पच्छोलेति** = पिछले भाग से लात मारता है या पछाड़ खाता है। **वियड्ढमाणे** = घुमाता हुआ। **विउब्भावेमाणे** = चमकाता हुआ। **केसग्गे वीइत्था** = केशों के आगे का भाग हवा से हिलने लगा।

उत्तरवैक्रिय : देवों (तथा नारको) के दो प्रकार के शरीर होते हैं–(१) भवधारणीय (पूर्व वैक्रिय), और (२) उत्तरवैक्रिय। जब देव मनुष्य लोक में आते हैं तब यहाँ के अनुरूप नये शरीर का निर्माण करते है जिसे उत्तरवैक्रिय कहते हैं। वृत्तिकार ने इसका अर्थ किया है, पूर्व वैक्रिय (भवधारणीय) के पश्चात् उत्तरकाल मे होने वाला शरीर। *(वृत्ति, पत्राक १९६)*

Elaboration—The names of or adjectives used for Shakrendra—**Maghavam** or **Maghava** = controller of mighty clouds. **Paagasasanam** or **Paakshasan** = conqueror of the mighty adversary named Paak. **Sayakkaum** or **Shatkritu** = performer of hundred *Pratimas* as special resolves. He performed one hundred *Pratimas* as part of the fifth *Shravak Pratima* during his birth as merchant Kartik. **Sahassakkham** or **Sahasraksh** = having thousand eyes Indra has 500 ministers and their 1,000 eyes are employed for his work **Vajjapanim** or **Vajrapani** = wielder of a special weapon called *Vajra* (thunder-bolt). **Purandar** = destroyer of forts or cities of *Asurs* and other adversaries.

TECHNICAL TERMS

Durantapant-lakkhane—having inauspicious and undesired signs. **Heena-punna-chauddase**—one born on an inauspicious fourteenth day (a short-date in a fortnight devised for adjustment between lunar and solar calendars). **Appusuye**—irresponsible or careless. **Payaddargam karei**—stomps the ground with feet. **Uchchholeti**—kick or throw leg forward. **Pachchholeti**—to kick or throw leg backward Also fall on the ground **Viyaddhamane**—waving around. **Viubbhavemane**—glowing or brightening **Kesagge veeittha**—blowing of tips of hair.

Uttar-vaikriya—Divine and infernal beings have two kinds of bodies—(1) *Bhavadharaniya* (primary transmutable body or incarnation sustaining body), and (2) *Uttar-vaikriya* (secondary transmuted body). When divine beings visit the land of humans they create a new body suitable for this place. This body is called *uttar-vaikriya*. The commentator (*Vritti*) has defined it as secondary transmuted body with reference to the primary incarnation sustaining body. *(Vritti, leaf 196)*

३३. [प्र. १] भंते ! त्ति भगवं गोयमे समणं महावीरं वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी–देवे णं भंते ! महिड्ढीए महज्जुतीए जाव महाणुभागे पुव्वामेव पोग्गलं खिवित्ता पभू तमेव अणुपरियट्टित्ताणं गिण्हित्तए ?

[उ.] हंता, पभू।

[प्र. २] से केणट्ठेणं भंते ! जाव गिण्हित्तए ?

[उ.] गोयमा ! पोग्गले णं खित्ते समाणे पुव्वामेव सिग्घगति भवित्ता ततो पच्छा मंदगती भवति, देवे णं महिड्ढीए पुव्विं पि य पच्छा वि सीहे सीहगती चेव, तुरिते तुरितगती चेव। से तेणट्ठेणं जाव पभू गेण्हित्तए।

३३. [प्र. १] 'भगवन्' ! यो कहकर भगवान गौतम स्वामी ने श्रमण भगवान महावीर स्वामी को वन्दन-नमस्कार करके इस प्रकार पूछा–'भगवन् ! महाऋद्धि-सम्पन्न, महाद्युतियुक्त यावत् महाप्रभावशाली देव क्या पहले पुद्गल फैंककर, फिर उसके पीछे जाकर उसे पकड लेने मे समर्थ है ?'

[उ.] हाँ, गौतम ! वह समर्थ है।

[प्र. २] भगवन् ! किस कारण से देव, पहले फैंके हुए पुद्गल को, उसका पीछा करके ग्रहण करने मे समर्थ है ?

[उ.] गौतम ! जब पुद्गल फैंका जाता है, तब पहले उसकी गति तीव्र होती है, पश्चात् उसकी गति मन्द हो जाती है, जबकि महर्द्धिक देव तो पहले भी और पीछे भी शीघ्र और शीघ्र गति वाला तथा त्वरित और त्वरित गति वाला होता है। इसी कारण से देव, फैंके हुए पुद्गल का पीछा करके उसे पकड सकता है।

33. [Q. 1] *"Bhante !"* Addressing thus, Bhagavan Gautam Swami paid homage and obeisance to Shraman Bhagavan Mahavir and asked—*Bhante* ! Are gods endowed with great divine opulence... and so on up to influence capable of throwing matter, chasing it and retrieving it ?

[Ans.] Yes, Gautam ! They are capable of doing so

[Q. 2] *Bhante* ! Why gods are capable of throwing matter, chasing it and retrieving it ?

[Ans.] Gautam ! When matter is thrown, initially it moves with great speed but later its speed is reduced, whereas the speed of gods with great opulence is fast initially as well as later; moreover, it continues to accelerate. That is why gods are capable of throwing matter, chasing it and retrieving it.

३४. [प्र.] जइ णं भंते ! देवे महिड्ढीए जाव अणुपरियट्टित्ताणं गेण्हित्तए। कम्हा णं भंते ! सक्केणं देविंदेणं देवरण्णा चमरे असुरिंदे असुरराया नो संचाइए साहत्थि गेण्हित्तए ?

[उ.] गोयमा ! असुरकुमाराणं देवाणं अहे गतिविसए सीहे सीहे चेव, तुरिए तुरिए चेव। उड्ढं गतिविसए अप्पे अप्पे चेव, मंदे मंदे चेव। वेमाणियाणं देवाणं उड्ढं गतिविसिए सीहे सीहे चेव, तुरिते तुरिते चेव। अहे गतिविसए अप्पे अप्पे चेव, मंदे मंदे चेव।

जावइयं खेत्तं सक्के देविंदे देवराया उड्ढं उप्पति एक्केणं समएणं, तं वज्जे दोहिं, जं वज्जे दोहिं तं चमरे तीहिं। सव्वत्थोवे सक्कस्स देविंदस्स देवरण्णो उड्ढलोयकंडए, अहेलोयकंडए संखेज्जगुणे।

जावइयं खेत्तं चमरे असुरिंदे असुरराया अहे ओवयति एक्केणं समएणं, तं सक्के दोहिं, जं सक्के दोहिं तं वज्जे तीहिं, सव्वत्थोवे चमरस्स असुरिंदस्स असुररण्णो अहेलोयकंडए, उड्ढलोयकंडए संखेज्जगुणे।

एवं खलु गोयमा ! सक्केणं देविंदेणं देवरण्णो चमरे असुरिंदे असुरराया नो संचाइए साहत्थि गेण्हित्तए।

३४. [प्र.] भगवन् ! महर्द्धिक देव पीछा करके फैके हुए पुद्गल को पकडने में समर्थ है, तो देवेन्द्र देवराज शक्र अपने हाथ से असुरेन्द्र असुरराज चमर को क्यों नही पकड सका ?

[उ.] गौतम ! असुरकुमार देवों का नीचे गमन का विषय (शक्ति-सामर्थ्य) शीघ्र-शीघ्र और त्वरित-त्वरित होता है, और ऊर्ध्वगमन विषय अल्प-अल्प तथा मन्द-मन्द होता है, जबकि वैमानिक देवो का ऊँचे जाने का विषय शीघ्र-शीघ्र तथा त्वरित-त्वरित होता है और नीचे जाने का विषय अल्प-अल्प तथा मन्द-मन्द होता है।

एक समय में देवेन्द्र देवराज शक्र जितनी दूर ऊपर जा सकता है, उतनी दूर ऊपर जाने में वज्र को दो समय लगते है और ऊपर जाने में चमरेन्द्र को तीन समय लगते हैं। (अर्थात्-) देवेन्द्र देवराज शक्र का ऊर्ध्वलोककण्डक (ऊपर जाने मे लगने वाला कालमान) सबसे थोडा है, और अधोलोककण्डक उसकी अपेक्षा संख्येयगुणा है।

एक समय में असुरेन्द्र असुरराज चमर जितना नीचा जा सकता है, उतना ही नीचा जाने में शक्रेन्द्र को दो समय लगते है और उतना ही क्षेत्र नीचा जाने मे वज्र को तीन समय लगते हैं। (अर्थात्-) असुरेन्द्र असुरराज चमर का अधोलोककण्डक (नीचे गमन का कालमान) सबसे थोड़ा है और ऊर्ध्वलोककण्डक (ऊँचा जाने का कालमान) उससे सख्येयगुणा है।

इस कारण से गौतम ! देवेन्द्र देवराज शक्र, अपने हाथ से असुरेन्द्र असुरराज चमर को पकड़ने में समर्थ न हो सका।

34. [Q.] *Bhante* ! When highly endowed gods are capable of chasing and retrieving thrown matter, why could Shakrendra, the overlord of gods, not capture Chamarendra, the overlord (*Indra*) of *Asurs*, with his own hands ?

[Ans.] Gautam ! The speed of the downward movement of *Asur Kumar Devs* undergoes continued acceleration and that of upward movement undergoes continued deceleration; whereas the speed of the

upward movement of *Vaimanik Devs* undergoes continued acceleration and that of downward movement undergoes continued deceleration.

In upward movement Chamarendra takes three *Samayas* (the ultimate fractional unit of time) and the *Vajra* takes two *Samayas* to traverse the distance travelled by Shakrendra, the overlord of gods, in one *Samaya*. (This means that) The *Urdhvalok-kandak* (unit of time lapse for upward movement or the time taken in travelling upwards to a specific distance) for Shakrendra, the overlord of gods, is comparatively minimum and the *Adholok-kandak* (unit of time lapse for downward movement or the time taken in travelling downwards to a specific distance) for him is countable times more than that.

In downward movement Shakrendra takes three *Samayas* (the ultimate fractional unit of time) and the *Vajra* takes two *Samayas* to traverse the distance travelled by Chamarendra, the overlord of gods, in one *Samaya*. (This means that) The *Adholok-kandak* for Chamarendra, the overlord of *Asurs*, is comparatively minimum and the *Urdhvalok-kandak* for him is countable times more than that.

That is why Shakrendra, the overlord of gods, could not capture Chamarendra, the overlord (*Indra*) of *Asurs*, with his own hands.

इन्द्र एवं वज्र की ऊर्ध्वादि गति THE SPEEDS OF INDRA AND VAJRA

३५. [प्र.] सक्कस्स णं भंते ! देविंदस्स देवरण्णो उड्ढं अहे तिरियं च गतिविसयस्स कतरे कतरेहिंतो अप्पे वा, बहुए वा, तुल्ले वा, विसेसाहिए वा ?

[उ.] गोयमा ! सव्वत्थोवं खेत्तं सक्के देविंदे देवराया अहे ओवयइ एक्केणं समएणं, तिरियं संखेज्जे भागे गच्छइ, उड्ढं संखेज्जे भागे गच्छइ।

३५. [प्र.] भगवन् ! देवेन्द्र देवराज शक्र का ऊर्ध्वगमन-विषय, अधोगमन-विषय और तिर्यग्गमन-विषय, इन तीनो मे कौन-सा विषय किन-किन से अल्प है, बहुत (अधिक) है और तुल्य (समान) है, अथवा विशेषाधिक (दो भाग से कुछ अधिक) है ?

[उ.] गौतम ! देवेन्द्र देवराज शक्र एक समय मे सबसे कम क्षेत्र नीचे जाता है, तिरछा उससे संख्येय भाग जाता है और ऊपर भी सख्येय भाग जाता है।

35. [Q.] *Bhante* ! Of the movement (speed) upward, downward and transverse of Shakrendra, the overlord of gods, which one is less, which one is more, which one is equal and which one is much more (more than double) ?

[Ans.] Gautam ! Shakrendra, the *overlord of gods*, covers minimum area during downward movement in one *Samaya*, countable times more of that during transverse movement and countable times more of that during upward movement.

३६. [प्र.] चमरस्स णं भंते ! असुरिंदस्स असुररण्णो उड्ढं अहे तिरियं च गतिविसयस्स कतरे कतरेहिंतो अप्पे वा, बहुए वा, तुल्ले वा, विसेसाहिए वा ?

[उ.] गोयमा ! सव्वत्थोवं खेत्तं चमरे असुरिंदे असुरराया उड्ढं उप्पयति एक्केणं समएणं, तिरियं संखेज्जे भागे गच्छइ, अहे संखेज्जे भागे गच्छइ। वज्जं जहा सक्कस्स देविंदस्स तहेव, नवरं विसेसाहियं कायव्वं।

३६. [प्र.] भगवन् ! असुरेन्द्र असुरराज चमर के ऊर्ध्वगमन-विषय, अधोगमन-विषय और तिर्यग्गमन-विषय में से कौन-सा विषय किन-किन से अल्प, बहुत (अधिक), तुल्य या विशेषाधिक है ?

[उ.] गौतम ! असुरेन्द्र असुरराज चमर, एक समय मे सबसे कम क्षेत्र ऊपर जाता है; तिरछा, उससे संख्येय भाग अधिक (क्षेत्र) और नीचे उससे भी संख्येय भाग अधिक जाता है। वज्र-सम्बन्धी गमन का विषय (क्षेत्र), जैसे देवेन्द्र शक्र का कहा है, उसी तरह जानना चाहिए। परन्तु विशेषता यह है कि गति का विषय-क्षेत्र विशेषाधिक कहना चाहिए।

36. [Q.] *Bhante* ! Of the movement (speed) upward, downward and transverse of Chamarendra, the overlord of *Asurs*, which one is less, which one is more, which one is equal and which one is much more (more than double) ?

[Ans.] Gautam ! Chamarendra, the overlord of *Asurs*, covers minimum area during upward movement in one *Samaya*, countable times more of that during transverse movement and countable times more of that during downward movement. The information about movement of *Vajra* is same as that about Shakrendra, the only difference is that in place of 'more' state 'much more'.

३७. [प्र.] सक्कस्स णं भंते ! देविंदस्स देवरण्णो ओवयणकालस्स य उप्पयणकालस्स य कतरे कतरेहिंतो अप्पे वा, बहुए वा, तुल्ले वा, विसेसाहिए वा ?

[उ.] गोयमा ! सव्वत्थोवे सक्कस्स देविंदस्स देवरण्णो उप्पयणकाले, ओवयणकाले संखेज्जगुणे।

३८. चमरस्स वि जहा सक्कस्स, णवरं सव्वत्थोवे ओवयणकाले, उप्पयणकाले संखेज्जगुणे।

३९. [प्र.] वज्जस्स पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! सव्वत्थोवे उप्पयणकाले, ओवयणकाले विसेसाहिए।

३७. [प्र.] भगवन् ! देवेन्द्र देवराज शक्र का नीचे जाने का (अवपतन-) काल और ऊपर जाने का (उत्पतन-) काल, इन दोनों कालों में कौन-सा काल, किस काल से अल्प है, बहुत है, तुल्य है अथवा विशेषाधिक है ?

[उ.] गौतम ! देवेन्द्र देवराज शक्र का ऊपर जाने का काल सबसे थोड़ा है और नीचे जाने का काल उससे संख्येयगुणा अधिक है।

३८. चमरेन्द्र का गमन-विषयक कथन भी शक्रेन्द्र के समान ही जानना चाहिए; किन्तु इतनी विशेषता है कि चमरेन्द्र का नीचे जाने का काल सबसे थोडा है, ऊपर जाने का काल उससे संख्येयगुणा अधिक है।

३९. [प्र.] वज्र (के गमन-विषय मे) पृच्छा की (तो भगवान ने कहा-)

[उ.] गौतम ! वज्र का ऊपर जाने का काल सबसे थोडा है, नीचे जाने का काल उससे विशेषाधिक है।

37. [Q.] *Bhante* ! Of the time taken in downward movement (*avapatan kaal*) and upward movement (*utpatan kaal*) by Shakrendra, the overlord of gods, which one is less, which one is more, which one is equal and which one is much more (more than double) ?

[Ans.] Gautam ! For Shakrendra, the overlord of gods, the time taken in upward movement is minimum and that taken in downward movement is countable times more than that

38. The statement about time taken by Chamarendra, the overlord (*Indra*) of *Asurs*, in moving is same as Shakrendra. The difference being that in case of Chamarendra the time taken in downward movement is minimum and that taken in upward movement is countable times more than that.

39. [Q.] Then Gautam asked about movement of *Vajra*.

[Ans.] Gautam ! In case of *Vajra* the time taken in upward movement is minimum and that taken in downward movement is much more than that.

४०. [प्र.] एयस्स णं भंते ! वज्जस्स, वज्जाहिवइस्स, चमरस्स य असुरिंदस्स असुररण्णो ओवयणकालस्स य उप्पयणकालस्स य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा बहुआ वा, तुल्ला वा, विसेसाहिया वा ?

[उ.] गोयमा ! सक्कस्स य उप्पयणकाले चमरस्स य ओवयणकाले, एए णं दोण्णि वि तुल्ला सव्वत्थोवा। सक्कस्स य ओवयणकाले वज्जस्स य उप्पयणकाले, एस णं दोण्ह वि तुल्ले संखेज्जगुणे। चमरस्स य उप्पयणकाले वज्जस्स य ओवयणकाले, एस णं दोण्ण वि तुल्ले विसेसाहिए।

४०. [प्र.] भगवन् ! यह वज्र, वज्राधिपति-इन्द्र और असुरेन्द्र असुरराज चमर, इन सबका नीचे जाने का काल और ऊपर जाने का काल; इन दोनो कालो मे से कौन-सा काल किससे अल्प, बहुत (अधिक), तुल्य अथवा विशेषाधिक है ?

[उ.] गौतम ! शक्रेन्द्र का ऊपर जाने का काल और चमरेन्द्र का नीचे जाने का काल, ये दोनों तुल्य है और सबसे कम हैं। शक्रेन्द्र का नीचे जाने का काल और वज्र का ऊपर जाने का काल, ये दोनों

काल तुल्य हैं और (पूर्वोक्त काल से) संख्येयगुणा अधिक है। (इसी तरह) चमरेन्द्र का ऊपर जाने का काल और वज्र का नीचे जाने का काल, ये दोनों काल तुल्य है और (पूर्वोक्त काल से) विशेषाधिक है।

40. [Q.] *Bhante* ! Of the time taken in downward movement and upward movement by *Vajra*, master of *Vajra* (Shakrendra) and Chamarendra, the overlord (*Indra*) of *Asurs*, which one is comparatively less, which one is more, which one is equal and which one is much more (more than double) ?

[Ans.] Gautam ! The time taken in upward movement by Shakrendra and downward movement by Chamarendra are equal and minimum. The time taken in downward movement by Shakrendra and upward movement by *Vajra* are equal and countable times more (than the aforesaid). In the same way time taken in upward movement by Chamarendra and downward movement by Shakrendra are equal and much more (than the aforesaid).

विवेचन : संख्येय, तुल्य और विशेषाधिक का स्पष्टीकरण–शक्रेन्द्र जितना नीचा दो समय में जाता है, उतना ही ऊँचा एक समय मे जाता है। अर्थात्–शक्रेन्द्र एक समय मे नीचे एक योजन, तिरछा डेढ योजन और ऊपर दो योजन जाता है।

इसी प्रकार शक्रेन्द्र की ऊर्ध्वगति और चमरेन्द्र की अधोगति बराबर बतलाई गई है, उसका तात्पर्य यह है कि शक्रेन्द्र एक समय मे दो योजन ऊपर जाता है तो चमरेन्द्र भी एक समय मे दो योजन नीचे जाता है। किन्तु शक्रेन्द्र, चमरेन्द्र और वज्र के केवल ऊर्ध्वगति क्षेत्र–काल में तारतम्य है। अर्थात् शक्रेन्द्र एक समय मे जितना क्षेत्र ऊपर जाता है, उतना क्षेत्र ऊपर जाने मे वज्र को दो समय और चमरेन्द्र को तीन समय लगता है।

वज्र की नीचे जाने मे गति मन्द होती है, तिरछे जाने मे शीघ्रतर और ऊपर जाने में शीघ्रतम होती है। इसलिए वज्र का अधोगमन क्षेत्र त्रिभागन्यून योजन, तिर्यग्गमन क्षेत्र विशेषाधिक दो भाग = त्रिभाग–सहित तीन गाऊ और ऊर्ध्वगमन क्षेत्र विशेषाधिक दो भाग–तिर्यक् क्षेत्रकथित विशेषाधिक दो भाग–से कुछ विशेषाधिक होता है।

चमरेन्द्र एक समय में जितना नीचे जाता है, उतना ही नीचा जाने मे शक्रेन्द्र को दो समय और वज्र को तीन समय लगते हैं। *(चूर्णिकार, भगवती अ वृत्ति, पृष्ठ १७८)*

Elaboration—Clarification about countable times, equal and much more—The distance covered by Shakrendra during downward movement in two *Samayas* is equal to that covered during upward movement in one *Samaya*. For example—In one *Samaya* Shakrendra covers a distance of one *Yojan* downward, one and a half *Yojan* in transverse direction and two *Yojans* upward.

The upward speed of Shakrendra and the downward speed of Chamarendra is said to be equal. It means if Shakrendra goes two *Yojans* upward in one *Samaya*, Chamarendra goes two *Yojans* downward in one

Samaya. But in case of Shakrendra, Chamarendra and *Vajra* taken together the pattern is applicable only in upward movement. It means that the upward distance Shakrendra covers in one *Samaya* is covered by *Vajra* in two *Samayas* and by Chamarendra in three *Samayas*.

The downward speed of *Vajra* is low, the speed in transverse direction is greater and that upward is still greater. Therefore the distance covered by *Vajra* downwards is two-thirds of a *Yojan*, that in transverse direction is slightly more than two-third of a *Yojan* and that in upwards direction is much more than two-third of a *Yojan*.

The downward distance Chamrendra covers in one *Samaya* is covered by Shakrendra in two *Samayas* and by *Vajra* in three *Samayas*. *(Churni of Abhayadev's Bhagavati Vritti, p 178)*

चमरेन्द्र द्वारा कृतज्ञता-प्रदर्शन CHAMARENDRA'S GRATITUDE

४१. तए णं से चमरे असुरिंदे असुरराया वज्जभयविप्पमुक्के सक्केणं देविंदेणं देवरण्णा महया अवमाणेणं अवमाणिए समाणे चमरचंचाए रायहाणीए सभाए सुहम्माए चमरंसि सीहासणंसि ओहयमणसंकप्पे चिंतासोग-सागरसंपविट्ठे करयलपल्हत्थमुहे अट्टज्झाणोवगए भूमिगयाए दिट्ठीए झियाति।

४१. असुरेन्द्र असुरराज चमर वज्र के भय से मुक्त हो गया, किन्तु देवेन्द्र देवराज शक्र के द्वारा किये गये महान् अपमान से अपमानित हुआ, चिन्ता और शोक के समुद्र मे डूबा हुआ मानसिक सकल्प नष्ट हो जाने से मुख को हथेली पर रखे टिकाए हुए दृष्टि को भूमि मे गडाए हुए आर्त्तध्यान करता हुआ, चमरचचा राजधानी की सुधर्मासभा मे, चमर नामक सिहासन पर (चिन्तित मुद्रा मे बैठा-बैठा) विचार करने लगा।

41. Chamarendra, the overlord of *Asurs*, was free of the fear of *Vajra* However, due to the great insult inflicted by Shakrendra, the overlord of gods he was overwhelmed by worry and grief Deprived of his self confidence he sat on the Chamar throne in the main assembly of the capital city Chamarchancha brooding with his chin in his palms and down cast eyes.

४२. तए णं चमरं असुरिंदं असुररायं सामाणियपरिसोववन्नया देवा ओहयमणसंकप्पं जाव झियायमाणं पासंति, पासित्ता करयल जाव एवं वयासि-किं णं देवाणुप्पिया ! ओहयमणसंकप्पा जाव झियायह ? तए णं से चमरे असुरिंदे असुरराया ते सामाणियपरिसोववन्नए देवे एवं वयासी-'एवं खलु देवाणुप्पिया ! मए समणं भगवं महावीरं नीसाए कट्टु सक्के देविंदे देवराया सयमेव अच्चासाइ। तए णं तेणं परिकुविएणं समाणेणं ममं वहाए वज्जे निसिट्ठे। तं भद्दं णं भवतु देवाणुप्पिया ! समणस्स भगवओ महावीरस्स जस्सम्हि पभावेणं

अविक्कट्टे अव्वहिए अपरिताविए इहमागए, इह समोसढे, इह संपत्ते, इहेव अज्ज उवसंपज्जित्ताणं विहरामि। तं गच्छामो णं देवाणुप्पिया ! समणं भगवं महावीरं वंदामो णमंसामो जाव पज्जुवासामो।

त्ति कट्टु चउसट्ठीए सामाणियसाहस्सीहिं--जाव सव्विड्ढीए जाव जेणेव असोगवरपायवे जेणेव ममं अंतिए तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता ममं तिक्खुत्तो आयाहिण--पयाहिणं जाव नमंसित्ता एवं वयासी-- 'एवं खलु भंते ! मए तुब्भं नीसाए सक्के देविंदे देवराया सयमेव अच्चासाइ जाव तं भद्दं णं भवतु देवाणुप्पियाणं जस्सम्हि पभावेणं अक्किट्ठे जाव विहरामि। तं खामेमि णं देवाणुप्पिया !' जाव उत्तरपुरत्थिमं दिसीभागं अवक्कमइ, जाव बत्तीसइबद्धं नट्टविहिं उवदंसेइ, जामेव दिसिं पाउब्भूए तामेव दिसिं पडिगए।

४२. उस समय असुरेन्द्र असुरराज चमर को मानसिक संकल्प चकनाचूर हो जाने से आर्त्तध्यान करते हुए सामानिक परिषद् मे उत्पन्न देवो ने देखा तो वे हाथ जोडकर इस प्रकार बोले--'हे देवानुप्रिय ! आज आपका मानसिक संकल्प नष्ट हो गया हो, इस तरह चिन्ता में क्यों डूबे हैं ?' इस पर असुरेन्द्र असुरराज चमर ने इस प्रकार कहा--'हे देवानुप्रियो ! मैंने स्वयमेव (अकेले ही) श्रमण भगवान महावीर का आश्रय (निश्रा) लेकर, देवेन्द्र देवराज शक्र को उसकी शोभा से नष्ट--भ्रष्ट करने का मनोगत संकल्प किया था। (तदनुसार मैने सुधर्मासभा मे जाकर उपद्रव किया था।) उससे अत्यन्त कुपित होकर मुझे मारने के लिए शक्रेन्द्र ने मुझ पर वज्र फैका था। परन्तु देवानुप्रियो ! भला हो श्रमण भगवान महावीर का, जिनके प्रभाव से मै (क्लेशरहित व्यथा--पीडा से रहित) तथा (परितापरहित) रहा; और (सुखशान्ति से युक्त) होकर यहाँ आ पाया हूँ, और आज यहाँ मौजूद हूँ।' अतः हे देवानुप्रियो ! हम सब चले और श्रमण भगवान महावीर को वन्दन--नमस्कार करे, यावत् उनकी पर्युपासना करें।'

इस प्रकार विचार करके वह चमरेन्द्र अपने चौंसठ हजार सामानिक देवों के साथ, यावत् सर्व--ऋद्धिपूर्वक उस श्रेष्ठ अशोकवृक्ष के नीचे, जहाँ मै था, वहाँ मेरे समीप आया। मेरे निकट आकर तीन बार दाहिनी ओर से मेरी प्रदक्षिणा की। यावत् वन्दना--नमस्कार करके इस प्रकार बोला--'हे भगवन् ! आपका आश्रय लेकर मै स्वयमेव देवेन्द्र देवराज शक्र को, उसकी शोभा से नष्ट--भ्रष्ट करने के लिए गया था, यावत् (पूर्वोक्त कथन) आप देवानुप्रिय का भला हो, कि जिनके प्रभाव से मैं क्लेशरहित होकर आज निर्बाध विचरण कर रहा हूँ। अतः हे देवानुप्रिय ! मैं (इसके लिए) आपसे क्षमा माँगता हूँ।' (यो कहकर वह) उत्तर--पूर्व दिशा (ईशानकोण) मे चला गया। फिर उसने बत्तीस प्रकार की नाट्यविधि (नाटक की कला) दिखलाई। फिर वह जिस दिशा से आया था, उसी दिशा मे वापस चला गया।

42. At that time when the gods born in the *Samanık Sabha* saw Chamarendra, the overlord (*Indra*) of *Asurs*, in grief due to the shattering of his resolve, they joined their palms and submitted—"Beloved of gods ! Why are you so grief stricken as if your resolve has been broken ?" At this Chamarendra, the overlord (*Indra*) of *Asurs*, replied—"Beloved of gods ! I had resolved to personally deprive Shakrendra, the king of gods, of his grandeur under Shraman Bhagavan

Mahavır's auspices (Accordıngly I went to his *Sudhàrma Sabha* and created havoc). Enraged by this act, Shakrendra launched the *Vajra* to kill me But, O Beloved of gods ! Bless Shraman Bhagavan Mahavir by whose grace I remained untouched (by pain and torment) and could return here in peace. Here I am. Therefore let us all go and pay homage and obeisance to Shraman Bhagavan Mahavir... and so on up to... worship him."

Decidıng thus, that Chamarendra, the overlord (*Indra*) of *Asurs*, along with hıs sixty four thousand *Samanik Devs*... and so on up to... all his opulence came here near me under that excellent Ashoka tree where I was stationed Here he thrıce went around me clockwise, paid me homage and obeısance and saıd—*Bhante* ! I had gone to personally deprıve Shakrendra, the kıng of gods, of his grandeur under your auspıces .. and so on up to (as aforesaid). O Beloved of gods ! Bless you, by whose grace I remained untouched (by paın and torment) and live in undısturbed peace Therefore, O Beloved of gods ! I beg your forgiveness (for my mısdeed) " (Sayıng thus he—) went ın the north-east direction and gave a performance of thırty two types of dances and dramas. After that he went back ın the direction he had come from.

४३. एवं खलु गोयमा ! चमरेणं असुरिंदेण असुररण्णा सा दिव्वा देविड्ढी लद्धा पत्ता जाव अभिसमन्नागया।

ठ्ठिती सागरोवमं। महाविदेहे वासे सिज्झिहिति जाव अंतं काहिति।

४३. हे गौतम ! इस प्रकार से असुरेन्द्र असुरराज चमर को वह दिव्य देव-ऋद्धि, दिव्य देव-द्युति एवं दिव्य देव-प्रभाव उपलब्ध हुआ है, प्राप्त हुआ है और उसका अनुभव कर रहा है।

चमरेन्द्र की स्थिति एक सागरोपम की है और वह वहाँ से च्यवकर महाविदेह क्षेत्र मे जन्म लेकर सिद्ध होगा, यावत् समस्त दु खो का अन्त करेगा।

43. Gautam ! That ıs how Chamarendra, the overlord (*Indra*) of *Asurs* got, acquired and manifested (*abhimukh*) that dıvine opulence. . and so on up to . influence.

The life-span of Chamarendra is one *Sagaropam* (a metaphoric unit of time) and descending from here, he wıll be born in the Mahavideh area and finally become a *Sıddha* (lıberated soul)... and so on up to... end all miserıes.

असुरकुमारों के सौधर्मकल्प गमन का दूसरा कारण THE SECOND REASON FOR VISIT TO SAUDHARMA KALP

४४. [प्र.] किं पत्तियं णं भंते ! असुरकुमारा देवा उड्ढं उप्पयंति जाव सोहम्मो कप्पो ?

[उ.] गोयमा ! तेसि णं देवाणं अहुणोववन्नाण वा चरिमभवत्थाण वा इमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जति–अहो ! णं अम्हेहिं दिव्वा देविड्ढी लद्धा पत्ता जाव अभिसमन्नागया। जारिसिया णं अम्हेहिं दिव्वा देविड्ढी जाव अभिसमन्नागया तारिसिया णं सक्केणं देविंदेणं देवरण्णा दिव्वा देविड्ढी जाव अभिसमन्नागया, जारिसिया णं सक्केणं देविंदेणं देवरण्णा जाव अभिसमन्नागया तारिसिया णं अम्हेहिं वि जाव अभिसमन्नागया। तं गच्छामो णं सक्कस्स देविंदस्स देवरण्णो अंतियं पाउब्भवामो, पासामो ताव सक्कस्स देविंदस्स देवरण्णो दिव्वं देविड्ढिं जाव अभिसमन्नागयं। पासउ ताव अम्ह वि सक्के देविंदे देवराया दिव्वं देविड्ढिं जाव अभिसमण्णागयं, तं जाणामो ताव सक्कस्स देविंदस्स देवरण्णो दिव्वं देविड्ढिं जाव अभिसमन्नागयं, जाणउ ताव अम्ह वि सक्के देविंदे देवराया दिव्वं देविड्ढिं जाव अभिसमण्णागयं।

एवं खलु गोयमा ! असुरकुमारा देवा उड्ढं उप्पयंति जाव सोहम्मो कप्पो।

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति।

॥ चमरो समत्तो ॥

॥ तइए सए : बिइओ उद्देसो समत्तो ॥

४४. [प्र.] भगवन् ! असुरकुमार देव यावत् सौधर्मकल्प तक ऊपर किस कारण–(प्रत्यय) से जाते है ?

[उ.] गौतम ! (देवलोक में) अधुनोत्पन्न–(तत्काल उत्पन्न) तथा **चरमभवस्थ**–(जीवन के अन्तिम समय मे) उन देवो को इस प्रकार का, इस रूप का आन्तरिक अध्यवसाय यावत् मनोगत संकल्प उत्पन्न होता है–अहो ! हमने ऐसी दिव्य देव–ऋद्धि यावत् उपलब्ध की है, प्राप्त की है, अभिसमन्वागत की है। जैसी दिव्य देव–ऋद्धि हमने उपलब्ध की है, अभिसमन्वागत की है, वैसी ही दिव्य देव–ऋद्धि देवेन्द्र देवराज शक्र ने उपलब्ध की है, अभिसमन्वागत की है, जैसी दिव्य देव–ऋद्धि देवेन्द्र देवराज शक्र ने उपलब्ध की है, अभिसमन्वागत की है, वैसी ही दिव्य देव–ऋद्धि हमने भी उपलब्ध यावत् अभिसमन्वागत की है। अत हम जाये और देवेन्द्र देवराज शक्र के सम्मुख प्रकट हों एवं देवेन्द्र देवराज शक्र द्वारा प्राप्त उस दिव्य देव–ऋद्धि, दिव्य देव–प्रभाव को देखे; तथा हमारे द्वारा लब्ध, प्राप्त उस दिव्य देव–ऋद्धि, दिव्य देव–प्रभाव को देवेन्द्र देवराज शक्र देखें। देवेन्द्र देवराज शक्र द्वारा लब्ध, अभिसमन्वागत दिव्य देव–ऋद्धि यावत् दिव्य देव–प्रभाव को हम जानें और हमारे द्वारा उपलब्ध यावत् उस दिव्य देव–ऋद्धि, देव–प्रभाव को देवेन्द्र देवराज शक्र जानें।

हे गौतम ! इस कारण (देखने व दिखाने की भावना) से असुरकुमार देव यावत् सौधर्मकल्प तक ऊपर जाते है।

'भगवन् ! आपका यह वचन इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है', ऐसा कहकर गौतम स्वामी ने भगवान की वन्दना की।

॥ चमर समाप्त ॥

॥ तृतीय शतक : द्वितीय उद्देशक समाप्त ॥

44. [Q.] *Bhante* ! Why do *Asur Kumar Devs* rise and go up to Saudharma Kalp ?

[Ans.] Gautam ! The just-born gods and those at the fag end of their life have this inspiration. . and so on up to . resolve—"Oh ! We have acquired, possessed and experienced this divine opulence... and so on up to... influence. The divine opulence as we have acquired and experienced, the same divine opulence has also been acquired and experienced by Devendra Shakra, the *Indra* (overlord) of *Devs* (gods). The divine opulence as Devendra Shakra, the *Indra* (overlord) of *Devs* (gods) has acquired and experienced, the same divine opulence has also been acquired and experienced by us Therefore, we should go and appear before Devendra Shakra, the overlord of gods, and witness that divine opulence and influence acquired by Shakrendra, the overlord of gods. And let Shakrendra, the overlord of gods witness that divine opulence and influence acquired by us Also let us know that divine opulence and influence acquired by Shakrendra, the overlord of gods And let Shakrendra, the overlord of gods, know that divine opulence and influence acquired by us.

Gautam ! For that reason (to witness and display) *Asur Kumar Devs* rise and go up to Saudharma Kalp.

"Bhante ! Indeed that is so Indeed that is so." With these words. and so on up to.:. ascetic Gautam resumed his activities.

● END OF CHAMAR ●

● END OF THE SECOND LESSON OF THE THIRD CHAPTER ●

तृतीय शतक : तृतीय उद्देशक
THIRD SHATAK (Chapter Three) : THIRD LESSON

क्रिया KRIYA (ACTIVITY)

***पाँच क्रियाएँ* FIVE ACTIVITIES**

१. तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे नामं नगरे होत्था, जाव परिसा पडिगया। तेणं कालेणं तेणं समएणं जाव अंतेवासी मंडियपुत्ते णामं अणगारे पगतिभद्दए जाव पज्जुवासमाणे एवं वयासी–

१. उस काल, समय में 'राजगृह' नगर था; वहाँ भगवान पधारे यावत् परिषद् (धर्मकथा सुनने आई और सुनकर) वापस गई। उस समय मे भगवान के अन्तेवासी (शिष्य) प्रकृति से भद्र (सरल) मण्डितपुत्र नामक अनगार (छठे गणधर) भगवान की पर्युपासना करते हुए इस प्रकार बोले–

1. During that period of time there was a city called Rajagriha. Description (as before) Bhagavan Mahavir arrived there People came out. *Bhagavan* gave his sermon. People dispersed During that period of time Mandit-putra Anagar, (the sixth *Ganadhar* or senior disciple of Bhagavan Mahavir)... and so on up to... paid his homage and obeisance and submitted—

२. [प्र.] कइं णं भंते ! किरियाओ पण्णत्ताओ ?

[उ.] मंडियपुत्ता ! पंच किरियाओ पण्णत्ताओ, तं जहा–काइया अहिगरणिया पाओसिया परियावणिया पाणाइवायकिरिया।

२. [प्र.] भगवन् ! क्रियाएँ कितनी है ?

[उ.] मण्डितपुत्र ! क्रियाएँ पाँच है, वे इस प्रकार है–(१) कायिकी, (२) आधिकरणिकी, (३) प्राद्वेषिकी, (४) पारितापनिकी, और (५) प्राणातिपातिकी क्रिया।

2. [Q.] *Bhante* ! How many activities (*kriya*) are there ?

[Ans.] Mandit-putra ! There are five activities (*kriya*)—(1) *Kayiki* (bodily or physical activity), (2) *Aadhikaraniki* (activity involving instruments), (3) *Praadveshiki* (hostile action inspired by feelings of anger, aversion and malice), (4) *Paaritapaniki* (punitive action of inflicting punishment and pain on others), and (5) *Praanatipatiki* (act of harming or destroying life).

३. [प्र.] काइया णं भंते ! किरिया कइविहा पण्णत्ता ?

[उ.] मंडियपुत्ता ! दुविहा पण्णत्ता, तं जहा–अणुवरयकायकिरिया य दुप्पउत्तकायकिरिया य।

३. [प्र.] भगवन् ! कायिकी क्रिया कितने प्रकार की है?

[उ.] मण्डितपुत्र ! कायिकी क्रिया दो प्रकार की है, जैसे-(१) अनुपरतकाय क्रिया, और (२) दुष्प्रयुक्तकाय क्रिया।

3. [Q.] *Bhante* ! Of how many types is bodily or physical activity (*kayıki krıya*)?

[Ans.] Mandıt-putra ! Physical activıty (*kayıki krıya*) is of two types—(1) *Anuparat-kaaya-krıya* (physical activity of a person who has not resolved to abstain from sinful activities), and (2) *Dushprayukta-kaaya-krıya* (physıcal actıvity of a pervert ascetic with sensual and mental cravıngs)

४. [प्र.] अहिगरणिया णं भंते ! किरिया कइविहा पण्णत्ता ?

[उ.] मंडियपुत्ता ! दुविहा पण्णत्ता, तं जहा-संजोयणहिगरणाकिरिया य निव्वत्तणाहिगरणकिरिया य।

४. [प्र.] भगवन् आधिकरणिकी क्रिया कितने प्रकार की है?

[उ.] मण्डितपुत्र ! आधिकरणिकी क्रिया दो प्रकार की है-(१) सयोजनाधिकरण क्रिया, और (२) निर्वर्तनाधिकरणक्रिया।

4. [Q.] *Bhante* ! Of how many types is activity involvıng instruments (*aadhıkaranıkı krıya*)?

[Ans.] Mandit-putra ! *Aadhıkaranıki krıya* is of two kinds—(1) *Samyojan-aadhikaranık-krıya* (the act of assembling weapon with already made components), and (2) *Nırvartan-aadhıkaranık-krıya* (act of makıng weapons from scratch).

५. [प्र.] पाओसिया णं भंते ! किरिया कइविहा पण्णत्ता ?

[उ.] मंडियपुत्ता ! दुविहा पण्णत्ता, तं जहा-जीवपाओसिया य अजीवपाओसिया य।

५. [प्र.] भगवन् ! प्राद्वेषिकी क्रिया कितने प्रकार की है?

[उ.] मण्डितपुत्र ! प्राद्वेषिकी क्रिया दो प्रकार की है-(१) जीव प्राद्वेषिकी क्रिया, और (२) अजीव प्राद्वेषिकी क्रिया।

5. [Q.] *Bhante* ! Of how many types is hostile action (*praadveshiki kriya*)?

[Ans.] Mandit-putra ! *Pradveshıkı kriya* (hostile action) is of two kinds—(1) *Jıva-pradveshıki-krıya* (hostılity towards living being), and (2) *Ajiva-pradveshıkı-krıya* (hostility towards non-living things).

६. [प्र.] पारियावणिया णं भंते ! किरिया कइविहा पण्णत्ता ?

[उ.] मंडियपुत्ता ! दुविहा पण्णत्ता, तं जहा–सहत्थपारियावणिया य परहत्थपारियावणिया य।

६. [प्र.] भगवन् ! पारितापनिकी क्रिया कितने प्रकार की है?

[उ.] मंडितपुत्र ! पारितापनिकी क्रिया दो प्रकार की है–(१) स्वहस्तपारितापनिकी, और (२) परहस्तपारितापनिकी।

6. [Q.] *Bhante* ! Of how many types is punitive action of inflicting punishment and pain on others (*paaritapaniki kriya*)?

[Ans.] Mandit-putra ! *Paaritapaniki kriya* (punitive action) is of two kinds—(1) *Svahast-paaritapaniki-kriya* (inflicting pain on self and others with one's own hands), and (2) *Parahast-paaritapaniki-kriya* (causing other person to inflict pain on self and others).

७. [प्र.] पाणाइवायकिरिया णं भंते ! कइविहा पण्णत्ता?

[उ.] मंडियपुत्ता ! दुविहा पण्णत्ता, तं जहा–सहत्थपाणाइवायकिरिया य परहत्थ-पाणाइवायकिरिया य।

७. [प्र.] भगवन् ! प्राणातिपातक्रिया कितने प्रकार की है?

[उ.] मण्डितपुत्र ! प्राणातिपात क्रिया दो प्रकार की है–(१) स्वहस्त प्राणातिपातक्रिया, और (२) परहस्त प्राणातिपातक्रिया।

7. [Q.] *Bhante* ! Of how many types is act of harming or destroying life (*praanatipatiki kriya*)?

[Ans.] Mandit-putra ! *Praanatipat kriya* is of two kinds—(1) *Svahast-praanatipat kriya* (destroying life of self and others with one's own hands), and (2) *Parahast-praanatipat kriya* (causing other person to destroy life of self and others)

विवेचन : **क्रिया**–जैनदृष्टि से क्रिया का अर्थ केवल करना ही नही है, अपितु उसका एक अर्थ है–कर्मबन्ध मे कारणरूप चेष्टा या प्रवृत्ति; फिर वह चाहे कायिक हो, वाचिक हो या मानसिक हो, जब तक जीव क्रियारहित नहीं हो जाता, तब तक कुछ न कुछ कर्मबन्धन होता ही रहता है।

पाँच क्रियाओं का अर्थ इस प्रकार है–कायिकी–काया मे या काया से होने वाली। **आधिकरणिकी**–जिससे आत्मा का नरकादि दुर्गतियों में जाने का अधिकार बनता है, ऐसा कोई अनुष्ठान या कार्य अथवा तलवार, चक्रादि शस्त्र वगैरह हिंसा के आधार अधिकरण कहलाते हैं, अधिकरण से होने वाली क्रिया। **प्राद्वेषिकी**–प्रद्वेष (मत्सर) के निमित्त से हुई अथवा प्रद्वेषरूप क्रिया। **पारितापनिकी**–अन्य जीवों को परिताप या पीडा पहुँचाने से होने वाली क्रिया। **प्राणातिपातिकी**–प्राणियो के प्राणो का अतिपात (वियोग या विनाश) से होने वाली क्रिया।

अनुपरतकायक्रिया–प्राणातिपात आदि से सर्वथा त्यागवृत्तिरहित प्राणी की शारीरिक क्रिया। यह क्रिया अविरत जीवों को लगती है। **दुष्प्रयुक्तकायक्रिया**–दुष्टरूप (बुरी तरह) से प्रयुक्त शरीर द्वारा अथवा दुष्ट प्रयोग

वाले मनुष्यशरीर द्वारा हुई क्रिया। यह क्रिया प्रमत्त संयत को भी प्रमादवश लगती है। **संयोजनाधिकरणक्रिया**–सयोजन का अर्थ है–जोडना। जैसे–पशु–पक्षियो को पकडने के लिए पृथक्–पृथक् अवयवों को जोड़कर यन्त्र आदि तैयार करना, अथवा किसी भी पदार्थ मे विष मिलाकर एवं मिश्रित पदार्थ तैयार करना। **निर्वर्तनाधिकरणक्रिया**–तलवार, बर्छी, भाला आदि शस्त्रो का निर्माण करना निर्वर्तन है। ऐसी निर्वर्तनरूप अधिकरण क्रिया। **जीवप्राद्वेषिकी**–अपने या दूसरे के जीव पर द्वेष करने से लगने वाली क्रिया। **अजीवप्राद्वेषिकी**–अजीव पदार्थ पर द्वेष करने से होने वाली क्रिया। **स्वहस्तपारितापनिकी**–अपने हाथ से अपने को, दूसरे को अथवा दोनो को–पीडा पहुँचाना। **परहस्तपारितापनिकी**–दूसरे को प्रेरणा देकर या दूसरे के निमित्त से पीडा पहुँचाना। **स्वहस्तप्राणातिपातिकी**–अपने हाथ से–स्वय अपने या दूसरे के प्राणों का अतिपात–(विनाश) करना। **परहस्तप्राणातिपातिकी**–दूसरे के द्वारा या दूसरे के प्राणों का अतिपात करना।

Elaboration—In Jain view *kriya* (action) does not simply mean to do or to act. In ontological terms it means intent or action that causes bondage of *karmas* irrespective of its being physical, vocal or mental. As long as a being does not cease to be active it continues to invite *karmic* bondage no matter how minute it is.

The details of five activities are—(1) **Kayiki**—activity within or by the body, physical activity (2) **Aadhikaraniki**—any activity that qualifies (*adhikar*) a soul for ignoble rebirth including that in hell, it also means activity involving instruments (*adhikaran*) of violence including sword and disc-weapon (*chakra*). (3) **Praadveshiki**—hostile action inspired by feelings of anger, aversion and malice. (4) **Paaritapaniki**—punitive action of inflicting punishment and pain on others. (5) **Praanatipatiki**—act of harming or destroying (*atipaat*) life (*praan*).

Anuparat-kaaya-kriya—physical activity of a person who has not resolved to abstain from sinful activities; this applies to beings who have not abstained from violence and other such acts (*avirat*). **Dushprayukta-kaaya-kriya**—physical activity of a pervert ascetic with sensual and mental cravings, this also applies to a *pramatt-samyat* (accomplished but negligent) due to negligence or stupor **Samyojan-aadhikaranik-kriya**—*samyojan* means to join or assemble; the act of assembling weapon with already made components, such as a trap for animals or birds; this also includes concocting a poison **Nirvartan-aadhikaranik-kriya**—act of making weapons like sword, lance, spear etc. from scratch. **Jiva-pradveshiki-kriya**—hostility towards living beings owned by self or others **Ajiva-pradveshiki-kriya**—hostility towards non-living things. **Svahast-paaritapaniki-kriya**—inflicting pain on self and others or both with one's own hands. **Parahast-paaritapaniki-kriya**—causing other person to inflict pain on self and others or to cause pain in some others

name. **Svahast-praanatipat kriya**—destroying life of self and others with one's own hands. **Parahast-praanatipat kriya**—causing other person to destroy life of self and others. *(Note—In all aforesaid cases activity or act also includes the acquisition of karmas caused by that activity or act.)*

८. [प्र.] पुव्विं भंते ! किरिया पच्छा वेदणा ? पुव्विं वेदणा पच्छा किरिया।

[उ.] मंडियपुत्ता ! पुव्विं किरिया, पच्छा वेदणा; णो पुव्विं वेदणा, पच्छा किरिया।

८. [प्र.] भगवन् ! क्या पहले क्रिया होती है, और पीछे वेदना होती है ? अथवा पहले वेदना होती है, पीछे क्रिया होती है ?

[उ.] मण्डितपुत्र ! पहले क्रिया होती है, बाद मे वेदना होती है, परन्तु पहले वेदना हो और पीछे क्रिया हो, ऐसा नहीं होता।

8. [Q.] *Bhante* ! Is activity first and pain next ? or is pain first and activity next ?

[Ans.] Mandit-putra ! It is activity first and pain next, not pain first and activity next ?

९. [प्र.] अत्थि णं भंते ! समणाणं निग्गंथाणं किरिया कज्जइ ?

[उ.] हंता, अत्थि।

९. [प्र.] भगवन् ! क्या श्रमणनिर्ग्रन्थों के (भी) क्रिया लगती है ?

[उ.] हाँ, उनके भी (क्रिया) लगती है।

9. [Q.] *Bhante* ! Is *kriya* (acquisition of *karmas*) applicable (also) to *Shraman-nirgranths* (Jain ascetics) ?

[Ans.] Yes, it is applicable to them also.

१०. [प्र.] कहं णं भंते ! समणाणं निग्गंथाणं किरिया कज्जइ ?

[उ.] मंडियपुत्ता ! पमायपच्चया जोगनिमित्तं च, एवं खलु समणाणं निग्गंथाणं किरिया कज्जति।

१०. [प्र.] भगवन् श्रमणनिर्ग्रन्थो के क्रिया किस प्रत्यय (निमित्त) से लगती है ?

[उ.] मण्डितपुत्र ! प्रमाद के कारण और योग (मन-वचन-काया की प्रवृत्ति) के निमित्त से, इन दो कारणों से श्रमणनिर्ग्रन्थो को क्रिया लगती है।

10. [Q.] *Bhante* ! For what reason *kriya* (acquisition of *karmas*) is applicable to *Shraman-nirgranths* (Jain ascetics) ?

[Ans.] Mandit-putra ! *Kriya* (acquisition of *karmas*) is applicable to *Shraman-nirgranths* (Jain ascetics) for two reasons, due to stupor (*pramad*) and due to *yoga* (association of mind, speech and body).

विवेचन : क्रिया प्रथम क्यों ?—क्रिया कर्म की जननी है, क्योंकि कर्म का बंधन क्रिया से ही होता है। पहले कर्म होगा, तभी उसकी वेदना–अनुभव (कर्मफल भोग) होगी। अतः क्रिया और वेदना में कार्य–कारण भाव का सम्बन्ध है। *(वृत्ति, पत्राक १८२)*

श्रमणनिर्ग्रन्थ की क्रिया · प्रमाद और योग से–सर्वथा विरत श्रमणों को भी प्रमाद और योग के निमित्त से क्रिया लगती है; इसका तात्पर्य यह है कि श्रमण जब उपयोगरहित (असावधान) अथवा प्रमादयुक्त (ईर्ष्यासक्त) होकर गमनादि क्रियाएँ करता है, तब वह क्रिया प्रमादजन्य कहलाती है। तथा जब कोई श्रमण उपयोगयुक्त एव अप्रमत्त होकर गमनादि क्रियाएँ मन–वचन–काय (योग) से करता है तब वह ऐर्यापथिकी क्रिया योगजन्य कहलाती है।

Elaboration—Why *krıya* first ?—*Krıya* (actıon) is the source of *karma* because bondage of *karmas* is caused only by *kriya* (action). Bondage of *karmas* comes first, only then its fruits (pain) can be experienced. Thus there ıs a cause and effect relationshıp between *krıya* and pain. *(Vrıttı, leaf 182)*

Kriya of Shraman-nirgranths (Jain ascetics)—Even completely detached ascetıcs acquire *karmas* due to stupor and association. This means that when such an ascetıc indulges in movement and other actions neglıgently or in stupor it is called action due to stupor and associatıon When he does so carefully and free of stupor it is called actıon exclusively due to association (*Iryapathikı krıya*)

सक्रिय–अक्रिय जीवों की अन्तक्रिया TERMINAL ACTIVITY OF ACTIVE AND INACTIVE BEINGS

११. [प्र.] जीवे णं भंते ! सया समियं एयइ वेयइ चलइ फंदइ घट्टइ खुब्भइ उदीरइ तं तं भावं परिणमइ ?

[उ.] हंता, मंडियपुत्ता ! जीवे णं सया समियं एयइ जाव तं तं भावं परिणमइ।

११. [प्र.] भगवन् ! क्या जीव सदा समित (प्रतिक्षण या परिमित) रूप से काँपता है, विविध रूप से काँपता है, चलता है (एक स्थान से दूसरे स्थान जाता है), स्पन्दन क्रिया करता (थोड़ा या धीमा चलता है) घट्टित होता (सर्व दिशाओ मे जाता–घूमता) है, क्षुब्ध (चंचल) होता है, उदीरित (प्रबल रूप से प्रेरित) होता या करता है, और आकुचन–प्रसारणरूप उन–उन भावो मे परिणत होता है ?

[उ.] हाँ, मण्डितपुत्र ! जीव सदा समित–(परिमित) रूप से काँपता है, यावत् उन–उन भावो में परिणत होता है।

11. [Q.] *Bhante* ! Does a living beıng (*jiva*) tremble always every moment, tremble various ways, move (from one place to another), pulsate (move little or slowly), move in all directions (*ghattit*), get agitated (*kshubdh*), gets intensely ınspired (*udirit*) and accordingly change its state (*bhaava*) or transform (shrink or expand) ?

[Ans.] Yes, Mandit-putra ! A living being (*jiva*) trembles always every moment... and so on up to... accordingly changes its state (*bhaava*).

१२. [प्र. १] जावं च णं भंते ! से जीवे सया समितं जाव परिणमति तावं च णं तस्स जीवस्स अंते अंतकिरिया भवति ?

[उ.] णो इणट्ठे समट्ठे।

[प्र. २] से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ–जावं च णं से जीवे सदा समितं जाव अंते अंतकिरिया न भवति ?

[उ.] मंडियपुत्ता ! जावं च णं से जीवे सया समितं जाव परिणमति तावं च णं से जीवे आरभति सारभति समारभति, आरंभे वट्टति, सारंभे वट्टति, समारंभे वट्टति, आरभमाणे सारभमाणे समारभमाणे, आरंभे वट्टमाणे, सारंभे वट्टमाणे, समारंभे वट्टमाणे बहूणं पाणाणं भूताणं जीवाणं सत्ताणं दुक्खावणयाए सोयावणयाए जूरावणयाए तिप्पावणयाए पिट्टावणयाए परितावणयाए वट्टति, से तेणट्ठेणं मंडियपुत्ता ! एवं वुच्चति–जावं च णं से जीवे सया समितं एयति जाव परिणमति तावं च णं तस्स जीवस्स अंते अंतकिरिया न भवति।

१२. [प्र. १] भगवन् ! जब तक जीव समित रूप से काँपता है, यावत् उन–उन भावों में परिणत होता है, तब तक क्या उस जीव की अन्तिम–(मरण) समय की अन्तक्रिया (मुक्ति) होती है ?

[उ.] मण्डितपुत्र ! यह अर्थ समर्थ नहीं है; (क्योंकि जीव जब तक क्रियायुक्त है, तब तक अन्तक्रिया (मुक्ति) नही हो सकती।)

[प्र. २] भगवन् ! किस कारण से ऐसा कहा जाता है कि जब तक जीव समितरूप से सदा काँपता है, यावत् तब तक उसकी अन्तिम समय की अन्तक्रिया नहीं होती ?

[उ.] हे मण्डितपुत्र ! जीव जब तक सदा समितरूप से काँपता है, यावत् उन–उन भावो मे परिणत होता है, तब तक वह (जीव) आरम्भ (हिंसा की प्रवृत्ति) करता है, सरम्भ (हिंसा का संकल्प) मे करता है, समारम्भ (परिताप देना) करता है; आरम्भ में रहता है, संरम्भ में रहता है, और समारम्भ मे रहता है। आरम्भ, सरम्भ और समारम्भ करता हुआ तथा आरम्भ में, संरम्भ में और समारम्भ में प्रवर्त्तमान जीव, बहुत–से प्राणो, भूतो, जीवो और सत्त्वो को दुःख पहुँचाने में, शोक देने में, झूराने–(विलाप कराने मे, रुलाने अथवा आँसू गिरवाने में), पिटवाने में, या त्रास पहुँचाने मे और परिताप देने में प्रवृत्त होता है। इसलिए हे मण्डितपुत्र ! इसी कारण से ऐसा कहा जाता है कि जब तक जीव सदा समितरूप से कम्पित होता है, यावत् उन–उन भावों में परिणत होता है, तब तक वह जीव, अन्तिम समय (मरणकाल) मे अन्तक्रिया नहीं कर सकता।

12. [Q. 1] *Bhante* ! When a living being (*jiva*) trembles always every moment... and so on up to... accordingly changes its state (*bhaava*), then at the last moment (of his life) does he undergo *ant-kriya* (the terminal-activity; last action or ending cycles of death) ?

[Ans.] Mandit-putra ! That is not correct. (because as long as a *jiva* has activity, terminal-activity is not possible)

[Q. 2] *Bhante* ! Why is it said that as long as a living being (*jiva*) trembles always every moment... and so on up to... accordingly changes its state (*bhaava*), he cannot at the last moment (of his life) undergo *ant-kriya* (the terminal-activity) ?

[Ans.] O Mandit-putra ! As long as a living being (*jiva*) trembles always every moment and so on up to.. accordingly changes its state (*bhaava*), he continues to indulge in violent or sinful activities (*aarambh*), resolve to indulge in sinful activity (*samrambh*), and acts of tormenting (*samaarambh*), he lives doing violent or sinful activities (*aarambh*), resolving to indulge in sinful activity (*samrambh*), and doing acts of tormenting (*samaarambh*) While indulging in violent or sinful activities (*aarambh*), resolving to indulge in sinful activity (*samrambh*), and indulging in acts of tormenting (*samaarambh*), while living doing violent or sinful activities (*aarambh*), resolving to indulge in sinful activity (*samrambh*), and doing acts of tormenting (*samaarambh*) a living being causes misery and grief to, as well as beats and torments many *praan, bhoot, jiva* and *sattva* (beings, organisms, souls and entities) making them wail, shed tears. That is why, O Mandit-putra ! It is said that as long as a living being (*jiva*) trembles always every moment. . and so on up to .. accordingly changes its state (*bhaava*), he cannot at the last moment (of his life) undergo *ant-kriya* (the terminal-activity)

१३. [प्र.] जीवे णं भंते ! सया समियं नो एयति जाव नो तं तं भावं परिणमति ?

[उ.] हंता, मंडियपुत्ता ! जीवे णं सया समियं जाव नो परिणमति।

१३. [प्र.] भगवन् ! जीव सदैव (शाश्वतरूप से) समितरूप से ही कम्पित नही होता, यावत् उन-उन भावो मे परिणत नही होता ?

[उ.] हॉं, मण्डितपुत्र ! जीव सदा के लिए समितरूप से ही कम्पित नही होता, यावत् उन-उन भावो मे परिणत नही होता। (अर्थात्-जीव एक दिन क्रियारहित भी हो सकता है।)

13. [Q.] *Bhante* ! A living being (*jiva*) does not tremble always every moment and so on up to... accordingly does not change its state (*bhaava*) ?

[Ans.] Yes, Mandit-putra ! A living being (*jiva*) does not tremble always every moment and so on up to... accordingly does not change its state (*bhaava*). (In other words, a being may be devoid of all activity some day.)

१४. [प्र. १] जावं च णं भंते ! से जीवे नो एयति जाव नो तं तं भावं परिणमति तावं च णं तस्स जीवस्स अंते अंतकिरिया भवति ?

[उ.] हंता, जाव भवइ।

[प्र. २] से केणट्ठेणं भंते ! जाव भवति ?

[उ.] मंडियपुत्ता ! जावं च णं से जीवे सया समियं णो एयति जाव णो परिणमइ तावं च णं से जीवे नो आरभति, नो सारभति, नो समारभति, नो आरंभे वट्टइ, णो सारंभे वट्टइ, णो समारंभे वट्टइ, अणारभमाणे, असारभमाणे, असमारभमाणे, आरंभे अवट्टमाणे, सारंभे अवट्टमाणे, समारंभे अवट्टमाणे बहूणं पाणाणं, भूताणं, जीवाणं, सत्ताणं अदुक्खावणयाए जाव अपरितावणयाए वट्टइ।

१४. [प्र. १] भगवन् ! जब वह जीव सदा के लिए समितरूप से कम्पित नहीं होता, यावत् उन–उन भावो में परिणत नही होता, तब क्या उस जीव की अन्तिम समय मे अन्तक्रिया (मुक्ति) नहीं हो जाती ?

[उ.] हाँ, (मण्डितपुत्र !) ऐसे जीव की अन्तिम समय में अन्तक्रिया (मुक्ति) हो जाती है।

[प्र. २] भगवन् ! ऐसा किस कारण से कहा है कि ऐसे जीव की अन्तक्रिया–मुक्ति हो जाती है ?

[उ.] मण्डितपुत्र ! जब वह जीव सदा (के लिए) समितरूप से भी कम्पित नहीं होता, यावत् उन–उन भावों मे परिणत नहीं होता, तब वह जीव आरम्भ नहीं करता, सरम्भ नहीं करता एवं समारम्भ भी नही करता, और न ही वह जीव आरम्भ मे, संरम्भ एवं समारम्भ मे प्रवृत्त होता है। आरम्भ, सरम्भ और समारम्भ नहीं करता हुआ तथा आरम्भ, संरम्भ और समारम्भ में प्रवृत्त न होता हुआ जीव, बहुत–से प्राणों, भूतो, जीवों और सत्त्वो को दु:ख पहुँचाने में यावत् परिताप उत्पन्न करने में प्रवृत्त (या निमित्त) नही होता।

14. [Q. 1] *Bhante* ! When a living being (*jiva*) does not tremble always every moment... and so on up to. . accordingly does not change its state (*bhaava*), then at the last moment (of his life) does he undergo *ant-kriya* (the terminal-activity or liberation) ?

[Ans.] Yes (Mandit-putra !) That is correct... and so on up to... at the last moment (of his life) he undergoes *ant-kriya* (the terminal-activity or liberation).

[Q. 2] *Bhante* ! Why is it said that at the last moment he undergoes *ant-kriya* (the terminal-activity or liberation) ?

[Ans.] O Mandit-putra ! As long as a living being (*jiva*) does not tremble always every moment... and so on up to... accordingly does not change its state (*bhaava*), he does not continue to indulge in violent or sinful activities (*aarambh*), does not resolve to indulge in sinful activity (*samrambh*), and avoids acts of tormenting (*samaarambh*); he does not

live doing violent or sinful activities (*aarambh*), resolving to indulge in sinful activity (*samrambh*), and doing acts of tormenting (*samaarambh*). While not indulging in violent or sinful activities (*aarambh*), not resolving to indulge in sinful activity (*samrambh*), and not indulging in acts of tormenting (*samaarambh*), while not living doing violent or sinful activities (*aarambh*), not resolving to indulge in sinful activity (*samrambh*), and not doing acts of tormenting (*samaarambh*) that living being does not cause misery... and so on up to... torment many *praan, bhoot, jiva* and *sattva* (beings, organisms, souls and entities).

[प्र. ३] से जहानामए केइ पुरिसे सुक्कं तणहत्थयं जाततेयंसि पक्खिवेज्जा, से नूणं मंडियपुत्ता ! से सुक्के तणहत्थए जायतेयंसि पक्खित्ते समाणे खिप्पामेव मसमसाविज्जइ ?

[उ.] हंता, मसमसाविज्जइ।

[प्र. ४] से जहानामए केइ पुरिसे तत्तंसि अयकवल्लंसि उदयबिंदुं पक्खिवेज्जा, से नूणं मंडियपुत्ता ! से उदयबिंदू तत्तंसि अयकवल्लंसि पक्खित्ते समाणे खिप्पामेव विद्धंसमागच्छइ ?

[उ.] हंता, विद्धंसमागच्छइ।

[प्र. ३] (भगवान–) जैसे, (कल्पना करो), कोई पुरुष सूखे घास के पूले को अग्नि मे डाले तो क्या मण्डितपुत्र वह सूखे घास का पूला अग्नि मे डालते ही शीघ्र जल जाता है ?

[उ.] (मण्डितपुत्र–) हाँ, भगवन् ! वह शीघ्र ही जल जाता है।

[प्र. ४] (भगवान–) (कल्पना करो) जैसे कोई पुरुष तपे हुए लोहे के कडाह पर पानी की बूँद डाले तो क्या मण्डितपुत्र ! तपे हुए लोहे के कडाह पर डाली हुई वह जलबिन्दु अवश्य ही शीघ्र नष्ट हो जाती है ?

[उ.] (मण्डितपुत्र–) हाँ, भगवन् ! वह जलबिन्दु शीघ्र नष्ट हो जाती है।

[Q. 3] (*Bhagavan*—) For example (consider) a man throws a bundle of hay in fire; Mandit-putra ! Does it not burn at once ?

[Ans.] (Mandit-putra—) Yes, *Bhante* ! It at once burns

[Q. 4] (*Bhagavan*—) For example (consider) a man pours a drop of water on a red hot pan; Mandit-putra ! Does it not evaporate at once ?

[Ans.] (Mandit-putra—) Yes, *Bhante* ! It at once evaporates.

[५] से जहानामए हरए सिया पुण्णे पुण्णप्पमाणे वोलट्टमाणे वोसट्टमाणे समभरघडत्ताए चिट्ठति ? हंता चिट्ठति।

अहे णं केइ पुरिसे तंसि हरयंसि एगं महं नावं सत्तासवं सयच्छिद्दं ओगाहेज्जा, से नूणं मंडियपुत्ता ! सा नावा तेहिं आसवद्दारेहिं आपूरेमाणी आपूरेमाणी पुण्णा पुण्णप्पमाणा वोलट्टमाणा वोसट्टमाणा समभरघडत्ताए चिट्ठति ? हंता चिट्ठति।

अहे णं केइ पुरिसे तीसे नावाए सव्वतो समंता आसवद्दाराइं पिहेइ, पिहित्ता नावा-उस्सिंचणएणं उदयं उस्सिंचिज्जा, से नूणं मंडियपुत्ता ! सा नावा तंसि उदयंसि उस्सित्तंसि समाणंसि खिप्पामेव उड्ढं उद्दाति ? हंता, उद्दाति।

एवामेव मंडियपुत्ता ! अत्तत्तासंवुडस्स अणगारस्स इरियासमियस्स जाव गुत्तबंभयारिस्स, आउत्तं गच्छमाणस्स चिट्ठमाणस्स निसीयमाणस्स तुयट्टमाणस्स, आउत्तं वत्थ-पडिग्गह-कंबल-पादपुंछणं गेण्हमाणस्स, निक्खिवमाणस्स जाव चक्खुपम्हनिवायमवि वेमाया सुहुमा इरियावहिया किरिया कज्जइ। सा पढमसमयबद्धपुट्ठा बितियसमयवेइया तइयसमयनिज्जरिया, सा बद्धा-पुट्ठा, उदीरिया, वेदिया निज्जिण्णा सेयकाले अकम्मं वावि भवति। से तेणट्ठेणं मंडियपुत्ता ! एवं वुच्चति-जावं च णं से जीवे सया समितं नो एयति जाव अंते अंतकिरिया भवति।

[५] (भगवान्-) (मान लो,) 'कोई एक सरोवर है, जो जल से पूर्ण हो, पूर्ण मात्रा मे पानी से भरा हो, पानी से लबालब भरा हो, बढते हुए पानी के कारण उसमे से पानी छलक रहा हो, पानी से भरे हुए घडे के समान क्या उसमे पानी व्याप्त होकर रहता है ?'

(मण्डितपुत्र-) हाँ, भगवन् ! उसमे पानी व्याप्त होकर रहता है।

(भगवान्-) अब उस सरोवर मे कोई पुरुष, सैकडों छोटे-बडे छिद्रो वाली एक बडी नौका को उतार दे, तो क्या मण्डितपुत्र ! वह नौका उन छिद्रों द्वारा पानी से भरती-भरती जल से परिपूर्ण हो जाती है ? पूर्ण मात्रा मे उसमे पानी भर जाता है ? पानी से वह लबालब भर जाती है ? उसमें पानी बढने से छलकने लगता है ? (और अन्त मे) वह (नौका) पानी से भरे घड़े की तरह सर्वत्र पानी से व्याप्त हो जाती है ?

(मण्डितपुत्र-) हाँ, भगवन् ! वह पूर्वोक्त प्रकार से जल से पूर्ण भर जाती है।

(भगवान्-) यदि कोई पुरुष उस नौका के समस्त छिद्रो को चारो ओर से बन्द कर दे, और वैसा करके नौका की उलीचनी (पानी उलीचने के उपकरणविशेष) से पानी को उलीच दे (जल के ऊपर उठने को रोक दे) तो हे मण्डितपुत्र ! नौका के पानी को उलीच कर खाली करते ही क्या वह नौका शीघ्र ही पानी के ऊपर आ जाती है ?

(मण्डितपुत्र-) हाँ, भगवन् ! (वैसा करने से, वह तुरन्त) पानी के ऊपर आ जाती है।

(भगवान्-) हाँ, मण्डितपुत्र ! इसी तरह अपनी आत्मा द्वारा आत्मा मे संवृत (संयत) हुए, ईर्यासमिति आदि पाँच समितियों से समित तथा मनोगुप्ति आदि तीन गुप्तियों से गुप्त ब्रह्मचर्य की नौ गुप्तियो से गुप्त उपयोगपूर्वक गमन करने वाले, ठहरने वाले, बैठने वाले, करवट बदलने वाले तथा वस्त्र, पात्र, कम्बल, पादप्रोञ्छन, रजोहरण (आदि धर्मोपकरणो) को उपयोग के साथ उठाने और रखने वाले अनगार को भी अक्षिनिमेष-(आँख की पलक झपकाने) मात्र समय मे विमात्रापूर्वक (विविध मात्रा वाली) थोड़ी-सी भी सूक्ष्म ईर्यापथिकी क्रिया लगती है। वह (क्रिया) प्रथम समय में बद्ध-स्पृष्ट, द्वितीय समय में वेदित और तृतीय समय में निर्जीण (क्षीण) हो जाती है। (अर्थात्-) वह बद्ध-स्पृष्ट, उदीरित, वेदित और निर्जीर्ण

क्रिया भविष्यत्काल में अकर्मरूप भी हो जाती है। इसी कारण से, हे मण्डितपुत्र ! ऐसा कहा जाता है कि जब वह जीव सदा (के लिए) समितरूप से भी कम्पित नही होता, यावत् उन-उन भावों मे परिणत नहीं होता, तब अन्तिम समय मे (जीवन के अन्त मे) उसकी अन्तक्रिया (मुक्ति) हो जाती है।

[5] **(Bhagavan—)** For example (consider) there is a pond filled with water, full to its capacity, full to its brim, and with an inflow of water it is about to overflow just like a pitcher full of water. Does water pervade it ?

(Mandit-putra—) Yes, *Bhante* ! Water pervades it.

(Bhagavan—) Now (consider) some person places a large boat with hundreds of small and large holes in the pond. Then, Mandit-putra ! With water leaking in through those holes, does that boat not get filled with water, full to its capacity, full to its brim and about to overflow just like a pitcher full of water. Does water pervade it ?

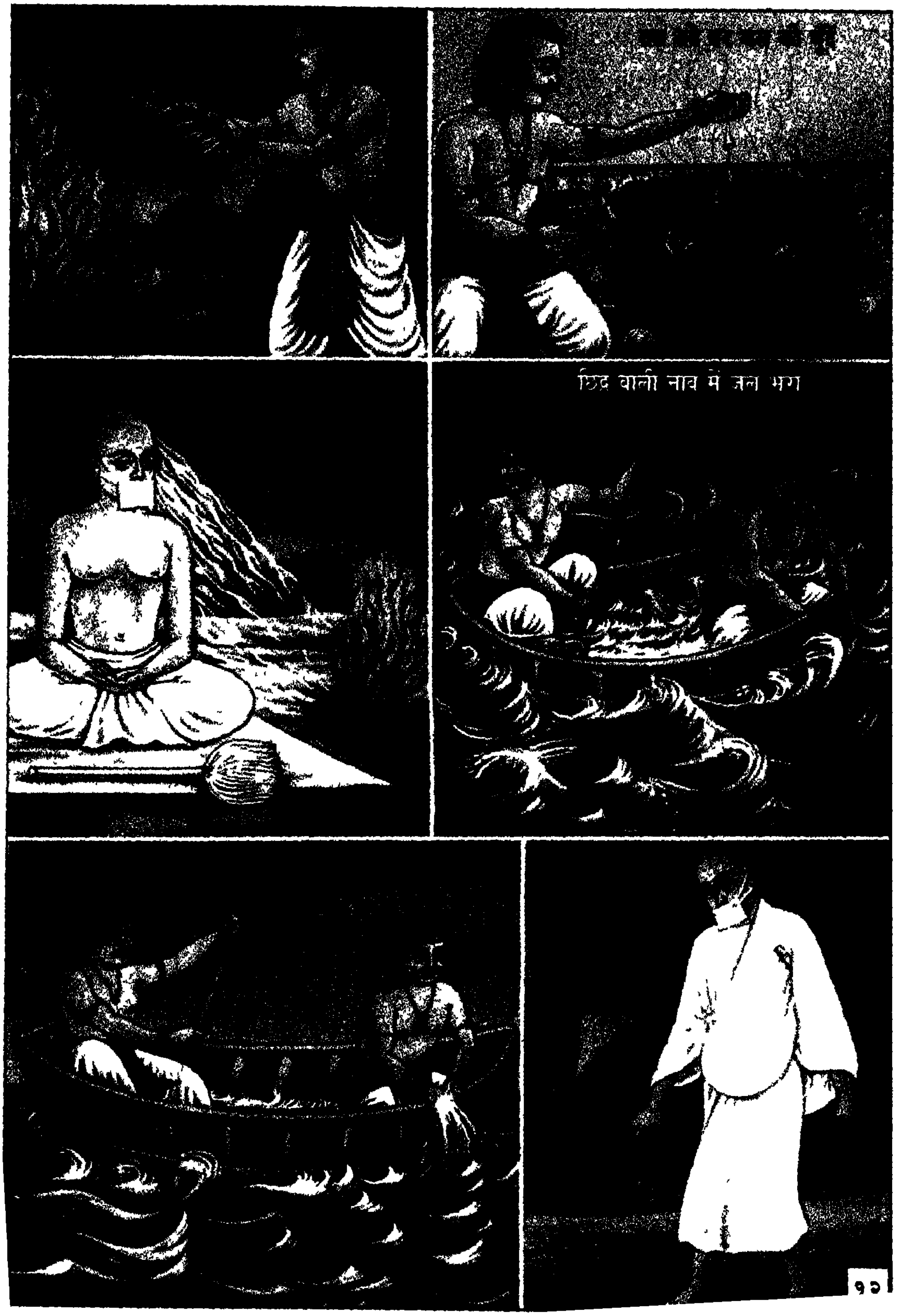
(Mandit-putra—) Yes, *Bhante* ! Water pervades it.

(Bhagavan—) Now (consider) some person plugs all the wholes from all sides and bails out all the water with a bucket, then, O Mandit-putra ! Does that boat not rise up and float as soon as all the water is bailed out ?

(Mandit-putra—) Yes, *Bhante* ! It rises up and floats (as soon as that is done).

(Bhagavan—) Indeed, Mandit-putra ! In the same way even an ascetic who has restrained his self within his soul, who observes all the five self-regulations (*samiti*) including that of movement, who practices three restraints including that of mind as well as the nine related to celibacy, who is careful in all his activities including those of moving, stopping, sitting, turning and handling (lifting and placing) his dress, bowls, blanket, napkin and broom (and other ascetic equipment), is liable to a minute indeterminate quantum of subtle *Iryapathiki kriya* (infinitesimal *karmic* bondage due to careful movement) due to negligence just for a moment. This *kriya* (*karmic* bondage) gets touched and bonded during the first *Samaya*, experienced during the second *Samaya* and shed during the third *Samaya* (This means that—) the said touched-bonded-experienced-shed *kriya* turns into *non-karma* in the (immediate) future. That is why, O Mandit-putra ! It is said that as long as a living being (*jiva*) does not tremble always every moment... and so on up to... accordingly does not change its state (*bhaava*), he does at the last moment (of his life) undergo *ant-kriya* (the terminal-activity or liberation).

संवृत (संयत) आत्मा की निर्जरा-प्रक्रिया



चित्र परिचय-१२

Illustration No. 12

संवृत (संयत) आत्मा की निर्जरा-प्रक्रिया

एक बार गणधर मंडितपुत्र के प्रश्न का उत्तर देते हुए भगवान ने बताया-

(१) जैसे कोई जलती अग्नि की लपटो पर सूखे घास का पूला डाले, तो क्या वह घास शीघ्र ही जल जाती है ?

(२) जैसे तप हुए लोहे के गर्म तवे पर पानी की कुछ बूँदे डाले तो क्या वे बूँदे शीघ्र ही नष्ट हो जाती है ?

मण्डित पुत्र-हाँ हो जाती है।

(३) प्रभु ने कहा-इसी प्रकार इन्द्रियो को सयत रखने वाला, आरम्भ समारम्भ त्यागी सयमी को उसे जो भी कर्मबन्ध होता है, वह अल्पकालीन होता है, वह अपने शुभ निर्मल ध्यान से उन कर्मों की शीघ्र ही निर्जरा कर देता है। जैसे अग्नि मे सूखा ईधन जलकर भस्म हो जाता है।

(४) प्रभु ने पुन कर्मास्रव तथा कर्मनिर्जरा की प्रक्रिया समझाते हुए कहा-जैसे एक सरोवर म छिद्रो वाली कोई नौका उतार दे तो उस नौका मे छिद्रो द्वारा पानी भर जाता है। तथा नौका डूबने लगती है।

(५) यदि कोई उस नौका के छिद्र बन्द कर दे तथा नौका मे भरे जल को उलीच- उलीच कर बाहर फैक दे तो नौका जलरहित होकर पुन तैरने लग जाती है।

(६) मण्डित पुत्र ! इसी प्रकार तप सयम पूवक जीवन यात्रा करता हुआ सयत आत्मा को जो भी कर्मास्रव होता है, वह शीघ्र ही उनकी निर्जरा करके कर्म मुक्त हो जाता है।

-शतक ३ ३ ३ सूत्र १४

PROCESS OF SHEDDING KARMAS BY A RESTRAINED SOUL

Once Bhagavan said in answer to Ganadhar Manditputra's question—

(1) For example a man throws a bundle of hay in fire Does it not burn at once ?

(2) For example a man pours a drop of water on a red hot pan Does it not evaporate at once ?

Mandit-putra—Yes, It does

(3) Bhagavan said—In the same way the karmic bondage of an ascetic who has restrained his sense organs and abandoned all sinful activities is short lived With the help of his pious and sublime meditation he soon sheds the karmas as dry wood burns to ashes in fire

(4) Explaining the process of inflow and shedding of karmas Bhagavan added—For example a large boat with holes is placed in a pond, water seeps in and it starts sinking

(5) Some person plugs all the wholes and bails out all the water Now the boat again becomes free of water and floats

(6) Mandit-putra ! In the same way an ascetic who has restrained himself soon sheds whatever karmas he has acquired and gets liberated of all karmic bondage

—Shatak 3 lesson 3, Sutra 14

विवेचन : प्रस्तुत सूत्रो (सूत्र ११ से १४ तक) में प्रतिपादित तथ्यो का सार इस प्रकार है-(१) जब तक जीव कम्पन, चलन, स्पन्दन, भ्रमण, क्षोभन, उदीरण आदि विविध क्रियाएँ करता है, तब तक उस जीव को अन्तक्रिया नहीं हो सकती, क्योंकि इन क्रियाओ के कारण जीव आरम्भ, सरम्भ, समारम्भ में प्रवर्तमान होकर नाना जीवों को दु:ख पहुँचाता एव पीडित करता है। अतः क्रिया से कर्मबन्ध होते रहने के कारण वह अकर्मरूप (क्रियारहित) नही हो सकता।

(२) जीव सदा के लिए क्रिया न करे, ऐसी स्थिति आ सकती है और जब ऐसी स्थिति आती है, तब वह सर्वथा क्रियारहित होकर अन्तक्रिया (मुक्ति) प्राप्त कर सकता है।

(३) जब क्रिया नही होगी तब क्रियाजनित आरभादि नही होगा, और न ही उसके फलस्वरूप कर्मबन्ध होगा, तथा बँधे हुए शुक्लध्यान रूप आदि से शीघ्र ही भस्म हो जायेगे। ऐसी अकर्मस्थिति मे अन्तक्रिया होगी। इसे ठीक से समझाने के लिए तीन दृष्टान्त दिये है-(१) प्रथम घास के सूखे पूलो का, (२) दूसरा तपे हुए कडाह का (दोनों का भाव शुक्लध्यान स्थित आत्मा के बँधे कर्म भस्मसात् हो जाते हैं), और (३) तीसरा दृष्टान्त, सच्छिद्र नौका का। तीसरे दृष्टान्त का तात्पर्य इस प्रकार है जैसे, कोई व्यक्ति नौका के समस्त छिद्रों को बन्द कर नौका मे भरे हुए सारे पानी को उलीचकर बाहर निकाल दे तो वह नौका तुरन्त पानी के ऊपर आ जाती है; इसी प्रकार आस्रवरूप छिद्रो द्वारा कर्मरूपी पानी से भरी हुई जीवरूपी नौका को, कोई आत्म-संवृत एवं उपयोगपूर्वक समस्त क्रिया करने वाला अनगार आस्रवद्वारो (छिद्रो) को बन्द कर देता है और निर्जरा द्वारा सचित कर्मों को रिक्त कर देता है, ऐसी स्थिति मे केवल ऐर्यापथिकी क्रिया उसे लगती है, वह भी प्रथम समय में बद्ध-स्पृष्ट होती है, अर्थात् प्रथम समय मे वह कर्म रूप से परिणत होती है, इसलिए यह 'बद्ध' और जीवप्रदेशों के साथ उसका 'स्पर्श' होता है इसलिए वह 'स्पृष्ट' कहलाती है। द्वितीय समय बद्ध कर्म का वेदन होता है, तृतीय समय मे उसकी निर्जरा हो जाती है। इस प्रकार की अक्रिय-आस्रवरहित अकर्मरूप स्थिति में जीवरूपी नौका ऊपर आकर तैरती है। वह क्रियारहित व्यक्ति संसारसमुद्र से तिरकर अन्तक्रियारूप मुक्ति पा लेता है। *(टीकानुवाद सहित प बेचरदास जी, खण्ड २, पृष्ठ ७६-८०)*

ईरियावहिया = केवल कषाय शून्य योगो से होने वाली ईर्यापथिकी क्रिया। उपशान्तमोह, क्षीणमोह और सयोगीकेवली ११, १२ व १३वे गुणस्थानवर्ती वीतरागो मे जब तक ऐसी सूक्ष्म ईर्यापथिकी क्रिया रहती है, तब तक उनके सातावदेनीय कर्मबन्ध होता है।

Elaboration—The gist of the information contained in the aforesaid aphorisms (11 to 14) is—(1) As long as a living being trembles, pulsates, moves in all directions, gets agitated, gets intensely inspired, he is unable to undergo the terminal activity (liberation) because he continues to indulge in violent or sinful activities (*aarambh*), resolve to indulge in sinful activity (*samrambh*), and acts of tormenting (*samaarambh*) causing misery to many living beings. This leads to continued bondage of *karmas* and the state of absence of *karmas* cannot be achieved.

(2) The state of absence of all activity can be attained. When a being reaches that stage he may become absolutely inactive and undergo terminal activity (liberation)

(3) In absence of any activity there would be no entailing sin and no consequential bondage of *karmas*. The already bonded *karmas* will soon be destroyed by pious meditation (*shukla dhyan*) Such state of absence of *karmas* will lead to *ant-kriya*. In order to elaborate this three examples have been given—(1) First is of bundle of hay, and (2) the second is that of red hot pan (Both the examples explain the vanishing of *karmas* of a soul indulging in pure or pious meditation.) (3) The third example is of a boat with holes It conveys that when a person plugs all holes in a boat and bails out all water from it, the boat at once rises and floats. Likewise when a self-restrained ascetic indulges carefully in all activities, plugs the holes in the form of sources of inflow of *karmas* (*ashravadvar*) in the boat that is a living being (soul) and bails out the *karmas* through *nirjara* (shedding), he is only liable to *Iryapathiki kriya* (infinitesimal *karmic* bondage due to careful movement). This *kriya* (*karmic* bondage) gets touched and bonded during the first *Samaya*. In other words, during the first moment it is translated into *karmas* and touches the soul-space-points. In the second *Samaya* the so bonded *karmas* are experienced or suffered. And during the third *Samaya* they are shed. This way the non-active and *karma-free* boat that is soul rises and floats That absolutely inactive individual crosses the ocean of mundane existence and undergoes terminal activity to attain liberation. *(Tika with translation by Pt Bechardas, part-2, pp. 76-80)*

Iriyavahiya (iryapathiki kriya)—Careful movement with passionless association (*yoga*). As long as such subtle careful activity continues in the detached souls (*Vitarag*) at the 11th, 12th and 13th *Gunasthans* (levels of spiritual ascendance or level of purity of soul); *i.e.* *Upashantamoha* (having pacified fondness), *Ksheen-moha* (having destroyed fondness) and *Sayogi* (having association) *Kevali*; they have bondage of *Satavedaniya karmas* (pleasure causing *karmas*).

प्रमत्तसंयत और अप्रमत्तसंयत PRAMATTASAMYAT AND APRAMATTASAMYAT

१५. [प्र.] पमत्तसंजयस्स णं भंते ! पमत्तसंजमे वट्टमाणस्स सव्वा वि य णं पमत्तद्धा कालतो केवच्चिरं होति ?

[उ.] मंडियपुत्ता ! एगजीवं पडुच्च जहन्नेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं देसूणा पुव्वकोडी। णाणाजीवे पडुच्च सव्वद्धा।

१५. [प्र.] भगवन् ! प्रमत्तसंयम का पालन करते हुए प्रमत्तसंयमी का सब काल कितना होता है ?

[उ.] मण्डितपुत्र ! एक जीव की अपेक्षा जघन्य एक समय और उत्कृष्ट देशोन पूर्वकोटि-काल इतना प्रमत्तसंयम का काल होता है। अनेक जीवों की अपेक्षा सर्वकाल (सर्वाद्धा) होता है।

15. [Q.] *Bhante* ! What is the complete duration of negligent restraint (*pramatt samyam*) of an accomplished but negligent (*pramatt samyat*) ascetic ?

[Ans.] Mandit-putra ! With reference to a single being the complete duration of negligent restraint (*pramatt samyam*) is minimum one *Samaya* and maximum slightly more than one *Purva-koti* (a metaphoric unit of time). With reference to many beings it is all-time (*sarvaddha*).

१६. [प्र.] अप्पमत्तसंजयस्स णं भंते ! अप्पमत्तसंजमे वट्टमाणस्स सव्वा वि य णं अप्पमत्तद्धा कालतो केवच्चिरं होति ?

[उ.] मंडियपुत्ता ! एगजीवं पडुच्च जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेणं पुव्वकोडी देसूणा। णाणाजीवे पडुच्च सव्वद्धं।

सेवं भंते ! २ त्ति भगवं मंडियपुत्ते अणगारे समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ।

१६. [प्र.] भगवन् ! अप्रमत्तसयम का पालन करते हुए अप्रमत्तसंयमी का सब मिलाकर अप्रमत्तसयमकाल कितना होता है ?

[उ.] मण्डितपुत्र ! एक जीव की अपेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त और उत्कृष्ट देशोन पूर्वकोटि होता है। अनेक जीवो की अपेक्षा सर्वकाल होता है।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है !' यों कहकर भगवान मण्डितपुत्र अनगार श्रमण भगवान महावीर स्वामी को वन्दन-नमस्कार करते हैं। वन्दन-नमस्कार कर वे संयम और तप से अपनी आत्मा को भावित करते हुए विचरण करने लगे।

16. [Q.] *Bhante* ! What is the complete duration of non-negligent (alert) restraint (*apramatt samyam*) of an accomplished and alert (*apramatt samyat*) ascetic ?

[Ans.] Mandit-putra ! With reference to a single being the complete duration of negligent restraint (*pramatt samyam*) is minimum one *Antarmuhurt* (less than 48 minutes) and maximum slightly more than one *Purva-koti* (a metaphoric unit of time). With reference to many beings it is all-time (*sarvaddha*).

"*Bhante* ! Indeed that is so. Indeed that is so." With these words... and so on up to... ascetic Gautam resumed his activities.

विवेचन : प्रमत्तसंयम का काल—प्रमत्तसयम प्राप्त करने के पश्चात् यदि तुरन्त एक समय बीतने पर ही प्रमत्तसयमी की मृत्यु हो जाये, इस अपेक्षा से प्रमत्तसयमी का जघन्यकाल एक समय कहा है।

अप्रमत्तसंयम का जघन्यकाल—अन्तर्मुहूर्त्त इसलिए बताया गया है कि अप्रमत्त गुणस्थानवर्ती जीव अन्तर्मुहूर्त्त के बीच में मरता नहीं है। उपशमश्रेणी करता हुआ जीव बीच में ही काल कर जाये इसके लिए जघन्यकाल अन्तर्मुहूर्त्त का बताया है। इसका उत्कृष्ट देशोन पूर्वकोटि काल केवलज्ञानी की अपेक्षा से बताया गया है। क्योंकि केवली भी अप्रमत्तसयत की गणना मे आते हैं। छठे गुणस्थान से ऊपर के सभी गुणस्थान अप्रमत्तसयत हैं।

Elaboration—Duration of *pramatt samyat*—The minimum duration of negligent restraint (*pramatt samyam*) has been indicated as one *Samaya* keeping in view that an ascetic may die immediately on reaching the level of *pramatt samyam*

The minimum duration of alert-restraint (*pramatt samyam*) has been indicated as one *Antarmuhurt* keeping in view that an ascetic does not die within one *Antarmuhurt* of reaching the level of *apramatt samyam*. A soul rising the levels of pacification of *karmas* (*upasham shreni*) may die in the process, that is the reason the minimum duration is stated as one *Antarmuhurt*. The maximum duration of slightly more than one *Purva-koti* is in context of an omniscient, who too falls in the category of *apramatt samyat* All the *Gunasthans* higher than the sixth one refer to the *apramatt samyats*

लवणसमुद्र में वृद्धि–हानि कारण CAUSE OF EBB AND TIDE IN LAVAN SAMUDRA

१७. [प्र.] 'भंते ! त्ति भगवं गोतमे समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासि—कम्हा णं भंते ! लवणसमुद्दे चाउद्दस–ऽट्ठमुद्दिट्ठपुण्णमासिणीसु अतिरेयं वड्ढति वा हायति वा ?'

[उ.] लवणसमुद्दवत्तव्वया नेयव्वा जाव लोयट्ठिती। जाव लोयाणुभावे।

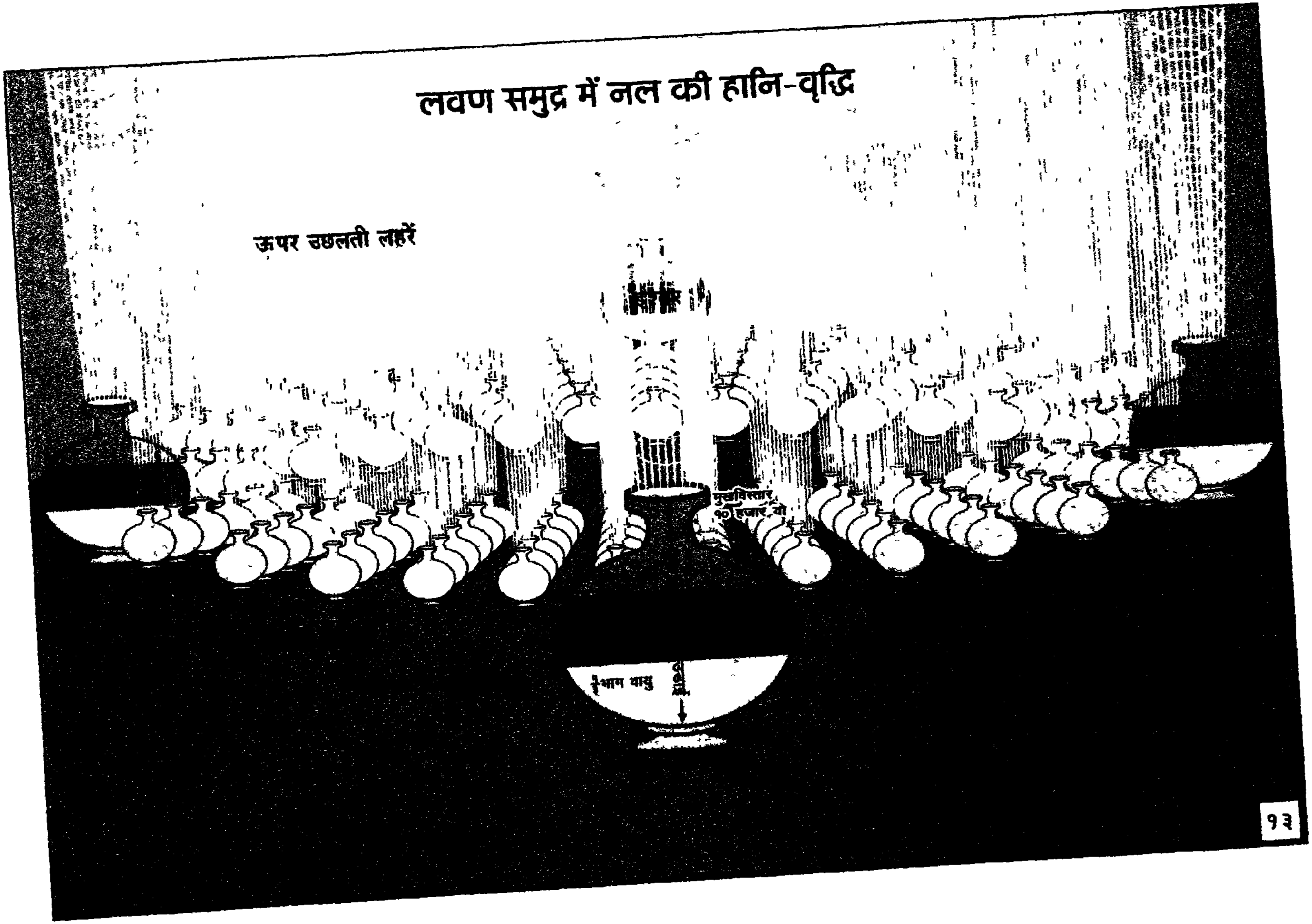
सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव विहरति।

॥ तइए सए : तइओ उद्देसो समत्तो ॥

१७. [प्र.] 'हे भगवन् !' यो कहकर भगवान गौतम ने श्रमण भगवान महावीर स्वामी को वन्दन-नमस्कार किया। वन्दन-नमस्कार करके इस प्रकार पूछा-'भगवन् ! लवणसमुद्र; चतुर्दशी, अष्टमी, अमावस्या और पूर्णमासी, इन चार तिथियो में क्यो अधिक बढता या घटता है ?'

[उ.] हे गौतम ! जीवाभिगमसूत्र में लवणसमुद्र के सम्बन्ध में जैसा कहा है, वैसा यहाँ भी जान लेना चाहिए, यावत् 'लोकस्थिति' से लोकानुभाव' शब्द तक कहना चाहिए।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है; यो कहकर यावत् गौतम स्वामी विचरण करते है।


लवण समुद्र में नल की हानि-वृद्धि
ऊपर उछलती लहरें
१३

चित्र परिचय-१३

Illustration No. 13

लवण समुद्र में हानि-वृद्धि का कारण

गौतम स्वामी ने पूछा- भंते ! चतुर्दशी, अष्टमी, अमावस्या तथा पूर्णमासी की तिथियो मे लवण समुद्र का जल घटता बढता क्यो है ?

उत्तर मे भगवान ने कहा-गौतम ! लवण समुद्र मे चारो दिशाओ मे चार महापाताल कलश है। जिनके नाम है-(१) वलय मुख (पूर्व), (२) ईश्वर (उत्तर), (३) यूपक (पश्चिम) और (४) केतुक (दक्षिण)। ये सभी १ लाख योजन गहरे (ऊँचे) है। जिनके एक भाग मे नीचे वायु, मध्य भाग मे जल एव वायु तथा ऊपरी भाग मे जल भरा रहता है। इनके अतिरिक्त ७८८४ छोटे छोटे पाताल कलश भी चारो दिशाओ मे है।

उक्त चारो तिथियो मे नीचे की वायु मे जब विक्षोभ पैदा होता है, तब वह जल ऊपर उछलता है। इसी कारण जल मे वृद्धि होती है। जब वायु निकलता है, तब हानि होती है। कभी -कभी लवण समुद्र मे किन्ही कारणो से विशेष विक्षोभ उत्पन्न होता है तो उसके जल की लहरे (शिखा) सोलह हजार योजन ऊँचाई तक भी चली जाती है। परन्तु कभी अपनी सीमा से बाहर निकलकर जम्बूद्वीप को डुबोती नही है क्योकि यहाँ अरिहत, भावितात्मा श्रमण आदि महापुरुषो का विचरण होता है। उनके प्रभाव से समुद्र का जल अपनी सीमा का उल्लघन नही कर पाता। चित्र मे चार महापाताल कलश तथा शेष लघु पाताल कलश दिखाये है।

शतक ३ उ ३ सूत्र १७ (सदर्भ जीवाभिगम सूत्र)

CAUSE OF EBB AND TIDE IN LAVAN SAMUDRA

Gautam Swami asked—'Bhante ! Why Lavan Samudra rises and falls on fourteenth, eighth, **amavasya** and **purnamasi** days of a fortnight ?'

Bhagavan replied—Gautam ! There are four Mahapatal Kalash in Lavan Samudra in all the four directions There names are—(1) Valayamukh (east), (2) Ishvar (north), (3) Yupak (west) and (4) Ketuk (south) Each of these is one hundred thousand Yojans deep (high) The lower most portion of these contains air, the middle portion contains air and water and the upper portion contains only water Besides these there are 7884 smaller Kalash too in all directions

Air disturbance in the lower most portions of these causes rise of water during the said dates When the air moves out there is a fall Sometimes for some reason when there is great disturbance in Lavan Samudra the height of its waves reaches up to sixteen thousand Yojans However, these upheavals do not inundate Jambu continent This is because here great souls like Arihants and sagacious ascetics move about Due to their influence the water of the sea does not cross its limit The illustration shows four Mahapatal Kalash and other small Kalash (pitcher like areas)

—Shatak 3, lesson 3, Sutra 17 (Ref Jivabhigam Sutra)

17. [Q.] *'Bhante !'* Addressing thus Gautam paid homage and obeisance to Bhagavan Mahavir and asked—*'Bhante* ! Why Lavan Samudra rises and falls excessively on these four days of a fortnight—fourteenth, eighth, new-moon day (*amavasya*) and full-moon day (*purnamasi*) ?

[Ans.] Gautam ! In this regard repeat what has been stated in *Jivabhigam Sutra* about Lavan Samudra... and so on up to... the words *Lokasthiti* to *Lokanubhaava*.

"Bhante ! Indeed that is so. Indeed that is so." With these words... and so on up to. ascetic Gautam resumed his activities

विवेचन : वृद्धि–हानि का कारण–जीवाभिगमसूत्रानुसार चतुर्दशी आदि तिथियो में वायु के विक्षोम से लवणसमुद्रीय जल मे वृद्धि–हानि होती है, क्योंकि लवणसमुद्र के बीच मे चारों दिशाओं मे चार महापातालकलश है, जिनका प्रत्येक का परिमाण १ लाख योजन है। उसके नीचे के विभाग में वायु है, बीच के विभाग में जल और वायु है और ऊपर के भाग मे केवल जल है। इन चार महापाताल कलशो के अतिरिक्त और भी ७,८८४ छोटे–छोटे पातालकलश है, जिनका परिमाण एक–एक हजार योजन का है, और उनमें भी क्रमशः वायु, जल–वायु और जल है। इनमे वायु–विक्षोभ के कारण इन तिथियो मे जल मे बढ–घट होती है। दस हजार योजन चौडी लवणसमुद्र की शिखा है, तथा उसकी ऊँचाई १६ हजार योजन है, उसके ऊपर आधे योजन मे जल की वृद्धि–हानि होती है। अरिहन्त आदि महापुरुषो के प्रभाव से लवणसमुद्र, जम्बूद्वीप को नही डुबा पाता तथा लोकस्थिति या लोकप्रभाव ही ऐसा है। *(जीवाभिगमसूत्र ३२४–३२५, पत्रांक ३०४–३०५), स्पष्टता के लिए सलग्न देखे।*

॥ तृतीय शतक : तृतीय उद्देशक समाप्त ॥

Elaboration—Cause of ebb and tide—According to *Jivabhigam Sutra* the rise and fall in Lavan Samudra (Salt Sea) on the aforesaid dates is due to air-disturbance This is because there are four *Mahapatal Kalash* (gigantic pitcher shaped areas) in Lavan Samudra in all the four directions. Size of each of these is equivalent to one hundred thousand *Yojans*. The lower most portion of these contains air, the middle portion contains air and water and the upper portion contains only water. Besides these *Mahapatal Kalash*, there are 7,884 smaller *Mahapatal Kalash* too, having a dimension of one thousand *Yojans* each. They too have air, air-water, and water in the aforesaid order. Air disturbance in these giant pitchers causes rise and fall of water during the said dates. The width of the *shikha* (edge or surface portion) of Lavan Samudra is ten thousand *Yojans* and its height is sixteen thousand *Yojans*. The said rise and fall is confined only to the top most half *Yojan* of this surface. It is due to the influence of great souls like *Arihants* that these upheavals do not inundate Jambu continent. Also, the structure and conditions of *Lok* is such. *(Jivabhigam Sutra 324-325, leaves 304-305. For clarity see illustration)*

● END OF THE THIRD LESSON OF THE THIRD CHAPTER ●

तृतीय शतक : चतुर्थ उद्देशक
THIRD SHATAK (Chapter Three) : FOURTH LESSON

यान YAAN (VEHICLE)

अनगार की वैक्रियशक्ति POWER OF TRANSMUTATION OF AN ASCETIC

१. [प्र.] अणगारे णं भंते ! भावियप्पा देवं वेउव्वियसमुग्घाएणं समोहयं जाणरूवेणं जायमाणं जाणइ पासइ ?

[उ.] गोयमा ! अत्थेगइए देवं पासइ, णो जाणं पासइ १, अत्थेगइए जाणं पासइ, नो देवं पासइ २; अत्थेगइए देवं पि पासइ, जाणं पि पासइ ३; अत्थेगइए नो देवं पासइ, नो जाणं पासइ ४।

१. [प्र.] भगवन् ! क्या भावितात्मा अनगार, वैक्रियसमुद्घात से समवहत-(उत्तर वैक्रियशरीर की रचना करके) यान मे बैठकर जाते हुए देव को जानता-देखता है ?

[उ.] गौतम ! (१) कोई (अनगार) देव को तो देखता है, किन्तु यान को नहीं देखता; (२) कोई यान को देखता है, किन्तु देव को नही देखता, (३) कोई देव को भी देखता है और यान को भी देखता है, (४) कोई न देव को देखता है और न यान को देखता है।

1. [Q.] *Bhante* ! Does a sagacious ascetic (*Bhaavitatma Anagar*) see and know a god going in a celestial vehicle (*yaan*) created by his power of transmutation (*Vaikriya Samudghat*) ?

[Ans.] Gautam ! (1) Some ascetic sees the god but not the vehicle; (2) Some ascetic sees the vehicle but not the god; (3) Some ascetic sees the god as well as the vehicle, (4) Some ascetic neither sees the god nor the vehicle.

२. [प्र.] अणगारे णं भंते ! भावियप्पा देविं वेउव्वियसमुग्घाएणं समोहयं जाणरूवेणं जायमाणिं जाणइ पासइ ?

[उ.] गोयमा ! एवं चेव।

२. [प्र.] भगवन् ! क्या भावितात्मा अनगार, वैक्रियसमुद्घात करके और यानरूप से जाती हुई देवी को जानता-देखता है ?

[उ.] गौतम ! जैसा देव के विषय में कहा, वैसा ही देवी के विषय में भी जानना चाहिए।

2. [Q.] *Bhante* ! Does a sagacious ascetic (*Bhaavitatma Anagar*) see and know a goddess going in a celestial vehicle (*yaan*) created by his power of transmutation (*Vaikriya Samudghat*) ?

[Ans.] Gautam ! What has been said about a god should be repeated here for a goddess.

३. [प्र.] अणगारे णं भंते ! भावियप्पा देवं सदेवीयं वेउव्वियसमुग्घाएणं समोहयं जाणरूवेणं जायमाणं जाणइ पासइ ?

[उ.] गोयमा ! अत्थेगइए देवं सदेवीयं पासइ, नो जाणं पासइ। एएणं अभिलावेणं चत्तारि भंगा।

३. [प्र.] भगवन् ! भावितात्मा अनगार, वैक्रियसमुद्घात से समवहत तथा यानरूप से जाते हुए, देवी-सहित देव को जानता-देखता है ?

[उ.] गौतम ! कोई (भावितात्मा-अनगार) देवी-सहित देव को तो देखता है, किन्तु यान को नहीं देखता, इत्यादि पूर्वसूत्र के अनुसार चार भग कहने चाहिए।

3. [Q.] *Bhante* ! Does a sagacious ascetic (*Bhaavitatma Anagar*) see and know a god going with goddess in a celestial vehicle (*yaan*) created by his power of transmutation (*Vaikriya Samudghat*) ?

[Ans.] Gautam ! (1) Some ascetic sees the god and goddess but not the vehicle, and so on, the four alternatives should be repeated as aforesaid.

४. [प्र. १] अणगारे णं भंते ! भावियप्पा रुक्खस्स किं अंतो पासइ, बाहिं पासइ ? [उ.] चउभंगो।

[प्र. २] एवं किं मूलं पासइ, कंदं पासइ ? [उ.] चउभंगो। मूलं पासइ खंधं पासइ ? चउभंगो। एवं मूलेणं बीजं संजोएयव्वं । एवं कंदेण वि समं संजोयएयव्वं जाव बीयं।

एवं जाव पुप्फेण समं बीयं संजोएयव्वं। एवं मूलेणं बीजं संजोएयव्वं। एवं कंदेण वि समं संजोएयव्वं जाव बीयं। एवं जाव पुप्फेण समं बीयं संजोएयव्वं।

[प्र. ३] अणगारे णं भंते ! भावियप्पा रुक्खस्स किं फलं पासइ बीयं पासइ ? [उ.] चउभंगो।

४. [प्र. १] भगवन् ! भावितात्मा अनगार क्या वृक्ष के आन्तरिक भाग को देखता है अथवा (केवल) बाह्य भाग को देखता है ? [उ.] यहाँ भी पूर्वसूत्र के अनुसार चार भंग कहने चाहिए।

[प्र. २] इसी तरह क्या वह (केवल) मूल को देखता है, (अथवा) कन्द को (भी) देखता है ? तथा क्या वह (केवल) मूल को देखता है, अथवा स्कन्ध को (भी) देखता है ? [उ.] गौतम ! (दोनों प्रश्नों के उत्तर मे चार-चार भंग पूर्ववत् कहने चाहिए।

इसी प्रकार मूल के साथ बीज का संयोजन करके (पूर्ववत् पृच्छा करके उत्तर के रूप में) चार भंग कहने चाहिए। तथा कन्द के साथ यावत् बीज तक (सयोगी चतुर्भंग) का संयोजन कर लेना चाहिए। इसी तरह यावत् पुष्प के साथ बीज (के संयोगी-असंयोगी चतुर्भंग) का संयोजन कर लेना चाहिए।

[प्र. ३] भगवन् ! क्या भावितात्मा अनगार वृक्ष के (केवल) फल को देखता है, अथवा बीज को (भी) देखता है ? [उ.] गौतम ! (पूर्वोक्त प्रकार से) चार भंग कहने चाहिए।

4. [Q. 1] *Bhante* ! Does a sagacious ascetic (*Bhaavitatma Anagar*) see the internal portion of a tree or just its external portion ? **[Ans.]** Here also the four aforesaid alternatives should be repeated.

[Q. 2] In the same way does he see (only) the root (*mula*) or (also) the trunk (*kand*) ? Also does he see (only) the root (*mula*) or (also) the thick branch (*skandh*) ? **[Ans.]** Repeat the four alternatives for both.

In the same way four alternatives should be stated for the combination of root and seed (*beej*). Also for the combinations of two up to seed with trunk (*kand*) the same alternatives should be stated. The same process should be extended up to flower (*pushp*) with seed (*beej*).

[Q. 3] Bhante ! Does a sagacious ascetic (*Bhaavitatma Anagar*) see (only) the fruit (*phal*) of a tree or (also) the seed (*beej*) ? **[Ans.]** Here also the four aforesaid alternatives should be repeated.

विवेचन : सूत्र ४ मे कथित वृक्ष के मूल, कन्द आदि इन दस पदो के द्विक सयोगी (दो के योग से) ४५ भंग इस प्रकार होते हैं। यथा–१ मूल–कन्द (धड) (२) मूल–स्कन्ध (मोटी डाल), (३) मूल–छाल (त्वचा), (४) मूल–शाखा (डाली) (५) मूल–प्रवाल (कोपल), (६) मूल–पत्र, (७) मूल–पुष्प, (८) मूल–फल, (९) मूल–बीज। (१०) कन्द–स्कन्ध, (११) कन्द–छाल, (१२) कन्द–शाखा, (१३) कन्द–प्रवाल, (१४) कन्द–पत्र, (१५) कन्द–पुष्प, (१६) कन्द–फल, (१७) कन्द–बीज। (१८) स्कन्ध–छाल, (१९) स्कन्ध–शाखा (२०) स्कन्ध–प्रवाल, (२१) स्कन्ध–पत्र, (२२) स्कन्ध–पुष्प, (२३) स्कन्ध–फल, (२४) स्कन्ध–बीज। (२५) छाल–शाखा, (२६) छाल–प्रवाल, (२७) छाल–पत्र, (२८) छाल–पुष्प, (२९) छाल–फल, (३०) छाल–बीज, (३१) शाखा–प्रवाल, (३२) शाखा–पत्र, (३३) शाखा–पुष्प, (३४) शाखा–फल, (३५) शाखा–बीज, (३६) प्रवाल–पत्र, (३७) प्रवाल–पुष्प, (३८) प्रवाल–फल, (३९) प्रवाल–बीज। (४०) पत्र–पुष्प, (४१) पत्र–फल, (४२) पत्र–बीज। (४३) पुष्प–फल, (४४) पुष्प–बीज, (४५) फल–बीज।

इन ४५ ही पदो मे से प्रत्येक पद को लेकर चौभगी कहनी चाहिए। *(वृत्ति, पत्राक १८९)*

क्षयोपशम की विचित्रता के कारण अवधिज्ञान विचित्र प्रकार का होता है। कोई अवधिज्ञानी सिर्फ विमान (यान) को और कोई सिर्फ विमान मे बैठे देव को, कोई दोनों को देखता और कोई दोनो को नही जानता–देखता। इसी कारण चौभंगी द्वारा प्रस्तुत प्रश्नो का समाधान किया गया है। इन प्रश्नोत्तरो से अवधिज्ञान की तरतमता बताई गई है।

Elaboration—There are 45 alternatives of the combination of two for all the parts of a tree including root and trunk. They are listed here—(1) root (*mula*)-trunk (*kand*), (2) root (*mula*)-thick branch (*skandh*), (3) root (*mula*)-bark (*chhaal*), (4) root (*mula*)-branch (*shakha*), (5) root (*mula*)-sprout (*praval*), (6) root (*mula*)-leaf (*patra*), (7) root (*mula*)-flower (*pushp*), (8) root (*mula*)-fruit (*phal*), (9) root (*mula*)-seed (*beej*), (10) trunk (*kand*)-thick branch (*skandh*), (11) trunk (*kand*)-bark (*chhaal*), (12) trunk

(*kand*)-branch (*shakha*), (13) trunk (*kand*)-sprout (*praval*), (14) trunk (*kand*)-leaf (*patra*), (15) trunk (*kand*)-flower (*pushp*), (16) trunk (*kand*)-fruit (*phal*), (17) trunk (*kand*)-seed (*beej*), (18) thick branch (*skandh*)-bark (*chhaal*), (19) thick branch (*skandh*)-branch (*shakha*), (20) thick branch (*skandh*)-sprout (*praval*), (21) thick branch (*skandh*)-leaf (*patra*), (22) thick branch (*skandh*)-flower (*pushp*), (23) thick branch (*skandh*)-fruit (*phal*), (24) thick branch (*skandh*)-seed (*beej*), (25) bark (*chhaal*)-branch (*shakha*), (26) bark (*chhaal*)-sprout (*praval*), (27) bark (*chhaal*)-leaf (*patra*), (28) bark (*chhaal*)-flower (*pushp*), (29) bark (*chhaal*)-fruit (*phal*), (30) bark (*chhaal*)-seed (*beej*), (31) branch (*shakha*)-sprout (*praval*), (32) branch (*shakha*)-leaf (*patra*), (33) branch (*shakha*)-flower (*pushp*), (34) branch (*shakha*)-fruit (*phal*), (35) branch (*shakha*)-seed (*beej*), (36) sprout (*praval*)-leaf (*patra*), (37) sprout (*praval*)-flower (*pushp*), (38) sprout (*praval*)-fruit (*phal*), (39) sprout (*praval*)-seed (*beej*), (40) leaf (*patra*)-flower (*pushp*), (41) leaf (*patra*)-fruit (*phal*), (42) leaf (*patra*)-seed (*beej*), (43) flower (*pushp*)-fruit (*phal*), (44) flower (*pushp*)-seed (*beej*), and (45) fruit (phal)-seed (*beej*)

Of these 45 combination each should be stated with aforesaid four alternatives. *(Vritti, leaf 189)*

Due to the strangeness of destruction-cum-pacification (*kshayopasham) Avadhi-jnana* is of strange types. Some *Avadhi-jnani* sees and knows only the celestial vehicle, some only the god sitting in it, some both and some none That is the reason for explaining these queries with four alternatives. These questions and answers explain the comparative degree of *Avadhi-jnana*

वायुकाय का वैक्रिय रूप TRANSMUTED FORM OF AIR-BODIED BEINGS

५. [प्र.] पभू णं भंते ! वाउकाए एगं महं इत्थिरूवं वा पुरिसरूवं वा हत्थिरूवं वा जाणरूवं वा एवं जुग्ग–गिल्लि–थिल्लि–सीय–संदमाणियरूवं वा विउव्वित्तए ?

[उ.] गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे। वाउक्काए णं विकुव्वमाणे एगं महं पडागासंठियं रूवं विकुव्वइ।

५. [प्र.] भगवन् ! क्या वायुकाय एक बडा स्त्रीरूप या पुरुषरूप, हस्तिरूप अथवा यानरूप, तथा युग्य (रिक्शा गाडी अथवा ताँगा जैसी सवारी), गिल्ली (हाथी की अम्बाड़ी), थिल्ली (घोड़ा गाडी बग्घी), शिविका (डोली), स्यन्दमानिका (म्याना) इन सबके रूपों की विकुर्वणा कर सकता है ?

[उ.] गौतम ! ऐसा सम्भव नहीं है। किन्तु हाँ, वायुकाय यदि विकुर्वणा करे तो एक बड़ी पताका के आकार के रूप की विकुर्वणा कर सकता है ?

5. [Q.] *Bhante* ! Is a *vayukaya* (air-bodied being) capable of transmuting (*vikurvana*) into the following forms—a giant woman or man, elephant, vehicle, *yugya* (a cart drawn by some one), *gilli* (howdah on an elephant), *thilli* (chariot or buggy), *shivika* (palanquin), or *syandamanika* (large palanquin) ?

[Ans.] Gautam ! It is not possible. However, if at all an air-bodied being does transmute it take the form of a large banner or flag.

६. [प्र. १] पभू णं भंते ! वाउकाए एगं महं पडागासंठियं रूवं विउव्वित्ता अणेगाइं जोयणाइं गमित्तए ?

[उ.] हंता, पभू।

[प्र. २] से भंते ! किं आयड्ढीए गच्छइ, परिड्ढीए गच्छइ ?

[उ.] गोयमा ! आयड्ढीए गच्छइ, णो परिड्ढिए गच्छइ।

जहा आयड्ढीए एवं चेव आयकम्मुणा वि, आयप्पओगेण वि भाणियव्वं।

[प्र. ३] से भंते ! किं ऊसिओदयं गच्छइ, पयओदयं गच्छइ ?

[उ.] गोयमा ! ऊसिओदयं पि गच्छइ, पयओदयं पि गच्छइ।

[प्र. ४] से भंते ! किं एगओ पडागं गच्छइ, दुहओ पडागं गच्छइ ?

[उ.] गोयमा ! एगओ पडागं गच्छइ, नो दुहओ पडागं गच्छइ।

[प्र. ५] से णं भंते ! किं वाउकाए पडागा ?

[उ.] गोयमा ! वाउकाए णं से, नो खलु सा पडागा।

६. [प्र. १] भगवन् ! क्या वायुकाय एक बडी पताका के आकार जैसे रूप की विकुर्वणा करके अनेक योजन तक गमन करने मे समर्थ है ?

[उ.] हाँ, समर्थ है ?

[प्र. २] भगवन् ! क्या वह (वायुकाय) अपनी ही ऋद्धि (शक्ति) से गति करता है अथवा पर की ऋद्धि (शक्ति) से गति करता है ?

[उ.] गौतम ! वह अपनी ऋद्धि से गति करता है, पर की ऋद्धि से गति नही करता।

जैसे वायुकाय आत्म-ऋद्धि से गति करता है, वैसे वह आत्म-कर्म (अपने कर्म) से एवं आत्म-प्रयोग (अपनी क्रिया) से भी गति करता है, यह कहना चाहिए।

[प्र. ३] भगवन् ! क्या वह वायुकाय उच्छ्रित पताका (ऊँची-उठी हुई ध्वजा) के आकार से गति करता है, या पतित-(पडी हुई) पताका के आकार से गति करता है ?

[उ.] गौतम ! वह उच्छ्रित पताका और पतित पताका, इन दोनो के आकार से गति करता है।

[प्र. ४] भगवन् ! क्या वायुकाय एक दिशा में एक पताका के समान रूप बनाकर गति करता है अथवा दो दिशाओं मे (एक साथ) दो पताकाओं के समान रूप बनाकर गति करता है ?

[उ.] गौतम ! वह (वायुकाय), एक पताका के समान रूप बनाकर गति करता है, किन्तु दो दिशाओ में (एक साथ) दो पताकाओं के समान रूप बनाकर गति नहीं करता।

[प्र. ५] भगवन् ! उस समय क्या वह वायुकाय है या पताका है ?

[उ.] गौतम ! वह वायुकाय है, किन्तु पताका नही है।

6. [Q. 1] *Bhante* ! Is a *vayukaya* (air-bodied being) transmuting into a large banner capable of travelling a distance of many *Yojans* ?

[Ans.] Yes, it is capable.

[Q. 2] *Bhante* ! Does that *vayukaya* (air-bodied being) move with its own power or that of others ?

[Ans.] Gautam ! It moves with its own power and not with that of others.

As *vayukaya* (air-bodied being) moves with its own power so also it moves with its own *karma* and its own effort.

[Q. 3] *Bhante* ! Does that *vayukaya* (air-bodied being) move in the form of a raised flag or a downcast flag ?

[Ans.] Gautam ! It moves both in the form of a raised flag as well as a downcast flag ?

[Q. 4] *Bhante* ! Does that *vayukaya* (air-bodied being) move in one direction in the form of one type of flag or in two directions at once in the form of two types of flag ?

[Ans.] Gautam ! It moves only in one direction in the form of one type of flag and not in two directions at once in the form of two types of flag ?

[Q. 5] *Bhante* ! At that time is it *vayukaya* (air-bodied being) or a flag ?

[Ans.] Gautam ! It is *vayukaya* (air-bodied being) and not a flag.

विवेचन : वायुकाय वैक्रियशरीर सम्पन्न है तथा उसका संस्थान पताका के आकार का है। वृत्तिकार के अनुसार चारो पताका की आकृति इस प्रकार बनती है। ऊर्ध्व पताका, पतित पताका, एकदिशि पताका, दो दिशि पताका (पृष्ठ ५०२)

Elaboration—*Vayukaya* (air-bodied being) has a transmutable body and its structure is like a flag. According to the commentator (*Vritti*) the shapes it takes are—raised or erect flag, downcast flag, unidirectional flag, bi-directional flag (p. 502).

७. [प्र.] पभू णं भंते ! बलाहए एगं महं इत्थिरूवं वा जाव संदमाणियरूवं वा परिणामेत्तए ?

[उ.] हंता, पभू।

८. [प्र. १] पभू णं भंते ! बलाहगं एगं महं इत्थिरूवं परिणामेत्ता अणेगाइं जोयणाइं गमित्तए ?

[उ.] हंता, पभू।

७. [प्र.] भगवन् ! क्या बलाहक (मेघ) एक बड़ा स्त्रीरूप यावत् स्यन्दमानिका (म्याने) रूप में परिणत होने मे समर्थ है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! ऐसा करने मे समर्थ है।

८. [प्र. १] भगवन् ! क्या बलाहक एक बडे स्त्रीरूप मे परिणत होकर अनेक योजन तक जाने में समर्थ है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! वह वैसा करने में समर्थ है।

7. [Q.] *Bhante* ! Is a *balahak* (cloud) capable of transmuting (*vikurvana*) into the following forms—a giant woman... and so on up to.. *syandamanika* (large palanquin) ?

[Ans.] Yes, Gautam ! It is capable of doing that.

8. [Q. 1] *Bhante* ! Is a *balahak* (cloud) transmuting into a giant woman . and so on up to . *syandamanika* (large palanquin) capable of travelling a distance of many *Yojans* ?

[Ans.] Yes, it is capable.

[प्र. २] से भंते ! किं आयड्ढीए गच्छइ, परिड्ढीए गच्छइ ?

[उ.] गोयमा ! नो आयड्ढीए गच्छति, परिड्ढीए गच्छइ। एवं नो आयकम्मुणा, परकम्मुणा। नो आयपयोगेणं, परप्पयोगेणं ऊसितोदयं वा गच्छइ पयओदयं वा गच्छइ।

[प्र. २] भगवन् ! क्या वह मेघ अपनी ऋद्धि से गति करता है या पर-ऋद्धि से।

[उ.] गौतम ! वह अपनी ऋद्धि से गति नही करता, पर-ऋद्धि से गति करता है। इसी तरह वह आत्म-कर्म से और आत्म-प्रयोग से गति नही करता, किन्तु पर-कर्म से और पर-प्रयोग से गति करता है। वह उच्छ्रित पताका अथवा पतित पताका दोनों में से किसी एक के आकार रूप से गति करता है।

[Q. 2] *Bhante* ! Does that *balahak* (cloud) move with its own power or that of others ?

[Ans.] Gautam ! It does not move with its own power but with that of others. In the same way it does not move with its own *karma* and its own

effort but with those of others. It moves either in the shape of a raised flag or a downcast flag.

९. [प्र.] से भंते किं बलाहए, इत्थी ?

[उ.] गोयमा ! बलाहए णं से, णो खलु सा इत्थी। एवं पुरिसे, आसे, हत्थी।

९. [प्र.] भगवन् ! उस समय वह बलाहक क्या स्त्री है ?

[उ.] गौतम ! वह बलाहक (मेघ) है, स्त्री नही है। इसी तरह बलाहक पुरुष, अश्व या हाथी नहीं है, (किन्तु बलाहक है।)

9. [Q.] *Bhante* ! At that time is that *balahak* (cloud) a woman ?

[Ans.] Gautam ! It is *balahak* (cloud) and not a woman. In the same way it is not man, horse or elephant (but cloud).

१०. [प्र.] पभू णं भंते ! बलाहए एगं महं जाणरूवं परिणामेत्ता अणेगाइं जोयणाइं गमित्तए ?

[उ.] जहा इत्थिरूवं तहा भाणियव्वं। णवरं एगओ चक्कवालं पि, दुहओ चक्कवालं पि भाणियव्वं। जुग्ग–गिल्लि–थिल्लि–सीया–संदमाणियाणं तहेव।

१०. [प्र.] भगवन् ! क्या वह बलाहक, एक बडे (शकट–गाडी) के रूप में परिणत होकर अनेक योजन तक जा सकता है ?

[उ.] गौतम ! जैसे स्त्री के सम्बन्ध में कहा, उसी तरह यान के सम्बन्ध मे भी कहना चाहिए। परन्तु इतनी विशेषता है कि वह यान के एक ओर चक्र (पहिया) वाला होकर भी चल सकता है और दोनो चक्र वाला होकर भी चल सकता है। इसी तरह युग्य, गिल्ली, थिल्ली, शिविका और स्यन्दमानिका के रूपो के सम्बन्ध मे भी जानना चाहिए।

10. [Q.] *Bhante* ! Can that cloud, transformed into a large vehicle, travel many *Yojans* ?

[Ans.] Gautam ! What has been said in context of woman should be repeated for vehicle The difference is that it can move with wheels on one side as well as with wheels on both sides. The same should be repeated for *yugya* (a cart drawn by some one), *gilli* (howdah on an elephant), *thilli* (chariot or buggy), *shivika* (palanquin), or *syandamanika* (large palanquin).

विवेचन : बलाहक–आकाश में अनेको रूपो मे दृश्यमान मेघ अजीव होने से उनमें विकुर्वणा (रूप–निर्माण) शक्ति नहीं है, किन्तु स्वभावत: रूप–परिणमन मेघों मे भी होता है। इसीलिए यहाँ 'विउव्वित्तए' शब्द के बदले 'परिणमेत्तए' शब्द दिया गया है। मेघ स्त्री आदि अनेक रूपो में परिणत होकर, अचेतन होने से आत्म–ऋद्धि, आत्म–कर्म और आत्म–प्रयोग से गति न करके, वायु, देव आदि से प्रेरित होकर पर–ऋद्धि, पर–कर्म और पर–प्रयोग से अनेक योजन तक गति कर सकता है।

Elaboration—*Balahak*—Clouds visible in a variety of forms in the sky are lifeless and thus they do not have the power of transmutation. However, natural transformation takes place in clouds as well. For this reason in place of *viuvvittaye* (transmuted) the term used here is *parinammetaye* (transformed) Transforming into a variety of shapes, including that of a woman, cloud moves. But it does not move of its own power, own *karma* and its own effort. It moves under divine influence or other factors including air covering large distances.

उत्पन्न होने योग्य जीवों की लेश्या LESHYA OF SOULS DESTINED TO BE BORN

११. [प्र.] जीवे णं भंते ! जे भविए नेरइएसु उववज्जित्तए से णं भंते ! किंलेसेसु उववज्जति ?

[उ.] गोयमा ! जल्लेसाइं दव्वाइं परियाइत्ता कालं करेइ तल्लेसेसु उववज्जइ। तं जहा—कण्हलेसेसु वा नीललेसेसु वा काउलेसेसु वा। एवं जस्स जा लेस्सा सा तस्स भाणियव्वा।

१२. [प्र.] जीवे णं भंते ! जे भविए जोइसिएसु उववज्जित्तए पुच्छा ?

[उ.] गोयमा ! जल्लेसाइं दव्वाइं परियाइत्ता कालं करेइ तल्लेसेसु उववज्जइ, तं जहा—तेउलेस्सेसु।

११. [प्र.] भगवन् ! जो (मरणोन्मुख) जीव, नैरयिको मे उत्पन्न होने वाला है, वह कौन–सी लेश्या वालों मे उत्पन्न होता है?

[उ.] गौतम ! वह जीव जिस लेश्या के द्रव्यो को ग्रहण करके काल करता है, उसी लेश्या वाले नारकों मे उत्पन्न होता है। यथा–कृष्णलेश्या वालो में, नीललेश्या वालों मे, अथवा कापोतलेश्या वालों मे। इस प्रकार जो जिसकी लेश्या हो, उसकी वह लेश्या कहनी चाहिए।

१२. [प्र.] भगवन् ! जो जीव ज्योतिष्को मे उत्पन्न होने वाला है, वह किन लेश्याओ मे उत्पन्न होता है?

[उ.] गौतम ! जिस लेश्या के द्रव्यो को ग्रहण करके जीव काल करता है, वैसी लेश्या वालों मे वह उत्पन्न होता है। जैसे–तेजोलेश्या वालो में।

11. [Q.] *Bhante* ! In which *leshya* (soul complexion) group is born a being (about to die) destined to be born among infernal beings ?

[Ans.] Gautam ! It is born among the same *leshya* (soul complexion) group of infernal beings as the *leshya* (hue) of the matter particles (*karmas*) he acquires at the time of death. For example—among those with *Krishnaleshya*, *Neel-leshya* or *Kapot-leshya*. This way the *leshya* specific to each should be stated.

12. [Q.] *Bhante* ! In which *leshya* (soul complexion) group is born a being (about to die) destined to be born among *Jyotishks* (Stellar gods) ?

[Ans.] Gautam ! It is born among the same *leshya* (soul complexion) group of *Jyotishks* (Stellar gods) as the *leshya* (hue) of the matter particles (*karmas*) he acquires at the time of death. For example—among those with *Tejoleshya*.

१३. [प्र.] जीवे णं भंते ! जे भविए वेमाणिएसु उववज्जित्तए से णं भंते ! किंलेस्सेसु उववज्जइ ?

[उ.] गोयमा ! जल्लेसाइं दव्वाइं परियाइत्ता कालं करेइ तल्लेसेसु उववज्जइ, तं जहा—तेउलेस्सेसु वा पम्हलेसेसु वा सुक्कलेसेसु वा।

१३. [प्र.] भगवन् ! जो जीव वैमानिक देवों में उत्पन्न होने वाला है, वह किस लेश्या वालों में उत्पन्न होता है ?

[उ.] गौतम ! जिस लेश्या के द्रव्यो को ग्रहण करके जीव काल करता है, उसी लेश्या वालों में वह उत्पन्न होता है। जैसे—तेजोलेश्या, पद्मलेश्या अथवा शुक्ललेश्या वालों में।

13. [Q.] *Bhante* ! In which *leshya* (soul complexion) group is born a being (about to die) destined to be born among *Vaimanik Devs* (Vehicular gods) ?

[Ans.] Gautam ! It is born among the same *leshya* (soul complexion) group of *Vaimanik Devs* (Vehicular gods) as the *leshya* (hue) of the matter particles (*karmas*) he acquires at the time of death. For example—among those with *Tejoleshya, Padmaleshya* or *Shuklaleshya*.

विवेचन : जैनदर्शन का एक निश्चित एवं अत्यन्त महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त है कि अन्तिम समय में जिस लेश्या में जीव मरता है, अर्थात् अन्तिम समय मे जिस प्रकार के परिणाम, मनोभाव होते हैं, वह मरकर उसी लेश्या वाले जीवो में उत्पन्न होता है। इसी दृष्टिकोण को लेकर शास्त्रकार ने इसी सिद्धान्त वाक्य को पुन -पुन. दोहराया है—**'जल्लेसाइं दव्वाइं परिआइत्ता कालं करेइ, तल्लेसेसु उववज्जइ।'** इसी सिद्धान्त को लोक भाषा में 'जैसी मति वैसी गति' कहा जाता है।

यहाँ विशेष बात ध्यान देने की है कि—जो देहधारी मरणोन्मुख है, उसका मरण बिल्कुल अन्तिम उसी लेश्या में हो सकता है, जिस लेश्या के साथ उसका सम्बन्ध कम से कम अन्तर्मुहूर्त्त तक रहा हो। इसका अर्थ है—कोई भी मरणोन्मुख प्राणी लेश्या के साथ सम्पर्क के प्रथम पल मे ही मर नही सकता, अपितु जब इसकी कोई अमुक लेश्या निश्चित हो जाती है, तभी वह अपने पुराने शरीर को छोडकर नया शरीर धारण करने जा सकता है और लेश्या के निश्चित होने मे कम से कम अन्तर्मुहूर्त लगता है। अर्थात् लेश्याओ के परिणाम को अन्तर्मुहूर्त्त बीत जाने पर और अन्तर्मुहूर्त्त शेष रहने पर जीव परलोक मे जाते है।' उदाहरण रूप—ज्योतिष्क देवो में तेजोलेश्या है। जिस जीव ने ज्योतिष्क देव का आयुष्य बन्ध किया है, वह मृत्यु के अन्तिम समय मे तेजोलेश्या के द्रव्यो को ग्रहण कर उसके भाव मे परिणत होकर मरेगा और मृत्यु के पश्चात् ज्योतिष्क देव रूप में उत्पन्न होगा। उपर्युक्त तथ्य मनुष्यों और तिर्यंचो के लिए समझना चाहिए, क्योंकि उनकी लेश्याएँ बदलती रहती हैं। देवों और नारकों की लेश्या जीवनपर्यन्त बदलती नहीं, वह एक—सी रहती है। अतः कोई भी देव या नारक अपनी लेश्या का अन्त आने में

अन्तर्मुहूर्त शेष रहता है, तभी वह काल करता है, उससे पहले नही। (वृत्ति, पत्रांक १८८) आचार्य मलयगिरि ने प्रज्ञापनासूत्र की वृत्ति मे लिखा है–लेश्या के परमाणु जीव में उद्‌भूत हुए कषाय को उत्तेजित या मन्द करते हैं। (प्रज्ञापना, पद १७, वृत्ति) मरण विज्ञान की दृष्टि से यह सिद्धान्त बडा मननीय है।

Elaboration—One of the irrevocable and important principles of Jainism is that a being is reborn among a group or genus having the same *leshya* that he had at the last moment of his life. In other words, as his attitude and thoughts were at the moment of death so is his destiny. With this view the author has often repeated this principle The same principle in common parlance is 'as you sow, so you will reap'.

Special attention should be given to an important part of this principle—a living being about to die can only die in a particular *leshya* which has influenced him at least for one *Antarmuhurt*. This means that a living being cannot die in the first moment of his contact with a specific *leshya*. He abandons his existing body and acquires a new body only when he has been fixed in some particular *leshya* This process of fixation essentially takes one *Antarmuhurt* to conclude This means that a living being reincarnates when at least one *Antarmuhurt* has passed since his entry into a *leshya* and at least one *Antarmuhurt* is left in conclusion of its predetermined duration For example, the Stellar gods have *Tejoleshya*. A soul that has acquired *karmas* responsible for rebirth among Stellar gods will acquire particles of *Tejoleshya* at the last moment of his life and will die when he is fixed in that *leshya*, to reincarnate as a Stellar god. The aforesaid principle is applicable only to animals and human beings because only in them the *leshyas* change. In infernal and divine beings *leshya* does not change throughout life. Therefore a divine being or an infernal being dies only when one *Antarmuhurt* remains in the end of his *leshya*, not before that (*Vritti*, leaf 188). Acharya Malayagiri has stated in his *Vritti* of *Prajnapana Sutra*—The ultimate-particles of *leshya* add to or reduce the intensity of passions (*Prajnapana*, Pad-17, *Vritti*). This principle is worth exploration from the angle of post-death studies.

अनगार की विकुर्वणा शक्ति POWER OF TRANSMUTATION OF AN ASCETIC

१४. [प्र.] अणगारे णं भंते ! भावियप्पा बाहिरए पोग्गले अपरियाइत्ता पभू वेभारं पव्वयं उल्लंघेत्तए वा पलंघेत्तए वा ?

[उ.] गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे।

१४. [प्र.] भगवन् ! क्या भावितात्मा अनगार, बाहर के पुद्गलों को ग्रहण किये बिना वैभारगिरि को एक बार या बार-बार उल्लंघ (लाँघ) सकता है ?

[उ.] गौतम ! यह अर्थ समर्थ नही है।

14. [Q.] Is a sagacious ascetic (*bhaavitatma anagar*) capable of flying over Vaibhargiri mountain once or repeatedly without acquiring outside matter particles ?

[Ans.] Gautam ! That is not correct

१५. [प्र.] अणगारे णं भंते ! भावियप्पा बाहिरए पोग्गले परियाइत्ता पभु वेभारं पव्वयं उल्लंघेत्तए वा पलंघेत्तए वा ?

[उ.] हंता, पभू।

१५. [प्र.] भगवन् ! भावितात्मा अनगार बाह्य पुद्गलों को ग्रहण करके क्या वैभारगिरि का उल्लघन या प्रलंघन करने मे समर्थ है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! वह वैसा करने मे समर्थ है।

15. [Q.] Is a sagacious ascetic (*bhaavitatma anagar*) capable of flying over Vaibhargiri mountain once or repeatedly by acquiring outside matter particles ?

[Ans.] Yes, Gautam ! He is capable of doing that.

१६. [प्र.] अणगारे णं भंते ! भावियप्पा बाहिरए पोग्गले अपरियाइत्ता जावइयाइं रायगिहे नगरे रूवाइं एवइयाइं विकुव्वित्ता वेभारं पव्वयं अंतो अणुप्पविसित्ता पभू समं वा विसमं करेत्तए, विसमं वा समं करेत्ताए ?

[उ.] गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे।

१७. एवं चेव बितिओ वि आलावगो; णवरं परियाइत्ता पभू।

१६. [प्र.] भगवन् ! भावितात्मा अनगार, बाहर के पुद्गलों को ग्रहण किये बिना राजगृह नगर में जितने भी (पशु पुरुषादि) रूप है, उतने रूपो की विकुर्वणा करके तथा वैभार पर्वत में प्रवेश करके क्या सम पर्वत को विषम कर सकता है ? अथवा विषम पर्वत को सम कर सकता है ?

[उ.] गौतम ! भावितात्मा अनगार वैसा नहीं कर सकता।

१७. इसी तरह दूसरा आलापक (सूत्र १६) भी कहना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि वह (भावितात्मा अनगार) बाहर के पुद्गलो को ग्रहण करके पूर्वोक्त प्रकार से (रूपो की विकुर्वणा आदि) करने में समर्थ है।

16. [Q.] Without acquiring outside matter particles, is a sagacious ascetic (*bhaavitatma anagar*) capable of transmuting (*vikurvana*) into

various forms (human and animal) existing in Rajagriha, and also entering Vaibhar mountain to turn its plain terrain into difficult and vice versa ?

[Ans.] Gautam ! That is not correct.

17. In the same way the second statement (aphorism-16) should be repeated with the change that by acquiring outside matter particles, a sagacious ascetic (*bhaavitatma anagar*) is capable of transmuting (*vikurvana*) into various forms

विवेचन : इन सूत्रों का सार यह है कि वैक्रिय-(बाह्य) पुद्गलो के ग्रहण किये बिना वैक्रियशरीर की रचना हो नही सकती, और वैक्रियशरीर के बिना पर्वत को लाँघना तथा विविध रूपो की विकुर्वणा कर नही सकता।

Elaboration—The gist of these aphorisms is that without acquiring outside matter particles a transmuted body cannot be created and without a transmuted body neither a mountain can be crossed flying over nor various forms can be created

प्रमादी मनुष्य विकुर्वणा करते है **TRANSFORMATION BY MALIGNED PERSON**

१८. [प्र. १] से भंते ! किं मायी विकुव्वति, अमायी विकुव्वइ ?

[उ.] गोयमा ! मायी विकुव्वइ, नो अमायी विकुव्वति।

१८. [प्र. १] भगवन् ! क्या मायी (प्रमाद या कषाययुक्त) मनुष्य विकुर्वणा करता है, अथवा अमायी (अप्रमत्त-कषायहीन) मनुष्य विकुर्वणा करता है ?

[उ.] गौतम ! मायी मनुष्य विकुर्वणा करता है, अमायी मनुष्य विकुर्वणा नही करता।

18. [Q. 1] *Bhante* ! Does a maligned (*maayi*, this includes spiritually torpid and passion-infested) person do transformation ? Or does a non-maligned (*amaayi*; this includes spiritually alert and passion-free) person do transformation ?

[Ans.] Gautam ! A maligned person does transformation, a non-maligned person does not do transformation

[प्र. २] से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ जाव नो अमायी विकुव्वइ ?

[उ.] गोयमा ! मायी णं पणीयं पाण-भोयणं भोच्चा भोच्चा वामेति, तस्स णं तेणं पणीएणं पाण-भोयणेणं अट्ठि-अट्ठिमिंजा बहली भवंति, पयणुए मंस-सोणिए भवति, जे वि य से अहाबादरा पोग्गला ते वि य से परिणमंति, तं जहा-सोइंदियत्ताए जाव फासिंदियत्ताए, अट्ठि-अट्ठिमिंज-केस-मंसु-रोम-नहत्ताए सुक्कत्ताए सोणियत्ताए।

अमायी णं लूहं पाण–भोयणं भोच्चा भोच्चा णो वामेइ, तस्स णं तेणं लूहेणं पाण–भोयणेणं अट्ठि–अट्ठिमिंजा पयणूभवंति, बहले मंस–सोणिए, जे वि य से अहाबादरा पोग्गला ते वि य से परिणमंति; तं जहा–उच्चारत्ताए पासवणत्ताए जाव सोणियत्ताए। से तेणट्ठे णं जाव नो अमायी विकुव्वइ।

[प्र. २] भगवन् ! ऐसा किस कारण से कहा जाता है कि मायी अनगार विकुर्वणा करता है, अमायी विकुर्वणा नहीं करता ?

[उ.] गौतम ! मायी (प्रमत्त) अनगार प्रणीत–(घृतादि रस से सरस–स्निग्ध) पान और भोजन करता है। इस प्रकार बार–बार प्रणीत पान–भोजन करके वह वमन करता है। उस प्रणीत पान–भोजन से उसकी हड्डियाँ और हड्डियो मे रही हुई मज्जा सघन (ठोस) हो जाती है; उसका रक्त और माँस प्रतनु (पतला–) हो जाता है। उस भोजन के जो यथाबादर–(यथोचित स्थूल) पुद्गल होते है, उनका उस–उस रूप मे परिणमन होता है। यथा–श्रोत्रेन्द्रिय रूप मे यावत् स्पर्शेन्द्रिय रूप मे तथा हड्डियों, हड्डियो की मज्जा, केश, श्मश्रु (दाढी–मूँछ), रोम, नख, वीर्य और रक्त के रूप में वे परिणत होते हैं।

अमायी (अप्रमत्त कषायरहित) मनुष्य तो रूक्ष (रूखा–सूखा) पान–भोजन का सेवन करता है और ऐसे रूक्ष पान–भोजन का उपभोग करके वह वमन नहीं करता। उस रूक्ष पान–भोजन (के सेवन) से उसकी हड्डियाँ तथा हड्डियो की मज्जा प्रतनु (पतली–) होती है और उसका माँस और रक्त गाढ़ा (सघन) हो जाता है। उस पान–भोजन के जो यथाबादर पुद्गल होते हैं, उनका परिणमन उस–उस रूप मे होता है। यथा–उच्चार (मल), प्रस्रवण (मूत्र), यावत् रक्त आदि रूप में (उनका परिणमन हो जाता है।) अत इस कारण से अमायी मनुष्य, विकुर्वणा नही करता। निष्कर्ष यह है कि कषाययुक्त प्रमादी मनुष्य ही विकुर्वणा करता है।

[Q. 2] *Bhante* ! Why ıt is said that a maligned person does transformation, a non-maligned person does not do transformation ?

[Ans.] Gautam ! A maligned ascetic consumes rich food and drinks. He consumes rich food agaın and agaın and also vomits it. With that rich food hıs bones and marrow become thick but his blood and flesh become thin. The gross partıcles of that food are transformed into various forms ıncluding sense organs of hearing. . and so on up to... touch, bone, marrow, haır, facıal hair, body hair, nails, semen and blood.

A non-maligned ascetic consumes blend and dry food and drinks. Eating such blend food, he does not vomıt ıt. With that blend food his bones and marrow become thin but his blood and flesh become thick. The gross particles of that food are transformed into various forms including stool, urine... and so on up to. . blood. For this reason it is said that a non-maligned person does not do transformation but a making need person does.

[३] मायी णं तस्स ठाणस्स अणालोइयपडिक्कंते कालं करेइ नत्थि तस्स आराहणा।

[४] **अमायी णं तस्स ठाणस्स आलोइयपडिक्कंते कालं करेइ अत्थि तस्स आराहणा।**

'सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति'।

॥ तइए सए : चउत्थो उद्देसो समत्तो ॥

[३] मायी मनुष्य उस स्थान (अपने द्वारा किये गये वैक्रिय प्रयोग) की आलोचना और प्रतिक्रमण किये बिना (यदि) मृत्यु को प्राप्त करता है, तो उसके आराधना नही होती।

[४] (किन्तु पूर्व मायी जीवन मे अपने द्वारा किये गये वैक्रियकरणरूप) उस (विराधना)–स्थान के विषय मे पश्चात्ताप (आत्मनिन्दा) करके अमायी (बना हुआ) मनुष्य (यदि) आलोचना और प्रतिक्रमण करके काल करता है, तो उसके आराधना होती है।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है', यो कहकर यावत् गौतम स्वामी विचरण करते है।

॥ तृतीय शतक : चतुर्थ उद्देशक समाप्त ॥

[3] If a maligned person dies without critical review and atonement for that deed (the act of transmutation), his spiritual practice remains non-accomplished.

[4] However if a person has become non-maligned by repenting for that deed (the act of transmutation done while he was maligned) and dies after doing critical review and atonement, his spiritual practice gets accomplished

"Bhante ! Indeed that is so Indeed that is so " With these words . and so on up to. ascetic Gautam resumed his activities.

● END OF THE FOURTH LESSON OF THE THIRD CHAPTER ●

तृतीय शतक : पंचम उद्देशक
THIRD SHATAK (Chapter Three) : FIFTH LESSON

अनगार विकुर्वणा ANAGAR VIKURVANA
(TRANSMUTATION BY ASCETIC)

अनगार की विकुर्वणा शक्ति **POWER OF TRANSMUTATION OF ASCETIC**

१. [प्र.] अणगारे णं भंते ! भावियप्पा बाहिरए पोग्गले अपरियाइत्ता पभू एगं महं इत्थिरूवं वा जाव संदमाणियरूवं वा विकुव्वित्तए ?

[उ.] णो इणट्ठे समट्ठे।

२. [प्र.] अणगारे णं भंते ! भावियप्पा बाहिरए पोग्गले परियाइत्ता पभू एगं महं इत्थिरूवं वा जाव संदमाणियरूवं वा विकुव्वित्तए ?

[उ.] हंता पभू।

१. [प्र.] भगवन् ! क्या भावितात्मा अनगार, बाहर के पुद्गलो को ग्रहण किये बिना एक बड़े स्त्रीरूप यावत् स्यन्दमानिका (डोली) रूप की विकुर्वणा करने मे समर्थ है ?

[उ.] हे गौतम ! वह ऐसा नही कर सकता।

२. [प्र.] भगवन् ! भावितात्मा अनगार, बाहर के पुद्गलो को ग्रहण करके क्या एक बडे स्त्रीरूप की यावत् स्यन्दमानिका रूप की विकुर्वणा कर सकता है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! वह वैसा कर सकता है।

1. [Q.] *Bhante* ! Without acquiring outside matter particles, is a sagacious ascetic (*bhaavitatma anagar*) capable of creating by transmutation (*vikurvana*) a giant woman... and so on up to... *syandamanika* (large palanquin) ?

[Ans.] Gautam ! He is not capable of doing so.

2. [Q.] *Bhante* ! By acquiring outside matter particles, is a sagacious ascetic (*bhaavitatma anagar*) capable of creating by transmutation (*vikurvana*) a giant woman... and so on up to .. *syandamanika* (large palanquin) ?

[Ans.] Yes, Gautam ! He is capable of doing so.

३. [प्र.] अणगारे णं भंते ! भावियप्पा केवइयाइं पभू इत्थिरूवाइं विकुव्वित्तए ?

[उ.] गोयमा ! से जहानामए जुवई जुवाणे हत्थेणं हत्थंसि गेण्हेज्जा, चक्कस्स वा नाभी अरगाउत्ता सिया एवामेव अणगारे वि भावियप्पा वेउव्वियसमुग्घाएणं समोहण्णइ जाव पभू णं गोयमा ! अणगारे णं

भावियप्पा केवलकप्पं जंबुद्दीवं दीवं बहूहिं इत्थीरूवेहिं आइण्णं वितिकिण्णं। जाव एस णं गोयमा ! अणगारस्स भावियप्पणो अयमेयारूवे विसए विसयमेत्ते बुइए, नो चेव णं संपत्तीए विकुव्विंसु वा विउव्वति वा विउव्विस्सति वा। एवं परिवाडीए नेयव्वं जाव संदमाणिया।

३. [प्र.] भगवन् ! भावितात्मा अनगार, कितने स्त्रीरूपों की विकुर्वणा करने मे समर्थ है ?

[उ.] गौतम ! जैसे कोई युवक, अपने हाथ से युवती के हाथ को (भय या काम की विह्वलता के समय दृढतापूर्वक) पकड लेता है, अथवा जैसे चक्र (पहिये) की धुरी (नाभि) आरों से युक्त (संलग्न) होती है, इसी प्रकार भावितात्मा अनगार भी वैक्रियसमुद्घात से समवहत होकर सम्पूर्ण जम्बूद्वीप नामक द्वीप को, बहुत-से स्त्रीरूपों से आकीर्ण (व्याप्त), व्यतिकीर्ण (विशेषरूप से परिपूर्ण रूप मे) कर सकता है, यावत् (ठसाठस भर सकता है।) हे गौतम ! भावितात्मा अनगार का यह विषय (शक्ति) है, विषयमात्र है; उसने इतनी वैक्रिय शक्ति सम्प्राप्त होने पर भी कभी इतनी विक्रिया की नही, करता नही और करेगा भी नहीं। इस प्रकार परिपाटी से (क्रमश) यावत् स्यन्दमानिका-सम्बन्धी रूपविकुर्वणा करने तक जानना चाहिए।

3. [Q.] *Bhante* ! How many such woman-forms a sagacious ascetic (*bhaavitatma anagar*) is capable of creating by transmutation (*vikurvana*)?

[Ans.] Gautam ! Employing the process of Vaikriya Samudghat a sagacious ascetic can pervade (*akirna*), merge (*vyatikirna*) . and so on up to tightly pack (*gaadhavagaadh*) the whole of Jambudveep continent with numerous woman-forms, exactly like a young man tightly holding the hand of a young woman or like the spokes of a wheel tightly held by its axle However, Gautam ! This great power of a sagacious ascetic (*bhaavitatma anagar*) is theoretical In practice, in spite of acquiring such power of transmutation, he has never performed transmutation to aforesaid extant, neither he does, nor will he do. The same statement about transmutation should be repeated in proper order up to *syandamanika* (large palanquin)

४. [प्र.] से जहानामए केइ पुरिसे असिचम्मपायं गहाय गच्छेज्जा एवामेव अणगारे णं भावियप्पा असि-चम्मपायहत्थ-किच्चगएणं अप्पाणेणं उड्ढं वेहासं उप्पइज्जा ?

[उ.] हंता, उप्पइज्जा।

४. [प्र.] (भगवन् !) जैसे कोई पुरुष (किसी कार्यवश) तलवार और चर्मपात्र (ढाल अथवा म्यान) हाथ मे लेकर जाता है, क्या उसी प्रकार कोई भावितात्मा अनगार भी तलवार और ढाल (अथवा म्यान) हाथ में लिए हुए किसी कार्यवश (संघ आदि के प्रयोजन से) स्वय आकाश मे ऊपर उड़ सकता है ?

[उ.] हाँ, (गौतम !) वह ऊपर उड़ सकता है।

4. [Q.] *Bhante* ! As man goes out (on some mission) with a sword and leather shield in his hands, likewise can a sagacious ascetic (*bhaavitatma anagar*) too fly in the sky to go on some mission (related to the religious organization or otherwise) with a sword and leather shield in his hands ?

[Ans.] Yes, (Gautam !) he can fly.

५. [प्र.] अणगारे णं भंते ! भावियप्पा केवइयाइं पभू असि–चम्मपायहत्थ–किच्चगयाइं रूवाइं विउव्वित्तए ?

[उ.] गोयमा ! से जहानामए जुवइ जुवाणे हत्थेणं हत्थे गेण्हेज्जा तं चेव जाव विउव्विंसु वा ३।

५. [प्र.] भगवन् ! भावितात्मा अनगार कार्यवश तलवार एवं ढाल हाथ मे लिए हुए पुरुष के जैसे कितने रूपो की विकुर्वणा कर सकता है ?

[उ.] गौतम ! जैसे कोई युवक अपने हाथ से युवती के हाथ को (दृढ़तापूर्वक) पकड लेता है (श ३/१/३ के दृष्टान्त अनुसार), वैक्रियकृत रूपो से सम्पूर्ण जम्बूद्वीप को ठसाठस भर सकता है। यह उसकी शक्ति मात्र है, किन्तु कभी इतने वैक्रिय रूप बनाये नही, बनाता नहीं और बनायेगा भी नहीं।

5. [Q.] *Bhante* ! How many such human-forms on some mission and equipped with a sword and shield a sagacious ascetic (*bhaavitatma anagar*) is capable of creating by transmutation (*vikurvana*) ?

[Ans.] He can tightly pack the whole of Jambudveep continent, exactly like a young man tightly holding the hand of a young woman (as the example given in 3/1/3) However, Gautam ! This power is theoretical. In practice he has never performed transmutation to aforesaid extant, neither he does, nor will he do.

६. [प्र.] से जहानामए केइ पुरिसे एगओपडागं काउं गच्छेज्जा, एवामेव अणगारे वि भावियप्पा एगओपडागाहत्थकिच्चगएणं अप्पाणेणं उड्ढं वेहासं उप्पएज्जा ?

[उ.] हंता, गोयमा ! उप्पएज्जा।

६. [प्र.] जैसे कोई पुरुष एक हाथ मे ध्वजा वाली पताका लेकर चलता है, इसी प्रकार क्या भावितात्मा अनगार भी कार्यवश एक हाथ मे एक पताका लेकर स्वयं ऊपर आकाश में उड सकता है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! वह आकाश मे उड सकता है।

6. [Q.] *Bhante* ! As man goes out (on some mission) with a flag in one of his hands; likewise can a sagacious ascetic (*bhaavitatma anagar*) too fly in the sky to go on some mission with a flag in one of his hands ?

[Ans.] Yes, (Gautam !) he can fly.

७. [प्र. १] अणगारे णं भंते ! भावियप्पा केवइयाइं पभू एगओपडागाहत्थकिच्चगयाइं रूवाइं विकुव्वित्तए ?

[उ.] एवं चेव जाव विकुव्विंसु वा ३। [२] एवं दुहओपडागं पि।

७. [प्र. १] भगवन् ! भावितात्मा अनगार, कार्यवश एक हाथ में पताका लेकर चलने वाले पुरुष के जैसे कितने रूपो की विकुर्वणा कर सकता है ?

[उ.] गौतम ! यहाँ सब पहले की तरह कहना चाहिए, (अर्थात् वह ऐसे वैक्रियकृत रूपों से समग्र जम्बूद्वीप को ठसाठस भर सकता है) परन्तु इतने रूपो की विकुर्वणा कभी की नही। [२] इसी तरह दोनो हाथो मे पताका लिए हुए पुरुष के जैसे रूपो की विकुर्वणा के सम्बन्ध मे कहना चाहिए।

7. [Q. 1] *Bhante* ! How many such human-forms on some mission with a flag in one of his hands a sagacious ascetic (*bhaavitatma anagar*) is capable of creating by transmutation (*vikurvana*) ?

[Ans.] Gautam ! Here repeat as aforesaid (He can tightly pack the whole of Jambudveep continent. But in practice he never performed transmutation to this extant) **[2]** The same should be repeated for transmuting of human-forms with flags in both hands.

८. [प्र.] से जहानामए केइ पुरिसे एगओजण्णावइयं काउं गच्छेज्जा, एवामेव अणगारे वि भावियप्पा एगओजण्णोवइयकिच्चगएणं अप्पाणेणं उड्ढं वेहासं उप्पएज्जा ?

[उ.] हंता, उप्पएज्जा।

८. [प्र.] भगवन् ! जैसे कोई पुरुष एक तरफ यज्ञोपवीत (जनेऊ) धारण करके चलता है, उसी तरह क्या भावितात्मा अनगार भी कार्यवश एक तरफ यज्ञोपवीत धारण किये हुए पुरुष की तरह स्वय ऊपर आकाश मे उड सकता है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! उड सकता है।

8. [Q.] *Bhante* ! As a man goes out with a sacred thread (*yajnopaveet*) on one side, likewise can a sagacious ascetic (*bhaavitatma anagar*) too fly in the sky to go on some mission with a sacred thread on one side ?

[Ans.] Yes, (Gautam !) he can fly.

९. [प्र. १] अणगारे णं भंते ! भावियप्पा केवइयाइं पभू एगओजण्णोवइयकिच्चगयाइं रूवाइं विकुव्वित्तए ?

[उ.] तं चेव जाव विकुव्विंसु वा ३। [२] एवं दुहओजण्णोवइयं पि।

९. [प्र. १] भगवन् ! भावितात्मा अनगार कार्यवश एक तरफ यज्ञोपवीत धारण किये हुए पुरुष के जैसे कितने रूपो की विकुर्वणा कर सकता है ?

[उ.] गौतम ! पहले कहे अनुसार जान लेना चाहिए। (अर्थात् ऐसे वैक्रियकृत रूपो से वह सारे जम्बूद्वीप को ठसाठस भर सकता है।) [२] इसी तरह दोनों ओर यज्ञोपवीत धारण किये हुए पुरुष की तरह रूपों की विकुर्वणा करने के सम्बन्ध मे भी जान लेना चाहिए।

9. [Q. 1] *Bhante* ! How many such human-forms on some mission with a sacred thread on one side a sagacious ascetic (*bhaavitatma anagar*) is capable of creating by transmutation (*vikurvana*) ?

[Ans.] Gautam ! Here repeat as aforesaid. (He can tightly pack the whole of Jambudveep continent.) **[2]** The same should be repeated for transmuting of human-forms with sacred threads on both sides.

१०. [प्र. १] से जहानामए केइ पुरिसे एगओपल्लहत्थियं काउं चिट्ठेज्जा एवामेव अणगारे वि भावियप्पा ?

[उ.] तं चेव जाव विकुव्विंसु वा ३। [२] एवं दुहओपल्लहत्थियं पि।

१०. [प्र. १] भगवन् ! जैसे कोई पुरुष एक तरफ पल्हथी (सुखासन) लगाकर बैठे, इसी तरह क्या भावितात्मा अनगार भी (पल्हथी लगाकर बैठे हुए पुरुष के समान) रूप बनाकर स्वयं आकाश में उड सकता है ?

[उ.] गौतम ! पहले कहे अनुसार सब वर्णन जानना चाहिए। [२] इसी तरह दोनो तरफ पल्हथी लगाने वाले पुरुष के समान रूपविकुर्वणा के सम्बन्ध मे जान लेना चाहिए।

10. [Q. 1] *Bhante* ! As a man sits with one leg folded, likewise can a sagacious ascetic (*bhaavitatma anagar*) fly in the sky in the said posture (one leg folded) ?

[Ans.] Gautam ! Here repeat all details as aforesaid. **[2]** The same should be repeated for transmuting of human-forms with both legs folded.

११. [प्र. १] से जहानामए केइ पुरिसे एगओपलियंकं काउं चिट्ठेज्जा० ?

[उ.] तं चेव जाव विकुव्विंसु वा ३। [२] एवं दुहओपलियंकं पि।

११. [प्र. १] भगवन् ! जैसे कोई पुरुष एक तरफ पर्यंकासन (पद्मासन या वज्रासन) करके बैठे, उसी तरह क्या भावितात्मा अनगार भी उस पुरुष के समान रूप-विकुर्वणा करके आकाश में उड सकता है ?

[उ.] गौतम ! (इसका उत्तर भी) पहले कहे अनुसार जानना चाहिए। [२] इसी तरह दोनों तरफ पर्यंकासन करके बैठे हुए पुरुष के समान रूप-विकुर्वणा करने के सम्बन्ध मे जान लेना चाहिए।

11. [Q. 1] *Bhante* ! As a man sits in one sided *Paryank* posture; likewise can a sagacious ascetic (*bhaavitatma anagar*) fly in the sky in the said posture ?

[Ans.] Gautam ! Here repeat all details as aforesaid. [2] The same should be repeated for transmuting of human-forms with both sided *Paryank* posture

अनगार के अश्वादि रूप ASCETIC TAKING FORM OF HORSE ETC.

१२. [प्र.] अणगारे णं भंते ! भावियप्पा बाहिरए पोग्गले अपरियाइत्ता पभू एगं महं आसरूवं वा हत्थिरूवं वा सीह–वग्घ–वग–दीविय–अच्छ–तरच्छ–परासररूवं वा अभिजुंजित्तए ?

[उ.] णो इणट्ठे समट्ठे, अणगारे णं एवं बाहिरए पोग्गले परियाइत्ता पभू।

१२. [प्र.] भगवन् ! भावितात्मा अनगार, बाहर के पुद्‌गलों को ग्रहण किये बिना एक बडे अश्व के रूप को, हाथी के रूप को, सिह, बाघ, भेडिये (वृक), चीते (द्वीपिक), रीछ (भालू), छोटे तेंदुए (रक्ष) अथवा पराशर (शरभ = अष्टापद) के रूप का अभियोग करने मे समर्थ है ?

[उ.] गौतम ! यह बात शक्य नही है। (अर्थात् विद्या, मत्र आदि के बल से ग्रहण किये हुए बाह्य पुद्‌गलो के बिना यह पूर्वोक्त रूपो का अभियोग नही कर सकता।) वह भावितात्मा अनगार बाहर के पुद्‌गलो को ग्रहण करके (पूर्वोक्त रूपो का अभियोग करने मे) समर्थ है।

12. [Q.] *Bhante* ! Without acquiring outside matter particles, is a sagacious ascetic (*bhaavitatma anagar*) capable of performing *abhiyoga* (entering into and manipulating some other body) and taking the following forms—a large horse, elephant, lion, tiger, wolf (*vrik*), cheetah (*dvipik*), bear, leopard (*raksh*) or a *Parashar* (an extinct species of ferocious animal) ?

[Ans.] Gautam ! It is not possible. However, that sagacious ascetic (*bhaavitatma anagar*) is capable of performing *abhiyoga* by acquiring outside matter particles.

१३. [प्र. १] अणगारे णं भंते ! भावियप्पा एगं महं आसरूवं वा अभिजुंजित्ता अणेगाइं जोयणाइं गमित्तए पभू ?

[उ.] हंता, पभू।

१३. [प्र. १] भगवन् ! भावितात्मा अनगार, एक बडे अश्व के रूप का अभियोजन करके अनेक योजन तक जा सकता है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! वह वैसा करने में समर्थ है।

13. [Q. 1] *Bhante* ! Is a sagacious ascetic (*bhaavitatma anagar*) performing *abhiyoga* and taking the form of a large horse capable of travelling a distance of many *Yojans* ?

[Ans.] Yes, he is capable of doing that

[प्र. २] से भंते ! किं आयड्ढीए गच्छति, परिड्ढीए गच्छति ?

[उ.] गोयमा ! आयड्ढीए गच्छइ, नो परिड्ढीए गच्छइ।

[प्र. २] भगवन् ! क्या वह (इतने योजन तक) आत्म-ऋद्धि (अपनी शक्ति) से जाता है या पर-ऋद्धि से जाता है ?

[उ.] गौतम ! वह आत्म-ऋद्धि से जाता है, पर-ऋद्धि से नहीं जाता।

[Q. 2] *Bhante* ! Does that sagacious ascetic (*bhaavitatma anagar*) move (many *Yojans*) with its own power or that of others ?

[Ans.] He moves with his own power and not with that of others.

[३] एवं आयकम्मुणा, नो परकम्मुणा। आयप्पओगेणं, नो परप्पओगेणं।

[४] उस्सिओदगं वा गच्छइ पतोदगं वा गच्छइ।

[३] इसी प्रकार वह स्वकर्म (अपनी क्रिया) से जाता है, परकर्म से नही; आत्म-प्रयोग से जाता है, किन्तु पर-प्रयोग से नही।

[४] वह उच्छ्रितोदय (सीधे खडे) रूप मे भी जा सकता है और पतितोदय (पडे हुए) रूप में भी जा सकता है।

[3] In the same way he moves with his own action and not with that of others Also he moves with his own effort and not with that of others.

[4] He can move both in erect posture as well as prostrate posture.

१४. [प्र. १] से णं भंते ! किं अणगारे आसे ?

[उ.] गोयमा ! अणगारे णं से, नो खलु से आसे। [२] एवं जाव परासररूवं वा।

१४. [प्र. १] भगवन् ! वह अश्वरूपधारी भावितात्मा अनगार, क्या (अश्व की विक्रिया के समय) अश्व है ?

[उ.] गौतम ! (वास्तव मे) वह अनगार है, अश्व नही। [२] इसी प्रकार पराशर (शरभ या अष्टापद) तक के रूपो के सम्बन्ध मे भी कहना चाहिए।

14. [Q. 1] *Bhante* ! (At that time) is that sagacious ascetic (*bhaavitatma anagar*) in the form of a horse, actually a horse ?

[Ans.] Gautam ! He is, in fact, an ascetic and not a horse. [2] All these details should be repeated for other forms up to *Parashar*

विवेचन : प्रस्तुत तीनो सूत्रो का सार इस प्रकार है–

(१) भावितात्मा अनगार विद्या आदि के बल से बाह्य पुद्गलो को ग्रहण किये बिना अश्वादि रूपो का अभियोजन नहीं कर सकता। (२) अश्वादि रूपो का अभियोजन करके वह अनेकों योजन जा सकता है, पर

वह जाता है अपनी लब्धि, अपनी क्रिया या अपने प्रयोग से। (३) अश्वादि का रूप बनाया हुआ वह अनगार अश्व आदि नही होता, वह वास्तव मे अनगार ही होता है।

अभियोग और वैक्रिय में अन्तर–वैक्रिय रूप वैक्रिय लब्धि या वैक्रिय समुद्घात द्वारा किया जाता है–जबकि अभियोग किया जाता है- विद्या, मत्र, तत्र आदि के बल से। अभियोग मे मत्रादि के बल से अश्वादि के रूप मे प्रवेश करके उसके द्वारा क्रिया कराई जाती है। दोनो के द्वारा रूप-परिवर्तन या विविध रूप निर्माण मे समानता दिखलाई देती है, परन्तु दोनो की प्रक्रिया मे अन्तर है। अभियोग भी एक प्रकार की विक्रिया ही है। दोनों के कर्त्ता मायी (प्रमादी एवं कषायवान्) साधु होते है। उत्तरा २६/२६२ मे अभियोगिकी भावना का वर्णन द्रष्टव्य है।

Elaboration—The gist of the preceding three aphorisms is as follows—

(1) Even with the help of his special powers a sagacious ascetic (*bhaavitatma anagar*) cannot acquire (*abhiyojan*) other forms, like that of a horse, without accepting matter particles from outside. (2) After acquiring such forms he can travel long distances but that is done with his own special powers, action and effort (3) That ascetic in the form of a horse is not a horse, he is actually an ascetic

Difference between abhiyoga and vaikriya—*Vaikriya* (transmuted) form is acquired through the process of *Vaikriya Samudghat*, whereas *abhiyoga* is done with the help of special powers, *mantra* and *tantra* *Abhiyoga* is a process where one enters the form or body of a horse etc and performs actions through it. The two activities appear to be similar in terms of change of form or creating a variety of forms However, the processes are different. *Abhiyoga* (acquisition of a form) too is a type of *vikriya* (transmutation). Both these actions are performed by maligned ascetics who are under influence of stupor or passions The description of *Abhiyogiki Bhaavana* (sentiment of pursuing transformation) in *Uttaradhyayan Sutra* (26/262) is worth a study

विकुर्वणा का फल FRUITS OF TRANSMUTATION

१५. [प्र. १] से भंते ! किं मायी विकुव्वति ? अमायी विकुव्वति ?

[उ.] गोयमा ! मायी विकुव्वति, नो अमायी विकुव्वति।

१५. [प्र. १] भगवन् ! क्या मायी अनगार विकुर्वणा करता है, या अमायी अनगार विकुर्वणा करता है?

[उ.] गौतम ! मायी अनगार विकुर्वणा करता है, अमायी अनगार विकुर्वणा नहीं करता।

15. [Q. 1] *Bhante* ! Does a maligned (*maayi*; this includes spiritually torpid and passion-infested) person perform transmutation (*vikurvana*) ?

Or does a non-maligned (*amaayi*; this includes spiritually alert and passion-free) person perform transmutation ?

[Ans.] Gautam ! A maligned ascetic performs transmutation, a non-maligned ascetic does not perform transmutation.

[प्र. २] माइ णं तस्स ठाणस्स अणालोइयपडिक्कंते कालं करेइ कहिं उववज्जइ ?

[उ.] गोयमा ! अन्नयरेसु आभिओगिएसु देवलोगेसु देवत्ताए उववज्जइ।

[प्र. ३] अमायी णं तस्स ठाणस्स आलोइयपडिक्कंते कालं करेइ कहिं उववज्जइ ?

[उ.] गोयमा ! अन्नयरेसु अणाभिओगिएसु देवलोगेसु देवत्ताए उववज्जइ। सेवं भंते २ त्ति।

[प्र. २] मायी अनगार पूर्वोक्त प्रकार की विकुर्वणा करने के पश्चात् उस (प्रमादरूप दोष) स्थान की आलोचना एवं प्रतिक्रमण किये बिना मृत्यु पाकर कहाँ उत्पन्न होता है ?

[उ.] गौतम ! वह अनगार आभियोगिक देवलोको (अच्युतकल्प तक) में से किसी एक देवलोक में देवरूप मे उत्पन्न होता है।

[प्र. ३] भगवन् ! अमायी (अप्रमत्त) अनगार उस प्रकार की विकुर्वणा क्रिया करने के पश्चात् पश्चात्तापपूर्वक उक्त प्रमादरूप दोष-स्थान की आलोचना प्रतिक्रमण करने के पश्चात् मरकर कहाँ उत्पन्न होता है ?

[उ.] गौतम ! वह अनाभियोगिक (आभियोगिक से इतर) देवलोको (अच्युतकल्प से ऊपर के) में से किसी देवलोक मे देवरूप से उत्पन्न होता है।

हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है।

[Q. 2] If a maligned ascetic dies without critical review and atonement for the said deed (the act of transmutation), where does he reincarnate ?

[Ans.] Gautam ! That ascetic reincarnates as a god in one of the *Aabhiyogik Dev-loks*. (divine realms up to *Achyut Kalp*)

[Q. 3] *Bhante* ! If a non-maligned ascetic dies after doing critical review and atonement for that deed (the act of transmutation), where does he reincarnate ?

[Ans.] Gautam ! That ascetic reincarnates as a god in one of the *Anabhiyogik Dev-loks*. (divine realms above *Achyut Kalp*).

"*Bhante* ! Indeed that is so. Indeed that is so." With these words... and so on up to... ascetic Gautam resumed his activities.

१६. गाहा—इत्थी असी पडागा जण्णोवइए य होइ बोद्धव्वं।

पल्हत्थिय पलियंके अभियोगविकुव्वणा मायी॥१॥ (संग्रहणी गाथा)

॥ तइए सए : पंचमो उद्देसो समत्तो ॥

१६. संग्रहणी गाथा का अर्थ—स्त्री, असि (तलवार), पताका, यज्ञोपवीत (जनेऊ), पल्हथी, पर्यंकासन; इन सब रूपों के अभियोग और विकुर्वणा-सम्बन्धी वर्णन इस (पचम) उद्देशक मे है तथा ऐसा कार्य (अभियोग तथा विकुर्वणा का प्रयोग) मायी करता है, यह भी बताया गया है।

॥ तृतीय शतक : पंचम उद्देशक समाप्त ॥

16. Collative verse—This (fifth) lesson contains description of transformation into and acquisition of forms including woman, sword, flag, sacred thread and postures (folded legs and *Paryank*). Also included is the information that all these acts are performed by a maligned ascetic.

● END OF THE FIFTH LESSON OF THE THIRD CHAPTER ●

तृतीय शतक : छठा उद्देशक
THIRD SHATAK (Chapter Three) : SIXTH LESSON

अनगार वीर्यलब्धि ANAGAR VIRYALABDHI (POTENCY ACQUISITION BY ASCETIC)

मिथ्यादृष्टि की विकुर्वणा TRANSMUTATION BY THE UNRIGHTEOUS

१. [प्र.] अणगारे णं भंते ! भावियप्पा मायी मिच्छद्दिट्ठी वीरियलद्धीए वेउव्वियलद्धीए विभंगनाणलद्धीए वाणारसिं नगरिं समोहए, समोहण्णित्ता रायगिहे नगरे रूवाइं जाणति पासति ?

[उ.] हंता, जाणइ पासइ।

१. [प्र.] भगवन् ! भावितात्मा अनगार जो मिथ्यादृष्टि और मायी (कषायवान्) है तथा वीर्यलब्धि से, वैक्रियलब्धि से और विभगज्ञानलब्धि से सम्पन्न है, वह राजगृह नगर मे रहा हुआ वाराणसी नगरी की विकुर्वणा करके क्या राजगृह के (मनुष्य, महल आदि) रूपो को जानता-देखता है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! वह (अनगार) उन वहाँ स्थित रूपो को जानता और देखता है।

1. [Q.] *Bhante* ! Can a sagacious ascetic (*bhaavitatma anagar*), who is unrighteous (*mithyadrishti*), *maayi* (under influence of passions) and endowed with potency (*virya labdhi*), power of transmutation (*vaikriya labdhi*) and power of pervert knowledge (*vibhang jnana labdhi*), while living in Rajagriha city, see and know the make-up (houses and people) of Varanasi city by creating a transmuted form of Rajagriha city.

[Ans.] Yes, Gautam ! He (the ascetic) sees the make-up (houses and people) of that city.

२. [प्र. १] से भंते ! किं तहाभावं जाणइ पासइ ? अन्नहाभावं जाणइ पासइ ?

[उ.] गोयमा ! णो तहाभावं जाणइ पासइ, अन्नहाभावं जाणइ पासइ।

[प्र. २] से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ 'नो तहाभावं जाणइ पासइ, अन्नहाभावं जाणइ पासइ ?'

[उ.] गोयमा ! तस्स णं एवं भवति-एवं खलु अहं रायगिहे नगरे समोहए, समोहण्णित्ता वाणारसीए नगरीए रूवाइं जाणामि पासामि, से से दंसणे विवच्चासे भवति, ते तेणट्ठेणं जाव पासति।

२. [प्र. १] भगवन् ! क्या वह उन रूपो को तथाभाव (यथार्थरूप से) जानता-देखता है, अथवा अन्यथाभाव (विपरीत रूप) से जानता-देखता है ?

[उ.] गौतम ! वह तथाभाव से नहीं जानता-देखता, किन्तु अन्यथाभाव से जानता-देखता है।

[प्र. २] भगवन् ! ऐसा किस कारण से कहा जाता है कि वह यथार्थरूप से नहीं जानता-देखता, किन्तु अन्यथाभाव से जानता-देखता है ?

[उ.] गौतम ! उस (अनगार) के मन मे (दृष्टि विपर्यय के कारण) इस प्रकार का विचार होता है कि वाराणसी नगरी में रहे हुए मैंने राजगृह नगर की विकुर्वणा की है और विकुर्वणा करके मैं वाराणसी के रूपो को जानता-देखता हूँ। इस प्रकार उसका दर्शन विपरीत होता है। इस कारण से ऐसा कहा जाता है कि वह यथार्थरूप से नहीं, किन्तु अन्यथाभाव से जानता-देखता है।

2. [Q. 1] *Bhante* ! Does he see and know that make-up realistically (*tatha-bhaava*) or unrealistically (*anyatha-bhaava*) ?

[Ans.] Gautam ! He does not see and know realistically (*tatha-bhaava*) but sees and knows unrealistically (*anyatha-bhaava*).

[Q. 2] *Bhante* ! Why is it said that he does not see and know realistically (*tatha-bhaava*) but sees unrealistically (*anyatha-bhaava*) ?

[Ans.] Gautam ! That ascetic thinks (due to delusion) that while living in Varanasi city he had created Rajagriha city and doing that he sees and knows the make-up of Varanasi city Thus his vision is opposite. That is why it is said that he does not see and know realistically (*tatha-bhaava*) but sees and knows unrealistically (*anyatha-bhaava*).

३. [प्र.] अणगारे णं भंते ! भावियप्पा मायी मिच्छद्दिट्ठी जाव रायगिहे नगरे समोहए, समोहण्णित्ता वाणारसीए नगरीए रूवाइं जाणइ पासइ ?

[उ.] हंता, जाणइ पासइ। तं चेव जाव तस्स णं एवं भवइ—एवं खलु अहं वाणारसीए नगरीए समोहए, समोहणित्ता रायगिहे नगरे रूवाइं जाणामि पासामि, से से दंसणे विवच्चासे भवति, से तेणट्ठेणं जाव अन्नहाभावं जाणइ पासइ।

३. [प्र.] भगवन् ! मायी मिथ्यादृष्टि भावितात्मा अनगार, वाराणसी मे रहा हुआ यावत् राजगृह नगर की विकुर्वणा करके क्या वाराणसी के रूपो को जानता और देखता है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! वह उन रूपो को जानता और देखता है। यावत्-उस अनगार के मन में इस प्रकार का विचार होता है कि राजगृह नगर मे रहा हुआ मै वाराणसी नगरी की विकुर्वणा करके तद्गत (राजगृह नगर के) रूपो को जानना और देखता हूँ। इस प्रकार उसका दर्शन विपरीत होता है। इस कारण से, यावत्-वह अन्यथाभाव से जानता-देखता है।

3. [Q.] *Bhante* ! Can an unrighteous (*mithyadrishti*) and *maayi* (under influence of passions) sagacious ascetic (*bhaavitatma anagar*)... and so on up to... while living in Varanasi city, see and know the make-up (houses and people) of Rajagriha city by creating a transmuted form of Varanasi city ?

[Ans.] Yes, Gautam ! He (the ascetic) sees the make-up (houses and people) of that city... and so on up to... that ascetic thinks (due to

delusion) that while living in Rajagriha city he had created Varanasi city and doing that he sees and knows the make-up of Rajagriha city. Thus his vision is opposite. That is why... and so on up to... he sees and knows unrealistically (*anyatha-bhaava*).

४. [प्र.] अणगारे णं भंते ! भावियप्पा मायी मिच्छद्दिट्ठी वीरियलद्धीए वेउव्वियलद्धीए विभंगणाणलद्धीए वाणारसिं नगरिं रायगिहं च नगरं अंतरा य एगं महं जणवयवग्गं समोहए, समोहणित्ता वाणारसिं नगरिं रायगिहं च नगरं तं अंतरा एगं महं जणवयवग्गं जाणति पासति ?

[उ.] हंता, जाणति पासति।

४. [प्र.] भगवन् ! मायी मिथ्यादृष्टि भावितात्मा अनगार अपनी वीर्यलब्धि से, वैक्रियलब्धि से, और विभगज्ञानलब्धि से वाराणसी नगरी और राजगृह नगर के बीच में एक बड़े जनपद-वर्ग (देश-समूह) की विकुर्वणा करके उस (वाराणसी और राजगृह के बीच में विकुर्वित) बड़े जनपद वर्ग को जानता और देखता है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! वह (उस विकुर्वित बडे जनपद-वर्ग को) जानता और देखता है।

4. **[Q.]** *Bhante* ! Can an unrighteous (*mithyadrishti*) and *maayi* (under influence of passions) sagacious ascetic (*bhaavitatma anagar*) create by transmutation a *janapad-varg* (a state-like vast inhabited area) between Varanasi city and Rajagriha city with the help of his potency (*virya labdhi*), power of transmutation (*vaikriya labdhi*) and power of pervert knowledge (*vibhang jnana labdhi*) and then see and know it (that vast inhabited area between Varanasi city and Rajagriha city) ?

[Ans.] Yes, Gautam ! He (the ascetic) sees and knows that (the vast inhabited area created by transmutation).

५. [प्र. १] से भंते ! किं तहाभावं जाणइ पासइ, अन्नहाभावं जाणइ पासइ ?

[उ.] गोयमा ! णो तहाभावं जाणति पासइ, अन्नहाभावं जाणइ पासइ।

[प्र. २] से केणट्ठेणं जाव पासइ ?

[उ.] गोयमा ! तस्स खलु एवं भवति-एस खलु वाणारसी नगरी, एस खलु रायगिहे नगरे, एस खलु अंतरा एगे महं जणवयवग्गे, नो खलु एस महं वीरियलद्धी वेउव्वियलद्धी विभंगनाणलद्धी इड्ढी जुती जसे बले वीरिए पुरिसक्कारपरक्कमे लद्धे पत्ते अभिसमन्नागए, से से दंसणे विवच्चासे भवति, से तेणट्ठेणं जाव पासति।

५. [प्र. १] भगवन् ! क्या वह उस जनपदवर्ग को तथाभाव से जानता-देखता है, अथवा अन्यथाभाव से जानता-देखता है ?

[उ.] गौतम ! वह उस जनपदवर्ग को तथाभाव से नहीं जानता-देखता; किन्तु अन्यथाभाव से जानता-देखता है।

[प्र. २] भगवन् ! वह उस जनपदवर्ग को अन्यथाभाव से यावत् जानता-देखता है, इसका क्या कारण है?

[उ.] गौतम ! उस अनगार के मन में ऐसा विचार होता है कि यह वाराणसी नगरी है, यह राजगृह नगर है तथा इन दोनों के बीच में यह एक बड़ा जनपदवर्ग है। परन्तु यह मेरी वीर्यलब्धि, वैक्रियलब्धि या विभंगज्ञानलब्धि नहीं है, और न ही मेरे द्वारा उपलब्ध, प्राप्त और अभिसमन्वागत यह ऋद्धि, द्युति, यश, बल और पुरुषकार-पराक्रम है। इस प्रकार का उक्त अनगार का दर्शन विपरीत होता है। इस कारण से, यावत् वह अन्यथाभाव से जानता-देखता है।

5. [Q. 1] *Bhante* ! Does he see and know that *janapad-varg* realistically (*tatha-bhaava*) or unrealistically (*anyatha-bhaava*)?

[Ans.] Gautam ! He does not see and know realistically (*tatha-bhaava*) but sees and knows unrealistically (*anyatha-bhaava*).

[Q. 2] Bhante ! Why is it said that he does not see and know realistically (*tatha-bhaava*) but sees unrealistically (*anyatha-bhaava*)?

[Ans.] Gautam ! That ascetic thinks (due to delusion) that this was Varanasi city and this was Rajagriha city In between these two this was a vast *janapad-varg*. But this is neither his potency (*virya labdhi*), power of transmutation (*vaikriya labdhi*) and power of pervert knowledge (*vibhang jnana labdhi*) nor the *riddhi* (opulence), *dyuti* (radiance), *bal* (physical strength), *yash* (fame) or self-exertion (*purushakar-parakram*) received, acquired, confirmed by him. This is how the vision of that ascetic is distorted That is why it is said that. and so on up to... he sees and knows unrealistically (*anyatha-bhaava*).

विवेचन : यहाँ प्रश्न उठता है कि जो भावितात्मा अनगार है, वह मायी मिथ्यादृष्टि कैसे हो सकता है? इसके उत्तर मे वृत्तिकार का स्पष्टीकरण है कि यहाँ अनगार का अर्थ गृहवास त्याग करने वाले से है, न कि जैनभिक्षु से, तथा भावितात्मा का अर्थ है अपने शास्त्र व स्व-दर्शन के अनुसार शम, दम, यम आदि नियमों का धारक। ऐसा अनगार सकषायी और मिथ्यादृष्टि होने से उसका दर्शन भी विपरीत होता है। वह अपने वैक्रियकृत रूपो को वास्तविक रूप मे नही देखकर दिग्मूढ या उन्मत्त मनुष्य जैसी अवस्था मे विपरीत रूप मे ही ग्रहण करता है। इसलिए उसका अनुभव, दर्शन और क्षेत्र सम्बन्धी विचार विपरीत होता है। *(वृत्ति, पत्रांक १९३)*

तीन लब्धियाँ-(१) वीर्यलब्धि, (२) वैक्रियलब्धि, और (३) विभंगज्ञानलब्धि। ये तीनों लब्धियाँ विकुर्वणा करने की मुख्य साधन है-(१) वीर्यलब्धि से शक्ति स्फुरण करता है, (२) वैक्रियलब्धि से वैक्रिय समुद्घात करके विविध रूपो की विकुर्वणा करता है, और (३) विभंगज्ञानलब्धि से राजगृहादिक पशु, पुरुष आदि विविध रूपों को जानता-देखता है। मिथ्यादृष्टि होने के कारण इसका दर्शन और ज्ञान विपरीत ग्राही होता है।

आचार्य महाप्रज्ञ जी यहाँ दर्शन विपर्यय (मिथ्यादृष्टि) को स्पष्ट करते हुए लिखते हैं-"राजगृह में रहते हुए वह वाराणसी नगरी का निर्माण करता है, किन्तु वह सोचता है मैंने वैक्रिय शक्ति द्वारा राजगृह का निर्माण किया है, और मैं वाराणसी में विद्यमान रूपों को जान-देख रहा हूँ। वह अपने द्वारा निर्मित नगरों को वास्तविक मान लेता है। उसे यह ज्ञान नहीं रहता कि यह सब मैंने अपनी वैक्रिय शक्ति द्वारा किया है।" *(भगवई · भाग २, पृष्ठ ६१-६२)*

Elaboration—Here a question arises naturally—how can a sagacious ascetic (*bhaavitatma anagar*) be unrighteous (*mithyadrishti*) and *maayi* (under influence of passions) ? The commentator (*Vritti*) explains it by stating that here the term *anagar* means a homeless mendicant and not Jain ascetic. And *bhavitatma* means the follower of codes and rituals of pacification, suppression and discipline according to his own scriptures and philosophy. Because such *anagars* are unrighteous and deceitful their perception is also pervert. They do not see the said transmuted forms as their own creation but real as seen by a deluded or mad person. Therefore their experience, perception and idea about that area is unrealistic *(Vritti, leaf 193)*

Three special powers—(1) *Virya labdhi* (potency), (2) *Vaikriya labdhi* (power of transmutation), and (3) *Vibhang jnana labdhi* (power of pervert knowledge). These three special powers are instrumental in performing transmutation—(1) *Virya labdhi* (potency) helps activating the source of energy. (2) *Vaikriya labdhi* (power of transmutation) helps creating a variety of forms through the process of *Vaikriya Samudghat*. (3) *Vibhang jnana labdhi* (power of pervert knowledge) helps seeing and knowing the forms so created. As he is unrighteous his perception and knowledge makes his understanding pervert or contradictory.

Explaining the pervert or contradicting perception (*mithyadrishti*), Acharya Mahaprajna states—'While living in Rajagriha he creates Varanasi city but thinks that with his power of transmutation he had created Rajagriha and was observing the things existing in Varanasi. He believes the cities created by him to be real. He forgets that all that was created by him through his power of transmutation.' *(Bhagavai, Part-2, pp. 61-62)*

सम्यग्दृष्टि अनगार की विकुर्वणा TRANSMUTATION BY THE RIGHTEOUS

६. [प्र.] अणगारे णं भंते ! भावियप्पा अमायी सम्मद्दिट्ठी वीरियलद्धीए वेउव्वियलद्धीए ओहिनाणलद्धीए रायगिहे नगरे समोहए, समोहणित्ता वाणारसीए नगरीए रूवाइं जाणइ पासइ ?

[उ.] हंता, जाणति पासति।

७. [प्र. १] से भंते ! किं तहाभावं जाणइ पासइ ? अन्नहाभावं जाणति पासति ?

[उ.] गोयमा ! तहाभावं जाणति पासति, नो अन्नहाभावं जाणति पासति।

[प्र. २] से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ ?

[उ.] गोयमा ! तस्स णं एवं भवति-एवं खलु अहं रायगिहे नगरे समोहए, समोहण्णित्ता वाणारसीए नगरीए रूवाइं जाणामि पासामि, से से दंसणे अविवच्चासे भवति, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चति।

८. बीओ वि आलावगो एवं चेव, नवरं वाणारसीए नगरीए समोहणा णेयव्वा, रायगिहे नगरे रूवाइं जाणइ पासइ।

६. [प्र.] भगवन् ! वाराणसी नगरी मे रहा हुआ अमायी सम्यग्दृष्टि भावितात्मा अनगार, वीर्यलब्धि से, वैक्रियलब्धि से और अवधिज्ञानलब्धि से राजगृह नगर की विकुर्वणा करके क्या राजगृह में विद्यमान रूपों को जानता-देखता है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! (वह उन रूपों को) जानता-देखता है।

७. [प्र. १] भगवन् ! वह उन रूपो को तथाभाव (यथार्थ रूप) से जानता-देखता है, अथवा अन्यथाभाव से जानता-देखता है ?

[उ.] गौतम ! वह उन रूपो को तथाभाव से जानता-देखता है, किन्तु अन्यथाभाव (विपरीत रूप) से नहीं जानता-देखता।

[प्र. २] भगवन् ! किस कारण से ऐसा कहा जाता है कि वह तथाभाव से उन रूपो को जानता-देखता है, अन्यथाभाव से नही ?

[उ.] गौतम ! उस अनगार के मन मे इस प्रकार का विचार, चिन्तन होता है कि 'वाराणसी नगरी मे रहा हुआ मैं राजगृह नगर की विकुर्वणा करके वाराणसी के रूपो को जानता-देखता हूँ।' इस प्रकार उसका दर्शन अविपरीत (सम्यक्/यथार्थ) होता है। गौतम ! इस कारण से ऐसा कहा जाता है कि वह तथाभाव से जानता-देखता है।

८. दूसरा आलापक भी इसी तरह कहना चाहिए। किन्तु विशेष यह है कि विकुर्वणा वाराणसी नगरी की समझनी चाहिए और राजगृह नगर मे रहकर वाराणसी के रूपो को जानता-देखता है।

6. [Q.] *Bhante* ! Can a righteous (*samyagdrishti*) and *amaayi* (free of the influence of passions) sagacious ascetic (*bhaavitatma anagar*), while living in Varanasi city, see and know the make-up of Rajagriha city by creating a transmuted form of Rajagriha city through his potency (*virya labdhi*), power of transmutation (*vaikriya labdhi*) and power of extra-sensory knowledge (*Avadhi-jnana labdhi*) ?

[Ans.] Yes, Gautam ! He (the ascetic) sees the make-up of that city.

7. [Q. 1] *Bhante* ! Does he see and know that make-up realistically (*tatha-bhaava*) or unrealistically (*anyatha-bhaava*) ?

[Ans.] Gautam ! He sees and knows realistically (*tatha-bhaava*) and not unrealistically (*anyatha-bhaava*).

[Q. 2] *Bhante* ! Why is it said that he sees and knows realistically (*tatha-bhaava*) and not unrealistically (*anyatha-bhaava*) ?

[Ans.] Gautam ! That ascetic thinks that while living in Varanasi city he had created Rajagriha city and doing that he saw and knew the make-up of Varanasi city. Thus his vision is not opposite (realistic). That is why it is said that he sees and knows realistically (*tatha-bhaava*).

8. The second statement should also be stated like that with the difference that transmutation is of Varanasi city and he sees and knows the make-up of Varanasi city while living in Rajagriha.

विवेचन : प्रस्तुत मे अनगार का अर्थ–अरिहत भगवान की आज्ञानुसार गृह त्याग करने वाला मुनि तथा भावितात्मा का अर्थ–ज्ञान–वैराग्य, तप–सयम की भावना से आत्मा को भावित करने वाला है। सम्यग्दृष्टि होने से उसका दर्शन यथार्थ ग्राही होता है।

आगमो मे यह शब्द विभिन्न सन्दर्भों में प्रयुक्त हुआ है। जैसे–प्रस्तुत प्रसग मे सयम–तप से युक्त अवधिज्ञान आदि लब्धियो से सम्पन्न अनगार। स्थानाग (५) में 'ऋद्धिमान' अणगार तथा भगवती (१८ शतक) मे 'वीतराग आत्मा' के लिए भी भावितात्मा शब्द प्रयुक्त हुआ है।

Elaboration—Here *Anagar* means an ascetic who has renounced household following the tenets of *Arihant*. *Bhavitatma* means one who enkindles his soul with endeavour for knowledge, detachment, austerities and discipline As he is righteous his perception is realistic.

In *Agams* the term *bhavitatma* has been used in various contexts. Here he is an ascetic practicing austerities, discipline and is endowed with *Avadhi-jnana*. In *Sthananga* (5) he is an ascetic endowed with special powers (*riddhiman*). In *Bhagavati* (18) he is a detached soul (*vitarag atma*).

९. [प्र.] अणगारे णं भंते ! भावियप्पा अमायी सम्मद्दिट्ठी वीरियलद्धीए वेउव्वियलद्धीए ओहिणाणलद्धीए रायगिहं नगरं वाणारसिं च नगरिं अंतरा य एगं महं जणवयवग्गं समोहए, समोहणित्ता रायगिहं नगरं वाणारसिं च नगरिं तं च अंतरा एगं महं जणवयवग्गं जाणइ पासइ ?

[उ.] हंता, जाणइ पासइ।

९. [प्र.] भगवन् ! अमायी सम्यग्दृष्टि भावितात्मा अनगार, अपनी वीर्यलब्धि, वैक्रियलब्धि और अवधिज्ञानलब्धि से, राजगृह नगर और वाराणसी नगरी के बीच में एक बड़े जनपदवर्ग की विकुर्वणा करके उसको जानता–देखता है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! (वह उस जनपदवर्ग को) जानता-देखता है।

9. [Q.] *Bhante* ! Can a righteous (*samyagdrishti*) and *amaayi* (free of the influence of passions) sagacious ascetic (*bhaavitatma anagar*) create by transmutation a *janapad-varg* (a state-like vast inhabited area) between Varanasi city and Rajagriha city with the help of his potency (*virya labdhi*), power of transmutation (*vaikriya labdhi*) and power of extra-sensory knowledge (*Avadhi-jnana labdhi*) and then see and know it ?

[Ans.] Yes, Gautam ! He (the ascetic) sees and knows that (the vast inhabited area created by transmutation).

१०. [प्र. १] से भंते ! किं तहाभावं जाणइ पासइ ? अन्नहाभावं जाणइ पासइ ?

[उ.] गोयमा ! तहाभावं जाणइ पासइ, णो अन्नहाभावं जाणइ पासइ।

[प्र. २] से केणट्ठेणं ?

[उ.] गोयमा ! तस्स णं एवं भवति-नो खलु एस रायगिहे णगरे, णो खलु एस वाणारसी नगरी, नो खलु एस अंतरा एगे जणवयवग्गे। एस खलु ममं वीरियलद्धी वेउव्वियलद्धी ओहिणाणलद्धी इड्ढी जुती जसे बले वीरिए पुरिसक्कारपरक्कमे लद्धे पत्ते अभिसमन्नागए। से से दंसणे अविवच्चासे भवति, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चति-तहाभावं जाणति पासति, नो अन्नहाभावं जाणति पासति।

१०. [प्र. १] भगवन् ! क्या वह उस जनपदवर्ग को तथाभाव से जानता और देखता है, अथवा अन्यथाभाव से जानता-देखता है ?

[उ.] गौतम ! वह उस जनपदवर्ग को तथाभाव से जानता और देखता है, परन्तु अन्यथाभाव से नही जानता-देखता।

[प्र. २] भगवन् ! इसका कारण क्या है ?

[उ.] गौतम ! उस अमायी सम्यग्दृष्टि भावितात्मा अनगार के मन मे ऐसा विचार चिन्तन होता है कि (वास्तव में) न तो यह राजगृह नगर है और न यह वाराणसी नगरी है, तथा न ही इन दोनो के बीच मे यह एक बडा जनपदवर्ग है, किन्तु यह मेरी ही वीर्यलब्धि है, वैक्रियलब्धि है और अवधिज्ञानलब्धि है; तथा यह मेरे द्वारा उपलब्ध, प्राप्त एवं अभिमुखसमागत (विपाक में आये) ऋद्धि, द्युति, यश, बल, वीर्य और पुरुषकार-पराक्रम है। उसका वह दर्शन अविपरीत-यथार्थ ग्राही होता है। इसी कारण से, हे गौतम ! ऐसा कहा जाता है कि वह अमायी सम्यग्दृष्टि अनगार तथाभाव से जानता-देखता है, किन्तु अन्यथाभाव से नही जानता-देखता।

10. [Q. 1] *Bhante* ! Does he see and know that *janapad-varg* realistically (*tatha-bhaava*) or unrealistically (*anyatha-bhaava*) ?

[Ans.] Gautam ! He sees and knows it realistically (*tatha-bhaava*) and not unrealistically (*anyatha-bhaava*).

[Q. 2] *Bhante* ! Why is it said that he sees and knows it realistically (*tatha-bhaava*) and not unrealistically (*anyatha-bhaava*) ?

[Ans.] Gautam ! That righteous (*samyagdrishti*) and *amaayi* (free of the influence of passions) sagacious ascetic (*bhaavitatma anagar*) thinks that this was neither Varanasi city nor was this Rajagriha city. It was also not a vast *janapad-varg* in between these two. But this was his potency (*virya labdhi*), power of transmutation (*vaikriya labdhi*) and power of extra-sensory knowledge (*Avadhi-jnana labdhi*). Also it was the *riddhi* (opulence), *dyuti* (radiance), *bal* (physical strength), *yash* (fame) or self-exertion (*purushakar-parakram*) received, acquired, confirmed by him (due to fruition of *karmas*). This vision of that ascetic is not distorted but realistic That is why it is said that . and so on up to... he sees and knows realistically (*yatha-bhaava*) and not unrealistically (*anyatha-bhaava*).

११. [प्र.] अणगारे णं भंते ! भावियप्पा बाहिरए पोग्गले अपरियाइत्ता पभू एगं महं गामरूवं वा नगररूवं वा जाव सन्निवेसरूवं वा विकुव्वित्तए ?

[उ.] णो इणट्ठे समट्ठे।

१२. एवं बितिओ वि आलावगो, णवरं बाहिरए पोग्गले परियाइत्ता पभू।

११. [प्र.] भगवन् ! भावितात्मा अनगार बाहर के पुद्गलो को ग्रहण किये बिना, एक बड़े ग्रामरूप की, नगररूप की, यावत्-सन्निवेश के रूप की विकुर्वणा कर सकता है ?

[उ.] गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है।

१२. इसी प्रकार दूसरा आलापक भी कहना चाहिए, किन्तु इसमे विशेष यह है कि बाहर के (वैक्रियक) पुद्गलो को ग्रहण करके वह अनगार, उस प्रकार के रूपों की विकुर्वणा कर सकता है।

11. [Q.] *Bhante* ! Without acquiring outside matter particles, is a sagacious ascetic (*bhaavitatma anagar*) capable of transmuting (*vikurvana*) and creating a large village, city... and so on up to... an inhabited area (*sannivesh*) ?

[Ans.] Gautam ! He is not capable of doing so.

12. The second statement should be stated in the same way with the difference that by acquiring outside matter particles that ascetic could create the said forms by transmutation.

१३. [प्र.] अणगारे णं भंते ! भावियप्पा केवइयाइं पभू गामरूवाइं विकुव्वित्तए ?

[उ.] गोयमा ! से जहानामए जुवति जुवाणे हत्थेणं हत्थे गेण्हेज्जा तं चेव जाव विकव्विंसु वा ३। एवं जाव सन्निवेसरूवं वा।

१३. [प्र.] भगवन् ! भावितात्मा अनगार कितने ग्रामरूपो की विकुर्वणा करने में समर्थ है ?

[उ.] गौतम ! जैसे युवक युवती का हाथ अपने हाथ से दृढतापूर्वक पकडकर चलता है, इस पूर्वोक्त दृष्टान्त के अनुसार समग्र वर्णन यहाँ कहना चाहिए; (अर्थात् वह इस प्रकार के रूपो से सारे जम्बूद्वीप को ठसाठस भर सकता है) यह उसकी केवल विकुर्वण-क्षमता है, किन्तु इतने रूपो की विकुर्वणा कभी की नहीं, (करता नहीं और करेगा भी नहीं।) इसी तरह से यावत् सन्निवेशरूपों (की विकुर्वणा) पर्यन्त कहना चाहिए।

13. [Q.] *Bhante* ! How many such village-forms a sagacious ascetic (*bhaavitatma anagar*) is capable of creating by transmutation (*vikurvana*) ?

[Ans.] Gautam ! (He can tightly pack the whole of Jambudveep continent) exactly like the aforesaid example of a young man tightly holding the hand of a young woman. However, this great power is theoretical. In practice, he has never performed transmutation to aforesaid extant, neither he does, nor will he do The same statement about transmutation should be repeated in proper order up to sannivesh-forms.

चमरेन्द्र के आत्मरक्षक THE PERSONAL GUARDS OF CHAMARENDRA

१४. [प्र.] चमरस्स णं भंते ! असुरिंदस्स असुररण्णो कति आयरक्खदेवसाहस्सीओ पण्णत्ताओ ?

[उ.] गोयमा ! चत्तारि चउसट्ठीओ आयरक्खदेवसाहस्सीओ पण्णत्ताओ। ते णं आयरक्खा वण्णओ जहा रायप्पसेणइज्जे।

१४. [प्र.] भगवन् ! असुरेन्द्र असुरराज चमरेन्द्र के कितने हजार आत्मरक्षक देव हैं ?

[उ.] गौतम ! असुरेन्द्र असुरराज चमरेन्द्र के चौसठ हजार के चार गुने (दो लाख छप्पन हजार) आत्मरक्षक देव है। आत्मरक्षक देवो का वर्णन राजप्रश्नीयसूत्र के अनुसार समझना चाहिए।

14. [Q.] *Bhante* ! How many thousand guard-gods (*Atmarakshak Devs*) does Chamarendra, the king of *Asur Kumar* gods, have ?

[Ans.] Chamarendra, the *Indra* (king or overlord) of *Asur Kumar* gods, has four times sixty four thousand (two hundred fifty six thousand) guard-gods (*Atmarakshak Devs*) The description of guard-gods (*Atmarakshak Devs*) should be given according to *Rajaprashniya Sutra*.

१५. एवं सव्वेसिं इंदाणं जस्स जत्तिया आयरक्खा ते भाणियव्वा।

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति।

॥ तइए सए : छट्ठो उद्देसो समत्तो ॥

१५. सभी इन्द्रों में से जिस इन्द्र के जितने आत्मरक्षक देव हैं, उन सबका वर्णन यहाँ करना चाहिए।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है', यों कहकर गौतम स्वामी विचरण करते है।

15. The description of all guard-gods (*Atmarakshak Devs*) of all different *Indras* possessing such gods should be given here.

"Bhante ! Indeed that is so. Indeed that is so." With these words... and so on up to... ascetic Gautam resumed his activities.

विवेचन : आत्मरक्षक देव और उनकी संख्या—स्वामी की रक्षा के लिए सेवक की तरह, इन्द्र की रक्षा में, उसके पीछे, जो शस्त्रादि से सुसज्ज होकर तत्पर रहते हैं, वे 'आत्मरक्षक देव' कहलाते है। प्रत्येक इन्द्र के सामानिक देवो से आत्मरक्षक देवो की संख्या चौगुनी होती है। सामानिक देवों की सख्या इस प्रकार है–चमरेन्द्र के ६४ हजार, बलीन्द्र के ६० हजार तथा शेष नागकुमार आदि भवनपति देवो के प्रत्येक इन्द्र के ६-६ हजार, सामानिक देव। शक्रेन्द्र के ८४ हजार, ईशानेन्द्र के ८० हजार, सनत्कुमारेन्द्र के ७२ हजार, माहेन्द्र के ७० हजार, ब्रह्मेन्द्र के ६० हजार, लान्तकेन्द्र के ५० हजार, शुक्रेन्द्र के ४० हजार, सहस्रारेन्द्र के ३० हजार, प्राणतेन्द्र के २० हजार और अच्युतेन्द्र के १० हजार सामानिक देव होते है। *(वृत्ति, पत्राक १९४)*

॥ तृतीय शतक : छठा उद्देशक समाप्त ॥

Elaboration—Atmarakshak Devs and their number—Equipped with weapons they attend *Indras* as personal guards for personal protection. They stand alert behind their overlord. The number of these guard-gods for each *Indra* is four times the number of *Samanik* gods in his attendance. The numbers of *Samanik* gods are as follows—Chamarendra has 64 thousand *Samanik Devs* (gods of same status) and Balindra 60 thousand, all other *Indras* including those of *Naag Kumars* and other abode-dwelling gods have 6 thousand *Samanik Devs* each. Shakrendra has 84 thousand, Ishanendra 80 thousand, Sanatkumarendra 72 thousand, Maahendra 70 thousand, Brahmendra 60 thousand, Lantakendra 50 thousand, Shukrenda 40 thousand, Sahasrarendra 30 thousand, Pranatendra 20 thousand and Achyutendra 10 thousand *Samanik Devs*. *(Vritti, leaf 194)*

● END OF THE SIXTH LESSON OF THE THIRD CHAPTER ●

तृतीय शतक : सप्तम उद्देशक
THIRD SHATAK (Chapter Three) : SEVENTH LESSON

लोकपाल LOK-PAL (GUARDIANS OF DIRECTIONS)

शक्रेन्द्र के लोकपाल LOK-PALS OF SHAKRENDRA

१. रायगिहे नगरे जाव पज्जुवासमाणे एवं वयासी–

१. राजगृह नगर मे यावत् पर्युपासना करते हुए गौतम स्वामी ने इस प्रकार पूछा–

1. In Rajagriha city. and so on up to... Gautam Swami submitted after worship—

२. [प्र.] सक्कस्स णं भंते ! देविंदस्स देवरण्णा कइ लोगपाला पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! चत्तारि लोगपाला पण्णत्ता, तं जहा–सोमे जमे वरुणे वेसमणे।

२. [प्र.] भगवन् ! देवेन्द्र देवराज शक्र के कितने लोकपाल है ?

[उ.] गौतम ! चार लोकपाल (ये सीमारक्षक व जनता की रक्षा करने वाले देव होते है–(१) सोम, (२) यम, (३) वरुण, और (४) वैश्रमण।

2. [Q.] *Bhante* ! How many *Lok-pals* does Devendra Shakra, the *Indra* (overlord) of *Devs* (gods) have ?

[Ans.] He has four *Lok-pals* (they are protectors and supporters of people as governors of different directions)—(1) Soma, (2) Yam, (3) Varun, and (4) Vaishraman.

३. [प्र.] एएसि णं भंते ! चउण्हं लोगपालाणं कइ विमाणा पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! चत्तारि विमाणा पण्णत्ता, तं जहा–संझप्पभे वरसिट्ठे सयंजले वग्गू।

३. [प्र.] भगवन् ! इन चारो लोकपालों के कितने विमान हैं ?

[उ.] गौतम ! इन चारो लोकपालो के चार विमान है; जैसे कि (१) सन्ध्याप्रभ, (२) वरशिष्ट, (३) स्वयज्वल, और (४) वल्गु।

3. [Q.] *Bhante* ! How many *vimaans* (celestial vehicles) these *Lok-pals* have ?

[Ans.] Gautam ! These four *Lok-pals* have four *vimaans*—(1) Sandhyaprabh, (2) Varashisht, (3) Svayamjval, and (4) Valgu.

सोमदेव लोकपाल LOK-PALS OF SOMA DEVA

४. [प्र. १] कहि णं भंते ! सक्कस्स देविंदस्स देवरण्णो सोमस्स महारण्णो संझप्पभे णामं महाविमाणे पण्णत्ते ?

[उ.] गोयमा ! जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स दाहिणेणं इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए बहुसमरमणिज्जाओ भूमिभागाओ उड्ढं चंदिम-सूरिय-गहगण-नक्खत्त-तारारूवाणं बहूइं जोयणाइं जाव पंचवडिंसया पण्णत्ता, तं जहा-असोयवडेंसए सत्तवण्णवडिंसए चंपयवडिंसए चूयवडिंसए मज्झे सोहम्मवडिंसए। तस्स णं सोहम्मवडेंसयस्स महाविमाणस्स पुरत्थिमेणं सोहम्मे कप्पे असंखेज्जाइं जोयणाइं वीतीवइत्ता एत्थ णं सक्कस्स देविंदस्स देवरण्णो सोमस्स महारण्णो संझप्पभे नामं महाविमाणे पण्णत्ते अद्धतेरस जोयणसयसहस्साइं आयाम-विक्खंभेणं, उणयालीसं जोयणसयसहस्साइं बावण्णं च सहस्साइं अट्ठ य अडयाले जोयणसए किंचिविसेसाहिए परिक्खेवेणं पण्णत्ते। जा सूरियाभविमाणस्स वत्तव्वया सा अपरिसेसा भाणियव्वा जाव अभिसेओ नवरं सोमे देवे।

४. [प्र. १] भगवन् ! देवेन्द्र देवराज शक्र के लोकपाल सोम नामक महाराज का सन्ध्याप्रभ नामक महाविमान कहाँ है?

[उ.] गौतम ! जम्बूद्वीप नामक द्वीप के मन्दर (मेरु) पर्वत से दक्षिण दिशा में इस रत्नप्रभा पृथ्वी के प्राय समतल भूमिभाग से ऊपर चन्द्र, सूर्य, ग्रह नक्षत्र और तारागण आते हैं। उनसे बहुत योजन ऊपर यावत् पाँच अवतंसक है, यथा-(१) अशोकावतसक, (२) सप्तपर्णावतंसक, (३) चम्पकावतंसक, (४) चूतावतसक, और मध्य मे (५) सौधर्मावतंसक हैं। उस सौधर्मावतंसक महाविमान से पूर्व में, सौधर्मकल्प से असंख्य योजन दूर जाने के बाद, वहाँ पर देवेन्द्र देवराज शक्र के लोकपाल-सोम नामक महाराज का सन्ध्याप्रभ नामक महाविमान आता है, जिसकी लम्बाई-चौडाई (आयाम-विष्कभ) साढ़े बारह लाख योजन है। उसका परिक्षेप (परिधि) उनचालीस लाख बावन हजार आठ सौ अडतालीस (३९,५२,८४८) योजन से कुछ अधिक है। इस विषय मे सूर्याभदेव के विमान की जो वक्तव्यता है, वह सारी वक्तव्यता (राजप्रश्नीयसूत्र मे वर्णित) 'अभिषेक' तक कहनी चाहिए। इतना विशेष है कि यहाँ सूर्याभदेव के स्थान 'सोमदेव' कहना चाहिए।

4. [Q. 1] Bhante ! What is the location of the *mahavimaan* (great celestial vehicle) named Sandhyaprabh belonging to Soma Maharaj, the *Lok-pal* of Devendra Shakra, the overlord of gods ?

[Ans.] Gautam ! To the south of Mandar (Meru) mountain in the continent called Jambu Dveep, over the level land of this Ratnaprabha *Prithvi* are located Chandra (the moon), Surya (the sun), *graha* (planets), *nakshatra* (constellations) and *tara* (stars). Above these are five *Avatamsaks* (great celestial vehicles or abodes)—(1) Ashokavatamsak, (2) Saptaparnavatamsak, (3) Champakavatamsak, (4) Chootavatamsak, and in the center (5) Saudharmavatamsak. To the east of that Saudharmavatamsak Mahavimaan, on going innumerable *Yojans* away from Saudharma Kalp, comes the mahavimaan (great celestial vehicle) named Sandhyaprabh belonging to Soma Maharaj, the *Lok-pal* of Devendra Shakra, the overlord of gods. Its length-breadth (*ayam-*

vishkambh) is 1.25 million *Yojans*. Its circumference is slightly more than 39,52,848 *Yojans*. Other details should be quoted from the description of the *vimaan* of Suryabh Dev up to anointing (from *Rajaprashniya Sutra*) with the difference that 'Suryabh Dev' should be changed to 'Soma Dev'

[२] संझप्पभस्स णं महाविमाणस्स अहे सपक्खिं सपडिदिसिं असंखेज्जाइं जोयणसयसहस्साइं ओगाहित्ता एत्थ णं सक्कस्स देविंदस्स देवरण्णो सोमस्स महारण्णो सोमा नामं रायहाणी पण्णत्ता, एगं जोयणसयसहस्सं आयाम-विक्खंभेणं जंबुद्दीवपमाणा।

[३] वेमाणियाणं पमाणस्स अद्धं नेयव्वं जाव उवरियलेणं सोलस जोयणसहस्साइं आयाम-विक्खंभेणं, पण्णासं जोयणसहस्साइं पंच य सत्ताणउए जोयणसते किंचिविसेसूणे परिक्खेवेणं पण्णत्ते। पासायाणं चत्तारि परिवाडीओ नेयव्वाओ। सेसा नत्थि।

[४] सक्कस्स णं देविंदस्स देवरण्णो सोमस्स महारण्णो इमे देवा आणा-उववाय-वयण-निद्देसे चिट्ठंति, तं जहा-सोमकाइया ति वा, सोमदेवयकाइया ति वा, विज्जुकुमारा विज्जुकुमारीओ, अग्गिकुमारा अग्गिकुमारीओ, वाउकुमारा वाउकुमारीओ, चंदा सूरा गहा नक्खत्त तारारूवा, जे यावण्णे तहप्पगारा सव्वे ते तब्भत्तिया तप्पक्खिया तब्भारिया सक्कस्स देविंदस्स देवरण्णो सोमस्स महारण्णो आणा-उववाय-वयण-निद्देसे चिट्ठंति।

[२] सन्ध्याप्रभ महाविमान के सपक्ष-सप्रतिदेश, अर्थात् ठीक बराबर नीचे, असख्य लाख योजन आगे (दूर) जाने पर देवेन्द्र देवराज शक्र के लोकपाल सोम महाराज की सोमा नाम की राजधानी है, जो एक लाख योजन लम्बी-चौडी है और जम्बूद्वीप जितनी है।

[३] इस राजधानी मे जो प्रासाद आदि है, उनका परिमाण वैमानिक देवो के प्रासाद आदि के परिमाण से आधा, भवन के पीठबन्ध का आयाम (लम्बाई) और विष्कम्भ (चौडाई) सोलह हजार योजन है। उसका परिक्षेप (परिधि) पचास हजार पाँच सौ सत्तानवे योजन से कुछ अधिक है। उसमे प्रासादो की चार पक्तियाँ है, शेष सुधर्मासभा नहीं है।

[४] देवेन्द्र देवराज शक्र के लोकपाल-सोम महाराज की आज्ञा मे, उपपात (सेवा) मे, वचन-पालन में और निर्देश मे; ये देव रहते है, यथा-सोमकायिक (सोमदेवो के परिवार रूप देव) सोमदेवकायिक, विद्युत्कुमार-विद्युत्कुमारियाँ, अग्निकुमार-अग्निकुमारियाँ, वायुकुमार-वायुकुमारियाँ, चन्द्र, सूर्य, ग्रह, नक्षत्र और तारारूप, ये तथा इसी प्रकार के दूसरे सब उसकी भक्ति करने वाले, उसके पक्ष वाले, उससे भरण-पोषण पाने वाले (भृत्य या उसकी अधीनता मे रहने वाले) देव उसकी आज्ञा, सेवा, वचनपालन और निर्देश में रहते है।

[2] Exactly below (*sapaksha-sapratidesh*) the Sandhyaprabh Mahavimaan, on going innumerable *Yojans* is located Somaa, the capital city of Soma Maharaj, the *Lok-pal* of Devendra Shakra, the overlord of

gods. It is one hundred thousand *Yojans* long-wide and as large as Jambu Dveep.

[3] The dimensions of the mansions and other structures in this capital city are half those of the mansions of *Vaimanik* gods. The length-breadth of the basement pedestal (*peeth-bandh*) is sixteen thousand *Yojans* and its circumference is slightly more than 50,597 *Yojans*. It has four rows of mansions and there is no main assembly (*Sudharma Sabha*)

[4] Under the command, attendance, order and direction of Soma Maharaj, the *Lok-pal* of Devendra Shakra, the overlord of gods are following gods—*Soma-kayik* (*Samanik* gods), *Somadev-kayik* (family members), *Vidyut Kumars* and *Vidyut Kumaris, Agni Kumars* and *Agni Kumaris, Vayu Kumars* and *Vayu Kumaris*, the moon, the sun, planets, constellations and stars. These and other such gods devoted to him, supporting him and dependent on him live under his command, attendance, order and direction

[५] जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स दाहिणेणं जाइं इमाइं समुप्पज्जंति, तं जहा—गहदंडा इ वा, गहमुसला इ वा, गहगज्जिया इ वा, एवं गहजुद्धा इ वा, गहसिंघाडगा इ वा, गहावसव्वा इ वा, अब्भाति वा, अब्भरुक्खा इ वा, संझा इ वा, गंधव्वनगरा इ वा, उक्कापाया इ वा, दिसीदाहा इ वा, गज्जिया इ वा, विज्जुया इ वा, पंसुवुट्ठी इ वा, जूवेति वा, जक्खालित्ते इ वा, धूमिया इ वा, महिया इ वा, रयुग्घाया इ वा, चंदोवरागा इ वा, सूरोवरागा इ वा, चंदपरिवेसा इ वा, सूरपरिवेसा इ वा, पडिचंदा इ वा, पडिसूरा इ वा, इंदधणू इ वा, उदगमच्छ—कपिहसिय—अमोहपाईणवाता इ वा, पडीणवाता इ वा, जाव संवट्टयवाता इ वा, गामदाहा इ वा, जाव सन्निवेसदाहा इ वा पाणक्खया जणक्खया धणक्खया कुलक्खया वसणब्भूया अणारिया जे यावन्ने तहप्पगारा ण ते सक्कस्स देविंदस्स देवरण्णो सोमस्स महारण्णो अण्णाया अदिट्ठा असुया अमुया अविण्णाया, तेसिं वा सोमकाइयाणं देवाणं।

[५] इस जम्बूद्वीप नामक द्वीप के मेरु पर्वत के दक्षिण मे जो कार्य होते है, यथा—**ग्रहदण्ड** (मंगल आदि ग्रहो की दण्ड की तरह सीधी पक्ति), **ग्रहमूसल** (मूशल की तरह आकृति मे ऊँचे ग्रह), **ग्रहगर्जित** (ग्रहो की गति करते समय होने वाली गर्जना), **ग्रहयुद्ध** (ग्रहों का आमने-सामने उत्तर-दक्षिण में पक्तिबद्ध रहना), **ग्रहशृंगाटक** (सिंघाडो के आकार मे ग्रहों का रहना), **ग्रहापसव्य** (ग्रहों की वक्र चाल), **अभ्र** (बादल), **अभ्रवृक्ष** (बादलों की वृक्ष रूप मे बनी आकृति), **संध्या** (दिशाओं का लाल होना), **गंधर्वनगर** (नगर के आकार में प्रतिबिम्ब बनना,) **उल्कापात** (तारा टूटना), **दिग्दाह** (दिशाओं में अग्नि की लपटों जैसा प्रकाश), **विद्युत** (बिजली चमकना), धूल की वृष्टि, **यूपक** (संध्या की प्रभा और चन्द्रप्रभा का मिलना), सध्या-फूलना, **यक्षादीप्त** (बिजली चमकने से यक्षाकार दीखने वाला प्रकाश), **धूमिका** (धुध), **मिहिका** (ओस), रज उद्घात (आकाश में धूलि का छा जाना), चन्द्रग्रहण, सूर्यग्रहण, **चन्द्रपरिवेष/**

सूर्यपरिवेष (चन्द्रमण्डल का सूर्यमण्डल के चारों ओर दिखाई पडने वाला वलयाकार प्रकाश), प्रति चन्द्र, प्रति सूर्य, इन्द्रधनुष अथवा उदकमत्स्य (इन्द्रधनुष के खण्ड भाग), कपिहसित (बादलों से वानर जैसी बनी विकृत आकृतियाँ), अमोघ (सूर्य के उदयास्त के समय आकाश मे खिच जाने वाली लाल-काली लकीरे), पूर्व दिशा की हवाएँ, पश्चिम दिशा की हवाएँ, यावत् संवर्तक वायु, ग्रामदाह, यावत् सन्निवेशदाह, प्राणक्षय (बल का क्षय), जनक्षय (लोकमरण या महामारी आदि), कुलक्षय, यावत् व्यसनभूत (आपदारूप), अनार्य (पापरूप) तथा उस प्रकार के दूसरे सभी कार्य, अज्ञात (छिपे हुए), अदृष्ट (न देखे हुए), अश्रुत (न सुने हुए), अस्मृत (स्मरण न किये हुए) तथा अविज्ञात (विशेष रूप में न जाने हुए) नही होते, अर्थात् उनकी तथा देवो की जानकारी में होते है।

[5] All the following activities to the south of the Meru mountain in Jambu Dveep are not unknown to, not unseen by, not unheard by, not forgotten by and not particularly unknown to him (Soma Maharaj, the *Lok-pal* of Devendra Shakra) and his subordinate gods (in other words, these activities happen in their knowledge)—*graha-dand* (coming of planets like Mars in a straight line), *graha-musal* (coming of planets in the shape of a mace), *graha-garjit* (the thundering sound of the movement of planets), *graha-yuddha* (coming of planets in two straight lines in opposite directions), *graha-shringatak* (coming of planets in a triangular shape), *graha-pasavya* (the oblique movement of planets), *abhra* (cloud formations), *abhra-vriksha* (clouds in shape of a tree), *sandhya* (horizon taking a crimson hue), *gandharvanagar* (city like formation in sky), *ulkapat* (falling of meteors), *digdaha* (flame-like glowing of directions), *vidyut* (lightening), sand storm, *yupak* (intermingling of the glow of dusk with that of moon), *yakshadeept* (demonic shapes seen due to lightening), *dhumika* (mist), *mihika* (dew), *rajodghat* (sky turning pale due to dust), lunar eclipse, solar eclipse, *Chandra-parivesh* (halo of light around the moon), *Surya-parivesh* (an elliptical halo around the sun), *prati-chandra* (appearance of two moons facing each other; an ominous sign), *prati-surya* (image of another sun seen in front of the sun), rainbow, *udak-matsya* (section of rainbow), *kapihasit* (monkey like grotesque shapes of clouds), *amogh* (black and red lines appearing in the sky at dawn and sunset), easterly winds, westerly winds... and so on up to... whirlwind, burning of a village... and so on up to... burning of a *sannivesh, praan-kshaya* (loss of strength), *jana-kshaya* (destruction of people; epidemic etc.), *kula-kshaya* (destruction of clan or race)... and so on up to... *vyasan-bhoot* (emergencies like famine), *anarya* (ignoble acts) and all other such acts.

[६] सक्कस्स णं देविंदस्स देवरण्णो सोमस्स महारण्णो इमे अहावच्चा अभिण्णाया होत्था, तं जहा–इंगालए वियालए लोहियक्खे सणिच्छरे चंदे सूरे सुक्के बुहे बहस्सती राहू।

[७] सक्कस्स णं देविंदस्स देवरण्णो सोमस्स महारण्णो सत्तिभागं पलिओवमं ठिती पण्णत्ता। अहावच्चाभिण्णायाणं देवाणं एगं पलिओवमं ठिई पण्णत्ता। एमहिड्ढीए जाव एमहाणुभागे सोमे महाराया।

[६] देवेन्द्र देवराज शक्र के लोकपाल–सोम महाराज के ये देव पुत्र रूप में पहचाने जाते हैं, जैसे– अंगारक (मगल), विकालिक (ज्योतिष्क देवो की एक जाति), लोहिताक्ष (एक महाग्रह), शनैश्चर, चन्द्र, सूर्य, शुक्र, बुध, बृहस्पति और राहु।

[७] देवेन्द्र देवराज शक्र के लोकपाल–सोम महाराज की स्थिति तीन भाग सहित एक पल्योपम की होती है और उसके द्वारा उसके पुत्ररूप मे पहचाने जाने वाले देवों की स्थिति एक पल्योपम की होती है। इस प्रकार सोम महाराज, महाऋद्धि यावत् महाप्रभाव वाला है।

[6] The following gods are recognized as the sons of Soma Maharaj, the *Lok-pal* of Devendra Shakra—Angarak (Mars), Vikalik (a clan of stellar gods), Lohitaksh (a large planet), Shanaishchar (Saturn), Chandra (the moon), Surya (the sun), Shukra (Venus), Budh (Mercury), Brihaspati (Jupiter) and Rahu.

[7] The life-span of Soma Maharaj, the *Lok-pal* of Devendra Shakra is one and one-third of a *Palyopam* (a metaphoric unit of time). The life-span of the said gods recognized as his sons is one *Palyopam*. Thus Soma Maharaj, the *Lok-pal* of Devendra Shakra is endowed with great opulence.. and so on up to .. influence.

यम लोकपाल का वर्णन LOK-PAL YAMA

५. [प्र. १] कहि णं भंते ! सक्कस्स देविंदस्स देवरण्णो जमस्स महारण्णो वरसिट्ठे णामं महाविमाणे पण्णत्ते ?

[उ.] गोयमा ! सोहम्मवडिंयस्स महाविमाणस्स दाहिणेणं सोहम्मे कप्पे असंखेज्जाइं जोयणसहस्साइं वीईवइत्ता एत्थ णं सक्कस्स देविंदस्स देवरण्णो जमस्स महारण्णो वरसिट्ठे णामं महाविमाणे पण्णत्ते, अद्धतेरस जोयणसयसहस्साइं जहा सोमस्स विमाणं तहा जाव अभिसेओ। रायहाणी तहेव जाव पासायपंतीओ।

५. [प्र. १] भगवन् ! देवेन्द्र देवराज शक्र के लोकपाल–यम महाराज का वरशिष्ट नामक महाविमान कहाँ है ?

[उ.] गौतम ! सौधर्मावतसक नाम के महाविमान से दक्षिण मे, सौधर्मकल्प से असंख्य हजार योजन आगे चलने पर, देवेन्द्र देवराज शक्र के लोकपाल यम महाराज का वरशिष्ट नामक महाविमान है, जो साढ़े बारह लाख योजन लम्बा–चौडा है, इत्यादि सारा वर्णन सोम महाराज के (सन्ध्याप्रभ) विमान

की तरह, यावत् (रायपसेणिय मे वर्णित) 'अभिषेक' (वर्णन) तक कहना चाहिए। इसी प्रकार राजधानी और यावत् प्रासादो की पक्तियो के विषय मे समझना चाहिए।

5. [Q. 1] *Bhante* ! What is the location of the *mahavimaan* (great celestial vehicle) named Varashisht belonging to Yama Maharaj, the *Lok-pal* of Devendra Shakra, the overlord of gods ?

[Ans.] To the south of Saudharmavatamsak Mahavimaan, on going innumerable *Yojans* away from Saudharma Kalp, comes the *mahavimaan* (great celestial vehicle) named Varashisht belonging to Yama Maharaj, the *Lok-pal* of Devendra Shakra, the overlord of gods. Its length-breadth (*ayam-vishkambh*) is 1 25 million *Yojans* Other details should be repeated as mentioned about the *vimaan* of Soma Maharaj .. and so on up to anointing (from *Rajaprashniya Sutra*). In the same way the description of the capital city should be repeated .. and so on up to . the rows of mansions

[२] सक्कस्स णं देविंदस्स देवरण्णो जमस्स महारण्णो इमे देवा आणाइ जाव चिट्ठंति, तं जहा–जमकाइया इ वा, जमदेवकाइया इ वा, पेयकाइया इ वा, पेयदेवयकाइया इ वा, असुरकुमारा असुरकुमारीओ, कंदप्प निरयवाला आभिओगा जे यावन्ने तहप्पगारा सव्वे ते तब्भत्तिआ, तप्पक्खिआ तब्भारिया सक्कस्स देविंदस्स देवरण्णो जमस्स महारण्णो आणाए जाव चिट्ठंति।

[२] देवेन्द्र देवराज शक्र के लोकपाल यम महाराज की आज्ञा, सेवा, वचन–पालन और निर्देश मे ये देव रहते है, यथा–यमकायिक (सामानिक देव), यमदेवकायिक (यमदेव के पारिवारिक देव), प्रेतदेवकायिक, असुरकुमार–असुरकुमारियाँ, कन्दर्प (क्रीडाशील देव), निरयपाल (नरकपाल), आभियोग (आदेशवर्ती), ये और इसी प्रकार के वे सब देव, जो उस (यम) की भक्ति मे तत्पर है, उसके पक्षधर तथा उससे भरण–पोषण पाने वाले तदधीन भृत्य (सेवक) या उसके कार्यभारवाहक है। ये सब यम महाराज की आज्ञा मे निर्देश रहते है।

[2] Under the command, attendance, order and direction of Yama Maharaj, the *Lok-pal* of Devendra Shakra, the overlord of gods are following gods—*Yama-kayik* (*Samanik* gods), *Yamadev-kayik* (family members), *Pret-dev kayik, Asur Kumars* and *Asur Kumaris, Kandarp* (playful gods), *Narak-pals* (guardians of hell), and *Aabhiyoga* (attendant gods) These and other such gods devoted to him (Yama), supporting him and dependent on him live under his command, attendance, order and direction

[३] जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स दाहिणेणं जाइं इमाइं समुप्पज्जंति, तं जहा–डिंबा इ वा, डमरा इ वा, कलहा इ वा, बोला इ वा, खारा इ वा, महाजुद्धा इ वा, महासंगामा इ वा, महासत्थनिवडणा

इ वा, एवं महापुरिसनिवडणा इ वा, महारुधिरनिवडणा इ वा, दुब्भूया इ वा, कुलरोगा इ वा, गामरोगा इ वा, मंडलरोगा इ वा, नगररोगा इ वा, सीसवेयणा इ वा, अच्छिवेयणा इ वा, कण्ण-नह-दंतवेयणा इ वा, इंदग्गहा इ वा, खंदग्गहा इ वा, कुमारग्गहा इ वा, जक्खग्गहा इ वा, भूयग्गहा इ वा, एगाहिया इ वा, वेहिया इ वा, तेहिया इ वा, चाउत्थया इ वा, उव्वेयगा इ वा, कासा इ वा, खासा इ वा, सासा इ वा, सोसा इ वा, जरा इ वा, दाहा इ वा, कच्छकोहा इ वा, अजीरया, पंडुरोया, अरिसा इ वा, भगंदरा इ वा, हिययसूला इ वा, मत्थयसूला इ वा, जोणिसूला इ वा, पाससूला इ वा, कुच्छिसूला इ वा, गाममारी इ वा, नगर-खेड-कव्वड-दोणमुह-मंडव-पट्टण-आसम-संवाह-सन्निवेसमारी इ वा, पाणक्खया, धणक्खया, जणक्खया, कुलक्खया, वसणब्भया अणारिया जे यावन्ने तहप्पगारा णं ते सक्कस्स देविंदस्स देवरण्णो जमस्स महारण्णो इमे देवा अण्णाया ५, तेसिं वा जमकाइयाणं देवाणं।

[३] जम्बूद्वीप नामक द्वीप में मेरु पर्वत से दक्षिण में जो ये स्थितियाँ उत्पन्न होती है, यथा-डिम्ब (विघ्न-दगा), डमर (उपद्रव/विद्रोह), कलह (जोर से चिल्ला-चिल्लाकर झगडा करना), बोल (अव्यक्त अक्षरो की ध्वनियाँ), खार (परस्पर का मत्सर), महायुद्ध (अव्यवस्थित महारण), महासंग्राम-(चक्रव्यूहादि से युक्त व्यवस्थित युद्ध), महाशस्त्रनिपात अथवा इसी प्रकार महापुरुषों की मृत्यु, महारक्तपात, दुर्भूत (मनुष्यो और अनाज आदि को हानि पहुँचाने वाले दुष्ट जीव), कुल-रोग (वश-परम्परागत पैतृक रोग), ग्राम-रोग, मण्डल-रोग (एक मण्डल मे फैलने वाली सक्रामक बीमारी), नगर-रोग, शिरोवेदना (सिरदर्द), नेत्रपीडा, कान, नख और दाँत की पीडा, इन्द्रग्रह (शरीर में इन्द्र का आवेश), स्कन्दग्रह (कार्तिकेय का आवेश), कुमारग्रह, यक्षग्रह (यक्षावेश), भूतग्रह (भूत का आवेश), एकान्तर ज्वर (एकाह्निक), द्वि-अन्तर (दूसरे दिन आने वाला बुखार), तिजारा (तीसरे दिन आने वाला ज्वर), चौथिया (चौथे दिन आने वाला ज्वर), उद्वेजक (इष्टवियोगादि जन्य उद्वेग दिलाने वाला काण्ड, अथवा लोकोद्वेगकारी चोरी आदि काण्ड), कास (खाँसी), श्वास, दमा, बलनाशक ज्वर (शोष), जरा (बुढापा), दाहज्वर, कच्छ-कोह (शरीर के कक्षादि भागो मे सडाँध), अजीर्ण पाण्डुरोग (पीलिया), अर्शरोग (मस्सा-बवासीर), भगदर, हृदयशूल (हृदय-गति-अवरोधक पीडा), मस्तकपीडा, योनिशूल, पार्श्वशूल (काँख या बगल की पीडा), कुक्षि (उदर), शूल, ग्राममारी, नगरमारी, खेट, कर्बट, द्रोणमुख, मडम्ब, पट्टण, आश्रम, सम्बाध और सन्निवेश, इन सबकी मारी (मृगीरोग-महामारी), प्राणक्षय, धनक्षय, जनक्षय, कुलक्षय, व्यसनभूत (विपत्तिरूप), अनार्य (पापरूप); ये और इसी प्रकार के दूसरे सब कार्य देवेन्द्र देवराज शक्र के लोकपाल-यम महाराज से अथवा उसके यमकायिक देवो से अज्ञात, अदृष्ट, अश्रुत, अविस्मृत और अविज्ञात नही है।

[3] All the following conditions to the south of the Meru mountain in Jambu Dveep are not unknown to, not unseen by, not unheard by, not forgotten by and not particularly unknown to him (Yama Maharaj, the *Lok-pal* of Devendra Shakra) and his subordinate gods (in other words, these conditions occur in their knowledge)—*dimb* (problems like riots), *damar* (turmoil or revolt), *kalah* (strife), *bol* (incoherent speech), *khaar*

(mutual antagonism), *maha-yuddha* (great war), *maha-sangram* (great battle), *mahashastra-nipaat* (use of great weapons), *mahapurush-nirvan* (death of great men), *maharaktapaat* (great bloodshed), *durbhoot* (creatures causing damage to people and food), *kula-roag* (hereditary diseases), *gram-roag* (village epidemic), *mandal-roag* (district epidemic), *nagar-roag* (city epidemic), *shirovedana* (headache), pain in eyes, ears, nails and teeth, *Indragraha* (affliction by Indra), *Skandagraha* (affliction by Kartikeya), *Kumar-graha* (affliction by *Kumar*), *Yakshagraha* (affliction by *Yaksh*), *Bhoot-graha* (affliction by *Bhoot*) [all these are afflictions caused by different evil spirits], *ekantar jvar* (fever on alternate days), *dvi-antar* (fever after a gap of two days), *tijara* (fever after a gap of three days), *chauthiya* (fever after a gap of four days), *udvejak* (restlessness due to separation from loved ones or theft etc), *kasa* (bronchitis), *shvas* (asthma), *shosha* (debilitating fever), *jara* (dotage), *dahajvar* (fever with burning sensation), *kachchha-koha* (tumor or fetid sores in armpits and other such parts of the body), *ajeerna* (indigestion), *panduroag* (jaundice), *arsha* (bleeding piles), *bhagandar* (fistula of the anus), *hridayashula* (anginal pain), *mastak-pida* (migraine or cranial neuralgia), *yoni-shula* (vaginal pain), *parshva-shula* (pain in armpit or sides of the body), *kukshishula* (stomach-ache); epidemic in village (*gram*), *nagar* (city), *khet* (kraal), *karbat* (market), *dronmukh* (hamlet), *madamb* (borough), *pattan* (harbour), *ashram* (hermitage), *samvah* (settlement in a valley) and *sannivesh* (temporary settlement); *pran-kshaya* (loss of life), *dhan-kshaya* (loss of wealth), *jana-kshaya* (loss of people), *kula-kshaya* (loss of clan), *vyasan-bhoot* (bad habits), ignoble and other such acts

[४] सक्कस्स णं देविंदस्स देवरण्णो जमस्स महारण्णो इमे देवा अहावच्चा अभिण्णाया होत्था, तं जहा—

अंबे १ अंबरिसे चेव २ सामे ३ सबले त्ति यावरे ४।
रुद्दोवरुद्दे ५-६ काले य ७ महाकाले त्ति यावरे ८॥१॥

असी य ९ असिपत्ते १० कुंभे ११ वालू १२ वेतरणी ति य १३।
खरस्सरे १४ महाघोसे १५ एए पण्णरसासिया॥२॥

[४] देवेन्द्र देवराज शक्र के लोकपाल—यम महाराज के ये देव अपत्य (पुत्र) रूप मे पहचाने जाते है—

(१) अम्ब, (२) अम्बरिष, (३) श्याम, (४) शबल, (५) रुद्र, (६) उपरुद्र, (७) काल, (८) महाकाल, (९) असिपत्र, (१०) धनुष, (११) कुम्भ, (१२) बालू, (१३) वैतरणी, (१४) खरस्वर, और (१५) महाघोष। ये पन्द्रह देव प्रसिद्ध हैं।

[4] The following gods are recognized as the sons of Yama Maharaj, the *Lok-pal* of Devendra Shakra—

(1) Amb, (2) Ambarish, (3) Shyam, (4) Shabal, (5) Rudra, (6) Uparudra, (7) Kaal, (8) Mahakaal, (9) Asipatra, (10) Dhanush, (11) Kumbh, (12) Balu, (13) Vaitarani, (14) Kharasvar, and (15) Mahaghosh. These are fifteen famous gods.

[५] सक्कस्स णं देविंदस्स देवरण्णो जमस्स महारण्णो सत्तिभागं पलिओवमं ठिती पण्णत्ता। अहावच्चाभिण्णायाणं देवाणं एगं पलिओवमं ठिती पण्णत्ता। एमहिड्ढिए जाव जमे महाराया।

[५] देवेन्द्र देवराज शक्र के लोकपाल यम महाराज की स्थिति तीन भाग सहित एक पल्योपम की है और उसके अपत्यरूप से माने हुए देवो की स्थिति एक पल्योपम की है। यम महाराज की ऐसी महाऋद्धि है।

[5] The life-span of Yama Maharaj, the *Lok-pal* of Devendra Shakra, is one and one-third of a *Palyopam* (a metaphoric unit of time). The life-span of the said gods, recognized as his sons, is one *Palyopam*. Thus Yama Maharaj, the *Lok-pal* of Devendra Shakra, is endowed with great opulence. and so on up to... influence.

विवेचन : पन्द्रह देवो के नाम–पूर्वजन्म मे क्रूर क्रिया करने वाले, क्रूर परिणामो वाले, सतत पापरत कुछ जीव अज्ञानतप से किये गये निरर्थक देहदमन के फलस्वरूप असुर निकाय मे उत्पन्न होते हैं, जो परमाधार्मिक असुर कहलाते है। ये तीसरी नरकभूमि तक जाकर नारकी जीवो को कष्ट देकर प्रसन्न होते हैं, यातना पाते हुए नारको को देखकर ये आनन्द मानते है। इनके गुण निष्पन्न नाम इस प्रकार है–(१) **अम्ब** = जो नारकों को ऊपर आकाश मे ले जाकर गिराते है, (२) **अम्बरीष** = जो छुरी आदि से नारको के छोटे–छोटे, भाड में पकने योग्य टुकडे करते है, (३) **श्याम** = ये काले रग के व भयकर स्थानो मे नारको को पटकते एवं पीटते है, (४) **शबल** = जो चितकबरे रग के व नारको की आँते–नसे एव कलेजे को बाहर खींच लेते हैं, (५) **रुद्र** = नारको को भाला, बर्छी आदि शस्त्रो मे पिरो देने वाले रौद्र–भयकर असुर, (६) **उपरुद्र** = नारकों के अंगोपागों को फाडने वाले अतिभयकर असुर, (७) **काल** = नारको को कडाही में पकाने वाले, काले रग के असुर, (८) **महाकाल** = नारको के माँस के टुकडे–टुकडे करके उन्हे खिलाने वाले, अत्यन्त काले रग के असुर, (९) **असिपत्र** = जो तलवार के आकार के पत्ते वैक्रिय से बनाकर नारको पर गिराते है, (१०) **धनुष** = जो धनुष द्वारा अर्ध–चन्द्रादि बाण फैककर नारको के नाक, कान आदि बींध डालते है, (११) **कुम्भ** = जो नारकों को कुम्भ या कुम्भी में पकाते है, (१२) **बालू** = वैक्रिय द्वारा निर्मित वज्राकार या कदम्ब पुष्पाकार रेत में नारकों को डालकर चने की तरह भूनते है, (१३) **वैतरणी** = जो रक्त, माँस, मवाद, ताँबा, शीशा आदि गर्म पदार्थों से उबलती हुई नदी में नारको को फैंककर तैरने के लिए बाध्य करते हैं, (१४) **खरस्वर** = जो वज्रकण्टकों के भरे शाल्मलि वृक्ष पर नारको को चढाकर, करुणक्रन्दन करते हुए नारको को कठोर स्वरपूर्वक खीचते है, (१५) **महाघोष** = डर से भागते हुए नारकों को पकडकर बाड़े मे बन्द कर देते हैं, जोर से चिल्लाते है। *(वृत्ति, पत्राक १९८, भगवतीसूत्र प घेवरचन्द जी, भाग २, पृष्ठ ७१९–७२०)*

Elaboration—The names of fifteen gods—Some living beings who indulge in cruel acts with cruel attitude during their past births reincarnate in the genus of *Asurs* due to senseless mortification of the body through ignorant austerities. They are called *Paramarthik Asurs*. They descend till the third hell and derive pleasure in torturing infernal beings and seeing them suffer pain. Their attribute-based names are as follows—

(1) **Amb**—They fly in the sky with infernal beings and throw them. (2) **Ambarish**—They slice infernal beings with hatchets into small pieces to be roasted in ovens (3) **Shyam**—They are black and they toss and beat infernal beings in terrible spots (4) **Shabal**—They are of speckled colour and they snatch out the intestines, nerves and levers of the infernal beings. (5) **Rudra**—They are ferocious *Asurs* who pierce through the bodies of infernal beings with spears and lances. (6) **Uparudra**—They are terrible *Asurs* who tear apart limbs and other parts of the bodies of infernal beings. (7) **Kaal**—The black coloured *Asurs* who fry infernal beings in cauldrons (8) **Mahakaal**—The deep black coloured *Asurs* who cut infernal beings to pieces and feed them. (9) **Asipatra**—They create sword shaped leaves and throw them over infernal beings (10) **Dhanush**—They cut and pierce nose and ears of infernal beings by launching arrows of different shapes. (11) **Kumbh**—They cook infernal beings in large or small pitchers (12) **Balu**—They roast infernal beings in heaps of diamond and other shaped sand particles (13) **Vaitarani**—They throw infernal beings in a river of blood, flash, pus, molten copper, molten lead, and other molten metals, and force them to swim (14) **Kharasvar**—They force infernal beings to climb on thorn filled Shalmali trees and then drag them mingling harsh shouts with their pathetic wailing. (15) **Mahaghosh**—They catch infernal beings running with fear and scream with joy. *(Vritti, leaf 198, Bhagavati Sutra by Pt Ghevar Chand, part-2, pp 719-720)*

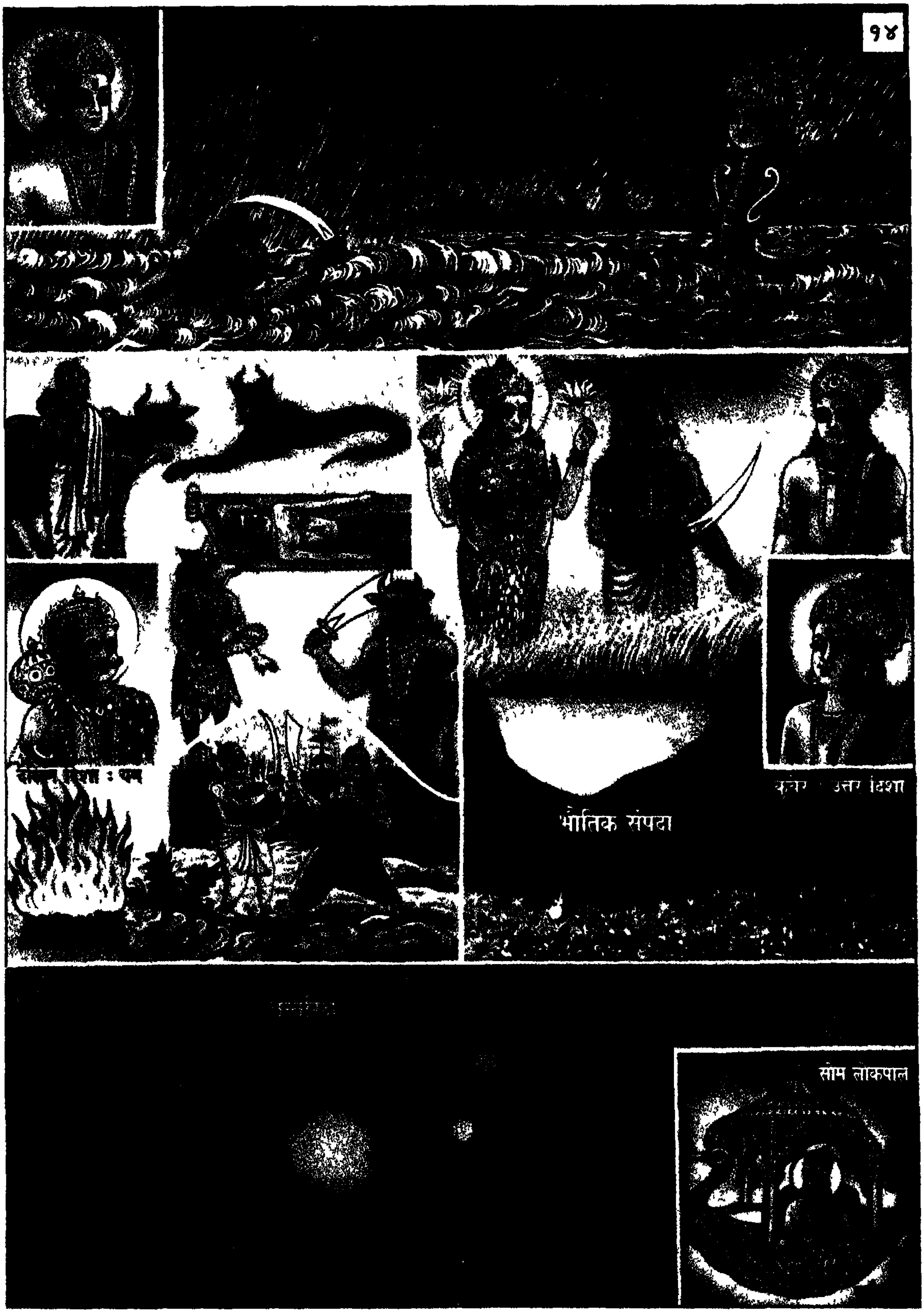
वरुण लोकपाल LOK-PAL VARUN

६. [प्र. १] कहि णं भंते ! सक्कस्स देविंदस्स देवरण्णो वरुणस्स महारण्णो सयंजले नामं महाविमाणे पण्णत्ते ?

[उ.] गोयमा ! तस्स णं सोहम्मवडिंसयस्स महाविमाणस्स पच्चत्थिमेणं सोहम्मे कप्पे असंखेज्जाइं जहा सोमस्स तहा विमाण–रायहाणीओ भाणियव्वा जाव पासायवडिंसया नवरं नामनाणत्तं।

६. [प्र. १] भगवन् ! देवेन्द्र देवराज शक्र के लोकपाल–वरुण महाराज का स्वयज्वल नामक महाविमान कहाँ है ?

चार लोकपाल



चित्र परिचय-१४	Illustration No. 14

चार लोकपाल

सौधर्मकल्प के अधिपति देवराज शक्र के आज्ञानुवर्ती चार लोकपाल देव रहते है।

(१) पूर्व दिशा का अधिरक्षक सोम देव है। उसके अधीन मगल, शनि, केतु आदि ग्रह तथा अन्तरिक्ष से सम्बन्धित सभी कार्य रहते है। जैसे- सूर्य, चन्द्र, तारामण्डल, अग्निकुमार, वायुकुमार आदि। आकाश मे बादलो का गर्जन, बिजली चमकना, भरत क्षेत्र मे अनेक प्रकार की प्राकृतिक विपदाएँ आदि से सम्बन्धित सब कार्य सोम महाराज के अधीन है।

(२) दक्षिण दिशा का स्वामी यम देव है। प्रेत, नरकपाल, परमाधामी देव, कादर्पिक आदि देव, भरत क्षेत्र मे होने वाले सभी रोग, महामारी, मृत्यु, महासग्राम, दगा, अग्निप्रकोप आदि कार्यो की जिम्मेदारी उनके अधीनस्थ देव सँभालते है।

(३) पश्चिम दिशा का रक्षक वरुणदेव है। उदधि कुमार (समुद्र देव) नागकुमार, स्तनित कुमार आदि देव उनके कार्याधीक्षक है। अतिवृष्टि अनावृष्टि, बादलो का गर्जन-तर्जन, समुद्र, नदी, तूफान, बाढ, दुर्भिक्ष आदि सब कार्यो की जिम्मेदारी उन पर है।

(४) उत्तरदिशा रक्षक वैश्रमण देव है। सुवर्ण कुमार (धन के रक्षक देव) वाणव्यन्तर देव देवियाँ, भरत क्षेत्रवर्ती स्वर्ण चाँदी ताँबा आदि की खाने, हीरे, रत्न आदि के भण्डार तथा धरती पर उत्पन्न होने वाले धान्य आदि की फसले, समस्त भौतिक सम्पदा पर वैश्रमण (कुवेर) देव का ध्यान रहता है।

शतक ३, उ. ७, सूत्र १८

FOUR LOK-PALS

Devendra Shakra, the overlord of gods has four Lok-pals (governors of different directions) under him

(1) Soma is the guardian of the east Under his command and supervision are planets like Mars, Saturn and Ketu and all activities related to space For example—the sun, the moon, stars, Agni Kumar gods, Vayu Kumar gods etc Activities like thundering of clouds lightening, and various natural calamities in the Jambu continent are under the command of Soma

(2) Yam is the guardian of the south Under his command and supervision are Pret, Narak-pal, Paramadhami and Kandarpik gods as well as calamities like diseases, epidemics, deaths, great wars, riots and fire

(3) Varun is the guardian of the west Under his command and supervision are Udadhi Kumar (gods of sea), Naag Kumar, Stanit Kumar and other gods as well as activities including excessive rains, insufficient rain, thundering of clouds, seas, rivers, storms, floods, and famines

(4) Vaishraman is the guardian of the north Under his command and supervision are Suvarna Kumar (guardian gods of wealth), Vanavyantar gods and goddesses as well as mines of gold, silver, copper and other minerals, stocks of diamonds and other gems, all the land crops and all physical wealth

—Shatak 3, lesson 7, Sutra 18

[उ.] गौतम ! उस सौधर्मावतंसक महाविमान से पश्चिम मे सौधर्मकल्प से असख्येय हजार योजन आगे जाने के बाद, वहीं वरुण महाराज का स्वयंज्वल नाम का महाविमान आता है; इससे सम्बन्धित सारा वर्णन सोमदेव के महाविमान की तरह जानना चाहिए, राजधानी यावत् प्रासादावतसको के सम्बन्ध में भी इसी प्रकार समझना चाहिए। केवल नामों मे अन्तर है।

6. [Q. 1] *Bhante* ! What is the location of the *mahavimaan* (great celestial vehicle) named Svayamjval belonging to Varun Maharaj, the *Lok-pal* of Devendra Shakra, the overlord of gods ?

[Ans.] To the south of that Saudharmavatamsak Mahavimaan, on going innumerable *Yojans* away from Saudharma Kalp, comes the *mahavimaan* (great celestial vehicle) named Svayamjval belonging to Varun Maharaj, the *Lok-pal* of Devendra Shakra, the overlord of gods Other details should be repeated as mentioned about the *vimaan* of Soma Maharaj In the same way the description of the capital city should be repeated . and so on up to.. the rows of mansions. The only difference is in names

[२] सक्कस्स णं वरुणस्स महारण्णो इमे देवा जाव चिट्ठंति, तं जहा– वरुणकाइया ति वा, वरुणदेवयकाइया इ वा, नागकुमारा नागकुमारीओ, उदहिकुमारा उदहिकुमारीओ, थणियकुमारा थणियकुमारीओ, जे यावण्णे तहप्पगारा सव्वे ते तब्भत्तिया जाव चिट्ठंति।

[३] जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स दाहिणेणं जाइं इमाइं समुप्पज्जंति, तं जहा–अतिवासा ति वा, मंदवासा ति वा, सुवुट्ठी ति वा, दुव्वुट्ठी ति वा, उदब्भेया ति वा, उदप्पीला इ वा, उदवाहा ति वा, पवाहा ति व, गामवाहा ति वा, जाव सन्निवेसवाहा ति वा, पाणक्खया जाव तेसिं वा वरुणकाइयाणं देवाणं।

[२] देवेन्द्र देवराज शक्र के लोकपाल वरुण महाराज के ये देव आज्ञा मे यावत् (निर्देश में) रहते हैं– वरुणकायिक–वरुणदेवकायिक, नागकुमार–नागकुमारियाँ; उदधिकुमार–उदधिकुमारियाँ, स्तनितकुमार–स्तनितकुमारियाँ, ये और दूसरे सब इस प्रकार के देव, उनकी भक्ति वाले यावत् उनकी आज्ञा मे रहते है।

[३] जम्बूद्वीप नामक द्वीप में मन्दर पर्वत से दक्षिण दिशा में जो ये स्थितियाँ समुत्पन्न होती हैं, वे इस प्रकार है–अतिवर्षा, मन्दवर्षा, सुवृष्टि, दुर्वृष्टि, उदकोद्भेद (पर्वत आदि से निकलने वाला झरना), उदकोत्पील (सरोवर आदि मे जमा हुई जलराशि), उदवाह (पानी का अल्प प्रवाह), प्रवाह, ग्रामवाह (ग्राम का बह जाना) यावत् सन्निवेशवाह, प्राणक्षय यावत् इसी प्रकार के दूसरे सभी उपद्रव वरुण महाराज से अथवा वरुणकायिक देवो से अज्ञात नहीं है।

[2] Under the command, attendance, order and direction of Varun Maharaj, the *Lok-pal* of Devendra Shakra, the overlord of gods are following gods—*Varun-kayik* (*Samanik* gods), *Varundev-kayik* (family members), *Naag Kumars* and *Naag Kumaris, Udadhi Kumars* and *Udadhi*

Kumaris, *Stanit Kumars* and *Stanit Kumaris*. These and other such gods devoted to him (Varun)... and so on up to... live under his command.

[3] All the following conditions to the south of Meru mountain in Jambu Dveep are not unknown to... and so on up to... him (Varun Maharaj, the *Lok-pal* of Devendra Shakra) and his subordinate *gods*—*ativarsha* (torrential rain), *mand-varsha* (deficient rain), *suvrishti* (good rain), *durvrishti* (bad rain), *udakodbhed* (mountain stream), *udakotpeel* (lake), *udvaha* (trickling stream), *pravaha* (flowing water or river), *gram-vaha* (village flooding), ... and so on up to . *sannivesh-vaha* (flooding of large populated areas), *pran-kshaya* (loss of life)... and so on up to . other such calamities.

[४] सक्कस्स णं देविंदस्स देवरण्णो वरुणस्स महारण्णो जाव अहावच्चाभिण्णया होत्था, तं जहा—कक्कोडए, कद्दमए, अंजणे, संखवालए, पुंडे, पलासे, मोएजए, दहिमुहे, अयंपुले, कायरिए।

[५] सक्कस्स णं देविंदस्स देवरण्णो वरुणस्स महारण्णो देसूणाइं दो पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता। अहावच्चाभिण्णायाणं देवाणं एगं पलिओवमं ठिती पण्णत्ता। एमहिड्ढीए जाव वरुणे महाराया।

[४] देवेन्द्र देवराज शक्र के (तृतीय) लोकपाल—वरुण महाराज के ये देव अपत्यरूप से प्रसिद्ध है। यथा—**कर्कोटक** (लवणसमुद्रगत कर्कोटक नामक पर्वत पर रहने वाला नागराज), **कर्दमक** (अग्निकोण मे विद्युत्प्रभ नामक पर्वतवासी नागराज), **अंजन** (वेलम्ब नामक वायुकुमारेन्द्र का लोकपाल), **शंखपाल** (धरणेन्द्र नामक नागराज का लोकपाल), पुण्ड्र, पलाश, मोद, जय, दधिमुख अयपुल और कातरिक।

[५] देवेन्द्र देवराज शक्र के तृतीय लोकपाल वरुण महाराज की स्थिति कुछ कम दो पल्योपम की है और वरुण महाराज के अपत्यरूप से पहचाने जाने वाले देवो की स्थिति एक पल्योपम की है। वरुण महाराज ऐसी महाऋद्धि यावत् महाप्रभाव वाला है।

[4] The following gods are recognized as the sons of Varun Maharaj, the *Lok-pal* of Devendra Shakra—Karkotak (the serpent god living on Karkotak mountain in Lavan Samudra), Kardamak (the serpent god living on Vidyutprabh mountain in the south-east direction), Anjan (the *Lok-pal* of Vailamb, the overlord of *Vayu Kumars*), Shankh-pal (the *Lok-pal* of Dharanendra, the overlord of *Naag Kumars*), Pundra, Palash, Moda, Jaya, Dadhimukh, Ayampul and Kaatarik.

[5] The life-span of Varun Maharaj, the third *Lok-pal* of Devendra Shakra, is slightly less than two *Palyopam* (a metaphoric unit of time). The life-span of the gods recognized as his sons is one *Palyopam*. Thus Varun Maharaj, the *Lok-pal* of Devendra Shakra, is endowed with great opulence.. and so on up to... influence.

७. [प्र. १] कहि णं भंते ! सक्कस्स देविंदस्स देवरण्णो वेसमणस्स महारण्णो वग्गू णामं महाविमाणे पण्णत्ते ?

[उ.] गोयमा ! तस्स णं सोहम्मवडिंसयस्स महाविमाणस्स उत्तरेणं जहा सोमस्स विमाण–रायहाणिवत्तव्वया तहा नेयव्वा जाव पासायवडिंसया।

७. [प्र. १] भगवन् ! देवेन्द्र देवराज शक्र के (चतुर्थ) लोकपाल–वैश्रमण महाराज का वल्गु नामक महाविमान कहाँ है ?

[उ.] गौतम ! वैश्रमण महाराज का विमान, सौधर्मावतंसक नामक महाविमान के उत्तर मे है। इस सम्बन्ध मे सारा वर्णन सोम महाराज के महाविमान की तरह जानना चाहिए; और यावत् राजधानी यावत् प्रासादावतसक तक का वर्णन भी उसी तरह जान लेना चाहिए।

7. [Q. 1] *Bhante* ! What is the location of the *mahavımaan* (great celestial vehicle) named Valgu belonging to Vaishraman Maharaj, the (fourth) *Lok-pal* of Devendra Shakra, the overlord of gods ?

[Ans.] The *mahavimaan* of Vaishraman Maharaj is towards the north of Saudharmavatamsak Mahavimaan. All other details should be repeated as mentioned about the *vımaan* of Soma Maharaj. In the same way the descriptıon of the capital city should be repeated. . and so on up to. Prasadavatamsak (the rows of mansions).

[२] सक्कस्स णं देविंदस्स देवरण्णो वेसमणस्स महारण्णो इमे देवा आणा–उववाय, वयण–निद्देसे चिट्ठंति, तं जहा–वेसमणकाइया ति वा, वेसमण–देवयकाइया ति वा, सुवण्णकुमारा सुवण्णकुमारीओ, दीवकुमारा दीवकुमारीओ, दिसाकुमारा दिसाकुमारीओ, वाणमंतरा वाणमंतरीओ, जे यावन्ने तहप्पगारा सव्वे ते तब्भत्तिया जाव चिट्ठंति।

[२] देवेन्द्र देवराज शक्र के लोकपाल वैश्रमण महाराज की आज्ञा, सेवा, वचन और निर्देश में ये देव रहते है। यथा–वैश्रमणकायिक–वैश्रमणदेवकायिक, सुवर्णकुमार–सुवर्णकुमारियाँ, द्वीपकुमार–द्वीपकुमारियाँ, दिक्कुमार–दिक्कुमारियाँ, वाणव्यन्तर देव–वाणव्यन्तर देवियाँ, ये और इसी प्रकार के अन्य सभी देव, जो उसकी भक्ति, पक्ष और भृत्यता (या भारवहन) करते हैं, उसकी आज्ञा आदि में रहते है।

[2] Under the command, attendance, order and direction of Vaishraman Maharaj, the *Lok-pal* of Devendra Shakra, the overlord of gods, are following gods—*Vaishraman-kayik* (*Samanık* gods), *Vaıshraman-dev-kayik* (family members), *Suvarn Kumars* and *Suvarn Kumarıs*, *Dveep Kumars* and *Dveep Kumaris*, *Dik Kumars* and *Dik*

Kumaris, Vanavyantar gods and goddesses. These and other such gods devoted to him (Vaishraman)... and so on up to .. live under his command.

[३] जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स दाहिणेणं जाइं इमाइं समुप्पज्जंति, तं जहा–अयागरा इ वा, तउयागरा इ वा, तंबागरा इ वा, एवं सीसागरा इ वा, हिरण्णागरा इ वा, सुवण्णागरा इ वा, रयणागरा इ वा, वइरागरा इ वा, वसुहारा इ वा, हिरण्णवासा इ वा, सुवण्णवासा इ वा, रयणवासा इ वा, वइरवासा इ वा, आभरणवासा इ वा, पत्तवासा इ वा, पुप्फवासा इ वा, फलवासा इ वा, बीयवासा इ वा, मल्लवासा इ वा, वण्णवासा इ वा, चुण्णवासा इ वा, गंधवासा इ वा, वत्थवासा इ वा, हिरण्णवुट्ठी इ वा, सुवण्णवुट्ठी इ वा, रयणवुट्ठी इ वा, वइरवुट्ठी इ वा, आभरणवुट्ठी इ वा, पत्तवुट्ठी इ वा, पुप्फवुट्ठी इ वा, फलवुट्ठी इ वा, बीयवुट्ठी इ वा, मल्लवुट्ठी इ वा, वण्णवुट्ठी इ वा, चुण्णवुट्ठी इ वा, गंधवुट्ठी., वत्थवुट्ठी इ वा, भायणवुट्ठी इ वा, खीरवुट्ठी इ वा, सुकाला इ वा, दुकाला इ वा, अप्पग्घा इ वा, महग्घा इ वा, सुभिक्खा इ वा, दुभिक्खा इ वा, कयविक्कया इ वा, सन्निहि इ वा, सन्निचया इ वा, निही इ वा, णिहाणा इ वा, चिरपोराणा इ वा, पहीणसामिया इ वा, पहीणसेतुया इ वा, पहीणमग्गाणि वा, पहीणगोत्तागारा इ वा, उच्छन्नसामिया इ वा, उच्छन्नसेतुया इ वा, उच्छन्नगोत्तागारा इ वा सिंघाडग–तिग–चउक्क–चच्चर–चउम्मुह–महापह–पहेसु नगर–निद्धमणेसु सुसाण–गिरि–कंदर–संति–सेलोवट्ठाण–भवणगिहेसु सन्निक्खित्ताइं चिट्ठंति, ण ताइं सक्कस्स देविंदस्स देवरण्णो वेसमणस्स महारण्णो अण्णायाइं अदिट्ठाइं असुयाइं अविन्नायाइं, तेसिं वा वेसमणकाइयाणं देवाणं।

[३] जम्बूद्वीप नामक, द्वीप मे मदर पर्वत से दक्षिण मे जो ये स्थितियाँ होती है, जैसे कि–लोहे की खाने, राँगे की खाने, ताँबे की खाने तथा शीशे की खाने, हिरण्य (चाँदी) की, सुवर्ण की, रत्न की और वज्र की खाने, वसुधारा (रत्नो की वृष्टि) हिरण्य की, सुवर्ण की, रत्न की, वज्र की, आभरण की, पत्र की, पुष्प की, फल की, बीज की, माला की, वर्ण की, चूर्ण की, गन्ध की और वस्त्र की वर्षा, भाजन (बर्तन) और क्षीर की वृष्टि, सुकाल, दुष्काल, अल्पमूल्य (सस्ता), महामूल्य (महँगा), सुभिक्ष (भिक्षा की सुलभता), दुर्भिक्ष (भिक्षा की दुर्लभता), क्रय–विक्रय (खरीदना–बेचना), सन्निधि (घी, गुड आदि का सचय), सन्निचय (अन्न आदि का सचय), निधियाँ (खजाने–कोष), निधान (जमीन मे गड़ा हुआ धन), चिर–पुरातन (बहुत पुराने), जिनके स्वामी समाप्त हो गए, जिनकी सारसम्भाल करने वाले नही रहे, जिनकी कोई खोजखबर (मार्ग) नही है, जिनके स्वामियो के गोत्र और आगार (घर) नष्ट हो गए, जिनके स्वामी उच्छिन्न (छिन्न–भिन्न) हो गए, जिनकी सारसभाल करने वाले छिन्न–भिन्न हो गए, जिनके स्वामियो के गोत्र और घर तक छिन्न–भिन्न हो गए, ऐसे खजाने, शृङ्गाटक (सिगाडे के आकार वाले) मार्गों मे, त्रिक (तिकोने मार्ग), चतुष्क (चौक), चत्वर, चतुर्मुख एव महापथो, सामान्य मार्गों, नगर के गन्दे नालो में, श्मशान, पर्वतगृह गुफा (कन्दरा), शान्तिगृह, शैलोपस्थान (पर्वत को खोदकर बनाए गए सभा–स्थान), भवनगृह (निवासगृह) इत्यादि स्थानो में गाडकर रखा हुआ धन, ये सब पदार्थ देवेन्द्र देवराज शक्र के लोकपाल वैश्रमण महाराज से अथवा उसके वैश्रमणकायिक देवो से अज्ञात, अदृष्ट (परोक्ष), अश्रुत, अविस्मृत और अविज्ञात नही है।

[3] All the following conditions to the south of the Meru mountain in Jambu Dveep are not unknown to . and so on up to... him (Vaishraman Maharaj, the *Lok-pal* of Devendra Shakra) and his subordinate gods—iron mines, zinc mines, copper mines, lead mines, silver mines, gold mines, gem-stone mines, diamond mines; showering of wealth, silver, gold, gems, diamonds, apparels, leaves, flowers, fruits, seeds, garlands, colours, powders, perfumes, clothes, utensils and milk, good crops, famine, low price, high price, easy or difficult availability of alms, purchase, sale, stocks of butter, jaggery etc. (*sannidhi*), stock of grains (*sannichaya*), treasures, buried treasures (*nidhan*); ancient treasures whose owners, care-takers, trails, clans and abodes of owners have been wiped out or uprooted, and wealth buried in *shringataks* (triangular open areas or courtyards), *trik* (intersection of three roads), squares, crossings, highways, roads, drains, cremation grounds, hills, caves, ritual halls, caverns, houses and other such places.

[४] सक्कस्स णं देविंदस्स देवरण्णो वेसमणस्स महारण्णो इमे देवा अहावच्चाभिण्णाया होत्था, तं जहा–पुण्णभद्दे माणिभद्दे सालिभद्दे सुमणभद्दे चक्करक्खे पुण्णरक्खे सव्वाणे सव्वजसे सव्वकामसमिद्धे अमोहे असंगे।

[५] सक्कस्स णं देविंदस्स देवरण्णो वेसमणस्स महारण्णो दो पलिओवमाणि ठिती पण्णत्ता। अहावच्चाभिण्णायाणं देवाणं एगं पलिओवमं ठिती पण्णत्ता। एमहिड्ढीए जाव वेसमणे महाराया।

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति.।

॥ तइए सए : सत्तमो उद्देसो समत्तो ॥

[४] देवेन्द्र देवराज शक्र के (चतुर्थ) लोकपाल वैश्रमण महाराज के ये देव अपत्यरूप से माने हुए है। जैसे–पूर्णभद्र, माणिभद्र, शालिभद्र, सुमनोभद्र, चक्ररक्ष, पूर्णरक्ष, सव्यान, सर्वयश, सर्वकामसमृद्ध, अमोघ और असग।

[५] देवेन्द्र देवराज शक्र के (चतुर्थ) लोकपाल–वैश्रमण महाराज की स्थिति दो पल्योपम की है, और उनके अपत्यरूप से माने हुए देवो की स्थिति एक पल्योपम की है। इस प्रकार वैश्रमण महाराज महाऋद्धि यावत् महाप्रभाव वाला है।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है', यो कहकर यावत् गौतम स्वामी विचरण करने लगे।

॥ तृतीय शतक : सप्तम उद्देशक समाप्त ॥

[4] The following gods are recognized as the sons of Vaishraman Maharaj, the *Lok-pal* of Devendra Shakra—Purnabhadra, Manibhadra, Shalibhadra, Sumanobhadra, Chakraraksh, Purnaraksh, Savyan, Sarvayash, Sarvakamasamriddha, Amogh and Asanga.

[5] The life-span of Vaishraman Maharaj, the third *Lok-pal* of Devendra Shakra, is two *Palyopam* (a metaphoric unit of time). The life-span of the gods recognized as his sons is one *Palyopam*. Thus Vaishraman Maharaj, the *Lok-pal* of Devendra Shakra, is endowed with great opulence.. and so on up to . influence.

"Bhante ! Indeed that is so Indeed that is so." With these words... and so on up to... ascetic Gautam resumed his activities.

● END OF THE SEVENTH LESSON OF THE THIRD CHAPTER ●

तृतीय शतक : अष्टम उद्देशक
THIRD SHATAK (Chapter Three) : EIGHTH LESSON

अधिपति ADHIPATI (OVERLORDS)

भवनपति देवों के इन्द्र KINGS OF ABODE DWELLING GODS

१. [प्र.] रायगिहे नगरे जाव पज्जुवासमाणे एवं वयासी असुरकुमाराणं भंते ! देवाणं कइ देवा आहेवच्चं जाव विहरंति ?

[उ.] गोयमा ! दस देवा आहेवच्चं जाव विहरंति, तं जहा–चमरे असुरिंदे असुरराया, सोमे, जमे, वरुणे, वेसमणे, बली वइरोयणिंदे वइरोयणराया, सोमे, जमे, वरुणे, वेसमणे।

१. [प्र.] राजगृह नगर मे, यावत्.... पर्युपासना करते हुए गौतम स्वामी ने भगवान से पूछा– 'भगवन् ! असुरकुमार देवो पर कितने देव आधिपत्य करते है ?'

[उ.] गौतम ! असुरकुमार देवो पर दस देव आधिपत्य करते हुए यावत् दिव्य भोग भोगते रहते है। वे इस प्रकार है–(१) असुरेन्द्र असुरराज चमर, (२) सोम, (३) यम, (४) वरुण, (५) वैश्रमण, तथा (६) वैरोचनेन्द्र वैरोचनराज बलि, (७) सोम, (८) यम, (९) वरुण, और (१०) वैश्रमण।

1. [Q.] In Rajagriha city. and so on up to... Gautam Swami submitted after worship—*Bhante* ! How many gods reign over *Asur Kumar* gods ?

[Ans.] Gautam ! Over *Asur Kumar* gods ten gods reign. and so on up to enjoy divine pleasures. They are—(1) Chamarendra, the king of *Asur Kumar* gods, (2) Soma, (3) Yama, (4) Varun, and (5) Vaishraman as also, (6) Vairochanendra Bali, the king of *Vairochan* gods, (7) Soma, (8) Yama, (9) Varun, and (10) Vaishraman.

२. [प्र.] नागकुमाराणं भंते ! पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! दस देवा आहेवच्चं जाव विहरंति, तं जहा–धरणे, नागकुमरिंदे, नागकुमारराया, कालवाले, कोलवाले, सेलवाले, संखवाले, भूयाणंदे, नागकुमारिंदे, नागकुमारराया, कालवाले, कोलवाले, संखवाले, सेलवाले।

२. [प्र.] भगवन् ! नागकुमार देवो पर कितने देव आधिपत्य करते हुए, यावत्...विचरते हैं ?

[उ.] हे गौतम ! नागकुमार देवों पर दस देव आधिपत्य करते हुए, यावत् ..विचरते हैं। वे इस प्रकार हैं–(१) नागकुमारेन्द्र नागकुमारराज धरण, (२) कालपाल, (३) कोलपाल, (४) शैलपाल, और (५) शंखपाल, तथा (६) नागकुमारेन्द्र नागकुमारराज भूतानन्द, (७) कालपाल, (८) कोलपाल, (९) शखपाल, और (१०) शैलपाल।

2. [Q.] Bhante ! How many gods reign over *Naag Kumar* gods ?

[Ans.] Gautam ! Over *Naag Kumar* gods ten gods reign... and so on up to . enjoy divine pleasures. They are—(1) Naag-kumarendra Dharan, the overlord of *Naag Kumar* gods, (2) Kaal-pal, (3) Kol-pal, (4) Shail-pal, and (5) Shankh-pal as also, (6) Naag-kumarendra Dharan, the overlord of *Naag Kumar* gods, (7) Kaal-pal, (8) Kol-pal, (9) Shankh-pal, and (10) Shail-pal

३. जहा नागकुमारिंदाणं एताए वत्तव्वयाए णीयं एवं इमाणं नेयव्वं—(३) सुवण्णकुमाराणं वेणुदेवे, वेणुदाली, चित्ते, विचित्ते, चित्तपक्खे, विचित्तपक्खे। (४) विज्जुकुमाराणं हरिक्कंत, हरिस्सह, पभ, सुप्पभ, पभकंत, सुप्पभकंत। (५) अग्गिकुमाराणं अग्गिसीहे, अग्गिमाणव, तेउ, तेउसीहे, तेउकंते, तेउप्पभे। (६) दीवकुमाराणं पुण्ण, विसिट्ठ, रूय, सुरूय, रूयकंत, रूयप्पभ। (७) उदहिकुमाराणं जलकंते, जलप्पभ, जल, जलरूय, जलकंत, जलप्पभ। (८) दिसाकुमाराणं अमियगति, अमियवाहणे, तुरियगति, खिप्पगति, सीहगति, सीहविक्कमगति। (९) वाउकुमाराणं वेलंव, पभंजण, काल, महाकाल अंजण, रिट्ठा। (१०) थणियकुमाराणं घोस, महाघोस, आवत्त, वियावत्त, नंदियावत्ता, महानंदियावत्ता एवं भाणियव्वं जहा असुरकुमारा।

सोम १, कालपाल २, चित्र ३, प्रभ ४, तेजस् ५, रूप ६, जल ७, त्वरितगति ८, काल ९, आवत्त १०।

३. जिस प्रकार नागकुमारो के इन्द्रो के विषय मे यह (पूर्वोक्त) वक्तव्यता (कथन) कही है, उसी प्रकार इन (देवो) के विषय मे भी समझ लेना चाहिए। (३) सुवर्णकुमार देवो पर वेणुदेव, वेणुदालि, चित्र, विचित्र, चित्रपक्ष और विचित्रपक्ष (का आधिपत्य रहता है), (४) विद्युतकुमार देवो पर—**हरिकान्त, हरिसिंह,** प्रभ, सुप्रभ, प्रभाकान्त और सुप्रभाकान्त (का आधिपत्य रहता है), (५) अग्निकुमार देवो पर—**अग्निसिंह** (शिख), **अग्निमाणव** (स्सह), तेजस्, तेज.सिह, तेजस्कान्त और तेज·प्रभ (आधिपत्य करते है); (६) द्वीपकुमार देवों पर—**पूर्ण, विशिष्ट** (वाशिष्ट) रूप, रूपाश, रूपकान्त और रूपप्रभ, (७) उदधिकुमार देवो पर—**जलकान्त, जलप्रभ,** जल, जलरूप, जलकान्त और जलप्रभ का (आधिपत्य है), (८) दिक्कुमार देवो पर—**अमितगति, अमितवाहन,** तूर्यगति, क्षिप्रगति, सिहगति और सिंहविक्रमगति (आधिपत्य करते हैं); (९) वायुकुमार देवो पर—**वेलम्ब, प्रभंजन,** काल, महाकाल, अंजन और रिष्ट का आधिपत्य रहता है, (१०) स्तनितकुमार देवो पर—**घोष, महाघोष,** आवर्त, व्यावर्त, नन्दिकावर्त और महानन्दिकावर्त (का आधिपत्य रहता है।) इन सबका कथन असुरकुमारों की तरह कहना चाहिए।

दक्षिण भवनपति देवो के अधिपति इन्द्रो के प्रथम लोकपालो के नाम इस प्रकार है—(१) सोम, (२) कालपाल, (३) चित्र, (४) प्रभ, (५) तेजस्, (६) रूप, (७) जल, (८) त्वरितगति, (९) काल, और (१०) आवर्त।

3. What has been stated here about overlords of *Naag Kumar* gods should be repeated for the following gods—(3) *Suparna Kumar* gods (are reigned over) by—Venudev, Venudali, Chitra, Vichitra, Chitrapaksh and Vichitrapaksh. (4) *Vidyut Kumar* gods (are reigned over) by—Harikant, Harisimha, Prabh, Suprabh, Prabhakant and Suprabhakant. (5) *Agni Kumar* gods (are reigned over) by—Agnisimha (shikh), Agnimanav (ssaha), Tejas, Tejahsimha and Tejaprabh. (6) *Dveep Kumar* gods (are reigned over) by—Purna, Vishisht (Vaashisht), Rupa, Rupamsh, Rupakant and Rupaprabh. (7) *Udadhi Kumar* gods (are reigned over) by—Jalakant, Jalaprabh, Jala, Jalarupa, Jalakant and Jalaprabh. (8) *Disha Kumar* gods (are reigned over) by—Amit-gati, Amit-vahan, Turyagati, Kshipragati, Simhagati and Simhavikramgati. (9) *Vayu Kumar* gods (are reigned over) by—Velamb, Prabhanjan, Kaal, Mahakaal, Anjan and Risht. (10) *Stanit Kumar* gods (are reigned over) by—Ghosh, Mahaghosh, Avart, Vyavart, Nandikavart and Mahanandikavart. These should be stated following the pattern of *Asur Kumar* gods.

The names of the first *Lok-pals* of the *Indras* reigning over the abode dwelling gods of the south are—(1) Soma, (2) Kaal-pal, (3) Chitra, (4) Prabh, (5) Tejas, (6) Rupa, (7) Jala, (8) Tvaritgati, (9) Kaal, and (10) Avart.

विवेचन : आधिपत्य में तारतम्य–जिस प्रकार मनुष्यों मे भी पदों और अधिकारों के सम्बन्ध मे तारतम्य होता है, वैसे ही यहाँ दशविध भवनपति देवों के आधिपत्य में तारतम्य समझना चाहिए। जैसे कि असुरकुमार आदि दसो प्रकार के भवनपतियों में प्रत्येक के दो–दो इन्द्र होते हैं, यथा–असुरकुमार देवों के दो इन्द्र हैं–(१) चमरेन्द्र, और (२) बलीन्द्र। नागकुमार देवों के दो इन्द्र हैं–(१) धरणेन्द्र, और (२) भूतानन्देन्द्र। इसी प्रकार प्रत्येक के दो–दो इन्द्रों का आधिपत्य अपने अधीनस्थ चार लोकपालों तथा अन्य देवों पर होता है और लोकपालों का अपने अधीनस्थ देवों पर आधिपत्य होता है। इस प्रकार आधिपत्य, अधिकार, ऋद्धि, वर्चस्व एवं प्रभाव आदि मे तारतम्य समझ लेना चाहिए। सूत्र (३) में जो छह–छह नाम हैं–उनमें प्रथम दो इन्द्रों के तथा आगे के चार उनके लोकपालों के नाम हैं। इस प्रकार २० इन्द्र तथा उनके ८० लोकपाल हैं।

मूल मे भवनपति देव दो प्रकार के हैं–उत्तर दिशावर्ती और दक्षिण दिशावर्ती। उत्तर दिशा के दशविध भवनपति देवो के जो–जो देव होते हैं इन्द्र से लेकर लोकपाल आदि तक, उनका उल्लेख इससे पूर्व किया जा चुका है। इसके पश्चात् दाक्षिणात्य भवनपति देवों के सर्वोपरि अधिपति इन्द्रों के प्रथम लोकपालों के नाम सोम यावत् आवर्त तक सूचित किये हैं। *(स्थानांगसूत्र, स्था ४, उ १ सूत्र में भी इनके नाम आये हैं)*

Elaboration—Protocol of governance—As there are protocols relating to posts and powers in human beings so also exist among divine beings. For example, all the ten kinds of abode dwelling gods including *Asur Kumars* have two overlords (*Indra*) each. *Asur Kumars* have two

Indras—(1) Chamarendra, and (2) Balindra *Naag Kumars* have two *Indras*—(1) Dharanendra, and (2) Bhootanand. Each of the two *Indras* command four *Lok-pals* under them who in turn rule over other gods under them. This degree of command, rights, opulence, power and influence applies to all gods. Of the six names in each list in aphorism 3 the first two are *Indras* and the following four are their *Lok-pals*. Thus there are 20 *Indras* and 80 *Lok-pals*.

Basically abode dwelling gods have two classes—the northern and the southern. The overlords including *Indras* and *Lok-pals* of the ten kinds of abode dwelling gods have been listed here After that is the list of the first *Lok-pals* of the overlords of the abode dwelling gods of the south from Soma to Avart. *(There names also appear in Sthananga Sutra, 4/1)*

४. [प्र.] पिसायकुमाराणं पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! दो देवा आहेवच्चं जाव विहरंति, तं जहा—

काले य महाकाले सुरूवं पडिरूव-पुन्नभद्दे य।
अमरवइ माणिभद्दे भीमे य तहा महाभीमे ॥१॥

किन्नर किंपुरिसे खलु सप्पुरिसे खलु तहा महापुरिसे।
अतिकाय महाकाए गीतरती चेव गीयजसे॥२॥

एते वाणमंतराणं देवाणं।

४. [प्र.] भगवन् ! पिशाचकुमारो (वाणव्यन्तर देवों) पर कितने देव आधिपत्य करते हैं ?

[उ.] गौतम ! उन पर दो-दो देव (इन्द्र) आधिपत्य करते हैं। वे इस प्रकार हैं-(१) काल (दक्षिण दिशावर्ती) और महाकाल (उत्तर दिशावर्ती), (२) सुरूप और प्रतिरूप, (३) पूर्णभद्र और मणिभद्र, (४) भीम और महाभीम, (५) किन्नर और किम्पुरुष, (६) सत्पुरुष और महापुरुष, (७) अतिकाय और महाकाय, तथा (८) गीतरति और गीतयश। ये सब वाणव्यन्तर देवों के अधिपति-इन्द्र है।

4. [Q.] *Bhante* ! How many gods reign over *Pishach Kumar* (*Vanavyantar* or interstitial) gods ?

[Ans.] Gautam ! Over them pairs of gods (*Indras*) reign... and so on up to.. enjoy divine pleasures. They are—(1) Kaal (southern) and Mahakaal (northern), (2) Surupa and Pratirupa, (3) Purnabhadra and Manibhadra, (4) Bheem and Mahabheem, (5) Kinnar and Kimpurush, (6) Satpurush and Mahapurush, (7) Atikaya and Mahakaya, and (8) Geet-rati and Geet-yash. These are *Indras* (overlords) of *Vanavyantar* gods.

५. जोतिसियाणं देवाणं दो देवा आहेवच्चं जाव विहरंति, तं जहा–चंदे य सूरे य।

५. ज्योतिष्क देवों पर आधिपत्य करने वाले दो देव इन्द्र हैं। यथा–चन्द्र और सूर्य।

5. Over *Jyotishk* (Stellar) gods two gods (*Indras*) reign... and so on up to .. enjoy divine pleasures. They are—Chandra and Surya.

६. [प्र.] सोहम्मीसाणेसु णं भंते ! कप्पेसु कति देवा आहेवच्चं जाव विहरंति ?

[उ.] गोयमा ! दस देवा जाव विहरंति, तं जहा–सक्के देविंदे देवराया, सोमे, जमे, वरुणे, वेसमणे। ईसाणे देविंदे देवराया, सोमे, जमे, वरुणे, वेसमणे। एसा वत्तव्वया सव्वेसु वि कप्पेसु, एते चेव भाणियव्वा। जे य इंदा ते य भाणियव्वा।

सेवं भेतं ! सेवं भंते ! त्ति.।

॥ तइए सए : अट्ठमो उद्देसो समत्तो ॥

६. [प्र.] भगवन् ! सौधर्म और ईशानकल्प में कितने देव आधिपत्य करते है ?

[उ.] गौतम ! उन पर दस देव आधिपत्य करते हैं। यथा–(१) (इन्द्र–) देवेन्द्र देवराज शक्र (लोकपाल–) सोम, यम, वरुण और वैश्रमण, (२) (इन्द्र–) देवेन्द्र देवराज ईशान (लोकपाल–) सोम, यम, वरुण और वैश्रमण।

यह सारी वक्तव्यता सभी कल्पो (देवलोको) के विषय में कहनी चाहिए और जिस देवलोक का जो इन्द्र है, वह कहना चाहिए।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है'; यों कहकर यावत् गौतम स्वामी विचरण करने लगे।

6. **[Q.]** *Bhante* ! How many gods reign over Saudharma and Ishan Kalps ?

[Ans.] Gautam ! Over them ten gods (*Indras*) reign... and so on up to enjoy divine pleasures They are—(1) (*Indra*—) Shakrendra, the king of gods, (*Lok-pals*—) Soma, Yama, Varun and Vaishraman; (2) (*Indra*—) Ishanendra, the king of gods, (*Lok-pals*—) Soma, Yama, Varun and Vaishraman.

This statement should be repeated for all *Kalps* (divine realms) and names of the respective *Indra* of these realms should be stated.

"*Bhante* ! Indeed that is so. Indeed that is so." With these words... and so on up to.. ascetic Gautam resumed his activities.

विवेचन : वाणव्यन्तर देव और उनके अधिपति–यहाँ पिशाचकुमार का अर्थ सभी वाणव्यन्तर देव समझना चाहिए। वाणव्यन्तर देवों के ८ भेद है–उनके भेद व इन्द्रों के नाम क्रमशः इस प्रकार हैं–

१. पिशाच–(१) काल, (२) महाकाल

२ भूत–(१) सुरूप, (२) प्रतिरूप

३. यक्ष–(१) पूर्णभद्र, (२) मणिभद्र

४. राक्षस–(१) भीम, (२) महाभीम

५. किन्नर–(१) किन्नर, (२) किंपुरुष

६ किंपुरुष–(१) सत्पुष, (२) महापुरुष

७. महोरग–(१) अतिकाय, (२) महाकाय

८ गधर्व–(१) गीतरति, (२) गीतयश

ज्योतिष्क देवों मे सूर्य एव चन्द्रमा दो इन्द्र है। वाणव्यन्तर और ज्योतिष्क देवों में लोकपाल नहीं होते।

वैमानिक देवों के अधिपति–वैमानिक देवो मे सौधर्मकल्प से लेकर अच्युतकल्प तक प्रत्येक अपने–अपने कल्प के नाम का एक–एक इन्द्र है। यथा–सौधर्मकल्प मे शक्रेन्द्र, ईशानकल्प मे ईशानेन्द्र, सनत्कुमारेन्द्र आदि। किन्तु ऊपर के चार देवलोकों में दो–दो देवलोको का एक–एक इन्द्र है, यथा–नौवे और दसवे देवलोक–(आणत और प्राणत) का एक ही प्राणतेन्द्र है। ग्यारहवें और बारहवें देवलोक–(आरण और अच्युत) का भी एक ही अच्युतेन्द्र है। इस प्रकार बारह देवलोकों में कुल १० इन्द्र है। नौ ग्रैवेयको और पाँच अनुत्तर विमानो मे कोई इन्द्र नहीं होते। वहाँ सभी 'अहमिन्द्र' (सर्वतन्त्र स्वतत्र) होते हैं। सौधर्म आदि कल्पो के प्रत्येक इन्द्र के आधिपत्य में सोम, यम, वरुण और वैश्रमण चार–चार लोकपाल होते है, जिनके आधिपत्य में अन्य देव रहते है। *((क) तत्त्वार्थ भाष्य, अ ४, सू ६, पृ १३, (ख) वृत्ति, पत्रांक २०१)*

॥ तृतीय शतक : अष्टम उद्देशक समाप्त ॥

Elaboration—Interstitial gods (Vanavyantar Devs) and their overlords—Here *Pishach Kumar* should be taken as generic name for all interstitial gods. There are eight classes of *Vanavyantar* gods. These classes and their overlords are as follows—

1. *Pishachas*—(1) Kaal, (2) Mahakaal
2. *Bhoots*—(1) Suroop, (2) Pratiroop
3. *Yakshas*—(1) Purnabhadra, (2) Manibhadra
4. *Rakshasas*—(1) Bheem, (2) Mahabheem
5. *Kinnars*—(1) Kinnar, (2) Kimpurush
6. *Kimpurushas*—(1) Satpurush, (2) Mahapurush
7. *Mahorags*—(1) Atikaya, (2) Mahakaya
8. *Gandharvas*—(1) Geetarati, (2) Geetayash

For *Jyotishk Devs* there are two overlords—Chandra and Surya. *Vanavyantar* and *Jyotishk Devs* do not have *Lok-pals*.

Overlords of Vaimanik Devs—Among these each kalp from Saudharma Kalp to Achyut Kalp has one *Indra* each, bearing the name of the respective *kalp*. For example—Saudharma Kalp has Shakrendra, Ishan Kalp has Ishanendra, Sanat Kumar Kalp has Sanatkumarendra and so on. In the two *Dev-loks* higher then these there is one *Indra* for one pair of *Dev-loks*—ninth and tenth *Dev-loks* (Anat and Pranat) have one *Indra*, Pranatendra. Eleventh and twelfth *Dev-loks* (Aaran and Achyut) too have one *Indra*, Achyutendra. Thus these twelve *Dev-loks* have ten *Indras*. There are no *Indras* in the nine Graiveyaks and five Anuttar Vimaans. Every god is absolutely independent (Ahamindra) there. In all the kalps including Saudharma, each Indra has four *Lok-pals* Soma, Yama, Varun and Vaishraman who command other gods. *(Tattvarth Bhashya 4/6 p 93; Vritti, leaf 201)*

● END OF THE EIGHTH LESSON OF THE THIRD CHAPTER ●

तृतीय शतक : नवम उद्देशक
THIRD SHATAK (Chapter Three) : NINTH LESSON

इन्द्रिय INDRIYA (SENSE ORGANS)

पंचेन्द्रिय विषयों का निरूपण SUBJECTS OF FIVE SENSE ORGANS

१. [प्र.] रायगिहे जाव एवं वयासी–कतिविहे णं भंते ! इंदियविसए पण्णत्ते ?

[उ.] गोयमा ! पंचविहे इंदियविसए पण्णत्ते, तं जहा–सोइंदियविसए, जीवाभिगमे जोइसियउद्देसो नेयव्वो अपरिसेसो।

॥ तइए सए : नवमो उद्देसो समत्तो ॥

१. [प्र.] राजगृह नगर मे श्री गौतम स्वामी ने इस प्रकार पूछा–भगवन् ! इन्द्रियो के विषय कितने प्रकार के हैं ?

[उ.] गौतम ! इन्द्रियों के विषय पाँच प्रकार के हैं। वे इस प्रकार है–श्रोत्रेन्द्रिय–विषय इत्यादि। इस सम्बन्ध मे जीवाभिगमसूत्र मे कहा हुआ ज्योतिष्क उद्देशक सम्पूर्ण समझना चाहिए।

1. [Q.] In Rajagriha city . and so on up to .. Gautam Swami submitted after worship—*Bhante* ! How many are the subjects of sense organs (*indriyas*) ?

[Ans.] Gautam ! There are five subjects of sense organs (*indriyas*)—subjects of the organ of hearing (*shrotrendriya*) etc In this regard the Jyotishk chapter from *Jivabhigam Sutra* should be quoted as a whole.

विवेचन : प्रस्तुत सूत्र में जीवाभिगमसूत्र के ज्योतिष्क उद्देशक का सदर्भ देकर पचेन्द्रिय विषयो का निरूपण किया है।

जीवाभिगमसूत्र के अनुसार इन्द्रिय विषय–सम्बन्धी विवरण का सार इस प्रकार है–पाँच इन्द्रियो के पाँच विषय है, यथा–

[१] श्रोत्रेन्द्रिय विषय दो प्रकार का है। यथा–शुभशब्द और अशुभशब्द।

[२] चक्षुरिन्द्रिय विषय दो प्रकार का है। यथा–सुरूप और दुरूप।

[३] घ्राणेन्द्रिय विषय दो प्रकार का है। यथा–सुरभिगन्ध और दुरभिगन्ध।

[४] रसनेन्द्रिय विषय दो प्रकार का है। यथा–सुरस–परिणाम और दुरस–परिणाम।

[५] स्पर्शनेन्द्रिय विषय दो प्रकार का है। यथा–सुख–स्पर्श–परिणाम और दु.ख–स्पर्श–परिणाम।

॥ तृतीय शतक : नवम उद्देशक समाप्त ॥

Elaboration—This aphorism informs about the subjects of five sense organs giving reference of Jyotishk chapter from *Jivabhigam Sutra*.

The gist of the information about subjects of sense organs from *Jivabhigam Sutra* is as follows—There are five subjects of five sense organs—

(1) the subject of *shrotrendriya* (ear) is of two kinds—pleasant sound (*shubh-shabd*) and unpleasant sound (*ashubh-shabd*).

(2) the subject of *chakshurindriya* (eyes) is of two kinds—pleasant view (*surup*) and unpleasant view (*durup*).

(3) the subject of *ghranendriya* (nose) is of two kinds—pleasant smell (*surabhi-gandh*) and unpleasant smell (*durabhi-gandh*)

(4) the subject of *rasanendriya* (taste-buds) is of two kinds—pleasant taste (*suras parinam*) and unpleasant taste (*duras parinam*).

(5) the subject of *sparshanendriya* (touch) is of two kinds—pleasant touch (*sukh-sparsh parinam*) and unpleasant touch (*dukh-sparsh parinam*)

● END OF THE NINTH LESSON OF THE THIRD CHAPTER ●

तृतीय शतक : दशम उद्देशक
THIRD SHATAK (Chapter Three) : TENTH LESSON

परिषद् PARISHAD (ASSEMBLY)

इन्द्र परिषद् ASSEMBLY OF INDRA

१. [प्र.] रायगिहे जाव एवं वयासी—चमरस्स णं भंते ! असुरिंदस्स असुररण्णो कति परिसाओ पण्णत्ताओ ?

[उ.] गोयमा ! तओ परिसाओ पण्णत्ताओ, तं जहा—समिता, चंडा, जाता।

एवं जहाणुपुव्वीए जाव अच्चुओ कप्पो।

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति।

॥ तइए सए : दसमो उद्देसो समत्तो ॥

॥ तइयं सयं समत्तं ॥

१. [प्र.] राजगृह नगर में यावत् गौतम ने इस प्रकार पूछा—भगवन् ! असुरेन्द्र असुरराज चमर की कितनी परिषदाएँ (सभाएँ) हैं ?

[उ.] हे गौतम ! उसकी तीन परिषदाएँ है, यथा—समिका (शमिता), चंडा और जाता।

इसी प्रकार क्रमपूर्वक यावत् अच्युतकल्प तक कहना चाहिए।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है;' यो कहकर यावत् गौतम स्वामी विचरते हैं।

1. [Q.] In Rajagriha city... and so on up to... Gautam Swami submitted after worship—*Bhante* ! How many are the assemblies of Chamarendra, the king of *Asur Kumar* gods ?

[Ans.] Gautam ! He has three assemblies—Samika (Samita), Chanda and Jata. The same should be repeated in sequence up to Achyut Kalp.

"*Bhante* ! Indeed that is so Indeed that is so." With these words... and so on up to... ascetic Gautam resumed his activities

विवेचन : तीन परिषदें—प्रस्तुत सूत्र में सर्वप्रथम असुरेन्द्र असुरराज चमर की तीन परिषदें बताई गई हैं—समिका या शमिता, चण्डा और जाता। स्थिर स्वभाव और समता के कारण इसे 'समिका' कहते हैं। स्वामी द्वारा किये गये कोप एवं उतावल को शान्त करने की क्षमता होने से इसे तथा उद्धततारहित एवं शान्त स्वभाव वाली होने से इसे 'शमिता' कहते हैं। शमिता के समान महत्वपूर्ण न होने से तथा साधारण कोपादि के प्रसंग पर कुपित हो जाने के कारण दूसरी परिषद् को 'चण्डा' कहते हैं। गम्भीर स्वभाव न होने से निष्प्रयोजन कोप उत्पन्न हो जाने के कारण तीसरी परिषद् का नाम 'जाता' है। इन्हीं तीनों परिषदों को क्रमशः आभ्यन्तरा, मध्यमा और बाह्या भी कहते हैं। जब इन्द्र का कोई प्रयोजन होता है, तब वह आदरपूर्वक आभ्यन्तर परिषद् को बुलाता है और उसके समक्ष अपना प्रयोजन प्रस्तुत करता है। मध्यम परिषद् बुलाने या न बुलाने पर भी आती है। इन्द्र,

आभ्यन्तर परिषद् में विचारित बातें उसके समक्ष प्रकट कर निर्णय करता है। बाह्य परिषद् बिना बुलाये भी आती है। इन्द्र उसके समक्ष स्वनिर्णीत कार्य प्रस्तुत करके उसे सम्पादित करने की आज्ञा देता है। असुरकुमारेन्द्र की परिषद् के समान ही शेष नौ निकायों की परिषदों के नाम और काम हैं। व्यन्तर देवों की तीन परिषद् हैं-इसा, तुडिया और दृढ़रथा। ज्योतिष्क देवों की तीन परिषदों के नाम-तुम्बा, तुडिया और पर्वा। वैमानिक देवों की तीन परिषदें-शमिका, चण्डा और जाता। नवग्रैवेयक और पाँच अनुत्तर विमान में परिषदें नहीं होती। इसके अतिरिक्त भवनपति से लेकर अच्युत देवलोक तक के तीनों इन्द्रों की तीनों परिषदों के देव-देवियों की संख्या, उनकी स्थिति आदि का विस्तृत वर्णन (क) जीवाभिगमसूत्र प्रतिपत्ति ३, उद्देशक २ मे, (ख) भगवतीसूत्र, विवेचन, भाग २, पृ ७३५, तथा (ग) स्थानांगसूत्र, भाग २, पृ. २१५-२१८।

॥ तृतीय शतक : दशम उद्देशक समाप्त ॥

॥ तृतीय शतक समाप्त ॥

Elaboration—In this aphorism first of all three assemblies of Chamarendra, the king of *Asur Kumar* gods have been stated—Samika or Samita, Chanda and Jata. As it relates to stability and equanimity it is called Samita. As it has the capability of pacifying the anger and agitation of its master it is called Shamita. As it is not as important as Shamita, and turns agitated and angry on minor matters, the second assembly is called Chanda. In absence of seriousness and turning angry for no reason the third assembly is called Jata. These three assemblies are also called *Abhyantara* (inner), *Madhyama* (middle) and *Bahya* (outer) assemblies respectively. When there is some agenda *Indra* formally convenes the inner assembly and places his agenda. The middle assembly gathers on as well as without calling and *Indra* places before it the resolution from the inner assembly and takes a decision. The outer assembly gathers as a routine without even calling. *Indra* places the decisions taken by him in the other two assemblies and gives order to implement them. The names and activities of the assemblies of the other nine genuses of divine beings are same as those of the *Indra* of *Asur Kumars*. The names of the three assemblies of *Vyantar Devs* are—Isa, Tudiya and Gridharatha. The names of the three assemblies of *Jyotishk Devs* are—Tumba, Tudiya and Parva. The names of the three assemblies of *Vaimanik Devs* are—Samika, Chanda and Jata There are no assemblies in the nine Graiveyaks and five Anuttar Vimaans. Besides this detailed description of the *Indras*, and gods and goddesses of their three assemblies, their life-spans and other information about gods from *Bhavan-pati* to *Achuyt* realms is available in *Jivabhgam Sutra* 3/2; *Bhagavati Sutra, Vivechan*, part-2, p. 735; and *Sthananga Sutra*, part-2, pp. 215-218.

• END OF THE TENTH LESSON OF THE THIRD CHAPTER •

• END OF THE THIRD CHAPTER •

चतुर्थ शतक : प्रथम-द्वितीय-तृतीय-चतुर्थ उद्देशक
FOURTH SHATAK (Chapter Four) : FIRST-SECOND-THIRD-FOURTH LESSON

ईसाणलोगपालविमाणाणि CELESTIAL VEHICLES OF ISHAN LOK-PALS

संग्रहणी गाथा COLLATIVE VERSE

१. चत्तारि विमाणेहिं १-४ चत्तारि य होंति रायहाणीहिं ५-८।

नेरइए ९ लेस्साहि १० य दस उद्देसा चउत्थसए ॥१॥

१. गाथा का अर्थ-इस चौथे शतक में दस उद्देशक हैं। इनमे से प्रथम चार उद्देशको में विमान-सम्बन्धी कथन किया गया है। पाँचवे से लेकर आठवे उद्देशको तक चार उद्देशको मे राजधानियों का वर्णन है। नौवे उद्देशक मे नैरयिको का वर्णन है और दसवें उद्देशक मे लेश्या के सम्बन्ध में निरूपण है।

1. There are ten *uddeshaks* (lessons) in this fourth *Shatak* (chapter). The first four lessons have information about *vimaans* (celestial vehicles). Four lessons from fifth to eighth contain description of capital cities. The ninth has description of infernal beings and the tenth has discussion about *leshyas* (complexion of soul).

२. [प्र.] रायगिहे नगरे जाव एवं वयासी-ईसाणस्स णं भंते ! देविंदस्स देवरण्णो कति लोगपाला पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! चत्तारि लोगपाला पण्णत्ता, तं जहा-सोमे जमे वेसमणे वरुणे।

२. [प्र.] राजगृह नगर मे, यावत् गौतम स्वामी ने इस प्रकार पूछा-भगवन् ! देवेन्द्र देवराज ईशान के कितने लोकपाल हैं ?

[उ.] हे गौतम ! उसके चार लोकपाल हैं। यथा-सोम, यम, वैश्रमण और वरुण।

2. [Q.] In Rajagriha city... and so on up to .. Gautam Swami submitted after worship—*Bhante* ! How many *Lok-pals* does Devendra Ishan, the *Indra* (overlord) of *Devs* (gods) have ?

[Ans.] He has four *Lok-pals* (they are protectors and supporters of people as governors of different directions)—Soma, Yama, Varun and Vaishraman.

३. [प्र.] एतेसि णं भंते ! लोगपालाणं कति विमाणा पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! चत्तारि विमाणा पण्णत्ता, तं जहा-सुमणे सव्वतोभद्दे वग्गू सुवग्गू।

३. [प्र.] भगवन् ! इन लोकपालो के कितने विमान हैं ?

[उ.] गौतम ! इनके चार विमान हैं; वे इस प्रकार हैं-सुमन, सर्वतोभद्र, वल्गु और सुवल्गु।

3. [Q.] *Bhante* ! How many *vimaans* (celestial vehicles) these *Lok-pals* have ?

[Ans.] Gautam ! These four *Lok-pals* have four *vimaans*—(1) Suman, (2) Sarvatobhadra, (3) Valgu, and (4) Suvalgu.

४. [प्र.] कहि णं भंते ! ईसाणस्स देविंदस्स देवरण्णो सोमस्स महारण्णो सुमणे नामं महाविमाणे पण्णत्ते ?

[उ.] गोयमा ! जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स उत्तरेणं इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए जाव ईसाणे णामं कप्पे पण्णत्ते। तत्थ णं जाव पंच वडेंसया पण्णत्ता, तं जहा-(१) अंकवडेंसए, (२) फलिहवडिंसए, (३) रयणवडेंसए, (४) जायरूववडेंसए, (५) मज्झे ईसाणवडेंसए।

तस्स णं ईसाणवडेंसयस्स महाविमाणस्स पुरत्थिमेणं तिरियमसंखेज्जाइं जोयणसहस्साइं वीतिवतित्ता तत्थ णं ईसाणस्स देविंदस्स देवरण्णो सोमस्स महारण्णो सुमणे नाम महाविमाणे पण्णत्ते, अद्धतेरसजोयण० जहा सक्कस्स वत्तव्वया तइयसए तहा ईसाणस्स वि जाव अच्चणिया समत्ता।

४. [प्र.] भगवन ! देवेन्द्र देवराज ईशान के लोकपाल सोम महाराज का 'सुमन' नामक महाविमान कहाँ है ?

[उ.] गौतम ! जम्बूद्वीप नामक द्वीप के मन्दर पर्वत के उत्तर में इस रत्नप्रभा पृथ्वी के समतल भूभाग ऊपर से, यावत् ईशान नामक कल्प (देवलोक) है। उसमे पाँच अवतंसक हैं-(१) अंकावतंसक, (२) स्फटिकावतंसक, (३) रत्नावतंसक, और (४) जातरूपावतंसक, तथा चारों अवतंसकों के मध्य में (५) ईशानावतंसक है। उस ईशानावतंसक नामक महाविमान से पूर्व मे तिरछी दिशा मे असंख्येय हजार योजन आगे जाने पर देवेन्द्र देवराज ईशान के लोकपाल सोम महाराज का 'सुमन' नामक महाविमान है। उसकी लम्बाई और चौडाई साढे बारह लाख योजन है। इत्यादि सारी वक्तव्यता तृतीय शतक के सप्तम उद्देशक, सूत्र ४ मे कथित शक्रेन्द्र (के लोकपाल सोम के महाविमान) की वक्तव्यता के समान यहाँ भी ईशानेन्द्र के सम्बन्ध में यावत्-अर्चनिका तक कहनी चाहिए।

4. [Q.] *Bhante* ! What is the location of the *mahavimaan* (great celestial vehicle) named Suman belonging to Soma Maharaj, the *Lok-pal* of Devendra Shakra, the overlord of gods ?

[Ans.] Gautam ! To the north of Mandar (Meru) mountain in the continent called Jambu Dveep, over the level land of this Ratnaprabha *Prithvi* .. and so on up to... there is the divine realm (*kalp*) called Ishan. In it there are five Avatamsaks (great celestial vehicles or abodes)—(1) Ankavatamsak, (2) Sfatikavatamsak, (3) Ratnavatamsak, (4) Jaatrupavatamsak and in the center (5) Ishanavatamsak. To the east of that Ishanavatamsak Mahavimaan, on going innumerable *Yojans* away in transverse direction, comes the *mahavimaan* (great celestial

vehicle) named Suman belonging to Soma Maharaj, the *Lok-pal* of Devendra Ishan, the overlord of gods. Its length-breadth (*ayam-vishkambh*) is 1.25 million *Yojans*. Other details should be repeated as mentioned in aphorism 4 of the seventh lesson of the third chapter with regard to Shakrendra (about the *mahavimaan* of *Lok-pal* Soma)... and so on up to... anointing.

५. चउण्हं वि लोगपालाणं विमाणे-विमाणे उद्देसओ। चउसु विमाणेसु चत्तारि उद्देसा अपरिसेसा। नवरं ठितीए नाणत्तं-

आदि दुय तिभागूणा पलिया धणयस्स होंति दो चेव।
दो सतिभागा वरुणे पलियमहावच्चदेवाणं॥१॥

॥ चउत्थे सए : पढम-बिइय-तइय-चउत्था उद्देसा समत्ता॥

५. (एक लोकपाल के विमान की वक्तव्यता जहाँ पूर्ण होती है, वहाँ एक उद्देशक समाप्त होता है।) इस प्रकार चारों लोकपालो में से प्रत्येक के विमान की वक्तव्यता पूरी हो वहाँ एक-एक उद्देशक समझना। चारो (लोकपालों के चारों) विमानो की वक्तव्यता मे चार उद्देशक पूर्ण हुए समझना। विशेष यह है कि इनकी स्थिति मे अन्तर है। वह इस प्रकार है-आदि के दो-सोम और यम लोकपाल की स्थिति (आयु) एक-तिहाई भाग कम दो-दो पल्योपम की है, वैश्रमण लोकपाल की स्थिति दो पल्योपम की है और वरुण लोकपाल की स्थिति एक-तिहाई भाग अधिक दो पल्योपम की है। अपत्यरूप देवो की स्थिति एक पल्योपम की है।

॥ चतुर्थ शतक : प्रथम-द्वितीय-तृतीय-चतुर्थ उद्देशक समाप्त ॥

5. (With the end of the description of the celestial vehicle of one *Lok-pal* ends one lesson). In the same way with the end of the description of the celestial vehicle of each of the four *Lok-pals* end each of the four lessons. The end of descriptions of the four celestial vehicles should be taken to be the end of four lessons. The difference is that there is a variation in their life-spans—The life-spans of the first two *Lok-pals*, Soma and Yama, is one and one-third of a *Palyopam* (or two-thirds of a *Palyopam* less in two *Palyopams*), that of *Lok-pal* Vaishraman is two *Palyopams* and that of *Lok-pal* Varun is two and one-third *Palyopams*. The life-span of the gods recognized as their sons is one *Palyopam*.

● END OF THE FIRST-SECOND-THIRD-FOURTH LESSON OF THE FOURTH CHAPTER ●

चतुर्थ शतक : पंचम-षष्ठ-सप्तम-अष्टम उद्देशक
FOURTH SHATAK (Chapter Four) : FIFTH-SIXTH-SEVENTH-EIGHTH LESSON

ईशान-लोकपाल राजधानी ISHAN-LOK-PAL RAJADHANI
(CAPITAL CITY OF LOK-PAL ISHAN)

लोकपालों की राजधानियाँ **CAPITAL CITIES OF LOK-PALS**

१. रायहाणीसु वि चत्तारि उद्देसा भाणियव्वा जाव एमहिड्ढीए जाव वरुणे महाराया।

॥ चउत्थे सए : पंच–छट्ठ–सत्तम–अट्ठमा उद्देसा समत्ता ॥

१. चारो लोकपालों की राजधानियो के चार उद्देशक कहने चाहिए। अर्थात् एक–एक लोकपाल की राजधानी सम्बन्धी वर्णन पूर्ण होने पर एक–एक उद्देशक पूर्ण हुआ समझना चाहिए। इस तरह चारों राजधानियो के वर्णन मे चार उद्देशक पूर्ण हुए। यो क्रमश पाँचवे से लेकर आठवाँ उद्देशक यावत् वरुण महाराज इतनी महाऋद्धि वाले यावत् (इतनी विकुर्वणा शक्ति वाले है;) (यहाँ तक चार उद्देशक पूर्ण होते हैं।)

1. Four lessons should be stated for the capital cities of the four *Lok-pals* In other words with the end of the description of the capital cities of each of the four *Lok-pals* end each of the four lessons. The end of descriptions of the four capital cities should be taken to be the end of four lessons. Thus end the lessons fifth to eighth... and so on up to... Varun Maharaj is endowed with great opulence... and so on up to... influence.

विवेचन : जीवाभिगमसूत्र मे वर्णित विजय राजधानी के वर्णन के समान चार राजधानियों के चार उद्देशकों का वर्णन इस प्रकार करना चाहिए–देवेन्द्र देवराज ईशान के लोकपाल सोम महाराज की सोमा नामक राजधानी सुमन नाम महाविमान के ठीक नीचे है, इत्यादि सारा वर्णन इसी प्रकार कहना चाहिए।

इसी प्रकार क्रमशः एक–एक राजधानी के सम्बन्ध मे प्रश्नोत्तरपूर्वक वर्णन करके शेष तीनों लोकपालों की राजधानी–सम्बन्धी एक–एक उद्देशक कहना चाहिए।

॥ चतुर्थ शतक : पंचम–षष्ठ–सप्तम–अष्टम उद्देशक समाप्त ॥

Elaboration—The four lessons with the description of four capital cities should be given in the same pattern as that of capital city Vijaya described in *Jivabhigam Sutra*—Exactly below the Suman Mahavimaan is located Somaa, the capital city of Soma Maharaj, the *Lok-pal* of Devendra Ishan, the overlord of gods and so on (the complete description).

This way description of each capital city should be stated in question-answer format to conclude the lessons about the capital cities of the remaining three *Lok-pals*.

● END OF THE FIFTH-SIXTH-SEVENTH-EIGHTH LESSON OF THE FOURTH CHAPTER ●

चतुर्थ शतक : नवम उद्देशक
FOURTH SHATAK (Chapter Four) : NINTH LESSON

नैरयिकों की उत्पत्ति-प्ररूपणा NAIRAYIK UTPATTI (BIRTH OF INFERNAL BEINGS)

नैरयिकों की उत्पत्ति-प्ररूपणा **NAIRAYIK UTPATTI (BIRTH OF INFERNAL BEINGS)**

१. [प्र.] नेरइए णं भंते ! नेरइएसु उववज्जइ ? अनेरइए नेरइएसु उववज्जइ ?

[उ.] पण्णवणाए लेस्सापदे ततिओ उद्देसओ भाणियव्वो जाव नाणाइं।

॥ चउत्थे सए : नवमो उद्देसो समत्तो ॥

१. [प्र.] भगवन् ! जो नैरयिक है, क्या वह नैरयिकों मे उत्पन्न होता है, या जो अनैरयिक है, वह नैरयिकों में उत्पन्न होता है ?

[उ.] (हे गौतम !) प्रज्ञापनासूत्र मे कथित लेश्यापद (१७वाँ) का तृतीय उद्देशक यहाँ कहना चाहिए और वह ज्ञान के वर्णन तक कहना चाहिए।

1. [Q.] *Bhante* ! Are infernal beings born among infernal beings or are non-infernal beings born among infernal beings ?

[Ans.] Gautam ! Here the third Uddeshak of the *Leshyapad* (17th pad) from *Prajnapana Sutra* should be stated till the description of *Jnana*.

विवेचन : प्रस्तुत सूत्र में नैरयिको की उत्पत्ति के सम्बन्ध मे प्रज्ञापनासूत्र के १७वें लेश्यापद के तृतीय उद्देशक का संदर्भ दिया है। वह इस प्रकार है–

[प्र.] भगवन् ! क्या नैरयिक ही नैरयिको में उत्पन्न होता है या अनैरयिक नैरयिको मे उत्पन्न होता है ?

[उ.] गौतम ! नैरयिक ही नैरयिको मे उत्पन्न होता है, अनैरयिक नैरयिको मे उत्पन्न नहीं होता।

इस कथन का आशय है, यहाँ से मरकर नरक में उत्पन्न होने वाले जीव की तिर्यञ्च या मनुष्य-सम्बन्धी आयु तो यहीं समाप्त हो जाती है, सिर्फ नरकायु ही बँधी हुई होती है। यहाँ मरकर नरक मे पहुँचते हुए मार्ग मे जो एक-दो आदि समय लगते हैं, वे उसकी नरकायु में से ही कम होते हैं। इस प्रकार नरकगामी जीव मार्ग में भी नरकायु को भोगता है, इसलिए वह नैरयिक ही है। ऋजुसूत्रनय की वर्तमान पर्यायपरक दृष्टि से भी यह कथन सर्वथा उचित है कि नैरयिक ही नैरयिको मे उत्पन्न होता है, अनैरयिक नही। इस तरह शेष दण्डको के जीवो की उत्पत्ति के सम्बन्ध में जान लेना चाहिए।

॥ चतुर्थ शतक : नवम उद्देशक समाप्त ॥

Elaboration—In this aphorism reference of the third Uddeshak of the *Leshyapad* (17th pad) from *Prajnapana Sutra* has been given with regard to birth of infernal beings. It is as follows—

[Q.] *Bhante* ! Are infernal beings alone born among infernal beings or are non-infernal beings born among infernal beings ?

[Ans.] Gautam ! Only infernal beings are born among infernal beings; non-infernal beings are not born among infernal beings.

This statement means that the life-span of an animal or human being destined to be born among infernal beings after its death ends here only. It only has the bondage of life-span as an infernal being. The period of one, two or more *Samayas* that it takes in reaching the infernal world is deductible from his infernal-life-span only. Therefore, the being destined to infernal world experiences infernal-life-span on the way as well. Thus even during transition it is an infernal being. From the precisionistic view point or that related to specific point or period of time (*Rijusutra naya*) this statement that 'only infernal beings and not non-infernal beings are born among infernal beings' is correct. This also applies to the birth of beings belonging to all other *dandaks* (places of suffering).

● END OF THE NINTH LESSON OF THE FOURTH CHAPTER ●

चतुर्थ शतक : दशम उद्देशक
FOURTH SHATAK (Chapter Four) : TENTH LESSON

लेश्या LESHYA (SOUL-COMPLEXION)

लेश्याओं का परिणमन TRANSFORMATION OF LESHYA

१. से नूणं भंते ! कण्हलेस्सा नीललेस्सं पप्प तारूवत्ताए तावण्णत्ताए ?

एवं चउत्थो उद्देसओ पण्णवणाए चेव लेस्सापदे नेयव्वो जाव–

परिणाम–वण्ण–रस–गंध–सुद्ध–अपसत्थ–संकिलिट्ठुण्हा–
गति–परिणाम–पदेसोगाह–वग्गणा–ठाणमप्पबहुं ॥१ ॥

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति।

॥ चउत्थे सए : दसमो उद्देसो समत्तो ॥

॥ चउत्थं सयं समत्तं ॥

॥ भगवई सुइयं : पढमं भागं समत्तं ॥

१. [प्र.] भगवन् ! क्या कृष्णलेश्या नीललेश्या का सयोग पाकर तद्रूप और तद्वर्ण मे परिणत हो जाती है ?

[उ.] (हे गौतम !) प्रज्ञापनासूत्र मे उक्त लेश्यापद का चतुर्थ उद्देशक परिणाम इत्यादि द्वार–गाथा तक यहाँ कहना चाहिए। गाथा का अर्थ इस प्रकार है–

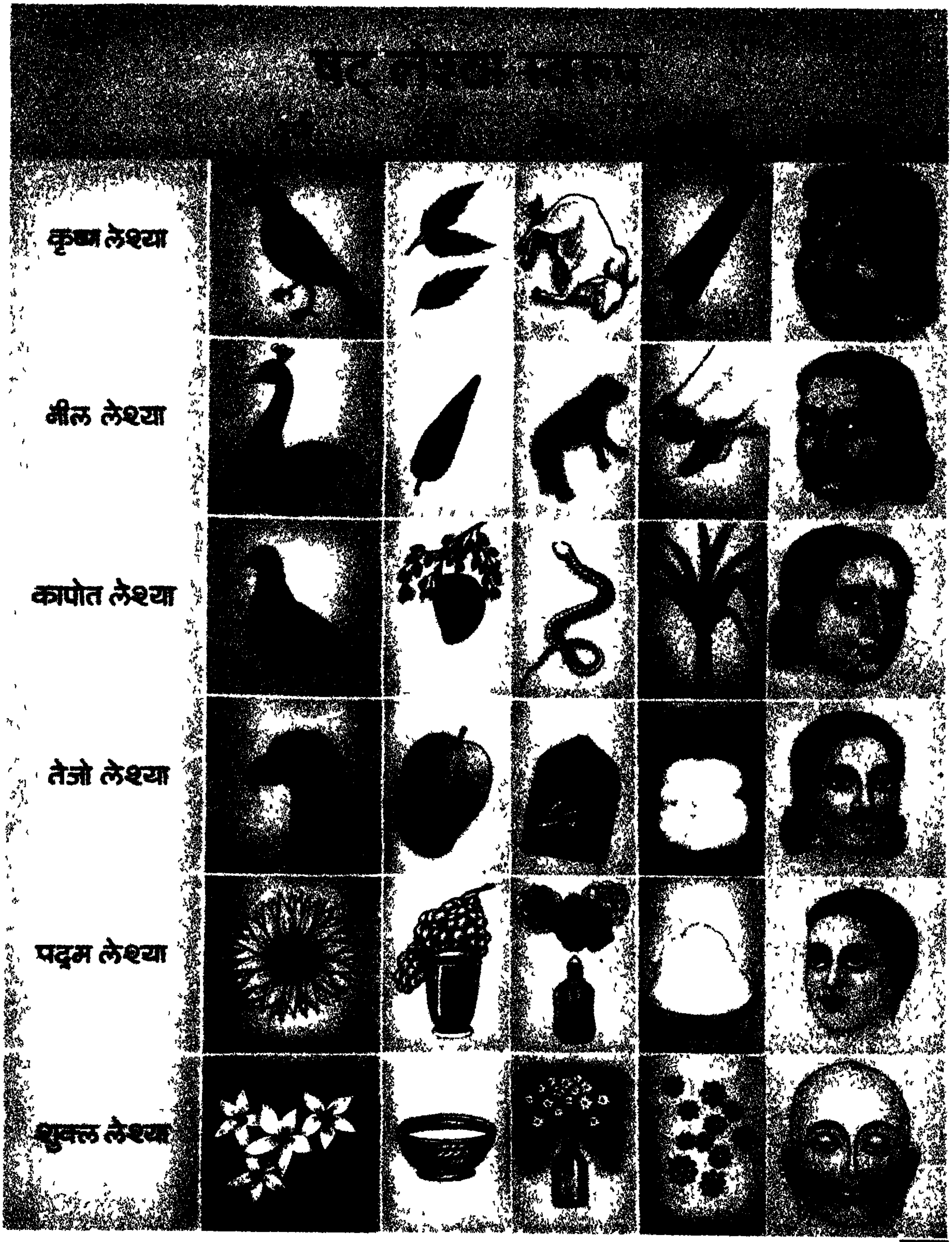
परिणाम, वर्ण, रस, गन्ध, शुद्ध, अप्रशस्त, संक्लिष्ट, उष्ण, गति, परिणाम, प्रदेश, अवगाहना, वर्गणा, स्थान और अल्पबहुत्व; (ये सब बाते लेश्याओ के सम्बन्ध मे कहनी चाहिए।)

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है', (यो कहकर गौतम स्वामी यावत् विचरण करते हैं।)

1. [Q.] *Bhante* ! Does *Krishna* (black) *leshya* (soul-complexion) get converted into the form and colour of *Neel* (blue) *leshya* on coming in its contact ?

[Ans.] Gautam ! Here the fourth lesson of chapter on *Leshya* from *Prajnapana Sutra* should be stated till verse on *Parinam* etc. (outcome). The meaning of the verse is as follows—

(These matters about *leshyas* should be stated—) *Parinam* (outcome or result), *varna* (appearance or colour), *rasa* (taste), *gandh* (smell), *shuddha* (purity), *aprashast* (ignoble or unwholesomeness), *sanklisht* (grief or


कृष्ण लेश्या
नील लेश्या
कापोत लेश्या
तेजो लेश्या
पद्म लेश्या
शुक्ल लेश्या

चित्र परिचय-१५

Illustration No. 15

षट् लेश्याओं के वर्ण-गंध आदि

गणधर गौतम ने पृछा-भते ! छह लेश्याओ के वर्ण, गध आदि किस प्रकार के है ?

उत्तर मे भगवान ने बताया-

कृष्ण लेश्या का **वर्ण**–कौए आदि के समान काला रस (स्वाद), नीम के समान कडवा, **गंध**, मृत पशु के कलेवर तुल्य, अत्यन्त दुर्गन्धमय। **स्पर्श**–करोत की धार के समान तीक्ष्ण, **भाव**–अत्यन्त रौद्र।

नील लेश्या का **वर्ण**–मोर व भ्रमर के समान नीला, **रस**–मिर्च के समान तीखा, **गध**–कुत्ते के कलेवर की गध से भी भयानक, **स्पर्श**–गाय की जीभ के समान खुरदरा, **भाव**–ईर्ष्या व लोभप्रधान।

कापोत लेश्या **वर्ण**–कबूतर की गर्दन जैसा, कच्चे आम जैसा कषैला, **गध**–मृत सर्प जैसी **स्पर्श**–तीक्ष्ण धारदार पत्ते जेसा। **भाव**–मायाप्रधान।

तेजोलेश्या **वर्ण**–तोते की चोच सा लाल। **रस**–खटटा मीठा, पके आम जैसा। **गध**–घिसे चन्दन के समान, **स्पर्श**–कोमल रुई के समान, **भाव**–विनम्र प्रियधर्मी।

पद्म लेश्या **वर्ण** पीला, सूर्य मुखी फूल जेसा। **रस**–अगर जैसा मीठा। **गध**–गुलाव के फूल व इतर जैसा। **स्पर्श**–कोमल नवनीत, **भाव**–भद्र परिणामी, सयम पधान।

शुक्ल लेश्या **वर्ण**–श्वेत कुन्दपुष्प समान। **रस**–मीठा खीर के समान। **गध**–फूलो के इतर के तुल्य **स्पर्श**–कोमल सिरीष पुष्प वत **भाव**–अत्यन्त प्रशस्त शुभ ध्यानी।

शतक ४ उ १० सूत्र १ (संदर्भ प्रज्ञापना पद १७ उत्तराध्ययन अ ३४)

ATTRIBUTES OF SIX LESHYAS

Ganadhar Gautam asked—Bhante ! What are the attributes like colour and taste of six leshyas ?

Bhagavan replied—

Krishna Leshya—colour black like crow, taste bitter like Neem, odour repulsive like an animal-cadaver, touch sharp like a saw, and sentiment very angry

Neel Leshya—colour blue like peacock, taste pungent like pepper, odour more repulsive than dog-cadaver touch rough like tongue of a cow, and sentiment dominated by jealousy and greed

Kapot Leshya—colour light blue like a pigeon, taste astringent like unripe mango, odour repulsive like snake-cadaver, touch sharp like a blade of grass, and sentiment deceitful

Tejo Leshya—colour red like parrot-beak, taste sour-sweet like ripe mango, odour like sandal-wood paste, touch soft like feather, and sentiment modest and religious

Padma Leshya—colour yellow like sunflower, taste sweet like grapes, odour like rose flower or essence, touch soft like butter, and sentiment noble and disciplined

Shukla Leshya—colour white like Kund flower, taste sweet like Kheer (milk-rice pudding), odour like flower-perfume, touch soft like Sireesh flower, and sentiment extremely noble and pure

—Shatak 4, lesson 10, Sutra 1 (Ref Prajnapana 17, Uttaradhyayan 34)

suppression), *ushna* (heat), *gati* (movement), *parinam* (transformation), *pradesh* (sections), *avagahana* (space occupation), *vargana* (category), *sthan* (place) and *alpabahutva* (quantitative comparison).

"Bhante ! Indeed that is so. Indeed that is so." With these words... and so on up to ascetic Gautam resumed his activities

विवेचन : प्रस्तुत सूत्र मे एक लेश्या को दूसरी लेश्या का सयोग प्राप्त होने पर वह उसी लेश्या के वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्श रूप मे परिणत होती है या नही ? इस प्रश्न का उत्तर प्रज्ञापना के लेश्यापद के चतुर्थ उद्देशक (परिणामादि द्वारो तक) का अतिदेश सदर्भ देकर दिया गया है।

प्रज्ञापना मे उक्त मूलपाठ का भावार्थ इस प्रकार है-

[प्र.] 'भगवन् ! क्या कृष्णलेश्या नीललेश्या (के संयोग) को प्राप्त करके तद्रूप यावत् तत्स्पर्श रूप मे बारम्बार परिणत होती है ?'

[उ.] इसका तात्पर्य यह है कि कृष्णलेश्या-परिणामी जीव, यदि नीललेश्या के योग्य द्रव्यो को ग्रहण करके मृत्यु पाता है, तब वह जिस गति-योनि मे उत्पन्न होता है, वहाँ नीललेश्या-परिणामी होकर उत्पन्न होता है क्योकि जैसा कहा है-**'जल्लेसाइं दव्वाइं परियाइत्ता कालं करेइ, तल्लेसे उववज्जइ'** अर्थात्-जिस लेश्या के द्रव्यों को ग्रहण करके जीव मृत्यु पाता है, उस लेश्या वाला होकर उत्पन्न होता है। जो कारण होता है, वही संयोगवश कार्यरूप बन जाता है। जैसे-कारणरूप मिट्टी साधन-सयोग से घटादि कार्यरूप बन जाती है, वैसे ही कृष्णलेश्या भी कालान्तर मे साधन-सयोगो को पाकर नीललेश्या के रूप मे परिणत (परिवर्तित) हो जाती है। ऐसी स्थिति मे कृष्ण और नीललेश्या मे सिर्फ औपचारिक भेद रह जाता है, मौलिक भेद नही। (इस परिणमन को उदाहरण देकर समझाया है।)

जिस प्रकार छाछ का सयोग मिलने से दूध अपने मधुरादि गुणो को छोडकर छाछ के वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्श के रूप मे परिवर्तित हो जाता है, अथवा जैसे श्वेत वस्त्र लाल, पीले, रग का सयोग पाकर उस रग के रूप, वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्शरूप मे परिणत हो जाता है, वैसे ही कृष्णलेश्या भी नीललेश्या का सयोग पाकर उसके रूप और स्पर्श मे परिणत हो जाती है। जैसे कृष्णलेश्या को, तेजोलेश्या पद्मलेश्या को तथा पद्मलेश्या शुक्ललेश्या को पाकर उसके रूप, वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्शरूप मे परिणत हो जाती है, इत्यादि सब कहना चाहिए।

॥ चतुर्थ शतक : दशम उद्देशक समाप्त ॥

॥ चतुर्थ शतक समाप्त ॥

॥ भगवतीसूत्र : प्रथम भाग समाप्त ॥

Elaboration—In this aphorism reference of the fourth lesson of *Leshyapad* from *Prajnapana Sutra* has been given in answer to the question—'Does one *leshya* (soul-complexion) get converted or not into the form and colour of another *leshya* on coming in its contact ?' The related text from *Prajanapana Sutra* is as follows—

[Q.] Does *Krishna* (black) *leshya* (soul-complexion) get converted again and again into the form... and so on up to... touch of *Neel* (blue) *leshya* on coming in its contact ?

[Ans.] This is related to the process of rebirth and the answer is—when a being with attitude conforming to *Krishna leshya* dies after acquiring substances conforming to *Neel leshya* he takes rebirth as a being conforming to *Neel leshya* in whichever genus he is born. This follows the stated rule—the *leshya* of the matter (*karmic* particles) acquired at the time of death determines the *leshya* of the reincarnation The cause itself becomes the consequential effect. Clay as the consequence of shaping turns into pot of clay. In the same way *Krishna leshya* as a consequence of contact turns into *Neel leshya* with passage of time. In this context the difference between *Krishna* and *Neel leshyas* is only for name sake and not fundamental (this transformation has been elaborated by giving examples—)

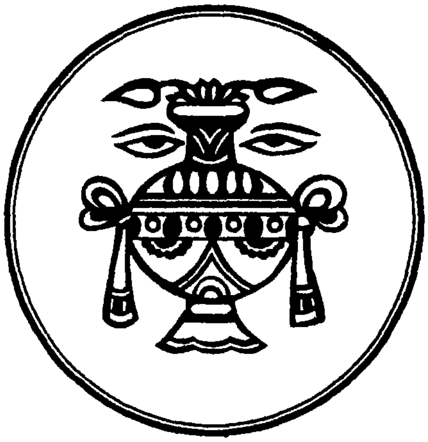
Contact with butter-milk causes change in sweetness and other attributes of milk acquiring the colour, smell, taste and touch of butter-milk Contact with red or yellow dyes causes change in attributes of white cloth acquiring the colour, smell, taste and touch of the dye In the same way contact with *Neel leshya* causes change in attributes of *Krishna leshya* acquiring the colour, smell, taste and touch of *Neel leshya* Contact with *Neel, Padma* and *Shukla leshyas* causes change in attributes of *Krishna, Tejo* and *Padma leshyas* respectively acquiring the colour, smell, taste and touch of the former All these details should be stated

● END OF THE TENTH LESSON OF THE FOURTH CHAPTER ●

● END OF THE FOURTH CHAPTER ●

● END OF ILLUSTRATED BHAGAVATI SUTRA—PART ONE ●

परिशिष्ट
APPENDIX



Appendix-1

Technical Terms

SHRI BHAGAVATI SUTRA (VYAKHYAPRAJNAPTI) Part-1

The alphabetical index of technical terms according to aphorism number. First numeral in Shatak (chapter), second is Uddeshak (lesson) and third is Sutra (aphorism) number.

(A)

Aabhiyoga = attendant gods (3/7/5 [2])

Aabhiyogik = attendant gods (1/2/19)

Aabhiyogik Dev-loks. = divine realms up to Achyut Kalp (3/5/15)

Aabhiyogya = one of the ten classes of gods (3/1/3)

aabhog nirvartit = voluntary intake (1/1/6)

aabhyupagamik vedan = voluntary and conscious experience (1/4/6)

aachaar = ascetic-conduct (2/1/34)

aadar = appreciate and accept (3/1/33)

aadhakarma = to sterilize a thing or make it uninfected with living organism specifically for the use of ascetics, also to cook food, construct house and get dresses stitched specifically for use of ascetics (1/9/27)

aadhikaraniki kriya = activity of collecting instruments of violence (1/8/4, 8), any activity that qualifies (adhikar) a soul for ignoble rebirth including that in hell, it also means activity involving instruments (adhikaran) of violence (3/3/2, 4, 7)

aadhovadhik = simple avadhi jnani (1/4/15)

aadhya = affluent (2/5/11)

Aadikar (aaigare) = the first propounder of his time (1/1/4 [2])

aadisht = distinguished by adjectives (1/2/14)

aahaar (ahaar) = intake (1/7/6, 12, 13)

Aahaar-pad = a chapter in Prajnapana Sutra (2/1/4)

Aahar-dvar = one of the 24 attributes of sense organs (2/4/1)

Aajivak = disciples of Goshalak who remained unclad (1/2/19)

aakar = settlement near a mine (1/1/12), mines (2/9/1)

aanukampik = compassionate (3/1/52)

aaraadhak = true follower (1/3/6)

aaraadhak samyami = restrained without a lapse (1/2/19)

aarambh (arambh) = violent or sinful activities (3/3/12, 14)

Aaran = a divine realm (3/8/6)

aartava = menstrual discharge (1/7/12), mother's blood (1/7/13)

Aaukkhayenam = on shedding of the particles of ayushya karma (life-span determining karmas) (2/1/54)

abal = non-strength (1/3/10)

abhangak = absence of alternatives (1/5/33, 34)

abhashak = non-speakers (2/6/1)

abhava-siddhik = not to be liberated in this birth (1/6/15), unworthy of being liberated in future (3/1/51)

Abhayadayak (abhayadaye) = who dispels fear (1/1/4 [2])

Abhayadev Suri (1/1/2)

Abhayadev's Bhagavati Vritti (3/2/40)

abhigam = five codes of courtesy meant for a religious assembly (2/5/14)

abhilasha = desire, curiosity (2/1/17, 24, 3/2/25)

abhimukh = manifest (3/1/24, 3/2/19, 43)

Abhinibodhik jnana (Mati-jnana) = sensory knowledge or to know the apparent form of things appearing before the soul by means of five sense organs and the mind (2/10/9, 1/5/23)

abhinivisht = thoroughly assimilated (1/7/22)

abhisamanvagat = about to fructify (1/7/22, 1/8/9)

abhishek = anointing (2/8/1)

Abhishek Sabha = hall of anointing (2/8/1)

abhiyoga = entering into and manipulating some other body (3/5/12, 13), acquisition of a form (3/5/14)

abhiyogiki bhaavana = sentiment of pursuing transformation (3/5/14)

abhiyojan = acquire (3/5/14)

abhra = cloud formations (3/7/4 [5])

abhra-vriksha = clouds in shape of a tree (3/7/4 [5])

abhyakhyan = blaming falsely (1/9/1)

abhyantar-bahya uchchhavas-nihshvas = breathing-in and breathing-out as well as inhalation and exhalation (2/1/3)

abhyantara = inner (3/10/1)

achakshu-darshan = non-visual perception (2/10/9)

Achal (ayal) = unwavering (1/1/4 [2])

achalit = karmas that have not shifted from the soul space-points, unmoved (1/1/6 [1], [3])

achar = stationary (2/9/1)

acharam = not final (3/1/51)

acharam-shariri = those who have to further reincarnate for seven to eight births (1/1/11)

acharya = spiritual leader who heads an order or group (1/1/1, 1/2/19, 1/3/15)

Acharya Mahaprajna (2/5/27, 3/1/13, 3/6/5)

Acharya Malayagiri (3/4/13)

Acharya Vijaya Yashodev Suri (2/3/1)

achhatrak = giving up use of umbrella (1/9/24)

achit = things free of living organisms (2/5/14)

Achyut kalp = a divine dimension (1/2/19, 1/5/5, 2/1/53, 2/7/2, 3/1/19, 3/2/12, 3/8/6, 3/10/1)

Achyutendra (3/6/15, 3/8/6)

adan-bhand-matra-nikshepana samiti = careful upkeep of ascetic-equipment including bowls (2/1/37)

adantadhavan = not cleaning teeth (1/9/24)

Adarsh-dvar = one of the 24 attributes of the sense organs (2/4/1)

adattadan = taking without being given, act of stealing (1/6/11, 1/9/1)

addha = life-span (1/1/11), time (1/6/20)

Addha-Samaya = time (2/10/11, 12)

Adhai Dveep = two and a half continents (2/9/1)

adhakarmik = food specifically prepared for an ascetic (1/9/26)

Adharmastikaya = inertia entity (1/9/7, 2/10/1, 3, 8, 11, 13, 22)

adhikaran = tools and equipment (2/5/11)

Adholok = lower world (2/10/14, 22)

Adholok-kandak = unit of time lapse for downward movement or the time taken in traveling downwards to a specific distance (3/2/34)

adhva = path (1/1/11)

adhyatmik = aspiration (3/1/25, 29)

adhyavasaya = inspiration, doubt (2/1/17, 24, 48, 49, 3/2/25, 31)

adhyavasit = persevering (1/7/19, 20)

aghaati = non-vitiating (1/1/11)

Agni Kumar = a class of divine beings (1/5/3; 3/1/11, 3/7/4 [4], 3/8/3)

Agni Kumari = a class of divine beings (3/7/4 [4])

Agnibhuti (3/1/3, 7-12, 15)

Agnimanav (3/1/11)

Agnimanav (ssaha) (3/8/3)

Agnishikh (3/1/11)

Agnisimha (shikh) (3/8/3)

Agramahishi = chief queen (3/1/4, 6, 8, 11, 13, 14, 16, 17)

agriddhi = absence of covetousness for food and other things specially during consumption and use (1/9/17, 19)

agurulaghu = non-heavy-non-light (1/9/4-10, 14, 16, 2/10/12)

agurulaghu paryaya = non-grossness-subtleness (2/1/24)

ahaar (aahaar) = intake of food (1/1/6 [1]), food (3/1/13)

ahaar dravya vargana = ingestable group of matter (1/1/6 [1])

ahaar paryapti (3/1/34, 3/2/24)

Ahaar-pad = a chapter in Prajnapana Sutra (1/1/6 [1])

Ahamindra = independent god (3/8/6)

aharak = telemigratory (1/7/11, 1/9/12)

aharak sharira = telemigratory body (1/5/35, 36, (2/6/1)

aharak-samudghat = bursting forth of some soul-space-points in the form of a white puppet (2/2/1)

ahoratra = day and night (1/1/6 [19], 1/10/3)

ahoratriki = pratima to be practiced for twenty four hours (2/1/42)

Airavat (1/1/6 [24])

airyapathiki = careful movement of an accomplished ascetic or an omniscient with non-vitiating karmas (1/10/2)

ajeerna = indigestion (3/7/5 [3])

ajiva = non-soul or matter (1/6/25, 2/10/11), the non-living (2/5/11), lifeless (2/10/2)

Ajiva-pradveshiki-kriya = hostility towards non-living things (3/3/5, 7)

ajnana = ignorance (1/9/11), not just absence of knowledge but false knowledge or unrighteousness (1/5/23, 36)

ajnani = having false knowledge (1/5/22)

akaant = not beautiful (1/5/14, 1/7/22, 3/2/28)

akam nirjara = natural shedding of karmas due to sufferance without an intent of shedding karmas (1/1/12)

akanksharahit = non-ambitious (2/1/37)

akaran virya = dormant potency (1/8/11)

akarma = non-action (1/3/10)

akash = space (1/6/25, 2/10/10)

Akashastikaya = space entity (1/9/7, 2/10/1, 4, 8)

akhandit samyamasamyami = restrained-unrestrained without a lapse (1/2/19)

akhandit samyami = restrained without a lapse (1/2/19)

akhyanti = say (2/5/1)

akirna = pervade (3/1/3, 4, 11, 13, 3/5/3)

akriya = complete cessation of all activity and inclination of mind, speech, and body (2/5/26)

Akshaya (akkhaya) = free of decay (1/1/4 [2])

akshaya = imperishable (2/1/24, 2/10/2)

Alankar-sabha = hall of embellishment (2/8/1)

Alasi = a plant (1/1/12)

almastu = perfect (1/4/18)

alochana = critical review, self-criticism (2/1/51, 2/5/25, 3/1/13)

Alok = unoccupied space (1/1/6 [13-16], 1/6/13, 2/4/1; 2/10/4)

Alokakash = unoccupied space, space beyond (2/10/10, 12)

Alokant = edge of unoccupied space (1/6/5, 17, 21)

Alok-dvar = one of the 24 attributes of the sense organs (2/4/1)

alpabahutva = comparative statement, comparative dimensions (2/2/1, 2/4/1, 2/6/1), quantitative comparison (4/10/1)

alpakarmi = with light karmas (1/2/13)

alpashariri = small bodied (1/2/5, 13)

alpechchha = to have minimal desire for food and other things (1/9/19)

alp-ichchha = limited desires (1/9/17)

amaayi = non-maligned, this includes spiritually alert and passion-free (3/4/18, 3/5/15, 3/6/6, 9, 10)

amaayi-samyakdrishti upapannak = born without deceit and with righteousness (1/2/12)

amanama = not adorable or whose mere thought is repulsive (1/7/22)

amanohar = not adorable or whose mere thought is repulsive (1/5/14, 3/2/28)

amanojna = non-attractive (1/5/14, 36, 1/7/22, 3/2/28, 29)

amavasya = new-moon day (3/3/17)

Amb (3/7/5 [4])

Ambarish (3/7/5 [4])

Amit-gati (3/8/3)

Amit-vahan (3/1/11, 3/8/3)

amogh = black and red lines appearing in the sky at dawn and sunset (3/7/4 [5], 7 [4])

amurchchha = absence of obsession (1/9/17, 19)

anaabhog nirvartit = involuntary intake (1/1/6)

anaakaaropayoga = cursory cognition (1/5/26, 1/9/14)

anaarambhi = those who are free of harmful intent (1/1/7 [1], 8 [1])

Anabhiyogik Dev-loks = divine realms above Achyut Kalp (3/5/15)

Anadikam = without a beginning (1/1/11)

anagar = an ascetic who has renounced household following the tenets of Arihant (3/6/8)

Anagar-dvar = one of the 24 attributes of the sense organs (2/4/1)

anagat kaal = future (1/9/16)

anaman = intake of breath (1/1/6 [1])

Anandarakshit (2/5/17)

Anant = infinite and eternal (1/1/4 [2])

anant pradesh = infinite space-points (2/1/4)

anant pradeshi dravya = entities having infinite space-points (1/1/6 [2])

anantanant pradeshi skandh pudgal = aggregates of infinite ultimate-particles (2/6/1)

anantanubandhi kashaya = passions that enhance the unending cycles of rebirth (1/2/13, 1/8/3)

anant-samsari = with unlimited cycles of rebirth (3/1/51, 52)

anant-virya = infinite potency (1/8/11)

ananupurvi = without a sequence (1/6/7, 11)

anarambh = one who abstains completely from all sinful activity (1/1/9 [1])

anarya = ignoble acts (3/7/4 [5])

anashravata = blockage of inflow of karmas (2/5/16, 17, 24)

anasrava = blockage of inflow of karmas (2/5/26)

anastitva = non-existence (1/3/7)

Anat kalp (1/5/5, 2/7/2, 3/8/6)

anatma = non-soul or the other (1/4/5)

Anavadagram = without an end or infinite (1/1/11)

Aneek (3/1/3)

Angarak = Mars (3/7/4 [6])

Angul = a linear measure equivalent to the thickness of a finger

anidan = devoid of expectation (2/1/37)

Anima = power of miniaturization (3/1/3)

anindriya = devoid of senses or sense organs (2/10/11)

anirharim = the ultimate vow taken at some uninhabited place like a jungle or other forlorn place not requiring the dead body to be shifted (2/1/28, 29, 31)

anisht = not desirable (1/5/14, 1/7/22, 3/2/28, 29)

Anjan = the Lok-pal of Vailamb, the overlord of Vayu Kumars (3/7/6 [4], 3/8/3)

Ankavatamsak = a celestial vehicle (4/1, 2, 3, 4/4)

ankush = a lancet to cut leaves (2/1/17)

anopahanagam = giving up use of sandals (1/9/24)

antah-shalya maran = to die with a thorn inside, a pointed weapon in the body or an inner thorn of falling from grace (2/1/26)

Antakar = capable of terminating the cycles of rebirth during that life time (1/9/19)

Antakriddasha Sutra (2/1/43, 46)

antaraya karma = power hindering karma (1/8/11)

Antar-muhurt = less than forty eight minutes

ant-kriya = the ultimate activity, the terminal-activity, last action, ending cycles of death, liberation (1/2/18, 1/8/2, 3, 3/3/12, 14)

anu = minute (1/1/6 [1])

anubhaava = influence (1/7/9)

anubhag = potencies (1/4/1)

anubhag karma = intensity determining karmas (1/4/6)

anudaatt = low (1/1/5 [2])

anudaya = non-fruition (1/4/5)

anudirna = unfructified (1/2/2, 3, 1/3/10)

anumat = approved (2/1/34)

anuparat-kaaya-kriya = physical activity of a person who has not resolved to abstain from sinful activities (3/3/3, 7)

anupurvi = in a sequence (1/6/7, 11)

Anuttar Vimaan = the highest celestial vehicle (1/1/6 [24], 1/5/5, 36, 2/7/2, 2/10/22, 3/8/6, 3/10/1)

anutthaan = non-rise (1/3/10, 11)

anuvrats = five minor vows (2/5/11)

Anuyogadvar Sutra (2/2/1)

anya yuthik = heretics (2/1/1)

anyatha-bhaava = unrealistically (3/6/2, 3, 5, 7, 10)

anyatirthak (anyatirthik) = followers of other schools (1/10/1, 2/5/1, 27)

apahinam-payahinam = to go around someone clockwise (1/1/4 [4])

apakraman = downward movement (1/4/3)

apakraman kriya = downward movement (1/4/5)

aparabhoot = insuperable (3/1/24)

Apardhapudgalaparavartan = an extremely long unit of time (1/1/11)

apavartana = to reduce the duration and intensity of karma with special effort (1/1/6 [1])

apavartanakaran = the process of reduction (1/1/6 [1])

apavritadvar = doors were never closed to anyone (2/5/11)

apkaya = water-bodied beings (1/1/6 [13-16], 1/2/8, 1/5/32)

appusuye = irresponsible or careless (3/2/32)

apramatt = alert (1/1/9 [1])

apramatt samyam = non-negligent (alert) restraint (3/3/16)

apramattasamyat = accomplished and alert (not in stupor); alert and disciplined (1/1/7 [2], 1/2/10, 12, 13, 3/3/16)

aprarthik-prarthak = hankering for the undesirable (death) (3/2/25, 29)

aprashast = ignoble or unwholesomeness (4/10/1)

apratibaddhata = seclusion or detachment leading to breaking ties (1/9/17, 19)

Apratihat-jnana-darshan-dhar (appadihayavarananadamsanadhare) = the holder of unlimited unveiled knowledge and perception (1/1/4 [2])

Apratihat-pratyakhyat-paapkarma = one who has not atoned for past sins by self-criticism and remorse, and not resolved to abstain from sins in future (1/1/12)

apratikarma = total restraint of movement and care (2/1/28)

apratyakhyana kriya = indisciplined action in absence of resolve of abstainment (1/2/5, 9, 10), act and consequence of non-renunciation in terms of karmic bondage (1/9/25)

aprishtavyakaran = answer without any question (3/1/7)

apriya = not lovable (1/5/14, 1/7/22, 3/2/28)

Apunaravartak (apunaravattiam) = from where there is no return to the cycles of rebirth (1/1/4 [2])

apurushakar-parakram = non-self-exertion (1/3/10, 11)

Ar Naath (3/1/41)

aradhak = devout (3/1/51, 52)

aradhit = successfully performed (2/1/41-43, 45)

Arahant = the detached one (1/1/2)

arambh (aarambh) = to indulge in such sinful activity that harms or kills some living being (1/1/9 [1])

arambhiki = act of violence (1/2/5, 7, 9, 10)

Aran kalp = a divine realm (1/5/5, 2/7/2)

archanika = prayer (2/8/1)

ardh = half (1/7/6)

Arhant = the revered one in three worlds (1/1/2)

Arhantanam = plural of Arhant (2/1/50)

Arihant = the victor and destroyer of the foes in the form of karmas (1/1/1, 2, 2/1/20, 2/9/1, 3/2/15, 17)

Arihant Bhagavan = Tirthankars (3/2/10)

Arihant-chaitya = image of Arihant or arhat-muni (Tirthankar in chhadmasth state) (3/2/17)

arsha = bleeding piles (3/7/5 [3])

arth = meanings (2/1/17)

arthabandh = identify yourself with the goal (3/1/33)

aruja = free of ailments (1/1/4 [2])

Arunavar Dveep = a continent (2/8/1)

Arunodayasamudra = an ocean or sea(2/8/1)

arupi = formless (2/10/2, 5, 11)

Aryaa = Parvati (3/1/27)

Asamsar-samapannak = non-worldly living beings or souls (1/1/7 [2], 1/8/10)

asamvrit = who has not blocked the inflow of karmas (1/1/11)

asamyam = indiscipline, non-restraint (2/5/9)

asamyat = ignoble, indisciplined, unrestrained (1/1/7 [2], 12, 1/2/9, 10, 19)

Asamyat bhavya dravya dev = an unrestrained person destined to be a god (1/2/19)

Asanga (3/7/7 [4])

asanjni = non-sentient (1/2/13, 19, 20), underdeveloped (1/2/13)

asanjni jiva = non-sentient being (1/2/19)

asanjnibhoot = not having awareness/righteousness (1/2/5, 7)

asankhyat akash-pradesh avagahit pudgal = matter particles occupying innumerable space-points (2/6/1)

asatavedaniya karma = karma causing pain (1/1/11)

asatya = untruth (2/6/1)

asatyaa-amrisha bhasha = speaking neither truth nor lie, customary speech (2/6/1)

ashaileshipratipanna = who has not attained rock-like steady state (1/8/10)

Ashan = a tree (1/1/12), staple food (2/1/50, 2/5/11, 3/1/25. 3/2/19)

Ashokavatamsak = a celestial vehicle (3/7/4 [1])

ashram = hermitage (1/1/12, 3/7/5 [3])

ashrava = inflow of karmas (2/5/11)

ashravadvar = sources of inflow of karmas (3/3/14)

ashtam bhakt = gap of three days (1/1/6 [21])

Ashtanga Hridaya = an Ayurvedic text (1/7/17)

ashubha = ignoble (1/5/14, 1/7/22, 3/2/28)

ashubh-shabd = unpleasant sound (3/9/1)

Ashunya kaal = period of absolute non-replacement (1/2/15-17)

asiddhi = state of non-liberation (1/6/15)

Asi-dvar = one of the 24 attributes of the sense organs (2/4/1)

Asipatra (3/7/5 [4])

asnana = giving up bathing (1/9/24)

Astikaya = conglamorative ontological category, fundamental entities (1/6/20, 2/1/1, 2/10/1)

astitva = existence (1/3/7)

Asur Kumar Devs = a kind of lower gods

Asurendra = overlord of Asur Kumars

Asurendra Chamar = Chamar the king of Asur Kumars

atapana = heat-mortification (3/1/26)

atapana bhumi = the allotted raised spot for austerities involving mortification by heat, the heat-mortification arena (3/1/25, 26; 3/2/20)

ateet kaal = past (1/9/16)

Atharvaveda (2/1/12)

Atikaya (3/8/4, 6)

Atimuktak = Madhavi creeper or Gaertnera racemosa (2/4/1)

ativarsha = torrential rain (3/7/6 [3])

atma = soul or self (1/4/5)

atmaarambhi = harmful to self (1/1/7 [2]), those who inflict harm to beings themselves (1/1/7-9)

atma-bhaava = intrinsic capacity of self-expression and exertion((2/10/9)

atmadharma = natural duty of soul (1/9/26, 27)

atmaparinaam = spiritual inclination (1/7/19, 20)

atma-pradesh = soul-space-points (2/2/1)

Atmarakshak Devs = equipped with weapons they attend Indras as personal guards, guard-gods (2/8/1, 3/1/3, 11, 12, 3/6/14, 15)

audarik = gross physical (1/5/36, 1/7/11; 1/9/12, 2/1/7)

audarik sharira = gross physical body (1/5/17, 2/6/1)

Audichya = northern class (3/1/11)

aughik = in general, common for all; 1 Palyopam to 33 Sagaropam (1/1/6 [24]; 1/2/12)

aupakramik vedan = involuntary and natural experience (1/4/6)

Aupapatik Sutra (1/1/4 [1], [2]; 1/2/19, 2/1/11, 33, 2/5/11, 3/1/3)

avadharini bhasha = language; meaningful speech (2/6/1)

Avadhi-ajnana = ignorance related to Avadhi-jnana or pervert Avadhi-jnana (2/10/9)

Avadhi-darshan = extrasensory perception (2/10/9)

Avadhi-jnana = knowledge acquired through extrasensory perception of the physical dimension something akin to clairvoyance (1/4/15, 3/2/25, 28, 31, 32, 2/10/9, 3/4/4, 3/6/8)

Avadhi-jnana labdhi = power of extra-sensory knowledge (3/6/6, 9, 10)

Avadhi-jnani = endowed with Avadhi-jnana(3/2/17, 3/4/4)

Avagadh = occupied space (2/4/1)

avagahana = space occupied or physical dimension (1/5/6, 10, 11, 3/1/13, 34, 2/10/4, 4/10/1)

avakashantar = intervening space or distance between two bodies or layers of air (1/6/1, 18, 20, 22, 1/9/4, 16, 2/10/19, 22)

Avalika = a unit of time (2/9/1, 2/10/12)

avalika bahya = random (2/7/2)

avalika pravisht = in a row (2/3/1, 2/7/2)

avapatan kaal = downward movement (3/2/37)

Avart (3/8/3)

Avasarpini = regressive cycle of time (3/2/14)

Avasarpini-utsarpini = regressive and progressive cycle of time (2/1/7)

avasthit = indestructible (2/10/2, 5, 6), steady (2/1/24, 2/10/2)

Avatamsak = great celestial vehicle or abode (3/7/4 [1], 4/1, 2, 3, 4/4)

avigraha gati = straight movement (1/7/8)

aviradhit samyamasamyami = restrained-unrestrained without lapse (1/2/19)

aviradhit samyami = restrained without. a lapse (1/2/19)

avirat = non-abstinent (1/1/12)

avirati = lack of abstinence (1/9/25), non-restraint (1/1/7 [2], 8 [1], 1/3/9)

avirya = non-potency (1/3/10), without active potency (1/8/10, 11)

aviryata = non-potency (1/4/2)

Avyabadh (avvavaha) = beyond all obstructions (1/1/4 [2])

avyaya = non-expendable (2/1/24, 2/10/2)

Ayambil = eating once in a day food cooked or baked with a single ingredient even without any salt or other condiments (3/1/16)

Ayampul (3/7/6 [4])

ayam-vishkambh = length-breadth (3/7/4 [1], 5 [1], 4/1, 2, 3, 4/4)

ayoga = enhancing wealth (2/5/11)

ayu-karma = life-span determining karma (1/1/6 [1], 11, 1/9/26, 27)

ayushya = karmas determining life-spans (1/9/20), life span (1/2/20)

ayushya karma = life-span determining karma (1/7/6)

(B)

baadar = gross (1/1/6 [1])

baal = ignorant (1/1/3)

baal-maran = ignorant's death (2/1/25, 26)

baal-pundit = ignorant-pundit or partially righteous (1/8/3)

baal-pundit-viryata = ignorant pundit's potency (1/4/2, 3, 5)

baal-tap = naive austerity (3/1/28, 3/2/21)

baal-virya = ignorant's potency (1/4/5)

baal-viryata = ignorant's potency (1/4/2, 3)

baddha = bound (1/7/22, 1/8/9)

bahalya = thickness, depth, width (2/3/1; 2/4/1, 2/7/2)

bahumat = sanctioned (2/1/34)

Bahurat-vaad (1/1/5 [2])

bahya = outer (3/10/1)

bal = physical strength (1/3/9, 10, 1/7/9, 1/8/11, 48, 2/10/9, 3/1/3, 29, 3/6/5, 10)

Baladev (2/9/1)

balahak = cloud (3/4/7-9)

balasampanna = rich in physical strength (2/5/12)

balaya maran (balanmaran) = to die writhing (2/1/26)

Balichancha = the capital city of Asurendra Bali (3/1/30-33, 35-40)

bali-karma = propitiatory rites (2/5/14, 3/1/25)

Balindra (3/1/11, 3/6/15; 3/8/3)

Balu (3/7/5 [4])

Balukaprabha = third prithvi or hell (1/5/11, 2/3/1, 3/2/6)

bandh = bond (1/1/6 [1]), bondage of karmas (2/5/11)

Bandhujivak = a tree (1/1/12)

Bang Desh = Bengal (3/1/26)

Barbar = a tribe (3/2/15)

Bebhel (3/2/19-21)

Bechardas (3/3/14)

beej = seed (3/4/4)

bhaava = state (2/1/4, 24, 2/10/2, 5, 6, 3/3/11-14)

bhaava leshya = mental complexion (1/9/10)

Bhaavalok (2/1/24)

Bhaavasiddhi. (2/1/24)

bhaavendriya = sensual awareness (1/7/10)

bhaavit = enkindling (1/1/4 [3], 1/1/12, 1/2/22, 1/6/12, 2/1/17, 45, 2/5/11, 21)

bhaavitatma = accomplished (2/2/1)

bhaavitatma anagar = accomplished ascetic (3/4/1-4, 14-17, 3/5/1-14, 3/6/1, 3, 4, 6, 9-11, 13)

bhadra = noble (1/6/12)

bhagandar = fistula of the anus (3/7/5 [3])

Bhagavai (2/5/27, 3/1/13, 26, 3/6/5)

Bhagavantanam (2/1/50)

Bhagavati Sutra Prameyachandrika Tika (3/1/50)

Bhagavati Vritti (3/1/17)

bhakt-pratyakhyan = to die after abandoning intake of food till death and still taking proper care of the body (2/1/27, 29, 31)

Bhambhasar (1/1/4 [1])

bhang = alternatives (1/5/33)

bhangantar = diverse alternatives (1/3/15)

Bharat (1/1/6 [24])

Bharat-varsh (3/1/24, 35)

bhasha = language (2/1/1)

bhasha pudgal = speech-particles (2/6/1)

bhasha samiti = careful speech (2/1/37)

bhasha vargana = speech class (2/6/1)

bhashak = speakers (2/6/1)

bhasha-man = speech and mind (3/1/13)

bhasha-man paryapti. (3/1/34)

bhashante = assert (2/5/1)

Bhashapad = eleventh chapter of Prajnapana Sutra (2/6/1)

bhava nirodh = eliminated rebirth (2/1/8)

bhava pratyayik = acquired at birth (1/5/23)

Bhavadharaniya = primary transmutable body, incarnation sustaining body (1/2/13, 3/2/32, 1/5/13, 16, 36, 1/7/18)

Bhavakkhayenam = on shedding of the particles of naam-karma responsible for the divine state, concluding the state (2/1/54)

bhavanavaas = divine abodes (3/2/4)

Bhavanavasi = abode dwelling gods

Bhavan-pati = abode-dwelling gods

Bhavan-pati Devs = abode dwelling gods

Bhavan-vaasi Devs = abode-dwelling gods

bhava-prapanch nirodh = eliminated vagaries of life (2/1/8)

bhava-siddhik = to be liberated in this birth (1/6/15), worthy of being liberated in future (3/1/51, 52)

bhavitatma = one who enkindles his soul with endeavour for knowledge, detachment, austerities and discipline (3/6/8)

bhavitatma anagar = sagacious ascetics (3/2/15, 17, 31)

bhavopagrahi karma = incarnation sustaining karmas (1/1/11)

bhed = disjunction, to be in two minds (1/3/6, 2/1/14, 16)

bhed samapann = disjunction (1/3/5)

bhedan = piercing, to reduce or increase the intensity of bonded karmas by dividing or compounding (1/1/5 [2], 6 [1])

Bheem (3/8/4, 6)

Bhikshu Pratima = austerities to be performed by ascetics after taking some specific resolves (2/1/39-43)

Bhoot = a class of lower gods (3/8/6)

bhoot = plant bodied beings, organisms (1/10/1, 2/1/8, 35, 36, 3/1/11)

Bhootanand (3/1/11, 3/8/3)

bhoot-graha = affliction by Bhoot (3/7/5 [3])

bhrishika = mattress (2/1/17)

bhumishayan = lying on ground (1/9/24)

Bhuttuya (3/2/15)

Bimbasar (1/1/4 [1])

Bodhak (bohaye) = the giver of enlightenment (1/1/4 [2])

Bodhidata (bohidaye) = who steers one to enlightenment (1/1/4 [2])

bol = incoherent speech (3/7/5 [3])

brahmacharya = celibacy (1/3/6)

brahmacharyavaas = practicing celibacy (1/9/24)

Brahmalok Kalp (1/2/19, 1/5/5, 2/7/2, 3/1/19)

Brahmendra (3/6/15)

Brahmi = a script (1/1/2)

Brihaspati = Jupiter (3/7/4 [6])

Brihat Sangrahani (2/3/1, 3/1/33)

Brihatkalp Bhashya (3/1/26)

Buddha (buddhe) = the enlightened (1/1/4 [2])

buddha = enlightened (1/1/11, 1/4/16, 17, 1/9/19, 24, 2/1/9)

Budh = Mercury (3/7/4 [6])

Bura = a plant (2/5/9)

(C)

chaaritra = conduct (1/1/10, 2/1/24)

chaaritra mohaniya = conduct deluding (1/3/6)

chaaritrantar = diverse conduct (1/3/15)

chaitya = Yaksha temple complex (1/1/4 [1], 2/5/11, 3/1/2)

chaitya of Arihants (3/2/15, 31)

Chakraraksh (3/7/7 [4])

chakravarti = emperor (2/9/1)

chakshu-darshan = visual perception (2/10/9)

chakshupradayak = gives spiritual vision (1/1/4 [2])

chakshurindriya = sense organ of seeing, eyes (2/4/1, 3/9/1)

chakshusparsh (chakkhuphasam) = visible to naked eyes (1/6/4)

chalan = movement (1/1/3), the movement of bunches of karmas towards fruition 1/1/5 [2])

chalit = karmas that have shifted from the soul space-points (1/1/6)

Chamar = the king of Asur Kumar gods

Chamar Asurendra = the king of Asur Kumar gods

Chamarchancha = the capital city of Chamarendra

Chamarendra = the king of Asur Kumar gods

Champa = a city (1/1/4 [1], 2/1/50)

Champak = a tree (1/1/12)

Champakavatamsak = a celestial vehicles (3/7/4 [1])

Chanda = a divine assembly (3/10/1)

chanda = fierce (3/1/33)

chandal = keeper of cremation ground (3/1/27)

Chandika = Durga (3/1/27)

Chandra = the moon

Chandrakant mani = moon-stone (3/1/25)

Chandra-parivesh = halo of light around the moon (3/7/4 [5])

chapala (chavala) = with quick body movement (3/1/33)

char = movement (2/9/1)

Charak Samhita = an Ayurvedic text (1/7/17)

Charak-parivrajak = mendicants in saffron garb who seek alms in groups (1/2/19)

charam = in his final birth (3/1/51)

charam-shariri = reincarnated for the last time (1/1/11, 1/4/12, 17, 1/9/19)

charan = austerities including vows (2/1/34)

charitra moha = conduct deluding karma (1/1/6 [1])

charitra mohaniya = conduct deluding (1/4/5)

charitrasampanna = strict adherents of ascetic-conduct (2/5/12)

charma = cushion (2/10/7)

chaturindriya = four sensed beings (1/2/8, 2/10/11)

chaturthabhakta = one day and night (1/1/6 [2], [3])

Chaturyam Dharma = four dimensional religion (2/5/15)

Chatushpal (3/2/28)

chauthiya = fever after a gap of four days (3/7/5 [3])

chaya (chit) = nutritional assimilation of the transformed food in the body (1/1/6 [1], 1/9/26), acquisition of karma particles by soul-space-points (1/3/6), assimilate (1/3/3, 1/7/15)

Chelana Devi (1/1/4 [1])

chhaal = bark (3/4/4)

chhadmasth = one who is short of omniscience due to residual karmic bondage (1/4/12, 15, 16)

Chhadmasth Samudghat (2/2/1)

Chhadmasth state = one who is short of omniscience due to residual karmic bondage (3/2/22)

Chhanda Shastra = poetics or prosody (2/1/12)

Chhannalika = a wooden instrument (2/1/17)

chhatra = umbrella (2/1/17, 2/10/7)

Chhatrapalashak (2/1/11, 17, 38)

chhedan = to cut short the defined duration of karmas by division (1/1/5 [2])

Chhedopasthapanik Charitra = conduct of re-initiation after rectifying faults (1/3/15)

chhek (chheya) = expertly directed and steady (3/1/33)

chintan = thought (2/1/17, 24, 48, 3/2/25)

Chitra (3/8/3)

Chitrapaksh (3/8/3)

Chootavatamsak = a celestial vehicle (3/7/4 [1])

Chuchuk = a tribe (3/2/15)

(D)

Dadhimukh (3/7/6 [4])

dagdha = to burn the wood of karma with the fire of meditation and turn them to ash of non-karma (1/1/5 [2])

dahajvar = fever with burning sensation (3/7/5 [3])

Dakshin Nikaya = southern class (3/1/11)

Dakshinatya = southern class (3/1/11)

damar = turmoil or revolt (3/7/5 [3])

Danama pravrajya (3/2/19, 23)

dand = staff (2/10/7)

dandak = alternative (1/7/5, 6), place of suffering (1/1/6 [1], 1/2/2, 3, 13, 14, 1/3/2, 3, 14, 1/6/9, 11, 1/7/3, 4/9/1)

darbh = hay (2/1/48, 50)

darshan = perception/faith (1/1/10, 1/6/20, 1/9/11, 2/1/24)

darshan moha = perception/faith deluding karma (1/1/6 [1])

Darshan mohaniya = perception/faith deluding (1/3/6)

darshanantar = diverse perception/faith (1/3/15)

darshanavaraniya karmas = perception veiling karmas (2/6/1)

Darshan-bhrasht samalingi (1/2/19)

darshan-bhrasht-veshadhari = heretic in ascetic garb (1/2/19)

darshan-sampanna = having profound perception/faith (2/5/12)

deept = radiant (1/1/4 [3]), self-respecting (2/5/11)

deeptatapasvi = who has burnt the jungle of karmas with the radiant fire of austerities (1/1/4 [4])

desh = non-defined part, section or division, (1/3/6, 1/7/1, 6, 2/10/11, 12)

desh pratyakhyan = partially renounces (1/8/3)

desh-virati = partial abstainment (1/2/19, 1/4/5, 1/8/3)

Dev = a god or divine being

Dev ayushya = life span as divine being (1/2/21)

Dev Loks (Dev-loks) = divine realms (3/1/18)

dev samsar samsthan kaal = period of rebirth and existence as divine beings (1/2/14)

deva-asanjni ayushya = life span as non-sentient divine beings (1/2/20, 22)

Devakuru (1/1/6 [24], 1/2/13)

Dev-dushya = divine cloth (3/1/13, 34)

Devendra Ishan (3/1/15, 16, 34, 35, 4/1, 2, 3, 4/2)

Devendra Shakra (3/1/12-15, 44, 49, 3/7/2)

Dev-nikaya = divine genus (3/1/3)

Dev-shayaniya = divine bed (3/1/13, 34)

dhaarak = holder in memory (2/1/12)

dhan-kshaya = loss of wealth (3/7/5 [3])

Dhanush = a linear measure equivalent to four cubits

dhanya = blissful (2/1/21), pious and religious (2/1/37)

dhanya rupa = promised bliss (2/1/46)

Dharan (3/1/11)

Dharanendra (3/8/3)

Dharmadata (dhammadaye) = the originator of dharma (1/1/4 [2])

Dharmanayak (dharmanayage) = the leader of dharma (1/1/4 [2])

Dharmasarathi (dhammasarahi) = the true guide of dharma (1/1/4 [2])

Dharmastikaya = motion entity (1/9/7, 2/10/1-3, 7, 8, 11, 13-19, 21, 22)

Dharmavarachaturanta Chakravarti (dhammavarachaurant-chakkavatthi) = the emperor of dharma in all the four dimensions of life (1/1/4 [2])

Dharmopadeshak (dhammadesaye) = the preceptor of dharma (1/1/4 [2])

Dhoom-prabha = the fifth hell (1/5/11, 2/3/1)

dhruva = constant (2/1/24, 2/10/2)

dhumika = mist (3/7/4 [5])

digdaha = flame-like glowing of directions (3/7/4 [5])

Dik Kumar = a class of divine beings (1/5/3, 3/7/7 [2])

diksha-paryaya = ascetic-life (3/2/22)

dimb = problems like riots (3/7/5 [3])

Disha Kumar = a class of divine beings (3/1/11, 3/8/3)

divas-prithakatva = anything between two to nine days (1/1/6 [3], [24])

Divya = divine (3/1/33)

dravya = entity, substance

dravya leshya = physical complexion (1/9/10)

dravya shrut = written knowledge (1/1/2)

Dravya Siddha (2/1/24)

dravyalingadhari = ascetic in appearance only (1/2/19)

Dravyalok (2/1/24)

Dravyasiddhi (2/1/24)

dravyendriya = physical sense organs (1/7/10)

drisht-bhashit = acquainted with and talked to (3/1/29)

drishti = outlook (1/6/20; 1/9/11), perception (1/5/6)

dronmukh = hamlet (1/1/12, 3/7/5 [3])

duhkha = suffering (1/1/3)

dukh-sparsh parinam = unpleasant touch (3/9/1)

durabhi-gandh = unpleasant smell (3/9/1)

durantapant-lakkhane = having inauspicious and undesired signs (3/2/32)

duras parinam = unpleasant taste (3/9/1)

durbhoot = creatures causing damage to people and food (3/7/5 [3])

durlabh-bodhi = capable of enlightenment with difficulty (3/1/51, 52)

durup = unpleasant view (3/9/1)

durvrishti = bad rain (3/7/6 [3])

dushprayukta-kaaya-kriya = physical activity of a pervert ascetic with sensual and mental cravings (3/3/3, 7)

dvar = attributes (1/5/6, 28, 36, 2/4/1, 2/6/1), sources of karmas (1/2/13)

dveep = continent (1/6/20, 1/9/5)

Dveep Kumar = a class of divine beings (1/5/3, 3/1/11, 3/7/7 [2], 3/8/3)

Dveep Kumari = a class of divine beings (3/7/7 [2])

Dveepodadhi-dvar = one of the 24 attributes of the sense organs (2/4/1)

dvesh = aversion inspired by suppressed anger and conceit (1/9/1)

dvi-antar = fever after a gap of two days (3/7/5 [3])

dvindriya = two sensed beings (1/2/8, 2/10/11)

dvindriya jiva = two-sensed beings (1/1/6 [17])

dvipik = cheetah (3/5/12)

dvitiya gum = second part of the statement (3/1/8)

dyuti = radiance in terms of body and embellishments (1/7/9, 3/1/3, 3/6/5, 10)

(E)

Ek ratriki Pratima = to be practiced for one night (2/1/42, 43)

ekanta-baal = singularly unrighteous or ignorant (1/8/1)

ekanta-pundit = singularly righteous or enlightened (1/8/2)

ekantar jvar = fever on alternate days (3/7/5 [3])

ekarth = synonymous (1/1/5 [2])

ekendriya = one-sensed (2/10/11)

Erand = a tree (2/1/46)

eshana samiti = careful alms-seeking (2/1/37)

eshaniya = free of faults and acceptable for ascetics (1/9/27)

ettham = to self, here nearer in comparison, own disciple (1/3/7)

(F)

Fanit-dvar = one of the 24 attributes of the sense organs (2/4/1)

(G)

gaadhavagaadh = tightly pack (3/1/3, 4, 3/5/3)

gamaniya = worth expounding (1/3/7)

gandh = odour, smell (2/1/4, 2/3/1, 2/10/6, 4/10/1)

gandh rahit = devoid of smell (2/10/2, 5)

Gandharva = a class of divine beings (2/5/11, 3/1/11, 3/8/6)

gandharvanagar = city like formation in sky (3/7/4 [5])

ganetrika = wrist band (2/1/17)

Ganit Shastra = mathematics (2/1/12)

Gardhabhal (2/1/12, 18)

garha = self-censure (1/3/10-13, 1/9/21)

Garud = a class of divine beings (2/5/11)

gathapati = householder (3/1/24, 3/2/19)

gati = genuses (1/10/3), movement (4/10/1), speed (3/1/33)

Gau = a unit of linear measure (1/2/13)

Geetarati (3/8/4, 6)

Geetayash (3/8/4, 6)

ghanavaat = dense air (1/9/16, 2/7/2, 2/10/18, 22), ring of dense air (1/6/19, 23, 1/9/5)

ghanodadhi = dense water (1/9/16, 2/7/2), ring of frozen water (1/6/19, 20, 1/9/5), section of dense water (2/10/18, 22)

ghattit = move in all directions (3/3/11)

ghor = severe in winning over afflictions and senses (1/1/4 [3])

ghor-brahmacharyavasi = scrupulously celibate (1/1/4 [3])

ghor-guna = paramount in virtues (1/1/4 [3])

ghor-tapasvi = austere in austerities (1/1/4 [3])

ghosh = sound (1/1/5 [2], 3/1/11, 3/8/3)

ghranendriya = sense organ of smell; nose (2/4/1, 3/9/1)

gihamaddham = one whose path or life-span is long (1/1/11)

gilli = howdah on an elephant (3/4/5, 10)

giripatan = to die due to fall from a hill (2/1/26)

gochar = alms seeking (2/1/34)

Gostubha = a mountain (2/8/1)

gotra = clan name (2/1/18, 3/1/24)

graha = planets (3/1/11, 3/7/4 [1])

graha-dand = coming of planets like Mars in a straight line (3/7/4 [5])

graha-garjit = the thundering sound of the movement of planets (3/7/4 [5])

graha-musal = coming of planets in the shape of a mace (3/7/4 [5])

grahan = being acquirable (2/10/6)

graha-pasavya = the oblique movement of planets (3/7/4 [5])

graha-shringatak = coming of planets in a triangular shape (3/7/4 [5])

graha-yuddha = coming of planets in two straight lines in opposite directions (3/7/4 [5])

Graiveyak = a specific sector of celestial vehicle dwelling gods in space (1/2/19, 1/5/5, 2/10/22, 3/10/1, 3/8/6)

Graiveyak Devs = a class of divine beings (1/2/19)

Graiveyak vimaans (2/7/2)

gram = village (1/1/12, 3/7/5 [3])

gram-roag = village epidemic (3/7/5 [3])

gram-vaha = village flooding (3/7/6 [3])

Gridharatha = a divine assembly (3/10/1)

gridhraprishtha maran = to die due to body parts being pecked and snatched by birds like vulture (2/1/26)

guna = properties (2/10/2-6)

Gunaratna-samvatsar (2/1/43-45)

Gunashila Chaitya (2/1/10, 2/5/10, 23, 25)

Gunasthan = levels of spiritual ascendance or level of purity of soul (1/1/11, 3, 5, 1/3/9, 1/10/2; 3/3/14, 16)

Gunavrats = restraints that reinforce the practice of anuvrats (2/5/11)

Gunja = a seed (2/1/48)

gupta = control over self (2/1/37)

gupta brahmachari = control over libido (2/1/37)

guptindriya = control over sense organs (2/1/37)

guptis = restraints (2/1/37)

guru = heavy or with downward movement (1/9/4-6, 8, 10, 16)

Guruk = weight (1/1/3)

gurulaghu = heavy-light, a thing having transverse movement (1/9/4-6, 8, 10, 12, 13, 16)

gurulaghu paryaya = grossness-subtleness (2/1/24)

(H)

Haath = cubit (1/5/11)

Harikant (3/1/11, 3/8/3)

Harisimha (3/8/3)

Harissaha (3/1/11)

heena-punna-chauddase = on an inauspicious fourteenth day (a short-date in a fortnight devised for adjustment between lunar and solar calendars) (3/2/32)

hetu = causes (2/1/17)

hit-kaami = wishes well (3/1/52)

hridayashula = anginal pain (3/7/5 [3])

hundak samsthan = an anatomical structure having deformities in every part of the body (1/5/16, 17, 36)

(I)

iham = here (farther in comparison), a householder (1/3/7)

Indra = king or overlord (2/8/1; 3/1/16), overlord of all classes of gods (3/1/3-6, 10-15, 22)

indragraha = affliction by Indra (3/7/5 [3])

indrakeel = central point of an architrave (3/2/28)

indriya = sense organs (1/7/10, 2/1/1, 2/4/1, 3/1/13, 3/9/1)

Indriyapad = a chapter in Prajnapana Sutra (2/4/1)

irya samiti = code of care of movement (2/1/37, 2/5/23)

iryapathiki kriya (Iriyavahiya) = careful movement with passionless association (yoga) (3/3/10, 14), careful movement of accomplished ascetic (1/2/13), infinitesimal karmic bondage due to careful movement (3/3/14)

Isa = a divine assembly (3/10/1)

Ishan (4/1, 2, 3, 4/4, 4/5, 6, 7, 8/1)

Ishan Dev Lok (3/1/34)

Ishan kalp (1/5/5, 2/7/2; 3/1/16, 17, 22, 35-37, 3/8/6)

Ishan Kone = north-eastern direction (1/1/4 [1], 2/1/34; 2/5/11, 3/2/28)

Ishanavatamsak (4/1, 2, 3, 4/4)

Ishanavatamsak Mahavimaan (4/1, 2, 3, 4/4)

Ishanavatamsak Vimaan = celestial vehicle (3/1/22, 34)

Ishanendra (3/1/16, 17, 22-24, 36, 37, 39-50, 3/6/15, 3/8/6)

Ishatpragbhara prithvi = the abode of Siddhas (2/10/21, 22, 3/2/3)

isht = desirable (2/1/50)

(J)

jaata (jaaya) = sowing a seed, conception, triggering (1/1/4 [4])

jaatakautuhal (Jaayakouhalle) = rising of curiosity (1/1/4 [4])

jaatasamshay (jaayasamsaye) = rising of doubt or inquisitiveness (1/1/4 [4])

jaatashriddha (jaayasaddhe) = origin of reverence, here it means origin of interest to know the fundamentals (1/1/4 [4])

Jaatrupavatamsak (4/1, 2, 3, 4/4)

jaghanya Muhurt-prithakatva = two to three Muhurt (1/1/6 [24])

jaghanya sthiti = minimum life span (1/5/9)

Jala (3/8/3)

jala pravesh = to die by drowning (2/1/26)

Jalakant (3/1/11, 3/8/3)

Jalaprabh (3/1/11, 3/8/3)

Jalarupa (3/8/3)

jalla-singhan = dirt of the ear and nose (2/1/37)

Jamali (1/1/5 [2], 1/2/19)

Jambu dveep = Jambu continent

jana-kshaya = loss of people, destruction of people, epidemic etc (3/7/4 [5], 3/7/5 [3])

janapad = inhabited areas (2/5/19)

janapad-varg = a state-like vast inhabited area (3/6/4, 5, 9, 10)

jara = dotage (3/7/5 [3])

Jata = a divine assembly (3/10/1)

jatisampanna = belonging to high castes (2/5/12, 14)

Jaya (3/7/6 [4])

jayini (jaina) = winning speed (3/1/33)

Jina (jine) = the conqueror of attachment and aversion (1/1/4 [2]; 2/1/20)

Jina kalp = a specific ascetic-code (1/3/15)

Jinagriha = temple of Jina (2/8/1)

jitendriya = victor over senses (2/1/37)

jiva = five sensed beings, souls (1/10/1), life, soul or living being (1/6/25), soul as a living being (2/1/24), the living (2/5/11), with life or soul (2/10/5)

jiva bhaava (chetana) = state of life (2/10/9)

Jivabhigam Sutra (2/3/1, 2/7/2, 2/8/1, 2/9/1, 3/3/17, 3/9/1, 3/10/1, 4/5, 6, 7, 8/1)

jiva-pradveshiki-kriya = hostility towards living being (3/3/5, 7)

jivas = progenies (2/5/8)

jivastikaya = soul entity (1/9/7, 2/10/1, 5, 8, 13)

jnana = knowledge, right knowledge, spiritual knowledge, righteousness, acquisition of knowledge

jnanantar = diverse knowledge (1/3/15)

jnanasampann = rich in knowledge (2/5/12)

jnanavaraniya karmas = knowledge veiling karmas (2/6/1)

jnani = having right knowledge (1/5/22)

jnani-ajnani = with right and wrong knowledge (1/5/36)

jnata = known (1/4/6)

Jnata/Jnapak (janaye) = the lamp of knowledge and beacon on the path of victory over attachment and aversion (1/1/4 [2])

jvalan pravesh = to die by entering into fire (2/1/26)

Jyotish Shastra = astrolgoy (2/1/12)

Jyotishk = stellar (1/2/11; 1/5/36; 1/8/11, 2/7/1, 2, 2/9/1, 3/1/3, 11, 3/4/12; 3/8/5; 3/9/1)

Jyotishk Dev = Stellar god (1/1/6 [23], 1/2/19, 1/5/4, 3/2/28, 3/10/1)

Jyotishkendra (3/1/11, 12)

(K)

Kaal = time

Kaalasyaveshiputra = Kalas the son of a merchant (1/9/21-24)

Kaal-lok (2/1/24)

Kaal-pal (3/8/2, 3)

Kaal-siddhi (2/1/24)

kaamana = desire (1/7/19, 20)

kaanksha (kanksha) = apprehension (2/1/14, 16), craving (1/7/19, 20), dislike for one's own faith with a desire to accept other faith (1/3/6)

kaanksha pradosh = faith deluding karma (1/1/3), dogma of and obsession for other faith (1/9/19)

kaanksha pradvesh = dislike and aversion for anything contrary to one's ideas and beliefs (1/9/19)

kaanksha yukt = desire for other faith (1/3/5)

Kaanksha-mohaniya karma = desire deluding karmas, a category of darshan mohaniya karma (perception deluding karma) (1/3/1, 2, 4-6, 8-15)

kaant (2/1/50)

kaaran = reasons (2/1/17)

Kaatarik. (3/7/6 [4])

kaayiki (kayiki) = physical activity or sinful act performed by body (1/8/4, 5, 7, 8), activity within or by the body, physical activity (3/3/2, 7)

kaayiki kriya = physical activity (3/3/3)

kachchha = river (1/8/4-7)

kachchha-koha = tumor or fetid sores in armpits and other such parts of the body (3/7/5 [3])

Kadamba = Nauclea cadamba, a flower (2/4/1)

kalah = dispute (1/9/1), strife (3/7/5 [3])

Kalik-putra (2/5/17)

Kalp = divine realm (2/7/2, 2/10/22, 3/8/6, 4/1, 2, 3, 4/4)

kalp = rituals (2/1/12)

kalpantar = diverse special codes (1/3/15)

kalpopattika = birth in higher divine realms like Saudharma kalp (1/8/2, 3)

kalush = spiteful misinterpretation of the Word (1/3/6)

kalush samapann = spiteful (1/3/5)

kalushya = distress (2/1/14, 16)

kalyan = beatific (2/1/21)

kalyan rupa = promised beatitude (2/1/46)

Kambal-dvar = one of the 24 attributes of the sense organs (2/4/1)

Kanchanika = garland of Rudraksh (2/1/17)

kand = trunk (3/4/4)

Kandarp = playful gods (3/7/5 [2])

Kandarpik = frolicsome ascetic, ascetic who indulges in erotic conversation (1/2/19)

kapihasit = monkey like grotesque shapes of clouds (3/7/4 [5])

kapishirshak = an indentation or hole in the wall of a fortification resembling head of a monkey (2/8/1)

kapot = pigeon (1/2/13)

kapot Leshya = pigeon complexion or hue (1/2/12, 1/5/18, 19, 28, 3/4/11)

karan = purity of alms including food (2/1/34)

karaniya = mission (2/1/8)

karan-virya = active potency or indulgence (1/8/10, 11)

karbat = market (1/1/12, 3/7/5 [3])

Kardamak = the serpent god living on Vidyutprabh mountain in the south-east direction (3/7/6 [4])

Karketan = a gem (3/1/3)

Karkotak = the serpent god living on Karkotak mountain in Lavan Samudra (3/7/6 [4])

karma = action (1/3/9)

karma = extremely minute matter particles that tend to fuse with soul and are responsible for rebirth and suffering

ka ma dravya vargana = karmic group of matter (1/1/6 [1])

karmakrit = excited state (2/5/8)

karman = karmic (1/1/6 [1], 1/5/12, 36, 1/7/11; 2/1/7)

karman sharira = karmic body (1/5/13, 1/9/6)

karma-prakritis = species of karma (1/4/1)

karmita = residual karmas from the past (2/5/17, 24, 25)

karotika = earthen pot (2/1/17)

kasa = bronchitis (3/7/5 [3])

kashaya = astringent (2/1/8)

Kashaya-samudghat = Bursting forth of some soul-space-points due to intense anger and other passions (2/2/1)

kashta shayan = lying on wooden plank (1/9/24)Kashyap (2/5/17)

kathanchit = in some context (2/1/7)

katipradesh = composition (2/4/1)

katu = pungent (2/1/8)

Katyayan gotra (2/1/12)

Kautuk-mangal = conciliatory and auspicious rituals (2/5/14, 25)

kavalaahaar = ingesting morsel-food (1/7/15)

kaya samiti = careful action (2/1/37)

kaya yoga = body association (1/9/13, 2/6/1)

kaya-bhava = entry of the soul in its own body or fetus in the mother's womb (2/5/6)

kaya-bhavasth = To take rebirth in the same body (2/5/5, 6)

kayagupti = and restraint of body (2/1/37)

kaya-sthiti = duration of the physical state (2/5/6)

kaya-vachan-yogi = association of body and speech (1/5/36)

kayayogi = with bodily association only (1/5/24, 25, 27, 36)

kesagge veeittha = blowing of tips of hair (3/2/32)

kesarika = a piece of cloth for cleaning pots (2/1/17)

kesh lunchan = pulling out hair (1/9/24)

Keshi Shraman (2/5/15)

Keval-darshan = all enveloping perception (2/1/11, 20, 2/10/9)

Kevali = omniscient

Kevali-samudghat = bursting forth and withdrawal of soul-space-points in order to balance the three excessive residual karmas done by a Kevali (2/2/1)

Keval-jnana = ultimate knowledge or omniscience

khaar = mutual antagonism (3/7/5 [3])

Khadya = general food (2/1/50, 2/5/11, 3/1/25, 3/2/19)

khand = part (2/10/7)

khandit samyamasamyami = restrained-unrestrained with lapses (1/2/19)

khandit samyami = restrained with lapses (1/2/19)

Khar Prithvi (1/1/6 [13-16])

Kharasvar (3/7/5 [4])

khatta = sour (2/1/8)

khel = phlegm coming out of mouth and nose (2/1/37)

khet = kraal (1/1/12, 3/7/5 [3])

Kilvishik = ascetic with impious attitude who slanders right knowledge (1/2/19, 3/1/3)

Kimpurush = a class of divine beings (2/5/11, 3/1/11, 3/8/4, 6)

Kimshuk = a flower (3/2/29)

Kinnar (2/5/11; 3/1/11; 3/8/4, 6)

kirtit = concluded, broken the fast (2/1/41)

Kodakodi = hundred trillion or 10^{14} (2/1/24)

Kolkata (3/1/26)

Kol-pal (3/8/2)

Kootakar Shala = camouflaged house (3/2/18)

Kosa (2/8/1)

krishna = black (1/2/13)

krishna leshya = black hue or complexion of soul (1/9/10, 1/2/12, 1/5/28, 3/4/11, 4/10/1)

krit = acquired (1/3/3, 1/7/22)

Kritangala (2/1/11, 12, 17, 38)

kriya = acquisition of karmas (3/3/2, 9, 10), karmic bondage (3/3/14)

krodh = anger (1/9/1)

krodhopayukta = inclination of anger (1/5/-)

kshamavan = forgiver (2/1/37)

Kshatrogh = a tree (1/1/12)

kshaya = destruction (1/8/11)

kshayopasham = destruction-cum-pacification (1/4/6, 1/8/11, 3/4/4)

ksheen-moha = having destroyed fondness (3/3/14)

kshetra = area (2/1/24, 2/10/2, 4-6), sub-continental areas (1/9/5)

Kshetra Siddha (2/1/24)

Kshetralok (2/1/24)

Kshetrasiddhi (2/1/24)

Kshipragati (3/8/3)

kshubdh = agitated (3/3/11)

kshurapra = razor (2/4/1)

Kuchchhotaks (1/2/19)

kukshishula = stomach-ache (3/7/5 [3])

kula-kshaya = destruction of clan or race (3/7/4 [5], 5 [3])

kula-roag = hereditary diseases (3/7/5 [3])

kulasampanna = came from noble families (2/5/12)

Kumar-graha = affliction by Kumar (3/7/5 [3])

Kumbh (3/7/5 [4])

Kundalini (3/1/26)

kundi = bowl (2/1/17, 34)

Kurudatt (3/1/54)

Kurudattaputra (3/1/16)

Kusumb = a tree (1/1/12)

kutakar-shala = camouflaged house (3/1/23)

Kutrikapanbhoot = market place (2/5/12)

kutuhal = curiosity (1/1/4 [4])

(L)

laaghav = lightness in terms of possessions and passions (1/9/17, 19)

labdhivirya = dormant potency or intent (1/8/10, 11)

laghav-sampanna = having minimum possessions as well as passions (2/5/12)

laghu = light or with upward movement (1/9/4-6, 8, 10, 16)

lajjasampanna = shy of indulging in sinful activities (2/5/12)

lajjavan = disciplined and modest (2/1/37)

lakshan = signs (2/1/21)

Laksh-prithakatva = two hundred thousand to nine hundred thousand (2/5/8)

Lantak Kalp (1/2/19, 1/5/5, 2/7/2, 3/1/19)

Lantakendra (3/6/15)

Lava = seven Stoks (a unit of time) (1/1/6 [2])

Lavansamudra = an ocean or sea(2/10/21, 3/3/17)

leshya = the colour code indicator of complexion or purity of soul, complexion or hue of soul (1/1/9 [1], 1/2/5-7, 12, 13, 1/5/6, 18, 28, 29 31, 36, 1/6/20, 1/9/10, 3/4/11-13, 4/1, 2, 3, 4/1, 4/10/1)

Leshyapad = a chapter in Prajnapana Sutra (4/9/1)

lingantar = diverse dress code (1/3/15)

lobha = greed (1/9/1)

lobhopayukta = inclination of greed (1/5/-)

Lohitaksh = a large planet (3/7/4 [6])

Lok = occupied space or universe

Lokahitakar (logahiye) = the benefactor of all the worlds (1/1/4 [2])

Lokakashastikaya = occupied space entity (2/10/22)

Lokanaath (loganahe) = the master of all the worthy beings of all worlds (1/1/4 [2])

lokant = edge of occupied space (1/6/5, 17-21)

Lokanubhaava (3/3/17)

Lokapradeep (logappadive) = the lamp of wisdom who dispels the darkness of ignorance in all the worlds (1/1/4 [2])

Lokapradyotakara (logapajjoyakare) = the spiritual illuminator of all the worlds (1/1/4 [2])

Lokasthiti (3/3/17)

Lok-dvar = one of the 24 attributes of the sense organs (2/4/1)

Lok-matra = like Lok (2/10/13)

Lokottam (loguttame) = the eminent among all beings in the Lok (1/1/4 [2])

Lok-pal = protector-gods and supporters of people as governors of different directions (3/1/1, 3, 5, 6, 11, 12, 14, 16-18, 3/7/2-7, 3/8/3, 4/1, 2, 3, 4/2-5, 4/5, 6, 7, 8/1)

Lok-praman = as large as Lok (2/10/13)

Lok-sprisht = touched by Lok (2/10/13)

lok-sthiti = structure of universe (1/6/25)

(M)

Maagadh = Magadh born (2/1/13, 15, 20, 23)

Maahendra (3/1/18, 3/6/15)

Maahendra kalp (1/5/5, 2/7/2)

maan = conceit (1/9/1)

maanopayukta = inclination of conceit (1/5/8, 9, 11, 13)

maayamrisha = betray or tell a lie deceptively (1/9/1)

maayi = deceitful (1/2/7), maligned, this includes spiritually torpid and passion-infested (3/4/18, 3/5/15, 3/6/1, 3, 4)

maayi-mithysdrishti upapannak = born with deceit and unrighteousness (1/2/12)

maayopayukta = inclination of deceit (1/5/8, 9, 11, 13, 31)

madamb = borough (1/1/12, 3/7/5 [3])

madhyama = middle (3/10/1)

Maghava (Maghavam) = controller of mighty clouds (3/2/25, 32)

maha = paramount (1/1/4 [3])

Mahabheem (3/8/4, 6)

Mahaghosh (3/1/11, 3/7/5 [4], 3/8/3)

Mahakaal (3/7/5 [4], 3/8/3, 4, 6)

maha-karmi = having excessive and heavy karmas (1/2/13)

Mahakaya (3/8/4, 6)

Mahanandikavart (3/8/3)

Mahapatal Kalash = gigantic pitcher shaped areas (3/3/17)

Maha-pratima (3/2/22, 28)

Mahapurush (3/8/4, 6)

mahapurush-nirvan = death of great men (3/7/5 [3])

maharaktapaat = great bloodshed (3/7/5 [3])

maha-sangram = great battle (3/7/5 [3])

mahashariri = large bodied (1/2/5, 13)

mahashastra-nipaat = use of great weapons (3/7/5 [3])

Mahashukra (3/1/19)

Mahashukra kalp (1/5/5; 2/7/2)

Mahatapasvi = who has reached the lofty level of austerities where he was free of all desires (1/1/4 [4])

Mahatapopatir-prabhav (2/5/27)

Mahattarika Devis = friendly goddesses (3/1/6)

Mahavideh (2/1/54, 3/1/43, 54, 3/2/43)

mahavimaan = great celestial vehicle (3/7/4-7, 4/1, 2, 3, 4/4)

mahavrat = great vow

maha-yuddha = great war (3/7/5 [3])

Mahesh (1/7/9)

Mahorag = a class of divine beings (2/5/11, 3/1/11, 3/8/6)

maithun = indulgence in sexual activities (1/6/11, 1/9/1)

maithun-vrittik samyoga = sexual contact (2/5/8)

Malayagiri Vritti of Prajnapana Sutra (2/4/1)

Malhava (3/2/15)

man = mind, mental faculty having memory and ability to contemplate (1/3/14, 15)

manah samiti = careful thought (2/1/37)

Manahparyav jnana = extrasensory perception and knowledge of thought process and thought-forms of other beings, something akin to telepathy (1/3/15, 2/10/9)

Manah-paryav jnani = one endowed with M-p jnana (3/2/17)

Manah-shila Prithvi (1/1/6 [13-16])

mandal-roag = district epidemic (3/7/5 [3])

Mandar = Meru (2/8/1, 3/7/4 [1], 4/1, 2, 3, 4/4)

Mandit-putra Anagar (3/3/1, 2)

mand-varsha = deficient rain (3/7/6 [3])

mangal = auspicious (2/1/21)

mangal rupa = promised well-being (2/1/46)

Manibhadra (3/7/7 [4], 3/8/4, 6)

Mani-dvar = one of the 24 attributes of the sense organs (2/4/1)

manogupti = restraint of mind (2/1/37)

manojna = attractive (1/5/36)

manoyoga = associations of mind involved in activities of mind (1/5/25, 27, 1/9/13)

manoyogi = having associations of mind (1/5/24)

manushi garbh = pregnancy of humans (2/5/4)

Manushottar (2/9/1)

manushya = human being

manushya ayushya = life span as human beings (1/2/21)

manushya samsar samsthan kaal = period of rebirth and existence as human beings (1/2/14)

manushya-asanjni ayushya = life span as non-sentient human beings (1/2/20, 22)

Maranantik Samudghat = bursting forth of some soul-space-points just before death (2/7/1, 2)

marg = traditional ascetic praxis (1/3/15)

margantar = diverse praxis (1/3/15)

Margapradayak (maggadaye) = who shows the path of liberation (1/1/4 [2])

Margashirsha (2/5/6)

mastak-pida = migraine or cranial neuralgia (3/7/5 [3])

Masur = Lens esculenta, a small grained pulse (2/4/1)

matantar = diverse views (1/3/15)

mati ajnana = false sensory knowledge (1/5/23), ignorance related to sensory knowledge (2/10/9)

Mati-jnana (Abhinibodhik jnana) = sensory knowledge or to know the apparent form of things appearing before the soul by means of five sense organs and the mind (2/10/9; 1/3/15; 1/5/23)

matra = quantity of food required in ascetic discipline (2/1/34)

matri-jiva-rasa-harani = placenta (1/7/15)

Maurya (3/1/24, 26)

Mauryaputra Tamali Gathapati (3/1/25, 29)

Mauryaputra Tamali Tapas (3/1/28)

maya = deceit (1/9/1)

mayapratyaya = activity involved in indulgence in deceit (1/2/5)

maya-pratyaya kriya = activity involved in indulgence in deceit (1/2/9, 10, 13)

meetha = sweet (2/1/8)

Mehil = Medhil (2/5/17)

Meru (3/7/5 [3], 7 [3])

Midnapur (3/1/26)

mihika = dew (3/7/4 [5])

mishra bhasha = mixed speech (2/6/1)

mishra kaal = period of gradual replacement just short of complete replacement (1/2/15-17)

mithyadarshan shalya = the thorn of wrong belief or unrighteousness (1/6/11, 1/9/1, 2)

mithyadarshanapratyaya = activity involved in indulgence in false perception/faith (1/2/5, 7, 9, 10)

mithyadrishti = one having wrong perception/faith, pervert or contradicting perception, unrighteous

mithyatva = unrighteousness (1/3/9, 1/4/5)

mithyatva mohaniya karma = righteousness deluding karma (1/4/5, 6)

Mochak (moyaye) = the liberator (1/1/4 [2])

Moda (3/7/6 [4])

modak = a spherical sweet (2/10/7)

Mohaniya karma = deluding karma (1/3/6, 9, 1/4/2, 3, 5, 1/8/3, 2/6/1)

Moka = a city (3/1/2, 20)

moksha = liberation (2/5/11)

mridu = gentle (1/6/12)

mrisha = speaking a lie or untruth (2/6/1)

mrishavad = falsity (1/6/11, 1/9/1)

mrit = dead, destruction of karmas defining life span (1/1/5 [2])

mritadi = alms eating; one who eats only achitt and faultless food (2/1/8, 9)

Muhurt = 77 Lavas (a unit of time equivalent to forty eight minutes)

Muhurt-prithakatva = anything between two to nine Muhurts (1/1/6 [3], [23], [24])

mukh-vastrika = a handkerchief-like piece of cloth used to cover mouth, also a specially designed mouth-cover (2/5/22)

Mukta (mutte) = the liberated (1/1/4 [2])

mukta = liberated one

Mukund = a drum-like musical instrument of the shape of thunder-bolt (2/8/1)

mula = root (3/4/4)

mundabhaava = tonsured or renouncing mundane relations and passions (1/9/24)

mundit = tonsured (2/1/34)

(N)

Naag Kumar = a class of divine beings (1/1/6 [3], [22], 1/2/6, 1/5/3, 3/1/11, 3/6/15, 3/7/6 [2], 3/8/2, 3)

Naag Kumari (3/7/6 [2])

Naag-kumarendra Dharan (3/1/11; 3/8/2)

naarak = infernal being

naarak jiva = infernal being

nagar = city (1/1/12, 3/7/5 [3])

nagar-roag = city epidemic (3/7/5 [3])

nagnabhaava = remaining unclad or detached from body (1/9/24)

nairayik = infernal being

Nairayik ayushya = life span as infernal beings (1/2/21)

Nairayik samsar samsthan kaal = period of rebirth and existence as infernal beings (1/2/14-16)

Nairayik-asanjni ayushya = life span as non-sentient infernal beings (1/2/20, 22)

nakshatra = constellations (3/1/11, 3/7/4 [1])

Namotthunam = a panegyric (2/1/50)

Nandan (3/1/2, 20)

Nandan Manihar (1/2/19)

Nandikavart (3/8/3)

Nandishvar Dveep = a continent (3/2/9, 10)

narak gati = infernal realm (1/10/3)

Narak-pals = guardians of hell (3/7/5 [2])

narak-vaas = infernal abodes (1/5/2)

nayantar = diverse stand-points (1/3/15)

neel = blue (1/2/13)

neel leshya = blue hue or complexion of soul (1/2/12, 1/5/28, 3/4/11, 4/10/1)

nidan = have a craving to attain the goal (3/1/33)

nidhan = buried treasures (3/7/7 [3])

nidhatt = state of partial intransigence (1/1/6 [1], 1/7/22)

nidhi = treasures (2/9/1)

nigam = trade center (1/1/12)

Nighantu = Vedic lexicon (2/1/12)

nihnava = mendacious seceder (1/2/19)

nihshreyasik = beatitude or salvation (3/1/52)

nihshvas = exhalation (1/1/6 [1])

nikachit = state of intransigence (1/1/6 [1])

nikaya = classes (3/1/11)

nirantar = continuously (2/6/1)

nirgranth = knotless; Jain ascetic

Nirharim = in inhabited surroundings (2/1/28, 29), the ultimate vow taken at some inhabited place like a village or a town requiring the dead body to be taken out of the town for cremation (2/1/31)

nirjara = separating from soul or shedding of karmas (1/1/6 [1], 1/3/6, 13, 2/5/11)

nirjaran = separation or shedding (1/1/6 [1]; 1/3/3)

nirjirn = shedding or destruction of karmas after fruition (1/1/5 [2])

Nirukta Shastra = etymology (2/1/12)

Nirvartan-aadhikaranik-kriya = act of making weapons like sword, lance, spear etc from scratch (3/3/4)

Nischaya naya = noumenal or transcendental viewpoint (1/9/16, 24, 2/10/8)

nishtitarth = desired (2/1/8)

nitya = perpetual (2/1/24, 2/10/2, 5, 6)

niyamantar = diverse rules (1/3/15)

niyat = fixed (2/1/24, 2/10/2)

(O)

odan = cooked rice (3/1/25, 26)

oj = radiance or energy (1/7/17)

ojasvi = radiant with power (2/5/12)

(P)

Paakshasan (Paagasasanam) = conqueror of the mighty adversary named Paak (3/2/25, 32)

paan = liquids (2/1/50, 2/5/11, 3/1/25, 3/2/19)

paap = demerit (2/5/11)

Paaragat = one who has reached across the ocean of rebirths (2/1/9)

paaritapaniki kriya = punitive action of inflicting punishment and pain on others (1/8/4, 7, 3/3/2, 7, 8, 3/3/6)

pachchholeti = to kick or throw leg backward also fall on the ground (3/2/32)

padapopagaman = to die lying still like a severed branch of tree (2/1/27, 28)

padapopagaman maran = to die lying still like a severed branch of tree (2/1/31)

padapopagaman santhara = fast unto death lying still like a severed branch of tree (2/1/48-50, 3/1/29, 30, 3/2/21)

padma = pink (1/2/13)

padma leshya = pink hue our complexion of soul (1/1/9 [1], 1/2/12, 1/5/36, 3/4/13, 4/10/1)

Padmavar vedika = a lotus like plateau (2/8/1), lotus-pedestal (3/2/28)

paduka = wooden sandals (2/1/17)

paishunya = inculpating someone (1/9/1)

Palash = a flower (2/1/48, 3/7/6 [4])

palit = observed (2/1/41)

Palyopam = a metaphoric unit of time

panchendriya = five-sensed (2/10/11)

Panchendriya Tiryanchayonik jivas = five sensed animals (1/2/9)

panduroag = jaundice (3/7/5 [3])

Pankaprabha = fourth hell (1/5/11, 2/3/1)

Pannavanasuttam (2/6/1)

paraarambhi = those who inflict harm to beings through others (1/1/7 [1], 8 [1])

parabhavik = other birth (1/1/10)

Parahast-paaritapaniki-kriya = causing other person to inflict pain on self and others or to cause pain in some others name (3/3/6, 7)

Parahast-praanatipat kriya = causing other person to destroy life of self and others (3/3/7)

parakram = to exert to win over or accomplish (1/3/9)

Param Krishna leshya = pitch black (1/5/28)

paramadhovadhik = ultimate avadhi jnani (1/4/15)

paramanu = ultimate-particle (1/10/1)

paramanu pudgal = ultimate-particles of matter (1/10/1, 2/10/11, 12)

Paramarthik Asurs (3/7/5 [5])

paramparagat = who has gradually crossed the ocean of rebirths (2/1/9)

parapakhand-prashamsha = praise of other dogmas (1/3/6)

paraparivad = slandering (1/9/1)

Parashar = an extinct species of ferocious animal (3/5/12, 14)

parattasamsari = with limited cycles of rebirth (3/1/51)

Parcharana = acts of sexual gratification (2/5/1)

Parigh-ratna = a special mace-like weapon (3/2/28)

parigraha = act of possession of things (1/6/11, 1/9/1)

parigrahiki = act of possession and hoarding (1/2/5, 0)

parijna = have the goal to be the master (3/1/33)

parikshep = circumference (2/8/1)

parinam = outcome or result, transformation (4/10/1)

parinammetaye = transformed (3/4/10)

parinat = transformed (1/3/7), transformation of food into a form absorbable by the body (1/1/6 [1])

parinirvana = (2/1/52, 3/2/10)

parinivrit = free of cyclic rebirth (1/1/11, 1/4/12, 1/9/24)

parishads = assemblies (3/1/6)

Parishadya (3/1/3)

parittasamsari = with limited cycles of rebirth (3/1/52)

Parivrajak = one who renounces everything and takes to peripatetic life (2/1/12)

Parshva Naath (1/9/23, 2/5/12, 14, 24, 25)

parshva-shula = pain in armpit or sides of the body (3/7/5 [3])

Parva = a divine assembly (3/10/1)

paryank asana = a yogic posture (2/1/50, 3/5/11)

paryapti = full development of the life-energy (1/7/6, 3/1/13, 34; 3/2/24)

paryapti bhaava = state of full development (3/1/13, 34, 3/2/24)

paryaya = mode (1/3/7, 1/6/20, 2/10/9)

paryupasana = worship (2/5/26)

pashandasth = ascetic-hermits (3/1/29)

pashchadupapannak = born later (1/2/5, 6)

pashchanupurvi (1/6/11)

Pataliputra (2/5/11)

pathya-kaami = comforts (3/1/52)

patra = leaf (3/4/4)

pattan = harbour (1/1/12, 3/7/5 [3])

Paush (2/5/6)

paushadhopavas = partial ascetic vow and fasting (2/5/11)

pavitri = copper ring (2/1/17)

payaddargam karei = stomps the ground with feet (3/2/32)

peeth-bandh = basement pedestal (3/7/4 [3])

phal = fruit (3/4/4)

phalak shayan = lying on wooden plank (1/9/24)

Pingal (2/1/13-16, 20, 23)

pipasa = obsessed (1/7/19, 20)

Pishach (3/1/11, 3/8/6)

Pishach Kumar (3/8/4)

praadveshiki = hostile action inspired by feelings of anger, aversion and malice (1/8/4, 8, 3/3/2, 7)

praadveshiki kriya = hostile action (3/3/5)

praan = beings (2/1/8, 35, 36), two to four sensed beings, beings (1/10/1)

praanatipatiki = act of harming or destroying life (3/3/2, 7)

praan-bhoot-jiva-sattva = beings-organisms-souls-entities (3/3/12, 14)

praan-kshaya = loss of strength (3/7/4 [5])

Prabh (3/8/3)

Prabhakant (3/8/3)

Prabhanjan (3/1/11, 3/8/3)

prabhasit = scorches (1/6/2)

pradatt = (2/1/46, 3/1/28, 3/2/21)

pradesh = section (2/10/7, 8, 4/10/1), paramanu, soul-spacepoint, spacepoint (1/5/10, 11, 1/6/20, 1/10/1; 2/1/24, 2/10/11, 12)

pradesh karma = karmas fused with soul-space-points (1/4/6)

pragrihit = observed with great devotion (2/1/46, 3/1/28, 3/2/21)

prahan = to separate karmas fused with soul-space-points (1/1/5 [2])

prajna = intelligence enriched by new information (1/3/14, 15)

Prajnapana Sutra (1/1/6 [1], [2], 1/2/13, 18, 1/4/1, 1/10/3, 2/1/4, 2/2/1, 2/4/1, 2/6/1, 2/7/2, 3/1/11, 3/1/11, 3/2/4, 3/4/13, 4/9/1, 4/10/1)

prajnapayanti = elaborate (2/5/1)

prakashit = lights up (1/6/2)

Prakirnak (3/1/3)

prakriti = karma-species (1/1/3)

prakshepahar = intake through mouth in the form of morsel or pouring (1/1/6 [17])

pramad = negligence (2/1/35), stupor (1/3/9, 3/3/10)

Pramanantar = diverse authenticity (1/3/15)

pramatt = in stupor (1/1/9 [1])

pramatt samyam = negligent restraint (3/3/15, 16)

pramattasamyat = accomplished but negligent, in stupor (1/1/7 [2], 1/2/10, 12, 3/3/15)

pramoksh = solution (2/1/14)

Pran = a unit of time (1/1/6 [2])

Pranam = obeisance (3/1/27)

Pranama pravrajya = a kind of initiation (3/1/25-27, 35)

pranaman = expelling of breath (1/1/6 [1])

Pranat (3/1/19, 3/8/6)

Pranat kalp (1/5/5, 2/7/2)

Pranatendra (3/6/15, 3/8/6)

pranatipat = act of killing (1/6/7, 8), harming or destruction of life (1/9/1, 2)

pranatipatiki = activity of killing the chosen living being (1/8/4, 8)

pran-kshaya = loss of life (3/7/5 [3], 6 [3])

prarupayanti = propagate (2/5/1)

prasadavatamsak = great grand palace or the crown of palaces (2/8/1), the rows of mansions (3/7/7 [1])

prashna = questions (2/1/17)

prasravan = a spring (2/5/27)

prasthapit = established (1/7/22)

prasuk = lifeless, not infested with living organism (1/9/27)

Pratham Sapt-ratri-divas Bhikshu Pratima (2/1/42)

prati-chandra = appearance of two moons facing each other, an ominous sign (3/7/4 [5])

pratikraman = critical review or self-appraisal (1/9/23, 2/1/51, 2/5/25, 3/1/13, 16)

pratilekhana = inspected and cleaned (2/1/50, 2/5/22)

Pratiroop (Pratirupa) (3/8/4, 6)

pratishthan = base or location (2/7/2)

pratishthit = installed (1/6/25)

prati-surya = image of another sun seen in front of the sun (3/7/4 [5])

pratiti = trust (2/1/34)

Prativasudev (2/9/1)

pratyakhyan = renunciation (1/9/21, 2/5/26), rules of renouncing (2/5/11), to follow the rules of navakarasi, porasi (vows of renunciation for specific period) (1/9/24)

pravachanantar = diverse sermon (1/3/15)

pravachanik = a learned ascetic or shravak (1/3/15)

pravachanikantar = diverse preceptor (1/3/15)

pravachan-mata = five samitis or self-regulations and three guptis or self-restraints (1/4/12)

pravaha = flowing water or river (3/7/6 [3])

praval = sprout (3/4/4)

pravisht = entered (2/4/1)

pravrajit = initiated (2/1/34)

pravrajya = initiation (3/1/25, 3/2/20)

prayoga = great efficiency (2/5/11)

Pret-dev kayik (3/7/5 [2])

prithvi = hell, infernal world

prithvikaya jivas = earth-bodied beings (1/1/6 [12], 1/2/7, 1/3/14, 15, 1/5/4, 30)

priya = lovable (2/1/50)

pudgala paramanu = ultimate particle of matter (1/4/7-9)

pudgalastikaya = matter entity (1/9/8, 15, 2/10/1, 6, 8, 13)

Pudgals = matter particles (2/6/1)

Pulind (3/2/15)

Pundit-maran = pundit's death or noble death (2/1/25, 27, 31)

pundit-virya = pundit's potency (1/4/5)

pundit-viryata = pundit's potency (1/4/2, 3)

Pundra (3/7/6 [4])

punya = merit (2/5/11)

Puran (3/2/19, 21, 23)

Purana = history (2/1/12)

Purandar = destroyer of forts or cities of Asurs and other adversaries (3/2/25, 32)

purit = completed (2/1/41)

Purna (3/1/11, 3/8/3)

Purnabhadra (3/7/7 [4], 3/8/4, 6)

purnamasi = full-moon day (3/3/17)

Purnaraksh (3/7/7 [4])

purohit = priest (3/2/23), the priest-god (3/1/30, 34)

purushakar = action with self awareness (1/3/9)

purushakar-parakram = self-exertion

purushottam (purisuttame) = supreme among men (1/1/4 [2])

Purush-simha (purisasihe) = a lion among men (1/1/4 [2])

Purush-var-gandhahasti (purisavar-gandhahatthi) = a glorious elephant among men (1/1/4 [2])

Purush-var-pundareek (purisavar-pundariye) = unspoiled among men like a white lotus (1/1/4 [2])

Purva-koti = a metaphoric unit of time (3/3/15, 16)

Purvas = subtle canon (1/1/4 [3])

purva-samyam = past restraints (2/5/17, 24, 25)

purva-tap = past austerities (2/5/17, 24, 25)

Purvopannak = born earlier (1/2/5, 6)

pushp = flower (3/4/4)

Pushpavatik (2/5/11, 24, 25)

Pushpavatik Chaitya (2/5/12, 18)

putra-jiva-rasa-harani = umbilical cord (1/7/15)

(R)

raag = attachment inspired by love, deceit and greed (1/9/1)

Rahu (3/7/4 [6])

Raipaseniya Sutra (3/1/22, 33)

Rajaprashniya Sutra (3/1/22, 3/6/14, 3/7/4 [1], 5 [1])

Rajju = a conceptual unit of linear measure (1/9/16, 2/10/22)

rajodghat = sky turning pale due to dust (3/7/4 [5])

raksh = leopard (3/5/12)

Rakshas (2/5/11, 3/1/11, 3/8/6)

Rakt-ratna (3/1/25)

rasa = taste (2/1/4, 2/10/6, 4/10/1)

rasa rahit = devoid of taste (2/10/2, 5)

rasanendriya = sense organ of tasting, tongue, taste-buds (2/4/1, 3/9/1)

rati-arati = inclination towards indiscipline and against discipline (1/9/1)

Ratnaprabha prithvi = the first hell

Ratnavatamsak (4/1, 2, 3, 4/4)

Raipaseniya Vritti by Malayagiri (3/1/52)

riddhi = opulence (1/2/13, 3/1/3-6, 10-16; 3/6/5, 10)

Riddhi = opulence in terms of celestial vehicles and retinue (1/7/9)

riddhiman = endowed with special powers (3/6/8)

Rigveda (2/1/12)

Rijusutra naya (4/9/1)

Rishabhadeva (1/1/2)

Risht (3/1/3, 3/8/3)

Roha (1/6/12)

romahar = intake through pores (1/1/6 [17])

roop-sampanna = handsome (2/5/12)

Ruchakendra Utpat parvat (3/1/30)

ruchi = interest (2/1/34)

Rudra = Mahadev (3/1/27, 3/7/5 [4])

Rupa (3/8/3)

Rupakant (3/8/3)

Rupamsh (3/8/3)

Ruparabh (3/8/3)

rupi = with form (2/10/6, 11)

(S)

saakaaropayoga = elaborate cognition (1/5/26, 1/9/14)

Saam-veda (2/1/12)

saantar = with a gap (2/6/1)

saarak = reciter (2/1/12)

sachit = things infested with living organisms (2/5/14)

sadhus = ascetics or righteous aspirants on the path of liberation (1/1/1)

sadhu-sadhvi = male and female ascetics (2/9/1)

sagar = sea (1/6/20)

Sagaropam = a metaphoric unit of time

Sahasraksh (Sahassakkham) = having thousand eyes Indra has 500 ministers and their 1000 eyes are employed for his work (3/2/25, 32)

Sahasrar Kalp (1/2/19, 1/5/5, 2/7/2, 3/1/19)

Sahasrarendra (3/6/15)

sakam nirjara = shedding of karmas done voluntarily with the intent of getting liberated (1/1/12)

sakaran virya = active potency (1/8/11)

sallekhana = the ultimate vow (3/1/13, 29, 30, 34, 3/2/21, 23)

samaarambh = acts of tormenting (3/3/12, 14)

samachaturasra samsthan = the anatomical structure of a human being where parallel lines drawn from the extremities of a body sitting cross-legged form a square and where all the parts of body above and below the navel are of standard dimensions The dimensions increase and decrease proportionately (1/1/4 [3])

samadhi = transcendental state (2/1/51)

sam-ahar = similarity of intake (1/2/13)

Samanik = other than wealth and reign they command the same status as Indra in terms of life-span (3/1/3, 16, 17)

Samanik Dev = god of same status

Samanik Sabha = assembly of gods having same status (3/2/25-27, 42)

samata = equanimity (2/1/41)

Samavasaran = divine assembly, religious assembly

Samaya = the ultimate fractional unit of time

samaya = time (2/9/1)

Samaya kshetra = area inhabited by humans (2/1/1), Sphere of Time (2/9/1)

samayik = equanimity (1/9/21, 24, 2/1/39)

Samayik Chaaritra = equanimous conduct (1/3/15)

sam-ayushk = similarity of life span (1/2/13)

samayushk samopapannak = with same life span and simultaneous genesis (1/2/5)

samayushk vishamopapannak = with same life span and staggered genesis (1/2/5)

samgrahit = accumulated (1/6/25)

samgrihit = bonded (1/6/25)

Samhanan = body-constitution (1/5/6, 14, 15, 17, 29, 36)

samhanyete = combine together (1/10/1)

Samika (Samita) = a divine assembly (3/10/1)

samiti = self-regulations (2/1/37, 3/3/14)

Sam-karma = similarity of karma (1/2/13)

Sam-kriya = similarity of activities (1/2/13)

Samlekhana = Sallekhana (2/1/48-51)

Sam-leshya = similarity of soul-complexion (1/2/13)

sammat = assented (2/1/34)

Sammurchhim Tiryanch Panchendriya = five-sensed animals of asexual origin (1/2/17)

samparayiki = activity inspired by association and passions and leading to karmic bondage (1/10/2)

samrambh = resolve to indulge in sinful activity (3/3/12, 14)

samsar = cycles of rebirth (2/1/8, 13, 15, 25, 26, 30, 31)

samsar samsthan kaal = world-specific period of rebirth and existence (1/2/14, 15, 17)

samsari = non-liberated (1/6/15)

samsar-samapannak = worldly living beings or souls (1/1/7 [2], 1/8/10)

samsar-vedaniya karma = karma responsible for cyclic rebirth (2/1/8)

Sam-sharir = similarity of body (1/2/13)

samshaya = doubt (1/1/4 [4], 1/3/6)

samsthan = body structure or shape (1/5/6, 16, 29, 36, 2/3/1, 2/4/1, 2/7/2)

samsthan kaal = period of rebirth and existence (1/2/16)

samstirna = envelope (3/1/3, 4)

Sam-uchchhavas-nihshvas = similarity of inhalation-exhalation (1/2/13)

Samudghaat = bursting forth of soul-space-points (2/1/1, 2/2/1, 3/1/4)

Samudghat-pad = a chapter of Prajnapana Sutra (2/2/1)

samudra = sea (1/9/5)

Sam-upapannak = similarity of genesis (1/2/13)

Samuppanna = to attain perfection, surfacing (1/1/4 [4])

samvah = settlement in a valley (3/7/5 [3])

samvar = blocking the inflow of karmas (1/3/13; 1/4/12, 1/9/21, 2/5/11), to have restraint over five senses and mind (1/9/24)

Sam-varna = similarity of appearance or colour (1/2/13)

Sam-vedana = similarity of suffering of pain (1/2/13)

samveg = yearning for liberation (1/7/20)

Samvrit = an ascetic who practices samvar by blocking the sources of inflow of karmas, who has blocked the inflow of karmas (1/1/11, 1/9/27)

samyagdarshan = right perception/faith (1/2/13)

Samyagdrishti = one having right perception/faith or righteousness and equanimity (1/2/5; 1/2/9, 10, 13, 1/5/20, 23, 3/1/51, 52, 3/6/6, 9, 10)

samyagmithyadrishti = having right-wrong or mixed perception/faith (1/2/5, 9, 10, 1/5/20, 21, 23)

samyak-jnana = right knowledge (3/1/27)

samyaktva = righteousness (1/4/5)

Samyaktvasaptak = septet of righteousness (1/8/3)

samyam = ascetic-discipline, discipline or restraint (1/1/10, 1/4/12, /9/21, 2/5/16, 17, 24-26), complete abstainment (1/4/5), discipline of protecting earth-bodied and other beings (1/9/24)

samyat = disciplined (1/1/7 [2], 1/2/10)

samyatasamyat = disciplined-cum-indisciplined (1/2/9, 10)

samyojan = to join or assemble (3/3/7)

Samyojan-aadhikaranik-kriya = the act of assembling weapon with already made components (3/3/4, 7)

Sanatkumar (3/1/18)

Sanatkumar devlok (3/1/17)

Sanatkumar kalp (1/5/5, 2/7/2, 3/1/17, 3/8/6)

Sanatkumarendra (3/1/50-54, 3/6/15, 3/8/6)

sandhya = horizon taking a crimson hue (3/7/4 [5])

Sandhyaprabh Mahavimaan = a celestial vehicle (3/7/3, 4)

sangita = feeling of attachment or craving (2/5/17, 24, 25)

sanjat (sanjaaya) = mental manifestation, arise (1/1/4 [4])

sanjna = awareness of input through sense organs (1/3/14, 15), sentience (1/6/20, sentience (1/9/11)

sanjni = fully developed, sentient (1/2/13)

sanjnibhoot = having awareness/righteousness (1/2/5, 13)

sanjvalan kashaya = evanescent passions (1/2/13)

sankalp (sankappe) = desire, intention, resolve (2/1/17, 48, 49, 2/8/1, 3/1/25, 29, 3/2/25, 31), inquisitiveness (2/1/24)

Sankhittavipulateyalese = after acquiring the vipul tejoleshya through his austerities, who has tempered and contained it so that it did not harm anyone (1/1/4 [4])

sanklisht = grief or suppression (4/10/1)

sankraman = transformation of the secondary species of karmas from one to another with special effort (1/1/6 [1])

sannichaya = stock of grains (3/7/7 [3])

sannidhi = jaggery etc (3/7/7 [3])

sannivesh = inhabited area, temporary settlement (1/1/12, 3/2/19, 3/6/11, 3/7/4 [5], 5 [3])

sannivesh-vaha = flooding of large populated areas (3/7/6 [3])

santhara = ultimate vow (2/1/31)

sapaksh = four cardinal direction (3/1/37)

sapaksha-sapratidesh = exactly below (3/7/4 [2])

sapratidik = four intermediate directions (3/1/37)

sapratikarma = allow movement and care (2/1/29)

Saptaparna = a tree (1/1/12)

Saptaparnavatamsak = a celestial vehicle (3/7/4 [1])

Sapt-ratri-divas Bhikshu Pratima (2/1/42)

saraga = having attachment (1/2/12)

saragasamyat = disciplined with attachment (1/2/10), 12, 13

sarva = whole (1/7/1, 6)

sarva dravya = all substances (1/9/15)

sarva kaal = all time (1/9/16)

sarva paryaya = all modes (1/9/15)

sarva pradesh = all sections (1/9/15)

sarva samvar = absolute blockage of inflow of karmas (1/8/11)

sarvadarshi (savva dariso) = all-seeing (1/1/4 [2])

Sarvaddha = all time (1/6/21-24, 3/3/15, 16)

Sarvajna (savvannu) = all-knowing (1/1/4 [2])

Sarvakamasamriddha (3/7/7 [4])

sarvakshar-sannipati = all verbal knowledge (1/1/4 [3])

Sarvarthasiddha Vimaan (1/2/19)

Sarvatobhadra = a celestial vehicle (4/1, 2, 3, 4/3)

Sarvayash (3/7/7 [4])

Satavedaniya karmas = pleasure causing karmas (3/3/14)

Satpurush (3/8/4, 6)

sattva = immobile beings, entities (1/10/1, 2/1/8, 35, 36)

satya = truth (2/6/1)

satyaa = speaking truth (2/6/1)

satyaa-mrisha = speaking truth and lie mixed (2/6/1)

Saudharm (3/1/17)

Saudharm Dev-lok = a divine realm

Saudharm Kalp = a divine realm

Saudharmavatamsak Mahavimaan or Vimaan = a celestial vehicle (3/2/25, 28; 3/7/4-7)

savirya = with potency, resolve and valour (1/8/9-11)

Savvakkhar-sannipati = who has knowledge of all permutations and combinations of all the letters of the alphabet (1/1/4 [4])

Savyan (3/7/7 [4])

sayogi = having association (1/2/13, 3/3/14)

Sayogi Kevali (1/2/13)

Sfatikavatamsak (4/1, 2, 3, 4/4)

Shabal (3/7/5 [4])

Shabar (3/2/15)

shaikshapit = student (2/1/34)

Shailesh = Meru mountain (1/8/11)

shaileshi = mountain-like (1/8/11)

shaileshi avastha = mountain-like state (1/8/11)

shaileshi pratipanna = mountain-like state of stillness (2/6/1)

Shaileshipratipanna = who has attained rock-like steady state (1/8/10)

Shail-pal (3/8/2)

shakha = branch (3/4/4)

Shakra = Indra or overlord of gods

Shakrendra = Shakra, the king of gods

Shalibhadra (3/7/7 [4])

Shanaishchar = Saturn (3/7/4 [6])

shanka = doubt (1/3/6, 2/1/14, 16)

shanka yukt = with doubt (1/3/5)

Shankh-pal = the Lok-pal of Dharanendra, the overlord of Naag Kumars (3/7/6 [4], 3/8/2)

sharanaprad (sarandaye) = who gives refuge (1/1/4 [2])

sharira = body

sharira naam karma = body-type determining karma (1/8/11)

Sharkara Prithvi (1/1/6 [13-16])

Sharkaraprabha = second hell (1/5/11; 2/3/1)

shashthakhaman tap = two day fast (2/5/22)

Shashtitantra = Sankhya philosophy (2/1/12)

shashvat = eternal

shastra = weapon (2/10/7)

Shastravapatan = to die due to being hit by a weapon (2/1/26)

Shatak = chapter

Shatkritu = performer of hundred Pratimas (3/2/25, 32)

Shat-prithakatva = two hundred to nine hundred (2/5/7)

sheel-vrats = instructive or complimentary vows of spiritual discipline (2/5/11)

Sheshanaag (1/6/25)

shighra (Sigdha) = rushing (3/1/33)

shikha = edge or surface portion (3/3/17)

Shiksha Shastra = education (2/1/12)

shikshapit = taught (2/1/34)

shikshavrats = instructive or complimentary vows of spiritual discipline (2/5/11)

shirovedana = headache (3/7/5 [3])

Shiva (siva) = the epitome of beatitude (1/1/4 [2])

Shiva = Shankar or some other Vyantar god (3/1/27)

shiva rupa = promised security (2/1/46)

shivika = palanquin (3/4/5, 10)

shodhak = steadfast observer of vows (2/1/37)

shodhit = purified for transgressions (2/1/41)

shonit = blood (1/7/17)

shosha = debilitating fever (3/7/5 [3])

shraddha = faith (2/1/34)

Shraman Nirgranthas = Jain ascetics

Shramanopasak = devotee of ascetics, a layman observing twelve vows including five anuvrats (1/8/3, 2/5/11, 14, 15, 18, 24, 25)

shravak = Jain layman (1/4/5; 2/5/11)

shravak-shravika = Jain layman and woman (2/9/1)

shravan = listening to the sermon or scriptures (2/5/26)

Shravasti (2/1/12, 17, 18, 20, 23)

Shrenik (1/1/4 [1])

shriddha = interest (1/1/4 [4])

shringar = appealing and extremely graceful (2/1/21)

shringataks (singhataks) = triangular open areas or courtyards (2/1/17, 2/5/13, 3/7/7 [3])

shriyukta = promised nobility (2/1/46)

shrotrendriya = sense organ of hearing, ears (2/4/1, 3/9/1)

shrut = propagated (1/4/6)

Shrut = the twelve part corpus of the sermon of the omniscient or the scriptural knowledge (1/1/2)

shrut ajnana = false scriptural knowledge (1/5/23), ignorance of scriptural knowledge (2/10/9)

Shrut dharma = Jainism (1/1/4 [2])

shrut-jnana = scriptural knowledge (2/10/9)

shubh-shabd = pleasant sound (3/9/1)

shubh-yoga = pious associations (1/1/7 [2])

shuddha = purity (4/10/1)

shukla = blood (1/7/17), white (1/2/13)

shukla dhyan = pious meditation (3/3/14)

shukla leshya = white complexion or hue (1/1/9 [1], 1/2/12, 1/5/36, 1/9/10, 3/4/13, 4/10/1)

Shukra = Venus (3/7/4 [6])

Shukrendra (3/6/15)

shunya kaal = period of complete replacement (1/2/15-17)

Shvapaak = keeper of cremation ground (3/1/27)

shvas = asthma (3/7/5 [3])

shvasochchhavas = respiration, breathing (2/1/1, 3/1/13)

Shyam (3/7/5 [4])

Siddha = perfected one

siddha gati (siddha gai) = state of ultimate perfection (1/1/4 [2], 1/10/3, 2/1/50)

Siddhagandika = section that describes the areas where Siddhas (2/7/2)

Siddhas = perfected or liberated souls

Siddhayatan = temple of Siddhas (2/8/1)

Siddhi = abode of Siddhas (2/1/24), state and abode of perfection or liberation (1/6/15, 2/1/13, 24, 2/5/26, 2/10/22)

simha (Siha) = lion-like sudden (3/1/33)

Simhagati (3/8/3)

Simhavikram-gati (3/8/3)

Skand = Kartikeya (3/1/27)

Skandagraha = affliction by Kartikeya (3/7/5 [3])

Skandak (2/1/-)

Skandak Anagar (2/1/-)

Skandak Dev (2/1/-)

skandh = aggregate of matter or ultimate particles, molecule (1/10/1, 1/4/10, 2/10/11, 12); thick branch of a tree (3/4/4)

skandh-desh = part of an aggregate (2/10/11, 12)

skandh-pradesh = smaller part of an aggregate (2/10/11, 12)

smriti = contemplate and arrive at a decision (3/1/33)

sneha = fluids (2/5/8)

Snigdha Prithvi (1/1/6 [13-16])

snigdha-kaya (sineh-kaya) = minute water-bodies, affinity, property of adhesion (1/10/1)

snigdhata = property of adhesion (1/10/1)

Soma (3/7/2, 4-7, 3/8/1, 3, 6, 4/1, 2, 3, 4/2, 4, 5)

Somaa = the capital city of Soma Maharaj (3/7/4 [2], 4/5, 6, 7, 8/1)

Somadev-kayik = family members (3/7/4 [4])

Soma-kayik = Samanik gods (3/7/4 [4])

sparsh = touch (2/1/4, 2/3/1, 2/10/6)

sparsh rahit = devoid of touch (2/10/2, 5)

sparshanendriya = touch ()

sparshendriya = sense organ of touch, skin (2/4/1, 3/9/1)

sprisht = touched (2/4/1, 3/1/3, 4)

sprishtra = touched (1/7/22, 1/8/9)

Stanit Kumar = gods of the tenth abode

Stanit Kumari (3/7/6 [2])

sthan = place (4/10/1)

Sthananga Sutra (1/2/13, 3/1/11, 3/6/8, 3/8/3, 3/10/1)

Sthan-pad = the second chapter of Prajnapana Sutra (2/7/2)

sthavar prani = immobile beings (1/6/25)

Sthavir kalp (1/3/15)

Sthavir / Sthavir Bhagavant = senior ascetic, scholarly ascetic

sthiti = life span, the time duration of bondage of the life span determining karma particles (1/1/6 [1], 1/5/6, 7, 29, 30, 3/1/42, 53)

sthula agni = gross fire (2/9/1)

Sthuna-dvar = one of the 24 attributes of the sense organs (2/4/1)

Stok = Seven Prans (a unit of time) (1/1/6)

Sudharma sabha = the main assembly hall

sukh-kaami = wishes them bliss (3/1/52)

sukh-sparsh parinam = pleasant touch (3/9/1)

sukshma snehakaya = minute water particles or superfine mist (1/6/27)

sulabh-bodhi = capable of enlightenment with ease (3/1/51, 52)

Suman Mahavimaan = a celestial vehicle (4/1, 2, 3, 4/3, 4, 4/5, 6, 7, 8/1)

Sumanobhadra (3/7/7 [4])

Sumsumar-pur (3/2/-)

Suparna Kumar (1/1/6, 1/5/3, 2/5/11; 3/1/11, 3/8/3)

Suprabh (3/8/3)

Suprabhakant (3/8/3)

surabhi-gandh = pleasant smell (3/9/1)

suras parinam = pleasant taste (3/9/1)

Suroop (3/8/6)

surup = pleasant view(3/9/1)

Surupa (3/8/4)

Surya = the sun (3/1/11, 3/7/4, 3/8/5)

Suryabh Dev (3/1/22, 3/7/4 [1])

Surya-parivesh = an elliptical halo around the sun (3/7/4 [5])

Suvalgu = a celestial vehicle (4/1, 2, 3, 4/3)

Suvarn Kumaris (3/7/7 [2])

Suvarn Kumars (3/7/7 [2])

suvrishti = good rain (3/7/6 [3])

svadya = savoury food (2/1/50, 2/5/11, 3/1/25, 3/2/19)

Svahast-paaritapaniki-kriya = inflicting pain on self and others with one's own hands (3/3/6)

Svahast-praanatipat kriya = destroying life of self and others with one's own hands (3/3/7)

svarit = medium (1/1/5 [2])

Svayamjval = a celestial vehicle (3/7/3, 6 [1])

svayam-sambuddh (sahasambuddhe) = the self-enlightened one (1/1/4 [2])

syandamanika = large palanquin (3/4/5, 7, 8, 10, 3/5/1-3)

(T)

Taamluke (3/1/26)

Taapas (Tapas) = A hermit who subsists on naturally fallen fruits and leaves from trees (1/2/19)

taapit = heats (1/6/2)

tadbhava maran = to die after being reborn in the same genus (2/1/26)

tadubhayarambhi = who commits sin himself as well as inspires others to do so (1/1/7 [1], 8 [1], 1/1/9 [1])

taijas = fiery (1/1/6 [1], 1/5/12, 36, 1/7/11; 1/9/12, 2/1/7)

taijas sharira = fiery body (1/5/13, 1/9/6)

Taijas-samudghat = Bursting forth of some soul-space-points during launching fire-power (tejoleshya) (2/2/1)

Tail-dvar = one of the 24 attributes of the sense organs (2/4/1)

Tamah-prabha = sixth hell (1/5/11, 2/3/1)

Tamali (3/1/-, 3/2/19-21)

Tamastamah-prabha = seventh hell (1/5/1, 11, 2/3/1)

Tamastamah-prabha prithvi = seventh hell (3/2/3)

Tamralipti city (3/1/-)

Tankan (3/2/15)

tanmatra = subtle attributes (1/7/17)

tanuvaat = ring of rarefied air (1/6/19, 22, 23, 1/9/5, 16, 2/10/18, 22)

tap = austerities (1/1/10, 2/5/11, 16, 17, 24-26)

Tapas (Taapas) = hermit (3/1/26, 34, 3/2/20)

tapta = simmering (1/1/4 [3])

Taptatapasvi = who has incinerated and disintegrated karmas with the simmering heat of austerities (1/1/4 [4])

tara = stars (3/1/11, 3/7/4 [1])

tark = rationality (1/3/14)

tarupatan = to die due to fall from a tree (2/1/26)

tatha-bhaava = realistically (3/6/2, 5, 7, 10)

tatharupa = conforming to the description in Agams (1/7/20, 1/8/3; 2/1/48, 50)

tatharupa Shraman-mahan = Jain ascetic as described in the scriptures, having virtues as per the garb (2/5/26)

Tattvarth Bhashya (3/8/6)

Tattvarth Sutra Bhashya (3/1/11)

Tejahsimha (3/8/3)

Tejaprabh (3/8/3)

tejas = red (1/2/13, 3/8/3)

tejaskaya = fire-bodied beings (1/1/6 [13-16], 1/2/8, 1/5/32)

tejasvi = radiant with aura (2/5/12)

tejoleshya = fiery or red hue (1/1/9 [1], 1/2/12, 1/5/36, 3/4/12, 13, 4/10/1)

Thiggal-dvar = one of the 24 attributes of the sense organs (2/4/1)

Thi-ikkhayenam = end of life due to conclusion of life-span determining karmas, concluding the life (2/1/54)

thilli = chariot or buggy (3/4/5, 10)

tijara = fever after a gap of three days (3/7/5 [3])

tikt = bitter (2/1/8)

Tilak = a tree (1/1/12)

Tingichchha koot (2/8/1, 3/2/28)

Tirthankar (Titthagare) = the religious ford-maker

tiryak = transverse (3/2/8, 9)

Tiryak lok = transverse world (1/6/27, 2/10/15, 22, 3/1/17)

tiryakyonik garbh = pregnancy of animals (2/5/3)

tiryanch = animal (1/2/19)

tiryanch ayushya = life span as non-sentient animals (1/2/21)

tiryanch panchendriya = five sensed animals (1/1/8, 1/5/34)

Tiryanch samsar samsthan kaal = period of rebirth and existence as animals (1/2/14, 15)

Tiryanch-asanjni ayushya = life span as non-sentient animals (1/2/20, 22)

Tiryanchayonik Panchendriya jivas = five sensed animals (1/1/6 [20])

Tishyak (3/1/13, 54)

Tishyak Dev (3/1/14, 16)

tras pranis = mobile beings (1/6/25)

Tras-naadi = the central spine of the Lok or occupied space where living beings exist (2/1/5)

Trayastrinshak Devs = gods qualified to be priests or ministers (3/1/-)

tridand = trident (2/1/17, 34)

Tridandis (1/2/19)

Trigadi = a wooden instrument (2/1/17)

trik = intersection of three roods (3/7/7 [3])

trindriya = three sensed beings (1/2/8, 2/10/11)

Tudiya = a divine assembly (3/10/1)

Tumba = a divine assembly (3/10/1)

Tungika (2/5/-)

Turyagati (3/8/3)

tvarit (turiya) = fast (3/1/33)

Tvaritgati (3/8/3)

tyagi = renouncer (2/1/37)

Tyaktantahpura griha dvar pravesh = their entry to the inner (ladies) quarters of any house never offended anyone (2/5/11)

(U)

ubhayabhavik = both this and other (1/1/10)

ubhayarambhi = who commits sin himself as well as inspires others to do so (1/1/9 [1])

ucchara-prasravan = stool and urine (2/1/37)

uchchar-prasravan-khel-jalla-singhan-parishthapanika samiti = careful disposal of excreta (2/1/37)

uchchatva = height (2/7/2)

uchchhavas = inhalation (1/1/6 [1])

uchchholeti = kick or throw leg forward (3/2/32)

uchchhrit phaliha = inner door-bolts were always raised (2/5/11)

uchchhudhasarire = who has no fondness for his body (1/1/4 [4])

udaar = (2/1/21, 46, 48, 49, 3/1/28, 29, 3/2/21)

udaatt = ideal (2/1/46), loud (1/1/5 [2])

udadhi = water (1/6/25)

Udadhi Kumar = a class of divine beings (1/5/3, 3/1/11, 3/7/6 [2], 3/8/3)

Udadhi Kumari (3/7/6 [2])

udagra = progressively enhancing (2/1/46, 3/1/29)

udak garbh = pregnancy of water-bodied beings, impregnated water-bodies (2/5/2, 6)

udak-matsya = section of rainbow (3/7/4 [5])

udakodbhed = mountain stream (3/7/6 [3])

udakotpeel = lake (3/7/6 [3])

udayanantar pashchaatkrit = fructified and experienced (1/3/10, 13)

uddeshak = lesson

uddhrit (uddhuya) = billowing speed that causes blowing (3/1/33)

udiran = cause fruition of karmas (1/1/6 [1], 1/3/3)

udirana = fructify, to push the ripe karmas towards premature fruition with special efforts (1/1/5 [2], 1/1/6 [1], 1/3/6, 10)

udiranabhavik = tend to mature (1/3/10, 11, 13)

udirit = intensely inspired (3/3/11)

udirna = matured, fructified (1/2/2, 3, 1/3/10, 12, 1/7/22, 1/8/9)

Udpaan (Dugdhapaan)-dvar = one of the 24 attributes of the sense organs (2/4/1)

udvaha = trickling stream (3/7/6 [3])

udvartamaan = departing (1/7/5)

udvartan = departure (1/7/6)

udvartanakran = the process of enhancement (1/1/6 [1])

udvedh = depth inside the ground (2/8/1)

udvejak = restlessness due to separation from loved ones or theft etc (3/7/5 [3])

udvritta = departed (1/7/5)

udyotit = illuminates (1/6/2)

ugra = extremely severe (1/1/4 [3])

Ugratapasvi = a level of severity of austerities difficult for an ordinary person to reach (1/1/4 [4])

ulkapat = falling of meteors (3/7/4 [5])

upachaya (upachit) = to augment the assimilated food with other matter particles (1/1/6 [1], 1/7/15, 1/9/26, 27), augmentation of karmas, reorganization of karma particles aimed at premature suffering (1/1/6 [1], 1/3/3, 6)

upadhyaya = preceptor or teacher of scriptures (1/1/1)

upanah = shoes (2/1/17)

upapadyamaan = in process of being born (1/7/6)

upapat = instantaneous birth (1/2/19, 1/10/3, 2/7/2, 2/8/1)

Upapat Parvat (3/1/11)

Upapat Sabha = divine hall of birth (2/8/1, 3/1/13, 34, 3/2/23)

uparaag = solar and lunar eclipses (2/9/1)

Uparudra (3/7/5 [4])

upasham = pacification (1/3/13)

upasham shreni = levels of pacification of karmas (3/3/16)

upashant = serene (1/6/12, 1/7/22, 1/8/9)

Upashantamoha = having pacified fondness (3/3/14)

upasthan = upward movement (1/4/2)

upasthan kriya = endeavour of upward movement (1/4/5)

upastirna = enshroud (3/1/3, 4)

upayog = intent or sentience (2/10/5, 9), cognition (1/5/6), inclination (1/6/20)

Urdhvalok = upper world (2/10/16, 22)

Urdhvalok-kandak = unit of time lapse for upward movement or the time taken in traveling upwards to a specific distance (3/2/34)

Usasapad = a chapter in Prajnapana Sutra (1/1/6 [1])

ushna = agitated (3/2/27), heat (4/10/1)

ushnabhoot = enraged (3/2/27)

ushna-yonik = capable of being born in hot conditions (2/5/27)

Utkatuk aasan = squatting posture (1/1/4 [3], 2/1/44)

utkrisht (ukkittha) = ever accelerating (3/1/33)

Utkrisht Muhurt-prithakatva = eight to nine Muhurt (1/1/6 [24])

utpaad = birth (1/7/6)

utpadyamaan = being born (1/7/5)

utpanna (uppanna) = birth, sprouting (1/1/4 [4]), born (1/7/5, 6)

utpat parvat = launching mountain (2/8/1, 3/2/28)

utpatan = take-off (2/8/1)

utpatan kaal = upward movement (3/2/37)

Utsarpini = progressive cycle of time (1/1/6 [24], 3/2/14)

uttam = lofty (2/1/46)

Uttar Nikaya = northern class (3/1/11)

Uttaradhyayan Sutra (3/5/14)

uttarayan and dakshinayan = summer and winter solstice (2/9/1)

uttariya = shawl (2/5/14)

Uttar-kuru = the land of enjoyment (1/1/6 [24]; 1/2/13)

uttar-vaikriya = secondary transmuted (1/5/13, 16, 17, 36)

uttar-vaikriya rupa = secondary transmuted forms (3/1/30)

uttar-vaikriya sharira = secondary transmuted body (1/2/13, 1/5/16, 3/2/32)

utthaan = inclination to rise

(V)

vaarak = amender (2/1/12)

vaat = rings of air (1/6/20)

vachan = speech (1/3/14)

vachan gupti = restraint of speech (2/1/37)

vachan samiti = careful speech (2/1/37)

vachan yoga = speech association (1/9/13, 2/6/1)

vachan-yogi = having associations of speech (1/5/24, 25, 27)

Vaibhar = a hill (2/5/27)

Vaibhargiri = a hill (3/4/14-16)

vaihanas maran = to die by hanging (2/1/26)

vaikriya = transmutable, transmuted (1/5/12, 1/7/11, 1/9/12, 2/1/7, 3/5/14)

vaikriya labdhi = special power of transmutation, endowed with power of transmutation (1/7/19, 3/6/1, 4-6, 9, 10)

vaikriya pudgals = transmutable particles (3/1/9)

Vaikriya Samudghat = self controlled transformation or mutation (1/7/19, 2/2/1, 3/1/3, 4, 9, 30, 3/2/28; 3/4/1-3; 3/5/3, 14)

Vaikriya Shakti = power of transmutation (3/1/9, 11, 12, 3/2/13)

vaikriya sharira = transmutable body; transmuted body (1/5/13, 1/9/6; 2/2/1; 2/6/1)

vainayik = fruits of ascetic-modesty (2/1/34)

Vairochanas (3/1/10, 11)

Vairochanendra Bali (3/1/10, 11, 3/8/1)

Vaishalik Shravak = a person profoundly devoted to the words of Bhagavan Mahavir (2/1/13, 14)

Vaishraman = Kuber, the Lok-pal of north (3/1/27, 3/7/2, 7, 3/8/1, 6, 4/1, 2, 3, 4/2, 5)

Vaishraman-dev-kayik = family members (3/7/7 [2])

Vaishraman-kayik = Samanik gods (3/7/7 [2])

Vaitarani (3/7/5 [4])

Vajra = the weapon of Indra, thunder-bolt (2/6/1, 3/2/29-32, 34, 36, 39, 40, 42)

Vajrapani (Vajjapanim) = wielder of a special weapon called Vajra (thunder-bolt) (3/2/25, 32)

vajra-rishabh-narach samhanan = a specific type of constitution of human body where the joints are perfect and strongest (1/1/4 [3])

Valgu = a celestial vehicle (3/7/3, 7 [1], 4/1, 2, 3, 4/3)

vanakhand = forest strip (2/8/1)

vanaspatikaya = plant-bodied beings (1/1/6 [13-16], 1/2/8, 1/5/32)

Vanavyantar / Vanavyantar Deva = interstitial gods (1/1/6 [22], 8 [21-24], 12, 1/2/11, 19, 1/5/36, 1/8/11, 2/7/1, 2, 3/1/11, 3/2/28, 3/7/7 [2], 3/8/4)

Varanasi (3/6/1-10)

Varashisht = a celestial vehicles (3/7/3, 5 [1])

varchasvi = influential (2/5/12)

vargana = category (4/10/1)

varna = appearance or colour (2/1/4, 2/3/1, 2/10/6, 4/10/1)

varna rahit = devoid of appearance or colour (2/10/2, 5)

varsh = area (1/6/20)

Vartul Vaitadhya (1/6/27)

Varun (3/7/2, 6, 3/8/1, 6, 4/1, 2, 3, 4/2, 5, 4/5, 6, 7, 8/1)

Varundev-kayik = family members (3/7/6 [2])

Varun-kayik = Samanik gods (3/7/6 [2])

Vasa-dvar = one of the 24 attributes of the sense organs (2/4/1)

vashart maran = to die as a slave, of man, conditions or passions (2/1/26)

vastra = apparel (2/10/7)

Vasudev (2/9/1)

vayu = air (1/6/25)

Vayu Kumar = a class of divine beings (1/5/3, 3/1/11, 3/7/4 [4], 3/8/3)

Vayu Kumaris (3/7/4 [4])

Vayubhuti (3/1/7-11)

vayukaya = air-bodied being (1/1/6 [13-16], 1/2/8, 1/5/32, 2/1/6, 3/4/5, 6)

veda = gender (2/1/8, 2/5/1)

vedan = to experience the fruits of fructified karmas (1/1/5 [2], 1/3/3, 13, 1/4/6), experiencing or suffering the consequences (1/1/6 [[illegible]])

vedana = experience or suffer (1/3/6, 12)

Vedana-samudghat = Bursting forth of some soul-space-points due to suffering of pain (2/2/1)

Vedas (2/1/12)

vedika = plateau (2/8/1)

Velamb (3/1/11, 3/8/3)

Venudali (3/1/11, 3/8/3)

Venudev (3/1/11, 3/8/3)

vibhang jnana = false avadhi jnana, perverse knowledge (1/5/23, 36), ignorance related to Avadhi-jnana or pervert Avadhi-jnana (2/10/9)

vibhang jnana labdhi = endowed with power of pervert knowledge (3/6/1, 4, 5)

vibhushan = embellishment (2/8/1)

vichikitsa = incredulity (1/3/5, 6; 2/1/14, 16)

vichikitsa yukt = incredulity (1/3/5)

Vichitra (3/8/3)

Vichitrapaksh (3/8/3)

vidyut = lightening (3/7/4 [5])

Vidyut Kumar = a class of divine beings (1/5/3, 3/1/11, 3/7/4 [4], 3/8/3)

Vidyut Kumaris (3/7/4 [4])

vigraha gati = oblique movement (1/7/8), reincarnative movement (1/7/7, 8)

Vijaya (2/8/1, 4/5, 6, 7, 8/1)

vijna (2/1/8)

vijnana = capacity to discern between acceptable and rejectable (2/5/26)

vijnat = comprehended (1/4/6)

vikalendriyas = two to four sensed beings (1/1/6 [19], 1/5/36, 1/10/3)

Vikalik = a clan of stellar gods (3/7/4 [6])

vikriya = process of transmutation

vimaan = celestial vehicle

vimaan vaas = celestial-vehicular abodes, celestial vehicles (1/2/11, 1/5/5, 3/1/12)

Vimanik / Vimanik Devs = celestial-vehicular, celestial vehicle dwelling gods (1/1/6 [24], 1/2/2; 1/5/36, 2/7/1; 3/1/13)

vimatra = indefinite or indeterminate (1/1/6 [13-16])

vinaya = ascetic-modesty (2/1/34)

vinayasampanna = modest (2/5/12)

Vindhya (3/2/19)

vineet = polite (1/6/12)

vipul = large (2/1/46, 3/1/28, 29, 3/2/21)

vipul tejoleshya = great radiant energy or fire power (1/1/4 [3]; 2/5/21)

Vipula = a mountain (2/1/48, 50, 52)

viradhak = heretic (3/1/52)

Viradhit samyamasamyami = restrained-unrestrained with lapses (1/2/19)

Viradhit samyami = restrained with lapses (1/2/19)

Viraman-vrats = five minor vows (2/5/11)

Virasan = a yogic posture (2/1/44)

virya = inner potency or energy (1/3/9, 10, 1/4/5, 1/8/11, 2/1/48, 2/10/9, 3/1/29), semen (1/7/12)

virya labdhi = endowed with potency (3/6/1, 4-6, 9, 10)

viryaheen = without potency, resolve and valour (1/8/9)

viryata = potency (1/4/2)

virya-vighatak karma = potency impeding karmas (1/8/9)

vish bhakshan = to die by consuming poison (2/1/26)

Vishamayushk samopapannak = with varied life span and simultaneous genesis (1/2/5)

Vishamayushk vishamopapannak = with varied life span and staggered genesis (1/2/5)

vishaya = subject (2/4/1)

Visheshavashyak Bhashya (1/1/5 [2])

vishisht (3/1/11)

Vishisht (Vaashisht) (3/8/3)

vishkambh parikshep = length, width and circumference (2/3/1)

vistar = length (2/4/1)

vitarag = accomplished ascetic (1/8/11, 1/10/2), completely detached individual (1/2/12, 3/3/14)

vitarag atma = detached soul (3/6/8)

vitaragasamyat = disciplined and detached (1/2/10, 12, 13)

viubbhavemane = glowing or brightening (3/2/32)

viuvvittaye = transmuted (3/4/10)

vivek = discerning capacity or sagacity (1/9/21, 24)

viyaddhamane = waving around (3/2/32)

vrik = wolf (3/5/12)

vyaghat = obstruction (1/1/6 [13-16])

Vyakaran Shastra = grammar (2/1/12)

vyakhya = elaborations (2/1/17)

vyanjan = marks (2/1/21)

Vyantar Dev = interstitial gods (3/1/3, 11)

vyasan-bhoot = bad habits (3/7/5 [3]), emergencies like famine (3/7/4 [5])

vyatikirna = merge (3/1/3, 4, 3/5/3)

vyavadaan = purification of soul by extensive shedding of karmas (2/5/16, 17, 24, 26)

vyavahar naya = empirical or phenomenal or conventional standpoint (1/8/8, 1/9/16, 2/10/8)

Vyavart (3/8/3)

vyavasaya = recitation (2/8/1)

Vyavasaya-sabha = hall of recitation (2/8/1)

vyavrittabhoji = eating food everyday (2/1/21, 22)

vyavrittachhadma (viattachhaume) = free of masks of ignorance and ambiguities (1/1/4 [2])

Vyutkrantipad = name of a chapter in Prajnapana Sutra (1/10/3)

vyutsarg = dissociation from the body (1/9/21), to stop activities of the body and rid oneself from fondness for the body (1/9/24)

(Y)

yaan = celestial vehicle (3/4/1, 2, 3)

yajnopaveet = sacred thread (3/5/8)

Yajurveda (2/1/12)

Yaksh (2/5/11, 3/1/11, 3/8/6)

yakshadeept = demonic shapes seen due to lightening (3/7/4 [5])

Yakshagraha = affliction by Yaksh (3/7/5 [3])

Yama (3/7/2, 5, 3/8/1, 6, 4/1, 2, 3, 4/2, 5)

Yamadev-kayik = family members (3/7/5 [2])

Yama-kayik = Samanik gods (3/7/5 [2])

yash = fame (3/1/3, 3/6/5, 10), fame in terms of power to acquire many forms (1/7/9)

yashasvi = famous (2/5/12)

yatha-bhaava = (3/6/10)

yathakalp = according to the code of praxis (2/1/41)

yathakarma = based on the nature of acquired karmas (1/4/6)

yathamarg = according to the prescribed procedure (2/1/41)

yathanikaran = based on their parameters of time, place etc (1/4/6)

yathasutra = according to the scriptures (2/1/41)

yathatattva = perfectly following fundamentals (2/1/41)

yatra = practice of ascetic-discipline (2/1/34)

yavat = distance (1/1/3)

yoga = association (1/3/9, 1/6/20, 1/10/2), action (1/5/6), association of mind, speech and body (3/3/10)

Yojan = a linear measure equivalent to eight miles

yoniboot = womb-planted (2/5/6)

yoni-shula = vaginal pain (3/7/5 [3])

yugantar = yoke (2/5/23)

yugya = a cart drawn by some one (3/4/5, 10)

yupak = intermingling of the glow of dusk with that of moon (3/7/4 [5])

आगमों का अनध्यायकाल

(स्व. आचार्यप्रवर श्री आत्माराम जी महाराज द्वारा सम्पादित नन्दी सूत्र से उद्धृत)

स्वाध्याय के लिए आगमो मे जो समय बताया गया है, उसी समय शास्त्रो का स्वाध्याय करना चाहिए। अनध्यायकाल मे स्वाध्याय वर्जित है।

मनुस्मृति आदि स्मृतियो मे भी अनध्यायकाल का विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है। वैदिक लोग भी वेद के अनध्यायो का उल्लेख करते है। इसी प्रकार अन्य आर्ष ग्रन्थो का भी अनध्याय माना जाता है। जैनागम भी सर्वज्ञोक्त, देवाधिष्ठित तथा स्वर-विद्या सयुक्त होने के कारण, इनका भी शास्त्रो मे अनध्यायकाल वर्णित किया गया है।

स्थानाग सूत्र के अनुसार, दस आकाश से सम्बन्धित, दस औदारिक शरीर से सम्बन्धित, चार महाप्रतिपदा, चार महाप्रतिपदा की पूर्णिमा और चार सन्ध्या। इस प्रकार बत्तीस अनध्यायकाल माने गए है, जिनका सक्षेप में निम्न प्रकार से वर्णन है-

आकाश सम्बन्धी दस अनध्याय

१. **उल्कापात-तारापतन**-यदि महत् तारापतन हुआ है तो एक प्रहर पर्यन्त शास्त्र-स्वाध्याय नही करना चाहिए।

२. **दिग्दाह**-जब तक दिशा रक्तवर्ण की हो अर्थात् ऐसा मालूम पडे कि दिशा मे आग-सी लगी है, तब भी स्वाध्याय नही करना चाहिए।

३. **गर्जित**-बादलो के गर्जन पर एक प्रहर पर्यन्त स्वाध्याय न करे।

४. **विद्युत्**-बिजली चमकने पर एक प्रहर पर्यन्त स्वाध्याय न करे।

किन्तु गर्जन और विद्युत् का अस्वाध्याय चातुर्मास मे नही मानना चाहिए। क्योकि वह गर्जन और विद्युत् प्राय ऋतु-स्वभाव से ही होता है। अत आर्द्रा से स्वाति नक्षत्र पर्यन्त अनध्याय नहीं माना जाता।

५. **निर्घात**-बिना बादल के आकाश मे व्यन्तरादिकृत घोर गर्जना होने पर दो प्रहर तक अस्वाध्यायकाल है।

६. **यूपक**-शुक्ल पक्ष मे प्रतिपदा, द्वितीया, तृतीया को सन्ध्या की प्रभा और चन्द्रप्रभा के मिलने को यूपक कहा जाता है। इन दिनो प्रहर रात्रि पर्यन्त स्वाध्याय नही करना चाहिए।

७. **यक्षादीप्त**-कभी किसी दिशा मे बिजली चमकने जैसा, थोडे-थोडे समय पीछे जो प्रकाश होता है वह यक्षादीप्त कहलाता है। अत आकाश मे जब तक यक्षाकार दीखता रहे तब तक स्वाध्याय नही करना चाहिए।

८. **धूमिका-कृष्ण**-कार्तिक से लेकर माघ मास तक का समय मेघो का गर्भमास होता है। इसमे धूम्र वर्ण की सूक्ष्म जलरूप धुध पडती है। वह धूमिका-कृष्ण कहलाती है। जब तक वह धुध पडती रहे, तब तक स्वाध्याय नहीं करना चाहिए।

९. **मिहिकाश्वेत**-शीतकाल मे श्वेत वर्ण की सूक्ष्म जलरूप धुध मिहिका कहलाती है। जब तक यह गिरती रहे, तब तक अस्वाध्यायकाल है।

१०. रज–उद्‌घात–वायु के कारण आकाश मे चारो ओर धूल छा जाती है। जब तक यह धूल फैली रहती है, स्वाध्याय नही करना चाहिए।

औदारिक शरीर सम्बन्धी दस अनध्याय

११–१३. **हड्डी, माँस और रुधिर**–पचेन्द्रिय, तिर्यंच की हड्डी, माँस और रुधिर यदि सामने दिखाई दें, तो जब तक वहाँ से यह वस्तुएँ उठाई न जाएँ, तब तक अस्वाध्याय है। वृत्तिकार आसपास के ६० हाथ तक इन वस्तुओ के होने पर अस्वाध्याय मानते है।

इसी प्रकार मनुष्य सम्बन्धी अस्थि, माँस और रुधिर का भी अनध्याय माना जाता है। विशेषता इतनी है कि इनका अस्वाध्याय सौ हाथ तक तथा एक दिन–रात का होता है। स्त्री के मासिक धर्म का अस्वाध्याय तीन दिन तक तथा बालक एव बालिका के जन्म का अस्वाध्याय क्रमश. सात एव आठ दिन पर्यन्त का माना जाता है।

१४. अशुचि–मल–मूत्र सामने दिखाई देने तक अस्वाध्याय है।

१५. श्मशान–श्मशान भूमि के चारो ओर सौ–सौ हाथ पर्यन्त अस्वाध्याय माना जाता है।

१६. **चन्द्रग्रहण**–चन्द्रग्रहण होने पर जघन्य आठ, मध्यम बारह और उत्कृष्ट सोलह प्रहर पर्यन्त स्वाध्याय नही करना चाहिए।

१७. **सूर्यग्रहण**–सूर्यग्रहण होने पर भी क्रमश आठ, बारह और सोलह प्रहर पर्यन्त अस्वाध्यायकाल माना गया है।

१८. **पतन**–किसी बडे मान्य राजा अथवा राष्ट्र–पुरुष का निधन होने पर जब तक उसका दाह–सस्कार न हो, तब तक स्वाध्याय नही करना चाहिए अथवा जब तक दूसरा अधिकारी सत्तारूढ न हो, तब तक शनै – शनै स्वाध्याय करना चाहिए।

१९. **राजव्युद्‌ग्रह**–समीपस्थ राजाओ मे परस्पर युद्ध होने पर जब तक शान्ति न हो जाए, तब तक और उसके पश्चात् भी एक दिन–रात्रि स्वाध्याय नही करे।

२०. **औदारिक शरीर**–उपाश्रय के भीतर पचेन्द्रिय जीव का वध हो जाने पर जब तक कलेवर पडा रहे, तब तक तथा १०० हाथ तक यदि निर्जीव कलेवर पडा हो तो स्वाध्याय नही करना चाहिए।

२१–२८. **चार महोत्सव और चार महाप्रतिपदा**–आषाढ–पूर्णिमा, आश्विन–पूर्णिमा, कार्तिक–पूर्णिमा और चैत्र–पूर्णिमा ये चार महोत्सव है। इन पूर्णिमाओ के पश्चात् आने वाली प्रतिपदा को महाप्रतिपदा कहते है। इनमे स्वाध्याय करने का निषेध है।

२९–३२. **प्रातः, सायं, मध्याह्न और अर्ध–रात्रि**–प्रात सूर्य उगने से एक घडी पहले तथा एक घडी पीछे, सूर्यास्त होने से एक घडी पहले तथा एक घडी पीछे, मध्याह्न अर्थात् दोपहर में एक घडी पहले और एक घडी पीछे एव अर्ध–रात्रि मे भी एक घडी पहले तथा एक घडी पीछे स्वाध्याय नही करना चाहिए।

इस प्रकार अस्वाध्यायकाल टालकर दिन–रात्रि मे चार काल का स्वाध्याय करना चाहिए।

Appendix-2

INAPPROPRIATE TIME FOR STUDY OF AGAMS

(Quoted from Nandi Sutra edited by Late Acharya Pravar Shri Atmaram ji M.)

Scriptures should be studied only at the appropriate time as prescribed in the *Agams* Study of scriptures at a 'time inappropriate for studies' (*anadhyaya kaal*) is prohibited

Detailed description of *anadhyaya kaal* (time inappropriate for studies) is also included in *Smritis* (the corpus of *Sanatan Dharmashastra*) like *Manusmriti* Vedic people also mention about the *anadhyaya kaal* (time inappropriate for studies) of the *Vedas* This rule is applicable to other Aryan holy books As Jain *Agams* are sermons of the Omniscient, ensconced by the *devas*, and phonetically composed, discussion about the *anadhyaya kaal* (time inappropriate for studies) is also included in the scriptures For example ·

According to *Sthananga Sutra* there are thirty two slots of time defined as *anadhyaya kaal* (time inappropriate for studies)—ten related to sky, ten related to the gross physical body (*audarik sharira*), four relating to *mahapratipada* (the date following a specific full moon night), four relating to the date of the said full moon night, and four relating to *sandhya* (the four junctions of parts of the day, viz morning, noon, evening and midnight) They are briefly described as follows

RELATING TO SKY

1. Ulkapat or Tarapatan—If a falling star or a comet is visible in the sky, scriptures should not be studied for three hours following the incident.

2. Digdaha—As long as the sky looks crimson in any direction, as if there was a fire, then study of scriptures should not be done

3. Garjit—For three hours following thunder of clouds such studies are prohibited

4. Vidyut—For three hours following lightening such studies are prohibited

However, the prohibition related to thunder and lightening is not applicable during the four months of monsoon This is because frequent thunder and lightening is an essential attribute of that season. Thus this prohibition is relaxed starting from *Ardra* till *Svati Nakshatra* (lunar mansion or 27/28 divisions of the ecliptic on the path of the moon).

5. Nirghat—For six hours following thunder without clouds (demonic or otherwise) such studies are prohibited

6. Yupak—The conjunction of solar and lunar glows at twilight hour on first, second and third days of the bright half of a month (*Shukla Paksha*) is called *Yupak* During these dates such studies are prohibited during the first quarter of the night

7. Yakshadeepti—Some times there is a lightening like intermittent glow visible in the sky This is called *Yakshadeepti* As long as such glow is visible in the sky such studies are prohibited

8. Dhoomika-krishna—The months from *Kartik* to *Maagh* are months of cloud formation During this period smoky fog of suspended water particles is a frequent phenomenon This is called *Dhoomika-krishna* As long as this fog exists such studies are prohibited

9. Mihikashvet—The white mist during winter season is called *Mihikashvet* As long as this exists such studies are prohibited

10. Raj-udghat—High speed wind causes dust storm This is called *Raj-udghat*. As long as the sky is filled with dust such studies are prohibited

RELATING TO GROSS PHYSICAL BODY

11-13. Bone, flesh and blood—As long as bone, flesh and blood of five sensed animals are visible and not removed from sight such studies are prohibited According to the commentator (*Vritti*) if such things are lying up to a distance of 60 yards the prohibition is effective

This rule is applicable to human bones, flesh and blood with the amendment that the distance is 100 cubits and the effective period is one day and night The period prohibited for studies is three days in case of a women in menstruation, seven days in case of male-child birth and eight days in case of a female-child birth

14. Ashuchi—As long as excreta is visible and not removed from sight such studies are prohibited

15. Smashan—Up to a distance of hundred yards in any direction from a cremation ground such studies are prohibited

16. Chandra grahan—At the time of lunar eclipse such studies are prohibited for eight, twelve or sixteen hours

17. Surya grahan—At the time of solar eclipse such studies are prohibited for eight, twelve or sixteen hours

18. Patan—On the death of a king or some other nationally eminent person such studies are prohibited as long as he is not cremated Even after that, the period of study is kept limited as long as his successor does not take over.

19. Raaj-vyudgraha—During a war between neighbouring states such studies are prohibited as long as peace does not prevail Studies should be resumed only 24 hours after peace is established

20. Audarik Sharira—In case a five sensed animal dies or is killed in an *upashraya* (place of stay for ascetics) such studies are prohibited as long as the dead body is not removed This prohibition also applies if a dead body is lying within 100 yards of the place of stay

21-28. Four Mahotsavas and four Mahapratipada—*Ashadh, Ashvin, Kartik* and *Chaitra purnimas* (the full moon days of these four months) are called great festival days The days after these festival days are called *Mahapratipada* On all these days such studies are prohibited

29-32. Sandhya—During the twenty four minutes preceding and following the four junctions of parts of the day, viz morning, noon, evening and midnight such studies are prohibited

Studies of scriptures or other holy books should be done avoiding all these *anadhyaya kaal* (time inappropriate for studies)

विश्व में पहली बार जैन साहित्य के इतिहास में एक नये ज्ञान युग का शुभारम्भ

(जैन आगम, हिन्दी एव अग्रेजी भावार्थ और विवेचन के साथ। शास्त्र के भावों को उद्‌घाटित करने वाले बहुरगे चित्रो सहित)

१. **सचित्र उत्तराध्ययन सूत्र** **मूल्य ५००/–**

भगवान महावीर की अन्तिम वाणी। आदर्श जीवन विज्ञान तथा तत्त्वज्ञान से युक्त मोक्षमार्ग के सम्पूर्ण अगो का सारपूर्ण वर्णन। एक ही सूत्र मे सम्पूर्ण जैन आचार, दर्शन और सिद्धान्तो का समग्र सद्‌बोध।

२ **सचित्र दशवैकालिक सूत्र** **मूल्य ५००/–**

जैन श्रमण की अहिंसा व यतनायुक्त आचार सहिता। जीवन मे पद-पद पर काम आने वाले विवेकयुक्त, सयत व्यवहार, भोजन, भाषा, विनय आदि की मार्गदर्शक सूचनाएँ। आचार विधि को रगीन चित्रो के माध्यम से आकर्षक और सुबोध बनाया गया है।

३. **सचित्र नन्दी सूत्र** **मूल्य ५००/–**

मतिज्ञान-श्रुतज्ञान आदि पाँचो ज्ञानो का उदाहरणो सहित विस्तृत वर्णन।

४. **सचित्र अनुयोगद्वार सूत्र (भाग १, २)** **मूल्य १,०००/–**

यह शास्त्र जैनदर्शन और तत्वज्ञान को समझने की कुजी है। नय, निक्षेप, प्रमाण, जैसे दार्शनिक विषयो के साथ ही गणित, ज्योतिष, सगीतशास्त्र, काव्यशास्त्र, प्राचीन लिपि, नाप-तौल आदि सैकडो विषयो का वर्णन है। यह सूत्र गम्भीर भी है और बडा भी है। अत दो भागो मे प्रकाशित किया है।

५. **सचित्र आचारांग सूत्र (भाग १, २)** **मूल्य १,०००/–**

यह ग्यारह अगो मे प्रथम अग है। भगवान महावीर द्वारा प्रतिपादित अहिंसा, सम्यक्त्व, सयम, तितिक्षा आदि आधारभूत तत्त्वो का बहुत ही सुन्दर वर्णन है। भगवान महावीर का जीवन-चरित्र, उनकी छद्मस्थ चर्या का आँखो देखा वर्णन तथा जैन श्रमण का आचार-विचार दूसरे भाग मे है। दोनो भाग विविध ऐतिहासिक व सास्कृतिक चित्रो से युक्त।

६. **सचित्र स्थानांग सूत्र (भाग १, २)** **१,२००/–**

यह चौथा अग सूत्र है। अपनी खास सख्या प्रधान शैली मे सकलित यह शास्त्र ज्ञान, विज्ञान, ज्योतिष, भूगोल, गणित, इतिहास, नीति, आचार, मनोविज्ञान, पुरुष-परीक्षा आदि सैकडो प्रकार के विषयो का ज्ञान देने वाला बहुत ही विशालकाय शास्त्र है। भावार्थ और विवेचन के कारण प्रत्येक पाठक के लिए समझने मे सरल और ज्ञानवर्धक है।

७. **सचित्र ज्ञाताधर्मकथा सूत्र (भाग १, २)** **मूल्य १,०००/–**

भगवान महावीर द्वारा प्रवचनो मे प्रयुक्त धर्मकथाएँ, उद्‌बोधक, रूपक, दृष्टान्त आदि जिनके माध्यम से तत्त्वज्ञान सहज ही ग्राह्य हो गया है। विविध रोचक रगीन चित्रो से युक्त। दो भागो मे सम्पूर्ण आगम।

८. सचित्र उपासकदशा एवं अनुत्तरौपपातिकदशा सूत्र मूल्य ५००/–

सप्तम अंग उपासकदशा में भगवान महावीर के प्रमुख १० श्रावको का जीवन-चरित्र तथा उनके श्रावक धर्म का रोचक वर्णन है। नवम अग अनुत्तरौपपातिकदशा मे उत्कृष्ट तप साधना करने वाले ३३ श्रमणों की तप ध्यान-साधना का रोमाचक वर्णन है। भावो को स्पष्ट करने वाले कलात्मक रगीन चित्रो सहित।

९. सचित्र निरयावलिका एवं विपाक सूत्र मूल्य ६००/–

निरयावलिका मे पाँच उपांग है। भगवान महावीर के परम भक्त राजा कूणिक के जन्म आदि का वर्णन तथा वैशाली गणतत्राध्यक्ष चेटक के साथ हुए महाशिलाकटक युद्ध का रोमाचक सचित्र चित्रण तथा भगवान अरिष्टनेमि एव भगवान पार्श्वनाथ के शासन मे दीक्षित अनेक श्रमण-श्रमणियों का चरित्र इनमें है।

विपाक सूत्र में अशुभ कर्मों के अत्यन्त कटु फल का वर्णन है, जिसे सुनते ही हृदय द्रवित हो जाता है, तथा सुखविपाक मे दान, तप आदि शुभ कर्मों के महान् सुखदायी पुण्य फलो का मुँह बोलता वर्णन है। भावपूर्ण रोचक कलापूर्ण चित्रो के साथ।

१०. सचित्र अन्तकृद्दशा सूत्र मूल्य ५००/–

आठवे अग अन्तकृद्दशा सूत्र मे मोक्षगामी ९० महान् आत्म-साधक श्रमण-श्रमणियो के तपोमय साधना जीवन का प्रेरक वर्णन है। यह सूत्र पर्युषण मे विशेष रूप मे पठनीय है। विविध चित्र व तपो के चित्रो से समझने मे सरल सुबोध है।

११. सचित्र औपपातिक सूत्र मूल्य ६००/–

यह प्रथम उपाग है। इसमे राजा कूणिक का भगवान महावीर की वन्दनार्थ प्रस्थान, दर्शन-यात्रा तथा भगवान की धर्मदेशना, धर्म प्ररूपणा आदि विषयो का बहुत ही विस्तृत लालित्ययुक्त वर्णन है। इसी मे अम्बड परिव्राजक आदि अनेक परिव्राजको की तप साधना का वर्णन भी है।

१२. सचित्र रायपसेणिय सूत्र मूल्य ५००/–

यह द्वितीय उपाग है। धर्मद्वेषी प्रदेशी राजा को धर्मबोध देकर परम धार्मिक बनाने वाले महान् ज्ञानी आचार्य केशीकुमार श्रमण के साथ आत्मा, परलोक, पुनर्जन्म आदि विषयो पर हुई तर्कयुक्त अध्यात्म-चर्चा प्रत्येक जिज्ञासु के लिए पठनीय ज्ञानवर्द्धक है। आत्मा और शरीर की भिन्नता समझाने वाले उदाहरणो के चित्र भी बोधप्रद है।

१३. सचित्र कल्प सूत्र मूल्य ५००/–

कल्प सूत्र का पठन, पर्युषण मे विशेष रूप मे होता है। इसमे २४ तीर्थंकरो का जीवन-चरित्र है। साथ ही भगवान महावीर का विस्तृत जीवन-चरित्र, श्रमण समाचारी तथा स्थविरावली का वर्णन है। २४ तीर्थंकरो के जीवन से सम्बन्धित सुरम्य चित्रो के कारण सभी के लिए आकर्षक उपयोगी है।

१४. सचित्र छेद सूत्र (दशा–कल्प–व्यवहार) मूल्य ६००/–

आचार-शुद्धि के लिए जिन आगमो मे विशेष विधान है, उन्हे 'छेद सूत्र' कहा गया है। छेद सूत्रो में आचार-शुद्धि के सूक्ष्म से सूक्ष्म नियमों का वर्णन है। चार छेद सूत्रों मे दशाश्रुतस्कन्ध, बृहत्कल्प तथा

व्यवहार–ये तीन छेद सूत्र सभी श्रमण–श्रमणियो के लिए विशेष पठनीय हैं। प्रस्तुत भाग में तीनों छेद सूत्रों का भाष्य आदि के आधार पर विवेचन है। अंग्रेजी अनुवाद के साथ १५ रंगीन चित्रो सहित प्रकाशित है।

१५. सचित्र भगवती सूत्र (भाग १) **मूल्य ६००/–**

पचम अग व्याख्याप्रज्ञप्ति सूत्र 'भगवती' के नाम से अधिक प्रसिद्ध है। इसमे जीव, द्रव्य, पुद्गल, परमाणु, लोक आदि चारो अनुयोगो से सम्बन्धित हजारो प्रश्नोत्तर है। यह विशाल आगम जैन तत्त्व विद्या का महासागर है। सक्षिप्त और सुबोध अनुवाद व विवेचन के साथ यह आगम लगभग ६ भाग मे पूर्ण होने की सम्भावना है। प्रथम भाग मे केवल १ से ४ शतक तक तथा १५ रगीन चित्रो सहित प्रकाशित है। सम्भवत इस सूत्र का प्रथम बार अग्रेजी मे विस्तृत अनुवाद किया जा रहा है।

- ❑ इस प्रकार १९ जिल्दो मे २२ आगम तथा कल्प सूत्र प्रकाशित हो चुके है। प्राकृत अथवा हिन्दी का साधारण ज्ञान रखने वाले व्यक्ति भी अग्रेजी माध्यम से जैनशास्त्रो का भाव, उस समय की आचार-विचार प्रणाली आदि को अच्छी प्रकार से समझ सकते है। अग्रेजी शब्द कोष भी दिया गया है।
- ❑ पुस्तकालयो, ज्ञान-भण्डारो तथा सत-सतियो, स्वाध्यायियो के लिए विशेष रूप से सग्रह करने योग्य आगमो का यह प्रकाशन कुछ समय पश्चात् दुर्लभ हो सकता है।
- ❑ इस आगममाला के प्रकाशन मे परम श्रद्धेय उत्तर भारतीय प्रवर्त्तक गुरुदेव भण्डारी श्री पद्मचन्द्र जी म की अत्यन्त बलवती प्रेरणा रही है। उनके शिष्यरत्न जैन शासन दिवाकर आगमज्ञाता उत्तर भारतीय प्रवर्त्तक श्री अमर मुनि जी म द्वारा सम्पादित है, इनके सह-सम्पादक है प्रसिद्ध विद्वान् श्रीचन्द सुराना। अग्रेजी अनुवादकर्त्ता है श्री सुरेन्द्र बोथरा तथा सुश्रावक श्री राजकुमार जी जैन।

IN THE HISTORY OF JAIN LITERATURE BEGINNING OF A NEW ERA OF KNOWLEDGE FOR THE FIRST TIME IN THE WORLD

(Jain Agams published with free flowing translation in Hind and English. Also included are multicoloured illustrations vividly exemplifying various themes contained in scriptures)

1. **Illustrated Uttaradhyayan Sutra** **Price Rs. 500/-**

   The last sermon of Bhagavan Mahavir Essence of the ideal way of life and path of liberation based on philosophical knowledge contained in all Angas The pious discourse encapsulating complete Jain conduct, philosophy and principles

2. **Illustrated Dashavaikalik Sutra** **Price Rs. 500/-**

   The simple rule book of ahimsa and caution based Shraman conduct rendered vividly with the help of multicoloured illustrations. Useful at every step in life, even of common man, as a guide book of good behaviour, balanced conduct and norms of etiquette, food and speech

3. **Illustrated Nandi Sutra** **Price Rs. 500/-**

   All enveloping discussion of the five facets of knowledge including Mati-jnana and Shrut-jnana

4. **Illustrated Anuyogadvar Sutra (Parts 1 and 2)** **Price Rs. 1,000/-**

   This scripture is the key to understanding Jain philosophy and metaphysics Besides philosophical topics like Naya, Nikshep and Praman it contains discussion about hundreds of other subjects including mathematics, astrology, music, poetics, ancient scripts and weights and measures The complexity and volume of this could be covered only in two volumes

5. **Illustrated Acharanga Sutra (Parts 1 and 2)** **Price Rs. 1,000/-**

   This is the first among the eleven Angas It contains lucid description of ahimsa, samyaktva, samyam, titiksha and other fundamentals propagated by Bhagavan Mahavir. Eye-witness-like description of the life of Bhagavan Mahavir and his pre-omniscience praxis as well as details about ascetic conduct and praxis form the second part Both parts contain multi-coloured illustrations on a variety of historical and cultural themes.

6. **Illustrated Sthananga Sutra (Parts 1 and 2)** **Price Rs. 1,200/-**

This is the fourth Anga Sutra Compiled in its unique numerical placement style, this scripture is a voluminous work containing information about scriptural knowledge, science, astrology, geography, mathematics, history, ethics, conduct, psychology, judging man and hundreds of other topics The free flowing translation and elaboration make the contents easy to understand and edifying even for common readers

7. **Illustrated Jnata Dharma Katha Sutra (Parts 1 and 2)** **Price Rs. 1,000/-**

Famous inspiring and enlightening religious tales, allegories and incidents told by Bhagavan Mahavir presented with attractive colourful illustrations This works makes the abstract philosophical principles easy to understand This is the sixth Anga complete in two volumes

8. **Illustrated Upasak Dasha and Anuttaraupapatik Dasha Sutra** **Price Rs. 500/-**

This book contains the seventh and the ninth Angas The seventh Anga, Upasak Dasha, contains the stories of life of ten prominent Shravak disciples of Bhagavan Mahavir with a special emphasis on their religious conduct The ninth Anga Anuttaraupapatik Dasha contains thrilling description of the lofty austerities and meditation done by thirty three specific ascetics With colourful illustrations

9. **Illustrated Niryavalika and Vipaak Sutra** **Price Rs. 600/-**

Niryavalika has five Upangas that contain the story of the birth of king Kunik, a devout disciple of Bhagavan Mahavir This also contains the thrilling and illustrated description of the famous Mahashilakantak war between Kunik and Chetak, the president of the republic of Vaishali Besides these it also has life-stories of many Shramans and Shramanis of the lineage of Bhagavan Parshva Naath

Vipaak Sutra contains the description of the extremely bitter fruits of ignoble deeds This touching description inspires one towards noble deeds like charity and austerities the fruits of which have been lucidly described in its second section titled Sukha-vipaak The colourful artistic illustrations add to the attraction

10. **Illustrated Antakriddasha Sutra** **Price Rs. 500/-**

This eighth Anga contains the inspiring stories of the spiritual pursuits of ninety great men destined to be liberated This Sutra is specially read during the Paryushan period The illustrations related to austerities are specially informative

11. Illustrated Aupapatik Sutra **Price Rs. 500/-**

This the first Upanga This contains lucid and poetic description of numerous topics including king Kunik's preparations to go to pay homage to Bhagavan Mahavir, Bhagavan's sermon and establishment of the religious order This also contains the description of austerities observed by Ambad and many other Parivrajaks.

12. Illustrated Raipaseniya Sutra **Price Rs. 500/-**

This is the third Upanga It provides an interesting and edifying reading of the discussions between Acharya Keshi Kumar Shraman and the anti-religious king Pradeshi on topics like soul, next life and rebirth. This dialogue turned him into a great religionist. The illustrations of the examples showing the difference between soul and body are also instructive

13. Illustrated Kalpa Sutra **Price Rs. 500/-**

Kalpa Sutra is widely read and recited during the Paryushan festival It contains stories of life of 24 Tirthankars with more details about Bhagavan Mahavir's life It also contains the disciple lineage of Bhagavan Mahavir and detailed ascetic praxis The illustrations connected with the 24 Tirthankars add to its attraction as well as utility

14. Illustrated Chheda Sutra (Dasha-Kalp-Vyavahar) **Price Rs. 600/-**

The Agams that contain special procedures for purity of conduct are called Chheda Sutra These Sutras enumerate subtle rules for purity of conduct. Of the four Chheda Sutras three should be specially read by all ascetics—Dashashrut-skandh, Brihatkalpa and Vyavahar This edition contains these three Chhed Sutras with elaboration based on commentaries (Bhashya) and other works It also includes English translation and 15 multicolour illustrations

15. Illustrated Bhagavati Sutra (Part 1) **Price Rs. 600/-**

Vyakhya Prajnapti, the fifth Anga, is popularly known as Bhagavati. It contains thousands of questions and answers on various topics from four Anuyogas, such as soul, entities, matter, ultimate particle and universe. This voluminous Agam is an ocean of Jain metaphysics. With simple translation and brief elaboration it is expected to be completed in six

volumes. This first volume contains only one to four Shataks and 15 illustrations This is probably for the first time that a comprehensive English translation of this Agam is being published

- Thus till date 22 Agams and Kalpa Sutra have been published in 19 books The English translation makes it possible for those with passing knowledge of Prakrit and Hind to understand the content of Jain Agams including the religious practices as prevalent in ancient times. Also included in some of these editions are glossaries of Jain terms with their meanings in English
- Due to its demand by libraries, Jnana Bhandars, ascetics and lay readers this unique series may soon go out of print
- The publication of this Agam series has been inspired by Uttar Bharatiya Pravartak Gurudev Bhandari Shri Padmachandra ji M Its editor is his able disciple Uttar Bharatiya Pravartak Shri Amar Muni ji M His team includes renowned scholar Shri Srichand Surana as associate editor, Shri Surendra Bothara and Sushravak Shri Raj Kumar Jain, as English translators